* ओ३म् *

कुलियात आर्य मुसाफिर

(आर्य पथिक ग्रन्थ माला)

[भाग २]

लेखक—

स्वर्गीय पण्डित लेखराम जी आर्य पथिक

प्रकाशक—

मन्त्री, आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब

गुरुदत्त भवन, जालन्धर नगर

प्रथम वार २२००

मूल्य ८ रु०

कुलियात आर्य मुसाफिर

(हिन्दी अनुवाद)

आर्य पथिक ग्रन्थ-माला

दूसरा भाग

लेखक
अमर शहीद धर्मवीर पण्डित लेखराम आर्य मुसाफिर

अनुवादक
श्री पं० शान्तिप्रकाश जी शास्त्रार्थमहारथी

सम्पादक
अधिष्ठाता साहित्य प्रकाशन विभाग

प्रकाशक
मन्त्री, आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब
गुरुदत्त भवन, जालन्धर नगर

प्रथम संस्करण २२०० मूल्य ८ रु०

प्रकाशक—
मन्त्री, आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब
गुरुदत्त भवन, जालन्धर नगर
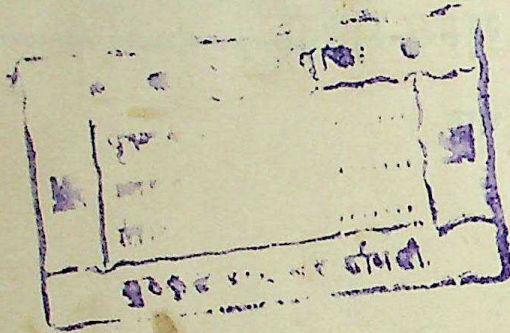
अनुवादक—
श्री पं० शान्तिप्रकाश जी शास्त्रार्थमहारथी

मुद्रक—
चन्द्रमोहन शास्त्री
सैनी प्रिंटर्स
७११७ पहाड़ी धीरज, देहली-६

(द्वितीय भाग) विषय-सूची

भूल सुधार पृ० २११ से २१६ तक १११ से ११६ छप गया। सुधार कर लेवें।

कुलियात के मूल लेखक

धर्मवीर पं० लेखराम जी आर्य पथिक

कुलियात आर्य मुसाफिर के दूसरे भाग का प्रकाशन

धर्म की बलि वेदी पर प्राणों को न्यौछावर करने वाले अमर हुतात्मा पं० लेखराम जी आर्य मुसाफिर ने आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की प्रार्थना पर यह महा ग्रंथ लिखा । सर्व प्रथम इस का प्रकाशन उर्दू ज़बान-फारसी लिपि में किया गया । चारों तरफ से मजहबी-साम्प्रदायिक लोग वैदिक धर्म के ऊपर निरन्तर आक्षेप करते रहते थे । उन का उत्तर प्रमाण और तर्कपूर्ण देना आर्यसमाज के लिये आवश्यक हो गया था । यद्यपि पं० लेखराम जी निरन्तर सफर में रहते थे । विपक्षी लोगों से शास्त्रार्थ में संलग्न रहना उन का नित्य का कार्य था । मिरजाईयों के आक्षेपों का उत्तर अरबी, फारसी जानने वाले प्रसिद्ध विद्वान ही दे सकते थे । अतः सभा की प्रार्थना पर उपदेश और शास्त्रार्थ का कार्य करते हुए भी पं० लेखराम जी ने ही इस कार्य को सम्भाला । उन्होंने साम्प्रदायिक लोगों को लेखों (पुस्तकों) द्वारा सप्रमाण और खोजपूर्ण उत्तर दिया । इस से मज़हबी जनता में खलबली मच गई । वैदिक धर्म के अनुयायियों का साहस बढ़ा । मज़हबी लोग परास्त होने लगे ।

पं० लेखराम जी के सभी लेखों, ट्रैक्टों पुस्तकों का संग्रह किया गया और आ० प्र० नि० सभा पंजाब ने कुलियात आर्य मुसाफिर नाम से इस महा ग्रंथ को प्रकाशित किया । जगह जगह से और बार बार मांग होने लगी कि इस का हिन्दी अनुवाद भी शीघ्र प्रकाशित किया जावे । उसी मांग के अनुसार इस महा ग्रंथ का प्रथम भाग हिन्दी भाषा में प्रकाशित किया गया । पुनः दूसरे भाग का प्रकाशन भी आवश्यक समझा गया । सभा की प्रार्थना पर श्री पं० शान्तिप्रकाश जी शास्त्रार्थ महारथी आर्य महोपदेशक ने कृपा पूर्वक दूसरे भाग का अनुवाद किया । साथ ही खोजपूर्ण भूमिका रूप में "अद्भुत वीर गाथा" शीर्षक से पं० लेखराम जी के वे विचार लिखे, जिन के कारण उन्होंने विवश होकर मज़हबी लेखकों के लेखों, पुस्तकों का उत्तर देना आवश्यक समझा ।

इस प्रकार कुलियात आर्य मुसाफिर का यह दूसरा भाग भी जनता के लिये सभा ने प्रकाशित कर दिया है । हमें पूर्ण आशा है कि जनता पहिले भाग के समान हो इस भाग को भी हाथों हाथ लेकर लाभ उठायेगी । इस प्रकार के धार्मिक खोजपूर्ण ग्रंथ बार बार शीघ्र प्रकाशित नहीं होते । अतः जनता से निवेदन है कि इस भाग को भी शीघ्र अपनाकर कृतार्थ करें ।

विनीत—रामनाथ भल्ला
मंत्री, आर्य प्रतिनिधि सभा, पंजाब
मुख्य कार्यालय—गुरुदत्त भवन कृष्ण-
चौक, जालन्धर नगर (पंजाब)

श्रावणी सं० २०२९ वि०
दयानन्दाब्द १४८
२४-८-१९७२

किञ्चिदावेदनम्

कुलियात आर्य मुसाफिर आर्य समाज के मूर्धन्य बलिभूत शहीदे अकबर स्वनाम धन्य श्री प० लेखराम थी आर्य पथिक के छोटे बड़े ग्रंथों का अपूर्व संग्रह है । जो उर्दू भाषा में लिखा गया था। किन्तु इस के हिन्दो अनुवाद की आवश्यकता निर्विवाद है। इस के लिए भारत विभाजन के पश्चात् मैं मान्या पंचनदीय आर्य प्रतिनिधि सभा से नम्र निवेदन करता चला आया । अन्ततः वह आचार्य भगवान् देव जी तथा श्री सिद्धांती जी आदि सभाधिकारियों की कृपा से स्वीकृत हुआ । समस्या यह थी कि इस का अनुवाद किस से कराया जाये । सभा की दृष्टि मुझ पर थी । किन्तु मैं शास्त्रार्थों और सभा के वेद प्रचाराधिष्ठाता के अत्यावश्यक कार्य पर नियुक्त था। अतः देर पर देर होती चली गई । अन्ततः यह शुभ कार्य श्री पं० जगत्कुमार जी शास्त्री प्रसिद्ध वैदिक विद्वान् के सुपुर्द किया गया । पुनः श्री पं० जगदीश चन्द्र जी शास्त्री ने भी कुछ समय कार्य किया ।

अन्ततः यह कार्य सभा नें मुझे सौंपा और प्रथम जिल्द का प्रकाशन सम्पूर्ण हुआ । तदुपरान्त अब यह दूसरी जिल्द जनता के सम्मुख करते हुए मुझे हार्दिक प्रसन्नता है कि मेरा परिश्रम सफल हुआ। इस जटिल तथा गूढ़ महा ग्रंथ का अनुवाद कार्य कोई सरल नहीं। अनेक दोषों की सम्भावना को मानता हुआ मैं सभी से प्रार्थी हूं कि सुझाव दें जिस से आगामी प्रकाशन में परिष्कृति सम्भव हो सके ।

सम्पादन् का कठिनतम महान् कार्य श्री पं० जगदेवसिंह सिद्धान्ती जी नें मेरी तथा सभा की प्रार्थना पर सम्भाला । इस के साथ ही अन्तिम प्रूफ़ देखने की समस्या थी जिसके लिये प्रायः अरबी-फ़ारसी के प्रमाण संगृहीत होने से इन का प्रूफ़ संशोधन कष्ट साध्य था । अतः आर्य समाज के प्रसिद्ध वैदिक विद्वान् पं० हरिदेव जी सिद्धांती भूषण महोपदेशक सभा की कृपा से यह कठिन कार्य सरल हो गया । अन्य सभी सहयोगियों का भी धन्यवाद इस अद्‌भुत महान् ग्रंथ के प्रकाशनार्थ मान्या सभा का भी पुनः २ धन्यवाद ।

उर्दू कुलियात बड़ी साईज़ पर अति सूक्ष्म अक्षरों में छपवाया गया था जिस में प्रमाण भाग का संशोधन न होने के कारण उन का शुद्ध लिखना अति कठिन था । प्रमाण भाग पर बहुधा प्रमाणों के पते नहीं थे । बड़े परिश्रम से उन पतों को ढूंढ़ कर लिखा गया । पुनरपि कुछ कार्य तपः साध्य अवशिष्ट है। अलमति विस्तरेण बुद्धिमद्वर्येषु विद्वत्सु ।

विनीत :

शान्ति प्रकाश (शास्त्रार्थ महारथी)

गुड़गांव (हरियाणा)

ओ३म्

अद्भुत वीर गाथा

शहीदे अकबर पं० लेखराम जी का अमर बलिदान आज भी आर्य समाज को अमर सन्देश दे रहा है कि उन के पश्चिम सन्देश (वसीयत) को याद रख कर आर्य समाज से तहरीर (लेखबद्ध कार्य) और तक़रीर (उपदेशकों द्वारा व्याख्यानादि से धर्म प्रचार) का कार्य बन्द न होने पाए।

पं० जी ने स्व जीवन भर इन दोनों कार्यों से आर्य समाज की सेवा की। उन के जीवन का संक्षेप यह है कि उन्होंने अपने आरम्भिक जीवन में सत्य धर्म की खोज में घोर परिश्रम किया।

वह वेदान्ती बन कर अहं ब्रह्मास्मि के जाप में अहम्मन्यता का शिकार भी बने। ग्रन्थी बनकर जप जी का पाठ करने लगे। गीता पाठ से भी उन्हें सन्तोष न हुआ और कुरान पाठ की ओर उनकी रुचि अग्रसर हुई। मुसलमान बनने की तीव्र इच्छा थी कि इसी से स्वर्ग द्वार का अनावरण होगा।

परमात्मा की कृपा हुई कि मेरे वीर ने अकस्मात् एक पुस्तक उपलब्ध की जिस का नाम कुलियात अलखधारी था। उसमें एक स्थान पर लिखा था कि :—

"जिस के मन में कोई धर्म सम्बन्धी संदेह हो और वह दूर न होता हो वह जिज्ञासु महर्षि दयानन्द सरस्वती जी महाराज की सेवा में उपस्थित होकर शंका समाधान करे तो अवश्य उस की धर्म पिपासा शान्त होगी।"

पं० लेखराम जी ने तुरन्त सरकार से एक मास के अवकाश का प्रबन्ध किया और वह अजमेर में स्वामि चरणों में उपस्थित हुए। शंका समाधान हुआ, जिज्ञासा शान्त हुई। पथिक को धर्म मार्ग दीख पड़ा। वेद पथ का पथिक बन कर आर्य समाज के प्रचार कार्य में जोवन अर्पण कर दिया।

यह है वीर की संक्षिप्त अमर गाथा।

अजमेर से लौट कर पेशावर में आर्य समाज की स्थापना की। उन्हीं दिनों मुसलिम पठित वर्ग ऋषि दयानन्द के वैदिक विचारों से प्रेरित होकर आर्य समाज में सम्मिलित होने के लिए यत्नशील था। भारतीयों के विचारों में क्रान्ति का बीज वपन करने वाले इस युग के सेनानी सर्वत: प्रथम ऋषि दयानन्द सरस्वती थे। इस क्रान्ति से आंगल सरकार भयभीत हो उठी कि भारतीय विचारैक्य के पश्चात् उस का टिक सकना कदापि सम्भव न होगा। अत: विदेशी सरकार ने सर सय्यद अहमद को ऋषि भक्ति से पृथक् करने के हेतु उन के नाम पर अलीगढ़ यूनिवरसिटी खोलने का प्रलोभन प्रस्तुत कर दिया तथा मिर्ज़ा गुलाम अहमद क़ादियानी को लाखों रुपयों की सहायता दे कर प्रोत्साहित करके आर्य समाज के साम्मुख्य के लिये खड़ा कर दिया जिस से मुसलिम समाज आर्य समाज में विलीन न होने पाए।

मिर्ज़ा गुलाम अहमद स्यालकोट कचहरी में एक साधारण लेखक थे। बहुत थोड़ी आय थी किन्तु अब मज़हबी मैदान में लाखों के वारे न्यारे हो गये। उन के कार्य का मुख्य स्थान क़ादयान बन गया जो अमृतसर के निकट गुरदासपुर का एक छोटा सा कसबा है।

मिर्ज़ा जी ने आर्य समाज को ललकारा, ब्राहीने अहमदिया नामी पुस्तक के कई भाग प्रकाशित किये और अपने चमत्कारों की घोषणा की कि जो कोई मेरे समीप आकर रहे वह अवश्य चमत्कार देख कर मुसलमान बन जायेगा। यदि ऐसा न हो तो मैं दस सहस्र रुपये हर्जाना देने को प्रस्तुत हूं। सत्यार्थ प्रकाश का खंडन तथा वेदों और आर्य समाज के विरुद्ध बहुत बड़े २ भ्रम फैलाने की छुट्टी उन को सरकार से मिल ही गई थी। वह किसी को कुछ भी नहीं समझते थे, तब इस अवस्था में अमर सेनानी पं० लेखराम जी आर्य-पथिक सरकारी सर्विस पर लात मार कर वैदिक धर्म रक्षार्थ मिर्ज़ा के मुकाबले में कूद पड़े और डट गये।

इस का परिणाम यह हुआ कि मिर्ज़ा चमत्कार न दिखा सकने के कारण हिन्दु मुसलमानों की दृष्टि में अपमानित होकर गिर गया। ऐसी अवस्था में पं० लेखराम जी के प्राण संकट में पड़ गए। अन्ततः ६ मार्च १८९७ की सायंकाल जब वह ऋषि दयानन्द के स्वर्गमन का अन्तिम दृश्य अपनी लेखनी से खेंच रहे थे—उन के पेट में छुरा घोंप दिया गया। क़ातिल भागने में सफल हो गया और मिर्ज़ा को इसे खुदाई फैसला (ईश्वरीय निर्णय) कहने और प्रचारित करने का अवसर मिल गया।

मेरे मिर्ज़ाई मित्र प्रति वर्ष क़ादयान तथा अन्य स्थानों पर ६ मार्च को वीर लेखराम दिवस पर मिर्ज़ा को परम विजयी घोषित करते हैं और व्याख्यान देते तथा पुस्तकें बांट कर प्रसन्न होते हैं कि पं० लेखराम की मौत मिर्ज़ा जी की भविष्य वाणी के अनुसार हुई। वह मिर्ज़ा को चमत्कार पूर्ण विजेता और आर्य समाज को विजित—हारा हुआ घोषित करते हैं।

आज से बहुत पहिले मिर्ज़ाईयों ने खुदाई फैसला (ईश्वरीय निर्णय) नामी ट्रैक्ट प्रकाशित करके आर्यों को चैलंज दिया था कि जो आर्य इस ट्रैक्ट का युक्ति-युक्त उत्तर दे उसे एक सहस्र मुद्रा पारितोषिक रूपेण दिया जाएगा।

क़ादयान के मिर्ज़ागढ़ में ही मैंने इस का उत्तर अपने ६ ।।२ घंटे के दो व्याख्यानों में दिया था जिस पर मिर्ज़ाईयों ने सरकार से मेरे विरुद्ध अभियोग खड़ा कराया। सरकार की ओर से एक वर्ष तक मेरा व्याख्यान देना निषिद्ध घोषित हुआ। ज़िला गुरदासपुर में मेरा प्रवेश भी एक वर्ष के लिए निषिद्ध हो गया। अभियोग में न्यायालय से मुझे छः मास की जेल मिली। सैशन की अपील भी सफल न हो सकी किन्तु :—

सच्चाई छिप नहीं सकती बनावट के असूलों से।
कि खुशबू आ नहीं सकती कभी काग़ज़ के फूलों से।।

हाई कोर्ट से मेरी विजय हुई। जहां मिर्ज़ाईयों ने मेरे पकड़े जाने पर दिए जलाए थे—वहां विजयी होने पर आर्य समाज ने स्थान २ पर दीपावली मनाई।

हाई कोर्ट का निर्णय उदाहरण बना जो कितने ही आर्यों के अभियोगों में सहायक बन कर उनके पक्ष में निर्णायक सिद्ध हुआ।

किन्तु इस प्रकाश युग में मिर्ज़ाई मित्रों का साहस है कि वह इस भविष्य वाणी के संसार पर मिथ्या सिद्ध हो जाने पर भी पुनः पुनः विजय के तराने गाते नहीं थकते।

पं० लेखराम का वध किसी बहुत बड़ी साजिस का परिणाम हो सकता है किन्तु चमत्कार और भविष्यवाणी का नाम प्रयुक्त करना जन समाज के साथ बहुत बड़ा अत्याचार है।

यह भी निश्चित है कि आर्यसमाज के साथ चमत्कारादि सिद्धांतों पर शास्त्रार्थों का प्रारम्भ मिर्ज़ाई मित्रों की ओर से ही हुआ है तब आर्यसमाज ने पूर्ण शक्ति से इस का उत्तर दिया जिसे मिर्ज़ाई सदा स्मरण रखेंगे। मिर्ज़ाई उत्तर तो न दे सके आर्यसमाज पर झगड़ालू होने का दोषारोपण कर दिया। मिर्ज़ाईयों ने श्री पं० लेखराम जी पर भी यही दोष आरोपित किया है। अतः इस का विवेचन होना आवश्यक है।

श्री मिर्ज़ा जी ने अरबी वाक्यों में लिखा है जिस का भाव यह है कि :—

"जब मैं बीस वर्ष के लगभग पहुंचा तो इसलामिक विजय की भावना मेरे मन में डाली गई तथा वाद प्रतिवाद और लेखन कार्य का उत्साह भी ....। सिलसिला पृष्ठ २२०१

श्री मिर्ज़ा जी ने हिन्दुओं की धार्मिक सहिष्णुता को भी स्वीकार करते हुए लिखा है कि :—

"उदाहरणार्थ हिन्दुओं की जाति एक ऐसी जाती है कि प्रायः उन में ऐसा स्वभाव रखते हैं कि यदि उनको अपनी ओर से न छेड़ा जाए तो वह चाटुकारिता के रूप में समस्त आयु मित्र बन कर मज़हबी बातों में हां में हां मिलाते रहते हैं। कभी २ तो हमारे नबी स्वलल्ला हो अलैहे वसल्लमः की प्रशंसा, गुणगान और इस धर्म के महापुरुषों की प्रशंसा और स्तुति करने लगते हैं।" सिलसिला पृष्ठ ६०५

"हिन्दू .... हमारे शिकार हैं। वह समय आने वाला है कि तुम दृष्टि उठाकर देखोगे कि कोई हिन्दू दिखाई दे किन्तु इन पढ़े लिखे हिन्दुओं में से एक हिन्दू भी तुम्हें दिखाई नहीं देगा।"

पृष्ठ ६०६

ऊपर के शब्दों तथा प्रमाणों से सिद्ध है कि धार्मिक विषयों मे हिन्दुओं की सहिष्णुता को मिर्ज़ा जी ने स्वीकार किया है। इस से आगे मिर्ज़ा जी ने इस बात को भी स्पष्ट रूप से स्वीकार किया है कि हिन्दुओं (आर्यों) ने शास्त्रार्थों में पहल कभी नहीं की। क्योंकि अज़ालतुल् अवहाम में उन्होंने लिखा है कि :—

"वर्तमान में ही आर्य लोगों ने हम लोगों के आह्वान पर शास्त्रार्थों की ओर पग बढ़ाया है......... हमारे आह्वानों का वास्तव में कोई दुष्परिणाम नहीं।" सिलसिला पृ० ६०६

प्रश्न यह है कि श्री मिर्ज़ा जी यदि शास्त्रार्थों और वादविवाद को ईश्वर, प्रकृति आदि सिद्धान्तों तक सीमित रखते तो वास्तव में कोई दुष्परिणाम न होता किन्तु जब सांप्रदायिक भावनाओं को उभारने वाली बातें शास्त्रार्थों में लाई जाने लगीं तो इससे दुष्परिणाम प्रगट हुए, यहां तक कि भारत विभाजित भी हो गया।

इशतहार—"मुसलमानों की दुरवस्था और अंग्रेजी गवर्नमेंट" शीर्षक से प्रकाशित किया जो तब्लीग़ रसालत जिल्द १ पृ० ३८ तथा ब्राही ने अहमदिया जिल्द ४ के टाईटल पर लिखा है कि :—

"इनके स्कालर पंडितों को भली भान्ति ज्ञात है कि किसी वेद में गो हत्या का निसिद्ध होना नहीं पाया जाता। किन्तु ऋग्वेद के प्रथम भाग से ही सिद्ध होता है कि वैदिक काल में गो मांस साधारणतः बाज़ारों में बिकता था और आर्य लोग प्रसन्नता पूर्वक इसी को खाते थे।" पृष्ठ २३५

"और कभी आवश्यक अवसरों पर गौहत्या को उचित भी समझा जैसा कि उनके सत्यार्थप्रकाश और वेदभाष्य से प्रगट है।" पृष्ठ २३५

इशतहार के मूल प्रयोजन में गोमांस और गौ हत्या का कोई विषय न था किन्तु मिर्ज़ा साहब

अकारण निरन्तर क्रम पूर्वक आर्यसमाज को जोश दिलाते चले गए। अन्नतः बाधित होकर पं० लेखराम जी इन भ्रमों को दूर करने के लिए मैदान में अवतीर्ण हुए।

पं० लेखराम के रक्षात्मक प्रयत्न

पं० लेखराम जी की कुलियात आर्य मुसाफिर में जितनी पुस्तकें और लेख हैं अथवा उन्होंने जो कुछ भी दूसरे मतमतान्तरों के सम्बन्ध में लिखा है—वह रक्षात्मक ही है, आक्रमणात्मक नहीं। संसार भर का नियम है कि रक्षात्मक पग उठाना कोई दोष और पाप नहीं किन्तु विधान के अनुसार श्रेष्ठ मार्ग है।

पं० जी मौलवी शैख़ अब्दुल्लाह् के उत्तर में लिखते हैं कि :—

"स्व रक्षात्मक कारवाई विधान और धर्म की दृष्टि से उचित है। इसी आधार पर रक्षात्मक रूपेण हमारी ओर से भी खंडनात्मक पुस्तकें लिखी गईं। अतः—

ज़रा इन्साफ़ (न्याय) तो कीजिये। निकाला किसने शर (शरारत) पहिले॥

कुलियात आर्य मुसाफिर पृ० ६२७

तक़ज़ीब जिल्द १ की रचना का प्रयोजन

शहीदे अकबर ने तक़ज़ीबे ब्राही ने अहमदिया जिल्द १ की रचना का प्रयोजन स्पष्टतः इस प्रकार लिखा है कि :—

"इन दिनों एक पुस्तक ब्राहीने अहमदिया (जिसके लेखक मिर्ज़ा गुलाम अहमद कादयान ज़िला गुरदासपुर निवासी हैं) अध्ययन में आई। अभिमान से चूर इसका लेखक दस सहस्र रुपये पारितोषिक रूपेण उत्तर दाता को देना स्वीकार करता है। ....पुस्तक में कहीं ब्राह्मो धर्म वालों से गाली गलौच हो रही है, किसी स्थान पर ईसाईयों को कोस रहे हैं, किसी स्थान पर मसीह को बिन बाप बता रहे हैं और किसी स्थान पर आर्यों को बुरा भला कह रहे हैं। मुझे इस स्थान पर किसी अन्य के लिये अभिप्राय नहीं और न मैं किसी अन्य के आधीन हूं। हां, आर्य धर्म का अनुयायी हूं और वेदोक्त सत्यता पर प्राण न्योछावर करता हूं अतः अपना कर्तव्य समझता हूं कि ब्राहीने अहमदिया को न्याय तुला पर तोलूं।"

कुलियात पृष्ठ ३२६

नुसख़ाख़ब्ते अहमदिया के आरम्भ में लिखा है कि सत्यान्वेषकों को यह तथ्य ज्ञात हो कि तक़-ज़ीब ब्राहीने अहमदिया के प्रकाशन के अनन्तर हमारी इच्छा कदापि कोई पुस्तक मिर्ज़ा साहब अथवा इसलाम के उत्तर में खंडनात्मक लिखने का विचार न था और न नुसख़ा ख़ब्ते अहमदिया के लिखने का विचार था क्योंकि इस प्रकार युग में साधारणतः पठित लोग ऐसे चमत्कार तो किसी रूप में भी स्वीकार नहीं करते किन्तु सर्वथा व्यर्थ समझते हैं। तक़ज़ीब ब्राहीने अहमदिया का सम्पादन अभी हो रहा था कि मिर्ज़ा जी ने हुश्यारपुर जाकर हमारे दयालु मास्टर मुरलीधर जी आर्य समाज से शास्त्रार्थ छेड़ा और 'सुरमा चशमें आर्य' नामी एक २६० पृष्ठ की पुस्तक लिख कर छपवा दी।

कुलियात आर्य मुसाफिर पृ० ५०२

तक़ज़ीब जिल्द २ का प्रयोजन

"तक़ज़ीबे बराहीने अहमदिया (अहमदी=मिर्ज़ाईयों की युक्तियों का मिथ्यापन) और नुसख़ा

ख़ब्ते अहमदिया (अहमदी=मिर्ज़ाईयों के रोग का निदान) इन दो पुस्तकों की रचना के पश्चात् हमारा विचार मुहम्मदीमत के विरुद्ध अन्य कोई पुस्तक लिखने का नहीं था, किन्तु क्या करे—हमारे विरोधी आराम से नहीं बैठने देते हैं। बार बार उकसाते हैं कि हम अपने समस्त सिद्धान्तों से संसार को अवगत करायें और उन्हें वैदिक मार्ग का सीधा पथ बता कर अपने कर्तव्यों से उऋण हों। मिर्ज़ा जी आईनाए कमालाते इसलाम (इसलामी पूर्णताओं का दर्पण) नामी पुस्तक में तर्क संगत उत्तर से शून्य हो कर ..... आक्रमणों पर उतर आये........मिर्ज़ा जी के सबसे बड़े भक्त मौलवी नूरुद्दीन शाहो हकीम ने बराहीने अहमदिया के अनुमोदन में "तसदीक बराहीने अहमदिया" नामी पुस्तक लिखी और अपनी मिथ्या कल्पना में बराहीन की न्यूनता पूरी की।

अतः आज दश वर्षों के पश्चात् परमात्मा के अनुग्रह और ईश्वर की कृपा से हम तकज़ीबे बराहीने अहमदिया जिल्द २ का प्रकाशन करते .... हैं।" कुलियात आर्य मुसाफिर पृ० ४३२

मौलवी इनायतुल्लाह साहब ने पं० लेखराम जी के पक्ष में गवाही दी है। अपनी "किताबे हक्को बातिल" (सत्यासत्य मीमांसा नामी) पुस्तक में लिखा है कि :—

"एक बात विशेष रूप से स्मरण रखने के योग्य है कि पं० लेखराम जी ने इसलाम के सम्बन्ध में जो कुछ लिखा है, उसका कारण भी अधिकतर मिर्ज़ा जी का आर्यों को सम्बोधन करने का ढंग और कठोर वचन है जैसा कि पं० ने अपनी पुस्तकों में इस बात की व्याख्या कर दी है।"

शहीदे अकबर में पं० लेखराम जी इसलाम अथवा मिर्ज़ा जी के सम्बन्ध में कोई भी पुस्तक लिखना न चाहते थे यदि वह बाधित न कर दिये जाते। जैसा कि स्वयं पं० जी ने लिखा है कि :—

"मेरा विचार इसलाम के सम्बन्ध में कोई पुस्तक लिखने का न था किन्तु मिर्ज़ा जी की पुस्तकों ने मुझे इसके लिए बाधित किया।" कुलियात पृ० ६०२

पं० जी ने रक्षात्मक उत्तर प्रकाशित किये। गौ के सम्बन्ध में आक्रमण किया गया था। वेद के सैंकड़ों मंत्रों में उसकी प्रतिष्ठा स्थिर है। ऋग्वेद में उसे माता कहा गया है और उसके मारने का कठोरतम विरोध है। देखिये :—

माता रुद्राणां दुहिता वसूनां स्वसादित्यानाममृतस्य नाभिः।
प्रनुवोचं चिकितुषे जनाय मा गामनागामदितिं वधिष्ठ॥

ऋ० ८।१०१।१५

गौ प्राणधारी, वास योग्य, अखंड जीवन यज्ञ गामी जीव धारी प्राणियों की माता, दुहिता=कन्या और भगिनी है। क्योंकि यह सबके लिये अमृत का स्रोत है। अतः मैं परमेश्वर सभी विचारशील बुद्धिमानों और चिकित्सा शास्त्रियों से कहता हूं कि निष्पाप, अखंडनीया गौ माता को मत मारो।

यदि नो गांहंसि यद्यश्वं यदि पूरुषम्।
तं त्वा सीसेन विध्यामो यथानोऽसोऽवीरहा॥ अथर्व १।१६।४

यदि तू हमारी गौ, अश्व, पुरुषादि को मारेगा तो हम तुझको गोली से उड़ा देंगे जिससे हमारे राष्ट्र में वीरता का नाश न हो।

यह संसार के चक्रवर्ति राष्ट्रपति को घोषणा है। गौमाता का अपमान भी वेद में असह्य है, लिखा है कि :—

यश्च गांपदा स्फुरति ....वृश्चामि तस्य मूलम् । अथ० १३।१।५६

जो कोई गौमाता को पाद की ठोकर से भी अपमानित करता है अर्थात् जिस राष्ट्र में गौमाता का अपमान होता है । परमात्मा की आज्ञा है कि मैं उस राष्ट्र का मूल नाश कर देता हूं । गो नाश के साथ ही राष्ट्र की जड़ कट जाती है ।

सामवेद में गौ के प्रति राष्ट्र को पवित्र होने का आदेश है । यजुर्वेद के पहिले ही मंत्र में गौ को अघ्न्या लिखा है । अर्थात् गौ सदैव अहन्तव्या है ।

चारों वेदों में गौ की प्रतिष्ठा और महिमा अपार है । आर्य जाति सदैव गोभक्त रही है । वेदों में उसे माता कहकर उसके मारने और कष्ट देने का कठोर निषेध है । पुन: वैदिक युग में गो मांस को बाज़ारों में कैसे बेचा जा सकता था ? ऋषि दयानन्द के वेद भाष्य और सत्यार्थप्रकाश में कहीं और किसी अवस्था में भी गौ के मारने की गन्ध भी नहीं किन्तु स्थान २ पर गौमाता की रक्षा सम्बन्धी आज्ञा विद्यमान है ।

महर्षि दयानन्द गोभक्त थे, गौपाल थे । गोरक्षा आन्दोलन का उन्होंने सूत्रपात किया था । रिवाड़ी की प्रथम गौशाला का शिलान्यास उन्होंने रखा था । गोकरुणानिधि को लिखकर गोरक्षा में उन्होंने कमाल कर दिया । गौ को प्रधान मान कर पशु रक्षा ही उनका ध्येय था । अतः मिर्जा जी ने इस गो सम्बन्धी प्रश्न को छेड़कर आर्यों की भावनाओं को उभारा और ठेस पहुंचाई । भारत में हिन्दु मुसलिम सम्बन्ध दृढ़ बनाने के स्थान पर बिगाड़ने का प्रयत्न किया ।

इसी प्रकार शेष बातों के सम्बन्ध में भी समझा जा सकता है । मिर्ज़ाई महानुभावों की पुस्तकें और लेख स्वयं आक्षेप योग्य और लड़ाई झगड़ों के प्रेरक हैं ।

देखिये ! एक अहमदी मित्र की शरारत । पं० लेखराम जी के सम्बन्ध में लिखता है कि :--

"किन्तु इनके सम्मुख जब हम पं० लेखराम के वंश पर दृष्टिपात करते हैं तो हमें शोक मग्न हो कहना पड़ता है कि इनका नाममात्र भी कोई नाम लेवा नहीं रहा । चाहे किसी ढंग से ही होता । हां, इतना ज्ञात हुआ है कि पं० जी के हां एक लड़का उत्पन्न हुआ था किन्तु शोक कि वह भी इनके जीवन काल में ही वियोग का धब्बा लगाकर नाशगृह को चल बसा ।"

(शहादते लेखराम पृ० ११ लेखक फ़खरुद्दीन मुलतानी)

बड़े भारी शोक के साथ लिखना पड़ता है कि शहादते लेखराम के लेखक फ़खरुद्दीन मुलतानी की दृष्टि में पं० जी सुपुत्र का इनके धर्म प्रचार यात्रा में संलग्न होने के कारण सन्तोषप्रद औषधोपचार न हो सकने से ईश्वर को प्यारा हो जाना इनके निकट आक्षेप योग्य और उपहासनीय है । जबकि दूसरे महापुरुषों के साथ भी ऐसा हुआ है । स्वयं आं हज़रत स्वलल्ला हो अलैहि वसल्लमा मुसतफ़ा मुहम्मद साहब की जीवनी में भी ऐसी घटना विद्यमान है ।

संभव है कि अहमदी मित्र इस आक्षेप से आर्यों को चिड़ाकर उनसे आं हज़रत के सम्बन्ध में भी ऐसे शब्द दोहराने की अवस्था में हिन्दु मुसलिम चपलकश से स्वयं साम्प्रदायिक लाभ अर्जित करना चाहता हो किन्तु हम आर्य लोग किसी भी महापुरुष के सम्बन्ध में इस प्रकार के अनुचित शब्दों को बहुत बड़ा पाप समझते हैं । अतः इस प्रकार की निन्दनीय प्रवंचना के दोषी नहीं हो सकते ।

मिर्ज़ा जी की पुस्तकों का उत्तर पं० जी ने दिया । उत्तर का उत्तर मिर्ज़ा जी को देना चाहिये था, किन्तु नहीं दे सके । यह पं० जी की शानदार विजय थी ।

पं० लेखराम की अपूर्व विजय

मिर्ज़ा जी पं० जी के उत्तर का उत्तर नहीं दे सके और घबरा कर मिर्ज़ा जी ने अपने विशेष मुरीद (भक्त) हकीम नूरुद्दीन जी को एक पत्र में लिखा है कि :—

"सेवा और प्रतिष्ठा के योग्य मौलवी नूरुद्दीन साहिब ! खुदा तआला आपको सलामत रखे ! ....कि अभी वर्तमान में लेखराम नामी एक व्यक्ति ने मेरी पुस्तक बराहीने अहमदिया के खंडन में बहुत कुछ बकवास की है और अपनी पुस्तक का नाम तकज़ीबे बुराहीनें अहमदिया (अहमदी युक्तियों का मिथ्यापन) रखा है .... इस पुस्तक के प्रकाशन से हिन्दुओं में बहुत जोश हो रहा है ....इस-लिए मैं आपको यह कष्ट देता हूं कि आप आरम्भ से अन्त तक इस पुस्तक को देखें और इस व्यक्ति ने इसलाम पर जितने आक्षेप किये हैं, इन सब को एक स्मृति पत्र पर पुस्तक के पृष्ठ के साथ स्मरणार्थ नक़ल करें। पुनः इनके सम्बन्ध में उपयुक्त उत्तर सोचें और अल्लाह तआला आपको जितने तर्क संगत उत्तर दिल में डाले, वह सब पृथक् २ लिख कर मेरी ओर भेजते रहें। जो कुछ विशेष मेरे ज़िम्मा होगा मैं समय पाकर इसका उत्तर लिखूंगा। कुछ हो यह कार्य अत्यावश्यक है और मैं बहुत बल पूर्वक आप की सेवा में निवेदन करता हूं कि आप सम्पूर्ण यत्न के साथ तप और कुर्बानी से इस ओर ध्यान देने की कृपा करें।" मकतूबाते अहमदिया जिल्द ५ पृ० ३७,३८

"लेखराम पेशावरी की पुस्तक सेवा में प्रेषित कर दी गई है। आशा है कि उच्चावस्था के ध्यान से इसका पूर्णतः खंडन फरमायेंगे, जिससे कुस्वभाव विधर्मी का शीघ्रतर अपमान हो। आशा है कि पूजनीय आप लेखराम की ओर बहुत शीघ्र ध्यान फरमायेंगे।

प्रथम इसके सम्पूर्ण आक्षेप पृथक् पत्रों पर चुन लिए जाएं, पुनः संक्षिप्त और उपयुक्त दांत तोड़ने वाला उत्तर दिया जाए। प्रकाश स्वरूप परमात्मा आप पर सदैव आनन्द, दया और विजय की छाया रखें।" मकतूबात, जिल्द ५ पृष्ठ ३९,४०

इन दो पत्रों से स्पष्ट है कि मिर्ज़ा जी पं० जी की अकाट्य युक्तियों और तर्क समन्वित उत्तर से बहुत परेशान थे। उनसे स्वयं उत्तर नहीं बन पड़ा। उन्होंने अपने मुरीद जी को जिन शब्दों में इसका उत्तर सोचने की प्रेरणा दी। इस पर कुछ विशेष लिखने की आवश्यकता नहीं। हमारी घोषणा है कि मिर्ज़ा जो पं० जी का उत्तर अन्तिम समय तक भी नहीं दे सके।

पं० जी ने बुराहीन का उत्तर तकज़ीब से दिया। सुरमा चशमे आर्य का उत्तर नुसखा खबते अहमदिया से दिया। जब देखा कि पलड़ा आर्यों के वकील का भारी है तो झट उनके सम्बन्ध में निरंतर कुछ इस प्रकार का लिख जाता रहा, जिसका परिणाम पं० जी के बलिदान के अतिरिक्त और कुछ न हो सकता था।

अतः इस प्रकार विचार करने से सूर्य प्रकाशवत् प्रगट है कि पं० लेखराम विजेता हैं।

युक्ति प्रयुक्ति का उत्तर युक्ति से न दे सकने के कारण ही प्रथम गाली गलौच और पुनः छुरी की धमकी का नम्बर आ सकता था। ऐसा ही हुआ। इसमें भविष्य वाणी और चमत्कार की कोई बात नहीं और नहीं इसकी कोई महत्ता है।

शहनहे हक्क में गाली गलौच

मिर्ज़ा जी अपनी पुस्तक शहनहे हक्क में पं० जी के सम्बन्ध में लिखते हैं कि :—

"यदि इसके सम्बन्ध में निश्चित समय तक कोई ऐसी इलहामी भविष्य वाणी प्रगट हो गई,

जिसके मुकाबला से वह अशक्त हो जाए। या तो इस स्थान पर अपनी लम्बी चोटी कटा कर और व्यर्थ पहने हुए यज्ञोपवीत को तोड़ कर इस पवित्र संस्था (मिर्ज़ाई संस्था) में प्रविष्ट हो जाए। ...... (इसने) हमारा नाम छली कपटी रखकर ईश्वरीय इलहामों को सर्वथा छल कपट घोषित किया। पुराने जंगली उजड आर्यों की भान्ति हमने गन्दी गालियां दीं। .... ऐसे .... और युद्ध प्रेमी को निम्नलिखित पारितोषिक जो वास्तव में बिच्छू की भान्ति डंक मारने और मार्ग वंचक ..... की अवस्था में इसके योग्य देता हूं ....। सिलसिला जिल्द २ पृ० ७६६-७६७

इसके आगे वह पारितोषिक लिखा है, जिसके लिखने से हमारी लेखनी भी अशक्त है—इसलिये कि हम हिन्दू मुसलिम एकता को मानते हैं। हमें आर्यों को जोश दिलाकर अहमदियों के विरुद्ध घृणा दिलाना अभीष्ट नहीं। हमारे इस लेख लिखने का प्रयोजन तो केवल इतना है कि अहमदी मित्र अब संसार का परीक्षण करके वायु मण्डल को न बिगाड़ें। आंगल राज्य चले जाने के पश्चात् अब इस सैकुलर सरकार में हिन्दु मुसलिम एकता में रुकावट डालना शोभनीय कदापि नहीं कहा जा सकता।

सिद्धान्तों पर शास्त्रार्थ श्रेष्ठ, शुभ, मधुर, सत्यवाणी द्वारा किसी से भी किये जा सकते हैं। उसे कोई भी सामयिक सरकार नहीं रोक सकती, किन्तु पुराने गढ़ों को उखाड़ कर और विजय दुन्दुभि बजा बजा कर दूसरों की भावनाओं के साथ खेलना मिर्जाई मित्रों के लिये कदापि कभी भी प्रशंसनीय और शोभनीय नहीं। अतः हम अहमदी मित्रों की बातों का केवल इतना ही उत्तर दे रहे हैं जिनका सिद्धान्तों के साथ सम्बन्ध है। गाली गलौच के उत्तर से हमें दूर रहना ही आवश्यक है :—

ददतु ददतु गालीं, गालीमन्तो भवन्तः।
वयमपि तदभावाद् गालीदानेऽसमर्थाः॥

जगति विदितमेतत् यद् दीयते विद्यमानम्।
नहि शशकविषाणं कोऽपिकस्मै ददाति॥

दीजिये, दीजिये गाली, आप गालीमान् हैं। हम गाली रहित होने से गाली का उत्तर गाली से देने में सर्वथा असमर्थ हैं। संसार में यह विदित ही है कि विद्यमान वस्तु दी जा सकती है। खरगोश के सींग का अत्यन्ताभाव होने से कोई किसी को नहीं देता।

मिर्ज़ा जी गाली देने में सिद्धहस्त थे। हानि और हत्या सम्बन्धी भविष्यवाणी करना उनका सहज स्वभाव था। पुनः अत्याचार यह कि उसे बार २ ईश्वरीय निर्णय कहते चले जाते थे। यहाँ तक कि भविष्यवाणी की भाषा और शब्द भी ईश्वरीय बताते थे। अरबी में ही उनका एक इलहाम है जिस में पं० लेखराम जी को पिशावरी लिखा है। क्या ईश्वर को यह ज्ञात नहीं था कि पं० जी सैदपुर ज़िला जेहलम के निवासी होने से सैदपुरी लिखे जाने के योग्य हैं। पुनः यह खुदाई फैसला कैसे? मनुष्य की यह निर्बलता है कि वह स्वार्थसिद्धि में तत्पर होकर अपने दोष ईश्वर पर अर्पित करके उसे अपना साझीदार बताता है। इसीलिए वेद में कहा ही तो है कि :—

पदा पणीरराधसो नि बाधस्व महानसि।
नहि त्वा कश्चन प्रति॥ ऋ० ८।६४।२

अपरिपक्व छली कपटी पणी लोगों को ईश्वर अपनी अनन्त ज्ञान महिमा के सामर्थ्य से बाधित

और पीड़ित करते हैं क्योंकि ईश्वर का कोई प्रतिनिधि नहीं जो उसकी ओर से ठेकेदार बन कर लोगों को मृत्यु आदि की भविष्य वाणियां सुनाता और डराता, धमकाता फिरे।

पं० लेखराम की विजय

श्री मिर्ज़ा गुलाम अहमद कादयानी ने अप्रैल १८८५ ईस्वी में एक विज्ञापन के द्वारा भिन्न भिन्न सम्प्रदायों के विशिष्ट व्यक्तियों को सूचित किया कि दीने इसलाम की सच्चाई परखने के लिए यदि कोई प्रतिष्ठित व्यक्ति एक वर्ष के काल तक मेरे पास क़ादयान में आ कर निवास करे तो मैं उसे आसमानी चमत्कारों का उसकी आँखों से साक्षात् करा सकता हूं। अन्यथा दो सो रुपए मासिक को गणना से हर-जाना या जुर्माना दूंगा।

इस पर पं० लेखराम जो ने चोबीस सौ रुपए सरकार में जमा करा देने को शर्त के साथ स्वोकृति दी। उस समय वह आर्यसमाज पेशावर के प्रधान थे।

मिर्ज़ा जी ने इस पर टालमटोल से कार्य करते हुए क़ादयान, लाहौर, लुध्याना, अमृतसर और पेशावर के समस्त आर्य सदस्यों की अनुमति की शर्त लगा दी कि वह पं० लेखराम जी को अपना नेता मानकर उनके आसमानी चमत्कार देख लेने के साथ ही उनके सहित ननुनच के विना दीने इसलाम को स्वीकार करने की घोषणा करें। जब कि स्वयं मिर्ज़ा जी ने स्वीकार किया है कि "वह आर्यों का एक बड़ा एडवोकेट और व्याख्यान दाता था।" नजूलुलमसीह पृ० १७०

"वह अपने को आर्य जाति का सितारा समझता था और आर्य जाति भो उसको सितारा बतातो थी।" हक़ीकतुल्वही का हाशिया पृ० २९३

अन्ततः मिर्ज़ा जी ने चौबीस सौ रुपये सरकार में सुरक्षित न करा कर केवल पं० जी को दो तीन दिन के लिए कादयान आने का निमन्त्रण दिया और साथ ही चौबीस सौ रुपये सरकार में सुरक्षित कराने की शर्त पं० जी के लिए बढ़ा दी जिससे चमत्कार स्वीकृति से इन्कार को अवस्था में वह रुपए मिर्ज़ा जी प्राप्त कर सकें। पं० जी ने इस शर्त को स्वीकार कर लिया और लिखा कि जो आसमानी चमत्कार आप दिखायेंगे, वह कैसा होगा? उसका निश्चय पूर्व हो जाए। क्या कोई दूसरा सूर्य दिखाओगे कि जिस का उदय पश्चिम और अस्त पूर्व में होगा? अथवा चांद के दो टुकड़े करने के चमत्कार को दोहराएंगे? अर्थात् पूर्णिमा की रात्रि को चन्द्रमा के दो खण्ड हो जावें और अमावस्या की रात्रि को पूर्णिमा की भान्ति पूर्ण चन्द्र का उदय हो जावे। इसमें जो चमत्कार दिखाना सम्भव हो, इसकी तिथि और चमत्कार दिखाने का समय निश्चित किया जाए जिसे जनता में प्रसिद्ध कर दिया जाए।

किन्तु मिर्ज़ा जी इस स्पष्ट और भ्रमरहित नियम को स्वोकार न कर सके। इसका उत्तर देना और स्वीकार करना इनके लिए असम्भव हो गया। स्वीकार किया कि हम यह शर्त पूरी नहीं कर सकते और न ऊपर लिखे चमत्कार दिखा सकते हैं। किन्तु हमें ज्ञात नहीं कि क्या कुछ प्रगट होगा या न होगा? और इस आकस्मिक आपत्ति से पीछा छुड़ाना चाहा।" कुलियात पृ० ४१२

अन्ततः पं० जी ने मिर्ज़ा जी को लिखा कि :—

"बस शुभ प्रेरणा के विचार से निमन्त्रण दिया जाता है ...... वेद मुक़द्दस पर ईमान लाईये। आप को भी यदि दृढ़ सत्यमार्ग पर चलने की सदिच्छा है तो सच्चे हृदय से आर्य धर्म को स्वीकार करो। मनरूपी दर्पण को स्वार्थमय पक्षपात से पवित्र करो। यदि शुभ सन्देश के पहुंचने पर भी सत्य को ओर

ध्यान न दोगे तो ईश्वर का न्याय नियम आपको क्षमा न करेगा..........और जिस प्रकार का आत्मिक, धार्मिक अथवा सांसारिक सन्तोष आप करना चाहें—सेवक उपस्थित और समुद्यत है।

पत्र पेषक :—

लेखराम अमृतसर ५ अगस्त १८८५ ईस्वी

इस अन्तिम पत्र का उत्तर मिर्ज़ा जी की ओर से तीन मास तक न आया। तब पं० जी ने एक पोस्ट कार्ड स्मरणार्थ प्रेषित किया। उसके उत्तर में मिर्ज़ा जी का कार्ड आया कि क़ादयान कोई दूर तो नहीं है। आकर मिल जाएं। आशा है कि यहां पर परस्पर मिलने से शर्तें निश्चित हो जाएंगी।

इस प्रकार से पं० जी की विजय स्पष्ट है जिसे कोई भी नहीं छिपा सकता। मिर्ज़ा जी के पत्रानुसार अन्ततः पं० जी क़ादयान पहुंचे। वहां दो मास तक रहने पर भी मिर्ज़ा जी किसी एक बात पर टिक नहीं सके। क़ादयान में दो मास ठहर कर वहां आर्यसमाज स्थापित करके चले आए। आर्य-समाज कादयान की स्थापना हुई तो मिर्ज़ा जी के चचेरे भाई मिर्ज़ा इमाम दीन और मुल्लां हुसैनाँ भी आर्यसमाज के नियम पूर्वक सदस्य बने। मिर्ज़ा जी ने भी पं० जी के दो मास तक क़ादयान निवास को स्वीकार किया है। देखो हक़ीकतुल्वही पृ० २८८

पं० जी ने कादयान में रह कर मिर्ज़ा जी को उनके वचनानुसार आसमानी चमत्कार दिखाने के लिए ललकारा और लिखा कि आप अच्छी प्रकार स्मरण रखें कि अब मेरी ओर से शर्त पूरी हो गई। सत्य की ओर से मुख फेर लेना बुद्धिमानों से दूर है। ५ दिसम्बर १८८५ ईस्वी

मिर्ज़ा जी ने आसमानी चमत्कार दिखाने के स्थान पर आर्य धर्म और इसलाम के दो तीन सिद्धान्तों पर शास्त्रार्थ करने का बहाना किया। अन्य शर्तें निश्चित करने का भी लिखा। जिस पर पं० ने लिखा कि मेरा पेशावर से चलकर कादयान आने का प्रयोजन केवल यही था और अब तक भी इस आशा पर यहां रह रहा हूं कि आपके चमत्कार=प्राकृतिक नियमों के विरुद्ध कार्य, करामात व इलहामात और आसमानी चिह्नों का विवेचन करके साक्षात् करूं। और इससे पूर्व कि किसी अन्य सिद्धान्त पर शास्त्रार्थ किया जाए यह चमत्कार दर्शन की बात एक प्रतिष्ठित लोगों की सभा में अच्छी प्रकार निर्णीत हो जानी चाहिए। और इसके सिद्ध कर सकने में यदि आप अपनी असमर्थता बतावें तो शास्त्रार्थ करने से भी मुझे किसी प्रकार का इन्कार नहीं।

तीसरा और चौथा पत्र

पुनः पं० जी ने तीसरे पत्र में लिखा कि·····मुझे आज यहां पच्चीस दिन आए हुए हो गए हैं। मैं कल परसों तक जाने वाला हूं। यदि शास्त्रार्थ करना है तो भी, यदि चमत्कार दिखाने के सम्बन्ध में नियम निश्चित करने हैं तो भी शीघ्रता कीजिए। अन्यथा पश्चात् मित्रों में फरें मारने का कुछ लाभ न होगा। किन्तु बहुत ही अच्छा होगा कि आज ही स्कूल के मैदान में पधारें। शैतान, सिफारिश, चांद के टुकड़े होने के चमत्कार का प्रमाण दें। निर्णायक भी नियत कर लीजिए। मेरी ओर से मिर्ज़ा इमामदीन जी (मिर्ज़ा जी के चचेरे भाई) निर्णायक समझें। यदि इस पर भी आपको सन्तोष नहीं है तो ईश्वर के लिए चमत्कारों के भ्रमजाल से हट जाइए। १३ दिसम्बर १८८५ ईस्वी

पं० जी ने चतुर्थ पत्र में मिर्ज़ा जी को पूर्ण बल के साथ ललकारा और लिखा कि········आप सर्वथा स्पष्ट बहाना, टालमटोल और कुतर्क कर रहे हैं। मिर्ज़ा साहब ! शोक !! महाशोक !!! आप को निर्णय स्वीकार नहीं है। किसी ने सत्य कहा है कि :—

उज़ुरे नामआ़कूल सा़बितमेकुनद तक़्सी़र रा ।

बुद्धिशून्य टालमटोल तो जुर्म को ही सिद्ध करता है ।

इसके अतिरिक्त आप द्वितीय मसीह होने का दावा करते हैं । इस अपने दावा को सिद्ध कर दिखाइए । (लेखराम कादयान ६ बजे दिन के)

अन्ततोगत्वा मिर्ज़ा जी ने समयाभाव और फारिग न होने का बहाना किया । जिससे पं० जी को दो मास कादयान रहकर लौट आना पड़ा ।

जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है कि मिर्ज़ा जी ने पं० लेखराम जी की भावना शुद्ध न होने का भी बहाना किया है । यह दोषारोपण हक़ीक़तुल्वही पृष्ठ २८८ से खंडित हो जाता है । क्योंकि वहां उनके स्वभाव में सरलता का स्वीकरण स्पष्ट विद्यमान है । इस पर भी अहमदी मित्र यदि पं० लेखराम जी की पराजय और श्री मिर्ज़ा जी की विजय का प्रचार करते और ढोल बजाकर अपने उत्सवों में घोषणा करते हैं तो यह उनका साहस उनकी अपनी पुस्तकों और मिर्ज़ा जी के लेखों के ही विरुद्ध है । यदि पं० का वध किया जाना आसमानी चमत्कार समझा जाए तो भी ठीक नहीं । क्योंकि आसमानी चमत्कार दिखाने का समय एक वर्ष के अन्दर सीमित था । और उसके साथ पं० लेखराम जी के इसलाम को स्वीकार करने की शर्त बन्धी हुई थी जैसा कि मिर्ज़ा जी के विज्ञापन में लिखा गया था । इन दोनों बातों के पूरा न होने के कारण पं० जी की विजय सूर्य प्रकाशवत् प्रगट है क्योंकि मिर्ज़ा जी ने स्वयं लिखा है कि :—

"यह प्रस्ताव न अपने सोच विचार का परिणाम है किन्तु हज़रत मौला करीम (दयालु भगवान्) की ओर से उसकी आज्ञा से है । .... इस भावना से आप आवेंगे तो अवश्य इन्शाअल्लाह (यदि भगवान् चाहे) आसमानी चमत्कार का साक्षात् करेंगे । इसी विषय का ईश्वर की ओर से वचन हो चुका है जिसके विरुद्ध भाव की सम्भावना कदापि नहीं ।" तब्लीगे रसालत जिल्द १ पृ० ११–१२

शर्त निश्चित न हो सकने के कारण पं० जी को कादयान से वापिस लौटना पड़ा । इसका प्रमाण पं० जी और मिर्ज़ा जी की पुस्तकों से प्रगट है ।

पं० जी ने लिखा ही तो है कि :—

"....... अन्ततोगत्वा मिर्ज़ा साहब ने एक वर्ष रहने की शर्त को भी धनाभाव के कारण बहाना साज़ी, क्रोध और छल कपट से टाल दिया । बाधित होकर मैं दो मास कादयान रहकर और वहां आर्य-समाज स्थापित करके चला आया ।" कुलियात पृ० ४१५

इश्तहार सदाक़त अनवार में श्री मिर्ज़ा जी ने पं० लेखराम जी के कादयान में आकर दो मास ठहरने और शर्तें निश्चित न हो सकने का उल्लेख किया है । अतः अहमदी मित्रों को ननुनच के बिना स्वीकार कर लेने में संकोच न करना चाहिए कि आगे के घटना चक्र में हत्या का विषय चमत्कार का परिणाम नहीं किन्तु इस पराजय का परिणाम ही है जिसे भविष्यवाणी का नाम दे दिया गया है । किन्तु सत्य तो अन्ततोगत्वा सत्य ही है कि श्री मिर्ज़ा साहब सुलतानुल्क़लम (मिर्ज़ा जी का एक इलहाम सुलतानुल्क़लम का है । अतः वह अपने को क़लम का बादशाह मानते थे) की लेखनी से सत्य का प्रकाश हुए बिना न रह सका । और पं० लेखराम जी के वध को केवल हत्या नहीं प्रत्युत बलिदान अर्थात् शहीद मान लिया । देखिये स्पष्ट लिखा है कि :—

"सो आसमानों और जमीन के मालिक ने चाहा कि लेखराम सत्य के प्रकाश के लिए बलि हो और सत्य धर्म की सत्यता प्रगट करने के लिए बतौर बलिदान के हो जाए। सो वही हुआ, जो खुदा ने चाहा ॥"

वास्तव में पं० लेखराम सत्य सनातन वैदिक धर्म को सत्यता के प्रकाश के लिए शहीद हुए हैं। शहीद शब्द अरबी भाषा का है। अतः मिर्ज़ा जी ने इसका पर्यायवाची शब्द बलिदान रखा है। वेद में अंग २ कटा कर धर्म प्रचार की सच्चाई का प्रमाण देने वाले मनुष्य को अमर पदवो को प्राप्ति होतो है। इसकी मुक्ति में कोई सन्देह नहीं रहता। क़ुरान शरीफ़ में भी शहीदों, सत्य पर मिटने वालों को जीवित कहा है। जिनके लिए न कोई भय और न कोई शोक है। खुदा के समीप इनका पद उच्च से उच्च है।

पं० लेखराम की शहादत पर संसार ने साक्षी दी कि उनका धर्म सत्य और वह सत्य के प्रचारक थे। स्वयं श्री मिर्ज़ा जी ने पं० जी के बलिदान से पूर्व वेदों को नास्तिक मत का प्रतिपादक घोषित किया था।

नास्तिक मत के वेद हैं हामी।
बस यही मुद्आ (प्रयोजन) है वेदों का ॥

सिलसिला जिल्द २ पृ० ६५६

किन्तु पं० लेखराम आर्य पथिक के महा बलिदान के पश्चात् स्पष्ट रूप से घोषणा की जब कि मिर्ज़ा जी के दिवंगत होने में चार दिन शेष थे। अतः यह उनका अन्तिम लेख और अहमदी मित्रों के लिए यह उनकी अन्तिम वसीयत है कि वह भी श्री मिर्ज़ा की भान्ति पं० जी को सच्चा शहीद और वेद मुकद्दस को पूर्ण ईश्वरीय ज्ञान स्वीकार करें।

मिर्ज़ा जी ने अपनी अन्तिम पुस्तक में घोषणा की है —यह पूज्य पं० जी की ईश्वर से सच्चे मन से की गई प्रार्थना का परिणाम है जो इस प्रकार है कि :—

.... हे परमेश्वर ! हम दोनों में सच्चा निर्णय कर और जो तेरा सत्य धर्म है उस को न तलवार से किन्तु प्यार से तर्क संगत प्रकाश से जारी कर और विधर्मी के मन को अपने सत्य ज्ञान से प्रकाशित कर जिस से अविद्या, पक्षपात, अत्याचार और अन्याय का नाश हो। क्योंकि झूठा सच्चे की भान्ति तेरे सम्मुख प्रतिष्ठा को प्राप्त नहीं कर सकता।" नुसखा (निदान) १८८८ ईस्वी

मिर्ज़ाजी की प्रार्थना असफल

पं० जी की प्रार्थना से पूर्व मिर्ज़ा जी ने भी अपने विचार तथा मन्तव्य के अनुसार ईश्वर से प्रार्थना की थी। जो निम्न प्रकार है :—

"......... ऐ मेरे जब्बारो कहार खुदा ! यदि मेरा विरोधी पं० लेखराम कुरआन को तेरा कलाम (वाणी) नहीं मानता। यदि वह असत्य पर है तो उसे एक वर्ष के अन्दर अज़ाब (दुःख) की मृत्यु दे।"

सुरमा सन् १८८६ ईस्वी

मिर्ज़ा जी ने १८८६ ईस्वी में पं० जी के विरुद्ध ईश्वर से उन के लिये दुःखपूर्ण मौत मारने की प्रार्थना की। किन्तु यह प्रार्थना वर्ष भर बीत जाने पर भी स्वीकार नहीं हुई। अतः मिर्ज़ा जी के प्रार्थना के शब्दों में कुरान् शरीफ़ ईश्वरीय ज्ञान सिद्ध न हो सका। किन्तु पं० लेखराम जी ने मिर्ज़ा जी की प्रार्थना का एक वर्ष बीत जाने और उस प्रार्थना के विफल सिद्ध होने पर १८८८ ईस्वी में अपनी आर्यों

की गौरव पूर्ण प्रार्थना परमात्मा के समक्ष सच्चे एकाग्र मन से लिखी। जिस में एक वर्ष की अवधि की शर्त नहीं थी। जीवन भर में किसी समय भी इस प्रार्थना की आपूर्ति सम्भव थी जो परमात्मा की कृपा से पूर्ण सफल हुई। अतः वेद के ईश्वरीय ज्ञान होने तथा पं० जी के सत्य सिद्ध होने में कोई सन्देह न रहा।

इसलाम की परिभाषा में इसी का नाम "मुबाहला" है। जो दो भिन्न विचारवान् व्यक्ति भीड़ के सम्मुख शपथ पूर्वक परमात्मा से प्रार्थना करते हैं। मिर्ज़ा जी ने अन्तिम निर्णय के लिए मुबाहला की प्रस्तावना रखी थी और उस की विस्तृत प्रार्थना लिख कर छाप दी थी। चाहे नियम पूर्वक मुबाहला नहीं हुआ। किन्तु उस की रसम पूरी मान ली जाए। तो मिर्ज़ा जी की पराजय और आर्य गौरव पं० जी की विजय स्पष्ट सिद्ध है।

पं० जी की प्रार्थना यह है कि "विधर्मी" (मिर्ज़ा जी) के मन में सत्य ज्ञान का प्रकाश कर।"

परमात्मा ने इसे स्वीकार किया और मिर्ज़ा जी धीरे २ वैदिक धर्म के सिद्धांतों के निकट आते चले गये। प्रथम मिर्ज़ा जी ने जीव तथा प्रकृति को नित्य स्वीकार किया। पुनर्जन्म के सिद्धान्त पर ईमान लाए। स्वर्ग, नरक के इसलामिक सिद्धांत को परिवर्तित किया। जिहाद की समाप्ति की घोषणा की। अन्त में अपनी मृत्यु से चार दिन पूर्व "पैग़ामे सुलह" (शान्ति का सन्देश) नामी पुस्तक लिखी जिस में अपने वैदिक धर्मी होने की घोषणा इन शब्दों में की :—

(१) "हम अहमदी सिलसिला के लोग सदैव वेद को सत्य मानेंगे। वेद और उस के ऋषियों की प्रतिष्ठा करेंगे तथा उन का नाम मान से लेंगे।" पृ० ३०

(२) "इस आधार पर हम वेद को ईश्वर की ओर से मानते हैं और उस के ऋषियों को महान् और पवित्र समझते हैं। पृ० २७

(३) "तो भी ईश्वर की आज्ञानुसार हमारा दृढ़ विश्वास है कि वेद मनुष्य की रचना नहीं है। मानव रचना में यह शक्ति नहीं होती कि कोटि मनुष्यों को अपनी ओर खेंच ले और पुनः नित्य का क्रम स्थिर कर दें।" पृ० २७

(४) "हम इन कठिनाईयों के रहते भी ईश्वर के भय से वेद को ईश्वरीय वाणी जानते हैं और जो कुछ उस की शिक्षा में भूलें हैं वह वेद के भाष्यकारों की भूलें समझते हैं।" पृ० २९

इस से सिद्ध हुआ कि वेद की कोई भूल नहीं। वेद के वाम मार्गी भाष्यकारों की भूल है।

(५) मैं वेद को इस बात से रहित समझता हूं कि उस ने कभी अपनें किसी पृष्ठ पर ऐसी शिक्षा प्रकाशित की हो जो न केवल बुद्धिविरुद्ध और शून्य हो किन्तु ईश्वर की पवित्र सत्ता पर कंजूसी और पक्षपात का दोष लगाती हो।" पृ० १९

अतः वेद का ज्ञान ही तर्क की कसौटी पर उत्तीर्ण है और बुद्धि विरुद्ध नहीं तथा ईश्वर की दया से पूर्ण है क्योंकि ईश्वर में कंजूसी नहीं। आरम्भ सृष्टि में आया है जिस से सब के कल्याण के लिए हो और किसी के साथ ईश्वर का पक्षपात न हो।

(६) "इस के अतिरिक्त शान्ति के इच्छुक लोगों के लिए यह एक प्रसन्नता का स्थान है कि जितनी इसलाम में शिक्षा पाई जाती है। वह वैदिक धर्म की किसी न किसी शाखा प्रशाखा में विद्यमान है।" पृ० १४

अतः सिद्ध हुआ कि इसलाम संसार में कोई पूर्ण धर्म का प्रकाश नहीं कर सकता। क्योंकि उसकी शिक्षा तो अधूरी है। वह तो वैदिक धर्म की शाखा प्रशाखा में पूर्व से लिखी हुई है। वास्तव में तो वेद का धर्म ही पूर्ण और भूलों से रहित होने से परम पावन है।

परमात्मा आर्यावर्त, पाक, इसलामी देशों और संसार भर के अहमदी मित्रों तथा अन्य सभी लोगों को यह सामर्थ्य प्रदान करें कि वह अपने मनों को पवित्र करके स्वार्थ और पक्षपात की समाप्ति के साथ सत्य सिद्धांत युक्त वेद के धर्म को पूर्णतः स्वीकार करें। पं० लेखराम जी ने भगवान् से यही प्रार्थना सच्चे हृदय और पवित्र मन से की।

इस प्रार्थना की पुष्टि के लिए उन्होंने अपना जीवन वैदिक धर्म की बलिवेदी पर स्वाहा कहकर आहुत कर दिया। और सच्चे धर्म की सच्ची शहादत अपने खून से दे दी। जिस का प्रभाव यह हुआ कि मिर्ज़ा गुलाम अहमद के विचार परिवर्तित होते होते उनको वैदिक धर्म का शैदाई बना गए।

ऐ काश ! हमारी भी शाहदत प्रभु के सम्मुख स्वीकार हो और हमें वीर लेखराम की पदवी प्राप्त हो। पदवी नहीं, गुमनामी ही सही। किन्तु वैदिक धर्म की पवित्र बलिवेदी पर हमारी आहुति भी डाली जाकर उसके किंचित् प्रकाश से संसार में उजाला और वेदों का बोलबोला हो। परमेश्वर सत्य हृदय से की गई प्रार्थना को स्वीकार करें।

ओ३म् शम्

विदुषामनुचरोऽस्मि विनीतोऽहं भावत्कः शान्ति प्रकाशो नाम शास्त्रार्थ महारर्थी तिख्यातो हरयाणा प्रान्ते गुड़गांव (गुरुग्राम) वास्तव्यः।

—०—
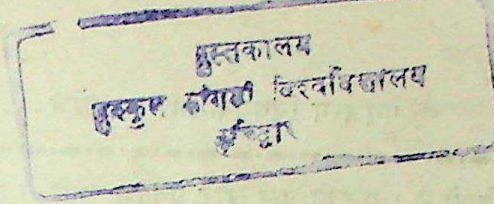
॥ ओ३म् ॥

द्वितीय भाग

पुनर्जन्म विषयक विस्तृत खोज

प्रथम प्रकरण

✡✡✡✡

×दर दीदए तंग मोर नूरस्त अज तो,
दर पाये ज़ईफ़ पिथ्थगाज़ोरस्त अज़ तो।
ज़ाते तो सज़ास्त मर खुदावन्दी ए,
हर वस्फ कि नासज़ास्त दूरस्त अज़ तो॥

अध्यात्म शास्त्र के इतिहास और आतम विज्ञान के अध्ययन से अच्छी प्रकार प्रगट् होता है कि पुनर्जन्म जिसे आवागवन भी कहते हैं यह अत्यन्त प्राचीन सिद्धान्त है जो प्रकृति के कठिनतम जटिल रहस्यों का खोलने वाला है। आर्यावर्त के ऋषि मुनियों से यूनान और मिश्र के तत्ववेत्ताओं तक जितने पुराने बुद्धिमान् लोग उन स्वाभाविक शक्तियों की ओर विचार कर रहे थे जो पांच ज्ञानेन्द्रियों की शक्ति से दूर हैं, विवेक तथा विचार किये बिना विश्वास न करना जिनका स्वभाव था, जिन्हें अहर्निश यही धुन लग रही थी कि हम जो कुछ देखते हैं, वह क्या है और क्यों हुआ? "तर्क एव ऋषिः" जिनकी पदवी और सत्यान्वेषण ही जिन के जीवन का ध्येय था।

आर्यावर्त के सबसे प्राचीन विधान निर्माण करने वालों ने जिनकी धार्मिक प्रशंसा इन शब्दों में की है कि :—

आर्षं धर्मोपदेशं च वेद शास्त्राविरोधिना।
यस्तर्केणानुसंधते सधर्मं वेद नेतरः॥

मनु० १४।१०६

जिनकी समस्त खोज यह थी कि जगत् में अहर्निश जो परिवर्तन दिखाई देते हैं, उनका सिद्धान्त क्या है? यह क्यों उत्पन्न होते हैं और उनका प्रयोजन क्या है? केवल यही नहीं प्रत्युत इन सबके पारस्परिक संयोग का आदिकरण (निमित्त कारण) कौन है? केवल आदि मूल नहीं किन्तु उसका हमसे क्या सम्बन्ध है और वह कहां है तथा हम उसे कैसे प्राप्त कर सकते हैं? आदिम ईश्वरीय ज्ञान (वेद) के स्वाध्याय से वह सब इस विषय में सहमत थे कि एक ईश्वरीय सत्ता समस्त सृष्टि की

×चींटी की छोटी सी आंख में तुझ से ही नूर=प्रकाश है, निर्बल मच्छर में तुझ से ही शक्ति है। तेरी संज्ञा ईश्वरत्व के योग्य है, जो गुण अयोग्य हैं वह तुझ से ही दूर हैं॥ (अनुवादक)

व्यवस्थापिका और न्यायकारिणी है। सबको बल और प्रकाश उसी से ही है। वह सर्वव्यापक, ज्ञानमय, सर्वशक्तिमान्, अजन्मा और निराकार है। सच्चिदानन्द स्वरूप, अजर, अमर, अभय, पवित्र, निर्विकार और पालनकर्त्ता है, जिसे कोई ओ३म्, ब्रह्मा, कोई यज़दान और ईज़द, कोई अल्लाह और रब्ब कोई गाड (God), इबली और यहोवा के नाम से पुकारते थे। वह इस सिद्धान्त पर भी एकमत थे कि जीवात्मा प्राकृतिक शरीर से पृथक् और उच्च सत्ता है। वह सत्पदार्थ अर्थात् वस्तुतः स्वयं सिद्धसत्ता है। वह केवल कोई गुण अथवा अवस्था नहीं और किसी की अपेक्षा से भी नहीं और इसी कारण से वह नाशवान् नहीं और न उत्पत्तिमान् पदार्थ है। यह जीव उस उच्च सत्ता (परमात्मा) की अपेक्षा एक देशी होने के कारण कर्मकर्त्ता और फल भोक्ता तथा सैंकड़ों रूपों को धारण करता हुआ सहस्रों जन्म जन्मान्तरों द्वारा लाखों योनियों में भ्रमण करता है। वह कभी उच्च से उच्च पदों पर पहुंचता और कभी निम्न से निम्नतम योनियों में फल भोगता हुआ नीच से नीच योनियों में चला जाता है क्योंकि वह अल्पज्ञ और अज्ञानी होने के कारण :—

+गहे वर तारम आला नशीनदं।
गहे बर पुश्त पाये खुद न बीनदं॥

इन सारे चक्रों और श्रेणियों का जिनमें जीवों को कर्मानुसार गुज़रना पड़ता है अर्थात् एक विश्रामगृह से दूसरे पड़ाव पर डेरा जमाना होता है। उसे उन सब दार्शनिकों की परिभाषा में आवागवन अथवा पुनर्जन्म कहते थे। इन सब बातों को वह अपनी सत्ता का सर्वस्व समझते थे। दार्शनिक युक्तियों के अंश विस्तार में कहीं कहीं कुछ थोड़ा बहुत मतभेद भी था किन्तु वह ऐसा न था जो मूल सिद्धान्त को निर्बल करे। वह युक्ति और तर्क की पद्धति थी कि इस सिद्धान्त तत्व से सर्वथा असंगत न थी।

आर्यावर्त, यूनान, फिनीशिया, रोम, ईजिप्ट (मिश्र) फारिस, चेलिडियन, कारथेज़ आदि के दार्शनिकों ने इस विषय में पूर्णतः अनुसन्धान करके अपने अपने मस्तिष्कों से मनन और बौद्धिक अन्वेषणों के पश्चात् सबने एक पथ पर पदार्पण किया था।

फीरीसाईडैस आदि विद्वान् वैशेषिक शास्त्र से सहमत थे। ऐंपी क्यूरस के सिद्धान्त वेदान्त शास्त्र के साथ मिलते थे। कन्फूनस आदि महात्मा योग और मीमांसा के साथ एकमत थे। पीथागोर्स का सत्यान्वेषण सांख्य शास्त्र से सम्बन्धित था। सुकरात, अफलातून, अरस्तू आदि के सिद्धान्त न्यायशास्त्र से मेल खाते थे। चाहे किसी अंश में इनका कुछ मतभेद भी हो तो भी ®तनासुख अरवाह (जीवों के पुनर्जन्म) के सम्बन्ध में जहां तक नियम की बात है इन सभी दार्शनिकों का मन्तव्य एक ही था। युगों तक यही सिद्धान्त उनके मनों को प्रकाशयुक्त करता रहा। उस समय के मनुष्य गृहस्थ काल के अतिरिक्त संसार में इतना नहीं फंसते थे। उनका कथन था :—

तनासुख़ बमआनी ज़ाएलशुदन व ज़ायल शुदन रूह अज़ क़ाबिले खुद, आमदन आं बक़ालिबेदीगर

+कभी तो बहुत ऊंची छत पर बैठते हैं और कभी पादतल को भी नहीं देख पाते।

® तनासुख शब्द अरबी का है। अंग्रेजी में इसे ट्रांसमीग्रेशन आफ़ सोल (Transmaigration of sovl) कहते हैं। अरबी में और भी कई शब्द इस भाव को प्रगट् करते हैं, अतः हम सबके अर्थ यहां लिख देते हैं।

(अज़ मुन्तखिब व ग़यास) तनासुख़ के अर्थ परिवर्तित होने के हैं और जीव का स्व शरीर से परशरीर में प्रवेश करना (यह अर्थ मुन्तखिब और ग़यासुल्लुगात इन दोनों कोषों में लिखे हैं) मसख़—एक रूप से दूसरे रूप में बदल जाना किन्तु दूसरा रूप पूर्व से नीच हो। (यह करीमुल्लुगात में लिखा है) इत्यादि–

चंदी ग़मे मा बहसरते दुन्या चीस्त।
हरगिज़दी दी कसे कि जावेद बिज़ीस्त॥
ईंयक नफ़से कि दर तनस्त अरियत अस्त।
बा आरियते आरियते बायद जीस्त॥*

कर्म और उसका अटल परिणाम ऐसा प्रबल नियम था कि जिससे इन्कार करने का साहस जगत् में कोई बुद्धिमान् व्यक्ति न कर सकेगा। वास्तव में इन्कार कर भी न सकता था क्योंकि :— अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतंकर्मशुभाशुभम्‡ के अपरिवर्तित और न मिटने वाले प्रभाव से प्रभावित न होने की किसको शक्ति है कि इसे स्वीकार न करे, यही प्रबल कारण था कि ईश्वरभक्त और नास्तिक लोग भी इसकी सत्यता से इन्कार नहीं कर सकते थे। चाहे इसके परिणाम पर पहुंचने के लिये इनकी युक्ति प्रयुक्ति ऋषियों से कुछ भिन्न थी और उनके परिज्ञान में कहीं कहीं स्पष्ट भूल थी किन्तु इसका परिणाम यथार्थ था। क्योंकि कोई दूषित भावना अथवा अशिष्ट परिज्ञान वहां तक न पहुंचता था। चाहे वह परमात्मा पर विश्वास न करते थे और किसी द्रव्य अथवा कार्य को उस पर निर्भर न मानते थे तो भी उसके स्थान पर उन्हें प्राकृतिक नियमों का (जो वास्तव में ईश्वरीय सत्ता के कारण से हैं) आश्रयण लेना पड़ता था। अतः जीवों के पुनर्जन्म की यथार्थता सब पर प्रगट् थी। कोई इसे एक तथ्य के लिये आवश्यक समझता था और कोई दूसरे तथ्य के लिये आवश्यक जानता था। किसी की दृष्टि में कार्यजगत् का कारण एक विशेष बात थी। और किसी की दृष्टि में कोई दूसरी बात।

आज से अढ़ाई सहस्र वर्ष पूर्व तक समस्त संसार में विज्ञान वायु बह रहा था और समय श्रेष्ठ रूप धारण कर रहा था कि जिसे दार्शनिक विद्वान् पूर्णता का समय कहते हैं। तब पुनर्जन्म वाद ऐसा सर्वमान्य सिद्धान्त था जैसा कि जन्म होने के पश्चात् मरना।

इसके पश्चात् अन्धकारमय युग आया। ज्ञान विज्ञान लुप्त हुए, वैदिक विषयों पर विचार विमर्श का अन्त होने लगा, उचित, अनुचित दोनों प्रकार की बातों का नाम दीनदारी रखा गया और जड़ पदार्थों की पूजा आरम्भ हुई। बुद्धि का नाश होने के साथ साथ अनुसरण और अज्ञान पूर्ण अन्धविश्वास का कुराज्य स्थापित हो गया। कथानकों को पवित्र धर्म पुस्तकें माना जाने लगा, मनुष्यों में ईश्वरीय दैवी शक्ति और उसके चमत्कार यथार्थ माने लाने लगे। एक परमेश्वर से सहस्रों परमेश्वरों की कल्पना की गई। ईश्वर के पुत्र पुत्रियों की कल्पना भी होने लगी। खुदा ने अपने बनाये लोगों से सम्मतियां लेनी शुरू कीं। स्वयं खुदा खुदाई करते करते थक गया, उसे आराम करने और अपना

---

*हमें संसार की हसरत का दुःख किसलिये है? तूने कदापि न देखा होगा कि कोई सदैव जीवित रहे। यह श्वास तेरे शरीर में मांगा हुआ है, मांगे हुए के साथ मांगने वाले के ढंग पर जीवन व्यतीत करना चाहिये। (अनुवादक)

‡शुभाशुभ कृतकर्म का फल अवश्यमेव भोगने योग्य होता है। (अनुवादक)

कार्य दूसरों को सौंपने की आवश्यकता पड़ी, खुदा बूढ़ा हो गया और उसकी दृष्टि में न्यूनता आ गई, वह अपने भक्तों के अनिष्ट को स्वयं न देख सका, वह अन्यों की सहायता के बिना शुभाशुभ का फल देने में असमर्थ रहा, खुदा का स्वभाव मनुष्यों जैसा हो गया, वह कभी राजा विक्रमादित्य, राजा भोज और कहीं अलाउद्दीन गौरी, महमूद ग़ज़नवी के रूप में दृष्टिगत होने लगा। कहीं उसकी आत्मा कबूतर के रूप में उड़ती दिखाई दी। खुदा के लिये भवन बनाए गये और उन पर चढ़ने की सीढ़ियां बनीं। वह न्यायकारी न रहा, घूंस लेने लगा और संभवतः वृद्ध होने के कारण उसकी कमर दर्द करने लगी उसे शोरबा और मांस की आवश्यकता पड़ी। पापों से बचने और मुक्ति प्राप्ति के लिये मनुष्यों की बलि होने लगी। पुनर्जन्म को तिलांजलि दी, तोबा, प्रायश्चित् और बलिदानों ने पाप क्षमा का ठेका ले लिया। मोक्ष में भी वास्तविक आनन्द और पूर्ण शान्ति की आवश्यकता न रही प्रत्युत वहां भी मद्य मांस की दुकानें खुल गईं। अकबर और शद्दाद (बादशाह) के मीना बाज़ारों की भान्ति वहां भी हूर (अप्सरायें) और गिल्मान (लौंडे) रहने लगे। बौद्धिक तत्वों से घृणा और कथा कहानियों से प्रेम होने लगा। दर्शनशास्त्र का दीपक बुझने लगा, सम्प्रदायवाद को बुद्धि से शत्रुता हो गई, कपूर के ढेर नमक के भाव पर बिकने लगे। समय नित्य नए रंग बदलने लगा और ऐसे ऐसे परिवर्तन हुए कि आश्चर्य दृष्टि भी देखने का साहस न कर सकी। डाक्टरों ने जब चीर फाड़कर देखा और मानव शरीर तथा पशु शरीरों में कोई जीवात्मा का पता न लगा सके तो झट जीवात्मा की सत्ता से ही इन्कार कर बैठे। मानव केवल एक अस्थिपुंज मान लिया गया। ईश्वर का अस्तित्व आत्मा की सत्ता और परलोक भ्रमजाल दीखने लगे। यदि किसी ने इन सत्पदार्थों को स्वीकार किया भी तो केवल उपरिरूपेण नाम मात्र के लिये। उनके गुणों पर दृष्टिपात नहीं किया, उनके सम्बन्धों को किसी ने नहीं सोचा। विद्याध्ययन केवल जीविकोपार्जन का साधन बना लिया। एकान्तवास का अभ्यास भी शय्या की शोभा और निद्रा का आनन्द देने लगा। सत्य यह है कि इस प्रकार हम मनुष्य मनुष्यत्व से पशुत्व की ओर बढ़ते चले जा रहे हैं और आध्यात्मिकता के स्थान पर शरीर पूजा में संलग्न हैं। अतः यह रोग हमारी आत्मीयता को बिगाड़ने वाला, हमारी सभ्यता का नाश करने वाला और हमारे जीवन को स्वप्न से भी बढ़कर निकृष्ट करने वाला है।

यदि इसका कुछ निदान संभव है तो वह यह है कि हम अपनी आत्मा को जो तन्द्रावस्था में है, जागृत करने का प्रयत्न करें। इस यत्न के लिये कारण यह है कि उन सत्य सत्ताओं को जो सर्वथा इन्द्रियातीत हैं, अपने मन पर इस प्रकार प्रगट करें कि जिस प्रकार सफेदी और स्याही का ज्ञान हमारी आंखों पर प्रगट है। ऐसे ही विचारवान् लोग दार्शनिक कहलाते हैं और इसी प्रकार के यत्नशील लोग कभी न कभी गिरते पड़ते उस मार्ग पर पहुंच जाते हैं जो राजकीय कोष के मार्ग से मिला हुआ है। शान्ति के राज्य के बिना लोग ऐसे सूक्ष्म विषयों पर विचार नहीं कर सकते। क्योंकि जिन दिनों प्राणों को संकट हो, उन दिनों दार्शनिक मन्तव्यों पर विचार कौन कर सकता है? यही कारण है कि इस शताब्दी में पुनः बुद्धिमान् लोगों ने विज्ञान और अध्यात्म वाद की ओर ध्यान देना आरम्भ किया।

फ्रांस के डाक्टर लुईकूनी ने एक बृहद् ग्रन्थ "दी लाइफ आफ्टर डैत्थ" अर्थात् "जीवन मृत्यु के पश्चात्" इस नाम से इसी शताब्दी में प्रकाशित किया, जिसने पश्चिमी संसार में हलचल मचा दी। इधर थियासोफ़ीकल सोसाएटी ने अमरीका से इसका प्रकाशन आरम्भ किया।

इसी ओर आर्यावर्त में स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज ने वैदिक धर्म प्रचार के द्वारा पुनर्जन्म विषय पर समस्त मतमान्तरों के विद्वानों को चैलेंज दिया। अनीश्वर वाद का शरीर कांपने

लगा और मतान्धता नष्ट प्रायः होने लगी जिससे उसके सृष्टि नियम विरुद्ध चमत्कार पुराने चीथड़ों की भान्ति टुकड़े टुकड़े हो रहे हैं। विज्ञान मतान्धता की वास्तविकता को प्रगट् कर रहा है, स्वार्थ दूर भाग रहा है, समस्त मतों के लोग पशु जगत् में जीवात्मा की सत्ता को मानने लग गये हैं, शीघ्र समय आने वाला है, प्रत्युत ज्ञानरूपेण आ ही चुका है कि पुनर्जन्म का सिद्धान्त पुनः सर्व संसार में प्रचलित हो ग्रौर वही धर्म विद्वानों को स्वीकृत हो जिसमें ज्ञान प्रकाश का ग्राविर्भाव हो।

तात्पर्य यह् कि जिस प्रिय स्वभावयुक्त व्यक्ति ने स्व बुद्धि लगा कर यथा सामर्थ्य अन्वेषण में संलग्न रहकर कुछ भी ज्ञान से कार्य किया, उसे तुरन्त कुछ न कुछ सत्यता इस पवित्र सिद्धान्त की ज्ञात हो गई और यदि किसी ने सर्वज्ञ परमेश्वर को शिक्षा वेद द्वारा प्राप्त की तो पुनः किसी ग्रवस्था में भी अभीष्ट स्थान पर पहुंचे बिना न रह सका। जिन ऋषियों ने पवित्र वेद ज्ञान प्राप्त कर के सोचा और जिन्होंने हार्दिक ध्यान से बौद्धिक पुस्तकें पढ़कर एकान्त वास और अवसर मिलने पर प्रायः अपनी अन्तिम यात्रा की ग्रावश्यकता पर विचार किया ग्रथवा जिनके मन संसार के कुप्रभाव से अधिक दूषित नहीं हुए, उनके सैंकड़ों दृष्टान्त ग्रार्यजाति में भरे पड़े हैं कि ऐसे सत्पुरुषों ने मृत्यु से कई वर्ष, मास, दिन पूर्व बता दिया कि हम ग्रमुक वर्ष ग्रथवा अमुक दिन मर जायेंगे और इस विशेषता से उनकी आत्मा ने इस भौतिक शरीर से प्रयाण किया कि दर्शक चकित रह गये। जिस प्रकार एक पक्षी किसी वृक्ष से प्रसन्नतापूर्वक उड़ जाता है। ठीक इसी प्रकार उनके जीवों की गति हुई, किसी वेदना या शरीर कष्ट से उन्होंने उफ़ तक न की। जैसे—

(१) महात्मा भीष्म पितामह् जी छः मास तक सूर्य दक्षिणायन होने के विचार से घायल होकर भी योगाभ्यास करते हुए रणभूमि में पड़े रहे और जब सूर्य उत्तरायण हुग्रा, तब प्राण त्याग दिये।

(२) उदयपुर के प्रसिद्ध वीर राजा प्रताप के सम्बन्ध में प्रसिद्ध है कि जब तक उस को विश्वास न हुग्रा कि उसका बेटा शत्रुग्रों से बदला लेगा, तब तक उस की आत्मा नहीं निकली।

(३) स्वामी दयानन्द जी महाराज ने बहुत से लोगों के सम्मुख एक महात्मा योगी के पूछने पर संवत् १९३६ विक्रमी में हरिद्वार कुंभ पर उत्तर दिया था कि मैं आगामी कुंभ अर्थात् संवत् १९४८ को न देखूंगा ग्रौर पुनः सन् १८७९ में मेरठ में करनल अल्काट ने इस बात को ग्रपने पत्र थियोसाफिस्ट में इस प्रकार लिखा है :—

"कि स्वामी जी योगी पुरुष थे, हमें उनके योगी होने में कुछ भी सन्देह नहीं, उन्होंने अपने स्वर्ग-वास से कई वर्ष पूर्व मेरठ में हमें कहा था कि मैं सन् १८८४ कदापि न देखूंगा।"

(४) श्री गोविन्दपुर जिला गुरदासपुर के एक प्रतिष्ठित आर्य ने हमें बताया कि उसके भाई ने उसे कई घंटे पूर्व बता दिया था कि सूर्यास्त समय मर जाऊंगा। जब दो घंटे शेष रहे तब भी सब घर वालों को उसने कह दिया कि अभी दो घंटे शेष हैं, इसके अल्प काल पश्चात् भूमि शुद्ध करा कर कुशा बिछवा, ग्रासन लगा, ईश्वर के ध्यान में मग्न हुआ और हमें कहा कि तुम कोई कोलाहल न करो। जब दो श्वास शेष रहे तब आंखें खोलीं और कहा कि ग्रब मेरे दो श्वास शेष हैं तुम मेरे पीछे रोना नहीं, यह कहा दो श्वास लिये और जीव प्रयाण कर गया। पश्चात् हम ने उसे चित लिटा दिया।

ऐसी घटनायें एक स्थान पर नहीं कई स्थानों पर हुई हैं और सहस्रों मनुष्यों की साक्षी है अतः जीवात्मा ग्रौर उसकी वास्तविकता, उसकी सत्ता ग्रौर शरीर से सम्बन्ध, कर्म, जीव ग्रौर ईश्वर का सम्बन्ध यह सब सोचने ग्रौर विचारने के योग्य मन्तव्य हैं। जिस प्रकार इनका यथार्थ तत्वज्ञान होता है ग्रथवा युक्तियुक्त उत्तर मिलता है, वही पुनर्जन्म सिद्धान्त है। आशा है कि पाठकगण इसके समझने में सावधान होकर पूर्ण हवन से यत्नशील होते हुए परमार्थ प्राप्ति में लग्नशील होंगे।

कुछ स्पष्ट और प्रबल युक्तियों से पुनर्जन्म सिद्धि

युक्ति एक—आवागवन संसार की समस्त **वस्तुजात** में स्वाभाविक है क्योंकि समस्त पदार्थ आवागवन के चक्र में हैं और यह प्राकृतिक नियम है, अतः जीवात्मा भी प्राकृतिक नियमों से बाहिर नहीं हो सकता।

द्वितीय युक्ति—सहस्रों जाते हैं और सहस्रों आते हैं, यदि एक बार उत्पन्न होना और मरना होता तो प्रत्येक जीवात्मा मानव चोले में क़ियामत पर विश्वास रखने वालों के कथनानुसार प्रलयकाल तक विद्यमान रहता। परन्तु ऐसा नहीं और यदि पुनर्जन्म न मानें तो अन्य मनुष्य भविष्य में उत्पन्न होने असंभव होते। जो कहते हैं कि नूतनजीव आते हैं तो यह अनुभव से ज्ञान और बुद्धि के विरुद्ध है। इसके कारण निम्नलिखित हैं :—

(१) जितने शरीर बनते हैं, इसी मिट्टी से बनते हैं, जो भूमि पर पहिले विद्यमान है, कोई नवीन मिट्टी नहीं बनती।

(२) जितनी वर्षा होती है उसी वाष्प से जो भूमि से उठती है। जो इससे पूर्व पानी था वह कहीं से नया पैदा नहीं होता।

(३) जितने वृक्ष उत्पन्न होते हैं, उसी वर्तमान मिट्टी से उत्पन्न होते हैं, अभाव से भाव में परिणत नहीं आते।

(४) जितनी नदियाँ बहती हैं, उसी पानी से ही, जो पूर्व नदियों से समुद्र में गया। कहीं अभाव से भाव में परिणत नहीं होतीं।

(५) जितने मकान बनते हैं, वह सब उसी मिट्टी और उसी ईंट पत्थर से बनते हैं, जो पहिले भूमि पर किसी न किसी रूप में विद्यमान हैं। और कुन (होजा) कहने से उत्पन्न नहीं होते।

जब समस्त शरीर उसी प्रकृति से बनते हैं जिससे पूर्व सहस्रों बन चुके हैं। अतः स्पष्ट प्रकट है कि जीव भी वही आता है जो पूर्व किसी शरीर से पृथक् हो चुका है। जिस प्रकार ईश्वर अन्य नयी प्रकृति की रचना नहीं करता (जैसाकि जीव को उत्पत्तिमान् मानने वाले कहते हैं) प्रत्युत उसी नित्य-प्रकृति से पौनःपुण्येन बनाता है, इसी प्रकार वही नित्य जीवात्मा बार-बार आते हैं; न नवीन उत्पन्न होते हैं और न एक ही बार आते हैं।

तृतीय युक्ति—जिस प्रकार चन्द्रमा, सूर्य, नक्षत्र, ग्रह, उपग्रहादि विभिन्न नक्षत्रों में भ्रमण करते हुए बार-बार चक्कर खाते हुए आवागवन कर रहे हैं, कभी उदय होते हैं कोई २४ घंटे, कोई १५ दिन, कोई मास भर, कोई छः मास, कोई वर्ष, कोई अढ़ाई वर्ष, कोई १२ वर्ष, कोई सहस्र वर्ष, कोई लक्ष वर्षों के पश्चात् दृष्टिगत होते हैं। मूर्ख समझते हैं कि यह नये आते हैं किन्तु ज्योतिर्विद् विद्वान् दीर्घ दृष्टि से ज्ञान और विज्ञानानुसार समझते हैं कि वही नक्षत्र बार-बार आते हैं। यही अवस्था जीवों की है, वह भी आवागवन में बार-बार आते हैं परन्तु विज्ञान-विहीन लोग मानते हैं कि जीव नये आते हैं।

चतुर्थ युक्ति—जो पदार्थ अनादि हैं उसके गुण कर्म स्वभाव भी अनादि हैं। जीव चेतन होने के कारण जड़ और चेष्टारहित नहीं, प्रत्युत कर्म करने के स्वभाव से युक्त हैं। और शरीर धारण करना भी उनका स्वभाव है, इस आधार पर स्पष्ट प्रकट है कि जीवात्मा और शरीर का संयोग वियोग अर्थात् आवागवन भी उसके लिये आवश्यक है।

पंचम युक्ति—जीवों का शरीर में आकर भिन्न-भिन्न प्रकार के सुख-दुःख का भोगना स्पष्ट प्रगट करता है कि उनके ही विभिन्न कर्मों का परिणाम है, अन्यथा सब जीवों को एक जैसे फल प्राप्त होते, क्योंकि परमेश्वर न्यायकारी है जो अकारण किसी को सुख-दुःख नहीं देता। एक बालक का स्वस्थ उत्पन्न होना और दूसरे का अन्धा, लूला, लंगड़ा, कोढ़ी उत्पन्न होना आवागवन को सिद्ध करता है।

षष्ठ युक्ति—पुनर्जन्म न मानने वाले मत यह मानते हैं कि इस जन्म के कर्मों के अनुसार ही स्वर्ग नरक की प्राप्ति होगी। किन्तु यह बड़ी भारी भूल है क्योंकि परमेश्वर न्यायकारी है, परिमित कर्मों के लिये नित्य का स्वर्ग नरक दे देना उसके न्याय के सर्वथा विरुद्ध है, क्योंकि न्याय यह कहता है कि सीमित कर्मों का फल सीमित होना चाहिये अतः जब तक पुनर्जन्म न माना जाए, ईश्वर के ऊपर से यह दोष दूर नहीं हो सकता सीमित कर्मों के लिये सदैव के नरक में डालने वाला अत्याचारी खुदा कभी ईश्वरत्व के योग्य नहीं।

सप्तमी युक्ति—जब तक पापी को अवसर न दिया जाय कि वह पुनः शुभ कर्म करे तब तक ईश्वर की अपार दयालुता का प्रकाश नहीं हो सकता। एक बार जन्म मानने से उसकी सत्ता दया और अनुग्रह के शुभगुणों से शून्य हो जाती है। पुनर्जन्म मानते ही यह आक्षेप दूर हो जाता है और मनुष्य को सदा नेक (सदाचारी) बनने का अवसर दिया जाता है।

अष्टम युक्ति—पुनर्जन्म न मानने से एक आक्षेप ईश्वर पर यह आता है कि यदि जीव को कर्मों का फल नहीं, तो क्यों दुःख दिया गया जो इसका उत्तर देते हैं कि जीव की परीक्षार्थ ऐसा किया गया, तो वह एक और दोष खुदा पर लगाते हैं क्योंकि परीक्षा वह लेता है जो अज्ञानी हो, जिसे ज्ञात न हो, जो अन्तर्यामी न हो, परन्तु ईश्वर तो सर्वज्ञ है अतः परीक्षार्थ ऐसा करना सर्वथा असत्य है, इस आक्षेप की निवृत्ति पुनर्जन्म माने विना नहीं हो सकती।

नवम युक्ति—जीव मात्र मनुष्य से लेकर कीट पतंग पर्यन्त मृत्यु (शरीरविच्छेद) से डरते हैं इससे भी स्पष्ट प्रगट है कि पूर्व उन्होंने कभी मृत्यु (शरीरविच्छेद) से वियोग प्राप्त किया है, अन्यथा जिससे सम्बन्ध न रहा हो उससे मनुष्य नहीं डरता।

दशम युक्ति—जीव शरीर में प्रविष्ट हुआ उसका आना चाहे कर्माधीन मानो, चाहे अकारण केवल खुदा के आदेश से जानो, जिस भी प्रकार मानो इस पर प्रश्न होता है कि जिस खुदा ने अब इस को शरीर से संयुक्त किया, कोई कारण प्रतीत नहीं होता कि इस शरीर से पूर्व और पश्चात् उसका आदेश ऐसा लागू न हो सके, जबकि समस्त सृष्टि-नियम इसका सहायक है अतः पुनर्जन्म से इनकार करना मानो सृष्टि नियम से इनकार करना है।

एकादश युक्ति—संसार के दुःख सुख और शोक हर्ष के दृश्य आँखों के सम्मुख रख कर (जिनसे सत्यवादी और नास्तिक भी इनकार नहीं कर सकते) अत्यन्त कठिन दिखाई देता है कि यदि हम यह कहें कि ईश्वर की इच्छा अथवा विचार अथवा आकस्मिक घटना अथवा शासन अथवा बल प्रयोग अथवा कोप अज्ञानतावश ऐसा हो गया, अथवा कुछ असत्य प्रेमियों की भ्रान्ति इसे ईश्वरीय दया ही कर दें, परन्तु मन किसी प्रकार शान्ति प्राप्त नहीं करता। और न प्रश्नकर्ता आत्मा को सन्तोषजनक उत्तर मिलता है, परन्तु यह सारे झगड़े और सन्देह कर्मचक्र मानने से स्वतः ही निर्णीत होकर दूर हो जाते हैं, वस्तुतः पुनर्जन्म सिद्धान्त की शिक्षा के विना कोई सन्मार्ग नहीं।

द्वादश युक्ति—जीवों को शरीरों में डालना ईश्वरीय गुणों में से है और यह भी सर्वमान्य

सिद्धान्तों में से है कि ईश्वरीय गुण अनादि तथा सनातन हैं और जब सनातन हैं तो किसी अवस्था में संभव नहीं कि ईश्वरीय गुण कभी अकस्मात् जोश मारें, जिससे नास्तिकता प्रगट हो अतः न तो आकस्मिक बात है और न अकारण है, प्रत्युत प्राकृतिक नियमों के अनुसार कर्मचक्र के आधार पर ईश्वर सनातन गुणों से जीवों को शरीरों द्वारा फल और दंड देता है।

त्रयोदश युक्ति—भले बुरे जीव शरीर-त्याग के पश्चात् प्रलयकाल तक एक स्थान विशेष पर रखे जायेंगे अथवा कर्मानुसार भिन्न-भिन्न स्थानों वा शरीरों में (जायेंगे) ? यदि कर्मानुसार पृथक्-पृथक् रहते हैं तो फल मिल चुका, और कयामत (प्रलय) की आवश्यकता नहीं। यदि एक ही खाते में भरे जाते हैं तो बहुत बड़ा अन्याय-अन्धेर नगरी, चौपट राजा—और ऐसा ही अन्धेर कयामत (प्रलय) में होगा। अतः यह सीधा मार्ग है कि उनको कर्मानुसार फल मिले। क़यामत की कोई आवश्यकता नहीं क्योंकि ईश्वर के कोई गुण कभी स्थगित नहीं होते, जबकि क़यामत के मानने से ईश्वर के गुण न्याय और दया दोनों इस समय व्यर्थ सिद्ध होते हैं, अतः आवागवन ही ऐसा दृढ़, यथार्थ और सत्यमार्ग है कि जिसके मानने से परमेश्वर की सत्ता समस्त दोषों से मुक्त हो जाती है।

व हाजतरीकु स्सवाबु व मसला लाजवाब। अर्थात् यही नियम पुण्यप्रद और यही मन्तव्य अन्तिम अनुपम सिद्धान्त है।

———

प्रथम अध्याय

वेद शास्त्र से पुनर्जन्म सिद्धि

वेदों का मुख्य सिद्धान्त यह है कि परमात्मा पारब्रह्म एक अद्वितीय अनुपम है और वही समस्त प्राकृतिक जगत् का रचयिता और चेतन जगत् का एकमात्र सनातन प्रभु (स्वामी) है। भले बुरे कर्मों के कर्ता जीव हैं। जीव कर्म करने में स्वतन्त्र और परमात्मा जगत् का न्यायकारी महाराजा और जीव उसकी प्रजा हैं। इस आधार पर वह कर्मानुसार प्रत्येक जीव को शुभा-शुभ कर्मों के सुख-दुःख फल देता है। क्योंकि कर्मों का क्रम शरीर के साथ विछिन्न नहीं हो जाता, जबकि उसका कर्त्ता जीव है और जीव नित्य होने से नष्ट नहीं होता अतः वह इस शरीर के नष्ट होने पर ईश्वरीय न्यायानुसार पर शरीर में प्रवेश करता है और सुखदुःख को भोगता तथा नवीनकर्म करता हुआ विभिन्न लोक-लोकान्तरों में ईश्वरीय नियमाधीन भ्रमण करता रहता है जिससे उसे पुण्योपार्जन करके धर्मात्मा बनने का बार-बार लाखों बार अवसर दिया जाता है जब सर्वथा पुण्यकर्मा बन गया, उसे मुक्ति प्राप्त हो जाती है तथा परमानन्द प्राप्त करके ईश्वरीय नियमानुसार परान्त काल अर्थात् ३६०००×४३२००००००० = १५५५२०००००००००० वर्षों तक मोक्ष में वह परमानन्द को भोगता है और इसी का नाम आवागमन अथवा पुनर्जन्म है।

वैदिक परिभाषा में इस समस्त संसार को एक घट चक्र से उपमा दी है, इस चक्र का नियामक व स्वामी परमेश्वर है। प्रत्येक लोटा भिन्न-भिन्न शरीर हैं और उनके अन्दर जल मानो जीव हैं। इस की रस्सियां अथवा जंजीर कर्मचक्र तथा संसार मानो कूप (कुआं) की भांति है। जिस प्रकार घट (लोटे) खाली होते और पुनः-पुनः भरे जाते हैं, इसी प्रकार जीव एक शरीर को छोड़ते और पुनः दूसरा शरीर ग्रहण करते हैं और चक्र ईश्वरीय नियमानुसार घूम रहा है जिस प्रकार कोई घट (लोटा) रस्सी टूट जाने के कारण अथवा संबन्धविच्छेद हो जाने से कूप में गिर पड़ता है और जब तक पुनः कूप स्वामी को आवश्यकता न हो अथवा कूप को स्वच्छ करना अभीष्ट न हो, तब तक लोटा उसके अन्दर पड़ा रहता है परन्तु कूप स्वामी की इच्छा के कारण वह पुनः कुएं से निकाला जा सकता है और उस क्रम में जहां स्वामी को इच्छा हो बांधा जाता है, इसी प्रकार जीव कर्म बन्धन से छूटकर चिरकाल-पर्यन्त ईश्वरीय नियमानुसार परमानन्द में रह कर, आवागमन से छूट कर मोक्ष धाम में ब्रह्मानन्द भोगते हैं और परान्त काल के उपरान्त पुनः संसार में आते तथा ईश्वरीयनियमाज्ञानुसार जगत् के कार्य व्यवहार में तत्पर हो जाते हैं।

द्वासुपर्णासयुजा सखाया: समानं वृक्षं परिषस्वजाते।
तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्त्यनश्नन्नन्योअभिचाकशीति॥

ऋ० १।१६४।२०

ब्रह्म, जीव और प्रकृति तीन अनादि पदार्थ हैं। प्रकृति इनमें से जड़ है—इस अनादि प्रकृति से परमात्मा समस्त भौतिक जगत् को बनाता है और पुनः उसी में लीन कर देता है। जीव इस वृक्षरूपी संसार में पापपुण्यरूपी फलों को अच्छी प्रकार खाता है। तीसरा (पदार्थ) परमात्मा कर्मों के फलों को न भोगता, न उनमें फंसता और न संसार को ग्रहण करता है वह सर्वत्र प्रकाशमान हो रहा है। जीव से ब्रह्म और ब्रह्म से जीव और दोनों से प्रकृति सर्वथा पृथक् है। न कभी एक थे और न हैं—न होंगे—तीनों स्वरूप से अनादि हैं।

इसी मंत्र पर श्वेताश्वतरोपनिषद् के ऋषि व्याख्या करते हुए लिखते हैं :—

अजामेकां लोहितशुक्लकृष्णां बह्वीः प्रजाः सृजमानां स्वरूपाः।
अजो ह्येको जुषमाणोऽनुशेते जहात्येनां भुक्तभोगामजोऽन्यः॥

श्वेता० ४।५

एक अनादि और उत्पन्न न होने वाली जड़ प्रकृति है जिसमें से समस्त रंग, आकृति और स्वरूप प्रगट होते हैं।

दूसरा अनादि और प्रकृति के पदार्थों को भोगने वाला जीव है और वही इसे भोगता और इसके जाल में फंसता हुआ जन्म-मरण के बंधन में आता है।

तीसरा अनादि परमात्मा है, वह न प्रकृति के जाल में फंसता और न उसका भोग्यकर्म करता है किन्तु सब जीवों के कर्मों का फल दाता और सबका स्वामी तथा अधिष्ठाता है।

महाभारत के १४ वें पर्व के अध्याय ४७ में व्यास जी ने भी ऐसा ही माना है।

आयोधर्माणि प्रथमः ससाद ततोवपूंषि वृणुषे पुरूणि।
धास्युर्योनिं प्रथम आदिवेशायो वाचमनुदितां चिकेत॥

अथर्व ५।१।२

जो जीव पूर्व जन्मों में जैसे धर्म कार्यों को करता है वह उनके फल से अनेक उत्तम शरीरों को जन्मजन्मान्तरों में धारण करता है और अधर्मात्मा मनुष्य नीच पशु आदि के शरीर धारण करता और दुःखों को भोगता है, जो पूर्वजन्म के किये हुए फलों को भोगने का स्वभाव रखने वाला जीवात्मा है वह पूर्व शरीर को छोड़ वायु के साथ गमन करके पाप-पुण्यानुसार गर्भाशय में सृष्टिनियम के अनुकूल प्रवेश करता है, जो जीव भली प्रकार वैदिक धर्म का आचरण करता और अभी पूर्णता को न पहुंचा हुआ शरीर त्यागता है वह पुनः मनुष्य शरीर को धारण कर सुखों को भोगता और कर्म करता है और जो अधर्माचरण करता है तथा दुराचारी है वह दुःखी शरीरों में प्रविष्ट होकर अधोगति को प्राप्त होता जाता है और अनेक दुःखों को भोगता है।

अप्स्वग्नेसधिष्टव सौषधीरनुरुध्यसे।
गर्भेसञ्जायसे पुनः॥

यजु० २२।३६

जो जीव शरीर को छोड़ते हैं वह वायु और ओषधियों के द्वारा गर्भाशय को प्राप्त होकर पुनः शरीर धारण कर लेते हैं।

द्वेसृती अश्रृण्वं पितॄणामहं देवानामुतमर्त्यानाम् ।
ताभ्यामिदं विश्वमेजत्समेति यदन्तरा पितरं मातरं च ।।

यजु० १९।४७

इस संसार में पाप-पुण्य भोगने के लिये दो मार्ग हैं, एक पितृ—ज्ञानी विद्वानों का, दूसरा विज्ञान और विद्या रहित मर्त्यों अर्थात् मनुष्यों का। एक से मोक्ष हो जाता है और दूसरे से बार-बार जन्म-मरण के चक्र में आता है। इन दो मार्गों में समस्त संसार का चक्र घूम रहा है और आवागमन हो रहा है।

आसुनीते पुनरस्मासु चक्षुः पुनः प्राणमिह नो धेहि भोगम् ।
ज्योक् पश्येम सूर्यमुच्चरन्तमनुमते मृड्या नः स्वस्ति ।।

ऋ० १०।५९।६

हे सुखदायक परमेश्वर ! आप कृपा करके पुनर्जन्म में हमारे लिये उत्तम नेत्रादि इन्द्रियां स्थापन कीजिये और इसी प्रकार अच्छे प्राणयुक्त शरीर दान दीजिये इस जन्म में और पुनर्जन्म में हम लोग उत्तमोत्तम भोग्य पदार्थों को प्राप्त हों तथा सूर्य लोक, प्राण और आपकी महिमा को विज्ञान अर्थात् शास्त्र द्वारा और प्रेमभाव से सदैव देखते रहें। हे सबको मान देने हारे अर्थात् परिमाण वेत्ता इस जन्म और जन्मान्तरों में हमें सुखी रखिये जिससे हम लोग कल्याण को प्राप्त हों।

पुनर्नो असुं पृथिवीददातु पुनर्द्यौर्देवो पुनरन्तरिक्षम् ।
पुनर्न सोमस्तन्वं ददातु पुनः पूषा पथ्यां३ या स्वस्ति ।।

ऋ० १०।५९।७

हे सर्वशक्तिमान् ! आपके अनुग्रह से पृथिवी प्राण को, प्रकाश चक्षु और अन्तरिक्ष को देखते रहें और पुनर्जन्म में सोम अर्थात् औषधियों के रस हमें उत्तम शरीर देकर अनुकूल रहें और हमारे बल की पुष्टि करने वाले हों। हे परमेश्वर कृपा करके सब जन्मों में हमको सब दुःख निवारण करने वाली पाप रूप स्वस्ति अर्थात् कल्याण प्रदान कीजिये।

पुनर्मनः पुनरायुर्मआगन् पुनः प्राणः पुनरात्मा म आगन्पुनश्चक्षुः पुनः श्रोत्रं म आगन् ।
वैश्वानरो अदब्धस्तनूपा अग्निर्नः पातु दुरितादवद्यात् ।।

यजु० ४।१५

हे जगदीश्वर ! आपके अनुग्रह से विद्यादि श्रेष्ठ गुणयुक्त मन और आयु मुझको आगामी जन्म में प्राप्त हों, पुनर्जन्म में मेरा आत्मा विचार से ही शुद्धता को प्राप्त हो और उत्तम देखने की शक्ति और सुनने की शक्ति प्राप्त हो, आप ही हमको हमारे कर्मानुसार अपनी पवित्रता से दुष्कर्मों से बचाकर हमें सन्मार्ग में चलने का बल दीजिये जिससे हम पाप से बचकर परमानन्द और परमसुख को प्राप्त हों।

पुनर्मैत्विन्द्रियं पुनरात्मा द्रविणं ब्राह्मणं च ।
पुनरग्नयो धिष्ण्या यथास्थाम कल्पन्तामिहैव ।।

अथर्व ७।६७।

हे भगवन् आपकी कृपा से पुनर्जन्म में इन्द्रियां और मन हमको प्राप्त हों अर्थात् प्राणों को धारण करने हारा सामर्थ्य प्राप्त होता रहे तथा सत् विद्यादि धन भी हमको प्राप्त होता रहे और आप में हमारी निष्ठा बनी रहे और हम लोग सम्पूर्ण जगत् के उपकारक अग्निहोत्रादि योगकर्म करते रहें। जहां जायें हम आपकी ही पूजा करें और सर्वदा सर्वथा शुद्ध रहकर आनन्द में रहें।

एशियाटक सोसाएटी द्वारा प्रकाशित सामवेद के प्रथम खंड अध्याय ६ पृष्ठ २५७ से २६१ में सायण ने भी पुनर्जन्म सिद्ध किया है।

वेद के प्राचीन भाष्यकार यास्क जी महाराज निरुक्त अध्याय १३ खं० १९ में योग में आरूढ़ होने के कारण अपने निज के संबंध में वर्णन करते हैं कि :—

मृतश्चाहं पुनर्जातो जातश्चाहं पुनर्मृतः।
नानायोनिसहस्राणि मयोषितानियानिवै ॥
आहारा विविधा भुक्ताः पीतानानाविधाः स्तनाः,
मातरोविविधादृष्टाः पितरः सुहृदस्तथा।
अवाङ्मुख पीड्यमानो जन्तुश्चैव समन्वितः ॥

निरुक्त परिशिष्ट अ० २

मैंने अनेक बार जन्म मरण को प्राप्त होकर सहस्रों गर्भाशयों का सेवन किया है, अनेक प्रकार के भोजन किये, बहुत सी माताओं के स्तनों का दूध पिया, बहुत पिता और सम्बन्धियों को देखा, मैंने गर्भाशय में नीचे मुख और ऊपर पगादि कई प्रकार के कष्टों को उठाकर बहुत जन्म धारण किये।

पुनः इसके पश्चात् कहते हैं कि इन महादुःखों से मनुष्य तभी छूटेगा जब परमेश्वर में पूर्ण प्रेम रख कर उसकी आज्ञा का यथार्थ पालन करेगा और समस्त दोषों से मुक्त उसकी पवित्र सत्ता का निश्चय करेगा। अन्यथा इस जन्म-मरणरूप दुःख सागर से पार उतारा कभी नहीं हो सकता।

चरकशास्त्र में पुनर्जन्म के संबन्ध में इसी प्रकार लिखा है कि—

अब हम तीसरी लोकैषणा की व्याख्या करते हैं, इसमें सन्देह है कि हम पुनः होंगे अथवा नहीं होंगे। (१) कुछ प्रत्यक्षवादी अर्थात् प्रगट स्थूल द्रष्टा पुनर्जन्म के तिरोहित अर्थात् परोक्ष होने से नास्तिक हो जाते हैं और दूसरे मनुष्य वेद पर विश्वास करने से पुनर्जन्म में शान्ति पाते हैं।

(२) कुछ व्यक्ति विविध प्रकार की बातें सुनने से (३) कोई कहते हैं कि माता पिता ही जन्म के कारण हैं (४) कुछ कहते हैं कि स्वतः ही होता है अर्थात् प्राकृतिक (५) कुछ कहते हैं कि संसार में प्रत्येक बात परमेश्वर की इच्छा से (६) कुछ कहते हैं कि अकस्मात् जन्म हो जाते हैं।

अब हम अन्वेषण करते हैं कि पुनर्जन्म है अथवा नहीं ?

सत्य के जिज्ञासु को चाहिये कि बुद्धि को काम में लाकर यथोचित अन्वेषण करे क्योंकि प्रत्यक्ष थोड़ा और परोक्ष बहुत अधिक है जैसाकि वेद के प्रमाण, अनुमान और युक्ति से सिद्ध होता है क्योंकि जिन ज्ञानेन्द्रियों के द्वारा हम अनुभव करते हैं यह विषय इन्द्रियातीत हैं। किसी वर्तमान पदार्थ के इन्द्रियागोचर होने के निम्न कारण हो सकते हैं—

अति सामीप्य, अति दूर, दूसरी वस्तु से अभिभूत होना, इन्द्रियों के घात अथवा निर्बल होने से, मन की अवस्था अव्यवस्थित होने से, समान रूप में घुल-मिल जाने से, अन्य के तेज से पराभूत होने से, अति सूक्ष्म होने आदि इन समस्त बातों से उपरिलिखित बातों से प्रत्यक्ष भी परोक्ष हो जाता है। अतः केवल प्रत्यक्ष ही को यथार्थ मानना अप्रमाण (अपर्याप्त) है। हम यह भी कह देते हैं कि श्रुतियों में किसी प्रकार का विरोध नहीं। यदि माता-पिता जन्म का कारण हैं तो दो प्रकार से हो सकता है या तो माता पिता के जीवों का सर्वांश अथवा अंशतः सन्तान में आ जाए, यदि जीव पूर्णरूपेण आ जाएं तो उन्हें तुरन्त मर जाना चाहिये और यदि जीव का कुछ अंश आ जाना कहो तो जीव स्वयं सूक्ष्म पदार्थ है जो कदापि विभाजित नहीं हो सकता और जो यह कहें कि माता पिता की वुद्धि और मन सन्तान में आ जाते हैं तो यह मन, बुद्धि भी सर्वमान्य सिद्धान्त से सूक्ष्म हैं तथा जिनकी यह सम्मति है वह इस बात की भी व्याख्या नहीं कर सकते कि पुनः चार प्रकार की उत्पत्ति क्यों होती है ?

अतः जानना चाहिये कि छः प्रकार के धातुओं के गुण इनके संयोग और वियोग में रहते हैं और संयोग वियोग का कारण कर्म है। इसमें जो चेतन जीव है वह अनादि होने से किसी का निमित्त नहीं है और वास्तव में यह यदि कोई धातुओं से भिन्न आत्मा है तो यही हमारा सिद्धान्त है और इस शरीर में परमेश्वर ने भेजा है। तथा इससे "हमा अज़ोस्त" (सब कुछ वह है) का भी खंडन है कि जीव ब्रह्म से उत्पन्न नहीं हुआ। यदि जीव ब्रह्म से उत्पन्न हुआ—निकला हुआ मान लिया जावे तो परमात्मा भी उत्पत्तिमान् मानना पड़ेगा और कर्म धर्म भी सब नष्ट हो जायेंगे। यदि संयोगवशता की बात हो तो न परीक्षक और न परीक्षा, न कारण और न कार्य, न देवता न ऋषि, न सिद्ध, न कोई कर्म और न उसका सुख-दुःख रूप फल और न किसी की आत्मा किन्तु इन सबमें गड़बड़ हो जायेगी और कोई व्यवस्था स्थापित न हो सकेगी अतः शास्त्र के अनुसार नास्तिकता जो सब पापों से बड़ा पाप है इस खोटापन को छोड़ देना चाहिये। इस पर बुद्धिमान् लोग कदापि न चलें। इस आधार पर विद्वान् लोगों की बुद्धि के प्रकाश में सब पदार्थों को जैसा है--वैसा ही देख लें। यह जो कुछ दिखाई देता है। दो प्रकार का है अर्थात् सत् और असत्। इसकी परीक्षा चार प्रकार की है--वेद, प्रत्यक्ष, अनुमान, युक्ति अथवा तर्क।

वेद किसे कहते हैं ? रज और तम से रहित, तप और ज्ञान से परीक्षित तीनों कालों में शुद्ध और जो परस्पर विरुद्ध न हो, सब से प्राचीन। और जो वेद ही से युक्त और संशयरहित तथा सत्यवचन और पूर्ण हो वह भी शब्द प्रमाण के अन्तर्गत माना जाता है।

अब प्रत्यक्ष का लक्षण कहते हैं जीव को मन, इन्द्रिय और अर्थ के संयोग से जो सद्बुद्धि उत्पन्न होती है उसको प्रत्यक्ष कहते हैं।

अनुमान प्रत्यक्षपूर्वक होने से तीन प्रकार का है, तीन काल की अपेक्षा से जैसे गर्भ देखने से पूर्वकाल में हुए विषय करने का विचार और धुआं देखने से वर्तमान में अग्नि का ज्ञान और वृक्ष से फल देखने में पूर्वकाल में बीज बोकर वैसा ही प्राप्त होने की आशा और इसी प्रकार जल, खेती, बीज और ऋतु के संयोग से सब्जी के उत्पन्न होने की संभावना--इसी प्रकार के धातुओं के संयोग से गर्भ का होना, और संघर्ष, संघर्षित तथा संघर्षण से ताप की उत्पत्ति, इसी प्रकार से वैद्य, रोगी और औषध तथा सेवा करने वाले से उपचारादि। बुद्धि जिन अनेक कारणों के कार्यों को देखती है उसको तीनों कालों में समान समझना चाहिये। धन, धर्म, सुख की प्राप्ति के लिये इस परीक्षा के अतिरिक्त और कोई परीक्षा

नहीं है, जिस से सब पदार्थों की परीक्षा हो। और अनुभूत वस्तु दो प्रकार की हैं अर्थात् सत् और असत् अथवा जन्म और मरण अर्थात् पुनर्जन्म।

आप्तोपदेश वेद, वेद के अतिरिक्त और जो कोई शास्त्र के वचन वेद के अनुकूल और परीक्षाओं से परीक्षित किये हुए और ऋषि मुनियों द्वारा स्वीकृत, लोकहितकारी हैं, वह भी आप्त आगम हैं। आप्तागम से निम्नलिखित बातें प्राप्त होती हैं—दान, तप, यज्ञ, सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचर्य धर्म और मोक्ष। यह धर्म और मोक्ष उनको प्राप्त नहीं होता जिनके मनों में रजस् और तमस् भरा हुआ है। योग-युक्तात्माओं अर्थात् सतोगुण वालों ने धर्म के द्वार पर लिख दिया है कि पुनर्जन्म है। प्राचीन से प्राचीन महर्षियों ने ब्रह्म परायण होकर इसका सदुपदेश किया जो भय, मोह, लोभ और वैर से रहित इन शुभ कर्मों के जानने वालों ने साक्षात्कार करने वाले नेत्रों से परीक्षित करके यह उपदेश किया कि निःसन्देह पुनर्जन्म प्रत्यक्ष है तथा सन्तान अपने माता-पिता के समरूप नहीं होतीं और समरूप भाईयों के वर्ण, वाणी, स्वभाव, बुद्धि, आयु और प्रारब्ध में अन्तर होता है और उत्तम, निकृष्ट कुल में उत्पत्ति, सेवक और स्वामी होना, सुख, दुःख का जीवन, आयु का न्यून अधिक होना, इस जीवन के कृत कर्मों के फल की अप्राप्ति अथवा अकृत कर्मों के किसी फल की प्राप्ति, बिना शिक्षा के उत्पन्न होते ही बालकों का स्तन्यपान करना, हंसना और डरना इन साधारण कर्मों से परिणाम विशेष, कोई बुद्धिमान् और कोई मन्दमति, किसी को अपनी पूर्व जाति (पूर्व जन्म) का और इस जन्म में आने का स्मरण होता है और पृथिवी के पदार्थों के समानरूप होने पर भी, प्रेम और घृणा का होना, इन सबसे हम अनुमान करते हैं कि अपने कृतकर्म जो अविनाशी और अटल हैं जो पूर्वजन्म में किये हैं जिनका नाम भाग्य अथवा प्रारब्ध है और जो इस जीव को शरीर में लाते हैं उनका यह फल है और यहां का आगे होगा। फल से बीज और बीज से फल, यह प्राप्त हो गया और यह तर्क कि छः धातुओं से यदि जन्म होता है और जन्म के अर्थ हैं जीव और शरीर का संयोग और संयोग में कर्म होता है, अतः यह जन्म कर्ता और उपकरणों के मिलाप के बिना नहीं हो सकता, अर्थात् जन्मदाता परमेश्वर और जन्म ग्रहण करने वाला जीव और जिसमें जन्म धारण करे वह प्रकृति है। क्रिया से किये हुए कर्म का फल होता है और न किये हुए का नहीं होता अर्थात् बीज के बिना फल नहीं हो सकता, अतः फल कर्म सदृश हैं। क्योंकि एक बीज से अन्य प्रकार का वृक्ष नहीं हो सकता, यह तर्क है अतः इन चार प्रमाणों से प्रमाणित करके ऋषियों ने धर्मद्वार पर पुनर्जन्म लिख दिया। इसीलिये धर्म प्राप्ति के लिये गुरु सेवा करके विद्या प्राप्ति करना, ब्रह्मचारी होना, विवाह करना, सन्तानोत्पत्ति, परिवार का पालन पोषण, आतिथ्य सत्कार, दान, दूसरों की वस्तुओं के लेने का विचार भी न करना, तप, शरीर मन और वाणी से शुभ कर्म करने अर्थात् कर्म, वचन, विचार शुद्ध रखने, शरीर, मन, विषय, बुद्धि, जीव परीक्षा और प्राणायाम, समाधि तथा अन्य कर्म भी जिनको विद्वानों ने निन्दित नहीं किया, सुखदायक और शरीर को नीरोग रखने वाले हैं उनको भी करे। ऐसा करते हुए यहां यश मिलता है और मरकर स्वर्ग प्राप्ति होती है। सूत्रस्थान अ० ११

न्यायशास्त्र के प्रणेता गौतम महामुनि की सम्मति

पुनरुत्पत्ति प्रेत्यभावः।

न्याय १।१।१६

जो उत्पन्न होता अर्थात् किसी शरीर को धारण करता है वह मरण अर्थात् शरीर त्याग के पश्चात् पुनरुत्पन्न अर्थात् दूसरे शरीर को भी अवश्य प्राप्त होता है। इस प्रकार के पुनः जन्म लेने को

प्रेत्यभाव कहते हैं। इस पर मुनि वात्स्यायन जी भाष्य करते हैं कि :—उत्पन्नस्य क्वचित् सत्वनिकाये मृत्वा या पुनरुत्पत्तिः प्रेत्यभावः। उत्पन्नस्य संबद्धस्य, संबद्धस्तु देहेन्द्रियमन्ते बुद्धिवेदनाभिः पुनरुत्पत्तिः पुनर्देहादिभिः सम्बन्धः पुनरित्यभ्यासा भिधानम्। यत्न क्वचित् प्राणाभिन्नकाये वर्तमानः पूर्वोपातान् देहादीन् जहाति तत्प्रैति यत्र तत्रान्यत्र वा देहादीनन्यानुपादत्तेतद्भवति प्रेत्य भावो मृत्वा पुनर्जन्म सोऽयं जन्म-मरण प्रबन्धाभ्यां सोऽनादिरपवर्गान्तः प्रेत्यभावो वेदितव्य इति ॥

उत्पन्न जो सम्बन्ध है, इसका किसी समय पृथक् होकर पुनः सम्बन्ध होने को प्रेत्यभाव कहते हैं। उत्पन्न सम्बन्ध किसका है अर्थात् जीवात्मा का, शरीरेन्द्रिय मन बुद्धि के साथ सम्बन्ध टूटने को प्रेत कहते हैं और इसके पुनः सम्बन्ध मिलने का नाम प्रेत्यभाव कहलाता है, सो यह प्रेत्यभाव अनादि से लेकर मोक्ष प्राप्ति पर्यन्त प्रत्येक जीव के लिये आवश्यक है।

प्रेत्याहाराभ्यास कृतात्स्तन्याभिलाषात्।

न्याय ३।१।२२

जब बछड़ा उत्पन्न होता है, तब ही भूख मिटाने के लिये गौ के स्तन पीने लगता है जिससे पूर्व जन्म का अभ्यास प्रतीत होता है। इसका दूध पीने की इच्छा करना गतजन्मों के स्वभाव से प्रवृत्ति है—क्योंकि आत्मा प्रत्येक शरीर में एक जैसा प्राप्त करता है, वह उसका स्वभाव हो जाता है, और जो कर्म प्रत्येक शरीर में पृथक्-पृथक् हैं, वह उसको सीखने पड़ते हैं।

आत्म नित्यत्वे प्रेत्यभाव सिद्धिः।

न्याय ४।१।१०

आत्मा के नित्य अर्थात् अनादि होने और स्थिर रहने वाला होने से प्रेत्यभाव अर्थात् पुनर्जन्म की सिद्धि होती है क्योंकि यह आत्मा जो सनातन सदैव रहने वाला है, जब पूर्व शरीर को छोड़ देता है तो वह शरीर मृत हो जाता है और पूर्व शरीर के होने के पश्चात् वह दूसरे नवीन शरीर को प्राप्त करता है और उसका इस शरीर को छोड़ना तथा नवीन (शरीर को) ग्रहण करना प्रेत्यभाव अथवा पुनर्जन्म कहलाता है।

महात्मा पातंजलि भी अपने योगशास्त्र में कहते हैं कि :—

स्वरसवाही विदुषोपि तथारूढोऽभिनिवेशः।

योग० पाद २ सूत्र ९

समस्त प्राणधारियों की यह इच्छा सदैव देखने में आती है कि मैं सदा सुखी बना रहूं मरूं नहीं, यह इच्छा कोई भी नहीं करता कि मैं न होऊं। ऐसी इच्छा पूर्वजन्म के अभाव से कभी न हो सकती, यह अभिनिवेश क्लेश कहलाता है जो कि चींटी को मृत्युभय समानरूप से रहता है, यह व्यवहार पूर्वजन्म की सिद्धि को बताता है। इस पर पराशर ऋषि के सुपुत्र महात्मा व्यास जी भाष्य करते हैं :—

सर्वस्य प्राणिन इयमात्माशीर्नित्या भवति मा नभूवं भूयासमिति। नचाननुभूत मरणधर्मकस्यैषा-भवत्यात्माशीः। एतया च पूर्वजन्मानुभवः प्रतीयते। सचायमभिनिवेशः क्लेशः स्वरसवाही कृमेरपि जातमात्रस्य प्रत्यक्षानुमानागमैरसंभावितो मरणत्रास उच्छेददृष्टात्मकः पूर्वजन्मानुभूतं मरणदुःख-

मनुमापयति । यथाचायम त्यन्तमूढेषु दृश्यते क्लेशस्तया विदुषोपि विज्ञातपूर्वापरान्तस्य रूढ़ः । कस्मात् समानाहितयोः कुशलाकुशलयोः मरणदु खानुभवादियं वासनेति । योग० साधनपाद २।९

सब प्राणियों को इसका अनुभव होता है कि यह आत्मा अविनाशी नित्य है । पूर्वजन्म की मृत्यु का दुःख स्मरण करने से जीवात्मा मृत्यु से डरता है, यह जो प्रतीति है इसी का नाम अभिनिवेश है । क्षुद्र जन्तु अथवा प्रत्येक जन्मधारी को प्रत्यक्ष अनुमान और शास्त्रों से बताई जो मृत्यु है उसका भय देखने से आत्मा का पूर्व जन्म में भोगा हुआ मृत्यु का दुःख और यह क्लेश मूढमति और उत्तम कोटि के बुद्धिमानों में समानरूप से पाया जाता है अतः बुद्धिमान् और मूर्ख का होने वाला मृत्यु का दुःख और भय पूर्व वासना को बताता है ।

क्लेशमूलः कर्माशयो दृष्टादृष्टजन्मवेदनीयः ॥

योग २।१२

भाष्यसहितानुवाद—वहां पुण्य-पापरूप कर्मों का समुदाय काम, लोभ, मोह, क्रोध से उत्पन्न हुआ वर्तमान अथवा गतजन्मों से जानना चाहिये, तीव्र कर्म के फल अर्थात् वेदाध्ययन, तप, समाधि आदि करने से ईश्वर की उपासना, देव और महर्षि आदिक महानुभावों के संग से पुण्यकर्म के फल को उत्पन्न करता है और बड़े-बड़े पाप अर्थात् भयभीत, कंजूस, विश्वासघाती और तपस्वी महानुभावों की हानि करने से इनमें पाप कर्मों का फल उत्पन्न होता है जैसे नंदेश्वर कुमार मनुष्यत्व से देवता हो गया । अतः वहां नरकगामियों का और दुःखों से रहित इन जीवों का कर्माशय पूर्वजन्म से जानना ।

सतिमूले तद्विपाको जात्यायुर्भोगाः ।

योग २।१३

तेह्लादपरितापफलाः पुण्यापुण्यहेत्वात् ॥

योग २।१४

भाष्यसहितानुवाद—मूल के होने से उसका विपाक अर्थात् फल होता है । संसार में जाति, आयु, भोग अर्थात् उन सुख-दुःखों का भोगना जिनका यहां कोई कारण न पाया जाए । इन फलों के देखने से इनके मूल अर्थात् कर्मों का अनुमान होता है और कर्म शरीर धारण करने से होते हैं अतः इससे पूर्व शरीर का अनुमान होता है ।

वह पूर्व कर्म (आह्लाद) अर्थात् प्रसन्नता और परिताप शोक के फल के देने वाले होते हैं क्योंकि वह पुण्य और पाप दो कारणों से उत्पन्न होते हैं अर्थात् वह जन्म, आयु और भोग पुण्यकर्मों के फल से सुख देने वाले और पापकर्मों के फल से दुःख देने वाले होते हैं जैसे दुःख के विरोधी विषय सुख के समय भी विद्वान् योगी इसको आत्मा के प्रतिकूल दुःख ही मानते हैं ।

उपनिषत्कारों की सम्मतियाँ

बालाग्रशतभागस्य शतधाकल्पितस्य च ।

भागोजीवः स विज्ञेयः सचानन्त्याय कल्पते ॥

नैवस्त्री न पुमानेष नचैवायं नपुंसकः ।
यद्यच्छरीरमादत्ते तेन तेन स युज्यते ।।

श्वेताश्वतरोप० ५।६, १०

शिर के बाल का शतांश करें और पुनः उस भाग का शतांश करें यह जीव का परिमाण है। ऐसे जीव अनंत हैं। जीव न तो स्त्री है न पुरुष है और न नपुंसक है। अपने कर्मों से जैसे-जैसे शरीरों को प्राप्त करता है, वैसा ही प्रतीत होता है।

नजायतेम्रियते वा विपश्चिन्नायं कुतश्चिन्नबभूव कश्चित् ।
अजोनित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे ।।

कठोप० अ० १ वल्ली २ मंत्र १८

जीव न उत्पन्न होता है, न मरता है और न वह किसी वस्तु से उत्पन्न हुआ है। वह जन्म से रहित और शाश्वत है, और सदैव रहेगा क्योंकि वह शरीर के विभाजित होने से विभक्त नहीं होता।

मनु जी पुनर्जन्म के विषय में ऐसा कहते हैं :—

(१) यह जीव जिस अच्छे या बुरे काम को मन से करता है उसके फल को उसी प्रकार मन से भोगता है। वाणी से किये हुए का फल वाणी से और शरीर से किये हुए का शरीर से।

(२) जो मनुष्य चोरी, दुराचार, सत्पुरुषों का वध आदि बुरे कर्म करता है वह स्थावरता अर्थात् जड़बुद्धि हो जाता है। वाणी के द्वारा किये (अशुभ) कार्यों के परिणाम में पक्षियों में और हिरण आदि में और मन से किये कर्मों का फल चाण्डाल आदि में जन्म धारण करके भोगता है।

(३) जो गुण उन जीवों के शरीर में अधिक वर्तता है वह गुण जीव को अपने जैसा कर देता है।

(४) इसका निर्णय इस प्रकार करना चाहिये कि जब आत्मा में प्रसन्नता और शान्ति प्रतीत हो तब सत्वगुण प्रधान और रजोगुण तथा तमोगुण अप्रधान है।

(५) जब आत्मा और मन दुःखी, अप्रसन्न और विषयों में इधर उधर डोलता रहे तब समझना कि रजोगुण प्रधान और तमोगुण और सत्वगुण अप्रधान है।

(६) जब सांसारिक वस्तुओं में आत्मा फंसा हुआ हो और शुभाशुभ का कुछ भी विचार न हो, सत्यासत्य का भेद न करे तब निश्चित समझना कि तमोगुण प्रधान, रजोगुण और सत्व गुण अप्रधान हैं।

(७) अब तीनों गुणों का उत्तम, मध्यम और अधम परिणाम लिखते हैं।

(८) जो वेदों का अभ्यास, धर्म की ओर रुचि, ज्ञान की उन्नति, पवित्रता की इच्छा, इन्द्रियों का दमन, धर्मपालन और आत्मचिन्तन करना है यही सत्वगुण का लक्षण है।

(९) जब रजोगुण का उदय, सत्व और तमोगुण अन्तर्हित होते हैं तब आरम्भ में धैर्यत्याग, असत्कर्माभिरुचि, और मन में निरन्तर विषय सेवन में प्रीति होती है तब समझना कि रजोगुण का बल प्रधान हो रहा है।

(१०) जब तमोगुण की प्रधानता और शेष दोनों तिरोहित होते हैं तब लोभ अर्थात् सब पापों

का मूल बढ़ता; आलस्य वृद्धि, निद्रा, धैर्य का अभाव, क्रूरभाव, नास्तिकता अर्थात् वेद और ईश्वर में श्रद्धा का अभाव, मन की एकाग्रता का अभाव और बड़े-बड़े व्यसनों, कुकृत्यों में आसक्त होना तब तमोगुण की प्रधानता समझना। जब कुकर्मों के करने से लज्जा भय और ग्लानि उत्पन्न न हो तब समझना कि तमोगुण का मुझ पर बलपूर्ण आधिपत्य है।

अब बतलाते हैं कि किस-किस गुण से कौन-कौन गति को प्राप्त होता है।

(१) जो मनुष्य सात्विक हैं वह देवता विद्वान् जो रजोगुण वाले होते हैं वह मनुष्य और जो तमोगुण वाले होते हैं वह नीचगति को प्राप्त होते हैं।

(२) जो अत्यन्त तमोगुणी हैं, वह वृक्षों से सम्बन्धित जीवनधारी कीट पतंगादि, चींटियों, मछलियों, सर्प, कछुआ और मृग के जन्म को प्राप्त होते हैं।

(३) जो मध्यम तमोगुणी हैं वह हाथी, घोड़ा, भेड़िया, सिंह, मोर और वनस्थ जन्म प्राप्त करते हैं।

(४) जो उत्तम तमोगुणी हैं वह सुन्दर पक्षी, राक्षस (पापात्मा मनुष्य) हिंसक, पिशाच (मांसाहारी) चारण (भाट) और ठग होते हैं।

(५) जो रजोगुण प्रधान हैं वह कानें खोदने वाले, मल्लाह (नौका चलाने वाले) नट और हथियार बनाने वाले, दूत, प्राड्विवाक और शूरवीरों का जन्म पाते हैं।

(६) राजा क्षत्रिय और राजा का पुरोहित, वादविवाद करने वाले, शास्त्रार्थी, राजनैतिक चालों में दक्ष यह मध्यम रजोगुणी हैं।

(७) गन्धर्व=गाने वाले, बाजा बजाने वाले, विद्वानों की सेवा करने वाले आदि यह उत्तम रजोगुण वाले हैं।

(८) तपस्वी, यति, संन्यासी, वेदपाठी और विमान निर्माता और चालाक, ज्योतिषी और शरीर विज्ञानवेत्ता वैद्य यह प्रथम सत्वगुण के कर्मों का फल है।

(९) यज्ञ कर्ता, वेदार्थ ज्ञाता, विद्वान्, वेदों और विज्ञानादि विद्याओं के वेत्ता, काल विद्याविज्ञ, रक्षक, ज्ञानी और कार्यसाधक अध्यापक यह मध्यम सत्वगुण का चिह्न है।

(१०) सर्ववेदवित् ब्रह्मा, सब सृष्टि क्रमादि विद्याओं को जानकर विमानादि के निर्माता विविध कला-कौशल विज्ञ, धार्मिक, श्रेष्ठ बुद्धि, महात्मा, ऋषि उत्तम सत्वगुण वाले हैं।

चाणक्य ऋषि का कथन है—जैसे सुमन में सुगन्धि, तिलों में तेल, काष्ठ में अग्नि, दुग्ध में घृत, ईख में मिश्री (गुड़) ऐसे ही सूक्ष्मरूपेण शरीर में जीव रहता है। चाणक्य नीति ७।२१

मनुष्य जन्म-मरण के बन्धन में आता है, शुभाशुभ कर्मों का फल भोगता है, नरक (दुःख) में पड़ता है और मोक्ष पाता है। चा० ५।१३

आत्मा आप ही कर्म करता है, आप ही इसका फल भोगता है, स्वयमेव संसार में विचरता है और वही कर्मों के उत्तम फल से जगत् से मुक्त हो जाता है अर्थात् यह सब कुछ जीव पर ही आश्रित है। चा० ६।९

आयु, कर्म, धन, विद्या, मरण यह पांच जीव के गर्भ में आने के साथ ही नियत हो जाते हैं। चा० १३।४

दान, विद्या, तप का बहुत जन्मों में अभ्यास करने से मनुष्य पूरा दानी, पूर्ण विद्वान् और पूर्ण तपस्वी होता है। चा० १६।१९

संस्कृत के इतिहास ग्रन्थों से पुनर्जन्म सिद्धि

पुनः पुनश्चमरणं जन्मचैव पुनः पुनः।
आहाराः विविधा भुक्ताः पीता नाना विधास्तनाः ॥३२॥
मातरो विविधा दृष्टाः पितरश्च विविधाः पुनः।
सुखानि च विचित्राणि दुःखानि च मयानघ ॥३३॥

महाभारत पर्व १४ अ० १६ श्लो० ३२, ३३

बार-बार मरना और बार-बार जन्म लेना, बहुत प्रकार के आहार खाना, बहुत सी माताओं का स्तन्यपान करना, बहुत प्रकार की माताओं को देखना और भिन्न-भिन्न पिताओं का सम्बन्ध होना, विचित्र सुखों का भोगना और इसी प्रकार दुःखों का भोगना ही यह सब कर्मों का फल है।

कर्मणैव समुत्पत्तिः सर्वेषां नात्र संशयः।
अनादि निधना जीवा कर्म बीज समुद्भवाः ॥

स्कंध ४ अ० ४२

कर्मों के द्वारा ही समस्त जीवों की उत्पत्ति होती है, बीजरूपी कर्म सनातन जीव को शरीर धारण कराते हैं इसमें कोई सन्देह नहीं।

नानायोनिषु जायन्ते म्रियन्ते च पुनः पुनः।
कर्मणारहितो देहसंयोगो न कदाचन् ॥५॥

विभिन्न योनियों अर्थात् शरीरों में उत्पन्न होते और मरते हैं। कर्मों के बिना जीव किसी शरीर में नहीं जाता।

शुभाशुभभैस्तथा मिश्रैः कर्मभिर्वेष्टितै स्त्विदम्।
त्रिविधानिहि जन्मान्याहुर्बुधा स्तत्वविदश्चये ॥६॥

शुभाशुभ मिश्रित कर्मों से यह सम्पूर्ण तीन प्रकार के अंडज, जरायुज और स्वेदज के सत्वगुण रजोगुण और तमोगुण युक्त शरीरधारी होते हैं ऐसा ही तत्ववेत्ता महात्माओं का वचन है।

संचितानि भविष्याणि प्रारब्धानितथापुनः।
वर्तमानानि देहेऽस्मिस्त्रैविध्यं कर्मणां किल ॥७॥

जो पूर्व जन्मों में कर्म किये हैं उनका नाम संचित और प्रारब्ध है और जो भविष्य में कर्म करेंगे और जो वर्तमानकाल में कर रहे हैं, तीन प्रकार से कर्मों का विभाग अथवा गणना है।

ब्रह्मादीनां सर्वेषां तद्वशत्वं नराधिप ।
सुख दुःख जरा मृत्युः हर्ष शोकादयस्तथा ।।८।।

हे नराधिप=राजन् ! ब्रह्मा से=आदि से लेकर समस्त जीव कर्मों के वश में हैं और कर्मों से ही सुख दुःख, जरा, मृत्यु, हर्ष और शोक को प्राप्त होते हैं ।

कामक्रोधौ च लोभश्च सर्वे देहगता गुणाः ।
देवादानाच्च सर्वेषां प्रभवन्ति नराधिप ।।९।।

हे राजन् ! काम, क्रोध, लोभ, मोह, जो देहान्तर्गत गुण हैं कर्मानुसार ईश्वरीयादेश से सबको प्राप्त होते हैं ।

रागद्वेषादयो भावाः स्वर्गेपि प्रभवन्तिहि ।
देवानां मानवानां च तिरश्चां च तथापुनः ।।१०।।

रागद्वेषादि का उदय बहुत सुखमय काल में भी होता है । बड़े-बड़े विद्वानों, साधारण मनुष्यों और इनके अतिरिक्त अन्य शरीरधारियों में भी ।

कपाली च तथा रुद्रः कर्मणैव न संशयः ।
अनादि निधनं चैव तत्कारणं कर्म संभवे ।।१३।।

निःसन्देह कपाली तथा महादेव आदि पद भी कर्मों से जीवों को मिले हैं, यह सब सनातनकाल से कर्मानुसार गति चली आती है ।

तेनेह शाश्वतं सर्वं जगत्स्थावर जंगमम् ।
नित्यानित्यविचारेऽत्र निमग्ना मुनयः सदा ।।१४।।

इस क्रम पर जगत् दो प्रकार का अर्थात् चर और अचर अथवा जड़ वा चेतन प्रवाह से अनादि है । मुनि लोग इन नित्य अर्थात् जीव और ब्रह्म तथा अनित्य अर्थात् संसार के विचार में संलग्न रहते हैं ।

न जानन्ति किमेतद्वै नित्यंवाऽनित्यमेव च ।
मायां च विमानायां जगन्नित्यंप्रतीयते ।।१५।।

मनुष्य को ऐसा प्रतीत होता है कि जगत् सदैव रहेगा अतः इसके मोह से पृथक् होकर नित्य और अनित्य को जानना चाहिये अर्थात् प्रकृति को नित्य और जगत् को अनित्य मानना चाहिये ।

कृतं कर्म विपाकेन प्राप्नुवन्ति सुखासुखे ।
अवश्यमेवभोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम् ।।३४।।

जीव कर्म के विपाक से ही सुख और दु.ख को पाता है शुभाशुभ कृतकर्मों का फल अवश्य ही भोगना पड़ता है ।

तपसादानयज्ञैश्च मानवश्चेन्द्रतां व्रजेत् ।
क्षीणे पुण्येऽथ शक्रोपि पतत्येव न संशयः ।।३५।।

तप, दान और यज्ञ से मनुष्य राजा आदि अथवा इन्द्र (चक्रवर्ती सम्राट्) पद को प्राप्त कर सकता है इसी प्रकार बड़े-बड़े राजा भी पुण्य के नाश होने से पतित हो जाते हैं।

पुनर्जन्म की स्मृति

संवत् १९३३ विक्रमी में ग्राम कंधा में मोहनलाल ठाकुर बन्दूक से मारा गया और उसी वर्ष गरीबपुरा ग्राम में जो कन्धा से छः कोस है, काशीराम के घर एक पुत्र उत्पन्न हुआ, जब वह तीन वर्ष का हुआ एक दिन बन्दूक का शब्द सुनकर रोने लगा और बहुत डरा, पूछने पर कहा कि मैं तो मोहन कन्धा वाला हूं, मुझको हरवल्लभ ने मारा था।

जब यह बात जिलाधीश तक पहुंची तब उसके बयान लिये गये उसने हरवल्लभ को पहचान लिया और जब फरवरी १८८१ ई० में अभियोग ग्वालियर में आया तो वहां भी वही लिखवाया और मोहन ने भाई को देखकर कहा कि यह मेरा भाई है और कहा कि मैं सब कुछ पहचानता हूं। अब इस घटना की खोज हो रही है।

(आर्य दर्पण अप्रैल १८८१ ईस्वी जिल्द ४ संख्या २०)

आवागमन का एक विचित्र दृश्य

फ़िलासफ़ीकल इनक्वरर में जिसकी प्रत्येक पत्रिका में अध्यात्म ज्ञान, वेदान्त और बौद्धिक लेख प्रायः प्रकाशित होते हैं। उसमें एक विचित्र घटना प्रकाशित हुई है, जो सर्वतः प्रथम सैन्ट पीटर्ज़ बर्ग साप्ताहिक मैडीकल जनरल में प्रकाशित हुई थी। लिखा है कि औबर्न बर्ग योरुपीय रूस का एक नगर है जो कि एशियाई सीमा के निकट योराल पर्वत पर स्थित है। लगभग एक वर्ष का समय बीता है कि इब्राहीम चारको एक धनाढ्य यहूदी उस नगर का रहने वाला ज्वर से अति पीड़ित था।

२२ सितम्बर को अर्द्ध रात्रि समय में उसे एक भयंकर विचार समुपस्थित हुआ जिससे उसे बहुत कष्ट हुआ। वह उस समय बहुत तड़पता रहा था। उसके चिकित्सकों ने उसकी अवस्था को उसका भयावह समय बताया। कुछ यहूदी बुलाये गये। प्रार्थनाएं की गईं, बत्तियां जलाईं गईं और देखो वह रोगी जो पूर्व मरणासन्न प्रतीत होता था अब भील-भान्ति श्वास लेने लगा और उसने अपनी आंखें खोलीं और आश्चर्य से इधर-उधर देखने लगा, पुनः वह व्यक्ति शीघ्र सो गया, इस पर डाक्टर ने कहा कि इसका सो जाना स्वास्थ्य के लिये अच्छा है। प्रातःकाल जागा, अपने बाल-बच्चों को समीप देखा जो कुछ शोक और कुछ प्रसन्नता में उसके जागने की प्रतीक्षा ही कर रहे थे। उसकी स्त्री ने बड़ी प्रसन्नता से बढ़कर उसे गले लगाना चाहा किन्तु उस व्यक्ति ने संकेत से उसे हटा दिया और एक ऐसी भाषा में कुछ वस्तुएं मांगीं जिसको वहां किसी ने न समझा, यहां यह बात बता देने के योग्य है कि इब्राहीम चारको काले रंग का और लंबा था, पीठ का कुबड़ा और लंबी तथा काली डाढ़ी, काली आंखें और लंबी नासिका वाला था और अपने रोग से पूर्व वह इब्रानी भाषा तथा थोड़ी सी रूसी भाषा के अतिरिक्त कुछ न जानता था जो इन न्यून पठित यहूदियों की भाषा है किन्तु अब वह व्यक्ति ऐसी भाषा में बोलने लगा जिस को उसके समीप का कोई व्यक्ति न समझ सका, डाक्टर भी जो बुलाया गया था वह उस भाषा को न समझ सका, जब कभी उसकी स्त्री और बच्चे उसके समीप आने का यत्न करते, वह घृणा से उन्हें धकेल देता। डाक्टर ने यह सम्मति दी कि तीव्रतर ज्वर के कारण यह

व्यक्ति पागल हो गया है (इससे) परिवार को चिरकाल तक निराशा रही। इसी मध्य में उसकी स्त्री ने अपने माता पिता को बुलवाया किन्तु उनके आने पर इब्राहीम ने उनको न पहिचाना और न उसकी भाषा को समझा और वह इस बात पर क्रुद्ध भी होता था कि मेरी भाषा को कोई क्यों नहीं समझता। एक सप्ताह के पश्चात् वह बिस्तर से उठा और उसकी स्त्री ने उसे पहनने के लिये वह वस्त्र दिये जो वह रुग्ण होने से पूर्व पहिना करता था और जिन्हें पहिनने का रूसी लोगों का प्रायः स्वभाव था, वह उन (वस्त्रों) को देखकर और भली-भाँति पड़ताल करने के पश्चात् बहुत हंसा और वह बाहिर दौड़ना चाहता था परन्तु लोग शीघ्रता से द्वार बन्द कर देते थे जिससे उसे सरदी न लग जाए। वह कमरे में चलता किन्तु पग अत्यन्त धीरे-धीरे ध्यान से रखता था। एक दर्पण के समीप पहुंच कर उसने अपना रूप देखा और वहां ठहर गया बहुत आश्चर्यचकित हुआ। अपनी बड़ी नाक और लंबी डाढ़ी को छूता था तथा गहरी सोच में पड़ जाता था। लोग इस बात से बहुत आश्चर्यचकित थे, उसकी स्त्री और माता-पिता, जिन्होंने यह विचित्र घटना देखी थी एक-दूसरे को आश्चर्य से देखते थे और वह विचार करते थे कि अब यह व्यक्ति इब्राहीम चारको नहीं है किन्तु एक अपरिचित व्यक्ति है परन्तु इब्राहीम के मस्तक पर दो काली जन्म की रेखाएं थीं, यहां तक कि जो डाक्टर दो मास तक उसकी चिकित्सा करता रहा इस विचार पर हंस पड़ता था कि इब्राहीम चारको प्रायः खिड़की से बाहिर देखता था और आस-पास के मनुष्यों पर बड़ा आश्चर्य करता था, एक दिन उसने बाहिर भाग जाने का बहुत यत्न किया।

उसके घर वालों ने सरकारी डाक्टर और अन्य डाक्टरों को बुलाने की मंत्रणा की जिन्होंने बड़े परीक्षण के पश्चात् बताया कि यह वही व्यक्ति है यद्यपि वह भाषा न समझी जिस में वह बोलता था किन्तु डाक्टर आदि इसको एक नियमित भाषा समझते थे, उन्होंने यह विचार किया कि यह व्यक्ति हमें लिखकर समझा देगा। इब्राहीम ने काग़ज़ के टुकड़े पर कुछ पंक्तियां लिखीं जिनको डाक्टर ने पढ़ा किन्तु उनके अर्थ न समझे, लेख स्वच्छ शुद्ध और लैटिन अक्षरों में लिखा हुआ था परन्तु भाषा न समझी गई अतः कोई न बता सकता था कि किस प्रकार इब्राहीम ने इनलौटिन अक्षरों को सीखा। इस प्रकार कुछ समय व्यतीत हो गया। यहाँ तक कि वह इब्राहीम को सैन्ट पीटर्स वर्ग की मैडिकल यूनिवर्सिटी में ले जाने को सहमत हुए जिससे वहां के योग्य डाक्टर की सम्मति ज्ञात करें। ज्यों ही प्रोफेसर आर्लो ने इब्राहीम की भाषा को सुना उसने पहचान लिया कि यह आंगल भाषा है। इब्राहीम ने बहुत प्रसन्नता प्रगट की कि इस डाक्टर ने मेरी बात समझी और कुछ बातचीत के पश्चात् डाक्टर आर्लो ने कहा कि इब्राहीम एक बड़ा बुद्धिमान् अंग्रेज़ है किन्तु उसकी स्त्री ने कहा कि ईश्वर के वास्ते बताईये कि किस प्रकार मेरा पति अंग्रेज हो गया और किस प्रकार उसने स्वभाषा विस्मृत करदी।

इब्राहीम के जीवन की कथा को प्रोफ़ेसर ने बड़े आश्चर्य से सुना और विश्वास न किया कि वह एक साधारण, अशिक्षित रूसी यहूदी है। उसने इब्राहीम से अंग्रेज़ी में पूछा कि तू कौन है और कहां से आया है? उसने निम्नलिखित उत्तर दिया कि मैं ब्रिटिश कोलम्ब्या से जो उत्तरी अमरीका में है—आया हूं और मेरा वास्तविक देश न्यूवैस्ट मिनिस्टर है मेरी एक स्त्री और लड़का जीवित है परन्तु यह भेद खुदा जानता है कि मैं किस प्रकार इस स्त्री के पास आ गया। प्रोफ़ेसर ने दोनों पक्षों को कपटी बताया और यह कहा कि तुम यह व्यक्ति धोखे से लाए हो। उसने इस बात की जांच के लिये सरकार का ध्यान दिलाया और इब्राहीम के वंश के डाक्टर और उसके अड़ौसी-पड़ौसी हमसाया आदि लोगों से सरकारी रूप से ज्ञात किया गया और यह पूछताछ कई सप्ताहों तक जारी रही। किन्तु इस अन्वेषण

से कुछ ज्ञात न हुआ और वह विषय उसी प्रकार छिपा का छिपा रहा। डाक्टरों ने बताया कि यह एक साईकालोजीकल आश्चर्य है और मनुष्य जीव की दैवीप्रेरणा (इलहाम) है जो वर्णन नहीं किया जा सकता।

इब्राहीम नें कहा कि यद्यपि मेरा नाम इब्राहीम है, परन्तु मेरा नाम इब्राहीम चारको नहीं किन्तु इब्राहीम दरहम है और मेरी यही इच्छा है कि मैं स्वयं परिवार में जाऊं। प्रातः जब उसकी स्त्री उठी तो उसनें उसके स्थान को ख़ाली पाया वह ग़ायब हो गया था (कहीं चला गया था) परन्तु यह अद्भुत घटना रूसी सम्राट् के कानों तक पहुंची जिसने अच्छे प्रकार से उसके ज्ञात करने की आज्ञा दी किन्तु यह सब निरर्थक था, वह व्यक्ति किसी प्रकार न मिल सका अन्त में यह निश्चय किया गया कि वह व्यक्ति पागल था अतः पागलपन की अवस्था में नेवा नदी में डूब मरा। ऐसा समझा गया।

१८७५ ईस्वी के वसन्त ऋतु में सेंटपीटर्स बर्ग के प्रोफ़ेसर आर्लो ने अपनी गवर्नमेंट की आज्ञा पर फिलाडैलफिया का निरीक्षण किया। एक दिन जब कि वह समाचार पत्र पढ़ रहा था तो इस निम्न-लिखित घटना ने उसका ध्यान खींचा कि "न्यूवैस्ट मिनिस्टर में एक ऐसी घटना घटित हुई है जिसनें ब्रिटिश कोलम्ब्या की समस्त सीमाओं में खलबली डाल दी है। २२ सितम्बर १८७४ के दिन उस नगर का सम्बूर का व्यापारी तीव्र ज्वर के कारण मरणासन्न अवस्था में था और किसी भी व्यक्ति को उसके बचनें की आशा न थी और डाक्टर को भी बचनें की आशा न थी पुनरपिरोगी बच गया और अच्छी प्रकार स्वस्थ हो गया किन्तु यह बात आश्चर्यजनक है कि रोगी ने जो कि एक बुद्धिमान् अंग्रेज था अपनी मातृ भाषा भुला दी और और ऐसी भाषा बोलता था कि जिसे कोई व्यक्ति समझ न सकता था, अन्त में उस नगर के एक मनुष्य ने कहा कि यह यहूदियों की एक ग्रामीण भाषा है। वह रोगी जो रुग्ण होनें से पूर्व एक सुदृढ़ व्यक्ति था अब बहुत पतला और कुबड़ा हो गया है। और साथ ही अपनी स्त्री और बच्चे को पहिचाननें से इन्कार करता है किन्तु यह हठ करता है कि मेरी एक स्त्री और कई लड़के किसी और स्थान पर हैं। उस मनुष्य को पागल समझा जाता है। पुनः अकस्मात् कुछ समय के पश्चात् एक पूर्वी यात्री आया। जिसका मुख ठीक इब्रानियों की भांति प्रतीत होता है वह कहता है कि इस सम्बूर बेचने वाली स्त्री का पति मैं हूं। वह उस स्त्री से उस भाषा में बोलता था जिसमें उसका पति उससे बोला करता था किन्तु उस पुरुष के माता पिता जो उसी नगर में ही रहते हैं उसे नहीं पहचानते परन्तु वह बार-बार यह बताता है कि मैं इस स्त्री का पति और इन्हीं माता पिता का पुत्र हूं। वह बेचारी स्त्री एक बड़े असमंजस में है कि मैं क्या करूं? वह बार-बार ही पूछती है कि यह कौन है? और यह किस प्रकार मेरे पति होनें की बात कहता है? जब वह उसे बोलता सुनती है किन्तु उसका रूप नहीं देखती तो उसे भ्रम हो जाता है और रूप देखकर कहती है कि यह यहूदी मुखाकृति वाला मेरा पति नहीं हो सकता। किन्तु वह पुरुष ऐसा होने पर भी निरन्तर कहता और उसकी छिपी बातें बताता है जो केवल पति पत्नी को ज्ञात होती हैं।

प्रोफैसर आर्लो नें समस्त अगली घटना का स्मरण किया और इस सैकालोजीकल थियोरी का निश्चय करनें के लिये उसनें न्यूवैस्ट मिनिस्टर जानें का विचार किया। वह बड़ा आश्चर्यान्वित हुआ जब कि उसनें वहां जाकर वास्तव में वही काले रूप का इब्राहीम पाया, जिसको उसनें छः मास व्यतीत हुए कि सैंट पीटर्स वर्ग में देखा था। उसने उस सम्बूट के व्यापारी से रूसी भाषा में पूछा कि तू कहां से आया है उसनें उत्तर दिया कि मैं ओर्न बर्ग से आया हूं और जब उसने उसकी स्त्री का नाम लिया जिसने उसे अपना पति बताया था जो उस समय सेंट पोटर्सबर्ग में थो, जब उससे पूछा कि

तेरा नाम क्या है ? उसने उत्तर दिया कि यह लोग मेरा नाम इब्राहीम दरहम कहते हैं वास्तव में मेरा नाम इब्राहीमचारको है प्रोफेसर आर्लो इस विचित्र विचार से आश्चर्यचकित हो गया। उसने युक्तिपूर्वक सोचा कि शरीर का तो रूपान्तर नहीं हुआ है क्योंकि एक तो छोटा और सुदृढ़ है और दूसरा पतला, लंबा और काले रंग का और न्यूवैस्टमिनिस्टर ओवर्नबर्ग से २००० मील की दूरी पर है। उसने कहा कि अवश्यमेव आवागमन हुआ है, जीव बदल गये हैं अर्थात् Metamorphos की घटना हुई है। यह स्मरण रखना चाहिये कि २२ सितम्बर १८७४ ईस्वी को आधी रात्रि के समय दोनों जीवन और मृत्यु के मध्य थे। एक व्यक्ति का जीव अवश्य दूसरे व्यक्ति के शरीर में उड़कर प्रवेश कर गया है और इसी प्रकार यह एक पूरी पुनर्जन्म की घटना हुई है और यह दोनों नगर एक-दूसरे के ठीक सम्मुख हैं। यदि एक कील भूमि में गाढ़ी जाय तो वह ठीक वैस्ट मिनिस्टर में निकलेगी और दोनों नगरों के मध्य ठीक हो १२ बजे का समय है और जबकि आर्नबर्ग में आधी रात के १२ बजे हैं तो न्यूवैस्ट मिनिस्टर में दिन के १२ बजते हैं।

आर्य मैगज़ीन अक्टूबर १८८४ ईस्वी पृ० १५८ से १६२ तक
जिल्द ३ अंक ८

———

आवागवन की साक्षियाँ

(१) बरीमिनवालक़सबा—मुकन्द ब्रह्मचारी हस्त कि ताइमरोज़ज़िक्रो बरज़ुबाने हिन्दवां व ब्रह्मणानें आं शहर (प्रयाग) जारीस्त व चूं ईं किस्सा अजीबोग़रीबस्तु वख़ाली अज़लुत्फ़नेस्त, बिना बरग़ुराबत दरीं मुकाम नविशता मेशवद। नक़लेस्त कि ब्रहमन मुकदं ब्रह्मचारी दर अय्यामे सल्तनत हुमायु बादशाह बतरीके मज़हबे ख़ुद मुद्दते बरियाज़त वक़िननाअत इसतिक़लाल दाश्त, वदरअो आखिर साल यकहज़ार पान्सदनौ दो हश्तस्त, सम्मत १५६८ राजा विक्रामजीत कि मुताबिक़ साल नोहसद व चहल व हश्त हिज्री बूद दरशहर प्रयाग कि हाला मशहूर बइलाहाबादस्त। वारिद गश्ता बर किनारे तरवेणी यानी दरमक़ामे कि दर्याए गंग दर्याए जमन मुलहक शुदा अस्त। आतशे फ़रोख़्ता मुआफ़िक़े दीनो आईने ख़ुद तमाम अन्दाम खुदरा पारा पारा बुरीदा दर आं आतिश अफगंद—बाद अज़ां ख़ुदरा नीज़ दरआं आतिश ज़दा खाकस्तर शुदः, बईं नियतकि ता न्याज़े ओ बदरगाह क़ादर बेचूं बदरजा क़बूलरसीदा बारदीगर दरीं जहां बकालिबेइन्सां पैदाशवद व बादशाह हिफ़्तअकलीम यावद। चुनांचे अज़ अश्लोके कि दरआं वक़्त ख़ुद वज़बान संस्कृत गुफ़्ता बर वरक मिसकुन्दानीदा गुज़ाश्ता बूद हाला आं श्लोक अकसर मरद-मान आं शहर रा यादस्त मुस्तफ़ाद मे गरदद व आं श्लोक ईनस्त।

२   १   ५   १

वसु इन्द्र बाणं चंद्रे तीर्थराजे प्रयागे। तपसफूल पक्षेद्वादशी पूर्वयामे सकलतन्व्रज-होमथ सर्व भूमाधपति सगल दन्धारी ब्रह्मचारीमुकन्दा ।।१-५-६-८

दरीं श्लोक कि तारीख़स्त मअनी अश ईंनस्त कि दर सम्मत यकहज़ार व पानसद वनौ वहश्त दर शहर प्रयाग कि अज़ बुज़ुर्गम अबदहाअस्त बतारीख़ द्वाज़दहम अज़निस्फ़ आख़िर माह माघ दर-अव्वल पास अज़रोज़ तमाम अन्दाम ख़ुदरा होम करदम, यअ़नीक़ुर्बानी नमूदम बनियत बादशाही याफ़्तन तमामरूएज़मीन मनमुकंद ब्रह्मचारी कि मदाम शीर मे नोशीदम।

चूं जलालुद्दीन मुहम्मद अकबर शाह हमां अय्याम मुतवल्लद शुदाबूत। मे गोयन्द वलकि बअज़ेरा एतक़ादस्त कि रूह हमीं मुकन्द ब्रह्मचारी दर क़ालिबे अकबर बादशाह नक़ल करदा बआरज़ू वजहान आवुर्दा बूद व मुवाफ़िक़ नियते ख़ुद बादशाही हिन्दोस्तान याफ़्ता। राकिमुल्हुरूफ़ अज़रूए हिसाब दर्याफत नमूदा कि रोज़े कि आं ब्राह्मण ख़ुदरा होम साख़्ता आंरोज़ मुताबिक बूद, बा तारीख़ बिस्त व हफ़्तुम माह जनवरी १५४२ मुवाफ़िक दसम माहशवाल ६४८ विलादते अकबर शाह कि बतारीख पंजुममाह रजब ६४६ ववक़ूअ आमदा अस्त, हश्त माह व बिस्त हशश रोज अज़ वाके आ रूए दाद वपस अगर हिन्दवांकिबा दक़ल अरवाह मोअ़तक़िद अन्दईं वाक़आरा रास्तपिन्दारंद जाए तअ़ज़ुब-नेस्त, ज़ेरा कि अक़्ल नर रहमेमादर नोहमाह बलकि गाहे कमतर अज़ां नप्परे मानंद वईं सिर्फ़ चार-रोज़ कमअज़ मुद्दते म अ़हूदा अस्त। वल्ला हो अअ़लमो बिस्सकाबे। मिफ़्ता हुत्तारीख बाब याज़दहमसफ़ह १६७, १६८।

---

(१) मुकन्द ब्रह्मचारी की कथा इस प्रकार है कि आज तक उसका वर्णन प्रयाग के हिन्दु और ब्राह्मणों की जिह्वा पर जारी है। जैसी यह कथा विचित्र है और आनन्द से ख़ाली नहीं है। उदाहरण रूपेण यह कथा यहां लिखी जा

जिस शब्द के अर्थ हफ़त अक़लीम किया गया है वह शब्द सार्वभौम अर्थात् समस्त भूमंडल है परन्तु ऐसे काल में जब इस्लामी राज्य था तब इस प्रकार के मानचित्र और भूगोल नहीं थे। किन्तु यात्रा और देशों में आना-जाना न्यून था और चिरकाल की पौराणिक शिक्षा ने विचार भी सीमित कर दिये थे। लोग अटक (सिन्धु नदी) पार जाना अथवा स्टीमर पर यात्रा करना बुरा समझते थे। एक ब्राह्मण ब्रह्मचारी विशेषतः उत्तर पश्चिमी प्रदेश (वर्त्तमान उत्तर प्रदेश) का निवासी हफ़त अक़लीम (सार्वभौमिकता) की इच्छा नहीं कर सकता था अतः सार्वभौम का अभिप्राय केवल भारत है।

इसका एक स्पष्ट प्रभाव यह हुआ कि अकबर इस्लाम मत से हाथ धो बैठा, नमाज़ को छोड़, संध्या गायत्री करने लगा। मुहम्मद अकबर नाम के स्थान पर महाबलि नाम रखा गया। गो हत्या निषेध, मांसाहार से घृणा हो गई, डाढ़ी के साथ इस्लाम को सलाम कर दिया, पुनर्जन्म को मानने लगा, यज्ञोपवीत पहन लिया। मस्तक पर चन्दन का टीका लगाया। जज़िया (मज़हबी टैक्स) बन्द कर दिया। जो हिन्दु-मुसलमान हो गये थे यदि वह वापिस आना चाहते तो प्रायश्चित् और वापिसी का द्वार खोल दिया। आज्ञा दी कि सिंह और सूअर बलवान् पशु हैं इनका मांस भी बल देता है। शराब इतनी पियो कि बदमस्त (नशा) न कर दे। माता के स्वर्गवास पर १५ सहस्र दरबारियों समेत भद्रा (मुंडन) कराया (देखो दबिस्ताने मजाहिब पृ० ३२५-३२८ शिक्षा १० नवल किशोर तथा कससुलहिन्द भाग २ लाहौर वर्णन अकबर बादशाह)

रही है। लिखा है कि ब्राह्मण मुकंद ब्रह्मचारी हुमायुं बादशाह के शासनकाल में स्वमतानुसार ईश्वरभक्त और संयमी था और अन्त में सम्वत् १५९८ राजाविक्रमाजीत के अनुसार ९४८ सन् हिज्री में प्रयाग में जो अब इलाहाबाद के नाम से प्रसिद्ध है। आकर त्रिवेणी के तट पर अर्थात् जिस स्थान पर गंगा-यमुना का संगम है वहां आग जलाकर स्वधर्म और नियमानुसार स्व शरीर की बोटी-बोटी करके आग में डालता गया तत्पश्चात् स्वयं भी आग में कूदकर जल मरा इस विचार के साथ कि उसकी बलि अनुपम ईश्वर महाराज की सेवा में स्वीकार हो तो वह अगले जन्म में मानव शरीर में उत्पन्न होकर सप्त विलायतों का राज्य प्राप्त करे जैसा कि उसने (उस समय स्वनिर्मित संस्कृत भाषा के श्लोक जो ताम्र पत्र में खुदवाकर छोड़ गया था) कहा अब तक वह श्लोक वहां इस नगर के प्रायः मनुष्यों को स्मरण है और वह लोक यह है "वसु इन्द्र वरुणचन्द्र तीर्थराजे इत्यादि। इस लोक में जो तिथि है उसका अर्थ यह है कि संवत् १५९८ में तीर्थराज प्रयाग से माघ शुदी द्वादशी को प्रथम प्रहर में अपने सारे शरीर का मैंने होम किया अर्थात् मैंने कुर्बानी दी इस विचार से कि समस्त भूमण्डल का राज्य प्राप्त करके सम्राट् बनूं। मैं मुकन्द ब्रह्मचारी दुग्धाहारी हूँ और जो जलालुद्दीन मुहम्मद अकबर शाह उन्हीं दिनों उत्पन्न हुआ था कहते हैं और किन्हीं लोगों का विश्वास है कि इस मुकन्द ब्रह्मचारी की आत्मा ने अकबर बादशाह के शरीर में आकर जन्म लिया था और अपनी इच्छानुसार भारत के राज्य को प्राप्त किया। इन अक्षरों के लेखक ने गिनती करके पता लगाया कि जिस दिन उस ब्राह्मण ने अपने शरीर को होम किया वह दिन २७ जनवरी १५४२ ईस्वी और १० वीं तिथि मास शव्वाल ९४८ हिज्री थी और अकबर बादशाह की जन्मतिथि ५ माहरजब ९४९ हिजरी थी अर्थात् इस बलिदान के ८ मास २६ दिन पश्चात् अकबर का जन्म हुआ था। हिन्दू पुनर्जन्म के मानने वाले हैं। इस घटना को सत्य जानें तो आश्चर्य की बात नहीं क्योंकि बालक मां के पेट में ९ मास या कुछ दिन कम भी रहता है। यह नियत अवधि से केवल चार दिन कम है। ठीक रूप से तो केवल खुदा जानता है। मिफ़ताहुतवारीख़ अध्याय ११ पृ० १९७, १९८ (अनुवादक)

×दर मौजह बक्सर रावत टीका नाम मुकद्दम बूद शख़से कि बाओ अदावत दाश्त क़ाबू याफ्ता ज़ख़्मे बर पुश्त व ज़ख़्मे दीगर बर बिना गोशेश्रोज़द व बहुमां ज़ख़्महारावत मज़कूर कालिबतही कर्द बअ़द चंद गाहराम दास खेशेओरा पिसरे ब वजूद आमद कि बर पुश्त व बिनागोशे ओ निशान हमांज़ख़महा बूद शोहरत शुद कि रावत टीका अज़ जख़्महा मुर्दाबूद बाज़ बतरीक़े तनासुख़ दरीं आलम बवजूद आमद व आं पिसरश बअ़द रसीदन बहदोशऊर मेगुफ़्त किमन रावत टीकाअम, व निशान हाए सही मेदादा व चूंई सानिहा ग़रीबा बअ़र्ज़ अकबर रसीद ओरा बहज़ूर तलबीदा बर अहवाले ओवक़ूफ़ यापत, व गोयन्द तसदीके इज़हारे ओ नमूद। (सीरुमुता खरीन लेखक सय्यद गुलाम हुसैन जिल्द १ वर्णन अकबर पृ० १८७)

मनुष्य का तोता और तोते का मनुष्य

हज़ार बार खुमोकूज़ा कर्दा अंद मरा।
हनूज़ तलख मिजाजम ज़िमर्गे शीरीं काम।। (६)

प्यारे लाल मोर्ह ग्राम ज़िला बरेली निवासी का चाचा १८५७ ईस्वी में मारा गया। जब कुछ दिन बीते तो उसने तोते का जन्म लिया और स्वभाव बना लिया कि प्रति सायं अपने घर आता और एक लोहे के पिंजरे में जो उसके घर में रखा हुआ था, बसेरा लेता और प्रातःकाल उड़ जाता। कुछ समय तक ऐसी अवस्था रही किन्तु एक दिन वह तोता ऐसा गया फिर वापिस न आया। लोगों का उसकी ओर ध्यान रहा। उन दिनों की बात सुनिये कि एक गोसाईं की स्त्री (सिद्धू ग्राम निवासिनी) अपने काम को किसी ग्राम में जाती थी। मार्ग में प्यास के कारण ग्राम मोर्ह में अपने किसी जान-पहचान के घर आई, उसका पांच वर्ष का लड़का पोतेराम के घर आया और स्त्रियों से पूछा कि अमुक २ कहाँ हैं? कहा कि अमुक मर गये और अमुक कार्य को अमुक स्थान पर गये हैं। पुनः लड़के ने कहा कि मेरा पहिला नाम प्यारे लाल है और यह घर मेरा है, यहां एक नीम का वृक्ष था वह क्या हुआ? उन्होंने कहा कि हमने काट डाला, पुनः उस लड़के ने अपने मारे जाने और मर कर तोता बनने और फिर एक शिकारी के पंजा में फंस कर मरने और पुनः गुसाईं के घर में उत्पन्न होने का वृतान्त कहा और अपने माता पिता, नानी चाची को पहचान कर अपनी टोपी और पुस्तकें मांगीं उसकी पूर्वजन्म की माता ने कहा कि यह वस्तुएं तुम्हारे भतीजे के प्रयोग में आ गईं, हम तुम्हें और देंगे। उपस्थित लोगों को उस लड़के की बातों पर बहुत आश्चर्य हुआ। पश्चात् वह अपनी नवीन माता के साथ चला

× बक्सर ग्राम में रावत टीका नाम का मुखिया था एक व्यक्ति उससे शत्रुता रखता था उसने उसे वश में करके एक चोट पीठ पर और एक कान पर लगाई और उससे रावत की मौत हो गई थोड़े दिन के पश्चात् रावत के दामाद रामदास के लड़का हुआ उसकी पीठ और कान पर उन चोटों के निशान थे। यह बात प्रसिद्ध हो गई कि रावत टीका चोटों से मरा था पुनः आवागवन के अनुसार उत्पन्न हुआ जब लड़का बड़ा हुआ तो कहता था कि मैं रावत टीका हूँ और सब बात यथार्थ बताता था यह विचित्र बात अकबर तक पहुँची उसे सामने बुलाकर पूछा उसकी बात की तसदीक हो गई। (मीरतुलमुताखरीन पृ० १८७) (अनुवादक)

(६) सहस्र बार मेरी मट्टी से मटके व सुराहियां बन चुकी हैं। किन्तु अभी तक मेरा तीक्ष्णस्वभाव मधुर मृत्यु से नहीं छूटा जो अभी तक पुनर्जन्म के चक्र में हूं। (अनुवादक)

गया। सूचनावाहक व्यक्ति कहते हैं कि वह लड़का बसुन्धरी ग्राम में गोसाईं के घर विद्यमान है जिसको इसके निरीक्षण की इच्छा हो वह बसुन्धरी ग्राम में जाकर देखे।

(लारेसंगज़ट तथा पंजाबी अख़बार अंक १६ जिल्द दो, २३ अप्रैल १८६६ ई० पृ० २४५,२४६)

कीड़ों में आवागवन का एक और दृश्य

रेशम का कीड़ा—यह उन कीड़ों से है जो तीन बार अपना शरीर परिवर्तित करते हैं। इसके अंडे राई के दाने से भी छोटे होते हैं। प्रत्येक अंडे में से एक छोटा-सा कीड़ा निकलता है। जो प्रथम कोई पाव इंच से अधिक नहीं होता किन्तु बहुत खाता और शीघ्र ही बढ़ जाता है। अल्पकाल में इतना हो जाता है कि पोस्त में नहीं समाता। उसे सिर की ओर से फेरता है और यह केंचली की भान्ति उतार कर फेंक देता है। नया पोस्त पहिले-पहिले बहुत ढीला ढाला और कोमल-कोमल होता है। उसमें शीघ्रता से बढ़ता चला जाता है, इसी प्रकार चार पांच पोस्त उतारता है। जब पूरा आकार निकाल लेता है तो लंबाई में कोई तीन इञ्च का हो जाता है। पीलापन लिये मटीले रंग का होता है। शरीर के सब ओर बारह छल्ले, दोनों करवटों में नौ-छिद्र जिनसे श्वास लेता है, १६ टांगें, दोनों कनपटियों में सात-सात आंखें, व दो पतली-पतली नलियां शरीर से दूर तक फैली हुई नलियों के मुख ठीक जबड़े के नीचे, उनमें एक लेसदार वस्तु—रेशम इन्हीं नलियों से बनाता है। इसे प्रायः शहतूत के पत्ते खिलाया करते हैं। उसे यह अन्य वृक्षों के पत्तों से अधिक अनुकूल है। जितना बढ़ना होता है कोई छः सप्ताह में बढ़ लेता है, तब खाना छोड़ देता है और रेशम निकालना आरम्भ कर देता है। बैठा-बैठा इधर उधर सिर को मोड़ता है यहां तक कि रेशम का कोया अपने ऊपर बना लेता है। इस रेशम का प्रत्येक तार दोहरा होता है क्योंकि इन्हीं दो छोटी-छोटी नलियों से निकलता है और यह तार लंबा भी बहुता होता है।

यह कोया तीन चार दिन में बनता है कभी पांच दिन में भी। यह इतना बड़ा होता है जितना कबूतर का अंडा और यह रंग में हलका सुनहरी होता है। इन दिनों में यह घटते-घटते पहिले से आधा रह जाता है इसलिये कि रेशम अपने ऊपर तनता है और खाना सर्वथा छोड़ देता है। अब एक पोस्त पुनः आता है। इस समय वह मृतवत् हो जाता है। चिकना चिकना पोस्त होता है। भूरा रंग, एक ओर से नुकीला शरीर, जब कोई कीड़ा इस अवस्था में होता है तो अंग्रेजी में उसे क्रिसल्स कहते हैं। दो-तीन सप्ताह तक कोये के भीतर यह उसी प्रकार पड़ा रहता है। इस काल में अन्दर ही अन्दर पंख निकाल कर परवाना (उड़ने वाला कीड़ा) बन जाता है। प्रथम तो पोस्त को फाड़ता है पुनः यह कोये से निकलने का उपाय करता है कि उसकी तारों को जो चेप से चिपकी होती हैं। मुख के थूक से तर करता है और इन्हें हटा कर बाहिर आने का मार्ग अपने लिये बनाता है। अंडों से जब परवाने (उड़ने वाले कीड़े) निकलते हैं तो उड़ जाने की इच्छा नहीं करते, वहीं पड़े रहते हैं और नारी वहीं अंडे देती हैं कीड़े इस अवस्था में कुछ नहीं खाते कुछ दिनों में मर जाते हैं।

अनुमानतः कोई बारह सहस्र प्रकार के परवाने (उड़ने वाले कीड़े) और तितलियाँ हैं। सब रेशम के कीड़े की भान्ति तीन अवस्थाएं परिवर्तित करते हैं।

मक्खियां पौधों पर अंडे देती हैं, पौधों वाले कृमि जड़ों, पत्तों और फलों फूलों को बहुत ख़राब

करते हैं, बड़े होते हैं तो प्रायः अपना भोजन छोड़ देते हैं और भूमि पर गिर पड़ते हैं। कभी भूमि के अन्दर बैठ जाते हैं, कभी पृथक् सुरक्षास्थान ढूंढ़ लेते हैं। वहां अपना खोल उतारते हैं। अब अन्य रूप वाले बन जाते हैं। गोलमोल, लंबूत्रे और नुकीले से दोनों ओर हो जाते हैं। सिर, धड़, पाद कुछ दिखाई नहीं देता, इस अवस्था में न हिलते हैं न कुछ खाते पीते हैं। थोड़े समय पश्चात् अन्दर ही अन्दर मक्खी बन जाते हैं। पोस्त (खोल) फाड़ कर निकल आते हैं, उड़ते फिरते हैं और यही अवस्था मच्छर की है।

मेंढक—सबसे विचित्र बात यह है कि वह मेंढक की अवस्था में उत्पन्न नहीं होता, अंडे से मछली को अवस्था में निकलता है। मेंढकी अंडे देती है तो एक कोमल-कोमल सरसस्वच्छ वस्तु में लिपटे हुए होते हैं। वह उन्हें पानी की तह में कहीं रखकर चली जाती है। कुछ दिनों के पश्चात् बच्चे निकल आते हैं किन्तु उनकी टांगें नहीं होतीं, बड़ा सिर पतली सी दुम प्रतीत होती है। गलफड़ा होता है। जिससे श्वास लेते हैं। जब तक इनका यह रूप रहता है, जल से नहीं निकलते। इस आकृति के जन्तु प्रत्येक जलाशय में रहते हैं। पानी के तट पर प्रायः देखा होगा कि तुम्हारे आते ही छोटी-छोटी काली आकृति वाली मछलियां झलक दिखा-दिखाकर पानी की ओर जाती हैं, वह वास्तव में मैंढकों के बच्चे होते हैं। थोड़े ही दिनों के पश्चात् उनकी आकृति बदलने लगती है। पहिले तो उनका धड़ मोटा होता जाता है पुनः धीरे-धीरे पिछली टांगें दीखने लगती हैं, हाथ चमड़े के नीचे से बन जाते हैं, प्रथम वह ऐसे होते हैं कि मेंढक उन्हें बाहिर निकाल सकता और अन्दर कर सकता है, जब आठ सप्ताह के हो जाते हैं तो बहुत कुछ मेंढक बन जाते हैं। दुम घटते-घटते सर्वथा छिप जाती है। अब गलफड़े के स्थान पर फेफड़ा हो जाता है। मेंढक उसी से श्वास लेता है यह सब इसी प्रकार की अवस्थाएं और घटनाएं हैं जिन्हें सैकड़ों व्यक्तियों ने देखा और सत्य बताया। तिब्बत के प्रसिद्ध नगर लासालामा गुरु ने भी यही बताया है कई अंग्रेज़ डाक्टरों ने सैर करने के लिये वहां जाकर उसकी बताई घटनाओं की पुष्टि की।]

दूसरा अध्याय

पारसी मत और पुनर्जन्म

इस मत को महर्षि व्यास के जीवन में बलख़ नगर में ज़रदुश्त पैगम्बर ने जारी किया। यह लोग भी वैदिक धर्म वालों की भान्ति चार वर्ण मानते, यज्ञोपवीत पहनते, गौरक्षा करते, मांसाहार को पाप समझते, ईश्वर सत्ता को मानते, अग्निहोत्र के लाभों से परिचित, जीवों को अनादि मानते और पुनर्जन्म पर विश्वास रखते हैं। (देखो दसातीर फराज़ाबाद तथा ख़शूर आयत १३६-१३७)

सैंकड़ों मुसलमान भी ज़र दुश्त को नबी जानते और उसके चमत्कारों को सत्य समझते हैं।

इनका पैगाम्बर सासाने अव्वल--अपने नामह की आयत १९ में आज्ञा देता है कि—

"ख़ान अज़तने बातने रान्दा अस्त"

अर्थात् जीव एक शरीर से दूसरे शरीर में जाने वाला है। इसकी व्याख्या में सासान पंचम ने अत्युत्तमता से इस मन्तव्य का प्रमाण प्रस्तुत किया है और नामाह प्रथम आयत ७० और ७२ में भी इसका वर्णन है कि इस संसार में मनुष्य अपने पूर्व शरीर के कर्मों का परिणाम हर्ष, शोक और आनन्द रूप में प्राप्त करता है।

दसातीर' फराज़ाबाद और ख़शूर आयत ६७.६८ में है कि—

शतखां गौहरेस्त सियामक व कामूसो ज़ुबानंद व ओरा मर्दुम नामंद व मनो तो ओरा ख़ानंद व आं फरिश्ता रा पैवन्देस्त बातन पैवन्द ब्यारश बे आंके दर आम्दा बाशद बा तन या आमेख्ताह वदो.............।

जीवात्मा सत्पदार्थ है, निख यव, चेतन और प्रयत्नशील भी है और उसी को मनुष्य कहते हैं और हम और तुम उसी से अभिप्रेत हैं। और वह शरीर का प्रयत्न करता है, शरीर में जीव व्यापक नहीं है और न शरीर से संयुक्त उसका भाग है।

अतः जीव दीपक की बटी हुई बत्ती की भान्ति है, और शरीर को प्रकाशित करता है वास्तव में शरीर से पृथक् है।

जाएज़स्त मि यके क़ब्लअज़ दीगरे मौजूद बाशद अर्जी जास्त कि हुकमा गुफ़्तह अन्द कि वजूदे नफ़्स क़ब्ल अज़ बदन वाजिब खाहद बूद नई कि बदन शर्त ओ बाशद। तहक़ीकुर्त्तनासुख़ पृ० ११

उचित है कि एक दूसरे से पूर्व विद्यमान हो यही कारण है कि विद्वानों ने कहा है कि जीव का शरीर से पूर्व होना उचित है न कि शरीर का अर्थात् शरीर से जीव सत्ता में नहीं आया प्रत्युत शरीर से पूर्व सत्पदार्थ था।

(६७) व आं कसकिफर्दे दीन जहां खाहद व नेकोकार बाशद ओरा दर खुरदानिश व को यश वकुनश अज़ खिरदी व द्वस्तूरे पर्मादिही व नवामंदी मायह बख्शद। अर्थात् जो कोई अपनी सराहने योग्य सेवा और शुभकर्मों के फल रूप में संसार के सुखों की प्राप्ति का इच्छुक हो, परमेश्वर दूसरी वार उसको जबकि वह दूसरे शरीर में आवे, उसके कर्म, बुद्धि और वचन के फलस्वरूप उसे सांसारिक प्रतिष्ठा और उच्च पद पर पहुंचाता है अर्थात् तदनुरूप उसे राज्य, शक्ति और धन प्राप्ति होती है।

(६८) ता चूंकुनद चुनां अंजाम पा बद। जिससे इसने जैसा किया है उसका वैसा फल प्राप्त करे और राज्य प्राप्त करके भी जैसे काम करे उसका फल पावे।

ता चूं कुनद लातबदी चुनां अंजाम याबद व बाज़ बत शरीह आं मे फ़रमायद व ख़शूराबाद दर दानशाद कि यज़दानी आबाद बर दो बर पैर वान पाकनिहादश वाद, दरख़ास्त किऐमेहर बान दावर व ऐदादगर पाक खुस खां व जहांदारान् व नवामंदान् बीमारीहा दर तन व रविन्दह हा अज़ख़ेश व पैवन्दह मानिन्द आं व पेशमे आयद ईं चीस्त व चरास्त जहाने ख़ुदा व दस्ती-एं खदेव पासदाद।

यह सासान पंचम का वर्णन है अर्थात् पैगांबर ने खुदा से पूछा कि बादशाहों, राजाओं और धनियों को जो सम्बन्धियों और सन्तान के मरने का दुःख होता है और इसी प्रकार वह जो राजरोग में ग्रसित होते हैं इसका क्या कारण है ? ईश्वर इसका उत्तर इस प्रकार देता है कि—

(१९) ईं कि दर हंगामे खुरमी आज़ारोरंज मीयाबंद अज़ गुफ्तारो किरदार गुज़िश्तह वरफ्तह तन किदादगर एशां रा अकनूं मेगीरद मे गोयद दर हंगामखुरमी कि अज़सल्तनत व तवन्गरी सलातीन व अग़निया ए हासिलस्त मुताल्लम व अन्दोहगीहंनशुदन नतीजाए अअ़माले साबक़ह अस्त किदर जिस्मे साबिक़ किरूहे एषां अज़ां इन्तक़ालकरदह दरीं जिस्म रसीदह अस्त खुदावंद आदिले ईं बाज़आं नतीजाए ऐमाल नतीजा ए एशां मेदहद। पंजुम सासान दर शरह आं मे अफ़ज़ायद व मे गोयद बायद दानिस्त चुनां कि कसे पेश बदकार बूद पस नेकी कर्द व वगुज़श्म व तनेदीगर पैवस्त कामबख्शदरीं बार ओरा बआरज़ू रसानीद व बाईं अज़ दादगरी पादाश बदकारी बदी रसानीदह अज़ कैफ़र करस्त चिरा कि अगर दर या वा अफरादह फ़िरो गुज़श्ते शवद नह दादगर बाशद काम बख्श बख़्शिंदह मकसूद दिहंदह मतलूबकि ईज़द तआ़ला बाशद।

संक्षिप्त भाव—परमेश्वर जो कि न्यायकारी है पुण्यपाप कर्मों का फल सुख-दुःख रूपेण उनको पहुंचाता है अतः यह शोक और दुःख बुरे कर्मों का फल है जो उसने पूर्व किये थे और यह बादशाही (साम्राज्य) और धन वैभव शुभकर्मों का परिणाम है जो उसने पश्चात् गतजन्म में किये। क्योंकि ईश्वर न्यायकारी है अतः उसके न्यायालय का यही न्याय है कि कर्मानुसार फल और दंड देवे।

(७०) बनाम यज़दान हर कसकि ज़िश्तकार व बदकार अस्त ओरा नखुस्त दर पैकरे मरदुम रंज दारद चूं बीमारी वरंज खुरदन दर शिकमेमादर व बैरूं आं वखुदराख़ुद कुशतन व अज़ तुन्दयार जानवर आज़ारमंद आज़िरदह दर बख़ुरशुदन वमुर्दन व वे नवाई पेश आमदन अज़ हंगाम ज़ादन ता मर्ग हमह पादाश किरदार रफ्तह बाशद व चुनीं नेकी।

जो मनुष्य दुष्कर्मी होता है उसको प्रथम मानव शरीर में दंड दिया जाता है, यथा रोग और माता के गर्भ में कष्ट झेलना और उत्पन्न होकर कष्ट उठाना तथा आत्महत्या, हानिकारक हिंसक

पशुओं द्वारा पीड़ित होना, रोगी होना, मृत्यु भय, जन्म से मृत्यु पर्यन्त दरिद्र और निराश्रय रहना यह सब उसके गतकर्मों का दंड है और उसके विरुद्ध नेकी अथवा पुण्य कर्मों का शुभ फल मिलता है।

ईं क़िसमरा दर इस्तलाह तनासुख फरहंगसारनामंद व तनासुख इबारतस्त अज़ दर आमदन रूह अज का़लिबुद बकालिबुद दीगर बर आं ज़माने ईरा गर्दद्नह नामंद व पंजुम सासात बहतफ़ सीरेश्रां मी आयद, बायद दरियाफ़्त कि अज़ हंगामे ज़ादन ता मुर्दन हर चेह अज़ खु़रमी व खु़शी पेशमे आयद बायद, हमह कैफ़रकिरदार गुजि़श्तह जस्त किईं बारमेयाबदु यअ़नी ईं हमह नताएजे अअ़माले साब्कह् अस्त।

पुनर्जन्म की परिभाषा में इसको फरहंगसार तनासुख का अभिप्राय यह है कि एक शरीर से दूसरे शरीर में कुछ समय के लिये जीव का आना। इसको (गरदोनह) आवागवन भी कहते हैं—सासान पंचम ने ऐसी ही व्याख्या की है।

(७१) शेरो पलंगो वबरो यूज़ो गुर्गवहमह तुदंबार कि जानवराने आज़ारदेह रंजकार अन्द, अज़ परिन्दह वरविन्दह व चरिन्दह बुज़ुर्गी व परमान दही दाश्तंद, वहर कसकि मे कुशंद पेशकारान दरसहारान वयावरान ईनां बूदह अन्द कि बगुफ़्त वयावरी नह पुश्त गरमी ईं गिरोह अलबंदी दरुश्ती मे गज़न्द दरन्द बाज़ जानवरान बे आज़ारन्द व ता कुशन्दह मे आर्ज़र्दन्द अकनूं आज़ खु़दावंद खु़दसज़ा मेयाबंद।

संक्षिप्त भाव यह है कि यह हिंसक जीव शेर, भेड़िवा, चीता और कफतार (लकड़ बग्घा) आदि सब क्रूर जीव गतजन्मों में सम्राट् राजा और उच्चपदस्थ लोग थे और वह पशु जिन्हें अब यह मनुष्य मारते हैं उनके मंत्री और सेवक थे जो अपने अधिकारी वर्ग की आज्ञा अथवा सहायता से हिंसा न न करने वाले पशुओं की हिंसा करते थे। अतः यह इस जन्म में अपने स्वामियों के हाथ से दंड पाते हैं और फाड़े और घायल किये जाते हैं।

(७२) अंजाम ईं बुज़ुर्गान तुन्दबार पैकर व रंजे व बीमारी या बज़खमे दर खु़रकार गुज़रन्द व अगर गुनाह बाज़मान्द बारे दीगर आमदेह बायावरान खु़द सज़ाख़ाहन्द याफ़्त व वह तफ़सीरश मेफ़रमायद व कैफ़रखु़द रसन्द ता हरगाह बकरां कशद यकबार या दहबार या सदबार, व मानिन्दे आं यअ़नी ईं गरदिश बपायान रसीदन नताएजे अअ़माल बरकशीदह अन्द व इमतदादे ओ पज़ीरद शुमारहए आं मुअय्यिन नेस्त।

अन्ततः यह हिंस्र पशु जो कभी उच्च पदस्थ थे अब हिंसक पशुओं के जन्म में दुःख, रोग और आघातों से मर जाते हैं और यदि पाप शेष रहता है तो पुनः पुनः अपने सहायकों सहित जन्म ले लेकर दंड प्राप्त करेंगे चाहे एक वार, दस वार सौ बार और इसी प्रकार इस आवागवन के चक्र का समाप्त होना केवल कर्मों पर है। कर्मों के अतिरिक्त इन योनियों और जन्मों की कोई गिनती नहीं।

बनाम यज़दाने जहानदार। बाज़हमीं वरख़शूर आबाद मे परमायद, ज़नद बार कि जानवर बे आज़ार व नाकुशन्दह जानदारस्त चूं अस्पोगाव वदशतुर वअश्र व अस्तर व ख़र व मानंदे आं मकुशीद व बेजान मकुनेद कि सज़ाए करदारे ओ पादाश कारे ईंहा दिगरगूं न अस्त अज़ हुश्यार खिरदमन्द, चुनांचे अस्परां सवारी कुनेद, व गाव, शुतुर व असतर व खररा बार, चेह ईं हमां मरदुमरा

बज़ोर बार कर्दन्दे मअनीं ईं जानवरानरा कि सज़ाए अअ़माले शान किदर न ख़ुस्तीं क़ालिब कर्दअन्द ईज़दतअ़ल्ला बहिकम तेख़ुद मुकरर करदह् अस्त हमचूरकूब व अ़मल शुमार ईं हांरा मकुशेद।

(७५) गरहुश्यार दानिस्तह् ज़नद बार कशद व ईं बार पादाश व सज़ाए कार अज़ निहां सोया मरज़ियान नीयाबद दर बार आयन्द कैफ़रोबाद अफ़राहश रसद, निहां सोग़ैब।

दोनों अर्थात् ७३ व ७५ का भावार्थ—जो अहिंसक पशु हैं जैसे घोड़ा, गाय ऊँट खच्चर और गधा आदि। उन कोमत मारो तथा निर्जीव न करो क्योंकि सर्वज्ञ परमात्मा की ओर से इन के कार्यों का दंड अन्य प्रकार से है, जैसाकि घोड़े पर सवारी करना, बैल ऊँट, ख़च्चर और गधे पर बोझ लादना।

यह पशु गत जन्मों में मनुष्यों से बेगार लेते और जबर से बोझ उठवाते थे अतः इनके लिये ईश्वर की ओर से यह दंड नियत है कि इन पर सवारी की जाय और बोझ लादा जाए।

इनको मत मारो, यदि कोई व्यक्ति जान बूझकर अहिंस्र पशुओं को मारे और दंड न पावे तो ईश्वर परोक्षज्ञ, सर्वज्ञ ईश्वर की ओर से दूसरा जन्म प्राप्त करके दंड प्राप्त करेगा।

(७६) कुश्तन जि़न्दबार बराबर कुश्तनमर्द बे आज़ारहस्त। यअ़नी बराय क़त्ले हैवान ग़ैर मूज़ी सज़ाए सख़्त मुकरस्त।

(७७) दानेद कि कुशन्दह् ज़न्द बार बारकथन बख़श्म यज़दाने वाला गिरफ़्तार आयद।

ज़ेरा कि खिलाफ़ फ़रमाएशकर्द।

(७८) बितर्सीद अज़ ख़श्म ख़ुदाए वाला कि गिरफ्तश सख़्तस्त।

(७६, ७७, ७८ का भावार्थ)

अहिंस्र पशुओं अर्थात् गाय, घोड़ा, गधा, ऊंट, बकरी आदि का मारना मानो मनुष्य का वध है और उसका दंड भी कठोर नियत है।

यह भली भांति जानो कि मूर्ख मनुष्यों के समान जन्दबार पशु जो बोझ उठाने के काम आते हैं, उनके मारने वाले परमात्मा के ग़ज़ब में पकड़े जाएंगे क्योंकि उन्होंने भगवान् की आज्ञा के विरुद्ध काम किया।

ईश्वरीय दंडविधान रूपी प्रकोप से डरो उसकी पकड़ कठोरतम है।

(७९) बनामे यज़दान, अगर तुन्दबार कि जानवर जानदार आज़ारद व जानदार कुशन्दह अस्त, जि़न्दबारए कुशद, सज़ाएकुश्तह शुदह् कैफ़र किरदारखून रेख़्तह् व पादाशकुनश बे जान कुशतह् बाशद चेह तुन्दबारान बरायसज़ा वकैफ़र दादन अन्द यअ़नी क़त्ले हैवानाते मूज़ियह् निस्बत जानदारान बे आज़ार नतीजहए अअ़माले मक़तूलान अस्त कि ईज़दे तआ़ला तुन्द बारानए अज बहर जज़ादादन एशां अफ़रीदह।

यदि हिंस्र पशु अहिंस्र पशु को मार डाले तो यह अहिंस्र के कर्मों का दंड है क्योंकि समस्त हिंसक पशु केवल उनके कुकर्मों के दंड देने के लिये नियत किये गये हैं।

(८०) कुश्तन तुन्द बारान् रा शाएसतह व सितूदह दरख़ास्त चेह आंहा बाज़रफ्तह् व गुज़िश्तह ख़ूंरेज़ वकुशन्दह बूदहअन्द, व बेगुनाहां रामेकुशन्द, सज़ादिहन्दह ईंहा रा बहरह बाशद। सासान पंजुम

अज़ख़ुद सरहश मीअफ़ज़ायद व मे गोयदचेह सज़ादादन बा ग्रांहा नेकी करदन व बपरमान वाला यजदान रह सपुर्दनस्त। ग्रजई दानिस्तह शुद, व परमान दाद ता तुन्दबारां राबिकुशन्द चिह सज़ाए तुन्दबारान अस्त कि ओरा बिकुशन्द यअ़नी हसूल बह क़त्ले सबाअ़ मूज़ियह अज़ बहर आनस्त कि ईजदे तअ़ला बिफ़ज़्ले शान फ़रमान दादह पस हरकस कि सबाअ़राबिकुशद बफ़रमाने ख़ुदाकार करदह बाशद।

तुन्द बारों अर्थात् हिंस्र पशुओं को मारना अच्छी बात है क्योंकि वह गत जन्म में निरपराधों को मारते थे। इनके दंड दाता को पुण्य होगा। इस आयत की व्याख्या सासान पंचम करता है कि इनको दंड देना ईश्वरीय ग्राज्ञा का पालन करना है।

(दख़शूरान वख़्शूर फ़राज़ाबाद ग्रायत ६७ से ८० तक)

(८१) व ख़ान हमीं दीदहे न शनूद व पायन्दगान तनानी बराय ग्रांकि एशांज़ुज़ तन व तनानी नमे याबंद व रुवां न तनस्त व न तनाती।

जीवात्मा जो चक्षु: इन्द्रिय से देखा नहीं जाता इसका यह कारण है कि साकार भौतिक वस्तुग्रों में साकार भौतिक वस्तुओं के देखने के ग्रतिरिक्त निराकार ग्रभौतिक के देखने की शक्ति के साधन नहीं, परन्तु जीवात्मा न साकार है और न भौतिक, अत: उसे चक्षु आदि इन्द्रियों से नहीं देखा जा सकता।

(८२) व परवाज़श रुवां ब मियानजी ग्रफ़राज़हा रौशनस्त येह दरयाबद बपायन्दगान व ज़ुबायद..

जीवात्मा की अवस्था ईश्वर पर सर्वथा प्रगट है क्योंकि वह सब वृत्तान्त को जानता है। पैगम्बर कहता है मुझे बहराम फ़रिश्ता ने कहा – आत्मा एक शरीर से दूसरे शरीर में जाती है। पूरे त्यागी लोग अर्थात् संन्यासी लोग ईश्वर का दर्शन पाते हैं जिनके शुभकर्म कुछ न्यून पद के होते हैं वह ग्राकशस्थ सुखमय लोकों में रहते हैं और उनसे भी निचले पद वाले भिन्न-भिन्न शरीरों में कर्मानुसार जन्म लेते हैं और इच्छानुकूल पदार्थ प्राप्ति का नाम सुख और अप्राप्ति का नाम दुःख है॥

नामा मुश्त सासान ग्रायत १८, १६ सफरंग दसातीर १२८० हिजरी का भावार्थ इस प्रकार है— अध्यात्म ज्ञान और स्वात्म का परिचय जीव का काम है ग्रौर किसी शारीरिक शक्ति का इसमें प्रवेश नहीं अत: शरीर वियोग के पश्चात् सुख-दुःख एकत्र होते हैं क्योंकि जीवात्मा मरण धर्मा नहीं। स्वशक्ति से शुभाशुभ को जानता है अत: यदि वह शुभ बातों को जानता है तो इसे सुख प्राप्त होता है अन्यथा दुःख। शारीरिक शक्तियों के तिरोहित अथवा नष्ट हो जाने से जीवात्मा के ज्ञान को हानि नहीं पहुंचती, क्योंकि जोव तो स्वयं चेतनता रखता अर्थात् चेतन सत्ता है। शारीरिक शक्तियों के आधीन नहीं जैसा कि पूर्व प्रगट किया गया। शरीर और शारीरिक शक्तियां जीवात्मा के अनुभव और ज्ञान प्राप्ति में साधन हैं परन्तु स्थिर नहीं रहते ग्रौर बुद्धि की ज्ञानवती चेतना शक्ति स्वयं ग्रधिक पूर्ण होती है। ज्ञानेन्द्रियों की चेतना से विषयों के साथ ही सम्बन्ध है नित्य सूक्ष्म पदार्थों के साथ ऐन्द्रियिक चेतना की कुछ भी अपेक्षा नहीं, विशेषत: परमेश्वर के साथ तो इसका दूर का सम्बन्ध भी नहीं।

जो सबसे उच्च पद वाले प्रथम कोटि के सत्पुरुष हैं वह ग्रवश्य मोक्ष पा जाते हैं और इससे नीचे के द्वितीय पद के लोग जो शारीरिक दोषों से रहित हैं वह देवता होते हैं ग्रौर जो शरीर के कारागार से मुक्त नहीं हुए ग्रौर अधिक पुण्यमय कार्य करते हैं वह एक मनुष्य शरीर से दूसरे मानव शरीर में जाते हैं जिस से मोक्ष प्राप्त कर सकें इस चक्र का नाम फरहंगसार है और जो कुकर्म करते हैं वह मूक पशुओं की योनियों में जाते हैं, इसका नाम नंगसार है।

हकीम इलाही जमशेद का कथन है कि—जीवात्मा सनातन और नित्य पदार्थ है। सादि और नवीन उत्पन्न पदार्थ नहीं है। क्योंकि प्रत्येक उत्पन्न हुआ पदार्थ उत्पन्न होने से पूर्व जड़ होता है। अतः जीव नित्य न हो तो भौतिक जड़ होगा, चेतन सत्पदार्थ नहीं।

हकीम इलाही जी अफ़राम फ़ारसी का कथन है कि जीवात्मा संसार में नित्य रहने वाला सत्पदार्थ है और शेष भौतिक पदार्थ नष्ट हो जाते हैं। प्रसिद्ध विद्वान् अब्दुल्करीम शहरस्तानी लिखता है कि मजूसियों का मत यह है कि मिन्हुम क़ाब्लू बितना सुखिलर्वाहे फिलज्सादे ... ... ।

भावार्थ—मजूसमत (अग्नि पूजक) का सिद्धान्त है कि उनमें से शरीरों में जीवों का पुनर्जन्म और एक शरीर से दूसरे शरीर में जाना मानते हैं और जो जीव को सुख-दुःख की प्राप्ति होती है तथा उनके पूर्व कर्मों का परिपाक जिस पर अवलंबित है, उसी के आधार पर आगामी शरीरों में जन्म प्राप्त करता है। इसी प्रकार मानव उन कर्मों के परिपाक पर आश्रित है। कर्मों पर नहीं किन्तु परिणाम=फल पर अवलंबित है। और उसका शरीर कर्म परिणाम प्राप्ति के अतिरिक्त अन्य किसी प्रयोजनार्थ नहीं। कर्म फलार्थ ही शरीर प्राप्ति होती है। नर्क स्वर्ग इन्हीं शरीरों द्वारा प्राप्त होता है। सबसे उच्च पद पैग़ाम्बरी का है। इससे श्रेष्ठ अन्य कोई पद नहीं। सबसे निकृष्ट पद जिनों का है। उनमें से एक समुदाय कहता है कि सबसे उच्च पद देवताओं का है और सबसे निकृष्ट पद शैतानों का है और इस समुदाय का विरोध सभी लोग करते हैं और वह इस प्रकार विचार करते हैं कि मोक्ष क्या है? यद्यपि प्रकाशमय अवस्था की ओर यत्नशील होना और अन्धकारमय जड़ जगत् को पीछे छोड़ देना ही मोक्ष है। ("अमल वन्नहल" अरबी पुस्तक से)

———

तृतीयाध्याय

बुद्ध मत और पुनर्जन्म

यह मत मसीह से ६३० वर्ष पूर्व आर्यावर्त में प्रचलित हुआ। इसके प्रवर्त्तक साखीसिंह गौतम बुद्ध क्षत्रिय राजपूत थे। इस मत के चिह्न अफ़्रीका, एशिया, योरुप और अमरीका आदि द्वीपों में भी विद्यमान हैं। संप्रति चीन, जापान, ब्रह्मा, स्याम, अनाम, तिब्बत, लंका, चीनी तातार आदि स्थानों पर इस मत का बड़ा ज़ोर शोर से प्रचार है। लगभग सत्तर करोड़ मनुष्य इस मत के मानने वाले और वह बुद्ध कहलाते हैं। इनका विश्वास है कि "कर्म के मारे बार-बार जन्म लेना पड़ता है। जिसका नाम जीवात्मा है वह कोश में नहीं किन्तु पांच स्कन्धों में रहता है। इन स्कन्धों के नाम यह हैं—रूपस्कंध, वेदनास्कंध, संज्ञास्कंध, संस्कारस्कंध और विज्ञानस्कंध, मृत्यु के समय यह सब स्कंध नष्ट हो जाते हैं।" (आवागवन विचार पृ० ७)

बुद्ध मत के अनुयाईयों का बड़ा प्रयोजन यह होता है कि वह निर्वाण (मुक्ति) प्राप्त करें अर्थात् नष्ट हो जाएं क्योंकि बुद्ध की शिक्षानुसार मनुष्य विषय वासनाओं, दुःखों और आत्मा के नित्य के आवागवन=पुनर्जन्म से इसी प्रकार मोक्ष प्राप्त कर कर सकता है।

(लेथ्रिज साहिब का संक्षिप्त भारतवर्ष का इतिहास पृ० ३१)

"उसने यह शिक्षा दी कि मनुष्य की वर्तमान, भूत और भविष्य जन्मों की प्रछन्नावस्था उन्हीं के कर्मों का परिणाम है। मनुष्य जो बोता है वही काटेगा। क्योंकि प्रत्येक अशुभ कर्म का दंड और प्रत्येक शुभ कर्म का फल सुख आवश्यक है अतः जिस कर्म के लिये जो परिणाम आवश्यक है वह न तो पुजारी और न देव के रोके रुक सकता है। सुख दुःख जो इस संसार में मिलते हैं उनको हमारे गत-जन्मों के कर्मों का आवश्यक परिणाम मानना चाहिये और इस जन्म के कर्मों पर हमारे भविष्य के जन्म के सुख-दुःख आधारित होंगे। जब कोई प्राण धारी निधन को प्राप्त होता है तो स्वकर्मानुसार उत्तम अथवा अधम योनियों में भविष्य में पुनः जन्म लेता है और उसका सुखरूप फल का अधिकारी अथवा दंडनीय होना उनके गतजन्मों के कर्मों के समुच्चय-योग पर निर्भर है।"

(संक्षिप्त इतिहास डाक्टर डब्ल्यू हंटर साहिब १८८४ ईस्वी, पृ० १०९)

यह स्वाभाविक बात है कि हमारा मन उन मन्तव्यों के खंडन का प्रतिरोध देर तक करेगा जिनसे वह मन्तव्य सिद्ध हो जाते हैं। पुनर्जन्म का मन्तव्य चाहे ब्राह्मणों के कथनानुसार माना जाए अथवा बौद्धों के मतानुसार (माना जाय) किसी प्रकार भी खंडन के योग्य नहीं है। किन्तु हम संसार में सुख-दुःख का जो न्यूनाधिक्य देखते हैं उसका पूर्ण सन्तोषजनक उत्तर हमें इस मन्तव्य से प्राप्त हो जाता है यथा एक बालक जन्मान्ध है यह उसका अन्धापन पूर्वजन्म में आंखों के दुरुपयोग का परिणाम है, किन्तु वही अन्धा जो उच्चकोटि की श्रवणशक्ति रखता है उसका यह कारण है कि वह पूर्वजन्म में धर्मशास्त्र श्रवण का बहुत अनुरागी था इसी प्रकार प्रत्येक बात का पूर्ण सन्तोषजनक कारण मिल सकता है।

इन घटनाओं के सन्तोषप्रद उत्तर का खंडन कोई नहीं कर सकता। क्योंकि इन मन्तव्यों का पता लगाना मनुष्य शक्ति से वाहिर है। (बुद्धमत टी० डब्ल्यू डैविड कृत पृ० ९९)

(8) मरदुमचीनरा शकिया (यअंनी बिनाकर्दह शक मुनि) दामनूत मे नामंद व ईं मजहब अज़ मुल्क पतान्सू आवुर्दन्द कि अकमूं आंरा हिन्दुस्तान मे नामन्द व मर्दु मे चीन पंज अंन्सर क़ारल अन्द। अहले मज़हब शाकिया मे गोयन्द कि जमीअ् मवालीद आलमे सिफ़ली अज़ीं अन्सर मुरक्कबअन्द व आलम हाए बसियार अन्द व बर तनासुख़ क़ाएलअन्द, व मुतलिक़न गोश्तख़ुर्दन जाएज़ न दारन्द, नफ़्सरा ला यमूत मेदानंद। (अज़ तारीखे चीनफ़ारसी पृ० ९०,९१)

———

(8) चीन के मानव शाक्य मत वाले हैं (जिस मत को शाक्य मुनि ने प्रचलित किया है) और उसे दामनूत भी कहते हैं। यह मत पतानु देश से जिसे अब हिन्दोस्तान कहते हैं आया है। चीन वाले पांच तत्त्वों को मानते हैं। शाक्य मत के लोग कहते हैं कि भौतिक जगत् की उत्पत्ति इन पांच भूतों के संयोग का परिणाम है और बहुत सी सृष्टियाँ हैं। यह लोग पुनर्जन्म को मानते हैं। मांस खाना निषिद्ध समझते हैं। जीवात्मा को अनादि और नित्य मानते हैं। (अनुवादक)

चतुर्थाध्याय

विभिन्न देशों के विद्वानों और दार्शनिकों की सम्मतियां

तालीसुल्मलीति यूनान के सर्वतः प्रथम दार्शनिक का विश्वास

"काला मिनरूँहे अन्नलर्वाह गैरफ़ानियत बल अज़लियतो, अब्दियतो"..................

जोव अमरणधर्मा अनादि और नित्य है। कोई रहस्य परमेश्वर से छिपे हुए नहीं हैं। यूनानियों में यह प्रथम था, जिसने सृष्टि नियम और अध्यात्म विद्या को जाना है और वह मानता है कि प्रथम मूल जल है और समस्त वस्तु जात एक अवस्था से दूसरी अवस्था में परिणत होती रहती हैं और अन्त में जल की अवस्था को प्राप्त करती हैं और वह समस्त पदार्थ जो सृष्टि में हैं इन्द्रियगोचर हैं और जो इन्द्रियागोचर पदार्थ इन्द्रियों से जिनका प्रत्यक्ष नहीं होता, संसार उन अदृश्यों से भरा हुआ है अर्थात् सम्पूर्ण सृष्टि में दो प्रकार के पदार्थ हैं एक प्रत्यक्ष और दूसरी प्रकार के अप्रत्यक्ष पदार्थ। अप्रत्यक्ष पदार्थ भी सृष्टि का एक भाग है और इच्छापूर्वक गति करने वाला प्रत्येक पदार्थ जीव होता है और पृथिवी ब्रह्माण्ड में अपने मुख्य केन्द्र पर भ्रमण करती है।

सोलून—दार्शनिक तालीस का शिष्य था और वह भी इसी प्रकार से जीवों के अनादि होने और पुनर्जन्म पर विश्वास रखता था।

इसी प्रकार कस्फ़ीरास दार्शनिक भी जो अनकसीमनीस का शिष्य था और यह अनकसीनन्दर नामी विद्वान् का शिष्य था जो कि तासी के शिष्यों में से था। यह भी सारे के सारे पुनर्जन्म सिद्धान्त के मानने वाले और जीवों के नित्य होने पर विश्वास रखते थे, और फ़ेलोल्यूस, वार्ज़ीनास अल्तारनती और तियूस आदि प्रसिद्ध तत्ववेत्ता दार्शनिक पुनर्जन्म को मानते थे।

हकीम (दार्शनिक) दीमुकीतस——तारीख़े फ़लसफ़ा में लिखता है——

इन्ना साकि़रा बलादल्हिन्द लियत अल्लम इल्लो कुदमाए फलासतहुम ......

अर्थ—उसने भारत देश की यात्रा की जिससे वहां के प्राचीन दार्शनिकों की शिक्षा को प्राप्त करे। उसने अपने गुरुलोकसीस की भान्ति विचार किया कि सम्पूर्ण संसार का मूल परमाणु है और कोई भी वस्तु केवल अभाव से भाव नहीं हो सकती जैसा कि भाववस्तु अभाव नहीं हो सकती और आत्मा के सम्बन्ध में किसी प्रकार का सन्देह नहीं हो सकता और न परिवर्तन। क्योंकि वह योग्यता—जो प्रत्येक वस्तु के अस्तित्व को स्थिर रखते हुए उसे प्रत्येक परिवर्तन से रक्षा करती है और वह इस बात का विचार करता है कि यह सम्पूर्ण असंख्य सृष्टियां परमाणुओं से बनी हैं अतः उनमें से प्रत्येक जगत् नष्ट होता है एक ज्ञात (नियत) समय के पश्चात् पुनः (निर्मित) हो जाता है उसके ही प्रकार पर अन्य सृष्टियां भी ऐसी ही हैं। कहता था कि मनुष्यों के अन्तःकरण परमाणुओं से संयुक्त हैं और ऐसे ही सूर्य, चन्द्रमा और अन्य नक्षत्र हैं। इस सबकी परमाणु जगत् के लिये चक्रवत् गति है जिससे समस्त

सत्तायुक्त पदार्थ उत्पन्न होते हैं। जैसाकि गतिद्वारा यह (चक्रवत् घूमने की) समता सब में है अतः उसके वचनानुसार यह युक्ति है कि मृत्यु की सत्ता है और वह कहता है कि समस्त पदार्थ बल से और कोप से उत्पन्न होते हैं, अपनी इच्छा से नहीं।

दार्शनिक (फ़िलासफ़र) ऐबसी क़ोरेस इसके मत पर चला किन्तु कोप और बल के स्थान पर इच्छाशक्ति के मेल से यह सृष्टि उत्पन्न हुई है। और दार्शनिक देमो क़रातीस का सिद्धान्त है कि जीवात्मा शरीरांगों में व्यापक है और यह कारण है कि संपूर्ण शरीरांगों में जीवात्मा अनुभव करने की योग्यता रखता है क्योंकि शरीर का प्रत्येक अवयव उससे स्थिर है और जीव उन संपूर्ण परमाणुओं में संयोग प्राप्त किये हुए है।

फ़ेसाग़ोर्स हकीम (दार्शनिक) ने साईप्रेस द्वीप में फ़ीरीसाईडिस नामी तत्ववेत्ता से शिक्षा प्राप्त की जिसकी वह बहुत प्रतिष्ठा करता था। ईश्वर के पश्चात् वह प्रतिष्ठा के योग्य माता-पिता और धर्मशास्त्र के रचयिताओं को समझता था। ईश्वर के सम्बन्ध में फ़ीसाग़ोर्स का यह विश्वास है कि वह विश्वव्यापी चैतन्य, समस्त पदार्थों में व्यापक और विभू, समस्त प्राणि जीवन का स्रोत, समस्त गतियों का मूल कारण, प्रकाश स्वरूप, सच्चिदानन्द, संसार का निमित्त कारण, आनंद का स्रोत, निराकार निर्विकार जिसकी प्राप्ति केवल जीव मन के द्वारा कर सकता है, प्रत्यक्ष इन्द्रियों से नहीं। फ़ीसाग़ोर्स के इस सिद्धान्त का सिसरो समर्थन करता है और कहता है कि वह ईश्वर को सर्वव्यापक समस्त जगत् में विद्यमान मानता है। वह कहता है ख़ुदा एक है। वह ऐसा नहीं जैसा कुछ लोग समझते हैं कि वह संसार से बाहिर एक देशी है वह तो सबमें विद्यमान है क्योंकि वह सब सृष्टि में व्यापक है। वह सब का शासक है। समस्त भौतिक जगत् और मूल प्रकृति का वह संरक्षक है वह अनादि और समस्त शक्तियों का स्रोत है। समस्त पदार्थों का वास्तविक नियामक और सत्य का स्रोत है। समस्त संसार का पिता और यूनीवर्षब्रह्मांड का प्राण, प्राणदातृशक्ति और समस्त नक्षत्र समूह का आदि चालक है। इस समस्त मन्तव्य को इन वर्णित नियमों के साथ मिलाकर वह कहता है कि जिस प्रकार मनुष्य की आत्मा इस शरीर को जीवित रखती है, इसी प्रकार वह समस्त विश्व को कार्यान्वित किये हुए हैं। प्रकृति के सभी जड़त्वादि विशेषणों से रहित, चेतनत्वादि ज्ञानस्वरूप अग्नि=प्रकाशपुंज है, वही विश्व के निर्माण और उसे स्थिर रख कर गतियुक्त बनाए रखने में किसी और की सहायता की अपेक्षा नहीं रखता।

(हिस्ट्री आफ़ फ़िलासफ़र्स पृ० २९३, २९४)

चैम्बर्स **इनफ़ार्मेशन फ़ार दी टेबल** नामी पुस्तक में लिखा है कि फ़ीसागोर्स जो बल्दहसी मास का प्रसिद्ध फ़िला**सफ़र था, वह लोगों को** पुनर्जन्म के मन्तव्य की शिक्षा देता और कहता था कि मैं स्मरण करता हूं कि मेरा पूर्वजन्म क्या था?

अनास सम्राट् के समय फ़ीसाग़ोर्स तत्ववेत्ता मिश्र में आया और पोली क्राईस सम्राट् सामास के (जो अनास का बहुत बड़ा मित्र था) द्वारा सम्राट् तक उसकी पहुंच हुई। उसने कुछ समय वहां निवास करके पुजारियों से बड़े-बड़े सूक्ष्म सिद्धान्त प्राप्त किये और उनके मत की सूक्ष्म से सूक्ष्म बातों की शिक्षा प्राप्त की यहां तक कि पुनर्जन्म का सिद्धान्त भी वहीं से उड़ाया। (तारीख़े मिश्र पृ० ११०)

फ़ीसागोर्स दार्शनिक ने पुनर्जन्म का सिद्धान्त मिश्र निवासियों से लिया था। मिश्र वालों का यह निश्चय था कि मृत्यु के पश्चात् मनुष्यों की आत्माएं पुनः मानव-शरीरों में प्रवेश करती हैं यदि

वह दुष्कर्मों से दूषित होती हैं तो वह अपवित्र और नीच पशु योनि में जाती हैं जिससे अपने कुकर्मों का दंड भुक्तें और कई शताब्दियों के पश्चात् उनको पुनः मनुष्य योनि में जन्म प्राप्ति का अवसर मिलता है।

(तारीखे मिश्र पृ० ४४)

तारीखुल्फ़िलासफा में लिखा है कि—

व काना यज्अमो इन्नलआलमा लहू रूहुन् व इदराकुन् ....

अर्थ—(पुस्तकलेखक) यह मानता है कि संसार के (संचालनार्थ) सर्वज्ञ आत्मा हैं। उस आत्मा से लंबा चक्कर है। यह विश्वात्मा समस्त मनुष्यों और प्राणियों के जीवों को (उनके कर्मानुसार) भ्रमण कराती है। यह (सबके साथ) सम्मिलित है। और वह कहता है कि आत्माएं न्यूनाधिक अर्थात् नाशवान् नहीं होतीं, हां वह आकाश में एक ओर से दूसरी ओर विचरती हैं और जब कोई शरीर (कर्मानुसार) उन्हें मिलता है तब वह उसमें प्रविष्ट हो जाती हैं। जैसे जिस समय एक आत्मा मनुष्य के शरीर से निकलती है तो वह घोड़े, भेड़, गधे, चूहे अथवा पक्षी और मछली आदि प्राणियों के शरीरों में कर्मानुसार जैसा मेल हो जावे प्रवेश कर लेती हैं। इसी प्रकार मनुष्य या किसी प्राणी के शरीर में भी बिना किसी अन्तर के प्रवेश कर जाती है जब वह किसी प्राणी के शरीर से निकल कर आती है। इसी हेतु से पीथागोर्स पशु मांस खाने का कठोरतापूर्वक निषेध करता था। वह मानता था कि ऐसा करना पाप है। वह मक्खी, भिड़ अथवा अन्य किसी दुःखी जीव के मारने का उतना ही पाप मानता जितना मनुष्य हत्या का। क्योंकि जीवमात्र एक जैसे हैं और मर कर सर्वप्राणियों में शरीरान्तर प्राप्त करते रहते हैं।

फीसाग़ोर्स ने मनुष्य समूह के सम्मुख जीवों के पुनर्जन्म होने या उनके एक शरीर से दूसरे शरीर में रूपान्तर होने का कहा और उसने उनको बताया कि मैं पूर्व इसालीदस के शरीर में था और इब्ने अतारू के नाम से था जो यूनान के देवताओं में प्रसिद्ध है। उससे मैंने प्रार्थना की। अत्तारू ने मुझे कहा था कि तू मांग जो कुछ मांगता है और मैं तुम्हें दूं जो तेरे लिये विनष्ट न होने वाले जीवन को प्राप्त करावे और तेरा प्रयोजन और उद्देश्य पूर्ण हो। उससे मैंने वर मांगा कि मुझे ऐसी स्मरण शक्ति प्रदान की जावे कि मुझे उन समस्त वस्तु जात का स्मरण रहे जो मुझे अपने सांसारिक जीवन और मरणानन्तर प्राप्त होवें। पुनः उसी समय से मुझे सब घटनाओं की चरितार्थता का स्मरण है और पुनः बताया कि ऐसा ही जब ऐसालीदस के शरीर से पृथक् होकर 'औफुरबा' के शरीर में आया और एक नगर के किले में युद्ध की अवस्था में एक बड़ा घाव मुझे मनीलास से पहुंचा था। पुनः वहां से निकल कर हर मूतीमूस के शरीर में गया तब मैंने विचार किया कि जो कुछ मुझे अत्तारू ने दिया था वह संसार पर प्रसिद्ध कर दूं। अतः अब ईखन्दस नगर में प्रविष्ट हुआ और ओपोलून के पूजा घर गया। और उनको पुराने फटे वस्त्र दिखाये जो मनीलास से घायल होने पर मैंने उससे छीने थे और पश्चात् उसी पूजा घर की भेंट अपनेविश्वासानुसार चढ़ा दिये। पुनः मैंने एक बोरोस नाम के चिड़ीमार के रूप में मरकर जन्म लिया उससे पश्चात् फिसाग़ोर्स के नाम से उत्पन्न हुआ हूं, इसके अतिरिक्त मैंने मुर्ग और मोर के जन्म भी धारण किये थे। ऐसा भी स्मरण है।

और वर्णन किया कि जिस समय में यात्रा करता था, मैंने दुःख के स्थानों को भी देखा। मैंने हज़यूदस' कवि की आत्मा को स्तम्भों के मध्य सांकलों में जकड़े हुए पाया, वह कठोर कष्टों में था।

पुनः मैंने 'होमर' की आत्मा को देखा कि वह वृक्ष से लटकाया हुआ था और उसके चहुं ओर सांप थे। यह कष्ट उसे उन झूठी बातों के बदले में मिल रहा था जो उसने देवताओं के बारे में बोले थे। पुनः उसने उन मनुष्यों की आत्माओं को देखा जो अपनी स्त्रियों को कष्ट देते और उनसे अच्छा वर्ताव नहीं करते उनके लिये भी दुःख के स्थानों में जाना होता है।

पुनः फ़ीसाग़ोर्स के लिये अकस्मात् ऐसा हुआ कि उसने भूमि के नीचे एक छोटी सी गुफ़ा बनवाई और जब वह उसमें उतरने लगा तो अपने अनुयाईयों से कहा कि जो कुछ उन्हें उसकी अनुपस्थिति में प्राप्त होवे उसे निश्चित रूप से लिखते जाएं और वह स्वयं एक वर्ष तक गुफा में बंद रहा, पश्चात् कृशशरीर, बिखरे बाल, धूली धूसरित, भयानक अवस्था में गुफा से निकला और सबको इकट्ठा किया और कहा कि मैं दुःख में था और उनको अपने मत की पूर्ण पुष्टि के लिये उसने वर्ष भर की अपनी परीक्षा की बातें बताईं जिससे उन्होंने विश्वास किया कि वह सब मनुष्यों से बड़ा है और उसकी अवस्था पर रोने लगे यहां तक कि उनकी स्त्रियों ने जान लिया कि वह कहता था कि देवता पशु बलि से घृणा करते हैं और जो बलि देकर उन तक पहुंचना चाहते हैं उन पर प्रकोप करते हैं (तारीखे फ़िलासफ़ा)।

एडवर्ड टेलर साहिब डी० सी० एल०, एल-डी० कहते हैं कि शरीर जीव के रहने का स्थान है। उन्नति के सोपान पर एक जीव बहुत से शरीरों में एक के पश्चात् दूसरे में जा सकता है ज़द फुट से आयस्टर में और उससे टिड्डी में, उससे बाज़ में पुनः मगरमच्छ में और उससे कुत्ते में, यहां तक कि मनुष्य में आ जाता है। पुनः मनुष्यों से बढ़ कर प्राणियों अथवा फ़रिश्तों में जो आकाश में विचरते हैं और उससे भी उच्चावस्था में जिसकी वास्तविक इच्छाओं को मिस्टर फौजीअर समझने का यत्न नहीं करता क्योंकि हमारे अन्वेषण के अनुमान यहां तक समाप्त हो जाते हैं। सबसे बढ़कर मनुष्य का अन्तिम स्थान सूर्यलोक है पवित्रात्मा जो इसके प्रकाशमान गैसों का समूह है, वही सौर जगत् की स्थिरता का कारण हैं।

(परमेटू लैकचर जिल्द २ पृ० १६)

वर्तमान काल के जर्मन फ़िलासफ़र जी० ई० लीसिंग महोदय जीव के विषय में लिखते हैं कि जीव निरवयव है और असंख्य विचारों को रख सकता है किन्तु सीमित शक्ति वाला होने से एक ही समय में असीम विचार रखने के योग्य नहीं। यदि मान भी लिया जाय कि वह धीरे-धीरे उन विचारों को प्राप्त करता है तो आवश्यक है कि इन विचारों की प्राप्ति के लिये एक नियमबद्ध क्रम हो। जीव पांच ज्ञानेन्द्रियों से सम्बन्ध रखता है किन्तु ऐसी कोई युक्ति नहीं जिससे हम मानें कि पंच ज्ञानेन्द्रियों से उत्पन्न हुआ था और न यह कि वह पांच ही के साथ समाप्त हो जायगा। परन्तु चूंकि प्रकृति छलांगें नहीं मारती अतः जीव समस्त छोटे पदों से गुजर कर उस अवस्था में जा पहुंचता है और चूंकि प्रकृति में बहुत से तत्व और शक्तियां इस प्रकार की वर्तमान हैं जिनको ज्ञानेन्द्रियाँ अनुभव नहीं कर सकतीं अतः यह अवश्य मान लेना चाहिये कि प्रकृति में आगामी को ऐसे पद होंगे जिनमें जीवात्मा ऐसे ज्ञान साधन उत्पन्न करेगा जो प्राकृतिक शक्तियों के अनुसार हूं। (चैम्बर्स इन साईक्लो पेडिया)

हकीम (तत्ववेत्ता-दार्शनिक) सुकरात का मत

यह फिलासफ़र प्रायः पुनर्जन्म की शिक्षा देता और बाज़ारों में इस मन्तव्य पर व्याख्यान देता था। यह यूनान के नामी हकीम अफ़लातून का गुरु था। वह जीव के अनादि और अमरणधर्मा होने

पर विश्वास रखकर बड़े दृढ़ तर्कों से उसकी सत्ता पर शास्त्रार्थ किया करता था जैसा कि लिखा है कि सुकरात से उसका शिष्य सीबी अज़ प्रश्न करता है कि हे सुकरात ! इसके अतिरिक्त आपका यह मन्तव्य जिसके प्रचार करने की आपको बड़ी लग्न है कि हमारा ज्ञान केवल एक स्मृति रूपेण है, सत्य हो तो मैं समझता हूं कि जिसको अब हम अपनी स्मृति में ग्रहण करते हैं किसी पूर्व समय में हम पढ़ चुके होंगे और यह तभी संभव है, जब हमारे जीवात्मा शरीर प्रवेश से पूर्व भी अस्तित्व में हूं इस प्रकार यह जीव को अनादि सिद्ध करने के लिये एक और युक्ति हो सकती हैं।

इस पर 'समयस' नामी अन्य शिष्य ने कहा कि हे 'सीबी अज़' ! इसका क्या प्रकाण है ? वह तर्क मुझे स्मरण करा क्योंकि इस समय वह मुझे स्पष्ट रूप से स्मरण नहीं हैं।

सीबी अज़ ने उत्तर दिया कि एक और युक्ति जो सबसे प्रबल है, वह यह है कि यदि तुम मनुष्यों से सीधे प्रकार से किसी बात के सम्बन्ध में प्रश्न करो तो वह तुम्हें स्वयं यथार्थ उत्तर देंगे किन्तु वह उसके उत्तर देने के योग्य न होते यदि उनमें ज्ञान और सत्य बुद्धि न होती, इसके अतिरिक्त तुम उनको ऐसी वस्तुएं जैसी अक़लीदस अर्थात् *रेखा गणित के रूप दिखाओ तब सिद्धान्त का पूर्ण प्रमाण तुम्हें प्राप्त हो जाएगा।

(देखो ट्राइल ऐंड डैत्थ आफ़ सौकरातीर अनूदित चर्च महोदय एम० ए० १८९० ईस्वी लंडन पृ० १३२)

और इसी पुस्तक के पृ० १०० पर वह शास्त्रार्थ जीव के अनादि होने पर है और मैमोखेलिया आफ़ सौकरेटीज़ में ऐसा ही है।

(जन्यूफ़नप्रणीत और ऐडवर्ड पी० सी० द्वारा अनूदित)

जब सुकरात ने अपने आगामी जीवन और फ़िलासफ़रों के मृत्यु पर प्रसन्न होने का वर्णन किया कि वह लोग मृत्यु से प्रसन्न नहीं होते किन्तु प्रसन्न होते हैं, तब 'सीबी अज' ने पूछा कि हे सुकरात ! जो आप कहते हैं उसका बहुत सा भाग ठीक है किन्तु कुछ मनुष्य जीवात्मा के उस आपके वर्णन पर आपत्ति उठाते हैं और कहते हैं कि वह शरीर से निकलने के पश्चात् नहीं रहती किन्तु मृत्यु के दिन ही वह नष्ट-भ्रष्ट हो जाती है। वह विचार करते हैं कि उसी समय जब वह शरीर से पृथक् की जाती है वह श्वास और धूमवत् नष्ट हो जायगी अतः वह अस्तित्व शून्य हो जाती है। यदि वह शारीरिक दोषों से किसी विशेष स्थान पर रहती तो निःसन्देहरुम मान लेते कि जो कुछ आपने कहा है वह ठीक है किन्तु इस बात के लिये पर्याप्त कारण और तर्क होने चाहियें कि वह मृत्यु के अनन्तर रहती है और उस समय उसकी चेतना शक्ति भी रहती है।

सुकरात ने कहा कि हे सीबी अज़ ! यह ठीक है किन्तु क्या तुम्हारी इच्छा है कि हम इन मन्तव्यों पर बातचीत करें और पुनः देखें कि जो कुछ मैं कहता हूं संभव है ?

---

*इस पर लेखक टिप्पणी देता है कि इसके दृष्टान्त के लिये पृष्ठ ८२ अ० का क्रोड़ पत्र देखो जहां इस स्थान की भान्ति सुकरात पुनः स्मृति हो जाने के सिद्धान्त को प्रमाणित करता है और वह एक दास को जा रेखागणित से सर्वथा अनभिज्ञ था, रेखागणित के सम्बन्ध में बुद्धिपूर्वक प्रश्न करने से जीव के अनादित्व को सिद्ध करता है और रूपों की सहायता से इससे यथार्थ यथार्थ उत्तर प्राप्त करता है।

सीबी अज़ ने कहा कि मैं निःसन्देह इन मन्तव्यों पर आपका विस्तृत विचार अर्थात् विवाद प्रसन्न होकर सुनूंगा। सुकरात ने कहा यदि तुम चाहते हो तो आओ, हम इस प्रश्न की पड़ताल करें। कि मनुष्य आत्माएं मृत्यु के अनन्तर परलोक में रहती हैं अथवा नहीं इस बात पर इस प्रकार सोचना चाहिये कि यह एक प्राचीन मन्तव्य है जिसे हम भी जानते हैं कि जीव इस लोक को छोड़ने के पश्चात् परलोक में रहते हैं और इस लोक में पुनः वापिस आते हैं पुनः मृतकों से उत्पन्न होकर पुनर्जन्म प्राप्त करते हैं। परन्तु यदि यह ठीक है कि जीवित मृतकों से उत्पन्न होते हैं तो यह आवश्यक है कि हमारी आत्माएं परलोक में रहें क्योंकि इसके बिना वह पुनर्जन्म प्राप्त नहीं कर सकतीं। यह एक पर्याप्त प्रमाण होगा और ठीक है कि यदि हम वस्तुतः सिद्ध कर दें कि जीवित केवल मृतकों से हो उत्पन्न होते हैं किन्तु यदि ऐसा न हो तो पुनः हमें अवश्य कोई युक्ति ढूंढनी पड़ेगी।

सीबी अज़ ने कहा कि बस ठीक इसी प्रकार है। सुकरात ने कहा कि सरल ढंग इस प्रश्न का उत्तर देने का यह होगा कि हम न केवल मनुष्य के सम्बन्ध में सोचें किन्तु समस्त प्राणी मात्र और पौदों प्रत्युत समस्त उत्पन्न पदार्थों के सम्बन्ध में सोचें। क्या प्रत्येक वस्तु जिसका कोई विरोधी है केवल अपने विरोधी से उत्पन्न होती है? विरोधियों से मेरा अभिप्राय यह है कि सभ्य और पामर, न्याय और अत्याचार और इसी प्रकार के सहस्रों उदाहरण हैं।

हमें अब देखना चाहिये कि क्या प्रत्येक वस्तु के लिये कि जिसका कोई विरोधी है आवश्यक है कि वह केवल स्वविरोधी से ही उत्पन्न हो। यथा जब कोई वस्तु किसी दूसरे से बड़ी होती है तो मेरा विचार है कि वह पहिले अवश्य छोटी होगी तब पुनः बड़ी होगी।

सीबी अज़ ने कहा कि हां।

सुकरात—और यदि कोई वस्तु छोटी होती है तो वह प्रथम अवश्य बड़ी होगी और पुनः उसके पश्चात् छोटी हुई होगी।

सीबी अज़—निःसन्देह ऐसा ही है।

सुकरात—और पुनः निर्बल वस्तु बलवान् से उत्पन्न होती है और बलवान् निर्बल से।

सीबी अज़—निःसन्देह।

सुकरात—और कुरूप रूपवान् से उत्पन्न होता है और अधिक न्यायकारी अत्याचारी से।

सुकरात—तो अब हमें पर्याप्त प्रकार से विदित हो गया कि समस्त पदार्थ इसी प्रकार उत्पन्न होते हैं, कि अपना विरोधी अपने विरोधी को उत्पन्न करता है।

सीबी अज़—ऐसा ही है।

सुकरात—और क्या विरोध की प्रत्येक जोड़ी में दोनों के दो विरोधों के मध्य में दो परिवर्तन नहीं रहते? अर्थात् एक से दूसरे में और पुनः दूसरे से पहिले में। बड़ी और छोटी वस्तु के मध्य बढ़ना और न्यून होना। और क्या हम यह नहीं कहते हैं कि एक बढ़ता है तो दूसरा कम होता है?

सीबी अज़—हां।

सुकरात—पुनः इसी प्रकार वियोग है। और मिलाप है और शीतलता है और ताप आदि। क्या यह साधारण नियम नहीं है? यद्यपि इसको हम सदैव इतने शब्दों में वर्णन नहीं करते कि विरोधी

सदैव एक दूसरे को उत्पन्न करते हैं और यह कि उनके मध्य एक वस्तु का दूसरो में परिणत होने का स्वभाव है ।

सीबी अज़—अवश्य यह है ।

सुकरात—तो अच्छा बताओ कि इस प्रकार जीवन का कोई विरोधी है ? जसे नींद जागने के विरुद्ध है ।

सीबी अज़ - निःसन्देह ।

सुकरात— वह क्या वस्तु है ?

सीबी अज़ ने कहा कि मृत्यु ।

सुकरात—तो यदि जीवन और मृत्यु विरोधी हैं तो क्या वह एक दूसरे से उत्पन्न होते हैं ? वह दो हैं और उनके दो परिवर्तन हैं क्या यह ऐसा नहीं ?

सीबी अज़—निःसन्देह ।

सुकरात—ने कहा कि अब मैं तुम से इन दो परस्पर विरुद्ध जोड़ों में से जिन का अभी वर्णन हुआ है, एक का वर्णन करूंगा और दूसरे का वर्णन तुमने करना। निद्रा जागने के विरुद्ध कार्य है। नींद से जागृति की अवस्था उत्पन्न होती है और जागृति को अवस्था से निद्रावस्था उत्पन्न होती है इनके दो परिवर्तन प्रथम निद्रा है पुनः जागृति । क्या यह सत्य है ?

सीबी अज़—हां यह सर्वथा सत्य है ।

सुकरात—और तुम मुझे अब जीवन और मृत्यु के सम्बन्ध में बताओ क्या मृत्यु जोवन का विरोध है अथवा नहीं ?

सीबी अज़ ने कहा कि हां । यह परस्पर विरुद्ध हैं ।

सुकरात ने कहा कि क्या यह एक दूसरे से उत्पन्न होते हैं अथवा नहीं ?

सीबी अज़ ने कहा कि हां । पैदा होते हैं ।

सुकरात ने कहा तो पुनः वह क्या वस्तु है जो जीवित से उत्पन्न होती है ?

उसने उत्तर दिया कि मृत्यु । और मृतकों से क्या उत्पन्न होती है ?

उसने कहा कि मुझे कहना चाहिये कि जीवित ।

तो पुनः हे सीबी अज़ ! जीवित वस्तु और जीवित मनुष्य मृतकों से उत्पन्न होते हैं ।

उसने कहा कि यह तो स्पष्ट प्रगट है । पुनः सुकरात ने कहा कि हमारे जीव परलोक में रहते हैं ।

सीबी अज़ ने कहा कि यह तो स्पष्ट प्रगट है ।

सुकरात—अब इन दो परिवर्तनों में से एक तो सर्वथा सत्य है अर्थात् मैं विचार करता हूं कि मृत्यु सत्य है । क्या ऐसा नहीं है ?

सीबी अज़ बोला कि हां सर्वथा ऐसा ही है ।

सुकरात—अब हमें क्या करना चाहिये ? क्या इसके विरुद्ध हमें एक और परिवर्तन नहीं मानना

चाहिये ? क्या प्रकृति इस स्थान पर अपूर्ण है ? क्या यह आवश्यक नहीं कि हमें मृत्यु के पश्चात् भी कोई विरोधी परिवर्तन मानना चाहिये ।

सीबी अज़ बोला कि मैं निस्सन्देह ऐसा ही विचार करता हूं ।

सुकरात—और वह क्या होना चाहिये ।

सीबी अज़—दूसरी बार जन्म प्राप्ति ।

सुकरात—और यदि पुनः जीवन में पुनः लौटना ठीक हो तो यह एक परिवर्तन मृतकों से जीवितों में नहीं होगा ?

सीबी अज़—हां यह अवश्य होगा ।

सुकरात—तब हमारी इस बात पर सहमति है कि जीवित मृतकों से उत्पन्न होते हैं । जैसे मृतक जीवितों से होते हैं । किन्तु हमने यह भी माना था कि यदि यह ऐसा हो तो यह पर्याप्त कारण होगा ।

इस बात के प्रमाणार्थ के मृतकों के जीव अवश्य किसी न किसी स्थान पर रहते हैं, जहां से वह संसार में आकर पुनः जन्म लेते हैं ।

सीबीअज़ बोला । हे सुकरात ! मैं विचार करता हूं कि हमारे वाद-विवाद का यह आवश्यक परिणाम है ।

सुकरात बोला । हे सीबीअज़ ! मैं विचार करता हूं कि हमारा यह परिणाम मिथ्या नहीं क्योंकि यदि विरोधी सदैव विरोधी की अनुकूलता न करें जैसाकि वह उत्पन्न होते हैं और इसी प्रकार एक चक्र में फिरते हुए केवल एक विरोधी से दूसरे विरोधी में वापिस आने के बिना यदि यह रूपान्तर सीधी रेखा में होता तो तब तुम जानते कि अन्त में सब पदार्थ एक ही रूप में आ जायेंगे और उनकी उत्पत्ति सर्वथा बंद हो जायगी ।

सीबीअज़ ने पूछा कि आपका अभिप्राय क्या है ?

सुकरात ने उत्तर दिया कि मेरा अभिप्राय समझना कुछ कठिन नहीं है । यदि एक ही विरोधी होता जैसे सोना दूसरे विरोधी जागने के बिना जो पहिले से उत्पन्न होता है तो समस्त शक्ति जो अन्ततः अन्डीमियन की गाथा को निरर्थक कर देगी और पुनः वह सर्वथा प्रसिद्ध न होगा क्योंकि और प्रत्येक दूसरी वस्तु भी उसी नींद की अवस्था में होगी जिस में कि वह थी और यदि समस्त वस्तुएं परस्पर एक होतीं और कभी पृथक् न होतीं तो अनकसागोरसका । अनुमान शीघ्र समक्ष में आ जायगा । इसी प्रकार ओ मेरे प्रिय सीबीअज़ ! यद्यपि सब वस्तुएं जिनमें जीवन है मरे और फिर मरने के पश्चात् उसी अवस्था में रहें तथा पुनः जीवन में न आवें तो एक आवश्यक और अन्तिम परिणाम यह होगा कि प्रत्येक वस्तु अन्ततः मर जाएगी और कोई वस्तु जीवित न रहेगी क्योंकि यदि जीवित वस्तुएं मृत्यु के अतिरिक्त किन्हीं अन्य कारणों से उत्पन्न हों और पुनः मर जाएं तो यह परिणाम आवश्यक है कि सब वस्तुएं मर जाएंगी क्या यह ऐसा नहीं है ?

सीबीअज़ ने कहा हे सुकरात ! मैं समझता हूं कि जो कुछ आप कहते हैं सर्वथा सत्य है ।

सुकरात—हां सीबीअज़ ! मैं समझता हूं कि यह वस्तुतः ऐसा ही है और हमने इस परिणाम

पर पहुंचने में कोई भूल नहीं की। मरे हुए पुनः जन्म लेते हैं और जीवित मृतकों से उत्पन्न होते हैं और मृतकों की आत्माएं शेष रहती हैं जिनमें से पुण्यात्माओं की अवस्था अच्छी और दुरात्माओं की अवस्था बुरी होती है।

सीबी अज़ ने कहा कि हे सुकरात! इसके अतिरिक्त यदि वह मन्तव्य जिसका आप प्रायः वर्णन करते हैं कि हमारा ज्ञान केवल स्मृति का परिणाम है ठीक हो, तब मैं समझता हूं कि यह आवश्यक है कि वह बात जो अब हम स्मरण करते हैं अवश्य किसी समय में सीखी होगी और यह उस समय तक असंभव होगा कि जब तक हमारी आत्माएं मनुष्य योनि में आने से पूर्व विद्यमान हों। अतः इस बात के प्रमाण के लिये यह एक और युक्ति है कि जीवात्मा अनादि है।

परन्तु मध्य में समयस बोला कि हे सीबीअज़। इस मन्तव्य का क्या प्रमाण है? मुझे स्मरण दिला इस समय मुझे पूरा स्मरण नहीं है।

सुकरात ने कहा हे समयस! यदि यह युक्ति तुम्हें सन्तुष्ट नहीं करती तो इस पर एक और प्रकार से विचार करो और पुनः देखो कि हम परस्पर सहमत होते हैं या नहीं मैं जानता हूं कि तुम्हारी शंकायें यह हैं कि किस प्रकार वह जिसे हम ज्ञान कहते हैं स्मृति हो सकती है?

समयस ने उत्तर दिया कि नहीं मैं सन्देह नहीं करता। किन्तु स्मृति के बारे में युक्ति को पुनः समझना चाहता हूं जिस बात की सीबीअज़ ने व्याख्या करने का भार लिया था। वह आपके मन्तव्य के प्रायः अनुकूल है और मुझे विश्वास दिला दिया है किन्तु तो भी मैं सुनने की इच्छा रखता हूं कि इसे किस प्रकार बताते हैं।

सुकरात ने कहा कि इस प्रकार मैं समझता हूं कि हम इस बात में सहमत हैं कि यदि कोई बात एक मनुष्य स्मरण करता है तो यह अवश्य है कि वह बात उसने किसी पूर्व समय में सीखी हो।

समयस ने कहा, निस्सन्देह।

सुकरात—और क्या हम इस बात पर भी सहमत हैं कि जो कोई ज्ञान निम्नलिखित पद्धति पर आता है तो हम उसे स्मृति कहते हैं। जब एक व्यक्ति कोई बात देखता या सुनता है अथवा किसी और इन्द्रिय से अनुभव करता है, तब न केवल उस बात को जानता है किन्तु अपने मन में किसी और बात का भी विचार करता है जिसका ज्ञान उससे सर्वथा विपरीत है क्या हम इस बात के कहने में ठीक नहीं हैं कि वह उस बात को स्मरण करता है जिसकी स्मृति उसके मन में विद्यमान थी।

समयस—आपका अभिप्राय क्या है?

सुकरात—मेरा अभिप्राय यह है कि एक मनुष्य का ज्ञान एक सारंगी के ज्ञान से भिन्न है, क्या यह ठीक नहीं?

समयस—निस्सन्देह।

सुकरात—और तुम जानते हो कि जब प्रेमी एक सारंगी वा एक वस्त्र अथवा कोई और वस्तु जिसको उसका प्रेमपात्र देखने का अभ्यस्त है तो इस समय उसके हृदय में उस प्रेमपात्र का चित्र अंकित हो जाता है कि जिसकी वह सारंगी है। यह स्मृति है जैसे कोई मनुष्य समयस को देखकर प्रायः सीबी-अज़ का विचार कर लेता है और इस बात के असंख्य उदाहरण हैं।

समयस ने कहा निस्सन्देह हैं।

सुकरात ने कहा कि क्या यह एक प्रकार की स्मृति नहीं और विशेषत: एक मनुष्य जब यह विचार उन वस्तुओं के सम्बन्ध में रखता है जिनको समयस और विचार के अभाव ने भुला दिया है।

समयस ने उत्तर दिया कि निस्सन्देह इसी प्रकार है।

सुकरात—अच्छा क्या यह संभव है कि एक व्यक्ति को एक घोड़े के चित्र अथवा एक सारंगी के चित्र देखने से स्मरण करना या सीबीअ्रज के चित्र को देखकर समय को स्मरण करना।

समयस—निस्सन्देह संभव है।

सुकरात——और क्या यह भी संभव है कि समयस का चित्र देखने से समयस को स्मरण करना।

समयस——निस्सन्देह।

सुकरात—तब इन समस्त अवस्थाओं में समान तथा असमान वस्तुओं से भी स्मृति उत्पन्न होती है।

समयस—हां उत्पन्न होती है।

सुकरात—परन्तु जब एक मनुष्य एक समरूप वस्तु से उत्पन्न स्मृति रखता है क्या उसको इसके आगे और विचार न आएगा और न सोचेगा कि क्या वह समता जो उसे स्मरण है किसी प्रकार अपूर्ण है अथवा नहीं।

समयस——हां वह सोचेगा।

सुकरात—अब देखो क्या यह ठीक है कि हम समता की सत्ता को स्वीकार नहीं करते (मेरा अभिप्राय लकड़ी के टुकड़ों या पत्थरों की समता से नहीं है कि किन्तु उससे अधिक) अर्थात् क्या। समता के विशेष गुरु को हम यह कहें कि ऐसी वस्तु कोई नहीं है।

समयस——हां निस्सन्देह। हमें अवश्य मानना पड़ेगा।

सुकरात——और क्या हम जानते हैं। कि यह समता क्या है ?

समयस——निस्सन्देह हम जानते हैं।

सुकरात——हमने इसका ज्ञान कहां से प्राप्त किया ? क्या यह लकड़ी के टुकड़ों और पत्थरों और दूसरी वस्तुओं (जिनका हम अभी वर्णन कर रहे थे) के देखने से प्राप्त नहीं होता ? क्या हमने इस समता के गुण का विचार उन वस्तुओं से प्राप्त नहीं किया ? जो उनसे भिन्न हैं और क्या तुम मतभेद रखते हो कि यह भिन्न नहीं।

इस प्रश्न को इस ढंग से सोचो। क्या हमें लकड़ी और पत्थर के बराबर टुकड़े किसी समय समान और किसी समय भिन्न प्रतीत होते हैं ? जबकि वह सदैव वैसे ही होते हैं।

समयस——हां निस्सन्देह ऐसा ही है।

सुकरात——किन्तु क्या सर्वथा समान तुम्हें कभी असमान प्रतीत हुए हैं अथवा सर्वथा समता कभी विषमता प्रतीत हुई।

समयस——नहीं कभी नहीं हे सुकरात !

सुकरात——परन्तु यह इन वस्तुओं से ही था जो सर्वथा समता से भिन्न हैं क्या तुमने सर्वथा समता का ज्ञान प्राप्त किया ?

समयस ने उत्तर दिया कि सर्वथा ठीक है।

सुकरात—और यह भी कि यह उनके समान हैं अथवा असमान ?

समयस——निस्सन्देह।

सुकरात—किन्तु इससे कुछ भेद नहीं पड़ता जब तक कि एक वस्तु का देखना एक दूसरी वस्तु को तुम्हारे हृदय में लाता है अवश्य है कि वहां स्मृति हो चाहे वह दोनों वस्तुएं समान हों अथवा न हों।

समयस ने कहा यह ऐसा ही है।

सुकरात——अच्छा क्या लड़की के टुकड़े और इसी प्रकार अन्य समान वस्तुएं जिनका हम अभी वर्णन कर रहे थे हम पर इसी प्रकार प्रभाव डालते हैं क्या वह हमें इसी प्रकार समान प्रतीत होती हैं जिस प्रकार सर्वथा समान ही समान प्रतीत होते हैं। क्या वह सर्वथा समानता से कुछ न्यून होते हैं होते हैं अथवा नहीं ? और क्या हमारा इस बात पर एक मत है कि एक मनुष्य एक वस्तु देखता है और अपने मन में कहता है कि यह वस्तु जो मैं देखता हूं एक दूसरी वस्तु के समान प्रतीत होती है किन्तु यह उससे कुछ अपूर्ण है और उस वस्तु के समान नहीं हो सकती यह उससे निकृष्ट है। क्या यह आवश्यक नहीं कि वह मनुष्य जो यह समझता है इस वस्तु को किसी पूर्व समय में जानता हो जिसको वह कहता है कि यह समान है और जिससे यह निकृष्ट है। वह पहिले जानता हो।

समयस—हां, यह आवश्यक है।

सुकरात—क्या समान वस्तुओं के विषय में भी और सर्वथा समता के विषय में हमारा विचार इसी प्रकार था ?

समयस—हाँ, निस्सन्देह।

सुकरात—तब यह आवश्यक है कि पूर्व इसके कि हमने प्रथम बार समान वस्तुओं को देखा, समानता का ज्ञान हमारे अन्दर विद्यमान था और हमने ज्ञात कर लिया कि वह समस्त समानता के तद्रूप होने से कोई कार्य करती है और समस्त उससे निकृष्ट है।

समयस—यह उपेक्षा है।

सुकरात—और इस पर भी हम सहमत हैं कि देखने की शक्ति तथा छूने की शक्ति के बिना हमने समता का विचार प्राप्त न किया और न कर सकते थे। अन्य अनुभवों की भी यही दशा है।

समयस——हाँ, हे सुकरात ! युक्ति के लिये यह ऐसा ही है।

सुकरात—चाहे किसी प्रकार से हो, यह इन्द्रियों का ही साधन है कि हम ज्ञात कर सकते हैं कि समस्त इन्द्रियों के अनुभव सर्वथा समान होने का यत्न करते हैं और इससे निकृष्ट हैं अर्थात् समान नहीं किन्तु न्यून हैं। क्या यह ऐसा नहीं ?

समयस—हां, इसी प्रकार हैं।

सुकरात——तब पूर्व इसके कि हमने देखना, सुनना और अन्य इन्द्रियों का प्रयोग करना प्रारम्भ किया, आवश्यक है कि हमने वास्तविक और सर्वथा समता का ज्ञान प्राप्त किया होगा। अन्यथा यह

संभव न था कि हम समान प्रतीत होने वाली वस्तुओं को सर्वथा समता के साथ तुलना कर सकते और न यह देख सकते कि प्रथम वर्णित अर्थात् अनुभूत पदार्थ समस्त अवस्थाओं में पश्चात् वर्णित के साथ समानता का यत्न करते हैं यद्यपि वह सदैव इससे निकृष्ट ही हैं।

समयस—हे सुकरात ! जो कुछ हम कह चुके हैं यह उसका आवश्यक परिणाम है।

सुकरात——क्या जब हम उत्पन्न हुए, तब हम न देखते, न सुनते और न इन्द्रियों को रखते थे।

समयस——हां, निस्सन्देह, अर्थात् अवश्य रखते थे।

सुकरात—और यह आवश्यक है कि हमने सर्वथा समता का ज्ञान इन इन्द्रियों को प्राप्त करने से पूर्व पाया होगा।

समयस—हां, निस्सन्देह।

सुकरात—तो पुनः यह स्पष्ट है कि हमने यह ज्ञान प्राप्ति से पूर्व प्राप्त किया है।

समयस—हां, पहिले ही पाया होगा।

सुकरात—अब यदि हमने इस ज्ञान को जन्म से पूर्व प्राप्त किया और इस ज्ञान को रखते हुए उत्पन्न हुए तो हम उत्पन्न होने से पूर्व और उत्पन्न होने के समय न केवल समान, बड़े और छोटे को जानते थे किन्तु इस प्रकार की प्रत्येक वस्तु को जानते थे। क्या यह ऐसा नहीं है और हमारी यह युक्ति न केवल समान ही के लिये है किन्तु इसी प्रकार एकमात्र पुण्य, एकमात्र सौन्दर्य और एकमात्र न्याय तथा एकमात्र पवित्रता के लिये भी है। परिणामतः मैं पुनः दोबारा कहता हूं कि यह युक्ति ऐसी प्रत्येक वस्तु पर प्रयुक्त हो सकती है, जिसको हम अपने शास्त्रार्थ के प्रश्नोत्तर में वास्तविक के नाम से निरूपित करते हैं, अतः यह आवश्यक है कि हमने अपना समस्त वास्तविक वस्तुओं का ज्ञान इस जन्म से पूर्व किया हो।

समयस—यह ऐसा ही है।

सुकरात—और यह भी आवश्यक है कि हम सदा इस ज्ञान के साथ ही उत्पन्न हों और आवश्यक है कि अपने सारे जीवन में सदा उस ज्ञान को यदि हम इस ज्ञान को समय पर प्राप्त करने के पश्चात् भूल नहीं जाते तो साथ रखें। क्योंकि जानने का अर्थ ज्ञान को प्राप्त करना और उसे रखना है न कि उसे खो देना।

हे समयस ! क्या हमारा अभिप्राय किसी वस्तु को भूलने से उस ज्ञान को खो देना नहीं है ?

समयस—हे सुकरात ! निस्संदेह।

सुकरात—परन्तु मैं विचार करता हूं कि यह ऐसा हो कि हमने उस ज्ञान को जो जन्म से पूर्व प्राप्त किया था—जन्म के समय खो दिया, और पुनः अपनी इन्द्रियों को अनुभवों पर प्रयुक्त करने से उस ज्ञान को जो हमारे पास पहिले था—पुनः प्राप्त किया तो जो अनुभव से उस ज्ञान का प्राप्त करना है जो पहिले ही हमारा है तो क्या हम उसे स्मृति कहें तो यह ठीक है ?

समयस—हां यह ठीक है।

सुकरात—क्योंकि हम उसे संभव सिद्ध कर चुके हैं कि एक वस्तु को देखने अथवा सुनने की शक्ति अथवा किसी और इन्द्रिय से अनुभव करना तथा पुनः उससे किसी और समान अथवा असमान

वस्तु का जो हमें भूल गई थी किन्तु जिस वस्तु से उसका सम्बन्ध है स्मरण करना और इसलिये मैं कहता हूं दो बातों से एक बात ठीक होनी चाहिये।

(१) या तो हम समस्त ज्ञान के साथ उत्पन्न होते हैं और आजीवन उसे अपने साथ रखते हैं।

(२) या उत्पन्न होने के पश्चात् वह मनुष्य—जिन्हें हम कहते हैं कि वह सीख रहे हैं—केवल स्मरण कर रहे हैं और हमारा ज्ञान केवल स्मृति है।

समयस--हे सुकरात ! यह निस्सन्देह ठीक है।

सुकरात—हे समयस ! इन दोनों में से तुम किसे पसन्द करते हो ? क्या हम जन्म के साथ ही उत्पन्न होते हैं ? या उन वस्तुओं को हम स्मरण करते हैं—जिनका ज्ञान हमने जन्म से पूर्व प्राप्त किया है।

समयस—हे सुकरात ! मैं इस समय कुछ नहीं कह सकता।

सुकरात— क्या इस प्रश्न के सम्बन्ध में तुम्हारी कुछ सम्मति नहीं है ? क्या एक मनुष्य जो कुछ जानता है उसका कुछ वृत्तान्त बता सकता है या नहीं ? तुम्हारी इस विषय में क्या सम्मति है और तुम्हारा इस पर क्या विचार है ?

समयस—हे सुकरात ! हां वह उसका वर्णन कर सकता है।

सुकरात—और क्या तुम समझते हो कि प्रत्येक मनुष्य उन विचारों को जिनका हम वर्णन कर रहे हैं बता सकता है ?

समयस ने कहा कि निस्सन्देह मैं चाहता हूं कि मैं कर सकता किन्तु मैं बहुत डरता हूं कि कल इस समय कोई मनुष्य जीवित न होगा जो ऐसा शास्त्रार्थ कर सके जैसा कि होना चाहिये।

सुकरात—हे समयस ! क्या तुम यह नहीं समझते कि प्रत्येक मनुष्य इन बातों को जानता है।

समयस— प्रत्येक नहीं जानता।

सुकरात—तो क्या वह उसे--जो उन्होंने पहिले सीखा स्मरण करते हैं ?

समयस—निस्सन्देह आवश्यक है।

सुकरात—और हमारी आत्माओं नें इस ज्ञान को कब प्राप्त किया, यह हमारे मनुष्य जन्म में उत्पन्न होने के पश्चात् नहीं हो सकता क्या ?

समयस –निस्सन्देह, नहीं हो सकता।

सुकरात—तो क्या यह पहिले था ?

समयस—हां।

सुकरात—तो हे समयस ! हमारी आत्माएं हमारे मनुष्य शरीर में आने से पूर्व शरीर से पृथक् विद्यमान थीं और वह बुद्धि रखती थीं।

समयस—हे सुकरात ! जब तक कि हम इस ज्ञान को उत्पत्ति के समय प्राप्त न करें वह समय तब तक शेष रहता है।

सुकरात—अच्छा, हे मेरे मित्र ! वह कौन सा दूसरा समय है जब हम उसे खोते हैं। हमने अभी

सहमति की थी कि हम इसके साथ उत्पन्न नहीं हुए क्या हम उसी समय खो देते हैं जिस समय कि हम उसे प्राप्त करते हैं या तुम कोई और समय बता सकते हो ?

समयस—हे सुकरात ! मैं नहीं बता सकता। मुझे ज्ञात न था कि मैं व्यर्थ बोल रहा हूं।

सुकरात ने कहा कि हे समयस ! तो क्या यह सत्य नहीं है ? यदि जैसा कि हम बार-बार कह रहे हैं, सौन्दर्य, उपकार और दूसरे विचार वास्तव में विद्यमान हैं और यदि सब अनुभूत वस्तुओं को उन विचारों के साथ जो कि हमारे पहिले के और जो अब तक हमारे हैं—सम्बन्धित किया जाय और अनुभूत वस्तुओं की इनसे तुलना करें तो ठीक उसी भान्ति जिस तरह कि वह विद्यमान हैं, आवश्यक है कि हमारी आत्माएं हमारे जन्म से पूर्व विद्यमान थीं, परन्तु यदि वह विद्यमान नहीं थीं तो हमारा तर्क दूषित हो जायगा, क्या यह ऐसा है ? यदि यह विचार विद्यमान हैं तो क्या उससे यह सिद्ध नहीं होता कि हमारी आत्माएं हमारे जन्म से पूर्व विद्यमान थीं और यदि वह विद्यमान नहीं तो पुनः हमारी आत्माएं भी विद्यमान नहीं।

समयस ने कहा कि हे सुकरात ! आपने इसे बहुत उत्तम रीति से सिद्ध किया है। मैं समझता हूं कि आवश्यकता एक के लिये भी वैसी ही है जैसी कि दूसरे के लिये (अर्थात् विचारों के लिये और जीवात्माओं के लिये)

हमारी आत्माओं की सत्ता हमारे जन्म से पूर्व और उन विचारों का—जिनका आपने वर्णन किया अस्तित्व और इनके सब प्रमाणों के तर्क अब एक सुरक्षित स्थान पर पहुंच गये हैं। सौन्दर्य, पुण्य कार्य और अन्य विचारों से—जिनका तूने अभी वर्णन किया है—अधिक मुझे कोई बात प्रतीत नहीं हुई।

सुकरात—बोला, सीबी अज़ का क्या हाल है ? आवश्यक है कि मैं उसे भी सहमत करूं।

समयस ने कहा कि मैं समझता हूं कि उसकी पूरी सन्तुष्टि हो गई है। यद्यपि वह तर्क में सबसे अधिक संशयात्मा है किन्तु मैं समझता हूं कि वह इस बात का पूरा समर्थक हो गया है कि हमारी आत्माएं हमारे जन्म से पूर्व विद्यमान थीं। किन्तु हे सुकरात ! मैं स्वयं भी नहीं समझता कि आपने सिद्ध कर दिया है कि आत्मा जीवित रहेगी जबकि हम मर जाएंगे। इस साधारण शंका का जिसका वर्णन सीबी अज़ ने किया अर्थात् आत्मा मृत्यु के समय वायु में तितर-बितर हो जावे (घुलमिल जावे) और मृत्यु उसके अस्तित्व को समाप्त कर दे, यह (सन्देह) अभी तक दूर नहीं हुआ। यह कल्पना करके कि आत्मा मनुष्य शरीर में आने से पूर्व कुछ अकेले पदार्थों से उत्पन्न होती, बनती, जीवित रहती है तो यह क्यों संभव नहीं कि दूसरे शरीर में प्रवेश से पूर्व ही जबकि वह शरीर से स्वतन्त्र हो गई है वह समाप्त और नष्ट हो जाय।

सीबी अज़ ने कहा। तुम ठीक कहते हो। मैं समझता हूं कि अभी अर्द्ध प्रमाण ही दिया गया है। यह बताया गया है कि हमारी आत्माएं हमारे उत्पन्न होने से पूर्व विद्यमान थीं। परन्तु यह भी बताया जाना चाहिये कि हमारी आत्माएं हमारे मर जाने के पश्चात् विद्यमान रहेंगी जैसे हमारे जन्म से पूर्व विद्यमान थीं जिससे प्रमाण पूर्ण हो जाय।

सुकरात ने कहा कि हे समयस ! और हे सीबी अज़ ! यह बताया जा चुका है कि यदि तुम इस युक्ति को हमारे पहिले परिणाम (अर्थात् समस्त जीवन मृत्यु से उत्पन्न होता है) के साथ

मिलाओगे क्योंकि यदि आत्मा शरीर में जन्म लेने से पूर्व किसी अवस्था में विद्यमान थी तो वह केवल मृत्यु से ही उत्पन्न हो सकती है और यदि मृत्यु की अवस्था से ही जन्म लेती है तो क्या यह आवश्यक नहीं कि वह मृत्यु के पश्चात् भी जीवित रहे क्योंकि उसने पुनः जन्म लेना है अतः वह बात जिस के सम्बन्ध में तुम्हारा कथन है वह पहिले ही सिद्ध की जा चुकी है। तो भी मैं समझता हूं कि तुम दोनों इस प्रश्न पर शास्त्रार्थ करना चाहते हो और तुम बच्चों की भान्ति डरते हो कि सचमुच वायु जीवात्मा को—जब वह शरीर से पृथक् हो जाय, उड़ाकर छिन्न-भिन्न कर देगी विशेषतः उस अवस्था में जब मनुष्य की किसी आंधी आदि द्वारा मृत्यु हो।

सीबी अज़ हंस पड़ा और कहा कि हे सुकरात! यदि हम सचमुच डरते हैं तो हमें इसका विश्वास दिलाने का यत्न करें अन्यथा यह न समझें कि हम डरते हैं। कदाचित् हमारे मध्य एक बालक भी है जिसको यह भय है। हमें यत्न करना चाहिये और उसे साहस बन्धाना चाहिये कि वह मृत्यु से न डरे जिस तरह कि बच्चे 'हौए' से डरते हैं।

सुकरात ने कहा कि तुम्हें उस पर प्रतिदिन मंत्र मारना चाहिये। यहां तक कि उसका भय सर्वथा दूर हो जाय।

सीबी अज़ ने कहा। हे सुकरात! अब हम ऐसा अच्छा मंत्री कहां पाएंगे जबकि आप भी हमसे वियुक्त होने लगे हैं।

सुकरात ने उत्तर दिया कि हैलास एक बड़ा भारी देश है और साधारणतः उसमें बहुत से अच्छे मनुष्य पाए जा सकते हैं और अनेकों वहशी=जंगली जातियां भी हैं। (यहां वहशी से अभिप्राय यूनानियों के अतिरिक्त अन्य देश निवासियों से है) तुम्हें ऐसे मंत्री को इन समस्त स्थानों में यत्नतः ढूंढना चाहिये। चाहे कितना ही परिश्रम व रुपया व्यय हो क्योंकि कोई ऐसी अन्य वस्तु लाभदायक नहीं जिस पर तुम धन व्यय करा सको और तुम्हें उसको अपने आप में ढूंढ़ना चाहिये क्योंकि तुम अपने आपसे अच्छा मंत्री कठिनता से पा सकोगे।

सीबी अज़ ने कहा कि अच्छा, वह देखा जाएगा। परन्तु अब यदि आपकी इच्छा हो तो हम भी शास्त्रार्थ के विवादग्रस्त विषय को आगे से आरम्भ करें।

सुकरात—हां, निस्सन्देह, क्यों नहीं। हमें अपने मन से यह प्रश्न पूछना चाहिये कि वह किस प्रकार का पदार्थ है जो छिन्न-भिन्न होने के योग्य है और किस प्रकार के पदार्थ से हमें छिन्न-भिन्न हो जाने का भय होना चाहिये। तब पुनः हमें देखना चाहिये कि जीवात्मा उस प्रकार का है या नहीं और फिर उसके अनुसार अपनी आत्माओं के लिये चिन्तित अथवा निश्चिन्त होना चाहिये।

सीबी अज़ ने उत्तर दिया कि यह ठीक है।

सुकरात ने कहा क्या वह उसी प्रकार जैसा कि उसका संयोग किया गया था—संयोग जन्म और भौतिक नहीं है? जिससे स्वभावतः छिन्न-भिन्न हो जाने के योग्य हो। यदि कोई वस्तु ऐसी है जो छिन्न-भिन्न हो जाने के योग्य नहीं तो क्या वह संयोग रहित अभौतिक पदार्थ नहीं है?

सीबी अज़ ने कहा मैं समझता हूं कि ऐसा ही है।

सुकरात ने कहा कि वह वस्तु जो सर्वदा एक ही अवस्था में रहती है और परिवर्तनशील नहीं बहुत संभव है कि संयोग रहित अर्थात् मुफरिद=निरवयव हो और वह जो सदा परिवर्तित होती

रहती है और एक जैसी कभी नहीं रहती ऐसा संभव है कि संयोग जन्य हो।

सीबी अज़—हां, मैं ऐसा ही समझता हूं।

सुकरात ने कहा कि अब हम अपने पूर्व विषय पर पुनः लौट आवें। क्या वह वर्तमान वस्तु जिसको हम अपने शास्त्रार्थ में एकमात्र सत्ता कहते आये हैं—सदैव एक ही अवस्था में रहती है अथवा परिवर्तित हो जाती है ? क्या एकमात्र समानता, एकमात्र सौन्दर्य और इसके अतिरिक्त दूसरी एकमात्र सत्ता में क्या यह परिवर्तन आ सकता है अथवा क्या एकमात्र सत्ता प्रत्येक अवस्था में सर्वथा एक ही अवस्था में रहती है और परिवर्तित नहीं होती और कभी किसी अवस्था में भी किसी प्रकार का उसमें परिवर्तन नहीं होता ?

सीबी अज़ ने कहा, हे सुकरात ! आवश्यक है कि वह परिवर्तन से रहित एक जैसी रहे।

सुकरात ने कहा और सुन्दर वस्तुओं जैसे घोड़े, वस्त्रादि और समस्त वस्तुओं को जिनका किसी विचार के कारण ऐसा नाम रखा गया है—के सम्बन्ध में आपकी सम्मति क्या है ? क्या वह कभी स्वतः अथवा अपने सम्बन्धों में कभी एक जैसी नहीं रहती ?

सीबी अज़—यह वस्तुएं कभी एक जैसी नहीं रहती हैं।

सुकरात—तुम इन्हें छू सकते हो, देख सकते और अन्य इन्द्रियों से ज्ञात कर सकते हो, परन्तु परिवर्तनरहित वस्तुओं को तुम केवल युक्ति और बुद्धि से ही जान सकते हो। यह अन्तिम वस्तुएं दिखाई नहीं देती हैं। क्या यह ऐसा नहीं है ?

सीबी अज़ ने कहा यह सर्वथा ठीक है।

सुकरात ने कहा, यदि तुम्हारी इच्छा हो तो हम यह कल्पना कर लें कि विद्यमान पदार्थों की सत्ता दो प्रकार की है एक दृश्य और दूसरी अदृश्य।

सीबी अज़ ने कहा, अच्छा।

सुकरात ने कहा अदृश्य वस्तु निर्विकार होती हैं परन्तु दृश्य पदार्थ सदैव परिवर्तित होते रहते हैं।

सीबी अज़ ने कहा—अच्छा।

सुकरात—क्या हम मनुष्य-शरीर और जीवात्मा के बने हुए नहीं हैं ?

सीबी अज़ ने कहा कि हम इनके अतिरिक्त और कुछ नहीं।

सुकरात—इन दो संज्ञाओं में से अधिकांश में शरीर किस में से है ?

सीबी अज़ ने उत्तर दिया कि यह तो स्पष्ट प्रगट है कि दृश्य है।

सुकरात—और जीवात्मा किसमें से है क्या वह दृश्य वस्तु है अथवा अदृश्य ?

सीबी अज़—हे सुकरात ! जीव तो मनुष्य को दिखाई नहीं देता।

सुकरात—किन्तु हमारा अभिप्राय भी दृश्य और अदृश्य से वही है जो मनुष्य के दीखने और न दीखने के योग्य हो, क्या यह नहीं ?

सीबीअज़—निस्सन्देह ! हमारा तात्पर्य यही है।

सुकरात—तो हम जीवात्मा के सम्बन्ध में क्या कहें ? क्या यह दृश्य पदार्थ है अथवा अदृश्य ?

सीबी अज़—यह दृश्य पदार्थ तो नहीं है।

सुकरात—तो क्या यह अदृश्य पदार्थ है ?

सीबी अज़—हां।

सुकरात—तो जीवात्मा शरीर की अपेक्षा से अधिक अदृश्य वस्तु है और शरीर दीखने योग्य होने से दृश्य है।

सीबी अज़—हे सुकरात ! अवश्यमेव ऐसा ही है।

सुकरात—क्या हमने यह नहीं कहा कि जब जीवात्मा, शरीर उसके अनुसन्धान अथवा निर्णय के लिये प्रयोग में लाता है, और देखने तथा सुनने की शक्ति आंख और कान अथवा किसी और ज्ञानेन्द्रिय को प्रयुक्त करता है—क्योंकि शरीर के साथ किसी वस्तु का अनुसन्धान करने से इन्द्रियों का अनुसन्धान ही अभिप्रेत है। इस अन्वेषण से वह इन वस्तुओं की ओर आकर्षित हो जाता है। जो कभी एक अवस्था में नहीं रहतीं और अन्धों की भान्ति इधर-उधर भटकती हैं और परिवर्तन होने वाली वस्तुओं के साथ सम्बन्ध रखने से वह शराबी की भान्ति गड़बड़ा जाती हैं और विकृतेन्द्रिय हो जाती हैं।

सीबी अज़—निस्सन्देह।

सुकरात—परन्तु जब वह स्वयमेव किसी प्रश्न का अन्वेषण करता है तो वह पवित्र, नित्य, अमर और परिवर्तनरहित के समीप जाता है। जिनके साथ वह सम्बन्ध रखता है वह इनके साथ इस प्रकार रहता है जैसे कि अपने साथ, और तब वह अपने भटकने से विश्राम पाता है और उसमें निर्विकार रूप से रहता है क्योंकि उस समय उसका सम्बन्ध निर्विकार से होता है और क्या जीवात्मा की इस दशा का नाम ही बुद्धि नहीं है ?

सीबी अज़—हे सुकरात ! निस्सन्देह आप सत्य और यथार्थ कहते हैं।

सुकरात—हमारी पहिली और अब की युक्तियों से तुम क्या समझते हो कि जीवात्मा किस प्रकार की सत्ता के समान और अनुरूप है ?

सीबी अज़—हे सुकरात ! मैं समझता हूं कि इस रीसर्च के पश्चात् एक मूर्ख से मूर्ख व्यक्ति भी मानेगा कि जीवात्मा परिवर्तन की अपेक्षा निर्विकार के बहुत ही अनुकूल है।

सुकरात—और शरीर किसकी भान्ति है ?

सीबी अज़—वह परिवर्तनशीलों की कोटि में है।

सुकरात—अच्छा, अब इसको एक और ढंग से सोचो। जब अन्य शरीर मिलाये जाते हैं तो प्रकृति एक को दास और आधीन और दूसरे को स्वामी और शासक बनाती है तो तुम मुझे पुनः बताओ कि इनमें से कौन सी वस्तु ईश्वर की भान्ति और कौन सी वस्तु अनित्य की भान्ति है और क्या तुम नहीं समझते कि ईश्वरीय वस्तु स्वभावतः शासन करती और अधिकार रखती है तथा अनित्य वस्तु स्वाभाविकतया आधीन और दास होती है।

सीबी अज़—हे सुकरात ! यह स्पष्ट प्रगट है कि जीवात्मा ईश्वर के सदश है और शरीर अनित्य की भान्ति है।

सुकरात—हे सीबी अज़ ! अब बताओ, जो कुछ हमने कहा उस सबका क्या यह परिमाण है कि जीवात्मा ईश्वर की भान्ति है और नित्य, निर्विकार, ज्ञानस्वरूप, चेतन, निरवयव तथा एकरस

सत्ता है और शरीर मानव का है तथा अनित्य, अचेतन और संयोग-वियोग से युक्त है। हे मेरे भ्राता सीबी अज़्! क्या हमारे पास कोई युक्ति है जिससे हम सिद्ध करें कि यह ऐसा नहीं है?

सीबी अज़—निस्सन्देह, हमारे पास कोई युक्ति नहीं।

सुकरात—यदि यह ऐसा ही है तो क्या शरीर का स्वभाव तत्काल विकृत और छिन्न-भिन्न हो जाना नहीं है? और उसके विरुद्ध जीवात्मा *निर्विकार और छिन्न-भिन्न होने से रहित है। और तुम जानते हो कि मनुष्य के मरणोपरान्त उसका दृश्य भाग अर्थात् उसका शरीर जो इस दृश्य जगत् में होता है और जिसको हम शव कहते हैं जो छिन्न-भिन्न हो जाने और सड़ जाने वाला है--उसी समय छिन्न-भिन्न नहीं हो जाता और न उसी समय सड़ जाता है किन्तु यह एक पर्याप्त समय तक उसी भान्ति रहता है और यदि कोई उत्तम स्वास्थ्य, यौवन और सुखी जीवन में मृत्यु को प्राप्त होवे और मिस्र देश के ममी की भान्ति मसाला लगा कर रखा जावे तो यह बहुत देर तक भी लगभग वैसे का वैसा ही रहता है और यदि सड़ भी जाय तो इसके कुछ भाग जैसे हड्डियां और पठ्ठे साधारणरूप से देर तक रहने वाले कहे जा सकते हैं। क्या यह ऐसा नहीं?

सीबी अज़—हां।

सुकरात—और क्या हम मान सकते हैं कि जीवात्मा जो अदृश्य पदार्थ है और जो यहां से एक ऐसे स्थान पर जाता है अर्थात् शुद्ध पवित्र और सर्वज्ञ परमात्मा के समीप रहने के लिये जो उसके सदृश शुद्ध, पवित्र, अदृश्य और ज्योतिर्मय प्रकाशमान है अर्थात् हैंडीज़ (यमलोक) को जिसका नाम अदृश्य—संसार कहना उचित है। जहा पर यदि ईश्वर की इच्छा हुई तो मेरी आत्मा भी कुछ समय पश्चात् जावेगी। क्या हम मान सकते हैं कि आत्मा कि जिसका स्वभाव ज्योतिर्मय, प्रकाशमान, पवित्र है और जो स्वयं अदृश्य है--ज्यों ही शरीर से जैसा कि लोग कहते हैं पृथक् होती और वायु से छिन्न-भिन्न होकर क्या नष्ट-भ्रष्ट हो सकती है? नहीं कदापि नहीं। नहीं ओ प्रिय सीबी अज़! ओ समयस! ऐसा नहीं है। मैं तुम्हें बताऊंगा कि उस जीवात्मा की क्या अवस्था होती है जो इस शरीर से वियुक्त होने के समय पवित्र होता है और जिसने स्वजीवन में भी कोई ऐसा गहरा सम्बन्ध शरीर से नहीं रखा कि जिससे वह सुरक्षित रह सकता था और जब वह शरीर को छोड़ता है तो भी शरीर का कोई दोष उस पर नहीं लग जाता अथवा वह उसके मल से दूषित नहीं होता किन्तु वह उससे पृथक् रहता है और अपने आपको अपने आप में योग युक्त किया है क्योंकि यही उसका नित्य का स्वाध्याय रहा है और उसके केवल यह अर्थ हैं कि उसने बुद्धिमत्ता को ठीक रूप से प्यार किया है और इस बात पर पूर्ण आचरण किया है कि किस प्रकार मरना चाहिये। क्या यह मृत्यु का आचरण नहीं है?

सीबी अज़—हां निःसन्देह।

सुकरात—तो क्या पुनः वह आत्मा जो इस अवस्था में है अदृश्य चेतन और नित्य ईश्वर में नहीं जाती? वहां (अवश्य जाती है और) वह भूल, मूर्खता, भय और तीव्र कामनाओं से रहित हो

*विशप टेलर महोदय की "अपावोगी" प्रथम भाग, प्रथम अध्याय की इससे तुलना करो, जहां पर ऐसी ही युक्ति का प्रयोग किया गया है कि जीव निर्विकार होने के कारण नित्य है और जीवात्मा के ईश्वरीय दिव्य गुणकर्म स्वभाव रखने का तर्क आधुनिक काल में भी दिया जाता है जैसे देखो लार्ड टीनीसन की पुस्तक 'इनमेमोरियम' पृ० ५४ से ५६ तक।

जाती है और उन समस्त बुराईयों से जो मनुष्य में हो सकती हैं--पृथक् हो जाती है तथा सुखमय होकर शेष समय के लिये सचमुच देवताओं के साथ रहती है। हे सीबी अज़ ! क्या हम इस बात को मान लें ?

सीबी अज़—हां निःसन्देह।

सुकरात—यदि आत्मा शरीर को छोड़ने पर उसके साथ सदा रहने, उसकी सेवा करने उसके साथ अनुराग करने से उससे और उसकी इच्छाओं, और प्रसन्नताओं से अपवित्र और मलिन हो जावे। इसके अतिरिक्त जो शारीरिक ऐन्द्रियिक और खाया-पिया जा सकता है और मनुष्य की पाशविक प्रवृत्तियों के लिये प्रयुक्त किया जा सकता है। यदि उसने इस बात से जो कि आंख के लिये आशय और अन्धकारमय है तथा तर्क से ही जानी जा सकती है। उससे घृणा करना डरना और भागना सीखा है तो क्या तुम विचार करते हो कि एक ऐसी आत्मा मृत्यु अर्थात् शरीर से पृथक् होने के समय शुद्ध पवित्र होगी ?

सीबी अज़—नहीं।

सुकरात—मैं समझता हूं कि शरीरत्व उसमें घुस जाता है जो कि शरीर के चिर सम्बन्ध और गहरी मित्रता इत्यादि से उसके स्वभाव में ही प्रविष्ट हो जाता है।

सीबी अज़—हां।

सुकरात—और हे मेरे प्रिय मित्र ! यह आवश्यक है कि शारीरिक वस्तु बोझल और दर्शनीय हो और यह उसी का परिणाम है कि आत्मा इस दर्शनीय संसार में पुनः वापिस लाई जाती है। क्योंकि हैडीज़=अदृश्य प्रेतलोक से डरती है और यह सब लोग कहते हैं कि वह कबरों और मज़ारों पर घूमती रहती है। जहां पर कि आत्माएं प्रायः देखी गयी हैं। और जो कि उन आत्माओं की छाया हैं। जो शरीर से पृथक्ता के समय अपवित्र थीं। और अब तक दृश्य जगत् में घूम रही हैं और यही कारण है कि दिखाई देती हैं।

सीबी अज़—ने कहा कि हे सुकरात यह बहुत अंशों में संभव हो सकता है।

सुकरात—हे सीबी अज़ ! यह शुद्ध व्यक्तियों की आत्माएं नहीं होतीं। किन्तु बुरे और दुष्कर्मी मनुष्यों की हैं। जो कि ऐसे स्थानों पर घूमने के लिये बाधित की जाती हैं। यह सब कुछ अपनी बुराई और शरारती जीवन के दंड रूप में होता है। और वह इसी प्रकार घूमती-फिरती रहती हैं। जब तक कि वह इस शारीरिक इच्छा के कारण पुनः किसी शरीर में बन्द न की जायें और वह संभवतः उन पशु शरीरों में कैद की जाती हैं जिनके स्वभाव इन मनुष्यों के अपने जीवन के स्वभाव के अनुरूप होते हैं।

सीबी अज़—हे सुकरात ! इससे तुम्हारा क्या अभिप्राय है।

सुकरात—मेरा अभिप्राय यह है कि वह व्यक्ति जो अत्यन्त ईर्षा लोभ, आलस्य और मादक द्रव्यों के सेवन में रहते हैं वह संभवतः गधों और ऐसे ही पशुओं के शरीरों में प्रविष्ट होते हैं। तुम्हारी इसमें सहमति नहीं क्या ?

सीबी अज़—निःसन्देह यह संभव है।

सुकरात—और वह जो अपने जीवनकाल में अत्याचारी, अन्यायी और चोर इत्यादि रहे हैं।

वह भेड़ियों, बाजों, चीलों के शरीरों में प्रविष्ट होते हैं। इसके अतिरिक्त और हम कौन स्थान बता सकते हैं—जहां ऐसी आत्माएं जाती हैं।

सीबी अज़—ने कहा कि वह ऐसे ही प्राणियों के शरीरों में प्रविष्ट होती हैं।

सुकरात—ने कहा संक्षेप यह है कि प्रत्येक आत्मा कहां जाती है ? स्पष्ट है कि उन प्राणियों के शरीर में जाती है जिनका स्वभाव उसके अनुरूप हो।

सीबी अज़—ने उत्तर दिया कि वास्तव में ऐसा ही है।

सुकरात—और उनमें सबसे प्रसन्न जो सबसे उत्तम स्थान पर जाती हैं वह हैं। जिन्होंने सामाजिक सदाचार सम्बन्धी आत्मिक उन्नति के साथ-साथ सबके हृदय को प्रसन्न रखने के गुणों को अपना स्वभाव बनाया था और वह शुभ गुण पवित्रता न्याय आदि हैं। जो किसी विज्ञान अथवा युक्ति के बिना केवल स्वभाव और अभ्यास से प्राप्त होते हैं।

सीबी अज़—ने कहा और वह आत्माएं सबसे अधिक प्रसन्न क्यों हैं ?

सुकरात - ने कहा क्योंकि यह संभव है कि वह एक सहनशील और सुशील स्वभाव में जो कि उनके अपने स्वभावानुसार होती हैं। जैसे मधु मक्षिका, भिड़ और चींटी के शरीर में वापिस आती हैं अथवा मनुष्य योनि में वापिस आती हैं और यह वही हैं जो कि यहां योग्य और प्रतिष्ठित व्यक्ति बनते हैं।

सीबी अज़—ने कहा यह साधारणतः यथार्थ है और विश्वास है कि ऐसा ही हो।

सुकरात—परन्तु केवल तत्ववेत्ता अथवा ज्ञान के प्रेमी जो कि इस संसार से जाते समय सर्वथा पवित्र होते हैं। देवों के समूह में जा सकते हैं। और इसलिये हे मेरे मित्र सीबी अज़ तथा समयस ! एक सच्चा दार्शनिक जितेन्द्रिय होता है। वह समस्त शारीरिक प्रसन्नताओं से दूर रहता है। वह अपनी आत्मा को इनका दास नहीं होने देता। वह अपनी निर्धनता तथा बेरोजगारी से नहीं डरता। जैसा कि साधारण लोग विशेषतः धन के लोभी लोग करते हैं। और न वह दुराचारी तथा निर्लज्ज बनता है। जैसा कि सशक्त लोग प्रायः इन दोषों में फंस जाते हैं। वह इन बातों के कारण जितेन्द्रिय नहीं होते।

(ट्राईल ऐंडडैत्थ आफ़ सुकरातीज़ पृ० १२७ से १५१ तक चर्च साहिब द्वारा अनुदित)

दार्शनिक अफ़लातून (प्लेटो) का सिद्धान्त

"क़दुवन ने वैज्ञानिक पद्धति के तीन प्रकार वर्णित किये हैं उसने हर क़लैदस के विज्ञान और अनुभूतियों का अनुसरण किया है और पीथागोर्स की पश्चात् की परिभाषाओं और बौद्धिक सिद्धान्तों तथा सुकरात के नियमों और विश्वासों से कुछ बढ़ाया है। उसी एक विचार का लूतराक़स ने अपने ग्रन्थ "अलिफलासफ़ा" के प्रथम भाग के तीसरे अंक में वर्णन किया है कि अफ़लातून (प्लेटो) तीन पदार्थ अनादिमानता है। ईश्वर, जीव और प्रकृति। ईश्वर चेतनों का चेतन निमित्त कारण है। प्रकृति उपादान कारण तथा आत्मतत्व सत् और चित् है।

और यह बहुत सुन्दर है कि ईश्वर जगत् का स्रष्टा है। तथा यह बात बहुत ही असंभव है कि ईश्वर ने अभाव से सृष्टि की रचना की हो। प्रत्युत वस्तुस्थिति यह है कि ईश्वर ने नित्य प्रकृति से

ही इस संसार की नियमपूर्वक रचना की तथा रंगा-रंग के रूपों से युक्त। भिन्न-भिन्न प्रकार के पदार्थ बनाये इस प्रकार से ईश्वर अपने सर्वव्यापक तथा पूर्णज्ञान से इस प्रकृति को प्रकट करने में पूर्णतः सामर्थ्यवान् है तथा उसके भिन्न-भिन्न घटकों से ही उसको प्रकट करके उसे सौन्दर्य देता है। यहां तक कि इस जगत् का निर्माण एक कुशल शिल्पी को भान्ति किया। जैसे वह घर को बनाने के लिये विद्यमान सामग्री का चयन करता है और अभाव से नहीं बनाता।

अफ़लातून (प्लेटो) जीवों के पुनर्जन्म को इस प्रकार मानता है जैसे उसने पीथागोर्स से सीखा। पुन: उसने उसे अपनी थियूरी का विशेष अंग बनाया। पीथागोर्स के नियमों के अतिरिक्त कुछ नये नियमों का आविष्कार भी किया। जैसा कि जीव नित्यत्व विचार अध्याय में अपने ग्रन्थ में लिखा है।" (तारीखे फ़लासफ़ा अरबी पृ० ८७, ८८)

प्राचीन वैज्ञानिक प्लेटो आदि चैतन्य युक्त जीवात्मा को अनादि मानते हैं। यदि शरीर से पूर्व चेतनात्मा की सत्ता न होती और शरीर से ही चेतनता का प्रादुर्भाव संभव होता तो जीव की सत्ता शरीर की सत्ता पर आधारित होकर जीव की मुख्यता जाती रहती और शरीर की सत्ता प्रमुख होती किन्तु ऐसा नहीं। जड़ शरीर चेतन जीव का कारण नहीं बन सकता क्योंकि वह परिवर्तनशील मरण धर्मा है। यह अवयव संघात से युक्त और अन्त में विनष्ट हो जाता है। किन्तु चेतन जीव नित्य सत्तावान् पदार्थ है। अतः यदि शरीर ही चेतनता का अधिष्ठान होता तो शरीर नाश के साथ चैतन्य नाश भी होता जबकि ऐसा नहीं है। सिद्ध है कि चेतन सत्ता शरीर की उत्पत्ति से पूर्व विद्यमान थी अतः चेतन जीव उत्पत्तिमान् नहीं क्योंकि शरीर नाश के साथ ही चेतनता का नाश नहीं हो पाता। किन्तु चेतन जीव शरीर धारक और उसका स्वामी बनकर उसे कार्यों में नियुक्त करता है और यह सिद्धान्त भारतीय दार्शनिकों के अनुकूल है। जो कि जीव को नित्य अनादि तथा विनष्ट न होने वाला मानते हैं।" (तहक़ीक़े तनासुख़ फ़ारसी पृ० २७)

अरस्तातालीस का सिद्धान्त

विलियम इन्फ़ील्ड एल० एल० डी० लिखते हैं कि—"अरस्तु के लेखों अथवा ग्रन्थों में कोई इस प्रकार की बात नहीं है जिससे यह पूर्णतः सिद्ध हो सके कि वह जोव को विनाशी अनित्य मानता था अथवा नित्य अविनाशी। परन्तु प्रथम अर्थात् अनित्य होना संभव है। उसका कारण यह है कि जीव सम्बन्धी उसका यह विचार था कि उसको एक सनातन चेतन सत्ता ने मनुष्य के शरोर में डाला है।

समस्त पदार्थ उससे उत्पन्न होते हैं जिसका अस्तित्व प्रकृति में है। अर्थात् फ़स्ट मैटर से न कि उससे कि जिसकी सत्ता का प्रत्यक्ष ऐन्द्रियिक है। और न अभाव से। मैटर न तो उत्पन्न किया गया और न उसका अभाव हो सकता है। प्रत्युत वह प्रथम असीम पदार्थ है जिससे समस्त पदार्थ बनाये गये हैं। जिसमें वह पुनः अन्त में मिल जायेंगे। प्रत्येक वस्तु का रूप उसका स्वत्व और उसकी प्रकृति है। अथवा वह जो बनाती है। और जो कुछ वह है। उसे अपने मौलिक तत्व से पृथक् नहीं किया जा सकता "नक्षत्रों में उनको गति देने के लिये ईश्वर इस प्रकार से कार्य करता है। जिस प्रकार मनुष्य की आत्मा मनुष्य के शरोर में कार्य करती है।"

यह यथार्थ है कि जब इसपेवसीवस अपने चचा अफ़लातून के स्वर्गवास पर यूनिवर्सिटी में उसका स्थानापन्न हुआ। तब अरस्तू इस बात से इतना प्रसन्न हुआ कि वह एथेंस (यूनान) छोड़कर चला गया। और पुनः जब बहुत समय के पश्चात् अरस्तू अथेंस में लौटा और ज्ञात किया कि वह यूनिवर्सिटी जिसमें उसे स्थानापन्न होने की इच्छा थी। उसमें ज़ी० नी० क्रीटीनर स्थानापन्न है। तब उसने दार्शनिक नेताओं का अग्रणी होने का निश्चय किया। इसी इच्छा से एक नूतन सम्प्रदाय प्रचलित हुआ। यह सम्प्रदाय इस यूनिवर्सिटी का विरोधी था। और ऐसी विद्याओं की शिक्षा देता था कि जो अफ़लातून के विरुद्ध थीं इसमें कोई सन्देह नहीं कि अपने आपको समस्त दार्शनिकों से अधिक प्रसिद्ध होने की इच्छा ने अरस्तू को इस बात पर समुद्यत किया कि वह एक सम्प्रदाय का प्रचलन करे। अर्थात् एक नवीन सम्प्रदाय का संस्थापक हो। और इसमें भी कोई संदेह नहीं है कि अपनी थ्योरी (मन्तव्य) को अधिक रोचक बनाने के लिये उसने यथासम्भव सब प्रकार के यत्न किये। जिससे दूसरों की थ्यूरी का मूल्य घटाये। उसका उद्देश्य यह था कि अपना सुन्दर भवन दूसरे के भवन गिरा कर बनावे। जैसा कि लार्ड बेकिन ने इस बात को भली प्रकार से सिद्ध किया है। कि 'रूस के एक अत्याचारी अधिपति की भान्ति उसने विचार किया कि वह शान्ति से राज्य नहीं कर सकता जब तक उसके सब सम्बन्धी और मित्र न मारे जायें। आलससगीलीपस कहता है कि जब सिकन्दर ने अरस्तू से शिकायत की कि उसने अपने लेखों में अपने मौलिक सूक्ष्म सिद्धान्त को प्रकट कर दिया है। तब अरस्तू ने उत्तर में कहा कि यह सिद्धान्त जन साधारण पर प्रकट कर दिये गये और नहीं भी किये गये क्योंकि जो कुछ मैंने इन लेखों में लिखा है। उसे केवल वही लोग समझ सकते हैं कि जिन्होंने मुझे व्याख्या करते सुना है।"

अरस्तू स्वलिखित गन्थ तथा अपना पुस्तकालय मृत्यु समय अपने स्थानापन्न थेवन्स्टन को दे गया जो कि निःसन्देह उनका मान करना जानता था। उसने अपनी मृत्यु पर वह पुस्तकें फीलीस को दीं। कुछ उनसे टालीमईफ़ली डंफ़्स के पास बेची गईं। जो कि सिकन्दरिया के पुस्तकालय में रखी गईं और अन्त में जलाई गईं। (देखो हिस्ट्री आफ़ फिलासफ़र्स भाग १ पृ० २६१ से २८५ तक १८१६ ई० प्रकाशित लंडन। जयपुर पुस्तकालय)

प्रसिद्ध हकीम फेरी साईडीस का सिद्धान्त

विलियम इन फ़ील्ड ए० ए० डी० अपनी हिस्ट्री आफ़फिलासफ़ी में लिखते हैं कि "एक सिद्धान्त जो प्रायः ज्ञात है कि वह पूर्वीय (भारतीय) और मिश्र के हकीमों (फ़लासफरों) में प्रचलित था। वह फीरी साईडीस मानता था। अर्थात् तीन पदार्थों का अनादि होना। और यह भी वह मानता है कि समस्त पदार्थों का जो आदि कारण है वह बड़ा विचित्र है। यह अरस्तू लिखता है कि फ़ीरी साईडेस ऐसा मानता है और सभी वैज्ञानिकों ने उसके सम्बन्ध में सहमति से यह सम्मति लिखी है कि वह जीव को अनादि मानता था। जिसको संभवतः उसने मिश्र के फलासफ़रों से सीखा था। सीसरी कहता है कि यह प्रथम दार्शनिक था जिसने वैज्ञानिक परीक्षण करके पुस्तकों में इस सिद्धान्त को प्रकाशित किया। इसमें भी सन्देह नहीं—प्रत्युत निश्चय है कि वह पुनर्जन्म सिद्धान्त को मानता और उसका प्रचार करता था। क्योंकि यह सिद्धान्त प्राचीन मिश्र के फ़लासफरों में साधारण रूप से जारी था। और यही विशेषज्ञ अन्वेषक हकीम पीथा गोर्स का गुरु था।"

(देखो पृष्ठ ३६३, ३६४ भाग १ लंडन वर्तमान पुस्तकालय अजमेर)

फ़ैलपूफ उमीद और कलीस का सिद्धान्त

उमीद कलीस का सिद्धान्त अपने गुरु पीथा गोर्स के सिद्धान्त की ओर खिंचा हुआ था। और वह पीथा गोर्स से भी आगे निकल गया। यह कहता है कि सबके मूल के भी मूल पृथिवी, वायु, जल और अग्नि हैं। और यह भी कहता था कि इन चारों में रागद्वेष का अन्तर पाया जाता है। और यह चारों महाभूत सदैव परिवर्तित होते रहते हैं। कभी भी इनका अभाव नहीं होता। और वह अपनी अवस्था में सदा वर्तमान रहते हैं। इसका सिद्धान्त आत्माओं का पुनर्जन्म था। जो कि शरीरों में योनि परिवर्तन करती रहती हैं। वह कहता था कि मुझे स्मरण है कि मैं एक छोटी सी लड़की था। पुनः मैं मछली बन गया। पुनः मैं पक्षी बन गया। किन्तु मुझे यह भी स्मरण है कि मैं वनस्पतियों में भी था।" (तरीखे फलासफ़ा अरबी पृ० ७३-७४)

दार्शनिक अबीकोर का मत

यह विशेषज्ञ विद्वान् लोगों को उन वस्तुओं के खाने से जिनसे कामवासना बढ़ती है—रोकता था अर्थात् पाशविक विचारों को दूर करा कर शुभ गुण सिखाता था। थोड़ी वस्तु पर सन्तुष्ट रहना सिखाता था। लोभ के दोषों को भी समझाया करता था। अतएव उसके शिष्य ऐसे ही हुए। दूध और मेवे खाने का लाभ बताता था। पीथा गोर्स के मार्ग को मानता था। शुभ कर्म भलाई और चिन्ता से मुक्त होने का उपदेश देता था। वह धैर्य की प्रशंसा बहुत करता था। जीव को काम वासनाओं की तबाही से रोकता था यही अन्तिम गुण ही उसकी बुद्धि की पवित्रता और स्वास्थ्य रक्षा का कारण बना। इसी कारण से उसके मस्तिष्क और शरीर में कोई विकार नहीं हुआ। वह सदैव सत्पदार्थों के सम्बन्ध में वाद विवाद करता और सोचता रहता था। जीवात्मा को शरीर का गति दाता मानता था, तथा उसको नित्य सत्पदार्थ ही स्वीकार करता था।

वह कहता था कि स्वभाव के अनुकूल जीवात्मा कर्म के द्वारा उच्च और नीच पद को प्राप्त करता है। बुद्धि और ईश्वर प्राप्ति का साधन मानता था। अभाव से भाव नहीं मानता था। लोक-लोकान्तरों का भ्रमण अति प्राचीन मानता था। प्रकृति के सम्बन्ध में उसकी सम्मति यह है कि मूल प्रकृति एक है और शरीर सूक्ष्म तथा स्थूल तथा अनेक हैं। जिनसे सब सृष्टि रची हुई है। यह सब के सब गतिमान् हैं। इनके परमाणु नित्य हैं। और बुद्धि इनकी संख्या तथा रूप नहीं जान सकती। और न यह कह सकती है कि सब परमाणुओं के ऐसे रूप हैं। सब दृश्य पदार्थ इन परमाणुओं से बने हैं। परन्तु पहिले पीछे का भेद आवश्यक है। जैसे एक ही नियत गति से सब शब्द बनते है। परन्तु पहिले पीछे का भेद है। जैसे बकर, रकब, कर्बू किब्र इत्वादि। यह असंख्य छोटे-छोटे अणु सदा गतिमान् रहते हैं। तथा इनकी गति ही संसार की उत्पत्ति का कारण है। यदि यह किसी शरीर के साथ सदा एक स्थान पर ही रहते। तो उन्नति तथा अवनति कदापि न हो पाती। मृत्यु का प्रतिदिन बढ़ना घटना न होता। और कोई वस्तु परिवर्तित न हो पाती। सदा ही वर्तमान रहती। अणुओं की गति का ही कारण है कि हम किसी वस्तु को एक अवस्था में स्थिर नहीं देखते। न किसी उत्पत्तिमान् वस्तु को सदा देखते हैं। परन्तु वह परमाणु कभी अभाव युत न होंगे। क्योंकि वह सब पदार्थों का मूल कारण हैं। तथा लोक असंख्य हैं। वह पुनर्जन्म को भी मानता था। अतः पीथागोर्स के सिद्धान्त का पक्षपाती था; तथा कई बातों में उसने अधिक उन्नति भी की थी।"

(तारीखे फ़लासफ़ा अरबी पृ० १३६-१५१)

इमाम मुहम्मद ग़िज़ाली ने अपनी पुस्तक मसायले ग़ामजा में लिखा है कि दार्शनिक अर्वाचीन विद्वान् हकीम बूअलीसीना ने अपनी पुस्तक निजात व शिफ़ा में शरीर की ओर जीव के लौटने का सिद्धान्त असंभव न होना सिद्ध किया है। और कहा है कि यह संभव है कि कुछ शरीर समान इसलिये बनाये गये हैं कि जीव मृत्यु के पश्चात् इनमें प्रवेश करे। और उसने उसी की एक कथा इस प्रकार वर्णन की है कि इस (पुनर्जन्म के सिद्धान्त) का असंभव न होने के मन्तव्य को मानने वाले कुछ विशेषज्ञ विद्वान् हुए हैं, जो व्यर्थ नहीं कहते। इससे ज्ञात नहीं हुआ कि बूअली को इस मन्तव्य में सन्देह है। और इसके असंभव होने पर कोई युक्ति इसके मतानुसार प्रस्तुत नहीं हुई। यदि यह असंभव होता तो उसके मानने वाले को यूं न कहता। कि वह असत्यवादी नहीं। अन्वेषक तूसी ने "शरहे इशारात" में वर्णन किया है कि बूअली सीना का इससे अभिप्राय अबूनसर फारावी से है। जिसने लिखा है कि आत्माएं जिस समय अपने शरीर से पृथक् होती हैं तो वह वह दूसरे शरीर से संबद्ध हो जाती हैं।"

कर्म तथा पुनर्जन्म

आंगल राज्य के प्रारम्भ काल में क्रुश्चैनेटी का भारत में प्रचार हुआ जिसमें प्रत्येक प्रकार के साम्प्रदायिक धार्मिक विचारों का संमिश्रण था। और यही सब बातें प्रत्येक वस्तु में जो कि इंगलैंड से आईं प्रतीत होती हैं। परन्तु हमारे प्राय: देशवासियों की आंखें इस झूठी चका-चौंद से चुंध्या गईं कि जिससे वह लोग भारतीय परम्पराओं को पक्षपातपूर्ण कहने लगे। किन्तु जब भारतीय लोगों ने उस झूठी झलक से बाहिर आने का अवसर प्राप्त किया और स्वयं अपनी ज्ञान शक्ति के प्रयोग के योग्य बने तब से अपनी भारतीय सभ्यता उनको ठीक और उचित तथा वास्तविक अवस्था में दिखाई देने लगी। विद्या की निरन्तर उन्नति से अवस्था बदल गई। अब शिक्षित वर्ग ने उसी प्रकार क्रुश्चियन लोगों के अज्ञान और पक्षपात का भांडा फोड़ दिया है। जिस प्रकार शिक्षा प्रसार से पूर्व क्रुश्चन हिन्दुओं के सम्बन्ध में कहते थे। यह धोखा सर्वथा दूर कर दिया गया है। पश्चिमी सभ्यता अब हमारे सम्मुख अपने भद्दे रूप में उसी प्रकार दिखाई देती है जैसे कि है। पादरी लोग भारतीय जिन बातों को असंभव जानते हैं और ऐसी बातों के प्रचार में जो प्रचार योग्य नहीं हैं बहुत यत्न करते हैं और अपनी युक्तियों की सिद्धि के लिये उनको हमारे सम्मुख उपस्थित करते हैं। वह लोग यह दिखाना चाहते हैं कि भारत के लोगों में कुछ प्रथाएं किस प्रकार गन्दी हैं। मट्टी, लोहा, तांबा, पत्थर अथवा अन्य धातुज मूर्त्तियों के आगे पूजा करना किस प्रकार से बुद्धि विरुद्ध और साधारण सूझ-बूझ के विरुद्ध है। ऐसे मन्तव्यों और प्रथाओं को मानना कितनी बड़ी मूर्खता और नासमझी का कार्य है। हम ऐसी घृणायुक्त बातें पादरियों से सुन-सुनकर अपने धर्म से पराङ्‌मुख होते जाते थे। किन्तु मनुष्य केवल इन बातों के इन्कार से सन्तुष्टि नहीं पाता है। हम लोगों ने धार्मिक बातों में ऐसे लोगों से व्यर्थ सहायता लेनी चाही जिन लोगों ने अपने ही यहां के कवि की मंत्रणा का लाभ नहीं उठाया जिसका वचन यह है कि—

"औरों को वही शिक्षा दे सकता है जो उनसे ऊपर हो।"

इसका परिणाम यह हुआ कि आकाश से गिरकर हम खजूर में अटके। बड़े सौभाग्य की बात है कि हम इस ईश्वरीय ज्ञान से युक्त ईश्वर की सच्ची पहिचान बता सकने में समर्थ आर्यसमाज के

कारण से इस प्रबल भंवर से सुरक्षित हो पाये। इस लाभप्रद समाज के प्रभाव से हमारे देशवासी लोग जो कुछ समय से बहके हुए थे पुनः अपनी वास्तविक उत्तम अवस्था पर आ गये। और अपनी प्राचीन आर्य संस्कृति पर गौरव करने लगे। जिसे वह अब तक घृणा की दृष्टि से पादरियों के बहकावे में आकर देखते थे। अब हमारे लोगों को इनकी कठिनाई के दूर करने का गुण हाथ आ गया है। तथा उनको यथार्थ ज्ञान हो गया है कि आर्यों का धर्म सत्यता से भरा हुआ है।

सत्य है कि पुनर्जन्म का सिद्धान्त कर्म फ़लासफ़ी सर्वथा वैज्ञानिक तथा दार्शनिक युक्तियों पर आधारित है। अपेक्षाकृत पादरियों के दोज़ख बहिश्त के सिद्धान्त के कि जिसका प्रचार करते वह नहीं थकते। इस स्थान पर मिस्टर सन्त के बहुत अच्छे विचार यहां उद्धृत करना उचित समझता हूं। उनके शब्द यह हैं:—

"यह विचार क्रश्चन लोगों का भूल पर आधारित है। कि मनुष्य जीवन दो भागों में विभक्त है। प्रथम सांसारिक तथा द्वितीय आत्मिक। प्रथम सांसारिक जीवन केवल साठ-सत्तर वर्ष तक का है तथा द्वितीय आत्मिक जीवन सदा के लिये है। और यह सिद्धान्त इसलिये भी असंभव प्रतीत होता है जब कि यह भी क्रश्चन लोगों का कथन है कि हमारा आत्मिक जीवन जो सीमारहित है। हमारे इस साठ-सत्तर वर्ष के सीमित कर्मों के परिणामरूप में होगा। और यह कहना क्रश्चन लोगों का कुछ कम अयुक्त नहीं कि एक बार मर जाने के पश्चात् पुनः परिवर्तन और उन्नति के प्राकृतिक नियमों की संभावना न होगी।"

कर्म फ़लासफी पर विचार करने से पुनर्जन्म पर विश्वास अवश्य हो जाता है। यह असंभव सिद्धान्त नहीं है। कार्य कारण के नियम का उदाहरण इसे स्पष्ट कर देता है। इसी बड़े कारण कार्य के नियम को जिस प्रकार जौन स्टवारट साहिब ने लिखा है। उससे यह सर्वथा अनुमानित हो जाता है। इसी नियम पर ही वर्तमान युग की बड़ी-बड़ी विद्याएं आधारित हैं। और बिना इस नियम के किसी बात की वास्तविकता अनुमानित नहीं हो सकती। बड़े-बड़े विद्वानों का इसी नियम पर ही आधार है। अब यदि हम उसकी यथार्थता की जांच करें कि जिस पर यह नियम आधार रखता है। तो हम देखते हैं कि विशेष प्रमाण उसका यही है कि इसी नियम पर सबका आधार है। कारण कार्य का नियम अच्छी प्रकार अनुमान में आ सकता है। और इस नियम के अपवाद की कोई बात इस समय तक मनुष्य के अनुभव में नहीं आई है। यदि अपवाद होता तो अवश्य मनुष्य के अनुभव में आता। अतः यह नियम ठीक माना जायगा। यह एक ऐसा नियम है कि मनुष्य के अनुभव के साथ-साथ पग-पग पर चलता है। यदि यह नियम इस संसार में सब पर लागू है। तो क्या हम एक पग और आगे बढ़ाने के अधिकारी नहीं हैं जो सर्वथा उचित है। उस समानता के अनुसार जो एक वस्तु दूसरी वस्तु से रखती है। तब इसलिये कि मनुष्य उस कर्मात्मक शक्ति अर्थात् ज्ञान अथवा प्रकाशयुक्त हृदय (रौशन ज़मीर) को प्राप्त करे। जिसके द्वारा आत्मा की वास्तविकता बहुत बड़ी सच्चाई के साथ स्पष्ट रूप से ज्ञात हो सकती है। यदि कुछ मनुष्य के समझने के लिये है तो यही है। योग्य हकीमों (दार्शनिकों) की सम्मति है कि कार्य कारण का नियम एक अकाट्य प्रमाण है। जिसके लिये किसी युक्ति की आवश्यकता नहीं। और हम लोग इस नियम के जान लेने के लिये अपनी स्वाभाविक विचार शक्ति के नियम से बाधित हैं। यदि यह दार्शनिकों की युक्ति प्राकृतिक जगत् में सत्य मान ली

जाय। तो दूसरे सूक्ष्मतम विषयों में हमारा मार्ग प्रदर्शक इस कार्य कारण के स्वाभाविक नियम के अतिरिक्त और कोई नहीं हो सकता। अतः यह सृष्टि नियम हमारे स्वभाव में ही प्रविष्ट है।

मैं विचार करता हूं कि मैंने दार्शनिक नियमों की दृष्टि से पर्याप्त वर्णन किया है। इस बात को प्रमाणित करने के लिये कि कार्य कारण का नियम कुछ प्राकृतिक पदार्थों तक ही सीमित नहीं है। एक और भी कारण है कि जिससे हम इस प्रश्न को सुलझाने में यत्न कर सकते हैं।

कोई शक्ति व्यर्थ नहीं जाती। प्रत्युत या तो वह किसी न किसी शक्ति के रूप में परिणत हो जाती है अथवा वह स्वयं तद्रूपेण अवशिष्ट रहकर समयानुसार उस शक्ति को प्रकाशित करती है। किसी छत या दीवार पर ढेला फेंकने में जो शक्ति व्यय की जाती है। वह व्यर्थ नहीं। प्रत्युत ढेले में अपने रूप में रहती हैं। और उस छत या दीवार से ढेला पृथक् हो जाता है तो उसका बल प्रगट होता है। जो शक्ति एक शीशे के बरतन में विद्युत डालने के समय खर्च की जाती है वह अपनी वास्तविक अवस्था में रहती है। परन्तु वह विद्युत अग्निकण बनकर उस समय निकल जाती है। जब उस बरतन का बाह्य और आन्तरिक भाग उस यन्त्र से (जिसके द्वारा विद्युत निकल जाती है) लगाया जाता है। जब यह अवस्था है तो क्या यह बात सत्य नहीं है ? कि जो शक्ति हमारे स्वभाव विचार और हरकत (गति) से उत्पन्न होती है। वह व्यर्थ नहीं जाती। जब हम यह जानते हैं कि यह नियम अपना प्रभाव अवश्य उत्पन्न करेंगे। तो इस अवस्था में हमें पुनर्जन्म सिद्धान्त मानना भी आवश्यक होगा।

तथा इन दृश्य बाह्य शक्तियों के प्रकाशनार्थ बाह्य जगत् का होना भी आवश्यक है।

पुनर्जन्म का सिद्धान्त जिससे पादरी लोग विरोध करते हैं। दार्शनिक दृष्टि से अत्यन्त आवश्यक समझा जाता है। अब तक मैंने दार्शनिक दृष्टिकोण रखा है। अब ज्ञात हुआ है कि मनोविज्ञान की दृष्टि से भी कर्म सिद्धान्त तथा पुनर्जन्म सिद्धान्त जिससे योरुपीय जनता अपरिचित थी अच्छी प्रकार सुलझ गया है। मेरा अभिप्राय इन भिन्न-भिन्न अवस्थाओं से है कि जिनमें लोग उत्पन्न होते हैं। और वह भिन्न-भिन्न शक्तियां तथा अवस्थाएं जो उनमें नैसर्गिक होती हैं। प्रत्येक व्यक्ति ने अपने पूर्वजन्म में कुछ बातें और कुछ शक्तियाँ प्राप्त की होती हैं। जो कि उसके जीव के साथ अवश्यंभावी रूपेण स्वतः विद्यमान रहती हैं। और जब जीव पुनः शरीर में आता है। तो वह शक्तियां सरलता से पुनः कार्य कर सकती हैं। यह एक ऐसा सिद्धान्त बहुत सिद्धान्तों में से है जिससे कि उन बातों की सिद्धि जो कि हम देखते हैं बहुत ही अच्छे ढंग से हो सकती है। अतः मैं यह विचार करता हूं तथा दार्शनिक दृष्टि से भी ठीक है कि हमें और किसी वाद-विवाद पर अभी विचार न करना चाहिये। किन्तु इस सिद्धान्त पर दृढ़ रहना चाहिये। और जब तक पूरा-पूरा ज्ञान इसका हमको न हो जाय। उस समय तक और किसी भी ओर हमें न भटकना चाहिये।

अब आचार सिद्धान्त पर दृष्टि डालें तो हमें ज्ञात होगा कि आचार सिद्धान्त मनोविज्ञान तथा अध्यात्म सिद्धान्त से भी आवश्यक है। जितने-जितने लोगों के सदाचार समुन्नत होंगे। उतनी-उतनी उनके सिद्धान्तों की उन्नति होती जायगी। मनुष्य के लिये कारण कार्य के अतिरिक्त और कोई सिद्धान्त नहीं है। उसको थोड़ा बहुत इस योग्य समझें जिससे उत्साह उत्पन्न हो तथा अपनी आप सहायता करने और अपने प्रयत्नों पर विश्वास करने का साहस बन्धे। जब मनुष्य चारों ओर से आपत्ति में

घिर जाता है। उस समय वह बहुत ही उदास होकर यह विचार करता है कि यह सब आपत्तियां मेरे गत जन्मों के दुष्कर्मों के परिणाममात्र हैं। जबकि वह अपने गत जन्मों के कर्मों को स्मरण नहीं करता है। इस अवस्था में भी उसको और किसी बात से सन्तोष नहीं हो सकता कि वह निश्चय करे कि उसके आगामी जीवन का सुख इस जन्म के शुभकर्मों तथा प्रयत्नों और शुद्ध पवित्र आचार पर आधारित है। भारत के लोग कभी ऐसी अवस्था में न होते यदि वह अपने हृदय पट पर इस बात को अंकित न करते कि हम यदि शुभकर्म करेंगे तो अच्छी अवस्था और यदि दुष्कर्म करेंगे तो बुरी अवस्था में रहेंगे। भारत की प्रत्येक प्रकार की उन्नति इस अवस्था में हो सकती है जब भारतीय लोग इस सच्चे और पवित्र सिद्धान्त का हृदय से पूर्ण समादर करें। तथा पूर्ण विश्वास के साथ सर्वथा इस पर आचरण करके शुभकर्मों में प्रवृत हों।"

(थियोसाफ़िस्ट मई १८८५ ईस्वी)

फ़लासफ़र ह्यूम लिखते हैं कि "प्रकृति के साधारण नियम के अनुसार यदि विचार किया जाय तथा उत्तम हेतु में किसी हेत्वाभास की कल्पना किये बिना जिसको फ़लसफ़ा से सदैव पृथक् रखना चाहिये तो जो कुछ बिगड़ नहीं सकता है वह अवश्य उत्पन्न होने के योग्य नहीं है अतः यदि जीवात्मा अजन्मा है तो अवश्य हमारे उत्पन्न होने से पूर्व भी वर्तमान होगा। और यदि पूर्व जन्म के साथ हमारा कुछ भी सम्बन्ध नहीं है तो आगामी जन्म के साथ भी कुछ न होगा अतः पुनर्जन्म की ही एक ऐसी पद्धति है जिस पर फ़लसफ़ा ध्यान दे सकता है।"

प्रोफ़ैसर मैक्समूलर ने लंडन में १० अगस्त १८९४ ईस्वी को एक व्याख्यान दिया था जिसमें बताया था कि कर्म का सिद्धान्त धर्म को फ़लसफ़ा के आधार पर दृढ़ करता है। हम इस सिद्धान्त के सम्बन्ध में जो चाहें समझें परन्तु इसने मनुष्यों के सदाचार पर बड़ा भारी प्रभाव डाला है। यदि एक मनुष्य यह विचार करता है कि जो कुछ वह अपने इस जीवन में आपत्ति अकारण भोगता है यह सब उसके पूर्व जन्म के दुष्कर्मों का परिणाम है तो वह अपनी आपत्तियों को बड़े धैर्य के साथ सहन करता है। जिस प्रकार एक ऋणी अपने पूर्व के ऋण को वापिस करता है। इसके अतिरिक्त यदि वह यह भी जानता है कि वह इस जीवन में न केवल पुराना ऋण चुकाने के लिये आपत्ति उठाता है प्रत्युत वह इसके अतिरिक्त आगामी जीवन के लिये शुभ कर्मों का पाथेय भी संचित करता है। और इसमें इसका शुभ विचार है जो कि यदि सोचा जाय तो स्वार्थ पर आधारित नहीं है। जैसा कि उचित है। यह विश्वास कि कोई चाहे वह शुभ हो अथवा अशुभ हो व्यर्थ नहीं जा सकता। धार्मिक संसार का यह नियम कि कर्म का नाश नहीं हो सकता सत्य ज्ञान के इस नियम के अनुसार है जिसके शब्द यह है कि शक्ति का नाश नहीं हो सकता अर्थात् कोई वस्तु संसार से विनष्ट नहीं हो सकती यह अन्तिम युक्ति योरुपीयन वैज्ञानिकों के लिये एक बलवती प्रार्थना है जिनकी नूतन खोजें यह सिद्ध करती हैं कि संसार में शक्ति सदा बनी रहती है।

इन व्याख्यानों में यह ऐसे शब्द हैं जिनसे प्रकट होता है कि पुनर्जन्म का सिद्धान्त ऐसा है जिस पर पश्चिम के बहुत से लोगों का विश्वास है। जबकि यह कहा जाता है कि मनुष्यों को वह बातें स्मरण नहीं जो कि उन्होंने पूर्व जन्म में की थीं तो प्रोफ़ैसर मैक्समूलर इसका उत्तर देते हैं कि हम किस प्रकार से अपने पूर्वजन्म की बातों को स्मरण रखें जबकि हम वर्तमान जीवन में दो-तीन अथवा चार वर्षों की पहिली बातों को स्मरण नहीं कर पाते।"

वर्ड्स वर्थ नामक इंगलैंड के प्रसिद्ध कवि ने (जो १७७० से १८५० ईस्वी में हुआ) इस सिद्धान्त को इस प्रकार बताता है कि हमारी आत्मा के नक्षत्र का जो अब यहां उदय हुआ है इसका पहिले किसी और स्थान पर अस्त हो चुका है। जिसकी किरनें बहुत दूर से यहां आ रहो हैं। इस युग तक यह सर्व साधारण का विश्वास है किन्तु यह विश्वास जो इस बात पर आधार रखता है कि हमारा इस जीवन का नक्षत्र वह है। जो हमने पूर्वजन्म में बनाया था। बहुत से कानों में यह शब्द विचित्र प्रतीत होते हैं। परन्तु इंगलैंड में पुनर्जन्म सिद्धान्त की सच्चाई के फैल जाने की संभावना को देखना चाहिये। जबकि अभी तक उनको कर्म फलासफ़ी की व्याख्या अच्छी प्रकार से ज्ञात नहीं है।

(वेदान्त फ़लासफ़ी पर व्याख्यान पृष्ठ १६५ इन्डिया पत्रिका लंडन)

"कर्म के सिद्धान्त पर यह सम्मति विद्वान् प्रोफ़ैसर की है। इन दो सिद्धान्तों अर्थात् कर्म और पुनर्जन्म को एक बड़े विद्वान् ने सुदृढ़ आधार पर सुस्थिर किया है। यह भारतीयों के लिये एक बहुत ही सन्तोष प्रद सिद्धान्त है।"

(अमृत बाज़ार पत्रिका ६ अगस्त १८९४ कलकत्ता)

"सैवन प्रिंसीपल आफ़ मैन" में श्रीमती ऐनी बेसंट लिखती हैं कि :—

"यहां से पुनः आवागवन अर्थात् बार बार जन्म लेने या मनुष्य शरीर धारण करने के द्वारा पूर्णता तक पहुंचने का क्रम चल पड़ता है। और मनुष्य का प्रथम जन्म इस अवसर से प्रारंभ होकर तीसरे चक्कर को पार करके जब चौथे चक्कर के ठीक मध्य में पहुंचता है तो इस समय में नीच योनि से जितने जीव मनुष्य बन सकते हैं बन जाते हैं। इसके पश्चात् मनुष्य की संख्या अधिक नहीं होती और यहां तक जितने मनुष्य बन चुके हैं। उन्हीं में ही आवागवन अर्थात् आने जाने का क्रम जारी रहकर बार २ मनुष्य शरीर में जन्म लेकर पूर्ण मनुष्य बनता है। जब से जीव मनुष्य शरीर में प्रविष्ट होता है तब से उसकी उन्नति का ढंग बदल जाता है अर्थात् उसकी आगामी उन्नति अपने-अपने कर्म के अनुसार बारंबार जन्म लेने से होती है। और जो पद्धति इससे पूर्व की नीच योनियों में जीव की सामूहिक रीति के द्वारा होती चली आती है। वह समाप्त हो जाती है।"

थ्योसाफी के सिद्धांतानुसार मनुष्य अब पांचवें चक्कर में पहुंचा है। तथा प्रत्येक चक्कर के सात-सात भाग होते हैं। अतः जो मनुष्य जाति इस पृथिवी पर विद्यमान हैं। इस ने इन सात भागों में से चार भाग पूर्ण कर लिये हैं। और अब पांचवें में हैं। जब पांचवां चक्कर पूरा हो जायगा। तो पुनः इसी प्रकार छठा और सातवां भी पूरा करना पड़ेगा। तब मनुष्य पूर्ण होगा। जैसा कि जब से मनुष्य जाति इस पृथिवी पर प्रगट हुई है तब से बार २ जन्म लेने वाली आत्माओं की संख्या में कुछ अधिकता नहीं हुई। और उसी नियत संख्या में से किसी विशेष समय जो कुछ आत्मायें मनुष्य योनि में विद्यमान होती हैं कि जो संसार की आबादी कहलाती हैं। और शेष आत्माएं अध्यात्म अवस्था में रहती हैं। इसी प्रकार कुछ अध्यात्म अवस्था से शरीर में और शारीरिक अवस्था से अध्यात्म अवस्था में आती जाती रहती हैं संसार की गणना में न्यूनाधिकता का कारण यही है। और यह भी ज्ञात होता है कि जब किसी विशेष कारण से किसी स्थान पर मृत्यु संख्या बहुत बढ़ जाती है। तो वहां पश्चात् उत्पत्ति की संख्या भी उसी अनुपात स बढ़ जाती है। अतः प्रकाशरूप से किसी स्थान पर संसार की आबादी बढ़ती हुई दृष्टि गत होती हो तो उसका कारण यह नहीं है कि नई आत्माएं उत्पन्न होती हैं। प्रत्युत

कारण यह है कि किसी समय किसी विशेष स्थान पर अधिक जीव आध्यात्मिक अवस्था से शरीर की अवस्था में लौट कर आ जाते हैं।" (पृ० ६८ से ७० तक)

स्वर्गीय हकीम मौलवो कलन्दर अली पानीपती अपनी पुस्तक इख़लाक़े दिल पज़ीर (मन भाता सदाचार) में लिखते हैं कि नित्यतत्व उसको कहते हैं जो कदापि किसी भी कारण से विभक्त न हो सके। चेतन तत्व भी नित्यता का परिचायक है। यदि चेतनता शरीर होवे तो शरीर का अन्त विभाग है। प्रत्येक बुद्धिमान् पुरुष यह जानता है कि मकान का विभक्त होकर गिर पड़ना परिणाम है उसके संयुक्त होने का अर्थात् मकान के संयुक्त होने के कारण उसके भिन्न-भिन्न अंग-प्रत्यंग भी संयुक्त हैं जो कि शरीर विभाग के साथ ही शरीर के भिन्न-भिन्न अंग-प्रत्यंग भी विभक्त होकर अपने कारण में लीन होंगे। यदि मकान का स्वामी जीवात्मा भी शरीर अथवा शरीर का अंग माना जाय तो वह भी विभक्त हो जायगा किन्तु चेतन तत्व संयोग जन्य न होने से विभाग रहित है। जीव नित्य पदार्थ है। अतः इससे ज्ञात हुआ कि जीवात्मा कदापि जड़ शरीर नहीं हो सकता।"

तफ़सीरे कबीर में है कि शरीर का स्वभाव यह है कि जो रूप उसको क्रियात्मकरूपेण प्राप्त है। यह रूप जब तक विनष्ट न हो दूसरा रूप उसमें प्राप्त नहीं होगा। उदाहरणतः एक शरीर का रूप तिकोन है जब तक कि तिकोना (त्रिकोण) रूप उससे विनष्ट न होगा। दूसरा रूप चतुष्कोण, करवी (कोणाकार) समरूप तथा तराशा हुआ रूप कदापि उसमें प्राप्त नहीं हो सकता। एक मोम का टुकड़ा यदि प्रथम उसको चतुष्कोण अथवा त्रिकोण के रूप वाला बनाया जाय। जब तक उस में यह रूप विशेष है। दूसरा रूप उसमें कदापि न होगा। और ऐसा ही हमने इस सोम के टुकड़े पर ज़ैद की मोहर लगादी जब तक ज़ैद का नाम इस मोम खंड पर है दूसरा नाम ख़ालिद वलीद का उसमें चित्रित नहीं हो सकता। जब ज़ैद का नाम इस मोम के भाग से मिटा दिया जाय तब दूसरा नाम ख़ालिद का उसमें चित्रित हो सकता है। और प्रत्येक प्राकृतिक शरीर (पदार्थ) का ऐसा ही स्वाभाविक नियम है।

चेतनात्मा का स्वभाव इस जड़ शरीर के गुण के विरुद्ध है और उसमें एक ही बार में बहुत से रूप चित्रित कर लेने की शक्ति है। जिस समय एक बड़ी सेना को देखा। सेना के व्यक्तियों के रूप उसमें समा गए और जब रात्रि में आकाश को देखा तो असंख्य लोकों के रूप उसमें समा गए प्रत्युत ज्ञान की अधिकता चेतनात्मा के अधिक पदार्थों के रूप ज्ञानादि प्राप्त करने में सहायक होती है। अतः चेतन जीव का स्वभाव जड़ शरीर के विरुद्ध होने से जीवात्मा शरीर से भिन्न पदार्थ है।"

हकीम अरस्तू तालीस ने नवम्बर चार पुस्तक अय्यूलूजिया में लिखा है कि जिस चेतन सत्ता की यह शक्ति है कि अपने शरीर को त्याग करके लोक लोकान्तरों की यात्रा करे। निश्चय से उसमें शक्ति है कि ईश्वरीय रहस्यों को जाने तथा ईश्वर की पहिचान करे"

हकीम अफ़लातून का कथन है कि यदि शरीर से पूर्व उसका कारण विद्यमान हो तो अवश्य ही चेतनात्मा को शरीर से पूर्व वर्तमान मानना पड़ेगा। क्योंकि संयोग विभाग जन्य शरीर का प्रादुर्भाव अकारण संभव नहीं। स्पष्ट है कि जिस पदार्थ की संज्ञा किसी पदार्थ की संज्ञा पर आधारित होती है तो उस पदार्थ के अभाव से उसका अभाव भी आवश्यक हो जाता है। अतः जब चेतनात्मा का अस्तित्व शरीर पर आधारित माना जाय तो आवश्यक होगा कि शरीर के परिणामी होने के कारण आत्मा को भी परिणामी माना जाय, जबकि ऐसा कोई नहीं मानता। सबका सर्व सम्मत मत है कि चेतनात्मा शरीर के परिणामी होने से कदापी परिणामी नहीं है। प्रत्युत शरीर का अन्त मरना और

भस्मी-भूत होना है। तथा आत्मा सदैव वर्तमान रहती है। अतः ज्ञात हुआ कि आत्मा शरीर के उत्पन्न होने के कारण उत्पत्तिमान् पदार्थ नहीं है। क्योंकि आत्मा शरीर से पूर्व वर्तमान थी कि वह नित्य है। आत्मा के शरीर से सम्बन्धित होने का नाम ही उत्पत्ति है। यह लाक्षणिक उत्पत्ति है। वास्तविक नहीं। क्योंकि आत्मा काल के बन्धन से अतीत नित्य पदार्थ है।

तथा कुछ हकीमों (दार्शनिक विद्वानों) ने जीवात्मा के अनादि होने पर यह हेतु लिखा है कि यदि जीवात्मा उत्पत्तिमान पदार्थ माना जाय तो यह संयोग शून्य नहीं होगा प्रत्युत वह केवल प्राकृतिक होगा। इसलिए कि समस्त दार्शनिक विद्वान् इस बात को मानते हैं कि किसी भी काल में उत्पन्न होने वाला पदार्थ प्रकृति पर आधारित होता है। तथा वह काल की अपेक्षा रखता है। आत्मतत्व ऐसा नहीं। अतः वह अनादि पदार्थ है। यह ठीक है कि मनुष्य का शरीर प्राकृतिक वस्तु है जो जीव के साथ सम्बन्धित है तथा उसकी शक्तियों से कार्य में समर्थ होकर तद्रूप सा दिखाई देता है। यह भेद सूक्ष्म है और विशिष्ट है। प्रायः विद्वानों को भी सन्देह हो जाता है कि वह शरीर और आत्मा का भेद नहीं जानते। जिससे वह यह मानने लग गये कि जीवात्मा भी शरीर की भांति अनादि नहीं प्रत्युत उत्पन्न हुआ है। इस प्रकार के विद्वानों ने दोनों के सम्बन्ध सम्बन्धी होने का भेद न किया अतः उनसे यह बड़ी भारी भूल हुई।

अर्वाचीन विद्वान् जो यह मानते हैं कि आत्मा उत्पत्तिमान् पदार्थ है शरीर के उत्पत्तिमान् होने से। इस प्रतिज्ञा पर उन्होंने कुछ हेत्वाभास उपस्थित किये हैं जो कि वाहयात (अशुद्ध) हैं। उन सल युक्तियों में ठीक युक्ति यह होगी कि यदि जीव शरीर से पूर्व वर्तमान हों तो यह सब जीव एक होंगे या स्वरूप से अनेक। और यह दोनों प्रकार ठीक नहीं। जीवों का समूह शरीर के सम्बन्ध से पूर्व इसकारण से एक नहीं। यदि सब जीव शरीर सम्बन्धों से पूर्व एक होते तो जीवात्मा के चेतन तथा ज्ञान वान होने के कारण सब के एक मानने की अवस्था में सबको एक जैसा ज्ञान प्राप्त होता। अर्थात् यदि ज़ैद, बकर और ख़ालिद का जीव एक माना जाय तो आवश्यक है कि वह ज्ञान सबको होवे। और सब मनुष्य समान हों। ज्ञान में न कोई गुरु और न कोई शिष्य। न कोई विद्वान् हो और न कोई मूर्ख। यह बात स्पष्ट है कि यह ठीक नहीं।

और यदि समस्त जीव सम्बन्ध से पूर्व सबके सब स्वभावतः भिन्न २ लक्षणों से युक्त होकर एक दूसरे से विशिष्ट हों तो इनकी भेदक क्रिया (पृथक्ता) शरीर संबन्धों से पूर्व स्वरूपतः होगी या स्वरूपों के उपचार अथवा प्रकृति के साथ संयुक्त होने से होगी परन्तु यह तीनों बातें ठीक नहीं। क्योंकि स्वरूप से जीवों का भेद इसलिए नहीं कि जीव मात्र का स्वरूप एक सा है। सब की सत्ता है और सब चेतन हैं अतः स्वरूप (लक्षण) सबका एक है। अर्थात् स्वरूप की अनेकता नहीं। जब स्वरूप सबका एक है तो इन सबका भेदक गुण और कोई नहीं अतः स्वरूप से पृथक् २ नहीं। उपचार भी इनके स्वरूप में कोई भेद नहीं पड़ जाता। अर्थात् सबका स्वरूप एक सा ही रहता है। तीसरी बात यह कि शरीरों से पूर्व प्रकृति के परिणामों का प्रभाव जीवों पर नहीं पड़ता। क्योंकि जीव प्रकृति जन्य पदार्थ न होकर संयोग रहित हैं और नित्य हैं। तथा पृकृति के दोषों से पवित्र हैं। अतः स्वरूप से एक होते हुए भी गिनती में अनेक हैं किन्तु सबका लक्षण एक है क्योंकि स्वभाव से एक और संख्या से अनेक हैं। वह हेतु उनका सब युक्तियों से श्रेष्ठ है।"

इसमें कुछ युक्तियां चिन्तनीय हैं

प्रथम यह कि दिग्गज विद्वान् शीराज़ी "ने शरह हिकमत इशतराक़" में लिखा है कि प्रतिवादी का यह वचन कि यदि चेतनात्मा ज़ैद्, बकर, खालिद का एक होवे तो आवश्यक हो कि जिस बात को ज़ैद जाने। वह बात बकर और ख़ालिद भी जानें। यह बात नहीं मानते कि चेतनता अथवा ज्ञान से यह अभिप्राय है जो ज्ञान इन्द्रिय जन्य है तो वह प्रत्येक को ज्ञात नहीं हो सकता परन्तु जो ज्ञान इन्द्रिय जन्य नहीं उसमें हम सब जीवों का सामंजस्य न होना हम स्वीकार नहीं करते। सब जीव एक जैसे हैं इसलिए कि सब में अहंभाव है। यह अहंज्ञान डायरिक्ट है। अतः सबको अपने अस्तित्व का ज्ञान अपने आप है।

द्वितीय – यह उसका कथन कि सब मनुष्य आत्माएं एक जातीय हैं। हम स्वीकार नहीं करते। कुछ विद्वानों का यह मत है कि मनुष्यात्मायें तीन जातियों में विभक्त हैं। प्रथम जाति के जीव वह हैं जो सर्वोत्तम पद पर अवस्थित होकर सात्विक बुद्धि रखते और पवित्र कार्य करते हैं। द्वितीय जाति के लोग मध्यम और साधारण बुद्धि तथा कर्मयुक्त रहते हैं। कभी शुभ कम और कभी दुष्कर्म करते हैं। तृतीय जाति के लोग अधम जीव हैं जो मूर्ख तथा बुद्धि विहीन ज्ञान शून्य हैं और उनसे शुभ कर्म कभी नहीं होते। मनुष्यात्मायें सब की सब इन तीन प्रकारों में विभक्त हैं। मनुष्य एक जातीय नहीं और उसकी वास्तविक एकता पर अभी तक कोई युक्ति नहीं की जा सकी। क़ुरान भी इसी ओर निर्देश करता है कि फ़मिन्हुमु ज़ालिमुलिनफ़सेही व मिनहुम मुक्तसिदुन व मिन्हुम साबिकुम् बिल्खैराते बि इज़िनल्लाहे। फ़ातिर। आयत ३२ इस पवित्र आयत के अर्थ यह हैं कि मनुष्यात्मायें तीन प्रकार की हैं। एक प्रकार की वह हैं कि मूर्खता और दुराचारादि के कारण स्वयं अपने आप पर अत्याचार करती हैं। दूसरी प्रकार वह लोग हैं कि उनसे शुभाशुभ दोनों प्रकार के कर्म होते हैं। तीसरी प्रकार के वह हैं कि उनसे सर्वतः शुभकर्म ही प्रकट होते हैं।

तीसरा कारण—यह कि सब अर्वाचीन विद्वान् फरिश्तों (देवताओं) के संयोग रहित होने के सिद्धान्त को मानते हैं। तथा इस बात को भी मानते हैं कि देवता (फरिश्ते) बहुत हैं। संयोग रहित होने की युक्ति से यह भी सम्भव है कि वह बहुत न हों तथापि हम कहते हैं कि देवताओं के बहुत होने को माने तो उनका भेदक नियम अवश्य होगा और यह व्यावर्तक नियम सस्वरूप होगा अथवा औपचारिक। या प्राकतिक गुणों के कारण से होगा। देवजाति वस्तुतः एक है। स्वरूप भेद अथवा उपचार से नहीं। साथ ही देवजाति संयोग विभाग शून्य और पवित्र है। अतः प्राकृतिक गुणों से भी युक्त नहीं हो सकती। आवश्यक है कि देव गुण कदापि बहुजातिक न हों। जब कि समस्त विद्वान् तथा पैगाम्बर देवों की बहुजाति के सिद्धान्त को मानते हैं। फ़ारस के विद्वानों का यही मत है। हकीम इला को पारसी फ़जीबाद जिसको पारसी लोग पहिला पैगाम्बर कहते हैं। और उसकी पुस्तक को ईश्वरीय मानते हैं। वह कहता है कि देवता (फ़िरिश्ते) बहुत हैं और उनकी संख्या ईश्वर को ज्ञात है।

चतुर्थ कारण—यह कि हम कहते हैं मनुष्य आत्माओं को हमने एक जातीय माना और यह सब शरीर सम्बन्धों से पूर्व द्युलोक में विद्यमान थे। उनका परस्पर का भेद ज्ञान तथा गुणों के कारण से था। जैसाकि अविभक्त देवता जाति में भेद ज्ञान और मनुष्य गुणों के कारण से है।

पंचम कारण :—यह कि सब अर्वाचीन विद्वान् इस बात को मानते हैं कि चेतनात्मा शरीर के परिणामी होने से स्वयं परिणामी नहीं है। किन्तु नित्य है। अब इस विषय में इनसे प्रश्न करता हूं कि जिन चेतनात्माओं ने शरीर त्याग किया उनमें भेद के नियम क्या होंगे ? स्वरूप से भिन्नता या उपचार अथवा प्रकृति के गुणों से ?

मनुष्यात्माओं का स्वरूप एक है। स्वरूप भेद अथवा उपचार के कारण से नहीं तथा शरीर त्याग के पश्चात् यह आत्माएं प्राकृतिक परिणामों से भी रहित हैं। प्राकृतिक परिणाम भी शरीर त्याग के पश्चात् भेदक नहीं बन सकते हैं। अतः इससे आवश्यक ठहरता है कि चेतनात्माएं बहुत होती हुई भी शरीर त्याग के पश्चात् एक हो जायें। और यह बात धर्मतः तथा युक्तितः सर्वथा असत्य है। हां यह ठीक है कि जो पुनर्जन्म के सिद्धान्त पर विश्वास रखते हैं। उन पर यह प्रश्न नहीं हो सकता। वह यह कह कसते हैं कि जो जीव शरीर को त्याग करता है। वह दूसरे शरीर में संबद्ध हो जाता है। इन जीवों में भेद शरीरों के भेद के कारण से हैं। और शरीर प्राकृतिक हैं। और यह अर्वाचीन विद्वान् पुनर्जन्म सिद्धान्त को नहीं मानते अतः हम पर तो बहुत बड़ी आपत्ति हो सकती है जिसका निवारण वह कदापि नहीं कर सकते। अर्वाचीन विद्वान् जिनको यथार्थ ज्ञान तथा दर्शनशास्त्र का परिचय ही नहीं है। कहते हैं कि अशरा की न संप्रदाय के ज्ञानी विद्वानों का यह मत है कि जीवात्मा अनादि तथा नित्य है। मशाईन संप्रदाय विशेष के विद्वानों का यह मत है कि मनुष्यों की आत्माएं अब्दी अर्थात् सदैव वर्तमान रहेंगी उनका अन्त नहीं किन्तु शुरू है। क्योंकि शरीरों की उत्पत्ति के साथ आत्मा की उत्पत्ति भी होती है। मैं यह कहता हूं कि यह सिद्धान्त इनका सर्वथा असत्य है। इस सिद्धान्त के मानने वाले फ़लासफ़रों का गुरु अरस्तू तालीस है। उसने किसी अपनी पुस्तक में नहीं लिखा कि आत्मा शरीर की उत्पत्ति के साथ स्वयं भी उत्पन्न होती है। प्रत्युत उसने लिखा है कि आत्माएं शरीर संबंध से पूर्व द्यु लोक में वर्तमान थीं। उसने मेंमरेज आयूलूज्या में लिखा है कि चेतनात्माएं शरीर सम्बन्धों से पूर्व ऊपर के लोक में विद्यमान थीं। और उस लोक में भी उनके अन्तःकरण थे। किन्तु वह बौद्धिक अन्तःकरण थे। जब यह आत्माएं इस पृथिवी पर शरीर से संयुक्त हुईं। यहां भी उनके ऐन्द्रियिक करण हैं जिनसे उनको इन्द्रिय जन्य ज्ञान होता है।"

इससे स्पष्ट है कि अरस्तू इस सिद्धान्त को मानता है कि आत्माएं शरीर संबंधों से पूर्व उपरि लोकों में विद्यमान थीं। उनकी सत्ता शरीर से पूर्व थी। कोई अशारकी और मशाई विद्वान् जीवों को काल जन्य उत्पत्ति को नहीं मानता।" (इखलाके दिलपज़ीर)

डाक्टर लोईस फ़गीज़ फ़रासीसी उन लोगों से यह प्रश्न पूछते हैं जो पुनर्जन्म को नहीं मानते।

"हम संसार में क्यों आये ! हमने यहां आने की कोई प्रार्थना तो नहीं की थी। हमने उत्पन्न होने की इच्छा भी नहीं की थी। यदि हमसे पूछा जाता तो हम संसार में आने से इनकार करते। अथवा किसी और काल में उत्पन्न होने की इच्छा करते। हम इस पृथिवी के अतिरिक्त किसी और लोक में जीवन व्यतीत करने की आज्ञा मांगते। हमारी पृथिवी वस्तुतः निवास के लिए ख़राब है। हमें अच्छी नहीं लगती। पृथिवी की इस प्रकार की गति है कि ऋतु का विभाजन अच्छा नहीं हुआ। यदि हम अपने आप को गरम वस्त्रों से न ढांपें तो हम सर्दी से मर जाते। अथवा हमें सख्त गरमी जला देती। सदाचार की दृष्टि से भी मनुष्यों की बहुत गिरी हुई अवस्था है। संसार में बुराई अधिक है। बुराई की सब

स्थानों पर प्रतिष्ठा है। नेकी के साथ प्रत्येक स्थान पर दुर्व्यवहार है। यदि कोई मनुष्य अच्छा बन कर रहना चाहे तो उस पर अवश्य आपत्ति उठने की संभावना है। हमारे प्रेम से दुःख उत्पन्न होता है। यदि हम कुछ काल के लिए पिता होने का सुख प्रेम सुख और मैत्री सुख का उपभोग करते हैं तो देखते हैं कि वह प्रेम की वस्तुएं मृत्यु के कारण हमसे पृथक् हो जाती हैं। अथवा बुरे जीवन के ऐक्सीडेंटों के कारण वह हमसे पृथक् हो जाती हैं। जो अंग-प्रत्यंग हमें इस जीवन में कार्य के लिये दिये जाते हैं। वह बहुत बेढंगे और रोगों के आधीन होते हैं। हम पृथिवी में गढ़े हुए हैं। और हमारा बड़ा भारी भाग बड़ी थकावट के पश्चात् हिल सकता है। यदि कुछ अच्छे शरीर धारी व्यक्ति हैं। जिनको उत्तम स्वास्थ्य उपलब्ध है। तो भी संसार में ऐसे लोग बहुत हैं जो सर्वथा निर्बल, पागल, गूँगे, बहरे, अंधे, दीवाने आदि हैं। मेरा भाई सुन्दर युवक है। मैं कुरूप निर्बल शरीर से युक्त और कुबड़ा हूं। तथा हम एक ही माता की संतान हैं। कुछ लोग बहुत बड़े धनवानों के घर उत्पन्न होते हैं। और कुछ लोग बहुत ही निर्धन घराने में उत्पन्न होते हैं। उपकार न मानने वाले इस वसुंधरा पर मैं एक निर्धन मज़दूर के स्थान पर प्रभावशाली राज कुमार और लार्ड क्यों नहीं बन गया मैं योरुप और फ्रांस में क्यों उत्पन्न हुआ हूं। जहाँ की सभ्यता और कारोबारी से जीवन कल्याणमय है। तथा देर तक सुख सामग्री जुटी रहती है। अफ्रीका के जलते हुए भू भाग पर क्यों नहीं उत्पन्न हुआ जहां कि पशु का सा मुख, काली त्वचा और रेशम की भांति बाल होते। और बड़ी तीव्र वायु तथा समाज के पाशविक व्यवहार की बड़ी तकलीफों, कष्टों में बुरा जीवन व्यतीत करता और फिर भी अपने आप को सुखी मानता हमने ऐसी कोई बात नहीं की कि जिससे हम दोनों को पृथिवी पर भिन्न स्थान मिलता। मेरा कोई अधिकार नहीं है कि मुझे कोई सुविधा मिलती। और न कुछ उसका पाप कि उसे बुरी अवस्था में रखा गया। इन सब भयानक अवस्थाओं के न्यूनाधिक विभाजन का क्या कारण है? जो किसी पर बहुत हैं और किसी पर थोड़ी। जो कि अच्छे देशों में रहते हैं। वह इस सुविधा के योग्य क्यों समझे गये? जबकि उनके और भाई संसार के और भागों में रुदन व क्रन्दन कर रहे हैं। कुछ की बुद्धि तीव्र होती है। तथा उन्हें प्रत्येक प्रकार का ज्ञान दिया गया है। और कुछ को इसके विपरीत अवस्था प्राप्त हुई है। ज्ञान शक्ति तथा बुद्धि से सर्वथा रहित हैं। किसी को स्मर्ण शक्ति होती ही नहीं। जीवन के कठिन मार्गों में वह पग-पग पर डिगमगाते हैं। उनके न्यून साधन तथा उनकी न्यून शक्ति उन पर प्रत्येक प्रकार की आपत्ति का कारण होती है। वह किसी बात में सफल नहीं होते। तथा ऐसा प्रतीत होता है कि भाग्य उनको अपने बड़े-बड़े कष्टों के सहन करने के लिए चुनता है। ऐसे भी जीव हैं जिनका सारा जीवन उत्पन्न होने से मरण पर्यन्त दुःखों और कष्टों का एक विस्तृत दुःख दायक कथानक होता है। उन्होंने क्या पाप किया है? वह धरती माता के पृष्ठ पर क्यों हैं? उन्होंने उत्पन्न होने की प्रार्थना तो नहीं की थी यदि वह स्वतन्त्र होते तो प्रार्थना करते। यह कड़वा घूंट उनके मुख से हटाया जाता। वह यहां अपनी इच्छा के विरुद्ध बलात् नीचे पड़े हुए हैं। इतना तो ठीक है कि कुछ लोग अत्यंत निराशता की अवस्था में अपने जीवन तन्तु को तोड़ देते हैं। वह अपने ही हाथों से स्वजीवन को बरबाद कर देते हैं। क्योंकि बड़े भारी कष्ट उनके लिये असह्य बन जाते हैं।

इन जीवों को जिन्होंने कोई ऐसा कार्य नहीं किया। जिस के वह योग्य हैं। और जिन्होंने इसकी इच्छा नहीं की थी। ख़ुदा का निष्पाप लोगों को कष्ट देने वाला जीवन अन्याय और अत्याचार पूर्ण शरारत है। किन्तु ईश्वर न अन्यायी और न शरारती है। वह सच्चा न्यायकारी और परोपकारी है। अतः मनुष्यों की भिन्न-भिन्न भू भागों में विद्यमानता और धरती पर सुख दुःख की न्यूनाधिकता के

विभाजन के सिद्धान्त की समस्या सुलझ नहीं सकती। यदि मेरे दर्शकों में से कोई भी व्यक्ति ऐसा सिद्धान्त या फलसफा अथवा मत जिससे कि यह समस्त कठिनाईयां दूर हो सकें। बता सकता है तो मैं इस पुस्तक को फाड़ डालूंगा पराजित होकर हार मान लूंगा।

यदि इसके विरुद्ध आप मनुष्यों के जीवन और बार-बार जन्म लेने को अर्थात् एक ही जीव का बहुत से शरीरों में आवागवन मानें तो प्रत्येक बात बड़ी महता और बड़ी पवित्रता से वर्णन हो सकती है। हमारा संसार के विशिष्ट भागों में उत्पन्न होना अंधा-धुन्ध दैव का प्रकोप अथवा आकस्मिक घटना नहीं है। यह केवल उस बड़ी यात्रा का एक स्टेशन है। जो कि संसार में हम कर रहे हैं।"

(दी आफ़्टरडैत्थ अ० १५ पृ० २०२ से २०५ तक)

"पुनः वही डाक्टर जी लिखते हैं किः—

यदि पुनर्जन्म नहीं होता। यदि हमारा जीवन असंबद्ध प्रलाप अथवा आकस्मिक घटना है। जो पुनः नहीं होगा। जैसा कि सामयिक फलासफी और साधारण मतों का विश्वास है तो उससे परिणाम निकलता है कि जब शरीर बनता है। उसके साथ ही जीव बनता है। प्रत्येक मनुष्य के उत्पन्न होते पर उसके शरीर को शोभा देने के लिए एक जीव का बनना आवश्यक है तो हम पूछते हैं कि वह सब जीवात्मा एक ही प्रकार के क्यों नहीं? जब मनुष्यों के शरीर समान हैं तो जीवों की बौद्धिक और कर्म-शक्तियों में इतना भेद क्यों है? हम पूछते हैं कि वह सब जीवात्मा एक ही प्रकार के क्यों नहीं? जब मनुष्यों के शरीर समान हैं तो जीवों की बौद्धिक और कर्म शक्तियों में इतना भेद क्यों है? हम पूछते हैं कि कुदरती झुकाव ऐसे क्यों भिन्न और प्रबल हैं कि बहु प्रायः शिक्षा, सभ्यता और निग्रह के प्रयत्नों को सफल नहीं होने देते। बच्चों में जो भाव शुभाशुभ कर्मों के हैं वह कहां से आते हैं? वह भाव जो अभिमान और नीचता के हैं। जो उनके कुल और समाज के पदानुसार नहीं हैं किस प्रकार उत्पन्न हो हो जाते हैं? कुछ लड़के दुःख के स्मरण से क्यों प्रसन्न होते हैं? तथा पशुओं को दुःख देकर क्यों दुःखी नहीं होते हैं? जब कि कुछ को दूसरे पशुओं के कष्टों को देखकर बहुत ही दया आ जाती है। और पीला मुख हो जाता है। तथा काँपने लगते हैं। यदि सब मनुष्यों के जीव उस एक ही ढांचा के ढले हुए हों तो शिक्षा उन पर समान प्रभाव क्यों नहीं डालती? दो भाई एक ही श्रेणी और एक ही स्कूल में पढ़ते हैं। उनके एक से अध्यापक हैं और उनके सम्मुख एक से उदाहरण हैं। ऐसा होने पर भी उन पाठों से एक को उत्तम लाभ प्राप्त होता है। और वह गति, शिक्षा, चाल चलन में अद्वितीय बन जाता है। इसके विरुद्ध इस का भाई निरा कौदन मूर्ख और अखड़ रह जाता है। यदि इन दोनों भूमियों में एक से बीज बोए जाने पर भिन्न-भिन्न फल उत्पन्न होता है। तो इसका यह कारण नहीं है कि वह भूमि जिसमें यह बीज बोया गया। अर्थात् जीव प्रत्येक अपनी अवस्था में पृथक्-पृथक् है। नैसर्गिक स्वभाव और भाव अपने आपको प्रारंभिक आयु से प्रगट कर देते हैं। नैसर्गिक भावों में यह भेद न होता। यदि जीवों की एक ही बनावट होती। पशुओं के शरीर और वृक्षों के पत्ते एक ही प्रकार के बनाए जाते हैं। क्योंकि हमें इनमें बहुत ही न्यून भेद प्रतीत होता है। एक मनुष्य का पिंजर सदैव दूसरे मनुष्य के पिंजर की भांति होता है। हृदय, आमाशय, पसलियां और अन्तड़ियां प्रत्येक मनुष्य में वैसी ही होती हैं। जीवों में और ही बात है। उनका प्रत्येक मनुष्य में भेद है। हम प्रतिदिन सुनते हैं कि अमुक बालक में गणित की ओर रुचि है। अमुक की राग में और अमुक की चित्रकला में रुचि है। कुछ में बुराई अत्याचार और जुर्म करने के भाव अति प्रबल होते हैं। तथा यह भाव उन के प्रारम्भिक जीवन में प्रगट होने लगते हैं।

यह नैसर्गिक भाव बड़ी दूर की सीमा तक उन्नति कर जाते हैं। इसके लिए हमारे पास बहुत बड़े ऐतिहासिक प्रमाण हैं। और वह बहुत बार उपस्थित किये जा चुके हैं! बारह वर्ष की आयु में पीसकल ज्योमेट्री के बड़े भाग को ज्ञात कर चुका था। जबकि उसे गणित विद्या का कुछ भी ज्ञान नहीं था। वह अपने कमरे के फ़र्श पर अकलीदस के प्रथम चरण की रेखाएं खेंच लेता था। तथा उनके पारस्परिक संबंध को ठीक ठीक जांच लेता था। अर्थात् अपने लिए उस कम्टो ज्योमेट्री बना लेता था। हमारे पास भी ग्यामेलो चरवाहे का एक उदाहरण है। जो कि पांच वर्ष की आयु में एक गणित की मशीन की भांति हिसाब लगाता था। इसी प्रकार मोज़रत का एक और उदाहरण है। जो चार वर्ष की आयु में उंगलियों से एक राग का बाजा बना रहा था। तथा रात्रि के समय सुरों को बजाया करता था। अर्थात् रागका ड्रामा। त्रीसावलेनी बड़ी बुद्धिमता और कारीगरी से वायोलिन नाम का बाजा बजाती थी। जिस पर बैलट कहता था कि उसने उत्पन्न होने से पूर्व अवश्य बाजा बजाया होगा। रेम पारडट का हमारे पास एक और उदाहरण है। जो कि वह लिखने पढ़ने और स्कूल में जाने से पूर्व ही एक अध्यापक की भान्ति नक़शा खेंचा करता था। प्रत्येक मनुष्य इन उदाहरणों को जानता है। परन्तु विचार करना चाहिये कि यह अपवाद नहीं हैं। यह एक साधारण बात है। जो इनमें इतनो बढ़कर थो। कि जिस कारण से लोगों का ध्यान इनकी ओर आकर्षित हुआ। कुछ लड़कों में विशेष भावों के बढ़कर होने का सिद्धान्त साधारण फलासफ़ी से जो यह बताती है कि प्रत्येक बालक में नई आत्मा उत्पन्न होती है। समस्या का समाधान नहीं हो सकता। इसके विपरीत यह मन्तव्य आवागमन से बहुत सरलता से सुलझ जाता है। वास्तव में यह एक प्रकार का यह आवश्यक परिणाम है। इससे प्रत्येक बात समझ में आ सकती है। शर्त यह है कि इस जीवन से पूर्व का जीवन भी माना जाय। मनुष्य इस जीवन में उन संस्कारों को लाता है। जो कि गत जन्मों में उसने संचित किए हैं। इस पर यह प्रश्न हो सकता है कि यह एक विचित्र बात है कि यह भाव गत जन्मों का परिणाम हों। जिसका हमें कुछ भी स्मरण नहीं। हम इस प्रश्न का इस प्रकार उत्तर देते हैं कि यह सर्वथा संभव है कि हमें सब घटनाएं जो घटित हुई भूल जाएं। तथा हमारो आत्मा में ऐसी शक्तियां शेष रहें जो विशेष और बड़ी बातों पर आधार नहीं रखतीं। जबकि यह शक्तियां बहुत ही प्रबल हों। हम उन बूढ़े वृद्धों को देखते हैं जिनको अपने जीवन को समस्त घटनाएं भूल गईं। तथा जिनको अपने समय के इतिहास की कुछ भी स्मृति नहीं रही। और न उनको अपनी हिस्ट्री स्मरण है। पुनरपि उनकी शक्तियां और भावनाएं सर्वथा लुप्त नहीं हो गईं।

लीतस अपनी वृद्धावस्था में अपनी पुस्तकों को पढ़कर प्रसन्न होता था। और भूल गया था कि मैं ही इनका लेखक हूं। बार २ कहा करता था कि क्या सुन्दर और मन मोहक हैं। क्या ही अच्छा होता कि मैं ऐसा लिखता। संक्षेपतः मनुष्यों की भिन्न २ भावनाएं, नैसर्गिक के शक्तियां तथा प्रतिदिन के स्वभाव पुनर्जन्म के सिद्धान्त मानने से सरलता से सुलझ सकते हैं। यदि हम इस सिद्धान्त को मानना छोड़ दें तो हमें ईश्वर पर अन्याय का दोष लगाना पड़ेगा। कि उसने कुछ लोगों को अच्छी शक्तियां दी हैं जो दूसरों को नहीं दीं। तथा बुद्धि और सभ्यता का विभाजन भी न्यूनाधिक मानना होगा जो कि सदाचार और जीवन की गति का आधार हैं।

हमें यह युक्ति समस्त आपत्तियों से अधिक बलवती प्रतीत होती है। क्योंकि यह कल्पना मात्र नहीं है। किन्तु घटना चक्र पर आधारित है। अर्थात् मनुष्यों को शक्तियों तथा उनकी बुद्धि और सभ्यता की न्यूनाधिकता की समस्या जिसका वर्तमान फ़लासफ़ी के बिचार के अनुसार समाधान नहीं

हो पाता केवल पुनर्जन्म सिद्धान्त के मानने से ही उसका समाधान संभव है। अन्यथा नहीं। और यही हमारी बहस का आधार है। (पृ० २१२ से २१८ तक)

आचार संबंधी संसार के ठीक रहने के लिये इस पुनर्जन्म सिद्धान्त का मानना आवश्यक है। सांसारिक जीवन की फ़िज़ीकल अवस्थाएं घृणा योग्य हैं। मनुष्य बलि के लिए है। हर प्रकार के कष्टों के लिए बेबस है। बाह्य कारणों के भय से प्रतिसमय भयभीत है। सर्दी गरमी की अधिकता से डरता है। निर्बल व रुग्ण है। संसार में नंगा आता है। जलवायु के प्रभाव से अपने आपको बचाने के लिए नैसर्गिक हथियारों से सुसज्जित होने के कारण असुरक्षित है। यदि योरुप और अमरीका के एक भाग में सभ्यता की उन्नति की लहर ने धनीवर्ग के लिए सुविधा के समान जुटा दिए हैं। तो भी इन ही देशों में निर्धनों के कष्टों की गणना भी नहीं हो सकती। एक बड़े भारी जनसमूह के लिए जो एशिया, अमरीका, ओशीन्या के ऊंचे नीचे भागों में रहते हैं। जीवन निरन्तर दुसाध्य है। मनुष्य के जीने की अवस्था सदाचार दृष्टि से भी ऐसी ही बुरी है। जैसी कि शारीरिक रूपेण। इस बात को मान लिया गया है कि सच्ची प्रसन्नता इस संसार में असम्भव है। धरती अश्रुधारा की वेदी है। यह ठीक है कि मनुष्य का भाग्य कष्टों के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। उसको अपने प्रेम और अपनी पूर्ण न हो सकने वाली इच्छाओं से दुःख होता है। अपनी क्षणिक इच्छाओं की पूर्ति के कृत्रिम साधनों में प्रतिक्षण धकेला जा रहा है। हैरान व परेशान किया जा रहा है। तथा अगण्य रुकावटों से गिराया जा रहा है प्रसन्नता निषेधात्मक अवस्था है। बहुत थोड़ी प्रसन्नता के क्षण जो कभी २ प्राप्त होते हैं। वह अतिकष्टों से परिवर्तित होते रहते हैं। प्रेम की भावनाएं हैं कि हम प्रिय इच्छाओं को गंवा कर उनके लिए रोवें। हमारे पिता हैं। माताएं हैं। लड़के हैं हम उनको मरते हुए देखें तो असम्भव है कि ऐसी अयथार्थ अवस्था ठीक हो। क्रम, सहयोग, समता प्राकृतिक जगत् में प्रधान हैं। और यह आवश्यक हैं कि वह आचार संसार में भी पाये जायें।

डी० सी० कैन्ट्स और बी बैन्ट्स ने इन बातों को सिद्ध किया है। कि मनुष्य की चिति-शक्ति इन विचारों को सुरक्षित रखती है। जो कि आन्तरिक हैं। और वह विचार जो हम अपनी उत्पत्ति के समय साथ लाते हैं। यह बात सत्य है। हमारे अपने समय में स्काटलैंड के एक दार्शनिक विद्वान् ड्यूगल्ड स्टोवोट ने डी० सी० कैन्ट्स की थ्योरी को एक अच्छे वाक्य में बांधा है। तथा इस बात को सिद्ध किया है कि एक ही आन्तरिक विचार जो मृत्यु के उपरान्त मनुष्यों की आत्मा में होता है वह कारण और कार्य के नियम का है। वह नियम जो कि हमें यह बताता है कि बिना कारण के कार्य नहीं होता। जिससे हेतु का प्रारम्भ होता है। कारण कार्य के आन्तरिक नियम बार २ जन्मों अर्थात् पुनर्जन्म के सिद्धान्त से बड़े अच्छे प्रकार से सिद्ध हो सकते हैं। वस्तुतः वह इस सिद्धान्त के परिणाम हैं। आत्म जो कि मनुष्य अथवा पशु के शरीर से पूर्व विद्यमान थी। उन संस्कारों को जो पूर्व जन्मों से उत्पन्न होते हैं। स्थिर रखती है। यह सत्य है कि जो कर्म हमने पूर्व जन्मों में किये थे। वह भूल जाते हैं। परन्तु कारण कार्य का क्रम जो विशेष २ घटनाओं पर आधारित नहीं है यह जीवन के अनुभव का साधारण परिणाम है। और वह जीवात्मा में शरीरान्त प्राप्ति के समय अवश्य रहता है।"

(दी आफ़्टर डैत्थ पृ० २२२ से २२३ तक)

—०—

पंचमाध्याय

बाईबल से पुनर्जन्म सिद्धि

संख्या १—नबीलूत की स्त्री का वर्णन । "और उसकी स्त्री नें पीछे मुड़कर देखा। जिससे वह नमक का खंबा (स्तम्भ)बन गई ।"

(विस्तार देखो तौरात—उत्पत्ति १६/२६ आगे पीछे की आयतें)

(२) "सो गधी ने परमेश्वर के दूत को अपने हाथ में तलवार खेंचे हुए मार्ग में खड़ा देखा। तब गधी मार्ग पृथक् खेत में फिर गई । उस मार्ग से फिरने के लिए बलग्राम नें गधी को लाठी से मारा। तब परमेश्वर नें गधी का मुख खोला। और उसनें बलआम से कहा कि मैंनें तेरा क्या बिगाड़ा है तूनें मुझे तीन बार क्यों मारा।"

(तौराय गिनती अध्याय २२ आयत ३०-३१)

(३) खुदा बन्द ने सांप शैतान और स्त्री हव्वा की जाति के मध्य शत्रुता डाली।

तौरात-उत्पत्ति अध्याय ३ आयत १४-१५)

(४)नूह के तूफ़ान का वर्णन करते हुए एक ईसाई विद्वान् लिखते हैं कि:—

"यहूदी विद्वान् कहते हैं कि उस युग के पशु भी दुराचारी थे। अर्थात् अपनी जाति से भिन्न जाति के साथ संयोग सम्बंध रखते थे। अतः ईश्वर नें उन पर दुःख की मार डाली।"

(तफ़सीरे अहमदी पृ० ४६६)

बादशाह (महाराजा) बनूक़दनज़र के हतिहास में लिखा है कि—

"यह सारी आपत्ति बादशाह बनूक़दनज़र पर पड़ी। जब एक वर्ष बीता। तो वह बाबल राज-महल में टहलता था। कि उसने कहा क्या वह बड़ी बाबल नहीं। जिसे मेंनें अपने यौवन काल में पूर्ण पुरुषार्थ में बनाया था। जिससे वह राजधानी बने। और मेरा तेज़ तथा प्रभाव बढ़े। महाराजा के मुख से ज्यूं ही यह शब्द निकले तो आकाशवाणी हुई कि हे राजा बनूदनज़र ! तुझे आज्ञा दी जाती है कि राज्य तुझसे जाता रहा और हम तुझे मनुष्यों में से निकाल देंगे। मैदान के पशुओं के साथ तेरा निवास होगा। तुझे बैल की भांति घास खिलावेंगे। तथा सात युग तुझ पर व्यतीत होंगे। जिससे तू समझे कि परमेश्वर ही मनुष्यों के राज्यों पर शासन करता है। जिसे चाहे उसे राज्य देता है। उसी बनूक़दनज़र राजा पर यह बात बीती। वह मनुष्यों में से निकाला गया। बैलों की भांति घास खाता रहा उसका शरीर अंतरिक्ष की ओस से तर हुआ। यहां तक कि उसके बाल गिधों के परों की भांति उसके नाखून पक्षियों के पंजों की भांति बढ़ गये निश्चित काल के व्यतीत हो जाने के पश्चात बनूक़द-नज़र ने आकाश की ओर अपनी आंखें उठाई और उसको बुद्धि आई उसने ईश्वर को धन्यवाद किया तथा उसकी स्तुति प्रार्थना की जो नित्य अमृत पद का धारण कर्ता है। जिसका शासन नित्य रहता है।"

जबर नं० १२१ में है कि:—

(अरबी) अर्रब्बो यहफ़ुजो ख़रूजक व दखूलक मिनल् आने इलद्दहरे -
(अज़ किताबुल्मक़द्दस अरबी न्यूयार्क प्रैस)

(फ़ारसी खुदावंद ख़रूजो दख़ूल अज़ हाल ता अब्दुल आबाद हिरासत खा़रुदकर्द ।

(अज़ ज़बूर मतबुआ १८३० ईस्वी कलकत्ता मिशन प्रैस पृ० २००)

(फ़ारसी अनुवाद) खुदावंद ख़ुरूजो दुख़ूलतरा अज़ हाल ता अब्दुल् आबाद वज़ंगाह खा़हद दाश्त । (अज़ किताबुल् मुकद्दस फ़ारसी १८३५ ईस्वी मत बुआ आडम्बरा जिल्द अव्वल पृ० १६६)

(उर्दू) खुदावंद तेरे जाने आने में इस वकत से ले के अबद् तक तेरा हाफ़िज़ रहेगा ।

(अज़ ज़बूर १८६७ ईस्वी मतबुआ मिर्ज़ापुर पृ० ७६४)

(हिन्दी) ईश्वर तेरे आने जाने में इस समय से लेकर सदैव तक तेरी रक्षा करेगा ।

हनूक अर्थात् एलियानसबी का कई बार आना प्रथम हनूक के शरीर में ।

"हनूक की आयु ३६५ वर्ष की हुई और हनूक ईश्वर के साथ २ चलता था और छिप गया । इस लिए कि ईश्वर ने उसे ले लिया ।"

(उत्पत्ति (तौरात) ५/२३-२४ मसीह से ३३१७ वर्ष पूर्व)

द्वितीय बार । एलियाह तबसी के शरीर में ।

"तब एलियाह तबसी ने जो जिल्आद के निवासियों में से था । अख़ीअब से कहा कि खुदावंद इस्राईल का खुदा जिसके सम्मुख खड़ा हूं । जीवित है । इन वर्षों में न ओस पड़ेगी । न वृष्टि होगी । परन्तु मेरी वाणी के अनुसार ।"

(सलातीन (राजा) नंबर १ अध्याय १७ आयत १ मसीह से ६१० वर्ष पूर्व)

तृतीय बार । " उस समय ईश्वर के फ़रिश्ता ने तसबी एलियाह को आज्ञा दी कि उठ और शाह समरूब के दूत से मिलने जा ।" पुनः उसी वर्ष एक रथ और आग्नेय अश्व ने मध्य आकर (अल् यसअ् और एलियाह) इन दोनों को पृथक् कर दिया । और एलियाह बगोले में बैठकर आसमान पर जाता रहा ।"

(२ सलातीन २/११ मसीह से ८६६ वर्ष पूर्व)

चतुर्थ बार । यहया नबी प्रसिद्ध नाम योहन्ना (ज़कर्या के पुत्र) के शरीर में उत्पन्न होना ।

"देखो खुदावन्द के बड़े और भयानक दिन के आने से पूर्व मैं एलियाह नबी को तुम्हारे पास भेजूंगा ।"

(मलाकी पुस्तक ४/५ मसीह से ३१७ वर्ष पूर्व)

मसीह कहता है "अल्यास (एलियाह) जो आने वाला था। यही है।" (युहन्ना)

"चाहो तो मानों। जिसके कान सुनने के हूं। सुने। (मती ११/१४)

तब उसके शिष्यों ने उससे पूछा कि फ़कीह (वह विद्वान् जो शरीयत अथवा अध्यात्म वाद के ज्ञाता हैं) क्यों कहते हैं कि प्रथम एलिपाह का आना आवश्यक है। यसूअ् (ईसा मसीह) ने उन्हें उत्तर दिया कि एलियाह पहिले आयेगा। तब सब वस्तुओं का प्रवन्ध करेगा। मैं तुमसे सत्य कहता हूं। कि एलियाह तो आ चुका। परन्तु उन्होंने उसको नहीं पहचाना। प्रत्युत जो चाहा उसके साथ किया। इस प्रकार आदम पुत्र (ईसा मसीह) भी दुःख उठावेगा। तब शिष्यों ने समझा। उसने उनसे यूहन्ना बपतिस्मा (धर्म की दीक्षा) देने वाले के संबंध में कहा।" (मती १७/१०–१२) मरकस ८/१३ में भी इसका वर्णन है।

ईसाई ईश्वर का पुनर्जन्म के चक्कर में आना

"यसूअ् (ईसा मसीह) ने नासिर गलील से आ कर यूहन्ना के हाथ से बपतिस्मा पाया (धर्म की दीक्षा ली। और ज्यूँही वह पानी से बाहिर आया। उसने आकाश को खुला और पवित्रात्मा को कबूतर की भान्ति अपने ऊपर उतरते देखा।" (मरकस १/१०)

यूहन्ना ने यह कह कर गवाही दी कि "मैंने पवित्रात्मा को आकाश से उतरते देखा और वह उस पर ठहरी।" (यूहन्ना १/३२)

"और ऐसा हुआ कि जब सब लोग बपतिस्मा पा चुके और यसूअ (ईसा) भी बपतिस्मा पा कर प्रार्थना कर रहा था तो आसमान खुल गया तथा पवित्रात्मा शरीर धारण करके कबूतर के रूप में उस पर उतरी।" (लूका ३/२२)

"आरम्भ में कलाम (वचन) था। और कलाम (वचन) खुदा के साथ था। और कलाम (वचन) खुदा था। और यही प्रारम्भ में खुदा के साथ था। सब वस्तुएं उससे विद्यमान हुईं।" (यूहन्ना १/१-३)

ईसाई कहते हैं कि कलाम (वचन) का अभिप्राय यहाँ प्रभु यसूअ् मसीह है। कलाम (वचन) सशरीर हुआ और वह तेज तथा सत्य से भरपूर होके हमारे मध्य में रहा और हमने उसका तेज देखा। जैसा कि पिता के इकलौते (पुत्र) का तेज। यूहन्ना ने उसके संबंध में गवाही दी। (यूहन्ना १/१४)

ईसाई हृदय से विश्वास रखते हैं और पिता पुत्र तथा पवित्रात्मा को पृथक्-पृथक् और एक परमेश्वर समझते हैं अर्थात् उनका विश्वास है। पिता सर्व शक्तिमान्, पुत्र सर्व शक्तिमान् और पवित्रात्मा सर्व शक्तिमान् है। उनके तसलीस (त्रिनेटी) सिद्धान्त के यह तीन अंग हैं। दूसरा ईश्वर अर्थात् मसीह जो अनादि से ईश्वर के साथ था पापियों को मुक्ति देने के लिये पवित्र अवस्था से निकल कर मरियम (यूसुफ़ की स्त्री) के गर्भ में आया और पूरे ६ मास गर्भ में रह कर उत्पन्न हुआ अपने कर्मों के अनुसार

अथवा हीरोदेस के अत्याचार के कारण शम्मस तब्रेज़ व मन्सूर की भान्ति स्वयं ईश्वर होने को घोषणा करता हुआ सूली पर लटकाया गया। जैसा कि विस्तार से चारों इन्जीलों वर्णित है। अतः ईसाई और यहूदी क्रियात्मक रूपेण आत्मा के पुनर्जन्म सिद्धान्त पर विश्वास रखते हैं। प्रत्युत ईसाईयों और मुसलमानों का यह भी विश्वास है कि मसीह पुनः एक बार संसार में आयेगा। उपदेश करेगा। कई मनुष्य स्वयं मसीह अथवा उसकी भान्ति होने को घोषणा भी कर रहे हैं। और कर चुके हैं। अतः जितने व्यक्तियों ने इस सिद्धान्त को इस प्रकार माना। चाहे वह कोई हों। वह सच्चे हृदय से आवागवन सिद्धान्त की सच्चाई पर विश्वास रखते हैं। जब वह ऐसे निराधार और अप्रामाणिक मज़हबी अन्ध विश्वासों को मानते हैं तो पुनः वह इस पवित्र सिद्धान्त से कैसे इन्कार कर सकते हैं कि जिससे ईश्वर के न्याय का प्रबल प्रमाण मिलता है। अतः इससे किसी प्रकार इन्कार नहीं किया जा सकता।

इतिहासज्ञ ऐडवर्ड गिबन साहिब लिखते हैं कि जब से यूनान में फ़लसफ़ा का प्रचलन हुआ था। यहूदियों ने आत्मा के पुनर्जन्म और नित्य अनादि तथा अजर अमर होने के सिद्धान्त को मान लिया।

(तारीखे रूतुल्कुब्रा अध्याय ४८)

—०—

षष्ठाध्याय

कुरआन से पुनर्जन्म सिद्धि

अब हम इस विषय का कुर्‌आन से अन्वेषण करते हैं।

(१) व लकद् अलिम्तुमुल्लज़ीनाअ् तदौ मिन्कुम्
फिस्सब्ते फ़कुल्नालहुम क़ूनूकिरदतज्
खासेईन। (बकर)

और जान चुके हो जिन्होंने तुम में से ज़्यादती की सप्ताह के दिन में। तो हम ने कहा। हो जाओ बन्दर फटकारे।

फारसी भाष्य में लिखा है कि दाऊद नबी के समय में एलियाह नगर में यहूदी अपनी सीमा से बाहिर हो गये और खुदा की आज्ञा को न मानकर मछलियों का शिकार किया। तब खुदा ने उनको बन्दर होने की आज्ञा दी और वह बन्दर हो गये (देखो तफ़सीरे हुसैनी फ़ारसी जिल्द प्रथम पृ० १२ नवल किशोर) तथा (तफ़सीर बैज़ावी अनबी पृ० ५९ जिल्द १ नवल किशोर)

(२) फ़लम्मा अ़तौ अम्मानुहू अन्हो कुलना
लहुम कूनू कि़रदतन् खासेईन।
(आ़राफ़) अअ़राफ़

फिर जब बढ़ने लगे, जिस काम से रोका था। हमने कहा उसके लिए कि हो जाओ बन्दर फटकारे।

तफ़सीरे हुसैनी में लिखा है कि :—

जब उनको निषेधाज्ञा दी गई कि मछली का शिकार शनिवार के दिन न करो। वह न माने और शिकार किया। निषेध करने वालों ने शिकार करने वालों से मिलना छोड़ दिया और मध्य में दीवार खड़ी कर दी। एक दिन प्रातःकाल उठे। दूसरों की आवाज सुनी। दीवार से देखा हर घर में बन्दर था। अपने मनुष्यों को जानकर उनके चरणों में सिर धरने लगे और रोने लगे। अन्त में बुरी अवस्था हुई और तीन दिन में मर गये। (जिल्द प्रथम पृ० २२४)

इस पर अब्दुल्क़ादिर देहलवी लिखते हैं कि "मुहम्मद साहिब ने यह वृत्तान्त उस जाति को सुनाया है कि यह सब इन पर भी होगा। हदीस में लिखा है कि इस जाति (इसलाम) में भी कुछ लोग बन्दर और सुअर (वराह) हो जायेंगे। हे ईश्वर! मार्ग भ्रष्ठता से बचाना।

(टिप्पणी पृ० १७० नवल किशोर)

तफसीर (भाष्य) अल्लामा (प्रसिद्ध विद्वान्) अबी मसऊद अरबी में भी ऐसा ही लिखा है। और अधिक केवल यह लिखा है कि वह सात हज़ार थे। जिसमें से तीसरा भाग बन्दर और सूकर हो गये। (देखो पृ० ४५ मतबूआ कुसतुन्तुनिया)

तफ़सीर कबीर में इमाम फ़ख़रुद्दीन राज़ी लिखते हैं मि इब्ने अब्बास से रिवायत है कि वह बन्दर और सूकर हो गये। (जिल्द ४ पृ० ४५४)

तथा मआलिमुत्तन्ज़ील जिल्द २ पृ० ३२ में भी ऐसा ही लिखा है।

(३) कुल हल उनब्बेउकुम बशरिम्मिन् ज़ालिक मसूबतन् इन्दल्लाहे। मल्ल अन हुल्लाहो व ग़ज़बा अलैहे व जअला मिन्हुमुल्क़िरदता वल्ख़नाज़ीरा व अबदत्तागूत। उलाएक शर्रुम्मकानन्व अज़ल्लो अन्सवाइस्सबीले। (माएदा)

कह क्या खबर दूं मैं तुम को साथ बड़ी बुराई के इससे फल प्राप्त करने में ईश्वर के। वह लोग कि लानत (फटकार) की खुदा ने उन पर और गज़ब (क्रोध) किया ऊपर उनके और किए उनमें बंदर और सूकर जिन्होंने पूजा तागूत (बुत अथवा शैतान) को यह लोग बहुत बुरे हैं स्थान में और बहुत बहके हुए हैं सीधे मार्ग से।

तफ़सीरे हुसैनी फ़ारसी में लिखा है कि इन्होंने ईसा को नबी मानने से इन्कार कर दिया था जिससे उनको बन्दर और सूकर बनना पड़ा। (जिल्द १ पृ० १५१)

ऐसा ही मआलमुत्तन्ज़ील पृ० २८१ जिल्द १ में है। मौलवी मुहम्मद ज़ाहिर साहिब कहते हैं कि (ईसा का वर्णन) सच्चे खुदा ने प्रेरणा की कि मैं इन्कार करने वालों और ईश्वरीय उपकारों को न मानने वालों पर अज़ाब (दुःख) भेजता हूं। हज़रत ईसा ने उन लोगों को सूचित किया। प्रातःकाल जो अपने बिछौनों से उठे तो चार सौ अथवा सात सौ व्यक्ति सूकर (वराह) के रूप में हो गये और गली कूचों में मारे-मारे फिरते थे तथा गन्दगी (मैला) खाते थे। हजरत ईसा के सम्मुख आ कर सिर धरती पर टेक देते थे। आंखों से अश्रुधारा छोड़ते थे। परन्तु पश्चात्ताप का समय निकल चुका था। पश्चात् के पश्चात्ताप ने लाभ न पहुंचाया। और तीन दिन के पश्चात् नरक में चले गये।

नऊज़ो बिल्लाहे मिन्ग़ज़बिल्लाहे। ईश्वर के क्रोध से पनाह मांगता हूं।

(रौज़तुलअसफ़िया १८९० ई० पृ० १०४)

दूसरे स्थान पर भाष्य में इस आयत पर लिखा है कि—

क़ाला ईसब्नो मर्यमल्लाहुम्मा रब्बना अन्ज़िल अलैनामइदतम्मिनस्समाए तकूनो ल ना ईदल्लि अव्वलिना व आखिरेना व आयतम्मिन्क वर्ज़ुक़्नाख़ैरु र्राज़िक़ीना। कालल्लाहो इन्नी मुनज्ज़िलोहा अलैकुम् फ़मन्यकफ़ुर ब अद मिन्कुम् फ़इन्नी ओअज्ज़िबोहू अज़बल्लाओ अज्ज़ेबोहू अहदम्मिनल् आलमीना। (माएदा)

बोला ईसा मर्यम का बेटा, हे ईश्वर हमारे पालन हार! उतार हम पर भोजन आसमान से कि वह दिन ईद रहे हमारे पहिलों और पिछलों को और निशानी तेरी ओर से और रोज़ी दे हमको और तू है अच्छा रोज़ी देने वाला।

कहा अल्लाह ने मैं उतारूंगा वह खाना (भोजन) तुम पर। पुन: जो कोई तुम में कृतघ्नता करे इस उतारे पीछे तो मैं उसको वह अज़ाब (दुःख) दूंगा जो न दूंगा किसी को जगत् में। (माएदा)

कहते हैं वह खाना (भोजन) चालीस दिन तक उतरा। पुन: कुछ ने ईश्वर का उपकार न माना और कृतघ्नता की। तो आज्ञा हुई कि फ़क़ीर और रोगी खावें। कृतघ्नों में से लगभग अस्सी व्यक्ति सूकर और बन्दर हो गए। यह अज़ाब यहूदियों में हुआ था इत्यादि।

तफ़सीरे हुसैनी में भी ऐसा ही लिखा है।

तफ़सीर बेज़ावी अरबी में लिखा है कि खुदा के चमत्कारों से इन्कार करने के पश्चात् पापों में दो जातियां पकड़ी गईं। उनमें से कुछ को बन्दर बना दिया गया और यह असहाबे सब्त अर्थात् शंबाके दिन मछली का शिकार करने वाले थे। दूसरे लोग सूअर (सूकर) बनाये गये। यह आकाश से भोज़न गिरता देख कर भी ईसा मसीह से ईश्वरीय चमत्कारों का इन्कार करते रहे। इनको सूअर बना दिया गया।" (पृ० २३५ जिल्द १ सन् १८८२)

इस पर तफ़सीर कबीर में इमाम फ़खरुद्दीन राज़ी लिखते हैं कि :—

"निश्चित है कि खुदा ने (व जअ़ल मिन्हुमुल्क़िरदता वल्ख़नाज़ीरा व अ़उदनागूता अर्थात् और बनाए उनमें से कुछ बन्दर और सूकर और पूजा उन्होंने शैतान को)।

इस आयत के अनुसार बन्दर और सूकर बनाए। भाष्यकारों ने इस संबन्ध में कहा है कि सप्ताह के दिन मछली का शिकार करने वालों को बन्दर बनाया गया और ईसा के ज़माने में आकाशीय भोजन के चमत्कार न मानने वाले काफ़रों को सूअर बनाया अर्थात् इनका मसख़ हुआ। और यह लोग ईश्वरीय आज्ञा से खड़े ही खड़े मनुष्यों से बन्दर और सुअर बन गए थे। (जिल्द ३ पृ० ६२६)

तारीख़े तिबरी में है कि:—

"जान लो कि वृद्धिदाता सर्व शक्तिमान् परमेश्वर ने मनुष्यों के एक गिरोह को जो कि बनी-इसराईल में से था बन्दर बना दिया। और भोजन सम्बन्धी चमत्कार का खंडन करने वाले गिरोह को सुअर बना दिया। पहिला गिरोह दाऊद नबी की जाति से था। जिसने सुलेमान के पीछे शंबा (शनि-वार) के दिन ईश्वरीय आज्ञा के विरुद्ध मछली का शिकार किया। इस कारण से ख़ुदा ने इनको मसख़ करके मनुष्यों से बन्दर बना दिया।

(पृ० २४५ जिल्द दो सन् १२९२ ईसवी नवलकिशोर)

(४) व इज़ अख़ज़ रब्बोक मिन्बनी आदम मिन्ज़ुहूरेहिम् ज़ुर्रिय्यतहुम् व अशहदहुम् क़ालू बला शहिद्ना अन् तक़ूले यौमल्क़ियामते इन्ना कुन्ना अ़न हाज़ा ग़ाफ़िलीन ॥ (अअ़राफ़)

और जिस समय निकाली तेरे रब ने आदम के पुत्रों को पीठ में से उनकी सन्तान। और वचन लिया उनसे उनकी आत्मा पर। कि क्या मैं नहीं हूं रब तुम्हारा। वह बोले कि हम मानते हैं। कभो कहो क्यामत के दिन कि हमको इसकी सूचना न थी?

"खुदा ने हज़रत आदम की पीठ से उनकी सन्तान और उनये उनकी सन्तान निकाली सबसे अपनी शासन सत्ता का वचन लिया पुन: पीठ में प्रविष्ट किया। इससे प्रयोजन यह है कि ख़ुदा के

मानने में प्रत्येक व्यक्ति आप ही उत्तर दायी है। पिता का अनुसरण नहीं करना चाहिए। यदि एक ईश्वर के स्थान पर पिता पितामह आदि अनेक मानें तो पुत्र ऐसा न करें।

यदि कोई सन्देह करे कि वह वचन तो स्मरण नहीं रहा। पुनः उस वचन से क्या लाभ ? तो यूं समझे कि उसका चिह्न हृदय में तो है तथा वाणी पर प्रसिद्ध हो रहा है। कि सबका उत्पादक ईश्वर है। सारा संसार विश्वास करता है। और जो कोई न करे अथवा अनेक ईश्वर माने। तो वह अपनी हीन बुद्धि के कारण से है। अतः इससे मनुष्य आप ही झूठा होता है। और इसका उत्तरदायित्व उसी पर ही है

तफ़सीरे हुसैनी में लिखा है कि—

स्मरण करो हे मुहम्मद सुलअम ! जब आदम की सन्तान तथा उनकी सन्तानों से वचन लेकर उनको एक दूसरे का गवाह किया गया था। जब ईश्वर ने उनसे कहा कि क्या मैं तुम्हारा रब (पालक) नहीं हूं ? हाकिम अबू अब्दुल्लाह ने इब्ने अब्बास को रिवायत लिखी है कि हज़रत मुहम्मद ने कहा कि खुदा ने आदम की सन्तान से वचन लिया था। यह वचन अरफ़ात (मक्का से ९ कोस पर एक मैदान) के समीप सब्त की वादी में लिया गया था। यह भी कहा गया है कि यह वचन दहीना में लिया गया था। यह स्थान हिंद (भारत वर्ष) में है। यह वचन आदम के स्वर्ग के निकलने के पश्चात् हिन्द में उनको सन्तान से लिया गया। मदारक में है कि सब भाष्यकर कहते हैं कि आदम की उत्पत्ति के पश्चात् जब कि वह अभी स्वर्ग में दाखिल न किया गया था तब उसकी पीठ से सन्तान निकालकर यह वचन लिया गया। यह बहिश्त के आसमान में ही लिया गया जिसकी चौड़ाई तीस हज़ार वर्ष के मार्ग की थी। खुदा ने आदम की सन्तानों को उसकी पीठ बाहिर निकाला। उनको जीवन, ज्ञान और बोलने को शक्ति दी और उनको अपने रब होने की बात कही उन सबने स्वीकार किया और कहा कि हम सब अपने वचन के गवाह हैं। सबने हां कहा। कि आप ही हमारे रब हैं। स्वयं खुदा उसके सब फ़रिश्ते सूचना देते हैं कि आदम की सन्तान के इस वचन के हम सब गवाह हैं।"

(तफसीरे हुसैनी जिल्द १ पृ० २२६)

तफसीरे हुसैनी के इसी पृष्ठ पर एक फ़ारसी का छन्द भी लिखा है जिसका अभिप्राय यह है कि उस परमेश्वर के मध्य और कुछ नहीं। जो कुछ है वह उससे है। और नहीं है। अतः स्वयं ही अलस्तो शब्द कहकर पूछा कि क्या मैं तुम्हारा रब नहीं ? और स्वयं ही उत्तर दिया कि बला अर्थात् हां आप ही हमारे रब हैं

(पृ० २२६)

हदीस में लिखा है कि अबूदरवा ने रसूल से रिवायत की है कि खुदा ने आदम को उत्पन्न किया पस खुदा ने उसके दाहिने (दक्षिण) कन्धे पर मारा। तब सफ़ेद सन्तान छोटी कीड़ियों के रूप में उत्पन्न हुई। पुनः बाड (वाम) कन्धे पर मारा को काली सन्तान उत्पन्न हुई। मानो कि वह नारकी हैं। मैं खुदा भय नहीं खाता हूं कि किसी को स्वर्ग में भेजूं और न भय खाता हूं कि किसी को नरक में भेजूं।

इस परमिश्कात फ़ारसी में लिखा है कि—

"अबू दरवा ने रसूल से रिवायत की है कि आंहज़रत ने कहा कि खुदा ने आदम को उत्पन्न किया। जिस समय उसको उत्पन्न किया। पुनः खुदा ने अपनी कुदरत के हाथ से मारा। अथवा फ़रिश्ते को आज्ञा दी कि आदम के दक्षिण स्कंध को मारे। तब ऐसा करने पर श्वेत सन्तान मानो कि वह छोटी-छोटी कीड़ियां थीं। बाहिर आईं। पुनः वाम स्कंध को मारा। तो कृष्ण सन्तान छोटी २ कीड़ियों के रूप में उत्पन्न हुई। मानो कि उंगलियां स्याही में हैं। पश्चात् कहा कि जो दक्षिण ओर के हैं वह स्वर्ग में जायेंगे। मैं भय नहीं खाता हूं कि इनके लिए उनके कर्म करने से पूर्व ही इनके स्वर्ग जाने की आज्ञा दूं। मैं ही सर्व शक्तिमान् और सबका स्वामी हूं जो कुछ चाहता हूं करता हूं। और कहा कि बाम ओर के लोग नरकाग्नि में जायेंगे। क्योंकि मैं किसी से भयभीत नहीं हूं कि इनके लिए नरक जाने की आज्ञा उनके कर्म करने से पूर्व ही दे रहा हूं। मैं सर्व शक्तिमान् और सबका अधिपति हूं। जो कुछ चाहता हूं करता हूं। सबका पालन सर्जनहार जगदीश्वर अपेक्षा रहित है और सर्व शक्तिमान् है। जो चाहता है। करता है। और खुदा ने कहा कि मैं जिसको चाहता हूं स्वर्ग पहुंचाता हूं। और जिसको चाहता हूं। नरक में डालता हूं। जो कुछ किसी के लिए चाहता हूं। भय नहीं खाता। कोई मनुष्य इतनी शक्ति को नहीं पहुंचा जो कहे कि क्या और क्यों करते हो!"

(मिश्कात जिल्द १ पृ० ११९)

इब्ने अब्बास ने पैगम्बर से रिवायत की है कि खुदा ने आदम की पीठ से उत्पन्न हुई आदम की सन्तान से वचन लिया था। पहिले आदम की पीठ से उन सबको निकाला।

"काला अलस्तो बिरब्बे कुम"=खुदा ने कहा (पूछा) क्या मैं तुम्हारा रब्ब नहीं हूं? "कालू बला शहिद्ना"=सब कहने लगे। हां हम सब गवाही देते हैं कि आप ही हमारे रब्ब हैं। "व हुवअला-कुल्ले शैइन् क़दीर"=और यह ईश्वर ही सब वस्तुओं पर कुदरत (समर्थ) रखता है।

इस हर मिश्कात (फ़ारसी) में लिखा है कि खुदा ने वचन प्राप्त किया सन्तान से जो बुआदम की पीठ से बाहिर आईं नो अ़मान के मध्य अर्थात् मैदादे अ़रफ़ा के निकट। जबकि खुदा ने उन सबको आदम की पीठ की हड्डी से बाहिर निकाला। और आदम के सम्मुख लाया कि चींटियों की भान्ति थे। पश्चात् उनके साथ बात की। सामने खुदा ने कहा कि क्या मैं तुम्हारा रब (पालन हार) नहीं हूं! सबने कहा कि हां आप हमारे पालन हार हैं। हम सब गवाही देते हैं। कि तू ही हमारा पालनहार रब्ब है यह बात चीत करना सुलैमान च्योंटी की बात करने के अनुसार है। और वह परमेश्वर सब बात कर सकता है। (पृ०१२० जिल्द १)

मौलवी मुहम्मद ताहिर अपनी पुस्तक रौज़तुल असफ़िया में लिखते हैं कि—

हज़रत आदम सदा कअ़बा को हज्ज के लिए जाया करते थे। एक बार अरफ़ात नामी पर्वत पर सो गये और खुदा ने उनकी पीठ से सब सन्तान जो क़यामत तक उत्पन्न होगी उसी समय पैदा की। सौभाग्यशाली लोगों को सीधी ओर तथा दूर्भाग्य वालों को उलटी ओर किया और उन सबको ईश्वरीय आज्ञा हुई कि "अलस्तो बिरब्बे कुम्" क्या मैं नहीं हूं पालन हार तुम्हारा ? "कालू बला" सबने कहा हां तू ही रब्ब हमारा है। खुदा ने उनके मान लेने और वचन देने पर गवाही फ़रिश्तों से लिखवा कर हजरुल् असवद (काले पत्थर) में अमानत रखी। इसीलिए हज़रत मुस्तफ़ा से रिवायत है कि जो कोई हज्ज करेगा तो हज़रुल असवद (काला पत्थर) उसकी गवाही देगा।

(मतबुआ मुस्तफ़ाई लाहौर १८९० ईस्वी)

इसी प्रकार वचन ग्रहण का सिद्धान्त तफ़सीरे अबूमसऊद में भी लिखा है और इमाम फ़ख़रुद्दीन राज़ी ने भी अपनी तफ़सीरे कबीर में ऐसा ही लिखा है। (जिल्द चार पृ० ४९१)

(५) व मा नहनो बिमसबूक़ीना अ़ला अन् नुबद्दिला अम्सालकुम् व नुन्शे अकुम् फ़ीमालातअ़लमून। व लक़द अ़लि म्तुमुन्निशातल् ऊला फ़लौला तज़क्करून। (वाक़िआ)

और हम इस बात से बेबस नहीं कि बदल दें तुमको भान्ति तुम्हारी। और पैदा करें तुमको दोबारा इस रंग रूप में। कि जिसको इस समय नहीं जानते हो। और निश्चित हमारी जान ली तुमने पहिली उत्पत्ति। अतः क्यों शिक्षा नहीं लेते।

तफ़सीरे हुसैनी फ़ारसी में इस आयात पर लिखा है कि:—

किसी की हम पर पेश नहीं जाती इस बात के लिए कि हम बदल दें तुम को तुम्हारी भांति। अर्थात् तुम्हें मार दें और दूसरों को ले आवें। तथा हम पैदा कर दे दूसरी बार तुमको निचली योनियों में कि जिनको वह नहीं जानते हैं। काफिरों को नीच योनियों में और मोमिनों को ऊंची योनियों में पैदा करदें। तुमने जान ली पहिली पैदायश अतः तुम याद क्यों नहीं करते ?

(पृ० ३७४ जिल्द २)

मुहम्मद साहिब अपनी एक हदीस में जो तफ़सीरे अज़ीज़ी में लिखी है। उसमें सदैव के पुनर्जन्म का वर्णन करते हैं कि:—

"इन्नकुम् खलक़तुम् लिल्अब्दे व इन्नकुम् तन्तक़िलूनामिन् दारिन् इला दारिन्"

निश्चय है कि तुम किये गये हो सदैव के लिये और निश्चय है कि तुम इन्तक़ाल अर्थात् कूच करते हो एक संसार से दूसरे संसार की ओर और तुम सदैव इसी अवस्था में रहोगे और कूच किया करोगे।

(६) इन्नल्लज़ीन कफरू बि आयातेना सौफ़ नुसलीहिम् नारन् कुल्लमा नज़िजत् जुलूदोहुम् बद्दल्नाहुम् जुलूदन् ग़ैरहा लियज़ूक़ुल् अज़ाबा इन्नलाह काना अज़ीज़न हकीमा। (निसाअ़)

जिन्होंने कुफ़्र किया हमारी आयतों से उनको हम आग में डालेंगे। और जब गल (जल) जायेंगे शरीर उनके। हत उनके शरीरों के बदले में दूसरे शरीर उनको देवेंगे। ताकि चखते रहें अ़ज़ाब (दुखों की मार) निश्चय खदा प्यारा और हिम्मत वाला है।

तफ़सीरे हुसैनी में हैं कि "यह ठीक है कि जो मनुष्य सच्चाई को छिपाते हैं और उसके लिए युक्ति तथा हदीस, कुरानी आयात अथवा नबी के चमत्कारों से हुज्जत बाज़ी करते हैं उनको हम आग में डालेंगे और वह आग पका देगी या जला देगी उनके शरीरों को तब हम उनके शरीरों को और शरीरों से बदल कर आग से जलाते जायेंगे। यह शरीर परिवर्तन प्रत्येक घड़ी सौ बार होगा और हसन बसरी ने लिखा है कि प्रत्येक दिन-रात में सत्तर हज़ार बार शरीर परिवर्तित करके जलाया जायगा। (पृ० १११)

(७) वमा मिन् दाबतिन् फिल् अर्जे व ला ताएरिन् यतीरो बि जनाहैहे इल्लाउममुन् अम्सालुकुम मा फर्रत्ना फ़िल्किताबे मिन् शैइन सुम्मा इला रब्बेहिम् योहशरून्। (अनआम)

और नहीं कोई चलने वाला बीच ज़मीन के और न कोई पक्षी जो उड़े अपने दो भुजाओं के साथ परन्तु यह सब जातियां थीं तुम्हारी भांति। नहीं कम की हमने बीच किताब के कुछ चीज़। पुनः अपने पालनहार की ओर इकठे जावेंगे।

तफ़सीरे हुसैनी में है कि कोई मनुष्य पशु पक्षी ऐसा नहीं। परन्तु यह सब तुम्हारी भांति जातियां थीं। जीवन, मृत्यु पुनर्जीवन ईश्वर की स्तुति प्रार्थनादि कोई ऐसी बात नहीं जो लोहे महफ़ूज़ में न लिखी हो सब ऊंची नीची बातें उसमें लिखी हैं अतः पालन हार परमेश्वर की ओर न्याय के लिए सब जातियों को जाना होगा।

इससे अग्रिम आयत में मनुस्मृति के अनुसार स्पष्ट लिखा है कि जो जातियां सत्य से विमुख होती हैं और सन्मार्ग पर नहीं चलतीं। उनको हमने इस प्रकार अर्थात् भिन्न-भिन्न योनियों में डाल कर अन्धकार में रखा है। वह आयत यह है :—

वल्लज़ीन कज्ज़बूबिआयातेना सुम्मुँव्व बुक्मुन् फ़िज़्ज़ुलुमाते मन्यशा अल्लाहो युज़्लिल्हो व मन्यशा यज् अल्हो अ्लो सिरातिल्मुस्तक़ीम। (अन्आम)

और जिन लोगों ने हमारी निशानियों (चमत्कारों) को असत्य समझा। वह बहरे और गूँगे हैं। तथा अविद्या के अंधेरे में हैं। खुदा जिस को चाहता है मार्ग भ्रष्ट करता है और जिसको चाहता है। यथार्थ मार्ग दिखाता है।

तफ़सीरे कबीर में प्रथम तो इमाम फख़रुद्दीन ने प्रायः भाष्यों और हदीसों के प्रमाणों से यह बताने का यत्न किया है कि "पशु ईश्वर की स्तुति प्रार्थना उपासना में इसी प्रकार संलग्न हैं जिस प्रकार मनुष्य। अर्थात् वह अच्छी प्रकार एकेश्वर वाद को मान्यता देते हैं। उसकी उपासना करते हैं। और क़्यामत के दिन उनको भी कर्मों का फल मिलेगा। मनुष्यों की भान्ति उनका हिसाब होगा। उनकी ओर भी रसूल भेजे गये हैं जैसे मनुष्यों की ओर। अतः वह रसूलों की जातियां हैं मनुष्यों की भान्ति। पुनः मोर, सूकर, हुदहुद और कीड़ो के बहुत से उदाहरण दिये हैं।"

(जिल्द ४ पृ० ५७ विस्तार देखो तफ़सीर कबीर मतबुआ कुस्तुन्तुन्या १८९४ ईस्वी)

तफ़सीरे हुसैनी में भी लिखा है कि दाऊद नबी के कथनानुसार पक्षी आदि भी उपासना करते हैं। कि सब श्रोताओं को उनके शब्दों तथा अक्षरों का अभिप्राय ज्ञात होता है। ईश्वर की लीला में यह विचित्र नहीं है। (जिल्द २ पृ० ५८)

(८) फ़ख़्रुज इन्नक मिनस्साग़िरीन। (आराफ़)

(ऐ शैतान !) तू स्वर्ग से निकल जा। निश्चित तू घाटे वालों में से है।

तफ़सीर हुसैनी में है कि तू फ़रिश्ते पन के रूप से बाहिर हो जा। और फ़रिश्तों के मध्य में मत रह। अतः ईश्वर ने उसके रूप को बुरे रूप से परिवर्तित कर दिया। (पृ० १९६ जिल्द १)

लजअ्ल्नाहो रजुलन् (अन् आम)

"हर आईना मुतमसल गरदानीदेम जिब्राईलरा बसूरते आदमी यानी बसूरते वहयुल्कलबी मुतमसल मे साज़ेम। (तफ़सीरे हुसैनी पृ० १६५)

तफ़सीरे कबीर (अरबी) में भी है कि :—

रसूल ने कहा है कि जिब्राईल को वहीउल्कलबी के रूप में और शैतान को शैख़ नजदी के रूप में देखा ।

(६) व यक़ूलूना सब् अतो व सामिनोहुम् । (कहफ़)

और कहते हैं कि वह सात हैं और आठवां उनका कुत्ता है । इस पर कुरआन अनुवादक सअ़दी कहता है कि —

सगे असहावे कहफ़ रूज़ेचंद ।
पैनेकां गिरफ़्त मरदुम शुद ।।

इस पर विद्वान् मौलवी मुहम्मद हादीअ़ली साहिब फ़रमाते हैं :—

सात मनुष्य असहावे कहफ़ (गुफ़ावाले) और आठवां कुत्ता दक्यानूस बादशाह के भय से भाग कर गुफ़ा में जा छिपे । ईश्वर क़्यामत के दिन कुत्ते को इनके अनुसरण के कारण स्वर्ग में बलअ़म बाऊ़र के रूप में (जो मूसा के समय में पूर्ण पुरुष था और अपनी नफ़सानी शरारतों के कारण अन्ततः काफ़िर और मुरतद हो गया था) पहुंचागयो तथा बलअ़म को कुत्ते के शरीर में नरक में (डालेगा) (हाशिया गुलिस्तां पृ० १४ मतबुआ १८७६)

सूरते आराफ़ में कुरान् के लेखक ने भी बलअ़म बाऊ़र को "फ़मिस्लेही कमस्लिल्कल्बे" कि उसका उदाहरण कुत्ते की भान्ति है । ऐसा लिखा है ।

(विस्तार देखो तफ़सीरे हुसैनी पृ० २२७ जिल्द १)

सूरतुल्बक़र में वर्णित हारूत और मारूत के संबंध में तफसीरे हुसैनी में लिखा है कि :—

इस नाम के २ फ़रिश्ते हैं । खुदा ने कहा कि यह काम के वश हो गये । खुदा ने इनको मनुष्यों जैसा नफ़्स दिया और लोगों पर राज्य करने के लिए पृथिवी पर भेजा और यह पृथिवी पर आकर एक जोहरा नाम की स्त्री पर आसक्त हो गए । और शराब पीने के कारण हत्या और मूर्तिपूजा का उपक्रम किया । खुदा ने इनको आसमान पर चढ़ने का निषेध कर दिया और इसी लोक में इन पर अज़ाब (दुःख) नियत किया । जो अभी तक बाबल के कुएं में उलटे लटके हुए दुःखी हो रहे हैं । (पृ० १७)

इस पर मौलवी रूमी लिखता है कि :—

जब एक स्त्री बुरे कर्मों के कारण पीले मुख की बनी तो ख़ुदा ने उसे मसख़ (शरीर परिवर्तित) करके ज़ोहरा अर्थात् शुक्र नाम का तारा बना दिया ।

(११) कैफ़ा तकफरून बिल्लाहे (बक़र)

किस प्रकार से काफ़िर हो ऐसे ख़ुदा से जिसने जब कि तुम मरे हुए थे । फिर जीवित किया तुम को, पुनः मारेगा तुमको, पुनः जीवित करेगा तुमको, पुनः उसकी ओर फिराए जाओगे अर्थात् मुक्ति पाओगे ।

इससे क्रमानुसार जन्म-मरण पुनर्जन्म की सिद्धि स्पष्ट है ।

इन्नस्सफ़ा वल्मरवता मिन् शआ़रिल्लाहे फ़मन् हज्जल्बैता व अतमरा फ़ला जुनाह अलैहे अन्यत-व्वफ़िबिहिमा । (बकर)

सफ़ा और मख त निशान (चमत्कार) हैं खुदा के, जो कोई हज्ज करे खुदा के घर का, अथवा ज़ियारत (दर्शन) करे तो उसको पाप नहीं इन दोनों की परिक्रमा में।

"तारीखे अंब्या" नामक पुस्तक में लिखा है कि काबा के बुतों (मूर्तियों) में से एक बुत नाएला और दूसरा असनाफ़ का था। हज़रत ने फ़रमाया कि असनाफ़ बिन उमर जरहम जाति में एक पुरुष था और इसी जाति की एक स्त्री बिन्त सहील नामक थी। उन दोनों ने शैतान के वशीभूत होकर दुराचार किया था। और खुदा सर्व शक्तिमान् ने उनको इस पाप के बदले पत्थर के बुतों (मूर्तियों) से बदलकर निश्चल बना दिया था।" (पृ० ३५६)

"कशफ़ुल्लुग़ात" (कोष) में है कि गोयन्द कि एशा हर दो ज़ना करदा बूदन्द। हक्कतआला एशान ए मसख़ कर्द। (पृ० ५६५)

कहते हैं कि इन दोनों ने दुराचार किया था। खुदा ने इनको मसख कर दिया। बदल दिया। अल्लमलल वन्नहल शहरस्तानी पृ० ११९ में भी ऐसा ही वर्णन है।

कुछ रिवायतों (कथानकों) में आया है कि यह दोनों बुत कुरैश जाति के दो विशेष व्यक्ति थे। एक का नाम असनाफ़ बिन उमर (उमर का बेटा) दूसरे का नाम नाएला बिन्त सहील (सहील की बेटी) था जब उन्होंने दुराचार किया तो पत्थर बन गये। उमर बिन इसहाक़ ने उनको उठाकर सफा पर रख दिया था। (तफ़सीरे बेज़ावी (अरबी) में टिप्पणी)।

आज़िमुत्तफ़ासीर में है कि इब्ने कसीर इब्ने इसहाक से कहते हैं कि असनाफ़ और नाएला दो व्यक्ति थे। जिन्होंने ज़ना किया। कुछ ने कहा है इसका विचार किया था जिससे उनके रूप मसख हो कर (बदलकर) पत्थर बन गए थे। क़ुरैश ने इन दोनों को वहां से उठाकर काबा के सामने लौगों को शिक्षा के लिये रख दिया था। धीरे-धीरे एक समय के पश्चात् लोग उन्हें पूजा के योग्य समझ कर पूजने लगे और उस स्थान से उठाकर सफा और मरवा पर (दो पहाड़ियों) पर ले जाकर रख दिया। (तफ़सीरे इब्बने कसीर)

(१३) ला तहसबन्नल्लज़ीन कुतिल फ़ी सबीलिल्लाहे अम्वातन्। (अ़मरान)

मत जानो उनको मरा हुआ जो कि खुदा के मार्ग में मारे गए हैं।

तफसीरे हुसैनी में है कि :—

हज़रत रसूल ने अपने सहाबा (साथियों) से कहा कि जो तुम्हारे भाई बन्धु ओहुद के युद्ध में मारे गये थे। खुदा ने इनको हरे बालों वाले पक्षियों के शरीरों में स्थान दिया। जो स्वर्ग की प्रदक्षिणा करते रहते हैं। और स्वर्ग में तूबा नामी वृक्ष की टहनियों पर घौंसला बनाते हैं। और स्वर्ग की नहर से पानी पीते हैं। (जिल्द १ पृ० ८९)

(१४) नहनो खलक़्नाहुम् व शदद्ना
असॣणेहुम् व इजा शेअ्ना बदद्लना
अम्सालहुम् तब्दीला। (दहर)

हमने पैदा किया उनको और दृढ़ किया उनकी उत्पत्ति को और जब चाहें बदल दें उनको उनकी भान्ति बदलना। तफसीरे हुसैनी में है अर्थात् इनको दूसरी उत्पत्ति (पुनर्जन्म) में इसी रूप की भान्ति अथवा बुरे रूप में बदल दें। (पृ० ३४२)

रौज़ तुस्सफा जिल्द १ में लिखा है कि अल्यास अदरीस का रूप धारण कर चुका है।······· सर्व शक्तिमान् ख़ुदा की यह शक्ति है कि एक रूप से दूसरे रूप में बदल कर पुनः मनष्यों में भेज दे।

(तोहफा में से पृ० २६)

(१५) यौमा युन्फ़िख़ो फ़स्सूरे फ़तनून अफ़वाजन्। (नबा)

जिस दिन फूंका जाए नरसिंगा (शंख) पस आओ फ़ौज फ़ौज।

इमाम सालबी ने लिखा है कि हज़रत मुहम्मद रसूल से कियामत के दिन उठने वाले जन-समूहों के संबंध में पूछा गया तो उन्होंने कहा कि जब क़यामत होगी और लोग क़बरों से उठेंगे तो मेरी उम्मत में (इसलाम मत) से कुछ लोगों के यह गुण प्रकट् होंगे।

प्रथम बन्दरों के गुण वाले होंगे। द्वितीय सूकर के गुणों पर होंगे। तृतीय सिर झुकाए हुये कि इनको नरक में ले जाया जायगा। चतुर्थ अंधे। पंचम गूंगे डोरे। षष्ठ जिह्वा को चबाते हूंगे तथा उनको अपनी जिहवाओं पर सामर्थ्य नहीं होगा कि वह बोल सकें। इनके मुख से लार टपकती होगी। और क़यामत में उठने वालों को इनसे घृणा होगी। सप्तम हाथ पांव कटे हुए। सप्तम आग की सूलियों पर लठके हुये। नवम दुर्गन्ध युक्त दशम आग के वस्त्रों को पहने हुये होंगे। और इनके शरीरों से दुर्गन्ध युक्त तेल चू रहा होगा, चुगली करने वाले बन्दरों के गुणों से युक्त होंगे, हरामख़ोर सूकर की भान्ति होंगे लज्जा से सिर झुकाये सूद खाने वाले होंगे। गूंगे और डोरे अत्याचारी होंगे कि अपने कुकर्मों से पछता रहे होंगे। जिह्वा को चबाने वाले वह विद्वान् होंगे जिनके आचार तथा उच्चार में भेद होगा। जो कहते कुछ हैं करते कुछ हैं। हाथ और पांव कटे हुए अपने सहयोगियों को अकारण कष्ट देने वाले लोग होंगे। अभिमानी लोग आग की सूलियों पर लटके हूंगे। कामी लोगों के शरीरों से दुर्गन्धो की लपटें निकलेंगी। इत्यादि।

(तफसोरे हुसैनी फारसी जिल्द २ पृ० ४४५)

तफ़सीरे कबीर अरबी में इमाम फखरुद्दीन राज़ी ने भी ऐसा ही लिखा है।

मिशकात की एक हदीस में लिखा है कि रसूल फ़रमाते हैं कि मेरी उम्मत में होगा पृथिवी में धंस जाना और रूप बदल जाना आदि।

तिरमज़ी नें कहा है कि यह हदीस सर्वथा ठीक है।

(मिशकात अरबी जिल्द १ फ़सल ३ पृ० ११७)

हदीस जामे तिमरज़ी में लिखा है कि खुदा कुछ लोगों को सूकर और बन्दर बना देगा।

(मरतज़वी देहली प्रैस पृ० १४)

मदारिजे नबुव्वत फ़ारसी में लिखा है कि रसूल ने फरमाया कि मैं पवित्र व्यक्तियों की पीठों से पवित्र माताओं के पैरों में पड़ता चला आया हूं। (पृ० ६ जिल्द २)

ऐसा ही रौज़तुल्अहबाब में लिखा है।

मिशकात शरीफ में लिखा है कि :—

अबू हुरैरा से रिवायत है कि रसूल ने कहा कि हज़रत इबराहीम क़यामत में अपने पिता आज़र से मिलेंगे। आजर के मुख पर कालिमा होगी। और वह दुःखी तथा चिन्तित होंगे। उनको इबराहीम कहेंगे कि मैंने आपको नहीं कहा था कि मेरा इन्कार न कर। तब इबराहीम से पिता कहेगा कि मैं आज आज के दिन तुम से इन्कार नहीं करूंगा अर्थात् मेरी सिफारिश करो। इस पर इबराहीम कहेंगे कि हे मेरे ईश्वर निश्चय से तूने मुझे वचन दिया था कि क़यामत के दिन तुझे ज़लील न करूंगा। मेरे पिता के अपमान से और कौन सा बड़ा अपमान होगा। कि वह आपकी दया से दूर है। खुदा कहेगा कि मैंने स्वर्ग काफ़िरों पर हराम किया है। पुनः इबराहीम को कहा जायगा कि देख तेरे पांव के नीचे क्या वस्तु है। तब इबराहीम अपने पांव के नीचे देखेंगे तो आज़र मिट्टी और गोबर से लिबड़ा होगा और उसके पांव पकड़े जायेंगे। तथा वह नरक में डाला जायगा। हाथिया पर टिप्पणी लिखी है कि उसका मसक़ अर्थात् रूप परिवर्तित होगा।

मिशकात अरबी व फारसी जिल्द ४ पृ० ३९१)

—०—

सप्तमाध्याय

पुनर्जन्म पर इसलामी विद्वानों की सम्मतियां

अबी अल्फ़तहुल् इमाम मुहम्मद बिन अब्दुलकरीम शहरस्तानी अपनी पुस्तक अलमलल वन्नहल में इसलाम के भिन्न २ संप्रदायों का वर्णन करते हुए करते हैं कि—

कीसान्या का संप्रदाय :—यह कोसान हज़रत अली का गुलाम था। और कुछ कहते हैं कि वह मुहम्मद बिन हनीफ़ा का शिष्य था। उसके शिष्य कहते थे कि वह मरने के पश्चात् पुनर्जन्म तथा रूप बदलना और इस लोक में वापिस आना मानता था। (पृ० ८३)

हांशमी संप्रदाय :—इस संप्रदाय के लोग अबी हाशम बिन मुहम्मद बिन हनीफ़ा को मानते हैं जो अबदुल्लाह बिन मुआविया बिन अबदुल्लाह जअफ़र बिन अबी तालिब के संप्रदाय से था। इन का मत है कि आत्माएं एक शरीर से दूसरे शरीर में परिवर्तित होती रहती हैं। तथा सुख दुख मिलना इन शरीरों से होता है। चाहे मनुष्य शरीर में चाहे पशुओं के शरीरों में। और कहता है कि खुदा की आत्मा भी उतरती है और उसका अवतार होता है। और उन्होंने पुनर्जन्म मानने के कारण क़यामत के सिद्धान्त से इन्कार किया है। क्योंकि पुनर्जन्म इन शरीरों में पाप पुण्य भुक्तने के कारण इस संसार में ही माना जाता है। इस संप्रदाय वाले कुरान की इस आयत से पुनर्जन्म के सिद्धान्त की पुष्टि करते हैं कि :—

लैसा अलल्लज़ीना आमनू अमिलुस्स्वालिहाते जुनाहुंन् फ़ीमा तइमू ···· (माएदा आयत ९३)

जो लोग ईमान लाए और शुभ कार्य किये उन पर पाप नहीं है जो कुछ खा चुके ·····।

नबानी तथा रज़री सम्प्रदाय के लोग भी पुनर्जन्म को मानते हैं।

(तारीखे फ़लासफ़ा अरबी पृ० ८६, ८७

"ग़लात के समस्त संप्रदाय पुनर्जन्म और नवीन वेदान्त के सिद्धान्त को मानते हैं। पुनर्जन्म का सिद्धान्त उनको मजूस, मरज़किया के मतों तथा भारत से और ब्राह्मणों व यूनान के फ़लासफ़रों और साएबीन से मिला है। उनका विश्वास है कि ईश्वर प्रत्येक स्थान पर विजमान है। तथा प्रत्येक भाषा में बोलता है। वह प्रत्येक मनुष्य शरीर में प्रगट है। यही अभिप्राय नवीन वेदान्त का है। उनका विश्वास है कि ईश्वर के अंश से हलूल होता है। जैसे सूर्य प्रकाश झरोका में अथवा बिल्लैर चमकने की भान्ति ईश्वर प्रगट होता है। ईश्वर का पूर्ण अवतार ऐसा है। जैसा कि फरिश्ता (देवता) का प्रगट होना शरीर में अथवा शैतान का पशु में प्रगट होना है। पुनर्जन्म के चार प्रकार हैं नस्ख, मस्ख, फस्ख रस्ख। इन सब का विस्तार मजूस के वर्णन में होगा। इनके मत में सबसे उच्च पद फ़रिश्ता का नबी होने का है और सबसे नीचा पद शैतान और जिन भूत का। बिना किसी विस्तार के हमने पुनर्जन्म के सम्बन्ध में सिद्धान्त लिख दिया है।" (तारीखे फ़लसफ़ा अरबी)

कामिल संप्रदाय के लोग व्यक्ति से व्यक्ति से पुनर्जन्म को मानते हैं। उनका विचार है कि मृत्यु के द्वारा ही पुनर्जन्त होता है। (तारीखे फ़लासफ़ा।)

तोहफ़ए इस्ना अशरिया में ग़लात का वृत्तान्त इस प्रकार लिखा है कि पांचवां सम्प्रदाय ग़लात के कामिल लोगों का है। कामिल सम्प्रदाय के लोग कहते हैं कि जीवों का पुनर्जन्म होता है। अर्थात् एक शरीर से दूसरे शरीर में आत्माएं आती जाती रहती हैं। और ईश्वर की आत्मा प्रथम आदम के शरीर में आई पीछे शीस में प्रगट हुई। तथा समस्त नबियों के शरीरों में। और इमामों ने लिखा है कि मनुष्यों की आत्माएं मनुष्य शरीरों में पुनर्जन्म को प्राप्त करती रहती हैं।

तथा इसी प्रकार का वर्णन सप्तम सम्प्रदाय जनाहिया का लिखा है।

सबानी सम्प्रदाय तथा गाली भी पुनर्जन्म को मानते हैं।

(तारीखे फलासफ़ा पृ० ७८ से १०१ तक)

अल्मलल वन्नहल भाग २ पृष्ठ ११८ में पुनर्जन्म के सिद्धान्त का वर्णन करते हुए लिखा है कि भारतीय भी इस सिद्धान्त पर विश्वास रखते हैं।

मुल्ला मुहम्मद मशहदी ने शरह बाबुल्हुदायतुन्नहाया में और सय्यद अबदुल अवल हाशिया शरह हिकमतुल् ऐन में तथा फाज़िल सदरुद्दीन स्वायद रबूब्या में लिखते हैं कि पुनर्जन्म का सिद्धान्त प्रत्येक मत मतान्तर का निचोड़ है।

शैख़ुल् अशराक़ीन हिकमतुल् अशराक़ में और अल्लामा शीराज़ी अपनी व्याख्या में लिखते हैं कि पुनर्जन्म के मानने वाले लोग कुरान शरीफ की आयतों का उद्धरण देते हैं।

(तहक़ीक़ुत्तनासुख़ पृ० ५२ अ़रबी)

क़ाज़ी अ़फ़दुद्दीन जो सुन्नी विद्वान् थे। अपनी पुस्तक मवाक़िफ़ में पुनर्जन्म के विरुद्ध युक्ति लिखकर कहते हैं कि "कोई युक्ति पुनर्जन्म को पूर्णतः काट नहीं सकती"

(तहक़ीकुत्तनासुख अ़रबी पृ० ४८

तोहफ़ाए अस्ना अशरिया में मौलबी अ़ब्दुल् अज़ीज़ देहलवी लिखते हैं कि प्रायः "शिया लोगों के कई सम्प्रदाय अर्थात् उमिया, कानिया, मन्सूरिया, हमीरिया, बातनिया इत्यादि कहते हैं कि शरीर क्यामत नहीं होती और न आत्मा को इस संसार से कहीं जाना होता है। प्रत्युत इसी ही संसार में पुनर्जन्म होता है और परिवर्तन एक शरीर से दूसरे शरीर में होता रहता है। अन्त में लिखा है कि इमाम्या और दूसरे शिया पुनर्जन्म के मन्तव्य को मानते हैं। अतः यह संप्रदाय पुनर्जन्म का कहलाता है।"

ग़यासुल्लुगात में लिखा है कि तनासुख (पुनर्जन्म) के मानने वाले लोग कहते हैं कि जब जीवात्मा एक शरीर में आता है तो यह इस बात का प्रमाण है कि दूसरे शरीर में भी जावे।"

(रदीफ़ "त" पृ०४०५)

"मीर सय्यद शरीफ़ मबतली की शरह मुवाफ़िक़ में लिखते हैं कि "कुछ लोगों में से एक व्यक्ति कहता है कि हैं स्मरण रखता हूं उस काल को कि जब मैं ऊंट के शरीर में था। इस पर हाशिया (टिप्पणी) लिखने वाला कहता है कि वह व्यक्ति शैख़ मुबारक शाह सल्जूनी था जो कहता था कि एक समय में मैं ऊंट के शरीर में था।" (तह़क़ीक़ुत्तनासुख पृ० ५०)

प्रसिद्ध विद्वान् अशीरुद्दीन ने ज़ब्दतुस्सरा में लिखा है कि—

"मनुष्य की आत्मा सुसती नहीं करती और शरीरान्तर की अपेक्षा रखती है यदि यह बुरे कर्मों से युक्त न हो तो अपने आप में शरीर त्याग के पश्चात् स्थिर रहती है अर्थात् उसकी मुक्ति हो जाती है। जिससे उसको दुःखों से छुटकारा मिल जाता है। जो आत्मा अज्ञानी है। उसके लिए ज्ञान प्राप्ति द्वारा पूर्णता तक पहुंचना उचित है। जो कई जन्म-जन्मान्तरों से ही सम्भव हो सकता है। यदि उसके अशुभ कर्म हों तो वह आत्माएं पशु योनि में दुःख प्राप्त करेंगी।

मिफ़ताहुत्तवारीख में लिखा है कि "नफ़खात् में मौलवी रूमी लिखता है कि वह अपने कलाम (स्वलेख) में कहता है कि १५० डेढ़ सौ वर्षों के उपरान्त फ़रीदुद्दीन अत्तार के शरीर से प्रकाशयुक्त आत्मा प्रेम के वशीभूत होकर मेरे शरीर में पहुंची।"

(अध्याय ७ पृ० ५४ नवलकिशोर १८६७)

इसी प्रकार नैरू नाम का कवि हुआ। उसके इस उपनाम का कारण यह था कि वह पुनर्जन्म के मत को मानता था। और अपने आप को शैख़ निज़ामी गंजवी समझता था। इस विचार को प्रगट करते हुए वह इस प्रकार से कहता है कि:—

दर गंजए फ़िरोशुदम् पयेदीद,
अज़ यज़्द बराम्दम् चुं ख़ुशीर्द।
हर कस कि चूं मेहर बर सर आयद,
हरचन्द फ़िरोख़ुद बरायद ॥

मैं गंजा में मरा और यज़्द में सूर्य की भांति उत्पन्न हुआ हूं। जो मनुष्य सूर्य की भांति बाहिर आता है, आवश्यक है कि वह अस्त भी होता है और उदय भी।

शैख़ फ़रीरुद्दीन अत्तार की मृत्यु १०१७ हिजरी में हुई

वह कहता है कि:—

हफ़्तसद हफ्ताद क़ालिब दीदा अम्।
हमचू सब्ज़ा बारहा रोयीदा अम्॥

मैं ७७० शरीर देख चुका हूं तथा वनस्पति की भांति बार २ उग चुका हुं।

(मिफ़ता हुत्तवारीख अध्याय ११ पृ० १९८)

मुहम्मद बिन मलिकदाद प्रसिद्ध नाम शैख शम्सुद्दीन तबरेज़ी अर्थात् शम्सतब्रेज़ वली जिन्होंने ६४५ हिजरी में परलोक गमन किया। पुनर्जन्म पर विश्वास रखते थे। और ऐसा ही उनके मित्र मौलाना जलालुद्दीन रूमी भी पुनर्जन्म को मानते थे।

दीवाने शम्सतब्रेज़ में है कि:—

(१) *रोज़े मुहम्मद यक शवद रोज़े पलंगो सग शवद।
+गह उश्तरे पिदरग शवद गह नफ़ी वालिदैन अक़रबा।

---

*जीव कभी शम्सतधरेज़ (मुहम्मद बिन मलिक दाद) के शरीर मे कभी चीते और कुत्ते के शरीर में कभी ऊंट बनता है और कभी माता पिता वनता तथा कभी माता पिता और सम्बन्धी जनों को भूल जाता है।

+भिन्न २ कवियों के फ़ारसी पदों का अर्थमात्र आगे मैंने लिख दिया है। मूल फ़ारसी पद मूल कुलियात मुसाफिर उर्दू में देखें।

(अनुवादक)

(२) जब तू पस्ती (नीचे) की अवस्था देखता है तो ऊंचाई को भी देख। सूर्य व चांद के उदय और अस्त होने से सूर्य व चांद मिट नहीं जाते।

(३) तेरे लिए अस्त होना है तो पूर्व से उदय होना भी है। जहां तंगी है वहां छुटकारा भी आवश्यक है।

(४) कौन सा ऐसा बीज है जो नीचे गिरा तथा भूमि में तर न हुआ। मनुष्य के बीज रूप आत्मा पर तू सन्देह क्यों करता है?

(५) ऐसा कौन सा चर्स (कूप में घूमने वाली रस्सी की माल) है। जो कूप के अन्दर गया और उसमें पानी न आया। यूसुफ़ के कुएं में गिरने से उसकी क्या हानि होती है?

(६) जब तूने अपने मुख को इस ओर से मोड़ लिया। दूसरी ओर खोल कि तेरा शोर (वावेला) सर्वव्यापक, सीमा रहित की सीमा तक पहुंचे।

(७) वह हरा कोट चांद जैसे सुन्दर मित्र की भांति निकला था आज वह गुलनार के शोक में प्रगट हुआ है।

(८) वह तुर्क जो सदा लूट के माल पर निर्भर रहता है वह आज वही है जो सूली पर चढ़ाया गया।

(९) यह वह शराब है जो नयी बोतलों में डाल दी गई है। देखो कि किस प्रकार से दूसरों के सम्मुख यह वस्तु लाई गई है।

(१०) वह ज्वाला इस अंगारा की भांति प्रगट हुई। और वह ज्वाला रहस्यों की खिड़की से निकली।

(११) सूर्य पश्चिम में अस्त हुआ। वास्तव में वह डूबा नहीं। वह तेजस्वी सूर्य दूसरी ओर से निकला।

(१२) जहां प्रसन्नता का अन्त होता है वहां चिन्ता प्रगट होती है। यह आना जाना सदैव से है। परन्तु मार्ग प्रगट नहीं है।

(१३) वह मार्ग जो प्रगट नहीं है। तथा एक रहस्य बना हुआ है। प्रेम के नशे से वह जाना जाता है

(१४) रात को मरा और पुनः जीवित हुआ। मरने के पश्चात् मेरे दुःख को सहन कर कि तू मेरा मित्र प्रगट हुआ है।

(१५) इस से पूर्व कि संसार में उद्यान, शराब और अंगूर थे। अनादि प्रेम के शराब रूपी नशे से हमारी आत्मा आनन्दी थी।

(१६) इससे पूर्व कि निर्माता (विधाता) ने हमारा शरीर बनाया। आध्यात्मिकता का शराब ख़ाना हमारी जान से भरपूर था।

(१७) हम बग़दाद में अनलहक्क (मैं सनातन सत्य हूं) का नाद गुंजा रहे थे इससे पूर्व मन्सूर इस औषध से लाभ उठा चुका था।

(१८) ऐ शम्से तबरेज़! सावधान होकर उस बात को कह। उस समय (आत्मा का) सूर्य आकाश में बहुत दूर था।

(१९) प्रसन्नता, अप्रसन्नता का धारक जीव ही तो है। वृक्ष और पत्थर शान्ति और भय से सम्बन्ध नहीं रखते।

(२०) यदि तू कभी २ आवे (दर्शन) दे। तो हम बहुत ऊंचाई पर पहुंच जायें। मूर्खता के डंक से ऐसी पस्ती (नीचता) में गिरते और वे सुध हो जाते हैं कि जो हो जाय सो हो जाय।

(२१) सहस्रों सदियां (शतियां) चाहिए कि यह ऐश्वर्य हमें प्राप्त हो। यदि इस बार भी मैं इससे आभागा रहा तो पुनः कब मुझे प्राप्त होगा ?

(२२) उस पोशीदगी में भी तेरा प्रेम ग्रावश्यक था। कि उस समय न आदम था न यह संसार था तब न यह शरीर था ग्रौर न यह हृदय था। मरियम की भान्ति मैं तेरे प्रेम में था।

(२३) चांद की भान्ति मैं सूर्य के पीछे गया। कभी घटा ग्रौर कभी बढ़ा।

(२४) कई बारियों में मैं कुएं से ऊंचाई की ग्रोर पहुंचा। तथा शरीरों के बन्धन से मुक्त होकर ईश्वर की गोद प्राप्त की।

(२५) मैं अपनी भलाई के लिए ही शरीरों के बन्धनों में रहा हूं। मैं कहां ? ईश्वरीय वचन कहां ? ऐश्वर्य की शक्तियां कहां से लाया हूं ?

(२६) वनस्पति की भांति मैं भूमि से भोजन प्राप्त करता हूं। घास एक बार बढ़ती है मैं कई बार बढ़ा हूं।

(२७) जितना तू चाहे। मुझे देख ले। पुनरपि तू मुझे पहिचान नहीं सकेगा। मेरी ग्रांखें इससे भी अधिक बुरी हैं। मैं बहुत से गुणों से युक्त था और कभी इससे भी बहुत बुरा।

(२८) पेट में लड़के की भान्ति मैं रक्त से पलता रहा। आदम एक बार उत्पन्न हुआ। मैं कई बार उत्पन्न हो चुका हूं।

(२९) मैं एक अनोखा पक्षी हूं। कि चमन (उद्यान) से ग्रपने पुरुषार्थ के साथ बिना किसी फ़ंदे और बिना किसी शिकारी के गुर्राता हूं।

(३०) मित्रों की कथाओं से उद्यान और उद्यान से अच्छा यूसुफ़ के छुटकारे के लिए कुएं में आराम किया है।

(३१) उसके ज़ख़्म पर रुदन मत कर और रोग की बात मत कह। सैंकड़ों मीठे जीवन प्राप्त-कर चुका हूं। पुनरपि मैं इस आपत्ति में ग्रकेला हूं।

(३२) जहां भी रहें और जिस स्थान पर जायें। चाहता हूं कि खून (रक्त) और प्याला (पात्र) बन सकूं।

(३३) असंख्य जीवनों को मैं आज़मा चुका हू। जीवन ग्रौर मृत्यु में हम नहीं खिले।

(३४) कभी ईसा की भान्ति सर्वथा वाणी बन गया हूं। कभी मौन होकर मर्यम की भान्ति शैदा (दीवाना) बना हूं।

(३५) जो कुछ ईसा और मर्यम की मृत्यु हुई यदि मुझ पर विश्वास करे तो वह मैं ही हूं।

(३६) मैं पुनः लौटा हूं। पुनः लौटकर आया हूँ। ग्रौर पुनः मित्र के सामने आया। मेरी ओर देख। मेरी ओर देख। तेरे लिए दुःख उठाने वाला बनकर ग्राया हूँ।

(३७) मैं प्रसन्नता पूर्वक आया हूँ। मैं प्रसन्नता पूर्वक ग्राया हूँ। उन सभी में से ग्राया हूं। इतने हज़ार वर्ष हुए ग्रौर मैं फिर बोल सकने में सामर्थ्य प्राप्त कर सका हूं।

(३८) ऊपर जाऊं ऊपर जाऊं। उस स्थान पर रहूं उस स्थान पर रहूं। पुनः लौट कर ग्राऊं पुनः लौट कर आऊं। निश्चित मैं इस स्थान पर उस स्थान से छूटकर ग्राया हूं।

(३९) मैं एक उपरिलोकवासी पक्षी था। और इहलोक में आया मैंने अकस्मात् एक जाल देखा ग्रौर उसमें फंस गया हूं।

(४०) मुझको रहस्यमयी आंख से देख। मुझको पूर्ण आनंदमयी दृष्टि से देख। मैं सीप में शाहाना मोती बनकर आया हूं।

(४१) चार माताओं के कारण से मैं उच्चावस्था प्राप्त कर चुका हूं। सात आसमानों पर पांऊं नहीं रख सकता। मैं कान का मोती था। ग्रौर इस लोक में दर्शनों के लिये आया हूं।

(४२) मैं वापिस लौटकर ग्राया हूं लौटकर आया हूं। ताकि समय को व्यतीत करूं। मैं लौट कर आया लौट कर आया ताकि मैं प्रेम के दर्द को बढ़ा सकूँ।

(४३) मैं लौट कर आया लौट कर आया। ताकि हृदय के रोगियों के लिये आंखों की अश्रुधारा से ग्रौर रात्रि की आहों (ठण्डे श्वासों) तथा हृदय के रक्त से माजून (अवलेह) बनाऊं।

(४४) मैं लौट कर आया लौट कर आया। ताकि प्रेम के दुःख को जलाऊं। हृदय की गुहा में दुःखों और सरमद के गंज में खून का ज़खीरा करूं।

(४५) मैं लौट कर आया लौट कर ग्राया ताकि मैं ग्रपना हृदय उस हृदयेश्वर पर रखूँ। और हृदयेश्वर के अतिरिक्त जो कुछ भी हो हृदय नगरी से बाहिर निकाल दूँ।

(४६) मैं लौट कर आया लौट कर ग्राया। ताकि ग्रपना शरीर और ग्रात्मा इस हृदयेश्वर पर बलि देदूं। जैसे हृदयरूपी पक्षी की भान्ति ग्रर्श (खुदाई तखत) पर उस भगवान् के दरबार में घौंसला बनाऊं।

(४७) मैं लौट कर ग्राया लौट कर ग्राया। और मैंने अपना हृदय मस्तष्क को दे दिया। ताकि खुद को मैं लैला बनाऊं और उसके प्रेम में मजनूं बन जाऊं।

(४८) मैं लौट कर आया लौट कर आया। ग्रलिफ़ की भान्ति कोई चीज़ नहीं रखता। उसकी सेवा में स्वयं नून बन जाऊं (अर्थात् ग्रकेला ग्राया हूं ग्रतः अलिफ़ की भान्ति हूं। तथा नून बन जाऊं अर्थात् भगवान् का सिजदा करूं। इसीलिये लौट कर आया हूं।)

(४९) जो कुछ मेरे मुख से निकलता है। उसने मेरे सिर (भाग्य) में डाल दिया। पुराने प्रेमको छे हजार वर्ष (अर्थात् आरंभ सृष्टि से क्योंकि इसलाम सृष्टि की उत्पत्ति छे हजार वर्षों से मानता है) से नया कर दिया है।

(५०) जो कुछ करता हूं। उस पर शोक करता हूं। इस वर्ष (अर्थात् जन्म) में हृदय को ठिकाने लगाना चाहिये। ताकि मित्र और शत्रु (अच्छे और बुरे) मे भेद किया जा सके। अतः जीवन दोबारा चाहिए।

(५१) जब तेरी रज़ा (इच्छा=आज्ञा=नियम) हमारे हृदय के ग़म में हैं। दस क्या यह तो हजार गुना चाहिये।

(५२) सौ हज़ार (लाख) बातें पोशीदा (छिपी) रखता हूं। कान के लिए गोशवाए (कर्ण भूषण) चाहिये। (अर्थात् सुनने की तीव्र इच्छा)

दीवान मग़रबी में है कि :—

(५३) सौ बार शरीर के किले से बाहिर कूद चुका हूं। इतने बलिदानों के पश्चात् एक सुरक्षित किला (गढ़) प्राप्त किया है।

शैख फ़रीदुद्दीन अत्तार कहते हैं :—

(५४) गुन्धी हुई मट्टी में हज़ार बार मुझे बरतन बनाया गया है। मधुमय जीवन की ऐश से अभी तक मैं कड़वे स्वभाव वाला हूं।

मौलवी जलालुद्दीन रूमी सबारम इलाहीपात में कहते हैं :—

(५५) प्रशिक्षण वह उस चतुर प्रेमी के रूप में आया और हृदय चोर ने हृदय चुरा लिया तथा स्वयं छिपा रहा।

(५६) वह प्रति समय एक दूसरे लिबास (वस्त्रों) में आया। कभी बूढा बना और कभी युवा बना।

(५७) कभी गुन्धी मटी बदल कर नीच योनि में जाता है और कभी (मनुष्य योनि प्राप्त करके) विद्या के समुद्र में डुबकी लगाता है।

(५८) कभी बन में फूल कांटे से निकलता है। कभी इससे उलट होता है।

(५९) कभी नूह बना और शाप से संसार को ग़र्क किया (डबो दिया) और स्वयं किश्ती (तरणि) में चला गया।

(६०) कभी इब्राहीम बना और आग से निकला। और आग छिप गई।

(६१) यूसुफ़ जो मिश्र से गुम हुआ। एक कसीम (कुर्ता) दे गया। जिसने संसार को प्रकाश दिया।

(६२) जब याक़ूब की आंखों से देखने की शक्ति चली गई। परन्तु उसकी अन्दर की आंख खुल गई।

(६३) क़सम खुदा की। जिसके हाथ से रौशनी निकलती थी वह (मूसा) भी एक गडरिया (भेड़ बकरी चराने वाला) था।

(६४) (उसके पास) एक दंडा था जो सांप के रूप में परिणत हो जाता था। यह उसके लिये गर्व का हेतु था।

(६५) यूनुस जब समुद्र में गया तो मछली के पेट में चला गया ताकि वह पवित्रता प्राप्त कर सके।

(६६) मूसा ने जब ढूंडने की इच्छा की तो वहां से प्रकाश निकला। जब वह तूर (तूर नामी पर्वत) पर पहुंचा। (अर्थात् जलती आग से रौशनी प्राप्त की जो कि हवन की आग थी जिसके चारों ओर यज्ञ करने वाले फ़रिश्ते (देवता) विराजमान थे।

(६७) कुछ समय वह उस (तूर की भूमि) पर ठहर कर और रौशनी प्राप्त करके फिरा।

(६८) जब ईसा बना तो सूली (फांसी) के गुंबद पर लटका और तसबीह पढ़ रहा था।

(६९) स्वयं बरतन स्वयं बरतन का निर्माण कर्ता तथा बरतन की गीली मट्टी और स्वयं मटके मटके (संसार की) शराब पीने वाला बना।

(७०) स्वयं कूज़ा (पात्र=बरतन) स्वयं कूज़ा का गाहक और उसको तोड़ा और चला गया।

(७१) स्वयं सुराही बना। शराब प्याला, पिलाने वाला और स्वयं ही सभा मंडप में विराजमान हुआ।

(७२) आप ही उस शराब में मस्त हुआ और आप ही हृदय और आत्मा में शोर पैदा किया।

(७३) यह सब कुछ वही था। जो आता था और जाता था। प्रत्येक सदी (अभिप्राय सृष्टि) के सिरे पर जब हम देखते हैं।

(७४) परिणामतः वह रूप अरब में प्रगट हुआ और संसार का दारा बना।

(७५) उस हृदयेश्वर सुन्दर स्वच्छ के स्वरूप को तना मुख (आवागवन का चक्र) बदल नहीं सकता।

(७६) वह तलवार बना और करार (अली) के हाथ आया तथा संसार का क़ातिल (हत्यारा) बना।

(७७) जो अनल्हक्क (मैं नित्य सत्य हूं) कहता था। मन्सूर वही था।

(७८) जिसे फांसी के तख़ते पर लटकाया गया था। मन्सूर न था। यह भूल से समझा गया।

(७९) रूमी (जलालुद्दीन) कुफ़्र के बचन नहीं कहता और न कहेगा। इस बात पर मुनकिर (इन्कार करने वाला) न बन।

(८०) काफ़िर वह व्यक्ति होगा जो इससे इन्कार करेगा। वह नरक में जायगा।

मौलवी रूमी ने एक और कविता में भी ऐसा ही लिखा है कि :—

(८१) वह स्वयं नक़दी था। वह स्वयं रहस्यों के कोष से निकला। तथा स्वयं ख़ज़ाना प्रगट हुआ।

(८२) रेशमी लिबास पर पसीना आता है ताकि जनता उसे पहन सके।

(८३) बुतों (प्रेमिकाओं) की आंखों में चाहता था कि अपनी पूजा कराये।

(८४) वर्षा ऋतु में बिंदु के रूप प्रगट हुआ।

(८५) स्वयं ही सभा मंडप बना। स्वयं ही शराब पीता है। आप ही पिलाने वाला और आप ही प्याला है। स्वयं शराब ख़ाना का स्वामी है।

(८६) स्वयं ही तलवार है। स्वयं ही ज़ालिम (अत्याचारी) है। अपने शरीर पर कवच पहन रखा है और स्वयं ही मरहम लगाता है।

(८७) वह आप था जो बाजार के सिरे पर प्रगट हुआ और अपना ही निगरान (रक्षक) बना।

(८८) स्वयं कुर्ते और पगड़ी के रूप में प्रगट हुआ पुनः ऐसा ही हो गया।

(८९) कभी आप बुत (प्रेमी) बना। कभी आप उसकी पूजा करने लगा। और आप ही प्रगट हुआ।

(९०) समुद्र से एक मूल्यवान् मोती के रूप में प्रगट हुआ और महाराजाओं के कर्ण का भूषण बना।

(९१) स्वयं शराब हुआ स्वयं ही मस्ती के ज़ख्म में मस्त हुआ और आप ही प्याले का पान करने लगा।

(९२) स्वयं रोगी की पोज़ीशन में प्रगट हुआ और आप ही फ़ातेहा (मृतक के सम्बन्ध में प्रार्थना) पढ़ने लगा।

ऐसा ही मौलवी क़ासिम अपनी कविता में लिखते हैं कि :—

(९३) जब वह सौन्दर्य का राजा बाज़ार की ओर निकला, तो दुकान की रौनक़ बन गया।

(९४) जादू भरी आंखों और नाज़ व नज़ाकत से संसार की ओर देखा।

(९५) स्वयं चाहता है कि तमाशा के लिये प्रत्येक वाटिका से एक अनोखे ढंग को मस्ती हो।

(९६) स्वयं ही मसजिद बनाई। आप ही नमाज़ पढ़ी और आप ही अज़ान (बांग) देने लगा।

(९७) लाभार्थ समुद्र यात्रा की और किशती (तरणि=नौका) बनाई।

(९८) आप ही आता था आप ही जाता था और पर्दा में आप ही छिपा हुआ था।

(९९) आप ही चाहता था कि औषधालय से जनता मुख न मोड़े और आप ही तबीब (वैद्य) बन गया।

(१००) स्वयं आतमा बना और अपनी आत्मा और अपने शरीर को सिज्दा (नमस्कार) के लिये झुकाया। आप ही उस पर क़ब्ज़ा (अधिकार) जमाया।

(१०१) उस इहलोक परलोक अधीश्वर प्यारे ने अपने आपको संवारा और किनआन का यूसुफ़ बना।

(१०२) स्वयं शराब बना। स्वयं प्याला, मुफ़्ती व्यवस्था दाता और क़ाज़ी (निर्णय कर्ता) बना।

(१०३) गहरी दृष्टि (सूक्ष्मदृष्टि) से क़ासिम ने यह कविता लिखी। आत्म दृष्टि से देखा।

(१०४) प्रत्येक सराफ़ (जौहरी) के सिर पर एक ख़रीदार आया और उसके कोष का निगरान (रक्षक) बना।

(१०५) विश्व का विजेत बना। और पुनः इन्कार भी किया और बड़े नाज़ व अन्दाज़ से चला गया।

(१०६) स्वयं पुष्प बना। बुलबुल हुआ। गुलनार हुआ और आप ही खिज़ां (पतझड़ ऋतु) की वायु बना।

(१०७) स्वयं ही शराबख़ाना के रूप में परिणत हुआ और स्वयं ही शराब पीने वाला बना।

(१०८) स्वयं ही नौका पर चढ़ा । आप ही नौका का निर्माण किया और स्वयं ही तूफ़ान की झंझावात बना ।

(१०९) कभी संसार में राज़दान (रहस्य वेत्ता) बनकर आया और देखा कि किस प्रकार प्रगट हुआ ।

(११०) स्वयं रोगी बना तथा रुग्ण शरीर के रूप में प्रगट हुआ । और स्वयं ही नोहाख़ान (मौत पर रुदन करने वाला) बना ।

(१११) स्वयं माता और लड़की बना । इस परेशान दिल में प्रगट हुआ और स्वयं अन्त्येष्टि करने लगा ।

(११२) स्वयं ज़ुलैख़ा बना और स्वयं ही उसका प्रेमी बना स्वयं ही स्त्री जाति का अपवाद हेतु बना ।

(११३) स्वयं मस्त हुआ और आप ही प्याले से छलक पड़ा तथा स्त्री मार्ग बना ।

(११४) मन्सूर किस प्रकार उस सूली पर चढ़ा और संसार का सरदार बना ।

एक दूसरा कवि कहता है कि :—

(११५) स्वयं प्रेम गली में आकर प्रेम मय हो कर सब में समा गया । स्वयं था कि उसने स्वयं पैग़म्बरी की ।

एक और वली (महात्मा) का वचन है :—

(११६) स्वयं पैग़म्बर बना और पैग़ाम (ईश्वरीय संदेश) लाया । तथा आप ही काफ़िर बना और आप ही इन्कार किया ।

(११७) स्वयं ही पाप के हेतु उत्पन्न करता है और आप ही प्रायश्चित करने लग जाता है ।

मौलवी अब्दुर्रहमान जामानी कहते हैं कि :—

(११८) आशनाई (प्रेम) के आकाश से चांद निकला । उसी से संसार भरके कौने २ में रौशनी फैली ।

(११९) एक पवित्र रौशनी कौन और क्या की कैद से साफ़ सुथरी चादर की भान्ति बाहिर निकली ।

जहीर फारयाबी अपने बादशाह के सम्बन्ध में वर्णन करता है किः—

(१२०) प्राणी मात्र की भलाई के लिए अफ़लातून की सम्मति के अनुसार तुझे ईश्वर पर्याप्त है।

(१२१) अपने इक़बाल (उच्चपद) से एक ऐसी सूरत उत्पन्न की कि शाहपुर नामी बादशाह में ईश्वर स्ययं प्रविष्ट हुआ ।

प्रसिद्ध वल्ली (महात्मा) उमरो ख्याम अपने छन्दों में लिखते हैं किः—

(१२२) जब तेरे प्रकाश युक्त शरीर से आत्मा का मोती निकला । तो किसी दूसरे शरीर में जाकर तेरा ठिकाना होता है ।

(१२३) आते हैं और जाते हैं । कोई भी नहीं पहिचान सकता कि पृथिवी के नीचे तेरे शरीर पर क्या बीतता है ।

(१२४) तेरे शरीर के खैमों (तंबू) पर एक तंबू ठीक सजता है।

(१२५) आत्मा बादशा है । उसकी मंजिल (उद्दिष्ट स्थान) दारेबक़ा (सदैव रहने वाला घर=मुक्ति) है ।

(१२६) अजल (मृत्यु) का फ़रिश्ता (देवता) दूसरी मन्ज़िल (पड़ाव) के लिए खैमा (तंबू) बनाता है जब (आत्मा रूपी) बादशाह निकल जाता है।

जंगनामा हामिद में लिखा है कि जब इमाम हनीफ़ से यज़ीद भागा और इमाम हनीफ़ ने उसको एक मकान के अन्दर घेर लिया। तब अन्दर से एक चार आंखों वाला कुत्ता निकला। जो वास्तव में यज़ीद था। इमाम हनीफ़ ने उसको तीर से मारा और मार कर आग में जला दिया।

पीर शाह मख़दूम जहानियां अपने मनाक़िब में कहते हैं कि:—

"मैं हज्ज के विचार से जहाज़ पर चढ़ा मार्ग में जहाज़ तूफ़ान के कारण टूट गया और मैं एक तख़ता पर बैठा हुआ रह गया। वह तखता बहता हुआ एक स्थान पर तट पर जा लगा। तब मैं उतर कर तट पर पहुंचा। मुझे धूप लगी। तो मैं रेत में एक गढ़ा खोद कर उसमें बैठ रहा। वहां जंगल में एक हाथी आया। और मेरे से एक तीर दूरी पर खुश्की में लीद की। लीद करने के पश्चात् वह पानी पीने चला गया। पीछे उस लीद से एक मनुष्य पैदा हुआ। वह अपना शरीर झाड़ने और रोने लगा। पश्चात् हाथी आया और उसको पीछे से पकड़ कर उसका बंद २ पृथक् करने लगा। वह चिल्लाता और रोता रहा। हाथी उसे मार कर और उठाकर चला गया। ऐसा ही चालीस दिन तक बराबर मैं देखता रहा। कि प्रतिदिन हाथी आता और इसी प्रकार करता। और मारकर उठा ले जाता। अन्त में चालीसवें दिन मैंने उससे पूछा उसने कहा कि मैं दुर्मति यज़ीद हूं। मुझे यह दुःख क़्यामत के दिन तक होता रहेगा। (पृ० २१७-२१८)

कससुल् अंब्या व मआरिजुन्नबुव्वत में लिखा है कि "प्रकाश युक्त हज़रत मुहम्मद साहिब की रूह हज़ार वर्ष मोर के रूप में दया के समुद्र में डूबी रही।"

रिवायत (कथा) है कि सांप का रूप ऐसा पवित्र और स्वभावतः सुन्दर था। कि कोई पशु स्वर्ग में ऐसा न था। ईश्वर ने इस पाप के कारण उसके रूप को मसख किया (बदल दिया) और मट्टी को उसका भोजन ठहराया। कि पेट और छाती के बल पर पृथिवी को रगड़ता और छाती को छीलता रहे। तथा मोर का रूप भी बदल गया। जैसा कि उसके पांव कुरूपता में उदाहरण रूपेण प्रस्तुत किये जाते हैं। (रौज़तुल् असफ़िया व क़ससूल् अंब्या पृ० ७ आदम वर्णन छापा मुस्तफ़ाई लाहौर १८९२ ईस्वी)

ग़यासुल्लुग़ात में लिखा है कि:—

"मसख के अर्थ यह है कि एक रूप को बदल कर दूसरा रूप धारण करना जो पहिले रूप से नीच हो। और १३ वस्तु हैं कि ईश्वर ने बुरे कर्मों के कारण उनको मसख़ कर दिया (बदल दिया)।

प्रथम हाथी पुंमैथुन करने वाला मनुष्य था। द्वितीय रीछ कि लड़कों से प्रेम रखता था। तृतीय ख़रगोश कि ऋतु स्नान न करने वाली स्त्री थी। चतुर्थ बिछू कि अभिमानी मनुष्य था। पंचम गोह कि

अत्याचारी था। षष्ठम सूकर कि पैग़ाम्बर की आज्ञा के विरुद्ध कार्य करता था। सप्तम लौमड़ी कि चोर थी। अष्टम बाखा कि दुराचारी था। नवम कव्वा कि अभिमानी था। दशम क़ुमरी कि झूठी शपथ खाती थी। एकादश चींटी कि हराम का माल खाती थी। द्वादश चूहा कि धन लेकर रुदन करने वाली स्त्री था। त्रयोदश उल्लू कि अपने मज़हब को बदल लिया था। और कुछ ने २६ लिखे हैं।"

(ग़वास व मुन्तख़िब फ़ारसी कोष रदीफ़म पृ० ३४५)

अब हम अन्त में इसलामी हदीसों से कुछ घटनाएं जिनके ठीक होने में किसी मुसलमान को इनकार नहीं लिखते हैं। मदारिजुन्नबुव्वत व मआ़रिजुल्फ़तुवत में है कि एक गोह ने हज़रत की पैगम्बरी पर ग़वाही दी। और कहा कि लब्बैक व सअ़दैक अर्थात् मैं आपकी सेवा में उपस्थित हूं आप को बधाई हो। हज़रत ने कहा कि तू किसकी पूजा करती है। बोली कि उस ईश्वर की पूजा करती हूं कि जिसका तख़्त अर्श=आसमान पर है। और उसका राज्य पृथिवी पर है। तथा स्वर्ग में उसकी रहमत (दया) है। और नरक में उसका अज़ाब (दुःख) है।

हज़रत ने फ़रमाया कि मैं कौन हूं बोली तू रसूल है। पालनहार का और तेरे पश्चात् कोई पैग़ाम्बर न होगा। तू ख़ातमन्नबीय्यीन है। जो कोई तुझ को झुटलावे। वह नरक में जावे।

(हुज्जतुल्हिदं पृ० ११२)

प्रतीत होता है कि गोह गत जन्म में कोई मुसलमानी थी। जो बुरे कर्मों से इस योनि में आई।

रोज़तुल् अहबाब में है कि अक़ील ने कहा कि एक स्थान पर पहुंचे। अकस्मात् एक ऊंट दौड़ता हुआ आया और हज़रत के आगे दो जानू टेक कर कहने लगा कि अलअमान अलअमान। बचाओ-बचाओ। उसके पीछे एक जंगली मनुष्य तलवार खींचे हुए आया। हज़रत ने कहा। हे मूर्ख ! तू इससे क्या चाहता है? उसने निवेदन किया कि हे खुदा के रसूल मैंने इस ऊंट को इसलिए खरीदा है कि मेरा काम करे। और मुझे इससे लाभ हो। अब यह काम से इनकार करता है। मैंने विचार किया है कि इसको काट कर इसके मांस से लाभ उठाऊं। हज़रत ने ऊंट से कहा कि तू क्यों बाग़ी हुआ ? ऊंट ने निवेदन किया कि हे खुदा के रसूल ! मैं इसलिए इसकी अवहेलना नहीं करता कि इसका कार्य न करूं। प्रत्युत मैंने सुना है कि आपने कहा कि जो कोई रात्रि की नमाज़ न पढ़े। ईश्वर का उस पर अज़ाब (दुःख) पहुंचेगा और यह बद्दू (जंगली) सायंकालीन नमाज़ नहीं पढ़ते हैं। मैं इसलिये भागता हूं। कहीं इनके कारण से मुझे भी अज़ाब (दुःख) न पहुंचे। आपने उसको नमाज़ की प्रेरणा की। पुनः ऊंट उसका आज्ञाकारी हुआ। (हुज्जतुल् हिदं पृ० १२४)

इससे स्पष्ट है कि ऊँट या तो पिछले जन्म का कोई मौलवी अथवा या कोई जंगली मुसलमान है जो कि नमाज़ का इतना सहायक है और कुरानी स्वर्ग का इच्छुक है।

यअ़फ़ूर नाम का एक गधा था। जिस पर हज़रत चढा करते थे। वह गधा भी अरबी बोलता था। और प्रश्नोत्तर किया करता था। जब हज़रत चढ़ने के विचार से गधे के समीप आते तो वह अस्सलामो अ़लैकुम् बोलता था। (कशफ़ल्लुग़ात)

प्रतीत होता है कि यअ़फ़ूर कभी मुसलमान हो चुका था और इसलाम मत से उसे प्रेम था।

रोज़तुल् अहबाब व मआ़रिजुन्नबुव्वत में लिखा है कि अक़ील ने बयान किया कि मैं एक यात्रा

में हज़रत के साथ था। हज़रत से मैंने अपनी प्यास का वृत्त बताया आपने कहा कि जा और इस पर्वत से कह कि रसूले खुदा कहता है कि मुझको पानी दे। मैंने हज़रत की आज्ञा पर आचरण किया। पहाड़ मुझसे बातें करने लगा। और कहा कि हज़रत की सेवा में निवेदन कर कि मुझको जब से यह बात ज्ञात हुई है कि खुदा ने कहा कि डरो और बचो दोज़ख़ की आग से, जिसका ईंधन मनुष्य और पत्थर है। इतना रोया हूं कि मुझमें पानी शेष नहीं रहा। (हुज्जतुल्हिन्द पृ० १२३)

मआरिज्जुन्नबुव्वत में बरीदा से रिवायत (कथा) है कि एक वृक्ष हज़रत के पास आया। और अस्सलाओ अलैकुम या रसूलुल्लाह कहा। (हुज्जतुल्हिन्दि पृ० १२४)

हदीस तिर्मज़ी और दारमी में हज़रत अ़ली से रिवायत है कि मक्का के पास मैं हज़रत के साथ था। जो पत्थर, वृक्ष, सामने आता। अस्सलामी अलैकुम' या रसूलुल्लाह कहता।

(हुज्जतुल्हिन्द पृ० ३५

हदीस तिर्मज़ी में इब्ने अ़ब्बास से रिवायत है कि एक खजूर के पेड़ ने भी हज़रत की पैग़म्बरी पर ग़वाही दी। (पृ० १२५)

सही बुख़ारी में जाबिर से रिवायत है कि हज़रत रसूलुल्लाह मसजिद के एक स्तून से जो खजूर की लकड़ी का था। तकिया लगाकर उपदेश दिया करते थे। जब स्टेज तैय्यार किया गया। हज़रत स्टेज पर विराजमान हुए। वह स्तून ऐसा रोने और चिल्लाने लगा। मानो अभी फट जाता है। हज़रत स्टेज से उतरे। और उस स्तून को अपने पवित्र शरीर से लगाया। तब वह स्तून इस प्रकार रोता जैसे कोई छोटा लड़का रोता है। और कोई उसे प्यार करके रोने से चुप करावे और वह रोता रहे। अन्ततः वह स्तून मौन धारण कर गया। आप ने कहा कि यह स्तून खुदा का वर्णन सुना करता था। इसलिये चिन्ता से रोने लगा था। (पृ० १२३)

हकीम आदम मनाई कहते हैं कि—

शशमीर ने सन्मार्गार्थ बिल्ली को नबी और कुत्ते को पीर बनाया।

इस पर हकीम अ़ल्लामी हाशिया पर टिप्पणी लिखते हैं कि बिल्ली को नबी बनना यह इशारा (इंगित) है शैख़ अख़ी फ़रख़ रंजानीं रहमतुल्लाह की बिल्ली से। कि उसकी एक पालतू बिल्ली थी। जब नमाज़ी नमाज़ पढ़ते थे तो वह भी नमाज़ पढ़ती थी उसको परहेज़ गार बिल्ली कहते थे। जैसा कि हाफ़िज़ शीराज़ एक स्थान पर इसका वर्णन करते हैं। इस बिल्ली ने एक दिन अपने स्थान पर एक कार्य किया कि जब कुछ मित्र शैख़ की ख़ान क़ाह पर आये तो प्रत्येक के वस्त्र को सूंघा और उनमें से प्रत्येक को खड़ा किया और पेशाब किया। जब ढ़ढने लगे तो वह व्यक्ति दीन से बेगाना था।

पीर कुत्ते का अभिप्राय शैख सग्र.दुद्दीन जमहूरी के कुत्ते से है। कि वह शेख का चाहेता कुत्ता था। जो झगड़े से खड़ा हुआ। शहर से मुंह मोड़ा और कबरिस्तान की ओर चला गया।

(हनीस स्नाह छापाखाना लोहारन पृ० २३ सन् १२६० ईस्वी)

यदि यह घटनाएं सत्य हैं जैसा कि समस्त मुसलमानों का इनकी सत्यता पर विश्वास है। तो स्पष्ट प्रगट है कि यह सब पशु तथा पत्थर आदि उस जन्म के अवश्य मुसलमान हैं। और गतजन्मों

के दुष्कर्मों से अब इन शरीरों में पुनर्जन्म को प्राप्त कर चुके हैं। हर कि शक आरद काफ़िर गर्दद अर्थात् जो कोई सन्देह करे काफ़िर हो।

कुरआन, हदीस, तफ़ासीर (भाष्यों) और दूसरे इसलामिक वलियों पीरों के वचनों से हमने पुनर्जन्म की बहुत सी घटनायें उपस्थित कर दी हैं। जहां तक हमने इस्लाम की पुस्तकों का अध्ययन किया है। उसका संक्षेप केवल यही है कि मुहमदियों में से जो ईश्वर के भक्त हुए हैं। जिन्हें उनकी परिभाषा में औल्या अल्लाह कुतुब या ग़ौस कहते हैं। वह सब के सब पुनर्जन्म मानते थे। इसलाम के ७३ संप्रदायों में से कई सम्प्रदाय पुनर्जन्म को मानते हैं। स्वयं एक सम्प्रदाय का नाम ही तनासख़िया (अर्थात् पुनर्जन्म को मानने वाला) है। कर्म और उसका फल सुख दु:ख रूपी परिणाम बिना पुनर्जन्म के मिलना सर्वथा असंभव है। पुनरपि प्राय: औल्या अल्लाह और विशेष विद्वानों के अतिरिक्त शेष मुसलमान पुनर्जन्म को खुले रूप में नहीं मानते। परन्तु इन महा पुरुषों की वाणी का आदर करते हैं। और उन्हें फ़ारसी भाषा के कुरआन का पद देकर कहते हैं कि:—

मस्नवी मौलवी मअ़नवी,
हस्त कुरआन दरज़ुबान पहलवी।
मन चेगोयम वस्फ़आं अ़ली जनाब,
नेस्त पैग़ाम्बर वले दारद किताब॥

अर्थात् मौलाना रूम की मस्नवी फ़ारसी भाषा में क़ुरआन का दर्जा रखती है। मैं उनका गुण-क्यों कर कह सकता हूं। वह पैग़म्बर तो नहीं परन्तु (ख़ुदाई) पुस्तक रखता था।

वास्तविक बात यह है कि मुसलमानों में जो २ विद्वान् हुए अथवा जिन्होंने विद्वत्ता से मज़हब का अन्वेषण करके सत्यासत्य का निर्णय किया है। वह सारे के सारे पुनर्जन्म सिद्धान्त के मानने वाले हैं। जैसे उम्या, कात्या, मन्सूरिया, हमीरिया, तनासख़िया, कामलिया इत्यादि। इनके अतिरिक्त विशेष विद्वानों में से जो आत्मा की पवित्रता से अध्यात्मवाद के उच्चपद पर पहुंच गये वह जैसा कि कुनफ़ यकूनो (अर्थात् खुदा ने कहा हो जा और हो जाता) के अनुसार जगत् की उत्पत्ति मानने थे। उन्होंने जहां तक विचार किया। साधारण जीव तो क्या स्वयं खुदा को तना सुख (पुनर्जन्म) के चक्कर में डाल दिया। और नवीन वेदान्त पर विश्वास करने लगे। फांसी पाई। क़तल किये गये। तो भी अपने विचारों को नहीं छोड़ा। तथा अपने विश्वास पर स्थिर रहे। जैसे मन्सूर इल्ज, शम्सतब्रेज़ इत्यादि। पक्षपाती मुल्ला और हलवेमांडे के प्रेमी मौलवी वह भक्ति के दर्ज़ा में हमा औस्त (सब कुछ वही है) और मसजिद के अन्दर हमाअज़ोस्त (सब कुछ उससे है) को मानते हैं। परन्तु बुद्धिमान् जानते हैं कि अभिप्राय दोनों का एक है परन्तु हमारा विश्वास है कि जो २ पुनर्जन्म को नहीं मानते और कुछ घर की भी रखते हैं। उन्हें जब वह सोचते हैं। अपने कल्पित खुदा और जाबिर (अत्याचारी) भगवान् को गालियां देनी पड़ती हैं उदाहरणार्थ हम कुछ ऐसे लोगों के वचन उपस्थित करते हैं।

उर्फ़ी

(१) हे भाग्य! ऐसा मत कर कि अन्त में भी प्रभाव युक्त प्रार्थना के प्रभाव का धन्यवाद बनना चाहता हूं।

(२) हे मित्र चर्ग़ (पशु विशेष अथवा दीपक) की प्रार्थना का हाथ बांध अथवा मनोवांछित बख़शिश (दयापूर्ण देन) में कंजूसी कर।

(३) हे जगदीश्वर ! मेरे साथ क्या शत्रुता है उस भगवान् के कारिन्दों की।

(४) कब तक मैं धैर्य धारण करूं। सितारों के चक्कर और आकाश से मैं कब तक धैर्य में रहूं।

उर्फ़ी हज़रत अली की प्रशंसा में

(५) अशक्तता के कारण मैं पाप नहीं कर सकता। अन्यथा मैं प्रत्येक प्रकार के विषयों का शिकार था।

(६) अपने आचरण पर मैं तेरी दया का प्रार्थी हूं। मुझे आचरण लिखने वाले (फ़रिश्ते) की आवश्कता नहीं है। केवल तेरी दया की आवश्यकता है।

(७) मैं तेरे द्वारा अपनी रक्षा को चाहता हूं। अतः मुझे अपने पापों की चिन्ता नहीं है। मैं पापी हूं। और पाप असंख्य हैं। केवल तेरी दया चाहिए।

(८) जब हम अपने कर्म करने में स्वतन्त्र नहीं हैं। जो कुछ है। आप की आज्ञा है। पुनः हम पर इन पापों का दण्ड विधान क्यों है ?

(९) जब इस बुराई की बुनियाद को तूने डाला है। पुनः प्रत्येक पाप को हमारे साथ क्यों संबन्धित करता है। भाग्य हमारे मार्ग में रुकावट डालता है। ख़ुदा की कसम ख़ुदा से हमारे लिये क्षमा मांग।

(१०) नेक नामी के कूचा में हमें गुज़रने न दिया गया। यदि तू पसंद नहीं करता तो भाग्य बदल दे।

(११) यद्यपि पाप करना हमारे अपने अधिकार में नहीं है पुनरपि तू शिष्टाचार के सम्बन्ध से कह कि यह मेरे पाप हैं।

(१२) तू नेकी करता है और मैंने भी बुराई नहीं की है। और बुराई को अपने हवाला किया है। वही मैं खाता हू कि जिसके मैं योग्य हू।

(१३) मेरा खानां उसके समीप सरल था। ईश्वर अनादि काल से ही मेरा शराब पीना जानता था। यदि मैं न पीता तो ईश्वर का ज्ञान पूर्ण न होता उस पर अविद्या का दोष आता।

(१४) शराब पी कि कई बार मैंने तुझे पहिले कहा है। जब तू चला गया। पुनः वापिस नहीं आ सकता।

(१५) बता। संसार में ऐसा कौन है जिसने पाप न किया हो जिस ममुष्य ने कोई पाप न किया उसने अपना जीवन कैसे व्यतीत किया।

(१६) मैं पाप करता हू और तू पापों का दण्ड देता है। अतः हे भगवान् ! तेरे और मेरे में क्या विशेषता है ?

(१७) दोज़ख़ और बहिश्त की बातें मत सुन कि दोज़ख़ में कौन गया और बहिश्त में कौन आया ?

(१८) आत्म लोक से तू उस संसार में आया तुझ पर शोक है। पांच चार छे और सात के झगड़े में हैरान रहा।

(१९) शराब पी। और तू नहीं जानता कि कहां से आई है। खुश रह कि तू नहीं जानता कि तू कहां जायगा ?

पुनर्जन्म के वैज्ञानिक सिद्धान्त से अपरिचित अमीर ख़ुसरो ने जब कुरआन की उत्पत्ति पर विचार किया और उसे प्रत्येक प्रकार से न्याय और सत्य के विरुद्ध समझा तो कुरआनी ख़ुदा के संबंध में बलात् उसके मुख से निकला

न्याय न कीन बन ठकुराई,
बिन कीने लिख दीन बुराई।

अर्थात् ख़ुदा ने न्याय नहीं किया। प्रत्युत मक्कर और धोखा किया। जब कि पाप करने के बिना उनके भाग्य में बुराई लिख दी।

—०—

अष्टमाध्याय

पुनर्जन्म पर कबीर जी व बाबा नानक जी

बाबा नानक जी बहलोल लोदी के समय १४६६ ईस्वी में पंजाब में उत्पन्न हुए। दूर दूर देशों में जाकर हिन्दू मुसलमान दोनों को वैदिक धर्म का उपदेश दिया। और प्रायः मुसलतानों को अपने तौहीद (ईश्वर को एक मानना) के उपदेश से सन्मार्ग दिखाया। तथा भ्रमजाल से हटाया। पुनर्जन्म सिद्धान्त का विश्वासी बनाया। भारत के अतिरिक्त वह अरब देश में फ़क़ीरी (साधु) के वेश में गये। अ़ली मरदान एक जन्म का मुसलमान (जो बाबा जी के उपदेश से हिन्दु धर्म पर हृदय से विश्वास रखता था) इस यात्रा में साथ था। मक्का की यात्रा के पश्चात् वह मदीना में पधारे। जहां कि मुहम्मद साहिब का मज़ार (कबर) है। वहां उन्होंने अ़ली मरदान को जिसे वह पंजाबी ढंग से मरदाना कहा करते थे। यह उपदेश दिया। "मरदान्या ! अजे मुहम्मद वत जन्म आवणा हे। तुरगनां विच आहे तुरगनां विचूं निकलिया नाईं। उस फिर हिन्दुदे घर जन्म आवणा हो। पन्द्रह सौ बरस उसकी बिहिश्त विच अबेला है। पन्द्रह सै वरहा पूरा होसी तां फिर ओह हिंदु दे घर जन्म लैसी। पर शुद्रदे घर। उस ताईं पूर्ण सतगुर परलोकी मिलेगा। तां उसदा जन्म मरण रहित होवेगा। उस विच जुरात बहुत आही। इक जन्म उसदा रहेन्दाहे।" (देखो जन्म साखी नानक पृ० १६२ साखी नं० ४० छापा खाना सुलतानी लाहौर हसब फ़रमाईश चिराग़दीन पुस्तक विक्रेता गुरमुखी प्रबन्धक मुंशी क़ादिर बख़्श)

बाबा नानक के सम्बन्ध में दबिस्ताने मज़ाहिब (फ़ारसी) में लिखा है कि "नानक जी ईश्वर को एक मानते थे। और पुनर्जन्म पर ईमान रखते थे। तथा शराब, मांस, सूकर को हराम गिनकर विषय वासना से रहित होकर पशुओं को कष्ट न देने की आज्ञा करते थे। मांस खाना उनसे स्वर्गवास के पश्चात् उनके मुरीदों ने शुरू किया। और अर्जुन मल जी उनके पश्चात् ख़लीफों (गुरुओं) में से थे उन्होंने पशु माँस खाने का निषेध किया और कहा कि मांस खाने का आचरण गुरु नानक की इच्छा के विरुद्ध है।" (दबिस्ताने मज़ाहिब शिक्षा २ पृ० २२३ छापखाना नवल किशोर)

बाबा नानक की पुनर्जन्म के सम्बन्ध में सम्मति

(१) आपे ही बीजे आपे ही खाहु।
नानक हुकमी आवहु जाहु॥ (जपुजी)

(अर्थ) मनुष्य स्वयं कर्मरूपी बीज बोता है। स्वयं ही उसका फल खाता है। ईश्वर की आज्ञा के अन्दर उसका भिन्न २ शरीरों में आना जाना (पुनर्जन्म) होता है।

(२) कीटा अंदर कीटु करि दोसी दोस धरे।
नानक निरगुण गुण करे गुणवंति आ गुणु दे॥ (जपुजी)

(अर्थ) जो दुष्ट कर्म हैं। व च्यूंटो (कीड़ी) के पेट में च्यूंटे बनाते हैं। पापियों को और पापी

कर देते हैं। इसी प्रकार शुभ कर्म निर्गुण से गुण वाला और गुण वालों को अधिक गुण वाला कर देते हैं।

(३) तीरथि नावा जे तिसु भावां विणु भाणे की नाइ करी।
जे तो सिरठि उपाई वेखा विणु करमा कि मिलै लई ।। (जपुजी)

(अर्थ) जो तीर्थ ईश्वर की आज्ञा के अनुसार हैं। ऐसे तीर्थ में स्नान करना चाहिए। क्योंकि अच्छे और शुभ कर्मों का ही फल मिलता है। जितने प्राणीं दिखाई देते हैं। सबको कर्मानुसार फल मिलता है।

(४) जे वडु आपि जाणौ आपि आपि।
नानक नदरी करमी दाति ।। (जपुजी)

(अर्थ) ईश्वर अपनी महिमा का पूरा वृत्त स्वयं आप ही जानता है। परन्तु नानक इतना जानता है कि सबको कर्मानुसार फल मिल रहा है।

(५) चंगिआईआ बुरिआईआं वाचै धरम हजूरि।
करमी आपो आपणी के नेड़ै के दूरि।। (जपुजी)

(अर्थ) शुभाशुभ कर्म उस धर्मराज परमेश्वर के आगे प्रगट हैं। इस लोक में सबको अपने ही कर्मों का फल मिलता है। और का नहीं।

(६) गुरमुखि चूके आवण जाणु।
गुरमुखि दरगह पावै माणु।। (सिद्ध गोष्ठी)

(अर्थ) जो परमेश्वर के प्यारे होते हैं। वह आवागवन से रहित होकर उसके परम पद में मोक्ष को पाते हैं।

(७) जिन हरिहरि नाम न चितिओ।
सो अवगुण आवे जावे ।। (रागसिरी महल्ला १)

(अर्थ) जो परमात्मा की भक्ति नहीं करते और उसका नाम नहीं लेते। वह अवश्य आवागवन के चक्कर में आते जाते रहते हैं।

(८) आवागउणु मिटै गुर सबदी परखै बख़सि लइआ। (सिद्ध गोष्ठी)

(अर्थ) ओ३म् जो गुरु परमेश्वर का शब्द है। उसकी धारणा से मनुष्य आवागवन से छुटकारा पाता है।

(९) बिनु गुर भरमै आव जाइ।
बिनु गुर घाल न पवई थाइ।। (सिद्ध गोष्ठी ३८)

(अर्थ) जो लोग ईश्वर से हटकर औरों से मुराद मांगते हैं। और सीधे ईश्वरीयाज्ञा को पालन नहीं करते। ऐसे लोग सन्मार्ग से फिरे हुए हैं। ऐसे ही लोग आवागवन में आते हैं। उनको मुक्ति नहीं मिलती है। क्योंकि सच्चाई को उन्होंने भुलाया और भ्रम में पड़ गये हैं।

(१०) टूटे बन्धन जनम मरन साध सेव सुख पाइ।
नानक मनहु न वोसरै गुण निधि गोविन्द राइ।। (बावन अखरी २७)

(अर्थ) साधुजनों अर्थात् महत्माओं के सत्संग से जो कि उत्तम कर्म है। उसके कारण से जन्म मरण अर्थात् आवागवन की जंजीर टूटती है। वह सत्संग क्या है? ईश्वर का भजन ऐसा शुभ भजन कभी दिल से न भुलाना चाहिए।

(११) अखीं अन्धा जिह्वा रस नाहीं रहे यह अकरम ताना ।
गुण अन्तर नाहीं क्यों सुख पावे सुन आवन जाना । (सिरी राग)

(अर्थ) मृत्यु मुख है। आंखों का प्रकाश जाता रहा। जिह्वा में रसना शक्ति समाप्त हो गई। तो भी इन्द्रियों के पराधीन होकर मनुष्य गृहस्थ के धंधे कर रहा है। ऐसे मनुष्य का जन्म मरण छूटना बहुत कठिन है। ऐसा व्यक्ति मुक्ति कैसे पा सकता है। क्योंकि शुभ कर्मों का कोई गुण उसके पास नहीं।

(१२) जिउ मछुली फाथी जम जालि ।
विणु गुर दाते मुकति न भालि ॥
फिरि फिरि आवै फिरि फिरि जाइ ।
इक रंगि रचै रहै लिवलाइ ॥ (दखनी ओंकार)

(अर्थ) जिस प्रकार मछली मछुए के जाल में फंस कर पकड़ी जाती है। इस प्रकार बुरा मनुष्य भी लोभ के बंधन में फंसा हुआ आवागवन के जाल में आ जाता है। जब तक सच्चा गुरु नहीं मिलता। छुटकारा असंभव है। एक जाल अर्थात् शरीर से निकलता है तो दूसरे शरीर में पड़ जाता है। हे मनुष्य! यदि मोक्ष का इच्छुक है तो एक परमेश्वर के रंग से रंगीन हो तब छुटकारा पायेगा।

(१३) जो आवणि से जाहि फुनि आए गए पछुताहि ।
लख चउरासीह मेदनी घटै न बधै उताहि॥ (दखणी ओंकार)

(अर्थ) आवागवन में आत्माएं आती और जाती हैं। बार २ मर कर भी वह दुःख से नहीं छूटतीं। यहां तक कि ८४ लाख योनियों (शरीरों) के प्रकार हैं। उनमें वह फिरती रहती हैं।

(१४) हो एं ऐथे बंदना फेर फेर जोनि पाए । [आसा दी वार]

(अर्थ) अहंकार बहुत बुरी बला है। सांसारिक कार्यों और वस्तुओं में अभिमानी मनुष्य आवागवन के बन्धन से नहीं छूटते। यहां बार २ जन्म लेंवेंगे।

(१५) सभो सूतक भरम है दूजै लगै न जाइ ।
जमणु मरणुहुकुमु है भाणै आवे जाइ ॥ (आसा दीवार)

(अर्थ) सूतक का मानना सर्वथा भ्रम अर्थातू झूठा विचार है। क्योंकि सूतक कोई वस्तु नहीं। जो एक मनुष्य से दूसरे पर प्रभाव डाले। हां उत्पन्न होना और मरना ईश्वर की आज्ञा है। और इसी पवित्र आज्ञा से जीवों का आवागवन होता है। किसी के मरने अथवा उत्पन्न होने से सूतक न करना चाहिये।

(१६) जिसके अंतरि राज अभिमानु ।
सो नरक पाती होवत सु आनु ॥
जो जानै मैं जोबन वंतु ।
सो होवत बिसठा का जंतु ॥

आपस कउ करम वंतु कहावै।
जनमि मरै बहु योनि भ्रमावै ॥ (सुखमनि महल्ला ५)

(अर्थ) जो लोग राज्य और शक्ति पर अभिमान करते हैं। वह कुत्ते के शरीर में जन्म लेंगे। और इस नरक को भोगेंगे। जो यौवन पर अभिमान करे। वह पुनर्जन्म में विष्ठा का कीड़ा बनेगा। जो दिखलावे के लिये और संसार में झूठी प्रसिद्धि चाहता है वह और बहुत योनियों में जाता है।

(१७) बहुत जन्म भरमत ते हारिओ स्थिर मत नहि पाइ।
मनस देह पाइ पद हर भज नानक बात बताइ ॥ (सोरठा महल्ला ६)

(अर्थ) अनेक योनियों में फिरते हुए मैं थक गया। परन्तु मुझे स्थिर मति प्राप्त न हुई। मनुष्य शरीर प्राप्त करके ईश्वर की भक्ति कर। यह बात गुरु तेग़ बहादर जी कहते हैं कि मुझे नानक जी के उपदेश से ज्ञात हुई।

(१८) कई जनम भए कीट पतंगा। कई जनम मीन कुरंगा।
कई जनम फंके सरप भयो। कई जनम भयो बरि जीओ।
मिल जगदीस मिलन के बिरिया। चिरं काल एह देह बंजरिया ॥
(राग सोरठा महल्ला ६)

कई जन्मों में हम च्यूंटी और पतंगों के शरीरों में गये। कई जन्मों में हम हाथी, मछली और घोड़े हुए। कई जन्म पक्षियों और सर्पों में हुए, और कई जन्मों में वनस्पति के जीवों के शरीरों में हमने वास किया। अब ईश्वर की कृपा से चिरकाल के पश्चात् मनुष्य शरीर प्राप्त हुआ है।

(१९) कई जनम मेल गर करिया। कई जनम गर्भे रहिया।
कई जनम साख करा पाया। लख चौरासी जूं भरमाया।
साध संग बहु जनम प्रा पत। कर सेव भज हरि हरि गुरमत ॥

कई जन्मों तक हमको पत्थर आदि धातु के शरीरों में जाना पड़ा। कई बार हमारा शरीर गभ में गिर गया। अथवा अन्दर सूख गया। कई बार वृक्षों के शरीरों में आना पड़ा। इसी प्रकार हम चौरासी लाख योनियों में फिरते रहे। परन्तु अब इस मनुष्य शरीर में साधुओं की संगति प्राप्त हुई। अब गुरु ने यह मत दी कि सन्तों की सेवा करो। तथा ईश्वर का भजन करो।

(२०) तुधु विणु सिधी किनै न पाईआ।
करमि मिलै नाही ठाकि वीडिआईआ ॥
रहिरास आसा महल्ला १

(अर्थ) शक्ति और महत्ता जिसको तू देता है मिलती है। उसको भी तू कर्मानुसार देता है। न्याय दृष्टि से न कि अकारण। जब तक मनुष्य भिन्न जन्मों में शुभ कर्म न करे। तब तक मुक्ति खाला जी का घर नहीं।

(२१) तुद् डिट्ठियां सच्चे पादशाहा मल जनम जनम दी कटिये ।

(अर्थ) हे सच्चे राजा परमेश्वर ! जब ज्ञान नेत्रों से आपका दर्शन होता है । तब जन्म २ की मैल कट जाती है ।

(२२) फिरत फिरत मैं हारियो फिरियो तव शरणाई ।
नानक की प्रभ बिनती अपनो भक्ति लाई ।।

(अर्थ) हे परमात्मन् अनेक जन्मों में फिरता हुआ मैं हार गया । अब अन्त में थक कर तेरी शरण में आया हूं । हे ईश्वर ! अब नानक को यह प्रार्थना है कि आप की भक्ति के बिना मेरा मन कहीं न जाए ।

नानक चरित्र के रचयिता ने लिखा है कि गुरु नानक जी ने पुनर्जन्म का सिद्धान्त बताया है । कि बुरे कर्म करने और ब्रह्म को न समझने से आवागवन होता है । इस आवागवन से छूट जाना और परमेश्वर से मिल जाना मुक्ति है । और उसका साधन ईश्वर की भक्ति और गरु की सेवा है । उनकी शिक्षा पर आचरण न करने से जन्म होता है । जन्म जन्मान्तर के रोगी को अज्ञान और स्वार्थ कष्ट देते हैं । इस रोग से वह मनुष्य बच सकता है जिस पर ईश्वर की ऐसी दया हो कि वह गुरु की सेवा करके उस परमेश्वर के नाम का अमृत जल प्राप्त करे । बाहिर के आडम्बर चाहे कितने और कोई हों । मोक्ष नहीं दे सकते । प्रत्युत उलटे स्वयं बंधन बन जाते हैं । जो मनुष्य गरु को मिल कर ईश्वर की इच्छा में रहे । सब कुछ उसी का ध्यान करे और उसको अपना तन मन न्योछावर कर दे । वह जन्म मरण से छट जावेगा और प्रभ उसको मिल जावेगा ।

गुरु नानक जी के पुनर्जन्म सिद्धान्त और मुक्ति का इसलाम के साथ दूर से दूर का सम्बन्ध भी न था । पुनर्जन्म का सिद्धान्त मानने का परिणाम यह हुआ कि सिख मत का ईश्वरीय ज्ञान वही रहा जो हिन्दु मत का था । (पृ० २२३)

कबीर पंथ के संस्थापक कबीर की सम्मति

कबीर जी का वास्तविक नाम अब्दुल्कबीर और पिता का नाम नूरा अथवा नूर अली था । कबीर जी अघन शुदी एकादशी संवत् १५०५ विक्रमी में परलोक सिधारे । यह प्रसिद्ध साधू रामानंद जी के शिष्य हुये तथा इसलाम मत से प्रायश्चित करके वैष्णव मत स्वीकार किया । उन्होंने मूर्ति पूजा का खंडन किया । और पौराणिक मत का भी अच्छी प्रकार स्वयोग्यतानुसार ख़ाका उड़ाया । अपना मत हिन्दु और मुसलमान दोनों को बताया और कुरान तथा मुहम्मदी सिद्धान्तों की बहुत समालोचना की । यह बनारस में उत्पन्न हुए और मथुरा में प्राण त्यागे । इनके मरने पर भी हिन्दु मुसलमान में झगड़ा हुआ । लाश किसी प्रकार छिपा दी गई । राजा वीरसिंह ने बनारस में इनकी समाधि बनाई । और अ़लीखा़न पठान ने इसमें कबर तैय्यार की । और इस ज़ियारत पर मन्सूर अलीखा़न ने जागीर लगा दी । जिसकी आधी आय बनारस के कबीर चोरे वाले बांट लेते हैं ।

कबीर जी ने जिस प्रकार इसलाम मत से हट कर वैदिक धर्म अर्थात् वैस्णव मत स्वीकार किया । इसी प्रकार पुनर्जन्म सिद्धान्त को भी स्वीकार किया । और यही अवस्था समस्त कबीर पंथियों की है ।

वह कहते हैं कि जीव अपने कर्मानुसार शरीर प्राप्त करता और यह क्रम निरन्तर चलता रहता है। जब तक कि शुभ कर्मों से आत्मा की शुद्धि न हो जाये। और परमात्मा को जानकर पाप से न बचे। तब तक आवागवन से नहीं बच सकता। वह हिन्दुओं के स्वर्ग और नरक तथा मुसलमानों के बहिश्त व दोज़ख़ को धोखा और छल कपट समझते हैं। और कहते हैं जो इस संसार में सुख है वही स्वर्ग और दुःख नरक है। वह मांसाहार तथा पशुओं के वध को सबसे बड़ा पाप जानते हैं तथा हलाल हराम के सिद्धान्त को मनुष्य की उपज और पवित्र परमेश्वर पर बहुत बड़ा दोष मानते हैं। हिन्दुओं के उच्च कुलों से वैश्य और कायस्थों के अतिरिक्त और लोग इनके शिष्य नहीं हैं। इस मत ने अपने कार्य का क्षेत्र अधिकतर शूद्र जातियों में रखा है। और यही कारण है कि लाखों कोरी, छींबे, चमार, धानिक, बाफंदे, लोहार, बढ़ई, सईस व घसियारे इत्यादि पुरुषार्थ करने वाले इनके शिष्य हैं। तथा हज़ारों मुसलमान भी मुहम्मदी पद्धति की पूजा छोड़ कर कबीर जी की माला फेरते तथा उनको स्मर्ण करते हैं।

अब हम कुछ उनके भजन अर्थ सहित पाठकों के सम्मुख उपस्थित करते हैं। जिनसे स्पष्ट होता है कि वह पुनर्जन्म को मानते थे।

(१८) लख चौरासी निहार में तहां जीव का वास।
चौदह यम रखराख चार वेद विश्वास।।

(अर्थ) चौरासी लाख की लहरों में जीव का निवास है। चौदह यमों की रक्षा में और चार वेदों पर विश्वास करने से इसका निस्तारा हो सकता है अन्यथा नहीं।

(१९) आप आप सुख सब रमे एक अंड के माहीं।
उत्पत्ति प्रलत दुख्ख सुख फिर आवें फिर जायें।।

(अर्थ) सब प्राणी अपने २ सुख में संलग्न हैं। इस एक सौर परिवार में उत्पत्ति और मृत्यु के सुख दुःख में अनेक बार उत्पन्न होकर शरीर धारण करते हैं और पुनः मर जाते हैं।

(२४) घर घर हम सबसों कही शब्द न सुनो हमार।
ते भवसागर डूबे हैं लख चौरासी धार।।

(अर्थ) हमने सब लोगों से धर्म का उपदेश घर २ जाकर किया। पर उन्होंने हमारी बात न सुनी। अतः यह सब लोग संसार समुद्र की चौरासी लाख लहरों और मौजों में डूबकर सदैव के लिये कभी उत्पन्न होंगे और कभी मरेंगे।

गुर विरोधी और मन लखी नारी पुरुष विचार।
ते नर चौरासी फिरे हैं जब तक शशी दिन कार।।

(अर्थ) गुरु का विरोध करने वाला, और मन के पीछे चलने वाला, पर स्त्री अथवा परपुरुष गामी जो मनुष्य है। वह जब तक सूर्य चांद हैं। चौरासी के चक्कर में रहेगा।

लख चौरासी योनि जीव यह भटके भटक दुःख पाये।
कहे कबीर जो रामः जाने सो मोहे नेकी भावे।।

(अर्थ) चौरासी लाख प्रकार की योनियों में यह जीव भटकता फिरता रहता है। इनमें से जो सर्वव्यापक परमेश्वर का भजन करता है। वह मुझ कबीर को अच्छा लगता है। इति।

पादरी गुलाम मसीह टीचर स्कूल इल्मेइलाही सहारन पुर के रिसाला रद्दे तनासुख़ का उत्तर।

उन्होंने अपनी उक्त रचना को तीन भागों में विभक्त कर अपने खुदावन्द का जलाल प्रगट करने के हेतु अपने विचार में तसलीस (त्रिनेटी) की कठिन समस्या का समाधान कर दिया। परन्तु हमें दो तीन बार उसके अध्ययन से इसके अतिरिक्त और कुछ ज्ञात नहीं हुआ कि उन्होंने मौलवी नूरदीन की तसदीक नामी पुस्तक और रद्दे तनासुख़ तथा मिर्ज़ा गुलाम अहमद के सुरमा चश्मे आर्य व बराहीने अहमदीया व पादरी ब्रह्मबन्धु की पत्रिका सोनी से और अधिक भाग पं० शिव नारायण की पत्रिका से लेकर एक नई रचना कर दी है। जिन सबका उत्तर हम विस्तार से निवेदन कर चुके हैं। इस पर भी हम उनकी सेवा करना ही चाहते हैं।

पादरी—जो वस्तु परिवर्तनशील है। वह नित्य नहीं। यतः संसार और मनुष्य शरीर परिवर्तन शील हैं। जैसा कि हमारे आर्य भाई भी मानते हैं कि जगत् सहस्रों लाखों बार बनाया गया। और पुनः प्रलयावस्था में चला गया। तथा मनुष्य शरीर उत्पन्न होते और पुनः मिट जाते हैं। अतः जो वस्तु नित्य नहीं उसका आरंभ भी किसी समय हुआ।

हमारी दूसरी युक्ति यह है कि प्रत्येक वस्तु से जिस में संयोग पाया जाता है। अवयवों की जिन से उस वस्तु ने संयोग प्राप्त किया है। सत्ता प्रथम है। संसार और मनुष्य शरीर संयोग जन्य पदार्थ हैं। अतः इससे स्पष्ट प्रगट है कि मनुष्य शरीर से प्रथम तथा संसार के वर्तमान संयोग से पूर्व शरीर तथा संसार की प्रकृति पहिले विद्यमान थी। अतः मनुष्य शरीर तथा संसार पश्चात् बना। और जिस क्रम का प्रत्येक अवयव अपने आरंभ और अन्त में अन्त युक्त है तो वह क्रम भी नित्य नहीं हो सकता। अतः जब ईश्वर ने संसार को उत्पन्न किया। तो मनुष्यों के कौन से कर्म थे जिनसे उनको पैदा किया।

(आर्य) निःसन्देह यह संसार लाखों बार बनाया गया। और इसी प्रकार बिगाड़ा गया। यही कारण है कि उसका आरंभ और अन्त है। इसी का नाम आर्य संवत् अथवा सृष्टि संवत् है। इसी को दिन भी कहते हैं। उनकी उत्पत्ति से पूर्व आरंभ और अन्त हैं। परन्तु प्रकृति नित्य है कि जिससे वह उत्पन्न होते हैं। अन्यथा उनका बनना असंभव है। वह प्रकृति केवल प्रथम ही नहीं प्रत्युत अनादि भी आवश्यक है। क्योंकि वह उत्पन्न हुआ पदार्थ नहीं है। यह केवल हमारा ही विचार नहीं। प्रत्युत समस्त संसार के वैज्ञानिक विद्वान् वैदिक धर्म के इस वैज्ञानिक नियम का समर्थन करते हुए उसकी सत्यता के समर्थक हैं। परन्तु ऐसा मानना ईसाई मत से सर्वथा दूर है। क्योंकि ज्ञान युक्त बातों से उसे घृणा है। देखो (रिलीजन इन साईंस) आपने हिन्दु और मुहम्मदी मत का टीचर होते हुए भी आज दिन तक यह नही समझा कि प्रकृति क्या पदार्थ है क्योंकि आप उसे जल, अग्नि, मट्टी समझ रहे हैं। जैसाकि पृ० २१ से प्रगट है परन्तु यह सर्वथा असत्य है। आप प्रकति का लक्षण लाजिक के ग्रन्थों में देखें। अथवा सत्यार्थ प्रकाश के सृष्टि उत्पत्ति प्रकरण पर हृदय टिकायें। अन्यथा समझना कठिन है। प्रतीत होता है कि आप प्रश्न करते समय अनादि के अर्थ भूल गये। अथवा जान बूझ कर हेत्वाभास से काम

लिया अन्यथा ईश्वर, जीव प्रकृमि को स्वरूप से और सृष्टि को प्रवाह से अनादि मानते हुये यह प्रश्न उत्पन्न ही नहीं हो सकता। यह प्रश्न इस प्रकार का है जैसे कोई समानान्तर के अर्थ जानते हुये भी प्रश्न करे कि दो समानान्तर रेखाएं कभी तो मिलनी चाहिए। ऐसे प्रश्न वही करते हैं। जो एक ओर ईश्वर को अजन्मा मानते हैं और दूसरी ओर सर्वशक्तिमान् के अर्थ न जानते हुए उसका मर्यम के गर्भ में आकर अवतार लेना उचित जानते हैं। कृपया आप अनादि शब्द और प्रवाह रूप से अनादि के अर्थ कोश में अध्ययन कीजिए। पुनः आक्षेपार्थ मैदान में आयें। अनादि का लक्षण एक विद्वान् ने अच्छा किया है—

अव्वले ओ अव्वल बे इब्तदास्त-
आख़िरे ओ आख़िर बे इन्तहास्त ।।

अर्थात् प्रथम का प्रथक आरम्भ हीन हो। तथा अंत का अंत अनन्त हो।

(पादरी) पूर्ण मनुष्य शक्ति को देखकर यह परिणाम निकालना कि ईश्वर भी प्रकृति के बिना कुछ नही बना सकता। मिथ्या लाजिक और फलसफ़ा पर आश्रित है।

(आर्य) हमने मनुष्य शक्ति नहीं प्रत्युत ईश्वरीय शक्ति से यह निश्चय किया है कि परमात्मा भी समस्त संसार को प्रकृति से बनाता है। और उसके अनादि काल से अनन्त काल तक यही नियम है। बिना प्रकति उसने आज तक न कुछ बनाया और न आगे आशा है। केवल यही नहीं कि यह ईश्वरीय स्वभाव है। प्रत्युत ईसाई मत के दूसरे खुदा ने भी विना प्रकृति के कुछ बना कर नहीं बताता कि इस प्रकार मेरा आसमानी पिता विना प्रकृति के बनाता है प्रत्युत यूं समझें कि उस विचारे में यह शक्ति ही न थी। वह सारी आयु चाहे वह वहुत थोढ़ा काल जिये तो भी प्रकृति जन्य पदार्थों वायु, पानी, रोटी, शराव और मांस से जीवन के दिन व्यतीत करते रहे। पुनः हम किसी और की साक्षी पर किस प्रकार विश्वास करें। जब आपके ईश्वर जो भी यूसुफ के वीर्य से उसकी विवाहिता पत्नी मर्यम के गर्भ में ठहर कर रजः रक्त भक्षण करते हुए तो पुनः हम किस प्रकार विश्वास करें कि संसार ईश्वर ने बिना प्रकृति के उत्पन्न किया। अपने खुदावन्द के लिये कोई प्रमाण उपस्थित कीजिये। तीन न सही एक ही सही। यदि पूरा न सही अधूरा ही सही। हम मानने को समुद्यत हैं।

(पादरी) जियालोजी के अनुसार पशुओं की उत्पत्ति मनुष्यों से पूर्व हुई। पूर्वज भी मानें तो साथ ही साथ मानें तब भी जिस अवस्था में न्याय नियमानुसार ईश्वर किसी को पशु और किसी को बुद्धिमान् मनुष्य नहीं बना सकता। क्योंकि पशु मनुष्यों की अपेक्षा से बहुत दुख और कष्ट में रहते हैं। जब तक सैकड़ों हज़ारों वर्ष मनुष्यों को पाप करते न बीत गये हों। पशुओं की उत्पत्ति वह नहीं कर सकता। या तो ज्योलोजी मिथ्या है। अथवा पुनर्जन्म सिद्धान्त इसी प्रकार स्त्रियाँ जो वेद शास्त्रानुसार पुरुषों की अपेक्षा नोच मानी जाती हैं। तो उनकी उत्पत्ति भी पुरुष के पश्चात् होनी आवश्यक है। क्योंकि स्त्री उत्पन्न होना भी तो एक प्रकार का दण्ड ही है।

(आर्य) यह आक्षेप भी यद्यपि पुराना है। जिसका कई बार उत्तर दिया जा चुका है। परन्तु आप ने उसका नये ढंग से बर्णन किया है। अतः इसका उत्तर देते हैं। धन्य हैं कि आप ज्योलोजी की ओर आकृष्ट हुए। सम्भवतः आप को ज्ञात नही कि ज्योलोजी से ईस्वीमत को कितना धक्का पहुंचा है। इस विद्या ने बाईबिल का सारा इतिहास, अन्धेरे में डाल दिया। आदम की सत्ता से इनकार कर

दिया। और उसकी समस्त वंशावलि की धज्जियां उड़ा दीं। इसी विद्या ने सिद्ध किया है कि अभी आदम तथा नूह अभाव के पर्दे में छिपे थे कि उनसे करोड़ों वर्ष पूर्व संसार में मनुष्य जीवित विद्यमान थे। (विस्तार देखो प्रावलम्स फ़ार दी फ़्यूचर बाई ऐसलंग साहिब)

ज्योलोजी से सबसे बड़ा भय ईसाई मत को है। हमें कुछ भी नहीं। प्रत्युत वह तो सर्वतः सर्वथा हमारी सहायिका है। सृष्टि को प्रवाह रूप से अनादि मानतो है। यह समस्त रहस्य सुलझ जाते हैं। शर्त यह है कि कोई अनादि के अर्थ जानता हो। और साथ ही यह भी समझता हो कि लाखों सूर्य मण्डल हैं। केवल यही एक संसार नही। जिसके लिये खुदा का इकलौता पुत्र फांसी पा गया। ब्रह्माण्ड बहुत हैं। यह वेद में बार ३ कहा गया है। और विज्ञान पुकार रहा है कि सूर्यों की असंख्य संख्या है। परन्तु बाईबल इस बात से सर्वथा वंचित है। और इस विद्या का इसमें चिह्न तक विद्यमान नही। सच पूछिये तो तीन खुदाओं में से किसी को भी यह बात ज्ञात नहीं थी। अन्यथा अवश्य लिख देते। अतः सृष्टियों के असंख्य होने और सृष्टि उत्पत्ति के प्रवाह रूपेण अनादि होने से वही पशु शरीरों के जीवात्मा नये शरीरो में आते हैं। और एक दूसरे के पश्चात् पुनर्जन्म को प्राप्त होकर उत्तम मध्यमाधम पदों को प्राप्त करते जाते हैं। तथा यह क्रम प्रवाह अनन्त रहता है। कभी सान्त नही होता और न हो सकता है। नूह का विश्व व्यापी तूफान, आदम की वंशावली, और उसकी अकेली उत्पत्ति ज्योलोजी के विरुद्ध है। हव्वा की आदम की पसली से उत्पत्ति और मसीह का पिता के बिना उत्पन्न होना मैडीकल साएंस के विरुद्ध है। मसीह के सितारा का निकलना और आगे २ चलना, यसूअ के सूर्य और चांद का दिन भर खड़ा रहना और पश्चिम की ओर न डूबना ज्योतिष विद्या के विरुद्ध है और आकर्षण विद्या के विरुद्ध है हनूक और मसीह की आकाश यात्रा तथा आसमानों की सत्ता। अतः अब बतलाइये कि हम इन विद्याओं को मिथ्या समझें अथवा उस पुस्तक की जिसमें सत्विद्याओं के विरुद्ध इन घटना का वर्णन है।

हम वेद शास्त्र दृष्टि से स्त्रियों का पद नीच नहीं समझते। प्रत्युत शास्त्र में पिता से अधिक माता का मान करने की आज्ञा है बाईबल स्त्रियों का अपमान करती है

(देखो इस्तिस्ना अध्याय २१ आयत १० से १४)

और इसी प्रकार हव्वा का आदम को पापी बनाना इत्यादि।

—०—

नवमाध्याय

श्री स्वामी दयानन्द जी के पुनर्जन्म पर शास्त्रार्थ
उत्पत्ति १८८१ विक्रमी मृत्यु १९४० विक्रमी

* प्रथम शास्त्रार्थ । मौलवी अहमद हसन से जालंधर में ।

(मौलवी) स्वरूप के प्राप्त हुए बिना सत्ता संभव नहीं । जब सत्ता स्वरूप से उत्पन्न हुई तो अवश्य प्रकृति भी सादि होनी चाहिए । क्योंकि प्रकृति की सत्ता स्वरूप द्वारा ही प्राप्त हुई । वस्तु का कारण वस्तु से पूर्व होता है । तो अब पुनर्जन्म सिद्धान्त के मानने वालों पर आवश्यक होता है कि जगत् सादि हो जब कि वह नित्य मानते हैं ।

(स्वामी जी) स्वरूप दो प्रकार का है एक ज्ञान से ग्रहण होता है । एक आंख आदि से । अतः कारण में स्वरूप है परन्तु वह स्वयं दिखाई नहीं देता । तो उसका स्वरूप क्या दिखाई देगा । यदि इस कारण का कोई स्वरूप न हो तो कार्य में भी नहीं आ सकता । क्योंकि जो कारण के गुण हैं वही कार्य में आते हैं । जैसे एक तिल के दाना में तेल होता है । वह करोड़ दानो में भी समान होता है । लोहे के एक अवयव में तेल नहीं होता । मन भर में भी नहीं होता । जो पदार्थ नित्य हैं । उनके गुण भी नित्य हैं । कारण का होना न होना नहीं कहा जाता है । वह तो नित्य है । और जो पदार्थ नित्य है । जैसे स्वरूप उसके कारण की अवस्था में नित्य है । स्वरूप बिना पदार्थ के पृथक् रह नहीं सकता । वह स्वरूप उसी पदार्थ का है । अतः सिद्ध है कि कारण सनातन है ।

(मौलवी) यह नहीं जो पदार्थ बिना किसी वस्तु के न पाया जाय । तो उसका स्वरूप अर्थात् वही है । उदाहरणार्थ हाथ और चाबी की गति । चाबी की गति बिना हाथ के नहीं पाई जाती । प्रत्युत जब चाबी की गति होगी तो हाथ की गति भी होगी । अर्थात् इन दोनों गतियों में कोई काल किसी के लिए प्रथम अथवा पश्चात् का नहीं हो सकता । और निश्चय के साथ यथार्थ बुद्धि जानती है । कि कुंजी की गति हाथ के बिना नहीं । अर्थात् कुंजी की गति हाथ की गति के आधीन है । यद्यपि वर्तमान काल में एकत्र है । ऐसा ही संसार की प्रकति और उसका स्वरूप यद्यपि काल में एकता है । परन्तु बुद्धि जानती है कि प्रकृति अपने स्वरूप से प्रथम है । क्योंकि गुणी अपने ग्राह्य गुण से प्रथम होता है । प्रकृति की सत्ता का अनुभव और दिखाई देना वह किसी वस्तु के लगने से होता । या तो रूप के लगने से होता होगा । या किसी और वस्तु के लगने से । हर अवस्था में जब कि वह पदार्थ जिसके लगने से

---

* यह शास्त्रार्थ स्वामी दयानन्द जी सरस्वती व मौलवी अहमद हसन प्रसिद्ध वल्ली मुहम्मद पतावरी के २४ सितम्बर १८७७ ईस्वी प्रातःकाल ७ बजे सरदार विक्रमसिंह जी बहादर अहलू वालिया की कोठी पर जालन्धर नगर में हुआ । और उसी समय मौलवी मिर्ज़ामूहिद जालन्धरी ने लिखकर सरदार जी की आज्ञानुसार दिसम्बर १८७७ ईस्वी में छपवाकर पंजाबी समाचार पत्र में प्रकाशित कराया । उस पत्र पृ० ६ से १५ तक यह लिखा है ।

वह प्रकृति जगत् रूप हुई इस प्रकार के साथ कि अनुभूत और दिखाई दे। वह किसी कारण से हुआ। जो पश्चात् उस प्रकृति को निमित्त से हुआ तथा यह जो उत्तर लिखा गया कि कारण का होना नहीं कहा जाता है। विचित्र यह पदार्थ है कि जिसके उपादान कारण में होना या न होना नहीं कह सकते। वह पदार्थ कि जिसका उपादान कारण ऐसा हो उसको होना किस प्रकार हो सकता है। अर्थात् सत्ता वान् पदार्थ अभाव से नहीं बन सकता। यदि उसके नित्य होने से कोई व्यक्ति यह कहे कि वह विद्यमान् नहीं होगा तो यह मिथ्या हैं। क्योंकि अविशेष वस्तु का अभाव जैसे ज़ेंद की प्रकृति को एक विशेष स्वरूप प्राप्त हुआ है जिस के कारण वह ज़ेंद कहलाया। वह विशेष स्वरूप इस आकार युक्त स्वरूप से पूर्व विद्यमान न था। अतः उसको अर्थात् उसके प्रागभाव को प्राचीन कहा जायेगा। स्वरूप के जो दो भेद किये। एक वह जिसको स्वरूप कहते हैं और एक इसके अतिरिक्त। इससे ज्ञात हुआ कि स्व-रूप अप्राकृतिक है।

(स्वामी जी) स्वाभाविक गुण रूप पदार्थ के पश्चात् कभी नहीं होते। जो पीछे हो उसे स्वा-भाविक नहीं कहते। जैसे अग्नि के परमाणुओं का स्वाभाविक अतीन्द्रिय रूप अर्थात् आंख से दिखाई न देने वाला स्वाभाविक रूप सदैव उसके साथ है। जब निमित्त कारण के संयोग करने से स्थूल कार्य हुआ तब उसका इन्द्रिय ग्राह्य रूप प्रगट हुआ। जैसे जल के परमाणु आकाश में उड़कर ठहरते हैं और जब तक बादल नहीं होते। तब तक दीख नहीं पड़ते। हमारा अभिप्राय यह नहीं कि वह प्राकृतिक नहीं है। अथवा प्रकृति के स्बाभाविक गुण उदाहरण जैसे लड़के का होना और लड़के का नहीं होना। जैसे कार्य में यह होना या न होना गुण है। ऐसा ही कारण में नहीं है। जो कारण और कारण के स्वाभाविक गुण हैं। वह अनादि हैं। कार्य वह है जो संयोग से हो और वियोग के पश्चात् न रहे। वह एक संयोग जन्य रूप कार्य का रूप कहाता है। वह प्रवाह से अनादि है। स्वरूपतः नहीं। और ईश्वर के (जो सवज्ञ है और उसका निमित्त कारण अर्थात् बनाने वाला है) ज्ञान में सदा है। और रहेगा। (अन्त के वाक्य का उत्तर ऊपर आ गया)

(मौलवी) प्रथम होना दो प्रकार का होता है। एक स्वाभाविक और दूसरा सामयिक। स्वा-भाविक प्रथमता का वर्णन हम पूर्व कर चुके हैं। जैसा कि हाथ और चाबी की गति। और ऐसा ही स्वभाव की प्रथमता का अपने वास्तविक गुणों पर उदाहरणार्थ जल की ठंडक पर प्रथमता को यथार्थ बुद्धि जानती है। कि शीतता का अस्तित्व पानी के साथ है। इस प्रथमता को स्वाभाबिक प्रथमता माना जायगा। अतः स्वभाव की प्राचीनता उन गुणों पर है। जो उसके स्वाभाविक गुण हैं। गुणी अपने गुणों से अवश्य ही पूर्व होता है। संदेह तो तब हो जब काल की भी प्राचोनता हो। दूसरा काल को प्राचीनता जैसा कि पिता का पुत्र से पूर्व होना। अब स्वभाव का खाली होना अपने वास्तविक गुण पर तब आवश्यक होता है। यदि समय से पूर्व हो। तात्पर्य यह है कि प्रकृति का अपने स्वरूप से पूर्व होना उसकी स्वाभाविक पूर्व विद्यमानता है। क्योंकि पूर्व के योग्य होना स्वीकार किये हुए पर उचित है।

(स्वामी जी) द्रव्य उसको कहते हैं कि जिसमें गुण, क्रिया, संयोग, वियोग होने का स्वभाव रहे। परन्तु जो द्रव्य परिछिन्न अर्थात् पृथक् २ हैं। उनका यह लक्षण है। जो विभू अथवा व्यापक द्रव्य हैं। वे संयोग वियोग स्वभाक से पृथक् रहते हैं। और किसी व्यापक में गुण ही रहते हैं या नहीं जैसे कि परमेश्वर। उसमैं सयोग वियोग नहीं होता। परन्तु क्रिया और गुण हैं। और आकाश, दिशा काल यह व्यापक हैं। परन्तु इनमें क्रिया नहीं। गुण तो हैं।

(मौलवी) यह उत्तर प्रथम प्रश्न से कुछ सम्बन्ध नहीं रखता। क्योंकि इस उत्तर के मध्य में स्वाभाविक और सामयिक भेद नहीं किया गया। विद्या सम्बन्धी स्वरूप के सम्बन्ध में विशिष्ट जैद का प्रागाभाव अर्थात् उसके निश्चित शरीर पर जो एक नियत समय में उत्पन्न हुआ था। वह उसके शरीर की सत्ता से पूर्व प्रागभाव में था। और यह जो विचार किया गया कि बह प्रागभाव उस विशिष्ट शरीर का नहीं है। उसका ज्ञान विषय स्वरूप ईश्वरीय ज्ञान में विद्यमान है। यह केवल मिथ्या है। क्योंकि ईश्वरीय ज्ञान यह विशिष्ट शरीर विद्यमान नहीं है। जिसकी लम्बाई तीन हाथ की है। किसी वस्तु के प्राचीन होने से पदार्थ की सत्ता आवश्यक नहीं हो जाती। शेष रहा ज्ञान सम्बन्धी स्वरूप का विचार। तो ईश्वर का ज्ञान इस स्वरूप के साथ नहीं है। क्योंकि ज्ञान सम्बन्धी स्वरूप वह होता है। जो कि विद्वान् को बाह्य पदार्थ से होता है। जब कि विशेष स्वभाव तथा रूप विशेष को प्राचीन नहीं माना जाता। तो अब ईश्वर के मध्य ज्ञान सम्बन्धी स्वरूप कहां से प्राप्त होता। यदि सनातन थी तो आपके मतानुसार प्रकृति सनातन थी। और जो वस्तु सम्भव से प्रतीत न हो। जैसा कि आप प्रकृति और स्वरूप को मानते हैं। कि प्रथम नैमित्तिक रूप के अनुभूत न था इसका ज्ञान किसी प्रकार से प्राप्त नहीं हो सकता। क्योंकि पदार्थ के ज्ञान का नियम यही है। कि किसी अनुभव के द्वारा सम्मिलित विचार और ज्ञान सम्बन्धी स्वरूप में इसका स्वरूप प्राप्त हो। और इसी को लान सम्बन्धी स्वरूप कहा जाता है। और शेष जल कणों का वर्णन रहा। वह बदल कर भाप बन जाता है। जब कि ऐसा दीखता नहीं है। तो किसी न किसी अनुभव के साथ वह ज्ञात है। ऐसी अवस्था में वह और स्वरूप जो इस प्रकार का माना गया कि इन्द्रिय ग्राह्य ज्ञान नहीं है : तो उसकी सत्ता भी नहीं है। जब प्राचीनता मिथ्या हुई। शेष आवागवन की क्या स्थिति रहेगी ? यदि यूं कहा जाता है कि एक शरीर को छोड़कर दूसरे शरीर को ग्रहण करने के आरण उसके कर्म हैं। जो प्रथम शरीर में प्राप्त किये थे। तो यह प्रगट है कि कर्म गति से प्राप्त होते हैं। और गति काल पर आधारित है। और काल का आदि अन्त तथा मध्य एकत्र नहीं रह सकता। तो इस हेतु से कर्म जो काल द्वारा प्राप्त होते हैं। वह भी अभाव युक्त होते। अथवा दूसरे शरीर से सम्बन्ध किसी विशेषता से न होगा। जब जीवों का सम्बन्ध शरीरों से समान है तो अब विशेष सम्बन्ध से उत्कृष्टता बिना उत्कृष्टता लाने के माननी होगी। तथा इस सम्बन्ध से बहुत हानियां होंगी। क्योंकि जो विशेष गुण प्रथम शरीरों में प्राप्त किये थे। वह दूर हो गये। और दूसरा सम्बन्ध कल्पना करो कि यदि गधे से या कुत्ते से हुआ तो गधे और कुत्ते के शरीर में वह पूर्णता के विशिष्ट गुण प्राप्त नहीं कर सकता। जो मनुष्य शरीर में प्राप्त कर सकता था। अब आपके लिये आवश्यक है कि प्रथम विद्याओं की प्राप्ति (लाजिक) के नियम नियत कीजिये। तत्पश्चात् पुनः सम्बन्ध का कारण निश्चित किया जाय। तो उस पर पुनः शंका की जाय।

(स्वामी जी) दस इन्द्रियों से मौलवी जी का कहना ठीक नहीं। जैसा कि जीवात्मा इन्द्रियों से नहीं देखा जाता। परन्तु उसकी सत्ता है। जो मौलवी जी ने कहा कि अनादि पदार्थ मिथ्या है। क्या यह बात आपने स्वयं घड़ली है। क्योंकि जब मैं लिखवा चुका कि परमेश्वर जगत् का कारण और जीव यह तीन सनातन हैं। इससे सनातन सिद्ध हैं। अभाव से भाव कदापि नहीं होता। जो कोई ऐसा कहे उसका कहना प्रमाण रहित है। जो गधे के शरीर में मनुष्य का जीव जाने से मौलवी जी कहते हैं कि बड़ी हानि होती है। क्योंकि सब कमाई की हुई चली जाती है। जो मौलवी जी ऐसा मानते तो मौलवी जी को सोना कभी नहीं चाहिये। क्योंकि नींद में जागृत की कमाई सब भूल जाती है। जो मौलवी जी कहें कि पुनः जागने से वह ज्ञान आ जाता है तो कुत्ते गधे के शरीर में पाप का फल भोग के जब पाप

पुण्य समान होगा। तब पुनः मनुष्य शरीर में आ जायगा। और पुनः ज्ञान प्राप्त कर सकता है। जैसा कि मनुष्य सो के जाग कर। इससे मैं जानता हूं कि मौलवी जी का और मेरा भाषण बुद्धिमान् लोग आप ही देख लेंगे। परन्तु मेरी समझ में एक जन्म इन बातों से सिद्ध नहीं होता। किन्तु पुनर्जन्म सिद्ध है।

द्वितीय शास्त्रार्थ

पादरी जी. टी. स्काट तथा स्वामी दयानंद जी

स्थान बरेली पुस्तकालय

२५ अगस्त १८७९ ईस्वी।

आवागवन सिद्धि स्वामी दयानंद जी सरस्वती द्वारा। जीव के स्वाभाविक गुण-कर्म और स्वभाव अनादि हैं। और परमेश्वर के न्याय आदि गुण भी अनादि हैं। जो कोई ऐसा नहीं मानता। कि जीव के और उसके गुणादि की उत्पत्ति होती है। उसको उसका नाश मानना भी अवश्य होगा। और इसके कारण आदि की भी निश्चय कराना होगा। क्योंकि कारण के बिना कार्य की उत्पत्ति सर्वथा असंभव है। जो जो जीव के पुण्य पापादि कर्म प्रवाह से अनादि चले आते हैं। उनका ठीक ठीक फल पहुंचाना ईश्वर का काम है। क्योंकि जीवों का बिना स्थूल सूक्ष्म और कारण शरीर के सुख दुःख का भोगना असंभव है। जब यह बात है तो बार २ शरीर का धारण करना भी जीव के लिये आवश्यक है। क्योंकि क्रियमाण कर्म नये २ करता जाता है। जब इस सृष्टि में विद्या की आंख से मनुष्य देखे तो सृष्टि नियम और प्रत्यक्षादि प्रमाणों से ठीक २ सिद्ध होता है। कि देखो जो आज सोमवार है। वही पुनरपि आता है। मास, रात्रि, दिन आदि प्रहर २ आते हैं। और गन्दुम का बीज बोने से पुनः वही गन्दुम उत्पन्न होती है।

(हस्ताक्षर दयानन्द सरस्वती)

आक्षेप पादरी जी. टी. स्काट द्वारा।

इस आवागवन के बारे में केवल सत्य के लिए ढूंडने का यत्न करना चाहिये। हार जीत का विषय नहीं है। यह शिक्षा प्राचीन तो है। किन्तु संसार में से मिटी जाती है। इसका अभिप्राय यह है कि संसार में जितनी आत्माएं हैं। सदा जन्म लेती रहती हैं। कभी मनुष्य शरीर में, कभी बैल के शरीर में, कभी बन्दर के, कभी कीड़े मकोड़े के शरीर में उत्पन्न होती हैं। परन्तु यह ऐसी शिक्षा है कि पठित जातियां इसे छोड़ती जाती हैं। प्राचीन मिश्र वालों ने इसे मान लिया। पुनः छोड़ दिया। इसी प्रकार से यूनानी और रूमियों ने तथा अंग्रेजों ने भी छोड़ दिया। हमारे पुराने द्रविड लोग जो हमारे गुरु थे। यही सिखाते थे। और हम लोग सब के सब मानते थे। परन्तु प्रकाश के फैलने और शिक्षा प्राप्त करने से इस पुरानी निराधार शिक्षा को छोड़ दिया। सो हमारा प्रश्न पंडित जी से यह है कि इस सिद्धान्त के लिये कौन सी युक्तियां हैं। जब कुछ विशेष प्रमाण दिया जावे तो हम उनके रोकने के लिये प्रश्न करेंगे। अभी मेरे दो चार प्रश्न यहां पर हैं:—

(१) क्या ईश्वर की आत्मा के अतिरिक्त और आत्माएं अनादि काल से हैं अथवा नहीं।
(२) इस जन्म लेने से कभी विश्राम होगा या नहीं ?

(३) आपकी यह प्रतिज्ञा कि सब दुःख जो संसार में होते हैं। दंड के योग्य हैं। पुनर्जन्म केवल दंड के लिये है। अथवा और कोई कारण भी है ?

(४) यह भी एक प्रश्न है क्या परमेश्वर प्रति समय सगुण है या कभो निर्गुण भी होता है ?

(५) यह जन्म लेना उसकी विशेष कुदरत से सदैव होता है या किसी कुदरत के नियम से होता है जैसे बीज का उगना, फल का पकना, पानी बरसना आदि।

(हस्ताक्षर टी. जी स्काट)

स्वामी दयानंद सरस्वती जी :—

तीन पदार्थ अनादि हैं। एक ईश्वर, एक कारण और सब जीव। जन्म से कभी विश्रन्ति न होगी। पुनर्जन्म केवल सुख दुःख रूप पुण्य पाप फल दोनों के लिये है। परमेश्वर सगुण और निर्गुण सदा रहता है। उसका स्वाभाविक नियम यह है कि जैसा जिसने पाप पुण्य किया। उसको ऐसा ही अपने सत्य न्याय से फल देता है। अब पादरी जी ने जो कहा था कि प्राचीन शिक्षा भी पुनर्जन्म की हमारे मध्य थी। उससे सिद्ध हुआ कि सब देशों में प्रथम पुनर्जन्म माना जाता था। और यह जो कहा कि जो जाति सुधरती जाती है। वह पुनर्जन्म सिद्धान्त को छोड़ती जाती है। अब इस पर एक प्रश्न है कि पुरानो बातें सर्वथा असत्य अथवा कुछ सत्य भी होती हैं। और नवीन शिक्षा सब सत्य या उसमें कुछ झूठ भी है। जो पादरी जी कहें कि पुरानी मानने के योग्य नहीं तो तौरेत, ज़बूर और इञ्जील की शिक्षा आज ही की अपेक्षा से पुरानो है। यह भी न माननी चाहिए। यह कोई बात प्रामाणिक नहीं कि पहले मानते थे। अब नहीं मानते। अतः सत्य अथवा असत्य है। या पहिले नहीं मानते थे। और अब मानते हैं। अतः झूठी या सच्ची है।

अब पादरी जी ने कहा कि कुछ प्रमाण हो तो हम उस पर कुछ प्रश्न करें। उसके प्रमाण के लिए मैंने प्रथम लिख दिया। कि जीव के कर्मादि अनादि और ईश्वर का न्यायादि भी अनादि है। जो कर्म की बात न मानी जाए तो सृष्टि में बुद्धिमान्, निर्बुद्धि, दरिद्र, राजा और कंगाल की व्यवस्था ईश्वर किस प्रकार से कर सके। क्योंकि उसमें पक्षपात का दोष आता है। और पक्षपात से उसका न्याय ही नष्ट हो जाता है। जब कर्म के फल हैं तो परमेश्वर न्यायकारो बनता है। अन्यथा नहीं और ईश्वर अन्याय कभी नहीं करता।

(हस्ताक्षर दयानन्द सरस्वती)

पादरी स्काट:—पंडित जी के कहने से समस्त जीव अनादि से हैं। तो इस हिसाब से हमारी और उनकी अनादिता में कुछ भी अन्तर नहीं है। अर्थात् दो पदार्थ अनादि से हैं। एक प्रकार से दो परमेश्वर हुए। मेरा यह प्रश्न है कि तौरेत, ज़बूर और इन्जील के सर्वथा विरुद्ध यह है। मैं यह पूछता हूं कि किस शिक्षा में अधिक सन्तोष है ? अर्थात् हमारी आत्माएं सदैव के लिए आश्चर्य में भ्रमण करती रहेंगी। कभी बैल के शरीर में, कभी बन्दर के शरीर में कभी कीड़ों मकोड़ों के शरीर में और कभी किसी अच्छे शरोर में। ऐसे अनादि दो रहें। अधिक संतोसप्रद है अथवा तौरेत ज़बूर और इञ्जील की शिक्षा में कि अन्ततो गत्वा जो लोग पुण्य के लिए यत्न करते हैं। तथा नेक बनते हैं। एक ऐसे विश्राम स्थान में पहुंचेंगे कि पुनः जन्म न लेना होगा। न किसी प्रकार का कष्ट होगा ध्यान दीजिए कि किस पुस्तक की शिक्षा में अधिक सन्तोष है? इसके अतिरिक्त परमेश्वर किस प्रकार

निर्गुण और सगुण दोनों हो सकता है। कि उस में गण भी है और वह बिना गुण के भी है। वह क्या पदार्थ है कि जिसमें कोई गुण नहीं हैं? कहिए उस में न्याय का गुण नहीं तो न्याय कैसे करे। तथा पुनर्जन्म द्वारा लोगों को दण्ड क्योंकर देवे। ऐसे निराधार विचारों के कारण से पंडित जातियां इस सिद्धान्त को छोड़ती हैं। इसके अतिरिक्त यदि पुनर्जन्म दण्ड के लिए है। तो इसमें क्या दन्ड हुआ? उदाहरणार्थ जब बन्दर जानता ही नहीं कि मैंने क्या दोष किया है अथवा कोई पादरी या पण्डित जी कोड़े मकोड़ों के शरीर में उत्पन्न हुए। तो उनको दण्ड कैसे मिला? वह जानते ही नहीं कि हमने क्या दोष किया है? क्या किसी को स्मरण है कि मैं अमुक जन्म में बन्दर था अथवा किसी काल में गीदड़ था? और जब समस्त संसार में किसी को स्मर्ण नहो है। तो ऐसे पुनर्जन्म में किसी को क्या दण्ड है? हम मानते हैं कि दुःख कभी कभी दण्ड के लिए होता है और कभी नहीं भी।

(हस्ताक्षर टी० जी स्काट)

स्वामी दयानन्द सरस्वती जीः—

दोनों अनादि होने से समान नहीं होते कि जब तक उनके गुण समान न हों। परमेश्वर अनन्त जीव सान्त, परमेश्वर सर्वज्ञ जीव अल्पज्ञ, परमेश्वर सदा पवित्र और मुक्त तथा जीव कभी बन्ध कभी मुक्त। अतः दोनों समान नहीं हो सकते।

तौरेत, इन्जील, ज़बूर के विरुद्ध होने से सत्य बात असत्य नहीं हो सकतीं। क्योंकि तौरेत आदि से भी भ्रम से सत्य को असत्य और असत्य को सत्य बहुत स्थानों पर लिखा है। सच्ची तो उस पुस्तक की बात हो सकती है कि जिसमें आरम्भ से अन्त तक एक भी झूठ न हो। एसी पुस्तक वेदों के अतिरिक्त भूगोल में ईश्वर कृत कोइ भी नहीं। क्योंकि ईश्वर के गुण कर्म स्वभाव के अनुकूल वेद ही पुस्तक है। दूसरी नहीं। वेद के उपदेश के अतिरिक्त किसी पुस्तक में ठीक २ सब बातों का निश्चय नहीं देता। अतः सर्वोत्तम वेद की शिक्षा है। दूसरे की नहीं।

परमेश्वर अपने गुणों से सगुण है। अर्थात् सर्वज्ञादि गुणों से और कारण के जड़ादि गुण तथा जीव के अज्ञान, जन्म-मरण श्रमादि गुणों से रहित होने से परमात्मा निर्गुण है। अतः निश्चय जानना चाहिए कि कोइ पदार्थ इस रीति से सगुणता और निर्गुणता से रहित नहीं। जब जीव का पाप अधिक और पुण्य न्यून होता है। तब बन्दर आदि का जन्म लेना पड़ता है। और जब पाप पुण्य समान होते हैं तब मनुष्य और पुण्य अधिक तथा पाप न्यून होता है। तब विद्वान आदि के शरीर पाता है।

(हस्ताक्षर दयानन्द सरस्वती)

पादरी स्काटः—

सब पुरानी शिक्षा असत्य नहीं और न सब नवीन शिक्षा सत्य है। परन्तु जब पठित जातियां सोचते २ किसी बात को असत्य ठहरावें। तो बलवती युक्ति है कि वह असत्य तो है। और एक ही बार जन्म लेने के विषय में सोच लीजिए। यह नइ नहीं है बहुत पुरानी है। तौरेत वेद से नइ नहीं है। उसमें पुनर्जन्म सर्वथा नहीं। तौरेत और इन्जील के झूठे होने के बारे में अब मुकद्मा (शास्त्रार्थ) नहीं है। नहीं तो इस झूठी प्रतिज्ञा को खण्डित करते कि यह झूठी नहीं। वेद के बारे में कुछ नहीं कहता। उसका भी मुकद्मा नहीं है परन्तु इस बात पर ध्यान दीजिए कि पठित जातियां तौरेत और

ईञ्जील पर स्थिर रहती हैं। परन्तु हिन्दु लोग स्वयं जो पठित हैं और जितने पठित होते जाते हैं। वह वेद को छोड़ते जाते हैं। आवश्यक हो तो सौ युक्तियां दे सकता हूँ और यह कहना कि कर्म अनादि से है अतः पुनर्जन्म होता है। तो परमेश्वर को भी पुनर्जन्म लेना चाहिए। और यदि कोइ कहे कि उसके कर्म सब अच्छे है तो क्या कठिन है कि उसकी दया और उदारता से हम भी ऐसे पक्के हो जावें कि फिर बन्दर या गीदड़ बनना न पड़े। जैसे हमारी पवित्र पुस्तक में लिखा है कि एक बार मनुष्य के लिए मरना है उसके पश्चात् न्याय।

निगुण सगुण के विषय में स्वामी जी के अर्थ को मैं नहीं मानता। निर्गुण के अर्थ यह नही हैं कि कुछ गुण न हों। जब उस में गुण नहीं है तो सगुण नहीं है तो उस समय शरीर लेने का प्रबन्ध कौन करता है। अब पुनः मैं पूछता हूं कि यदि दण्ड के लिए जन्म लेना है तो यह भी चाहिए कि दण्ड में दण्ड लेने वाला स्मर्ण करे कि मुझे दण्ड क्यों मिलता है। अन्यथा दण्ड व्यर्थ है। मैं पुनः पूछता हूं कि किसी को स्मरण क्यों नहीं रहता कि हम बंदर गीदढ़ गत जन्म में थे।

(हस्ताक्षर स्काट साहिब)

स्वामी दयानन्द जी सरस्वती :—

प्रथम प्रश्न के विषय में उत्तर यह है कि जीव अल्पज्ञ है अतः पूर्वजन्म की बात को स्मरण नहीं रख सकता है। पादरी जी को ध्यान देना चाहिए। कि ऐसी बात क्यों पूछते हैं ? क्योंकि इसी जन्म में जन्म से पांच वर्ष तक की बात क्यों स्मरण नहीं रहती ? और सुषुप्ति अर्थात् बहुत गहरी नींद में जब सो जाता है। तब जागृत की बात एक भी स्मरण नहीं रहती है। कार्य कारण के अनुमान से अर्थात् कार्य को देखकर कारण का निश्चय कर लेना सब विद्वान् लोग मानते हैं। जब पाप पुण्य का फल सुख दुःख नीच ऊंच जगत् में दीखता है। तो कारण जो पूर्व जन्म का कर्म है। सो क्यों नहीं ? पुरानी नई शिक्षा दृष्टान्त के लिए पर्याप्त नहीं क्योंकि सर्वथा सत्य नहीं और जिनको पठित मानते हैं। उन जातियों में कोई ममुष्य अर्थात् फ़लासफ़र (डारविन) बन्दर से मनुष्य का जन्म होना मानता है। क्या यह सर्वथा असत्य है ?

यह वेद की बातें हैं। वेदी का बनाना। इब्राहीम को खुदा ने कहा कि इससे मैं प्रसन्न होता हूं। तुम यज्ञ किया करो। इत्यादि वेद की बात बाईबल में विद्यमान है। और ईसा ने भी साक्षी दी है कि उसका शब्द भी झूठ नहीं है। अतः और दूसरी युक्ति देता हूं कि आजकल मैक्स मूलर आदि व्याख्यान दाता अपनी पुस्तकों में लिखते हैं कि ऋग्वेद से पूर्व की पुस्तक भूगोल में कोई नहीं। अब मैं सैकड़ों साक्षी दे सकता हूं। कि बाईबल इन इन्डिया के निर्माता आदि और आजकल के फलासफर सैकड़ों की वाणी से मैंने सुना है। कि बाईबल और इञ्जील को नहीं मानते। कर्नल अल्काट आदि ने भी बाईबल की शिक्षा को सर्वथः छोड़ दिया है। हमारे आर्य ऐल. ए. बी. ए. ऐम. ए. ऐल. ऐल. डी. आदि लाखों लोग बाईबल को नहीं मानते तथा पठित हैं। अतः यह पादरी जी का दृष्टान्त पर्याप्त नहीं।

परमेश्वर का पुनर्जन्म नहीं होता। क्योंकि अनंत और सर्व व्यापक है। शरीर में नही आता और नित्य मुक्त है। बंधन का कार्य कभी नहीं करता।

(हस्ताक्षर दयानन्द सरस्वती)

पादरी स्काट जी: –

पंडित जी की प्रतिज्ञा बालक के उदाहरण से कि वह किसी बात को स्मरण नहीं करता। जो बालपन में हुई। सो यहां असत्य ठहरती है। क्योंकि बच्चे कुछ तो स्मरण भी करते हैं। और यह प्रश्न आवश्यक हो जाता है कि जब हमारी आत्मायें अनादि से हैं। तो अब तक बच्चे में चाहिए कि कुछ बढ़ गए हूं। तो इस जन्म की कोई बात क्यों स्मर्ण नहीं रहती। इस युक्ति पर ध्यान दीजिए। संभव प्रतीत नहीं होता कि हम अनादि काल से चले आते हैं और जन्म में आकर सब बात भूल गई। तथा पुनः जन्म लेने के दण्ड का कुछ प्रयोजन भी न निकला। नीन्द का जो वर्णन हुआ। सो उत्तर से सिद्ध होता है कि नीन्द की बात भी स्मर्ण रहती है। कुछ मनुष्य नींद के समय बड़े विचार निकालते हैं। यहां पर एक परिपक्व प्रश्न का वर्णन करना चाहता हूं। इस शिक्षा से संसार में पाप को बहुत सहारा प्राप्त होता है। क्योंकि लोग कहते हैं कि जो चाहें सो करें भोगेंगे किसी और समय में। अच्छा जन्म भी होगा।

यह भी कहते हैं कि यह चक्र सदैव रहेगा। क्या करें हम जानते हैं कि जो कष्ट संसार में है। उनका कोई कारण अवश्य होगा। कभी दण्ड के लिए और कभी श्रेष्ठों को कि उनकी शिक्षा भांति २ की मिली हैं।

कथा है कि राजा का लड़का था। पण्डित के पास शिक्षा के लिये रखा। पण्डित ने उसको सब प्रकार चतुर किया। पुनः राजा के पास लाया और उससे कहा कि केवल एक ही कार्य शेष है। उसने पूछा कि उसने कुछ अपराध किया। कहा कि नहीं। कहा कि मुझे चाबुक देना और स्वयं सवार होकर लड़के से कहा कि दौड़ो और उसको खूब मारता गया। पुनः राजा के पास ले आया। राजा ने कहा कि यह क्यों किया ? पण्डित ने कहा कि दूसरों के साथ सहानुभूति रखना सीखे। दयालु हो जाये। सो संभावना है कि श्रेष्ठों को भी कष्ट किसी अच्छे प्रयोजन के लिए प्राप्त हों। कुछ आवश्यक नही कि पुराने जन्म के कारण से हों। डारविन आवागमन नहीं मानते। केवल यही कहते हैं कि संसार में पशु उत्तरोत्तर उच्च जाति में होगा। यह प्रयोजन नहीं कि कोई पशु अब और पहिले भी था। करनल अल्काट का कहा गया सो उसकी विचार-धारा सुन लीजिये तो ज्ञात होगा कि कैसे मनुष्य हैं ?

(हस्ताक्षर टी० जी० स्काट)

स्वामी दयानंद सरस्वतीः—

बालक के दृष्टांत से मेरा यह प्रयोजन कि वह जो २ सुख दुःख भोगता है। उसका स्मर्ण उसको अपने से नहीं होता है। जीव का स्वाभाविक गुण एक सा रहता है। किंतु नैमित्तिक गुण घटते रहते हैं अतः जीव एकसा है। परंतु उसके ज्ञान की सामग्री पांच वर्ष के पश्चात् बढ़ती जाती है। अब पादरी जी या मुझसे कोइ पूछे कि दस वर्ष पूर्व किसी से पुनः बातचीत की। समान पद अक्षरों से स्मर्ण है ? तो यही कहना पड़ेगा कि ठीक २ स्मर्ण नहीं। जब सदैव से जीव नहीं तो कहां से हुए ? जेलखानों के कैदियों के अपराधों को सब लोग ठीक २ गिन के नहीं जानते। परंतु अनुमान करते हैं। कि किसी अपराध के कारण हीं जेलखाना में डाला गया है। अतः मैं कभी पाप न करूं। अन्यथा मेरी भी यही अवस्था होगी।

पादरी जी मेरे अभिप्राय को नहीं समझे। वह स्वप्न की बात नहीं है। वह सुषुप्ति की बात है। कि जिस निद्रा में कुछ भी स्मर्ण नहीं रहता। उस निद्रा में एक भी विचार कोई भी नहीं कर सकता है। जो लोग पुनर्जन्म नहीं मानते उनकी शिक्षा से संसार में पाप बहुत बढ़ते हैं। क्योंकि आगे जन्म लेना ही नहीं है। तो जो मन में आवे वह करते रहो और व्यर्थ दौरा सुपुर्द हुआ अर्थात् अ.ज मरा और क़यामत तक वैसा ही बन्दीगृह में पड़ा रहा। कचहरी का द्वार बंद और ख़ुदा बेकार बैठा है। जो गया भी तो दोज़ख में। वह वहां का हो रहा। तथा जो जन्नत में गया वह वहां का हो रहा। कर्म तो सीमायुक्त किये जाते हैं। तथा उसका परिणाम सीमारहित मिलता है। ईश्वर पर यह बड़ा अन्याय का दोष आता है। तथा आशा वाद के बिना मनुष्य ठीक नहीं रह सकते। केवल शोक से कष्ट का कौन सा कारण है? तथा जो शिक्षा और उपदेश के लिए कष्ट मिलता है। वह सुधार के लिए है। परन्तु उसका फल विद्याधीन है।

पादरी जी नें कहा था कि एक मकान में सदा सुख भोगेंगे। वह मकान कौन सा है और कहां है?

(हस्ताक्षर दयानन्द सरस्वती)

पादरी अस्काट जी:—

कर्नल अल्काट का एक काग़ज़ मेरे पास है कि जिसमें ईसाईयों और पादरियों की तथा ईसाई मत के सम्बन्ध में ऐसे व्यर्थ और कठोर शब्द हैं कि मैं किसी बाज़ारी दुराचारी के सम्बन्ध में न कहता।

कहते हैं कि यह कठोर हृदय निर्दयी हैं। संसार में यह समस्त ख़राबियों के आधार हैं और ईसाई मत बुराई की जड़ है। इसके अतिरिक्त और प्रकार के कठोर वचन भी हैं। ध्यान दीजिए कि इस व्यक्ति का मन और बुद्धि कैसे होंगे? स्वयं ध्यान दीजिए। यह बात सिद्ध नहीं होती कि वेद तौरेत से पुराना है। इसलिये कि तौरेत में कुर्बानी का वर्णन है। हम प्रतिज्ञा कर सकते हैं कि प्रथम उसमें हुआ। वेद वालों नें तौरेत से ले लिया। दोनों बात का दोनों में वर्णन है तो कोई नहीं कह सकता किस में प्रथम हुआ?

यह कहना कि कुछ गुण स्थिर हैं। और कुछ गुण नहीं हैं। अतः हमें जन्म का स्मर्ण नहीं रहता। कुछ गुण तो स्थिर रहता है और चाहिए यह भी कि कोई बात पुराने जन्म की स्मर्ण हो।

यदि हमारी और पंडित जी की बातचीत दस वर्ष हुए कहीं हुई हो। कुछ बातें तो अवश्य स्मरण रहती हैं। नींद का उदाहरण ठीक नहीं। क्योंकि यदि कभी नींद में बात स्मरण नहीं रहती। तब भी प्रायः बात स्मरण रहती है। सो पुराने जन्म की कोई बात क्यों स्मरण नहीं रहती है। जेल ख़ाना का उदाहरण है सो वह भी पूरा नहीं। दंड का केवल एक प्रयोजन इससे प्रगट हुआ। दंड में दो प्रयोजन हैं। एक तो दंडित मनुष्य को सुधारने के लिये तथा दूसरा अभिप्राय देखने वालों को उपदेश। परन्तु पुनर्जन्म में केवल देखने वालों को उपदेश है। यह नहीं कि उस व्यक्ति को दंड का वृत्त ज्ञात हो कि यह दंड मुझे क्यों मिला।

रहा यह प्रश्न कि आत्माएं कहां से आई हैं। पठित जातियों में आजकल यह दावा है कि जैसे बीज से बीज, वृक्ष से वृक्ष उत्पन्न होता है और कोई नहीं कहता है कि यह वृक्ष पहिले हुआ। इसी प्रकार जीव से जीव, शरीर से शरीर उत्पन्न होता है। तो भी यह बात बुद्धि से परे है कि विशेषत: शरीर किस प्रकार से उत्पन्न होता है ? तथा जीव किस प्रकार उत्पन्न होता है। किन्तु यह नहीं कि यह जीव जो अब विद्यमान है। सो पहिले किसी शरीर में था अभी उत्पन्न हुआ और जब यहां से जावे उसका नया ठीक २ कर्म ऊपर हुआ तो परमेश्वर अन्यायी नहीं। इससे भी परमेश्वर का न्याय सिद्ध होता है। और यह सदा आत्मा कहां रहती है ? हम दावा नहीं करते हैं कि हम परोक्ष को जानते हैं। सुख का स्थान बताएं कि वह कहां है। सर्व शक्तिमान् ईश्वर जीवात्मा को सुख का स्थान दे सकता है। हमारा जानना न जानना क्या हुआ ?

(हस्ताक्षर स्काट साहिब)

स्वामी दयानंद सरस्वती :—

जो कर्नल अलकाट के विषय में पादरी जी ने कहा कि वह अच्छा पुरुष नहीं। यह तो मैं ठीक २ नहीं मान सकता। क्योंकि जिनसे विरोध होता है। वह दोनों परस्पर के विषय में उलटा सूधा कहते हैं। वेद तौरात से बहुत पुराना है। क्योंकि जिसकी बात पूरी से अधूरी दूसरे ग्रन्थ में लिखी हो वह उससे पूर्व होता है।

बचपन में नैमित्तिक ज्ञान न्यून होता है। और स्वाभाविक समान रूप से सब समय रहता है। इस बात को पादरी जी ठीक २ नहीं समझते। जो कि अग्नि के संयोग से जल में गरमी आती है। वह नैमित्तिक है। और जो आग में गरमी है सो स्वाभाविक है। जो २ जीव के स्वाभाविक गुण हैं। वह न्यूनाधिक नहीं होते। किन्तु नैमित्तिक न्यूनाधिक होते हैं। जो पादरी जी ने कहा कि जेल खाना के बन्दियों को देखकर देखने वालों को भय होता है। कि मैं ऐसा कर्म न करूं। परन्तु जिसको पुनर्जन्म के कारण से दंड मिलता है। उसको स्मरण नहीं। जैसे और लोग कार्य से कारण को मानते हैं। क्या वह न जानेगा ?

एक वैद्य को ज्वर आया और एक मूर्ख को भी ज्वर आया। वैद्य ने ज्ञान से ज्वर का कारण जान लिया। कि अमुक कारण से मुझको ज्वर है। उस गंवार ने नहीं जाना। परन्तु ज्वर का कष्ट दोनों के ज्ञान में है। गंवार यह जानता है कि किसी कुपथ्य सेवन सेमुझे ज्वर आया है। अतः उसे दंड से सुधरने का फल मिलता है। कि जो मैं कर्म करूंगा तो बुरा फल जैसा कि उसको है वह मुझको मिलेगा। जब जीव से जीव और शरीर से शरीर उत्पन्न होते हैं। तो आपका निर्माता ईश्वर नहीं। अतः आप का वचन ठीक रहीं रहा। और सर्वतः प्रथम आपके वचनानुसार जो २ जीव हुए। वे किन २ जीवों और शरीरों से हुए। जो कहें कि परमेश्वर से हुए। तो परमेश्वर भी मनुष्य, घोड़े, वृक्ष और पत्थर के अनुसार हुआ। क्योंकि जिसका कार्य जैसा होता है। उसका कारण वैसा ही होता है।

मध्य में दौरा सुपुर्द करना बहुत दिन तक कि जो दंड से भी भारी है। पुनः उसको स्वर्ग या नरक किन कर्मों से मिल सकता है ? कोई भी नहीं। जब आप सर्वज्ञ नहीं तो क्यों दावा करते हैं कि पुनर्जन्म नहीं। इससे आपका एक जन्म सिद्ध नहीं होता और पुनर्जन्म सिद्ध हो गया।

(हस्ताक्षर दयानंद सरस्वती)

तीसरा शास्त्रार्थ चांदापुर (शहाजहानपुर)
(२ मार्च १८७७ ईस्वी)

पादरी टी. जी. स्काट साहिब अपने २ पादरियों के साथ २ मार्च १८७७ ईस्वी की रात्रि को स्वामी जी के डेरा पर पधारे। स्वामी जी ने शाम्याने के नीचे कुर्सियां बिछवा कर बड़े सत्कार के साथ पादरियों को बिठलाया। और आप भी बैठ गये। पुनः परस्पर वार्ता होने लगी। धीरे २ पुनर्जन्म सिद्धांत के संबंध में पादरियों ने पूछा कि आवागवन सत्य है या असत्य। और इसका क्या प्रमाण है।

स्वामी जी ने कहा कि आवागवन सत्य है जो जैसे कर्म करता है। वैसा ही शरीर पाता है। यदि शुभ कर्म करता है तो मनुष्य का शरीर पाता है। तथा अशुभ कर्म करने से पशु आदि का शरीर प्राप्त होता है। यदि सब अच्छे कर्म करता है तो वह देव अर्थात् विद्वान् बुद्धिमान् होता है। देखो जब बच्चा उत्पन्न होता है। तब उसी समय अपनी माता का दूध पीने लग जाता है। कारण यह है कि उसको पूर्वजन्म का अभ्यास बना रहता है। यह भी एक पुनर्जन्म का प्रमाण है। सौभाग्यशाली दुर्भाग्यशाली तथा हर प्रकार के ऊंच नीच पद और सुख दुःख देखने से प्रगट होता है। कि जीव अनादि है। कि जिसका आदि और अन्त नहीं। जिस योनि से जीव जन्म लेता है। उस योनि का कुछ स्वभाव आदि भी बना रहता है। इसी कारण से मनुष्यादि लोग भिन्न २ स्वभावों के होते हैं। यह भी आवागवन का एक प्रमाण है। तथा और प्रमाण भो बहुत हैं। किन्तु एक बार ही जोव का उत्पन्न होना तथा पुनः कभी उत्पन्न न होना इसका प्रमाण नहीं हो सकता। क्योंकि जो मैंने बताया। उसके विरुद्ध होना चाहिए। सो ऐसा होना असंभव है। तथा यह बात कि मरा और हवालात हुई। अर्थात् जब क्यामत होगी। तब उसका हिसाब होगा। जब तक बिचारा हवालात में रहे। ऐसी व्यवस्था मानना अच्छा नहीं है। इसके पश्चात् पादरी लोग चले गये।

(दोनों पृ० ७३, ७४ उक्त शास्त्रार्थ उर्दू प्रकाशित लाहौर)

सत्यार्थप्रकाश से उद्धृत

(प्रश्न) जन्म एक है या अनेक ?

(उत्तर) अनेक।

(प्रश्न) जो अनेक हों तो पहिले जन्म और मौत की बातों का स्मरण क्यों नहीं ?

(उत्तर) जीव अल्पज्ञ है। त्रिकालदर्शी नहीं। अतः स्मरण नहीं रहता। और जिस मन से ध्यान करता है। वह भी एक समय में दो ज्ञान नहीं कर सकता। भला पूर्व जन्म की बात तो दूर रहने दीजिए। इसी देह में जब गर्भ में जीव था। शरीर बना। पश्चात् जन्मा। पांचवें वर्ष से पहिले तक जो २ बातें हुई हैं। उनका स्मरण क्यों नहीं कर सकता ? जागृत स्वप्न में बहुत सा व्यवहार पृथक् २ में करके जब सुषुप्ति अर्थात् गाढ़ निद्रा में होता है। तब जागृत आदि व्यवहार का स्मरण क्यों नहीं कर सकता ? और तुमसे कोई पूछे कि बारह वर्ष के पश्चात् तेरहवें वर्ष के पांचवें मास के नवमें दिन दस बजे पर

प्रथम मिनिट पर तुमने क्या किया था। तुम्हारा मुख हाथ कान नेत्र शरीर किस २ प्रकार का था? और मनमें क्या विचार था?

जब इसी शरीर में ऐसा है तो पूर्वजन्म की बातों के स्मण में आक्षेप करना सर्वथा बालपन की बात है। और जो स्मर्ण नही होता है। इसी से जीव सुखी है। नहीं तो सब जन्मों के दुःखों को देख २ दुःखित होकर मर जाता। जो कोई पूर्व और पीछे जन्म के वर्तमान को जानना चाहें तो भी नहीं जान सकता। क्योंकि जीव का ज्ञान और स्वरूप अल्प है। यह बात ईश्वर के जानने योग्य है जीव के नहीं।

(प्रश्न) जब जीव की पूर्व जन्म का ज्ञान नहीं। और ईश्वर उसको दण्ड देता है तो जीव का सुधार नहीं हो सकता। क्योंकि जब उसका ज्ञान हो कि हमने अमुक काम किया था। उसी का यह फल है। तभी वे पाप कर्मों से बच सकें।

(उत्तर) तुम ज्ञान कितने प्रकार का मानते हो?

(प्रश्न) प्रत्यक्षादि प्रमाणों से आठ प्रकार का।

(उत्तर) तो पुनः तुम जन्म से लेकर समय २ राज, धन, बुद्धि, विद्या, दरिद्र, निर्बुद्धि, मूर्खतादि सब दुःख संसार में देखकर पूर्वजन्म का ज्ञान क्यों नहीं करते। जैसे एक वैद्य और एक मूर्ख को रोग हो उसका निदान (कारण) वैद्य जान लेता है। और मूर्ख नहीं जान सकता। उसने वैद्यक शास्त्र को पढ़ा है। और दूसरे ने नहीं। परन्तु ज्वर आदि रोग होने से मूर्ख भी इतना जान सकता है कि मुझसे कुछ कुपथ्य हो गया है। जिससे मुझे यह रोग हुआ। वैसे ही जगत् में विचित्र सुख दुःखादि की घटती बढ़ती देखकर पूर्व जन्म का अनुमान क्यों नहीं जान लेते। और जो पूर्वजन्म को न मानोगे तो परमेश्वर पक्षपाती हो जाता है। क्योंकि पाप के बिना दरिद्रादि दुःख और बिना पूर्व संचित पुण्य के दरिद्रता और निर्बुद्धिता उसको क्यों दी? और पूर्वजन्म के पाप पुण्य के अनुसार दुःख.सुख के देने से परमेश्वर न्यायकारी यथावत् रहता है।

(प्रश्न) एक जन्म होने से भी परमेश्वर न्यायकारी हो सकता है। जैसे सर्वोपरि राजा जो करे सो न्याय। जैसे माली उपवन में छोटे और बड़े वृक्ष लगाता, किसी को काटता किसी को लगाता और किसी की रक्षा करता और बढ़ाता है। जिसकी जो वस्तु है। उसको वह चाहे जैसे रखे। उसके ऊपर कोई भी दूसरा न्याय करने वाला नहीं। जो उसको दण्ड दे सके। या ईश्वर किसी से डरे।

(उत्तर) परमात्मा क्योंकि न्याय चाहता, करता और अन्याय कभी नहीं करता। अतः वह पूजने योग्य और बड़ा है जो न्याय के विरुद्ध करे। वह ईश्वरीय नहीं। जैसे माली युक्ति के बिना मार्ग व स्थान में वृक्ष लगाने, न काटने योग्य को काटने, अयोग्य को बढ़ाने, योग्य को न बढ़ाने से दुखित होता है। इसी प्रकार बिना कारण के करने से ईश्वर को दोष लगे। परमेश्वर के लिए न्याय युक्ति कार्य करना अवश्य है। क्योंकि वह स्वभाव से पवित्र और न्यायकारी है। जो उन्मत्त की भान्ति करे तो जगत् के श्रेष्ठ न्यायाधीश से भी न्यून और अपमानित होवे क्या इस जगत् में बिना योग्यता के उत्तम काम किये प्रतिष्ठा और दुष्ट काम किये बिना दण्ड देने वाला निंदनीय और अपमानित नहीं होता? इसलिए ईश्वर अन्याय नहीं करता इसी से वह किसी से नहीं डरता।

(प्रश्न) परमात्मा ने प्रथम ही से जिसके लिए जितना देना विचारा है। उतना देता, और जितना काम करना है उतना करता है।

(उत्तर) उसका विचार जीवों के कर्मानुसार होता है। अन्यथा नहीं। जो अन्यथा हो तो वह अपराधी अन्याय कारी होवे।

(प्रश्न) बड़े छोटों को एक सा ही सुख दुःख है। बड़ों को बड़ी चिन्ता और छोटों को छोटी। जैसे किसी साहूकार का विवाद राज घर में लाख रुपये का हो और वह अपने घर से पालकी में बैठकर कचहरी से उष्ण काल में जा रहा हो तो बाज़ार में उसको जाता देख कर अज्ञानी लोग कहते हैं। कि देखो पुण्य पाप का फल। एक पालकी में आनन्द पूर्वक बैठा है और दूसरे बिना जूते पहिरे ऊपर नीचे से तप्यमान होते हुए पालकी को उठा कर ले जाते हैं। परन्तु बुद्धिमान् लोग इसमें यह जानते हैं कि जैसे २ कचहरी निकट आती जाती है। वैसे साहूकार को बड़ा शोक और सन्देह बढ़ता जाता और कहारों को आनन्द होता जाता है। जब कचहरी में पहुंचते हैं तब सेठ जी इधर उधर जाने का विचार करते हैं। कि प्राड्विवाक (वकील) के पास जाऊं व सरिश्तेदार के पास। आज हारूंगा वा जीतूंगा। न जाने क्या होगा और कहार लोग तमाखू पीते परस्पर बातें चीतें करते और प्रसन्न होकर आनन्द में सो जाते हैं। जो वह जीत जाये तो कुछ सुख अन्यथा सेठ जी दुःख सागर में डूब जायें। और वे कहार जैसे के वैसे रहते हैं। इसी प्रकार जब राजा सुन्दर कोमल बिछौने में सोता है। तो भी शीघ्र निद्रा नहीं आती। और मज़दूर कंकर पत्थर और मिट्टी के ऊंचे नीचे स्थल पर सोता है। उसको झट ही निद्रा आती है। ऐसे ही सर्वत्र समझो।

(उत्तर) यह समझ अज्ञानियों की है। क्या किसी साहूकार से कहें कि तू कहार बन जा और कहार से कहें कि तू साहूकार बनजा। तो साहूकार कभी कहार बनना नहीं चाहता और कहाकर साहूकार बनना चाहते हैं। जो सुख दुःख बराबर होता तो अपनी २ अवस्था छोड़कर नीच और ऊंच बनना दोनों न चाहते। देखो एक जीव, विद्वान्, पुण्यात्मा, श्रीमान राजा की राणी के गर्भ में आता है और दूसरा महादरिद्र घसियारी के गर्भ में आता है। एक को गर्भ से लेकर सर्वथा सुख और दूसरे को सब प्रकार दु.ख मिलता है। एक जब जन्मता है तब सुन्दर सुगन्धि युक्त जलादि से स्नान, युक्ति से नाड़ी छेदन, दुग्ध पानादि यथायोग्य प्राप्त होते हैं। जब वह दूध पीना चाहता है। तो उसके साथ मिश्री आदि मिला कर यथेष्ट मिलता है। उसको प्रसन्न रखने के लिये नौकर चाकर, खिलौना, सवारी उत्तम स्थानों में लाड से आनन्द होता है दूसरे का जन्म जंगल में होता है। स्नान के लिये जल भी नहीं मिलता। जब दूध पीना चाहता है। तब दूध के बदले घूंसा थपेड़ा आदि से पीटा जाता। अत्यन्त आर्तस्वर से रोता है। कोई नहीं पूछता। इत्यादि जीवों को बिना पुण्य पाप के सुख दुःख होने से परमेश्वर पर दोष आता है। दूसरा जैसे बिना किये कर्मों के सुख दुःख मिलते हैं। तो आगे नरक स्वर्ग भी न होना चाहिये। क्योंकि जैसे परमेश्वर ने इस समय बिना कर्मों के सुख दुःख दिया है। उसको मरे पीछे भी जिसको चाहेगा उसको स्वर्ग में और जिसको चाहे नरक में भेज देगा। पुनः सब जीव अधर्म युक्त हो जावेंगे तो धर्म क्यों करें? क्योंकि धर्म का फल मिलने में सन्देह है। परमेश्वर के हाथ है; जैसी उसकी प्रसन्नता होगी वैसे करेगा तो पाप कर्मों में भय न होकर संसार में वृद्धि और धर्म का क्षय हो जायगा। इसलिये पूर्वजन्म के पुण्य पाप के अनुसार वर्तमान जन्म और वर्तमान तथा पूर्व जन्म के कर्मानुसार भविष्यत् जन्म होते हैं।

(प्रश्न) मनुष्य और अन्य पश्वादि के शरीर में जीव एक सा है वा भिन्न २ जाति के !

(उत्तर) जीव एक से हैं परन्तु पाप पुण्य के योग से मलिन और पवित्र होते हैं ।

(प्रश्न) मनुष्य का जीव पश्वादि में और पश्वादि का मनुष्य के शरीर में और स्त्री का पुरुष के और पुरुष का स्त्री के शरीर में जाता आता है वा नहीं ?

(उत्तर) हां, जाता आता है । क्योंकि जब पाप बढ़ जाता है पुण्य न्यून होता है । तब मनुष्य का जीव पश्वादि नीच शरीर और जब धर्म अधिक तथा अधर्म न्यून होता है तब देव अर्थात् विद्वानों का शरीर मिलता और जब पुण्य पाप बराबर होता है तब साधारण मनुष्य जन्म होता है । इसमें भी पुण्य पाप के उत्तम मध्यम निकृष्ट होने से मनुष्यादि में भी उत्तम मध्यम निकृष्ट शरीरादि सामग्री वाले होते हैं । और जब अधिक पाप का फल पश्वादि शरीर में भोग लिया जाता है । पुनः पाप पुण्य के तुल्य रहने से मनुष्य शरीर में आता और पुण्य के फल भोगकर फिर भी मध्यस्थ मनुष्य के शरीर में आता है । जब शरीर से निकलता है उसी का नाम "मृत्यु" और शरीर के साथ संयोग होने का नाम "जन्म" है । । जब शरीर छोड़ता तब यमालय अर्थात् आकाशस्थ वायु में रहता क्योंकि "यमेन वायुना" वेद में लिखा है कि यम नाम वायु का है गरुड़ पुराण का कल्पित यम नहीं । इसका विशेष खण्डन मण्डन ग्यारहवें समुल्लास में लिखेंगे ।

पश्चात् धर्मराज अर्थात् परमेश्वर उस जीव के पाप पुण्यानुसार जन्म देता है वह वायु, अन्न, जल अथवा शरीर के छिद्र द्वारा दूसरे के शरीर में ईश्वर को प्रेरणा से प्रविष्ट होता है । जो प्रविष्ट होकर क्रमशः वीर्य में जा, गर्भ में स्थित हो, शरीर धारण कर बाहर आता है जो स्त्री के शरीर धारण करने योग्य कर्म हों तो स्त्री और पुरुष के शरीर धारण करने योग्य कर्म हों तो पुरुष के शरीर में प्रवेश करता है । और नपुंसक गर्भ की स्थिति के समय स्त्री पुरुष के शरीर में सम्बंध करके रज वीर्य के बराबर होने से होता है । इसी प्रकार नाना प्रकार के जन्म मरण में तब तक जीव पड़ा रहता है कि जब तक उत्तम कर्मोपासना ज्ञान को कर के मुक्ति को नहीं पाता । क्योंकि उत्तम कर्मादि करने से मनुष्यों में उत्तम जन्म और मुक्ति में महा कल्प पर्यंत जन्म मरण दुःखों से रहित होकर आनंद में रहता है ।

(प्रश्न) मुक्ति एक जन्म में होती है वा अनेक जन्मों में ?

(उत्तर)—अनेक जन्मों में क्योंकि :—

भिद्यते हृदय ग्रन्थिश्छिद्यंते सर्व संशयाः ।
क्षीयन्ते चास्य कर्माणि तस्मिन् दृष्टे परावरे ।।

(मुंडक २/२/८)

जब इस जीव के हृदय की अविद्या अज्ञान रूपी गांठ कट जाती, सब संशय छिन्न होते और दुष्ट कर्म क्षय को प्राप्त होते हैं तभी उस परमात्मा जो कि अपने आत्मा के भीतर और बाहिर व्याप रहा है । उसमें निवास करता है ।

(प्रश्न) मुक्ति में परमेश्वर में जीव मिल जाता है वा पृथक् रहता है ?

(उत्तर) पृथक् रहता है क्योंकि जो मिल जाय तो मुक्ति का सुख कौन भोगे और मुक्ति के जितने साधन हैं वे सब निष्फल हो जावें। वह मुक्ति तो नहीं किन्तु जीव का प्रलय जानना चाहिए। जब जीव परमेश्वर की आज्ञा पालन, उत्तम कर्म, सत्संग, योगाभ्यास पूर्वोक्त सब साधन करता है वही मुक्ति को पाता है।

सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म यो वेद निहितं गुहायां परमे व्योमन्।
योऽश्नुते सर्वान् कामान् सह ब्रह्मणा विपश्चितेति ॥

तैत्तिरी० (आनंद वल्ली अनु० १)

जो जीवात्मा अपनी बुद्धि और आत्मा में स्थित सत्य ज्ञान और अनंत आनंद स्वरूप परमात्मा को जानता है वह उस व्यापक रूप ब्रह्म में स्थित होके उस विपश्चित्" अनंत विद्या युक्त ब्रह्म के साथ सब कामों को प्राप्त होता है अर्थात् जिस २ आनंद की कामना करता है उस २ को प्राप्त होता है। यही मुक्ति कहाती है।

(प्रश्न) जैसे शरीर के विना सांसारिक सुख नहीं भोग सकता वैसे मुक्ति में बिना शरीर आनंद कैसे भोग सकेगा ?

(उत्तर) इसका समाधान पूर्व कह आये हैं। और इतना अधिक सुनो—जैसे सांसारिक सुख शरीर के आधार से भोगता है। वैसे परमेश्वर के आधार पर मुक्ति के आनंद को जीवात्मा भोगता है। वह मुक्त जीव अनंत व्यापक ब्रह्म में स्वच्छन्द घूमता, शुद्ध ज्ञान से सब सृष्टि को देखता अन्य मुक्तों के साथ मिलता, सृष्टि विद्या को क्रम से देखता हुआ सब लोक लोकान्तरों में अर्थात् जितने ये लोक दीखते हैं और नहीं दीखते उन सबमें घूमता है वह सब पदार्थों को जो कि उसके ज्ञान के आगे हैं देखता है। जितना ज्ञान अधिक होता है उसको उतना ही अधिक होता है। मुक्ति में जीवात्मा निर्मल होने से पूर्ण ज्ञानी होकर उसको सब सन्निहित पदार्थों का भान यथावत् होता है। यही सुख विशेष स्वर्ग और विषय तृष्णा में फंसकर दुःख विशेष भोग करना नरक कहाता है। "स्वः" सुख का नाम है "स्वः सुखं गच्छति-यस्मिन् सः स्वर्गः" "अतो विपरीतो दुःख भोगो नरकः" इति जो सांसारिक सुख है वह सामान्य स्वर्ग और जो परमेश्वर की प्राप्ति से आनंद है वही विशेष स्वर्ग कहाता है। सब जीव स्वभाव से सुख प्राप्ति की इच्छा और दुःख का वियोग होना चाहते हैं। परन्तु जब तक धर्म नहीं करते और पाप नहीं छोड़ते तब तक उनको सुख का मिलना और दुःख का छूटना नहीं होगा। क्योंकि जिसका कारण अर्थात् मूल होता है वह नष्ट कभी नहीं होता जैसे—

छिन्ने मूले वृक्षो नश्यति तथा पापे क्षीणे दुःखं नश्यति।

जैसे मूल कट जाने से वक्ष नष्ट होता है। वैसे पाप को छोड़ने से दुःख नष्ट होता है।

(सत्यार्थप्रकाश समु० ६)

ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका से उद्धृत

(प्रश्न) इसमें अनेक मनुष्य ऐसा प्रश्न करते हैं। कि जो पूर्वजन्म होता है तो हमको उसका ज्ञान इस जन्म में क्यों नहीं होता ?

(उत्तर) आंख खोल कर देखो कि जब इसी जन्म में जो २ सुख दुःख तुमने बाल्यावस्था में अर्थात् जन्म से पांच वर्ष पर्यंत पाये हैं उनका ज्ञान नहीं रहता अथवा जो कि नित्य पठन पाठन और व्यवहार करते हैं उनमें से कितनी ही बातें भूल जाते हैं। तथा निद्रा में भी यही हाल हो जाता है। कि अब के किये का भी ज्ञान नहीं रहता। जब इसी जन्म के व्यवहारों को इसी शरीर में भूल जाते हैं तो पूर्व शरीर के व्यवहारों का कब ज्ञान रह सकता है ?

(प्रश्न) तथा ऐसा भी प्रश्न करते हैं कि जब हमको पूर्वजन्म के पाप पुण्य का ज्ञान नहीं होता और ईश्वर उनका फल सुख दुःख देता है, ईश्वर का न्याय वा जीवों का सुधार कभी नहीं हो सकता ?

(उत्तर) ज्ञान दो प्रकार का होता है। एक प्रत्यक्ष दूसरा अनुमानादि से। जैसे एक वैद्य और दूसरा अवैद्य। इन दोनों को ज्वर आने से वैद्य तो इसका पूर्व निदान जान लेता है। और दूसरा नहीं जान सकता। परन्तु उस कुपथ्य का कार्य जो ज्वर है वह दोनों को प्रत्यक्ष होने से वे जान लेते हैं कि किसी कुपथ्य से हो वह ज्वर हुआ है अन्यथा नहीं। इसमें इतना विशेष है कि विद्वान् ठीक २ रोग के कारण और कार्य को निश्चय करके जानना है और वह अविद्वान् कार्य को तो ठीक २ जानता है परन्तु कारण में उसको यथावत् निश्चय नहीं होता। वैसे ही ईश्वर न्यायकारी होने से किसी को बिना कारण के सुख वा दुःखादि कभी नहीं देता। जब हम को पुण्य पाप का कार्य सुख और दुःख प्रत्यक्ष है तब हम को ठीक निश्चय होता है कि पूर्व जन्म के पाप पुण्यों के बिना उत्तम मध्यम और नीच शरीर तथा बुद्धयादि पदार्थ कभी नहीं मिल सकते। इससे हम लोग निश्चय करके जानते हैं कि ईश्वर का न्याय और हमारा सुधार ये दोनों काम यथावत् बनते हैं। (ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका पृ० २०, २०८)

उपसंहार

आवागवन का सिद्धान्त बहुत प्राचीन है। और एक समय समस्त संसार इसको मानता था। समस्त सभ्य देशों के विद्वान् इस पर विश्वास रखते थे। यूनान मिश्र, रूम, आर्यावर्त ईरान, चीन, मैक्सिको, और पीरू के बुद्धिमान् लोग जिस प्रकार इसको मानने वाले थे उसी प्रकार अरब, तातार, रूस, आस्ट्रेलिया, हबश तथा उत्तरी अमरीका के निवासी भी इस पर विश्वास रखते थे। संसार की कोई मनुष्य आबादी ऐसी न थी जिसे इस कर्म सिद्धान्त से किसी न किसी प्रकार गहरा संबंध न हो। समस्त प्राचीन इतिहास एक मत है। कि जिस समय संसार में सत्य, शांति और सुख का राज्य था समस्त संसार में एक ही वैदिक धर्म फैल रहा था। उस समय भी यह पवित्र सिद्धान्त सब पिपासित हृदयों की पिपासा बुझाने वाला था। और पुस्तक "अलमलल वन्नहल शहरस्तानी" में है कि—

मिनल् अ़रबे स-यअ़तक़ुद्दुत्तनासुख (पृ० १०९ जिल्द २)

अर्थात् अरब के लोग पुनर्जन्म पर विश्वास रखते थे।

पादरी टी. जी. स्काट कहते हैं कि—

"प्राचीन मिश्र वालों ने इसको मान लिया। इसी प्रकार यूनानियों ने रूमियों ने और अंग्रेज़ों ने हमारे पुराने द्रविड़ लोग जो हमारे गुरु थे यही सिखाते थे और हम लोग सबके सब मानते थे।"

(शास्त्रार्थ बरेली पृ० ४)

विशप वार बरटन लिखते हैं कि—

"पूर्वजन्म के विचार बहुत से बुद्धिमानों और विद्वानों से प्रत्येक समय में हमारे कई प्रकार के कष्टों के दूर करने के लिये प्रगट किये गये हैं।

कालेर साहिब कहते हैं कि प्राचीन मिश्रवासी, यूनानी, रूमी और अंग्रेज पुनर्जन्म अर्थात् आवागवन को मानते थे। (तारीखे इंगलिस्तान पृ० ११)

क्या एशिया के ईरानी आर्य, चीनी, जापानी और तुर्क लोग और क्या योरुप के यूनानी, द्रविड़, रूमी और जर्मन तथा क्या अफ़रीक़ा के क़बती, पांटर, और राज्य वंश के लोग, क्या अम्रीका के तांबे-रूप वाले हेली अर्थात् सूर्य वंशी, पीरू, मैक्सिको के पुरोहित और आचार्य व एरियन वंशी के नेता सारे के सारे युक्तियों और गौण बातों में कुछ विरोध के होने पर भी मूल सिद्धान्त में सब एक मत होकर आवागमन को मानते थे। कि जीव आनादि हैं। ऐसा समय कभी न था कि जीव न हों तथा जीवों का अभाव भी कभी नहीं हो सकता प्रत्येक को उसके कर्मों का फल मिलता है। तथा ईश्वरीय न्यायालय में यह अटल नियम है जिसे कोई भी मनुष्य बीच मे पलट नहीं सकता। अरब के देश में साधारण अरब वासियों से कुछ सभ्य और पढे लिखे साएबीन+ लोग थे। जिसका विश्वास था कि जीवों का पुनर्जन्म का आवश्यक है और शरीर जीव के निकल जाने के पश्चात् अपनी वास्तविक नित्य प्रकृति में मिल जाता है। तथा पुनः उसी नित्य प्रकृति से भोजनादि के द्वारा ईश्वरीय नियमानुसार दूसरा शरीर तैय्यार हो जाता है।

+ इस मत के सम्बन्ध में कुछ लोगों का विचार है कि यह नाम इब्रानी शब्द सबा अथवा स्वबा से जिसके अर्थ नक्षत्र के हैं बना है। और इस मत की वास्तविकता को असोरिया के गड़रियों की ओर लगाते हैं। कुछ का विचार है कि यह मत शीस के पुत्र साबी का निकाला हुआ है। जो उनके विचार में अपने भाई अयूनक और पिता समेत मिश्र के मीनारों में गाढ़ा हुआ है। कुछ लोग इस मत का निकास इससे अच्छे एक और स्रोत से बताते हैं कि नूह के तूफ़ान से पूर्व समस्त संसार का यही मत था। उनका कथन है कि यह मत तूफ़ान के पश्चात् भी रहा। और सब जातियों के प्रधान पुरुष इसी मत को मानते थे। इब्राहीम इसी को मानते रहे। उनकी सन्तान बनी इस्राईल ने भी यही मत स्वीकार किया और मूसा को जो नियम मिले थे वह भी इनका समर्थन करते थे। आरम्भ से ही यह सम्प्रदाय सर्वथा पवित्र और आध्यात्मिक था। इस की शिक्षा यह थी कि ईश्वर को एक मानना और जीवों का पुनर्जन्म मानना तथा स्वर्ग कामवासना की क्रीडास्थली नहीं। कोई सदा रहने वाला नरक भी नहीं है। पुनर्जन्म में ही स्वर्ग नरक अर्थात् सुख दुःख है। मुक्ति के लिए शुभ कर्म करके पवित्र जीवन व्यतीत करने की आवश्यकता को जानते थे। अग्निहोत्र को मानते तथा समुद्र और पृथिवी की यात्रा के लिए नक्षत्र विद्या की आवश्यकता जानते थे। चांद की तिथियों से अपने वर्षों की गणना करते थे।

जब हम अधिक विचार से सोचते हैं तो यह नाम संस्कृत भाषा में मिलता हुआ श्यालो प्रतीत होता अर्थात् शिवजी के उपासक अथवा परमात्मा पारब्रह्म को मानने वाले।

जब हम तौरेत को देखते हैं तो उसमें स्पष्ट पाया जाता है कि पुराने नबी एक पत्थर खड़ा करके उस पर तेल डालते और वेदी का स्थान बनाते उसकी परिक्रमा करते और मिन्नत मांगते थे। (देखो तौरेत-उत्पत्ति अध्याय २८ आयत १८, १९ तथा अध्याय ३१ आयत १३, ४५ अध्याय ४५ आयत १४ अहबार अ० ८ आयत १०-१२)

कुरआन सूरा जासिया में अरब के इस मत का इन शब्दों में वर्णन किया है कि :—

व क़ालू माहिया इल्ला हयातोनद्दुनिया नमूतो व नहया......। (जासिया आयत २४)

और कहते हैं कि हमारा जीना केवल यही नहीं है संसार में। प्रत्युत हम मरते और पुनः उत्पन्न होते रहते हैं। इत्यादि। इस पर तफ़सीरे हुसैनी में लिखा है कि:—

"संभावना है कि इस वचन के कहने वाले लोग पुनर्जन्म सिद्धान्त पर विश्वास रखते थे। और इनका सिद्धान्त यह है कि जो कोई मरता है। वह दूसरे शरीर से संबंधित होकर संसार में पुनः उत्पन्न होता है। और पुनः मरता और उत्पन्न होता रहता है। इनके विचार में इनका पैगम्बर शामको था जो कहता कि मैं स्वयं दो हज़ार सात सौ शरीरों का स्मरण करता हूं जो मैंने धारण किये थे।"

(मुल्लां वाइज़ की तफ़सीरे हुसैनी पृ० ३१७)

जब तक योरुप में अविद्या रही तब तक ईसाई मत बहुत ज़ोर से फैलता रहा। विद्या के शत्रु पादरियों ने यथार्थ विद्या के विद्वानों को फांसी दी। शिकंजा में खेंचा। कत्ल (वध) किया। सीप के तीव्र खंडों से उनका सब मांस नुचवा दिया। तेशियों से उसका शरीर छीला। काटा और खंड २ किया। कोल्हू में पिलवा दिया और मट्टी के तेल से जलाया तथा बुरी २ तकलीफ़ों से मारा और बरबाद किया।

(विस्तार देखो फ़रूट आफ़क्रिश्चैनेटी)

परन्तु जब ज्ञान सूर्य का प्रकाश योरुप में फैलने लगा तो ईसाई मत में गिरावट आई। लोगों ने उनके निराधार सिद्धान्त जैसे त्रिनेटी (एक में तीन) कफ़ारा (प्रायश्चित) मसीह को ख़ुदा का इकलौता पुत्र मानना, मसीह के चमत्कार प्रत्युत मसीह के जीवन से ही इनकार कर दिया। सबसे अधिक चोट जो ईसाई दीन को पहुंची वह बिशप क्लोलंजू के क्रिश्चन मत के परित्याग से थी। यह महानुभाव कई गिरजाओं का स्वामी तथा सैंकड़े पादरियों का गुरु था। जब उसने अच्छे प्रकार निश्चय कर लिया कि ईसाई मत मिथ्या है तो उसने कई पुस्तकें इसके विरुद्ध प्रकाशित कीं। जिसकी वास्तविकता एक व्यक्ति ब्राह्म समाजी समाचार पत्र में लिखता है "बिशप क्लोलंजू ईसाई मत के विरुद्ध थे। इस कारण

तौरात के अध्याय २८ आयत २२ में लिखा है कि—

"तब ख़ुदा बन्द मेरा ख़ुदा होगा और यह पत्थर का जो मैंने स्तून खड़ा किया है। ख़ुदा का घर होगा।"

दबिस्ता ने मज़ाहिब में मूसा व ईसा व मुहम्मद की तारागण की पूजा का वर्णन है।

(देखो शिक्षा दसवीं पृ० ३२६)

इसी के अनुसार आन्रेबल सय्यद अहमद ख़ान कहते हैं कि हज़रत इबराहीम ख़ुदा के लिए एक बिन घड़ा पत्थर खड़ा कर लेते थे। जो पूजा या नमाज होती थी। यह उसकी परिक्रमा करके होती थी। अतः हज़रत इब्राहीम के समय में कोई विशेष दिशा में किबला का होना बिना उस चिह्न जो वह स्थापित कर लेते थे और कुछ नहीं पाया जाता था। पुनः लिखते हैं कि इसी कारण से लोग विचार करते हैं कि प्रथम पत्थर का बनी इस्राईल में पूजना इसी प्रकार से आरम्भ हुआ। कि जब उनमें से कोई मक्का से जाता तो हरम के पत्थरों में से एक पत्थर उठा लेता था। मक्का और कअबा के शौक़ में जहां उतरते तो उस पत्थर को रख लेते थे और उसके चारों ओर कअबा की भान्ति परिक्रमा कर लेते थे। (तफ़सीरे अहमदी जिल्द एक १ पृ० १८६, १८७)

से महारानी ने जुडीशनल कमेटी और प्रिवी कौंसल की सिफ़ारिश के होने पर भी उनकी जागीर नटाल के गिरजा की ज़ब्त कर ली थी। (जिल्द नं० १३ एक अक्टूबर १८७३ ईस्वी)

योरुप में विद्या तथा विज्ञान का विस्तार हुआ। सत्य की खोज करने वाले लोगों ने ईसाई मत से घृणा की। जैसा कि उसी पत्र में लिखा है कि—

योरुप के देशों में ईसाई लोगों में से अस्सी लाख लोग ईसामसीह को खुदा नहीं मानते तथा यूनाईटिडस्टेट्स आफ़ अमरीका के लोगों की एक तिहाई आबादी भी ईसा को खुदा नहीं मानती।
(जिल्द १ नं० १३ पृ० ३ एक अक्टूबर १८७३)

इतना ही नहीं। प्रत्युत हवट साहिब अपनी पुस्तक प्रकाशित १८४४ ईस्वी में लिखते हैं कि—

"लगभग समस्त जर्मन, बोनमिया और हंगरी के स्कूलों में नास्तिकता की प्रबलता बढ़ गई है। फ़लासफ़ी ने इन देशों में ईस्वीमत के बाज़ू तोड़ डाले हैं। पुराने अहदनामा और नये अहदनामा की चमत्कार की बातों को लोगों ने काल्पनिक कहानियां समझा है। विद्यार्थियों के समूहों में से १२ व्यक्ति भी ऐसे न निकलेंगे जो पक्के आस्तिक न हों। जिनको संदेह हो वह स्वयं इन देशों में जाकर देख लेवे। ईसाई मत के व्यक्ति उनको देखकर रो देते हैं। और पादरी कमीक ने भी ऐसा ही लिखा है।

शिव के सम्बन्ध में समस्त पुराने हिन्दुओं का विश्वास है कि भिन्न स्थानों में शिव की पूजा भिन्न नामों से होती थी। मक्का में जो शिव की मूर्ति थी उसका नाम मक्केश्वर महादेव था और वहां महादेव की एक और मूर्ति भी थी जिसका नाम मनानाथ (मनात) था। इस बात की साक्षी मुसलमान इतिहास कार भी देते हैं। जैसाकि अबुल्क़ासिम फ़रिश्ता में लिखता है कि:—ब्राह्मणों का इसलाम से पूर्व काबा की मूर्ति पूजा करने के लिए आना जाना होता था। और वह इस स्थान को अच्छा पूजा स्थान समझते थे।

(ताराखे फ़रिश्ता (फ़ारसी) मक़ालार्छ पृ० ३११ सन् १८८०)

सोमनाथ विजय प्रकरण में इसी पुस्तक में लिखा है कि इतिहास में लिखा है कि हज़रत मुहम्मद के समय में एक बड़े बुत को जिसका नाम सोमनाथ था काबा से उठाकर गुजरात प्रान्त भारत में ले जाकर सोमनाथ का मंदिर निर्माण करके इस नाम से ही नगर प्रसिद्ध किया।

(तारीखे फरिश्ता मक़ाला १ जिल्द १ पृ० ३२)

इसमें कोई सन्देह नहीं कि महादेव जी का मन्दिर था और यही कारण हुआ कि सोमनाथ में पुनः उसे मूर्ति पूजक लोगों ने स्थापित किया। और पुनः पूर्व प्रथानुसार शिव मतानुयायी उसके पुजारी बने। इसके अतिरिक्त दबिस्ताने मज़ाहिब में लिखा है कि मक्का संयुक्त है माह का से अर्थात् मक्का के अर्थ इस व्युत्पत्ति के अनुसार चन्द्रमा का घर अथवा चांद का मन्दिर जिस स्थान में चांद की मूर्ति हो।

हिन्दु लोग चांद महादेव के मस्तक पर मानते हैं। और मौलवी ज़कात साहिब ने सोमनाथ के वर्णन में इसका समर्थन किया है। कि वह वास्तव में महादेव जी का लिंग था। अतः इस में कुछ भी सन्देह नहीं कि साए-बीन शिव के पुजारी और वास्तव में मूर्ति पूजा के युग से पूर्व वह सब के सब आर्य जाति से थे और वैदिक धर्म के मानने वाले थे।

फ्रांस और उसके निकटस्थ स्थानों के संबंध में "आर दी दून" लिखता है कि प्रत्येक यात्री को ज्ञात है कि इस युग में फ्रांस देश में बीस नास्तिकों के मुकाबिले में एक ईमानदार मनुष्य का पाया जाना कठिन है। इनके पादरियों ने स्वयं इस नास्तिकता को फैलाया है।"

इसी प्रकार मिस्ट ग्लैडस्टौन इंगलैंड के प्रधान मन्त्री अपनी पुस्तक "शताब्दियों के सुदृढ़ चट्टान" में बड़े शोक के साथ लिखते हैं कि फ़रांस में ८६८४६०६ मनुष्य हैं जिन्होंने १८८१ ईस्वी की जनगणना में अपना कोई धर्म नहीं बताया। (पृ० १२१)

प्रूशिया के विषय में गलक साहिब लिखते हैं "कि सारे परशिया राज्य में वर्षों से अब तक बाईबल का मत नहीं रहा। सब लोग नास्तिक हैं। इलहाम और चमत्कार की बातों को कहानियां समझ कर हंसा करते हैं।

विशेष कर इंग्लैंड देश का वृत्तान्त ईसाई दीन के विषय में और भी विचारणीय है। इस देश में जब लार्ड हरबर्ट और मिस्टर बलाऊंट, होलब्रन, ओलशाफ़, रश्टबरो और रोलेट जो बड़े पदों पर थे। पहिले ईसाई दीन से इनकारी हुए तो उन्होंने बहुत पुस्तकें क्रिश्चन मत के विरुद्ध लिखीं। राबेट समाचार पत्र अक्टूबर १८९३ ईस्वी में लिखा है कि—

"इंग्लैंड देश में ४९ स्कूल हैं जिनमें ईसाई दीन के विरुद्ध शिक्षा दी जाती है। और तीन लाख व्यक्ति ऐसे हैं जो किसी मत को नहीं मानते। दिन प्रतिदिन नास्तिकता की प्रबलता है।"

मसीह के कुफ्फारे ने साधारण मनुष्यों को पापों पर सीमा से बाहिर साहसी बना दिया। उनके स्वभाव सत्य से दूर हो कर मद्यपान, दुराचार, द्यूत, विषय वासना, झूठ, छलकपट और नास्तिकता की ओर पूर्णतः झुक गये।

रहबरे हिन्द लाहौर १ फर्वरी १८७३ ईस्वी में लिखा है कि तेरह करोड़ साठ हज़ार पौंड प्रति वर्ष बरतानिया के राज्य में मद्यपान में व्यय होते हैं। विशेषकर लंडन में संभवतः तीस लाख आबादी में दस हज़ार ऐसे हूंगे जो मद्य न पीते हूं। अन्यथा सब स्त्री पुरुष प्रसन्नता पूर्वक मद्यपान करते कराते हैं लंडन वालों का कोई उत्सव समारोह ऐसा नहीं कि जिसमें सबसे प्रथम ब्रांडी, शराब और ह्विसकी का प्रबन्ध न किया जाता हो। प्रत्येक उत्सव का प्रधान अंग शराब माना जाता है। इस पर भी अधिक यह कि लंडन के बड़े २ कशीश और पादरी भी ईमानदार कहला कर मद्यपान में अग्रणी स्थान रखते हैं। इसी मद्यपान के कारण लंडन में इतनी आत्महत्या की घटनाएं होती रहती हैं। कि प्रत्येक वर्ष इसके कारण घातक मरी पड़ती है। दुराचार तथा कुदृष्टि से देखना मातृदुग्धवत् समझे जाते हैं। द्यूतक्रीडा को बहुत बड़ी अधिकता है।"

और यही अवस्था मुहम्मदी मत की है। इसमें उन लोगों के अतिरिक्त जो भक्त, व्रती और ईश्वर पूजक हुए हैं। जो सबके सब जीवों के पुनर्जन्म सिद्धाँत को मानते थे। शेष प्रायः रक्त पान करने वाले हिंसक, अस्वाभाविक कर्मकर्ता, नर हत्या के अपराधी, ग़ाज़ी व जिहादी (मज़हबी लड़ाईयां लड़ने वाले) कौड़ी, मुर्ग़ी घातक, गोघाती अथवा मृतक दोज़ख (नरक) में जाए या बहिश्त (स्वर्ग) में जाए इस झगड़े में रहने वाले, अपने हलवे मांडे से काम रखने वाले जो केवल राजनामा सुनाने, या संग असवद (काला पत्थर) चूमने अथवा टख़्ने से ऊपर पाजामा पहिनने या ख़तने के पैसे प्राप्त करने के अतिरिक्त

और कोई बात नहीं जानते। कबर पूजा जिनका स्वभाव और मृतक पूजन जिनकी प्रथा है। दिन रात मृतकों से प्रार्थनाएं कर २ के उनकी आत्माएं मृतवत् हो गई हैं। वह आत्म विद्या अथवा जीव नित्यत्व सिद्धान्त पर विचार नहीं करना जानते तो इसमें इनका क्या दोष है ? जिनका खुदा प्राणियों के हनन से प्रसन्न और जिनके स्वर्ग में जाने का प्रसिद्ध सिद्धान्त जिहाद (मज़हबी) युद्ध है। अरब, ईरान, रोम, अफ़गानिस्तान, तातार, बलोचिस्तान, मिश्र प्रत्येक देश में जहां जाओ देश की बुरी अवस्था है। दुराचार की वृद्धि, क़बर पूजा (मृतक पूजा) की घनघोर घटा चारों ओर से उमडती हुई दिखाई देती हैं। अरब के बद्दू ह० मुहम्मद साहिब से पूर्व जैसे डकैट थे। वैसे ही जानवर हन्ता और लुटेरे हैं। यही अवस्था तातारी और अफ़गानों की है। अतः ऐसे व्यक्ति पुनर्जन्म जैसे सूक्ष्म विषयों को समझने से विवश हैं। और कुछ इसलामी पक्षपात के कारण वह दूसरे धर्मों की बातों पर विचार करना उचित भी नहीं जानते। परन्तु ईश्वर की कृपा और विज्ञान व फलासफ़ी के अनुग्रह से योरुप व अमरीका में अब कुछ आध्यात्मिकता की चर्चा शुरू हुई है। एक ओर थ्योसोफीकल सोसाइटी के सत्यान्वेषी लोग जीवों के पुनर्जन्म सिद्धान्त का प्रचार कर रहे हैं। दूसरी ओर स्वामी शंकराचार्य की फलासफ़ी लोगों को अपने चरणों में झुका रही है। तीसरी ओर ईसाईमत की बलवती और पेचीदा ज़ंजीर से लोगों ने पांऊं को बाहिर निकाल कर सत्यान्वेषण के मैदान में पग धरा है। और अब विज्ञान और प्रकृति की नित्यता मानते हुए किसी छोटी शक्ति का भी नष्ट होना असंभव निश्चित होकर विद्वान् मनीषी लोग प्रायः इसी प्रकार के पवित्र सिद्धान्तों की ओर झुकते हैं।

(१) प्रकृति का अनादि होना विज्ञान ने नास्तिकों से भी मनवा दिया और बिना हमारे यत्न के स्वयं वैज्ञानिक उसके प्रमाण में लाखों पुस्तकें छपवा कर सभी देशों में प्रकाशित कर रहे हैं। प्रत्युत समस्त महाविद्यालयों और स्कूलों में उसकी खुल्लम खुल्ला शिक्षा दी जा रही है। प्रकृति के अनादित्व से इनकार करने वाला चाहे वह कोई हो मूर्ख समझा जाता है।

(२) मृतकों का दाह जो आर्यों का अन्तिम संस्कार है और जिसकी आज्ञा पवित्र वेद में है। समस्तरूपेण बुद्धिमानों और विद्वानों में प्रचार होता जा रहा है। बड़े २ विद्वान् डाक्टर और वैज्ञानिक गाढ़ने के स्थान पर मुर्दों को जलाने की प्रस्तावना कर रहे हैं। क्योंकि वह बताते हैं कि लाश के गलने से इसमें एक प्रकार का विष उत्पन्न हो जाता है। जो कि पानी को दूषित करता है। और अनेक भयानक रोगों का कारण बनता है। कई एक ऐसी सोसाएटियां स्थापित की जा रही हैं। जिनका प्रयोजन यह है कि मृतकों को गाढ़ने के स्थान पर जलाने की प्रथा योरुप में चला दी जाए। लोग प्रसन्नतापूर्वक वसीयत नामा लिखकर सदस्य होते हैं कि मेरी मृत्यु के पश्चात् मेरी लाश गाढ़ी न जाए प्रत्युत जलाई जाए। योरुप के पढ़े लिखे लोग तो धीरे २ बुराई की बात छोड़कर जो बात बुद्धि के अनुकूल है। उसको मानते जाते हैं। परन्तु पक्षपात पूर्ण पादरी लोग इस बात से बड़े रुष्ट हैं। और कहते हैं कि इसके कारण से मनुष्यों के हृदयों से क्यामत के दिन उठने का सिद्धान्त जाता रहेगा। इस पर "हादी हक़ीक़त" नामी पत्र लिखता है कि "वास्तव में पादरी और मुल्ला ने प्रत्येक देश में उन्नति के निषेधक होते हैं।"

(जिल्द २ नं० १७ पृ० ६५)

(३) पुनर्जन्म का सिद्धान्त और कर्मानुसार जीवों का पुनः शरीरों में आना प्रत्येक काल में विद्वान् फलासफ़र इसे मानते रहे और मूर्ख इनकार करते रहे। जैसा कि अब भी विद्वानों के समूह के समूह इसके समर्थन पर कटिबद्ध हैं।

(४) पृथिवी का गोल होना और सूर्य के चारों ओर घूमना जिसका वेदों को छोड़कर किसी भी मजहबी पुस्तक में उल्लेख नहीं। इस पर समस्त बुद्धिमान् सहमत हैं।

(५) आकाश मिथ्या है वह पोल के अतिरिक्त कुछ नहीं। यह किसने बताया और किस किस ने इसका प्रचार किया कि न तो आकाश के द्वार हैं और न वहां बुर्ज और किले हैं। और न उन पर कोई रक्षक हैं। स्पष्ट प्रगट है कि आसमान मिथ्या होते ही आसमानी खुदा, आसमानी फ़रिश्ते और आसमानी तख्त भी शेष नहीं रहता।

(६) सृष्टि का बार २ उत्पन्न करना और बिगाड़ना तथा ईश्वर का सदा से इसका अधिपति रचयिता होना, इस सूर्य मंडल की प्रलय और उसकी अवधि किस मत ने बताई? कुरआन सूरत आराफ़, खदयात, नाज़आत और अहज़ाब में यह प्रश्न क्यामत, इस ससार की प्रलय अथवा अवान्तर प्रलय कब और कितने समय के पश्चात् होगी? इसका उत्तर प्रश्न कर्ताओं के बार २ पूछने पर भी यही दिया गया कि इसका ज्ञान केवल खुदा को है। इसी प्रकार खुदा के इकलौते पुत्र अथवा दूसरे शब्दों में स्वयं खुदा मसीह से जब लोगों ने यही प्रश्न किया तो मसीह उत्तर देते हैं कि :—

"परन्तु उस दिन और उस घड़ी के संबंध में पिता (खुदा) के अतिरिक्त न तो फ़रिश्ते जो आकाश में हैं और न बेटा—कोई नहीं जानते।" (मरकस १३/२४)

दूसरे स्थान पर मसीह स्वयं लिखता है कि :—

"किन्तु उस दिन और घड़ी को मेरे पिता के अतिरिक्त आसमान के फ़रिश्तों तक कोई नहीं जानता।" (मती २४/३६)

यह अवस्था तौरेत की है।

(७) सहस्रों सूर्य हैं और सूर्य मंडल भी सहस्रों हैं। एक दो नहीं और सब स्थानों पर प्राणी रहते हैं तथा ईश्वरीय सृष्टि विद्यमान है। जो खुदा एक ही संसार बना कर थक गया। घबरा गया और आराम करने लगा। इस एक सृष्टि का ही न उसे पूर्ण ज्ञान है और न सुधबुध। जिस बिचारे ने एक ही आदम उत्पन्न किया और वह भी पापी निकला। जिस ख़ुदा को उस एक ही के सुधारने के लिए आत्महत्या करनी पड़ी। अथवा अत्याचारी लोगों ने फांसी पर चढ़ा दिया उसे सूर्य मंडलों का कब और किस प्रकार ज्ञान हो सकता है?

(८) एक पुरुष के विवाह के लिए एक स्त्री और एक स्त्री के लिये एक पुरुष तथा स्त्री को अर्द्धांगी अर्थात् आधा शरीर किसने बताया?

(९) मांसाहार असभ्य और जंगली लोगों से चला। धीरे २ ज्यूं २ संसार से अविद्या दूर होती गई। उसका भी प्रचलन मनुष्य-भक्षण से हराम और हलाल पर पुनः विशिष्ट २ दिनों में न खाना आदि नियमों से न्यून होता गया। अब योरुपीय विद्वानों ने प्रबल अकाट्य युक्तियों से निश्चित कर दिया है कि यह मनुष्य का भोजन नहीं।

(१०) ब्रह्मचर्याश्रम अर्थात् सबसे प्रथम ज्ञान और पीछे विवाह स्वयंवर की पद्धति पर युवा होकर कौनसी धार्मिक पुस्तक बताती है? और इसी प्रकार चार आश्रमों का विभाजन तथा मनुष्य जीवन का विभाग किस मज़हब ने बताया है? जिसकी ओर अब योरुप वाले ध्यान दे रहे हैं। और यह सब सिद्धान्त वेद में पूर्णरूपेण हैं।

(११) सब सृष्टि के मानव एक आदम की सन्तति हैं। यह किसने बताया। जिसकी विज्ञान ने अपनी प्रबल युक्तियों से धज्जियां उड़ा दीं।

(१२) गर्भ होने की अवस्था में और जब तक बालक गर्भ में रहे तब तक पुरुष और स्त्री को ब्रह्मचर्य रखने और उत्पन्न होने के पश्चात् जब तक बालक के दांत न निकलें अर्थात् दूध पीता रहे। जो कि अत्यन्त आवश्यक सिद्धान्त था। इसके सम्बन्ध में किसने बताया? और संस्कारों की पवित्र शिक्षा किस धर्म में है?

इसी प्रकार ईश्वर के एक होने का प्रथम ज्ञान दाता अथवा प्रचारक संसार में पवित्र वेद के अतिरिक्त ओर कौन है? आर्य धर्म के अतिरिक्त और कौन सा मज़हब है जो बुद्धिवाद की कसौटी पर परखा जा सकता है? जब स्वयं खुदा हो की पुस्तकों में यह कांट छाँट परिवर्तन घटती बढ़ती का हाथ स्पष्ट रूप से प्रतीत हो रहा हो तो ऐसे भूत कब किसी समीक्षक जिज्ञासु का संतोष कर सकते हैं।

यही कारण है कि पादरी इञ्जीलों को हाथ में लेकर विज्ञान और फ़लासफ़ी के नाश के लिए प्रार्थनाएं कर रहे हैं। पुनरपि मसीह के उत्पन्न होने पर जिस तारे के निकलने का सूचना इञ्जील मती अध्याय २ में है और जो मजूसियों के आगे २ चल रहा था। उसका ज्योतिष बिद्या से कुछ ज्ञान नहीं होता। और न मसीह का ऊपर उठाया जाना ज्ञान से सिद्ध होता है। और न यह बात सत्य प्रतीत होती है कि "और भी बहुत कार्य हैं जो यसूअ् ने किये और यदि वे पृथक् १ लिखे जाते हैं तो मैं विचार करता हूं कि पुस्तकें जो लिखी जातीं संसार में समा न सकतीं।" (यूहन्ना २१-२५)

तीन वर्षीय जीवन के लिए इतने काम? आत्मुक्ति की भी कोई सीमा होनी चाहिए।

पुराने मौलवो लोग तो लाजिक (दार्शनिक) की पुस्तकों से इस्तंजा करना उचित समझते थे। शेष रहे वर्तमान काल के विद्वान्! तो वह स्पष्ट कहते हैं कि पुनर्जन्म का सिद्धान्त फ़लाफ़रों का है। जीव और प्रकृति के मन्तव्य और इसी प्रकार भूमि, चांद व सूर्य के मन्तव्यों का ईश्वरीय प्रेरणा से क्या संबंध है? लाजिक और युक्ति प्रयुक्ति को धर्म से क्या संबंध? एक बुद्धिमान् मौलवो जिसके समान इसलाम में इस समय कोई विद्वान् नहीं अर्थात् मौलवो रूमी कहते हैं कि कोहकाफ (क़ाफ़ पर्वत) अपनी रग हिलाता है उससे समस्त संसार के पर्वतों में जहां उसकी इच्छा हो भूकंप होता है और जिनकी बुद्धि इस ईश्वरीय ज्ञान से रहित है वह मूर्ख हैं। और ऐसे ही मूर्ख कहते हैं कि :—

"ज़िलज़ला हस्त अज़ बुखाराते ज़मीन"

अर्थात् भूकंप पृथिवी के बुखारों से होता है।

एक और बुद्धिजीवी मौलवी कहता है कि—

बपेशे मज़हबे हुकमाए नापाक
नहीं है इल्त्यामो ख़िर्के अफ़लाका।

अर्थात् अपवित्र मज़हबी विद्वानों की दृष्टि में आकाशीय चमत्कार नहीं हैं।

इसी प्रकार आजकल का एक इलहामी नबी कहता है कि—

फ़लसफी रा चश्मे हक्क बबीं सख़्त नाबीना बूद।
गरचेहबेकन बाशदो या बू अली सीना बूद॥

अर्थात् फलसफ़ी (फ़लासफ़र) को सत्य की आंख से देख वह नितान्त अंधा था। चाहे बेकन था अथवा बू अली सीना था।

जब वह अवस्था है तो इनसे किसी अच्छाई की आशा देखना और किसी बुद्धियुक्त वैज्ञानिक मन्तव्य के रहस्य का उद्‌घाटन सर्वथा व्यर्थ कार्य है। ऐसे लोग सदा प्रार्थना करते हैं अथवा उनको ऐसे स्वप्न आते हैं। कि अमुक डिप्टी साहिब मर जाएंगे। अथवा अमुक के मर जाने पर उनकी स्त्री खुदाई इलहाम की बरकत से मेरे साथ विवाह संबंध कर लेगी। अथवा अमुक काफ़िर का भी काफ़िर जो हमारे मिथ्या विचारों का खंडन करता रहता है। उस पर ईश्वरीय प्रकोप उतेरगा। ऐसे नबी जब चाहते हैं और यथावसर जिसे उचित समझते हैं। तलाक देकर संबंध विच्छेद कर लेते हैं। और जो न मानें उसे आक़ (उद्दंड) कह कर छोड़ देते हैं।

वास्तविक बात यह है कि साधारण मूर्ख और अज्ञानी मनुष्य चमत्कारों के बिना वश में नहीं आते। और बुद्धिमान् लोग ऐसे हथकण्डों से पूर्व ही अपनी ईश्वर प्रदत्त बुद्धि के अनुग्रह और ईश्वरीय प्रकाश की प्रेरणा से छल कपट में नहीं फंसते। ऐसे नबी सदा यही कामना और प्रार्थना करते तथा बज़ीफ़ा पठते रहते हैं कि :—

अक़ल मन्दां बिमीरन्द जाहिलां जाए एशां बिगोरन्द।

अर्थात् बुद्धिमान् मर जाएं और मूर्ख इनका स्थान ले लें।

किसी ने सत्य कहा है कि :—

तू अपने आप को उसकी कबर पर नियत करता है जो मर गया और मैं उस पर नियत हूं कि जो संसार की आत्मा है।

अत: हमने ऐसी छल कपट की बातों से लोगों को बचाने और वैदिक धर्म का सन्मार्ग दिखाने के लिये यह पुस्तक पुनर्जन्म नामी लिखकर सत्यान्वेषणकर्ताओं की सेवा में समुपस्थित की है क्योंकि संसार में हरित उद्यान दिखाने वाले सहस्रों हैं और सन्मार्ग बताने वाले बहुत थोड़े हैं। पुन: उस पर भी स्वार्थ रहित सदुपदेश कड़वा अवश्य प्रतीत होता है। परन्तु सत्य यह है कि वह ही रोग निवारणार्थ राम बाण है। आर्य समाज का पवित्र नियम है कि सत्य को ग्रहण करने और "असत्य को छोड़ने में सदा तैय्यार रहना चाहिये" इसी को दृष्टि में रखकर हमने वर्षों इस मन्तव्य पर विचार किया और जो कुछ यथार्थ ज्ञात हुआ उसे पूर्णत: पाठकों की सेवा में समुपस्थित कर दिया। अब इस पर विचार करना और सत्य की परीक्षा करके असत्य को त्यागना आप का कर्तव्य है।

आपका
पण्डित लेखराम आर्य पथिक

द्वितीय भाग

पुराण किसने बनाए ।

हमारे भोले भाले हिन्दु भाई समझे बैठे हैं कि अठारह + पुराण और अठारह × उप पुराण व्यास जी ने बनाए हैं जो कि पराशर के पुत्र थे और महाराज युधिष्ठिर के समय में विद्यमान थे। जिस समय से वर्तमान काल के कलियुग का प्रारम्भ होता है जिसको आज तक ४९९१ वर्ष होते हैं, किन्तु पुराणों के अध्ययन से प्रगट होता है कि उनका यह विचार उपयुक्त नहीं है, यह बात निम्नलिखित प्रमाणों से प्रमाणित हो जाएगी। आशा है कि धर्म के जिज्ञासु पक्षपात रहित होकर इसे पढ़ेंगे।

प्रथम प्रमाण— अठारह पुराणों में बुद्ध को अवतार स्वीकार किया है और जिस लेख में वर्णन है, उसमें से उनका अतीतकाल प्रतीत होता है, भविष्य का नहीं। जो उनकी रहन सहन की पद्धति वर्णित है, वह आजकल के जैनियों के (पूज्यों) गुरुओं से ठीक मिलती है उससे स्पष्ट प्रगट है कि जिस समय अठारह पुराण बनाए गए, उससे पूर्व बुद्ध का अवतार हो चुका था। देखो शिव पुराण पूर्वार्द्ध खण्ड १ अ० ५—३—९

किन्तु इतिहास के विशेषज्ञों ने, चिह्न, स्मृति, स्तम्भ और बौद्ध मन्दिरों तथा आर्यावर्त, लङ्का, ब्रह्मा, चीन और तिब्बत की पुस्तकों और अजाएब घरों की मूर्तियों से खोज की है कि बुद्ध विक्रमाजित संवत् से ६१४ वर्ष पूर्व हुए थे और ८० वर्ष जीवित रहकर निधन को प्राप्त हुए, जिसे आज तक दो सहस्र— पांच शत बासठ वर्ष होते हैं और व्यास जी को चार सहस्र नौ सौ इकानवे वर्ष हुए हैं अर्थात् बुद्ध दो सहस्र चार सो उन्तीस वर्ष व्यास जी पीछे हुए हैं। इससे सिद्ध हुआ कि व्यास जी पुराणों के रचयिता नहीं थे।

द्वितीय प्रमाण—समस्त इतिहासज्ञ इस बात को स्वीकार करते हैं कि रामानुज विक्रमाजित की द्वादशवीं शती में हुए किन्तु वैष्णव मत का खण्डन लिंग पुराण में विद्यमान है।

शङ्ख चक्रे तापयित्वा यस्य देहः प्रशस्यते।
संजीवन् कुणपस्त्याज्यः सर्वधर्म वहिष्कृतः ।। लिंग पुराण

+ मारकण्डेय, भविष्य, भागवत, ब्रह्मवैवर्त्त, ब्रह्मांड, शिव, विष्णु, वराह, लिंग, पद्म, नारद, कूर्म' मत्स्य, अग्नि, ब्रह्म, वामन, स्कंद, गरुड।

× आदि, नरसिंह, वामन, शिवधर्म, दुर्वासा, कपिल, नारद, वरुण, साम्ब, कलकी, महेश्वर, सौर, स्कंद पराशर, मारीच' भास्करः, । औशनस, ब्रम्हा, ।

— आर्य पथिक श्री पं० लेखराम जी ने अपनी पुस्तकों में जहां २ तिथियों की गणना लिखी है, वह गणना उस २ पुस्तक मुद्रण काल से लिखी गई है। (अनुवादक)

जिसके शरीर पर तपाकर शंख चक्र के चिह्न लगाये गए हैं वह जीता हुआ भी मृतवत् है और सर्व धर्म कार्यों से बहिष्कृत कर देने के योग्य है।

इससे प्रगट होता है कि रामानुज के मत के पश्चात् लिंग पुराण में उसका खण्डन हुआ। क्योंकि यह सर्व सम्मत है कि जो बात न हो चुकी हो उसका खण्डन नहीं हो सकता और लिंग पुराण अठारह पुराणों में संख्यात है। यतः रामानुज विक्रमाजित की बारहवी शती में हुए हैं, अर्थात् आज तक उनको हुए ७४८ वर्ष हुए हैं और जैसाकि ऊपर लिखा जा चुका है कि व्यास जी को ४६६१ वर्ष हुए हैं जिससे सिद्ध है कि व्यास जी से रामानुज ४२४३ वर्ष पीछे हुए हैं अतः लिंग पुराण व्यास कृत नही हो सकता।

तृतीय प्रमाण – तौज़के जहांगीरी नायक पुस्तक में ज़हांगीर बादशाह लिखता है कि मेरे पिता के राज्यकाल में अमरीका से एक पादरी आलू, तम्बाकू, गोभो यह तीन वस्तुयें लाया था। इस बात पर समस्त ऐतिहासिक एक मत हैं किन्तु ब्रह्माण्ड पुराण में लिखा है कि––

प्राप्ते कलियुगे घोरे सर्ववर्णाश्रमे नरः।
तमालं भक्षितं येन स गच्छेन्नरकार्णवे ॥ ब्रह्माण्ड पुराण

इस घोर कलियुग में जो मनुष्य तम्बाकू का सेवन करता है वह नरक को जाता है। और पद्म पुराण में लिखा है कि––

धूम्रपानरतं विप्रं दानं कृण्वंतिये नराः।
दातारो नरकं यान्ति ब्राह्मणो ग्राम शूकरः ॥ पद्म पुराण

जो मनुष्य तम्बाकू पीने वाले को दान देते हैं वह नरक गामी होते हैं और वह तम्बाकू सेवी ब्राह्मण ग्रामों में शूकर का जन्म लेता है।

हिन्दुओं की किसी धर्म पुस्तक में तम्बाकू का निषेध नहीं है और तम्बाकू अमरीकी भाषा का शब्द है और बाबा नानक जी से लेकर उनकी सातवीं बादशाही तक किसी ने तम्बाकू पीने का खण्डन नहीं किया क्योंकि यह उस काल में विद्यमान नही था। जब जहांगीर बादशाह के राज्यकाल में उसकी प्रथा चली तो औरंगजेब के राज्य काल में दसवीं बादशाही के समय उसका निषेध किया गया। इससे प्रगट होता है कि ब्रह्माण्ड और पद्म पुराण दोनों जहांगीर के पिता अकबर के राज्यकाल से पीछे बनाए गए और सम्राट् अकबर का राज्यकाल विक्रमाजित के संवत् १६१३ से १६६२ तक हुआ था।

इससे सिद्ध होता है कि ब्रह्मांड और पद्मपुराण व्यास जी के निर्मित नहीं हैं। क्योंकि व्यास जी को हुए ४६६१ वर्ष व्यतीय हो चुके हैं। इन पुराणों को निर्मित हुए (१६४८–१६६२)=२८६ वर्ष हुए हैं।

चतुर्थ प्रमाण—स्वामी शंकराचार्य रामानुज से पूर्व हो चुके थे क्योंकि रामानुज ने शांकरभाष्य का निषेध किया है। सभी में यह बात प्रगट है कि शंकराचार्य सर्व संसार को माया और स्वयं को ब्रह्म

मानते थे और सभी हिन्दु शंकराचार्य को महादेव का अवतार मानते हैं और उनका बुद्ध से पूर्व होना संभव नहीं क्योंकि उन्होंने बौद्धों का खंडन किया है। पद्म पुराण में पार्वती जी के उत्तर में महादेव कहते हैं कि—

मायावादमसच्छास्त्रं प्रच्छन्नंबौद्धमेव च।
मयैव कथितं देवि कलौ ब्राह्मणरूपिणा।।

अर्थ— हे देवि ! कलियुग में मैंने ब्राह्मण का रूप धारण करके असत् शास्त्र, प्रच्छन्नबौद्ध—मायावाद का कथन किया।

अतः "पद्म पुराण", बुद्ध, शंकर और रामानुज के पश्चात् बना है। यह व्यास जी का बनाया हुआ कभी भी नहीं हो सकता।

पंचम प्रमाण—जगन्नाथ का मन्दिर संवत् १२३१ विक्रमी में उड़ीसा के राजा अनंग भीमदेव ने बनवाया था, इससे पूर्व नहीं था। इसमें सभी ऐतिहासिक एकमत हैं। और मन्दिर में भी संवत् लिखा हुआ है किन्तु मन्दिर का महात्म्य स्कंद पुराण में लिखा है, अतः स्कंद पुराण संवत् १२३१ विक्रमी के पीछे बना और व्यास देव का बनाया हुआ कभी नहीं हो सकता।

षष्ठ प्रमाण—समस्त विद्वानों की इस विषय में सहमति है कि अठारह पुराण महाभारत से पीछे बनाए गए हैं और पुराणों में महाभारत का वर्णन है परन्तु महाभारत में पुराणों का उल्लेख नहीं है और सभी जानते हैं कि शुकदेव जी ने राजा परीक्षित को भागवत सुनाया था। इतिहास देखने से ज्ञात होता है कि कौरव पांडव युद्ध के पश्चात् महाराजा युधिष्ठिर सिंहासनारूढ़ हुए थे, उन्होंने २६ वर्ष ८ मास और २५ दिन राज्य किया। उनके मरणानंतर राजा परीक्षित ने ६० वर्ष राज्य किया।

भागवत में लिखा है कि राजा परीक्षित के राज्य समाप्ति काल अर्थात् महाभारत के ८६ वर्ष के पश्चात् शुकदेव जी ने उनको भागवत सुनाया किन्तु महाभारत के शान्ति पर्व के ३३२ और ३३३ अध्यायों से सिद्ध होता है कि जब युद्ध समाप्त हुआ और भीष्म जी के अन्त समय पर युधिष्ठिर जी उनसे उपदेश सुनने गये। तब उन्होंने शुकदेव जी का वर्णन करते हुए कहा कि बहुत समय हुआ कि उनकी मृत्यु हो गई और उनके मरने पर व्यास जी का शोक मग्न होना भी लिखा है। युधिष्ठिर जी इस प्रकार से पूछते हैं, मानो उन्होंने देखा ही नहीं था और उस समय राजा परीक्षित गर्भ में थे। जब परीक्षित के जन्म से पूर्व ही शुकदेव जी मर गये थे तो उनको ८६ वर्ष पश्चात् भागवत सुनाना असंभव है और सत्य यह है जैसा कि देवी भागवत के अनुवादक ने लिखा है कि वास्तव में भागवत बोपदेव ने रचा है और जब भागवत शुकदेव ने नहीं सुनाया तथा परीक्षित ने नही सुना, जिनसे व्यासदेव बहुत पहिले हो चुके हैं तो सिद्ध हुआ कि व्यासदेव जी भागवतकार नहीं हैं।

सप्तम प्रमाण—पद्म पुराण के उत्तरखंड के भागवत महात्म्य के प्रथमाध्याय में श्लोक २८ से ३२ तक लिखा है कि नारद जी व्याकुल अवस्था में सनकादि को मिले और कहा कि काशी, सोमनाथ, रामेश्वर आदि स्थानों पर यवनों ने मन्दिरों को गिरा दिया और उन पर अधिकार कर लिया अर्थात् मसजिदें बनाली और यही अवस्था आश्रमों की हुई। किन्तु स्पष्ट है कि यह अवस्था महमूद के समय से

आरंगज़ेब के समय तक होती रही। अतः स्पष्ट प्रगट है कि पद्म पुराण को बने हुए संवत् १०१४ से १३२६ का समय हुआ है।

अष्टम प्रमाण—अठारह पुराणों में ऋषि मुनियों और देवताओं की निंदा लिखी है और उन पर मिथ्या कलंक लगाये हैं ? जैसा कि--

(१) ब्रह्मा जी पर पुत्री समागम का कलंक। (२) कृष्ण जी को कुब्जा और राधिका से। (३) महादेव जी को ऋषि पत्नियों से। (४) विष्णु को जलंधर की स्त्री वृंदा से। (५) इन्द्र को गौतम की स्त्री से। (६) सूर्य को कुन्ती से। (७) चंद्रमा को अपने गुरु बृहस्पति की स्त्री तारा से। (८) वायु देवता को केसरी बन्दर की स्त्री अंजना से। (९) वरुण देवता को अगस्त्य देवता की माता उर्वशी से। (१०) बृहस्पति को अपने भाई की स्त्री ममता से। (११) विश्वामित्र को उर्वशी से। (१२) पराशर को मत्स्योदरी से। (१३) देव को दासी से। (१४) द्रौपदी को पांच पतियों से। (१५) देवियों को मांसभक्षण से। (१६) वामन को छल से। (१७) बलदेव को मद्यपान से कलंकित किया है तथा (१८) रामचंद्र को छल से सूरमा बालि के वध आदि का कलंक तथा सब ऋषि, मुनि, देवताओं पर कलंक लगाया परन्तु बुद्ध पर कोई कलंक नहीं लगाया और नास्तिक मत को कई स्थानों पर प्रगट किया है, इससे स्पष्ट सिद्ध होता है कि पुराणों के रचयिता बौद्ध हैं, व्यासदेव जी नहीं।

नवम प्रमाण - व्यास कृत वेदान्त सूत्रों और योग भाष्य से संसार में स्पष्ट रूप से उनका धर्म समस्त विद्वानों पर प्रगट है किन्तु यह अठारह पुराण उनके स्पष्ट विरुद्ध हैं उनका अभिप्राय उनके लिखे शास्त्रों से नहीं मिलता इससे अच्छी प्रकार विदित होता है कि यह पुराण उनके द्वारा निर्मित नहीं हैं।

दशम प्रमाण -- देवी भागवत में लिखा है कि एक राजा का लड़का किसी एक म्लेच्छ वेश्या पर आसक्त होकर पतित हो गया। यह बात तो सूर्यवत् स्पष्ट है कि जब मुसलमान नहीं आए थे तब मुसलमान वेश्याएं भी न थी तो उन पर कोई आसक्त भी न हो सकता था अतः इससे प्रगट है कि देवी भागवत मुसलिम काल में बना है और व्यासदेव जीने नहीं बनाया है।

धर्म शास्त्र के अनुसार ब्राह्मण का कार्य पढ़ना और पढ़ाना है जैसा कि मनुस्मृति में लिखा है कि—

योऽनधीत्यद्विजो वेदमन्यत्र कुरुते श्रमम्।
सजीवन्नेव शूद्रत्वमाशुगच्छति सान्वयः॥

अर्थ—जो ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य वेदों को नहीं पढ़ता और अन्य कार्यों में परिश्रम करता है तो वह जीवन में ही शीघ्र सपरिवार शूद्रत्व को प्राप्त करता है। देखिये अत्रिस्मृति में भी लिखा है कि—

वेदैर्विहीनाश्च पठन्ति शास्त्रं शास्त्रेण हीनाश्च पुराण पाठाः।
पुराण हीना कृषिणो भवन्ति भ्रष्टास्ततो भागवताः भवन्ति॥

अर्थ—वेद विहीन लोग शास्त्र पढ़ते हैं, शास्त्र से पतित लोग पुराण पढ़ते हैं, पुराण विहीन लोग कृषि कार्य करते हैं और सबसे पतित लोग भागवत पढ़ने वाले होते हैं।

जहांगीर के राज्यकाल में भक्त तुलसीदास जी का निधन हुआ था।

यथा—संवत सोला सौ अस्सी असी नग के तीर।
सावन शुक्ला पंचमी तुलसी तज्यो शरीर॥

जहांगीर संवत् १६८४ में दिवंगत हुआ था। इससे सिद्ध हुआ कि तुलसी रामायण को बने हुए १६४८—१६८४=२६४ वर्ष हुए।

इन प्रमाणों से स्पष्ट प्रगट होता है कि समस्त पुराण नवीन हैं। केवल चारों वेद ही सनातन हैं।

ओ३म् शान्ति! शान्ति!! शान्ति!!!

देवी भागवत परीक्षा

हमारे हिन्दु भाई पुराणों को बड़ी प्रतिष्ठा की दृष्टि से देखते और उनकी कथाओं को प्रेम से सुना करते हैं, इसके अतिरिक्त वह बहुत कुछ तन, मन, धन भी उनके अर्पित करने से संकोच नहीं करते किन्तु प्रायः देखा जाता है कि वह वास्तविकता की ओर कुछ भी ध्यान नहीं देते अतः हम अपना कर्तव्य समझते हैं कि उनकी सेवा में कुछ निवेदन करें कि—

+ बह निज़दे मन आंकस निकोख़्वाह तुस्त।
कि गोयद फ़ुलां ख़्वार दरराह तुस्त॥

अन्यथा स्वार्थी, छली, कपटी मनुष्य लोभ की रस्सी में फंसकर क्या कुछ इन्द्रजाल नहीं रचते।

स्पष्ट है कि ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र, बृहस्पति, चन्द्रमा, बुध, शंकर धर्म के महापुरुष—प्राचीन काल में बड़े प्रसिद्ध विद्वान् और राजा महाराजा हुए हैं। सत्य शास्त्रों में उनकी बड़ी प्रतिष्ठा की गई है और उन्हें ऋषि, मुनि, देवता आदि पदवियों से विभूषित किया गया है किन्तु पुराण उन पर कौन सा दोष है जो नहीं लगातें हैं जैसा कि लिखा है कि—

× "बृहस्पति चन्द्र देवता के गुरु थे, बृहस्पति की स्त्री तारा चंद्रमा के घर गई और दोनों एक दूसरे के प्रेमपाश में बन्धकर वर्षों तक काम चेष्टा करतें रहे। बृहस्पति दोबारा मांगने के लिये आये किन्तु चंद्रमा ने इनकार किया। बृहस्पति ने कहा—तू पापी है। उसने उत्तर दिया कि तू कौन सा धर्मात्मा है? तूने √अपने छोटे भाई की स्त्री घर में डाली हुई है। जैसा मैं सौन्दर्यवान् हूं वैसे ही तेरी स्त्री प्रिय है जो कि मेरे योग्य है। तेरे जैसे कुरूपवान् से उसका कोई सम्बन्ध नहीं। इस पर उसने इन्द्र से शिकायत की। इन्द्र ने वकील भेजा चंद्रमा ने उत्तर दिया कि इन्द्र देवता लोगों को तो समझाते हैं, परन्तु अपने कर्मों पर ध्यान नहीं देते। उन्होंने गौतम की स्त्री अहिल्या× के साथ क्यों दुराचार किया

+ मेरे समीप वह व्यक्ति तेरा हितैषी है जो तुझे कहता है कि अमुक कांटा तेरे मार्ग में है।
(अनुवादक)

× देवी भागवत स्कंध १ अध्याय ११ से आरम्भ अन्त तक

√ × देवी भागवत स्कन्ध १ अ० ११ तथा इसकी नीलकण्ठ टीका

था और क्यों सहस्रों वर्ष पर्यन्त सहस्रभग होकर झील मानसरोवर में कमल पुष्प की नाल के अन्दर लज्जा वश छिपे रहे। जब यह उत्तर पहुंचा, तब इन्द्र क्रोध में आकर सेना सहित युद्ध करने के लिये आया। उसको सहायतार्थ ब्रह्मा जी भी आए।

इधर चन्द्रमा की सहायतार्थ शुक्र देवता पहुंचे तथा महादेव भी आए। और चन्द्रमां से कहा कि सावधान! बृहस्पति की स्त्री ✓कदापि न देना। ब्रह्मा ने चंद्रमा को समझाया +कि उसकी स्त्री लौटा दे। यह बड़ा पाप है। चंद्रमां ने उत्तर दिया कि उसने स्वयं अपनी बृहस्पति स्मृति में कहा है कि स्त्री को दुराचार से जो पाप होता है उसके रजस्वला होने पर ×वह दोष दूर हो जाता है, जैसे ब्राह्मण का पाप वेद पढ़ने से दूर हो जाता है।

निष्कर्ष यह कि कई वर्षों तक युद्ध हुआ। अन्ततः शुक्र के कहने से चंद्रमाने वह स्त्री बृहस्पति को दे दी जिसको +गुरु महराज घर में प्रसन्नता पूर्वक ले गये ×किन्तु वह गर्भवती हो चुकी थी। बृहस्पति +के घर जाकर पुत्र उत्पन्न हुआ जिसका नाम बुध देवता रखा गया। चंद्रमा √ने हठ किया कि मेरा पुत्र है। इस पर बृहस्पति ने देने से इनकार किया जिस पर युद्ध की घोषणा हुई। अन्ततः ब्रह्मा जी ने देवी तारा से पूछा कि यह किसका गर्भ है? उसने उत्तर दिया कि चन्द्रमा का है। ब्रह्मा ने बुध नाम का पुत्र चन्द्रमा को सौंप दिया।

पुनः उसी भागवत में लिखा है कि एक बार देवता दैत्यों से युद्ध करते हुए दस सहस्र वर्ष व्यतीत होने पर थक कर एक स्थान पर ×जाकर धनुष के सिरे को सिर के नीचे रख कर सो गये, देवताओं ने वैकुण्ठ में ढूंढा। जब वहां न मिले तो ढूंढते हुए उस वन में आए अत्र सोते को जगाना पाप समझ कर (लाल बुझक्कड़ों की भान्ति) बुद्धि दौड़ाने लगे। अन्त में यह निश्चय हुआ कि भूरा पशु उत्पन्न करके उससे यह सेवा ली जाए जैसा कि ऐसा ही किया गया। परन्तु उसने इनकार किया कि मुझे इस पाप (जगाने) से क्या लाभ होगा? देवताओं ने कहा कि हम तुझे यज्ञ में भाग दिया करेंगे जिस पर सन्तुष्ट होकर उसने उस धनुष की रस्सी को काटा तब काटते ही बहुत शोर हुआ। उस धनुष के घात से शिव का सिर कट कर समुद्र में जा गिरा। सब देवता आश्चर्य चकित हुए। पुनः ब्रह्मा जी बोले कि भाईयो! करनी का फल अवश्य भोगना पड़ता है। जैसा कि सर्वतः प्रथम स्वयं मुझे फल भोगना पड़ा अर्थात् मेरा शिर शिव ने काट डाला और स्वयं शिव जी भी वंचित न रहे। ऐसे ही कार्यों से उसका लिंग शरीर से काटा गया और इन्द्र देवता अहल्या के साथ दुराचार करने से सहस्रभग होकर झील मानसरोवर में लज्जित रहे अन्त में सबने देवी की प्रशंसा की जिस पर वह सन्तुष्ट हुई और आज्ञा दी कि

✓ देवी भागवत स्कन्ध १ अ० ११ लो० १४
\+ " " " २२ व ६७
× देखो बृहस्पति स्मृति
\+ देवी भागवत स्कन्ध १ अ० १२ लो ७३
× " " " ७४
\+ " " " ७५,७६
√ " " " ८९,९०
× देवी भागवत स्कन्ध १ अध्याय ११

घोड़े का सिर काट कर लगा दो और लगा दिया गया जिस पर उस दिन से दक्षिण स्कंध उतारा हुआ है शरीर मानव का, सिर घोड़े का है।

+इस अध्याय का बहुत पुण्य है, जो सुनेगा उसकी मुक्ति हो जाएगी।

पुनः इस भागवत में लिखा है कि राजा उपरिचर वन में आखेट के लिए गया, वहां पर अपनी स्त्री गिरिका के स्मरण में उसे √स्वप्नदोष हुआ, उसने वीर्य को किसी वृक्ष के पत्ता में बन्द करके (पारसल के रूप में) एक श्येन पक्षी के द्वारा घर भेजा, मार्ग में एक अन्य शिकारी पक्षी वायु में उड़ते हुए को मिल गया। युद्ध आरंभ हुआ, वह स्थान यमुना नदी के ऊपर था, वह पारसल गिर पड़ा। नीचे एक अप्सरा जो किसी ऋषि के शाप से मछली बनी हुई थी और यमुना नदी में तैर रही थी, गिरते ही उसने मुख में ले लिया, वह गर्भवती हो गई।

जब प्रसव का समय आया तो वह एक मछियारे ने पकढ़ ली। पेट चीरने पर एक लड़का और एक लड़की निकल आई। वह दोनों को राजा उपरिचर के समीप ले गया। राजा ने लड़का ले लिया और लड़की उसे लौटा दी। उसने उसे पाला और उसका नाम मत्स्योदरी, काली, कालिका, अथवा मत्स्यगन्धा हुआ।

बड़ी होने पर पिता के साथ यमुना नदी में तरणि (नौका) चलाने लगी। अकस्मात् एक दिन वेद के विद्वान् पाराशर मुनि वहां आये और नदी पार करने का विचार किया। नाव चालक भोजन खा रहा था, काली—कन्या को आज्ञा दी कि तू नाव में ले जाकर इन्हें पार कर दे तब कन्या ने वैसा ही किया।

जब नदी के मध्य में पहुंचे। तब मुनि जी भी डांवाडोल हुए। कामदेव के वशीभूत हो गये और उसका दक्षिण हस्त अपने हाथ में पकड़ा। काली ने इनकार किया और मुनि को बहुत शिक्षा दी किन्तु उसने न माना। अन्ततः उसने वचन दिया कि नदी के पार जाकर यह कार्य किया जाए। जब तट पर पहुंचे तब मुनि ने हाथ पकड़ा उसने पुनः शिक्षा दी परन्तु वह न माना तब काली ने कहा कि मेरे शरीर से मछली की बड़ी दुर्गन्ध आती है। ऋषि ने वरदान दिया और वह योजन-गन्धा हो गयी, अर्थात् उसके शरीर से चार कोस तक सुगन्धी आने लगी। उसने कहा कि मेरा पिता तट पर देखता है। क्योंकि दिन का समय है तब ऋषि के वर से कुहरा छा गया जिससे अन्धेरा हो गया। पुनः उसने कहा कि आप काम पूर्ति के पश्चात् चले जायेंगे पुनः मेरी क्या दशा होगी ? कन्यापन समाप्त हो जाने के कारण मुझे कौन स्वीकार करेगा ? मेरा निर्वाह किस प्रकार चलेगा ? मेरा पिता क्या कहेगा ? लोग क्या कहेंगे ? ऋषि ने वरदान दिया कि तेरा कल्याण पुनः पूर्ववत् हो जाएगा। अन्ततः इन सब बातों के निश्चित हो जाने पर पुनः उसने वर मांगा कि मेरा पुत्र आप जैसा हो और मेरा सौन्दर्य बढ़ता जाए तथा सुगन्ध सदैव रहे। इन सब बातों के निश्चत होने के पश्चात् वह कुकर्म हुआ और समागम के पश्चात् उसी स्थान पर पुत्र उत्पन्न हुआ जिसका नाम व्यास अथवा कृष्ण द्वैपायन रखा गया। पराशर जी भी चले गये और व्यास जी माता से आज्ञा लेकर वन में चले गए।

+ देवी भागवत स्कन्ध १ अ० ११/४५

√ देवी भागवत स्कन्ध २ अ० १/१७—२७

उसी मत्स्योदरी पर भीष्म जी के पिता राजा शान्तनु आसक्त हुए और उससे विवाह किया उसी के उदर से चित्रांगद और विचित्रवीर्य उत्पन्न हुए और जब यह दोनों परलोक गत हुए तो उनकी स्त्रियां विधवा हो गयीं। इसी कारण अंबा, अम्बालिका और दासी, इन तीनों स्त्रियों के साथ व्यासजी ने नियोग किया जिनसे जन्मान्ध धृतराष्ट्र, पांडु और विदुर उत्पन्न हुये जो भारत के प्रसिद्ध राजा हुए ×जो कौरव, पांडव के नाम से प्रसिद्ध हैं। इति।

मूर्ति प्रकाश

सबसे पूर्व निराकार की स्तुति करना ही उपयुक्त है जिससे मन को शान्ति और जीव को ज्ञान प्राप्त होता है। यथार्थ ज्ञान से रहित जीव अनेक प्रकार के अन्धकार में फंसा हुआ मोक्ष से दूर हो जाता है। अतः इस भवसागर से पार होने के लिए सत्य, दृढ़ और बुद्धि के अनुकूल वेद तरणि का ही ज्ञान है। इसके बिना मोक्ष प्राप्ति की आशा अथवा विश्वास करना आशिरः पाद दुराशा मात्र है। वह मनुष्य बुद्धि विहीन है जिसको सत्यता की आवश्यकता नहीं और वह अन्तःकरण अन्धा है जिसमें ज्ञान का प्रकाश नहीं।

जो मूर्ति पूजा इस समय घर २ दिखाई देती है इस पुस्तिका में उसकी वास्तविकता और सत्यता की परख होगी और बड़ी बड़ी प्रामाणिक पुस्तकों से इसके अन्वेषणार्थ प्रकाश डाला गया है मुझे इससे किसी का मन दुखाना अभिप्रेत नहीं और पक्षपात की वृद्धि करना भी प्रयोजन नहीं है अतः जो धर्मात्मा सत्यान्वेषी मनुष्य हठधर्मी और पक्षपात को छोड़कर अध्ययन करेगा वह अपनी झोली सफलता के मोतियों और हीरों से अवश्य भरेगा। हे परमात्मन्! विद्या का प्रकाश और अविद्या का नाश कर!

बौद्धिक युक्तियां

(१) जिस प्रकार सागर गागर में बन्द नहीं हो सकता और यदि बन्द हो जाय तो वह सागर नहीं। इसी प्रकार कोई सर्वव्यापक एक स्थान पर रुक नहीं सकता और मूर्ति पूजा के सिद्धान्त को मानने से परमात्मा सर्वव्यापक नहीं रहता।

(२) प्रत्येक शरीर के लिए आवश्यक है कि लम्बाई चौड़ाई, गहराई रखता हो और उसके लिए स्थान और काल की भी आवश्यकता है अतः कोई शरीर अनादि और नाशरहित नहीं है क्योंकि परमात्मा अनादि और नाशरहित है वह स्थान, देश, काल वस्तु से रहित है अतः वह शरीर धारी नहीं हो सकता।

(३) मूर्ति अथवा फ़ोटो प्रतिबिम्ब, छाया बिना शरीर के होना सम्भव नहीं और जिसका शरीर नहीं उसका प्रतिबिम्ब नहीं और बुद्धि के निकट छाया भी असंभव है अतः निराकारा परमात्मा की मूर्ति कभी भी नहीं हो सकती।

(४) श्रीकृष्ण, रामचन्द्र, हनुमान्, भैरूं, देवी, शिवजी, गणेश, ब्रह्मा, विष्णु, दुर्गा, जगन्नाथ, बद्रीनारायण, काल आदि की मूर्तियां समस्त मन्दिरों में दिखाई देती हैं परन्तु परमात्मा पारब्रह्म की मूर्ति किसी मन्दिर में नहीं है अतः इससे स्वतः स्पष्ट है कि ईश्वर को कोई मूर्ति नहीं।

× देवी भागवत स्कन्ध २ अ० ६/२—४

(५) चतुर्थ संदर्भ में लिखित महापुरुष किसी एक समय में विद्यमान थे कभी उत्पन्न भी हुए और अब नहीं हैं। यह प्रत्येक बुद्धिमान् पुरुष जानता है कि वह शरीर छोड़ गये हैं। हां, उनके सदुपदेश लाभदायक और ग्राह्य हो सकते हैं, किन्तु उनकी मूर्तियों की पूजा से ज्ञान की प्राप्ति सम्भव नहीं और न बुद्धियुक्त है।

(६) आज तक किसी जीव ने दृश्य शरीर अथवा अन्य तत्सम्बन्धी इन्द्रियों से परमात्मा पारब्रह्म को नहीं देखा है अतः उसकी मूर्ति का निर्माण करना अज्ञान का चिह्न है।

(७) जो वस्तु शरीर युक्त है वह सदैव परिवर्तनशील होती है, एक अवस्था में कदापि नहीं रह सकती क्योंकि परमात्मा सदैव एक रस और अचल है अतः उसकी मूर्ति नहीं।

(८) शरीर का स्वभाव रोग, शोक, भय, घटना, बढ़ना, चलना, सूखना, गलना, आदि से एक न एक में ग्रसित रहना है अतः संस्कृत में इसे क्षणभंगुर कहा गया है और श्री परमात्मदेव इन नैमित्तिक परिवर्तनों से रहित है अतः वह शरीर धारी नहीं और न हो सकता है।

(९) हमारे मूर्ति पूजक भाई प्रायः यह सन्देह करते हैं कि मूर्ति पूजा परमात्मा के ध्यान और ज्ञान की प्रथम सीढ़ी है और हम ज्ञान प्राप्ति के साथ ही इसे छोड़ देंगे। परन्तु उनका यह बहाना भी युक्तियुक्त नहीं है क्योंकि प्रथम तो आज तक कभी नहीं सुना गया कि किसी मूर्ति पूजक ने अन्तकाल तक मूर्ति को छोड़ा हो हां, सैकड़ों मरण समय तक गले में लटका कर मरते देखे गये हैं।

सीढ़ी का प्रयोजन उद्दिष्ट स्थान तक पहुंचना अर्थात् ज्ञान प्राप्त करना है। अब देखना चाहिए कि ज्ञान प्राप्ति के लिए कौन सी सीढ़ी उपयुक्त है। वेद की शिक्षा से ज्ञान हो सकता है अथवा मूर्ति पूजा से ? क्योंकि इसमें सब बुद्धिमानों की सहमति है कि ज्ञान प्राप्ति की सीढ़ी विद्या ही हो सकती है, मूर्ति पूजा नहीं। अतः मूर्ति पूजा किसी भी प्रकार उचित नहीं।

(१०) कुछ भाईयों का कहना है कि चंचल मनमूर्ति के बिना स्थिर नहीं रह सकता और हम मूर्ति को आगे रख कर परमात्मा से प्रेम करते हैं। अब हमें देखना चाहिए कि यह उनका कथन कहां तक सत्य है ?

मैंने स्वयं मूर्ति पूजा काल में सैकड़ों बार मन को आजमाया किन्तु कभी उसको किसी एक देश पर स्थिर न पाया, ज्यों ही कृष्ण जी की मूर्ति पर ध्यान लगाया तो उसी समय भागवत का दशम स्कन्ध स्मरण आया तब मूर्ति के आंख, कान, नासिका आदि शरीरावयवों पर विचार जाने से मेरे मन की अवस्था स्थिरता शून्य थी और गरुड़ तथा शेषनाग, क्षीर समुद्र की घटनायें सोच सोच कर मन की विह्वलता की एक और दशा थी। न रामचन्द्र की मूर्ति से धैर्य था और न महादेव की मूर्ति से शान्ति प्राप्त होती थी। जैसा कि अनुभव में आ जाना मौखिक बातों से उत्तम है और प्रत्येक प्रकार से अनुभूत है कि मूर्ति पूजा से मनको शान्ति कठिन और असंभव है तथा विद्या के बिना अविद्या का जानना असत्य और विचारों का कच्चापन है। इसके अतिरिक्त मन का वेग बहुत बड़ा है, वह किसी मूर्तिमान् पदार्थ से नहीं रुक सकता। अतः इसके निरोध के लिये एक सर्वव्यापक ज्योति परमात्मा ही ऐसा है जो मनके वेग को इधर उधर भटकने से रोक दे अतः निराकार, ज्ञान स्वरूप परमात्मा का ध्यान ही श्रेष्ठ है और मूर्तिपूजा से मनका रुकना असंभव है।

वैदिक प्रमाण

(१) नतस्य प्रतिमा अस्ति यस्य नाम महद्यशः ।
हिरण्य गर्भ इत्येष मा मा हिंसीदित्येष यस्मान्नजात इत्येषः ।।
यजु० ३२/३

जो परमेश्वर माता पिता के संयोग से न कभी उत्पन्न हुआ न होता है और न होगा तथा वह कभी शरीर धारण करके बाल, वृद्ध, युवा नहीं होता है उसकी प्रतिमा अर्थात् नाप का साधन, प्रतिबिम्ब, सदृश अथवा फोटो किसी प्रकार से भी नहीं हो सकता क्योंकि वह मूर्तिरहित, अन्त व सीमा रहित और सबमें व्यापक है जो तेज वाले सूर्यादिक लोकों की उत्पत्ति का कारण है, उसी की उपासना करनी योग्य है अन्य की नहीं ।

(२) स पर्यगाच्छुक्रमकायम व्रणमस्नाविरं शुद्धमपापविद्धम् ।
कविर्मनीषी परिभूः स्वयंभूर्याथा तथ्यतोऽर्थान्
व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः ।।
यजु० ४० । ८

जो सबके जानने वाला, सबके मन का साक्षी, सर्वोपरि विराजमान और अनादि स्वरूप है, जो अपनी अनादि प्रजा को अन्तर्यामी रूप से और वेद के द्वारा सर्व व्यवहारों का उपदेश देता है, वह सबमें व्यापक, अनंत पराक्रमयुक्त, सर्व प्रकार के शरीरों से रहित और सर्व रोगों से रहित तथा नाड़ी नस के बन्धन से रहित, सर्व दुःखों से पृथक् और सर्व पापों से अछूता है वही सबकी उपासना के योग्य है, दूसरा कोई नहीं ।

(३) अन्धन्तम प्रविशन्ति येऽसम्भूतिमुपासते ।
ततो भूय इव ते तमो य उ संभूत्या्ँ रताः ।। यजु० ४० । ९

जो लोग असंभूति अर्थात् अनुत्पन्न—अनादि प्रकृति रूप कारण की ब्रह्म के स्थान में उपासना करते हैं वह अंधकार अर्थात् अज्ञान और दुःख सागर में डूबते हैं और संभूति जो कारण से उत्पन्न हुई कार्यरूप पृथिवी आदि महाभूत, पाषाण और वृक्षादि के अवयव तथा मनुष्यादि के शरीरों की ब्रह्म के स्थान में उपासना करते हैं, वह महामूर्ख चिरकाल पर्यंत घोर दुःखरूप नरक में गिरकर महा क्लेश को भोगते हैं ।

(४) वेदाहमेतं पुरुषं महान्तमादित्यवर्णं तमसः परस्तात् ।
तमेव विदित्वातिमृत्युमेति नान्यः पंथा विद्यतेऽयनाय ।। यजु० ३१ । १८

इस मन्त्र में यह रहस्य खोला गया है कि मनुष्य किस पदार्थ को जानकर ज्ञानी होता है ? इस सम्बन्ध में वेदाज्ञा है कि :—

मनुष्य परमेश्वर को ही यथावत् जानकर यथार्थ ज्ञानी होता है जो सबसे बड़ा सबका प्रकाश

कर्म और अविद्यान्धकार अर्थात् शारीरिक तथा अज्ञानादि दोषों से सर्वथा रहित है, वही परमेश्वर सब का इष्ट देव है। इसे जाने बिना कोई मनुष्य ज्ञानी नहीं हो सकता। उस परमात्मा को जानकर और प्राप्त होकर ही मनुष्य जन्म मरणादि क्लेशों के समुद्र से पार होकर परमानंद अर्थात् मोक्ष को प्राप्त होता है, परमात्मा प्राप्ति के अतिरिक्त मुक्ति का अन्य कोई मार्ग नहीं।

(५) एको देवः सर्व भूतेषु गूढ़ः सर्वव्यापी सर्वभूतान्तरात्मा।
कर्माध्यक्षः सर्वभूताधिवासः साक्षी चेता केवलो निर्गुणश्च ॥

श्वेताश्व० ६ | ११

ईश्वर एक है और सबका प्रकाश करने वाला, चेतन स्वरूप, सर्व जगत् के प्राणीमात्र में व्यापक और अन्तर्यामी है। कर्मों का अधिपति– स्वामी और सबका आधार भूत है, सबका साक्षी, सहायक है किन्तु वह किसी की सहायता की अपेक्षा नहीं रखता। और सर्व दोषों से रहित है (अर्थात् कभी साकार नहीं हो सकता)

(६) क्लेशकर्मविपाकाशयैरपरामृष्टः पुरुषविशेष ईश्वरः ॥ योग

इसका अर्थ यह है कि अविद्यादि क्लेशों अर्थात् मूर्खतादि दोषों से रहित, कुशलाकुशल—सुख दुःख, पक्षपात, हठधर्मी, रागद्वेषादि से रहित, कर्मों के फलों तथा वासनाओं से रहित और सब जीवों से उत्तम और व्यापक ईश्वर है।

(७) सत्यं ज्ञानमनंतं ब्रह्म योवेद निहितं गुहायाम्।

तै० उप० वल्ली २ अनुवाक १

ब्रह्म सत्स्वरूप, ज्ञानस्वरूप और अनन्त स्वरूप है उसे जो आत्मगुहास्थित जानता है वही आनंद प्राप्त करता है।

(८) अशब्दमस्पर्शमरूपमव्ययं तथाऽरसं नित्यमगन्धवच्चयत्।
अनाद्यनन्तंमहतः परं ध्रुवं निचाय्य तत्मृत्युमुखात्प्रमुच्यते ॥

कठोप० अ० १ वल्ली ३ वाक १५

परमात्मा शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध (जो श्रोत्र, त्वक्, चक्षु, जिह्वा और नासिका के विषय हैं) उनसे परे है अर्थात् वह न शब्द, न रूप, न स्पर्श, न गन्ध और न रसना में आ सकता है। वह नित्य और अनादि तथा अनंत है। जीवात्मा से श्रेष्ठ और अटल है—उसकी आराधना करके मनुष्य मृत्यु मुख से छूटता है अर्थात् मोक्ष को प्राप्त होता है।

(९) न तस्य कार्यं करणं च विद्यते न तत्समश्चाभ्यधिकश्च दृश्यते।
परास्य शक्तिर्विविधैव श्रूयते स्वाभाविकी ज्ञान बल क्रिया च ॥

श्वेताश्व० ६ | ८

उस परमात्मा का न शरीर है और न इन्द्रियां हैं, उसके समान और उससे बड़ा कोई भी दिखाई नहीं देता। उसकी शक्ति सबसे बड़ी है और नाना प्रकार की सुनी जाती है उसके ज्ञान, बल और क्रिया स्वाभाविक हैं।

(१०) न तस्य कश्चित्पतिरस्ति लोके न चेशिता नैव च तस्य लिंगम् ।
स कारणं करणाधिपाधिपो न चास्य कश्चिज्जनिता न चाधिपः ॥
श्वेत० ६ | ९

परमात्मा का जगत् में कोई पति नहीं है और न उसका जनक तथा शासक है। वह सबका कारण है और जीवों के एक मात्र अधिपति है उसका न कोई जनक और न उसका कोई शासक है।

(११) यद्वाचाभ्युदितं येन बागभ्युद्यते ।
तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते ।४।

(१२) यन्मसा न मनुते येनाहुर्मनो मतम् ।
तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते ।५।

(१३) यच्चक्षुषा न पश्यति येन चक्षूंषि पश्यन्ति ।
तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते ।६।

(१४) यच्छ्रोत्रण न शृणोति येनश्रोत्रमिदं श्रुतम् ।
तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते ।७।

(१५) यत्प्राणेन न प्राणिति येन प्राणः प्रणीयते ।
तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते ।८। केन १ | ४—८

जो वाणी का साधन नहीं है अर्थात् अविद्यायुक्त वाणियों से प्रसिद्ध नहीं हो सकता।

जो सब की वाणियों को जानता है, हे मनुष्यो ! तुम उसी को परमेश्वर जानो और किसी को नहीं।

जो इच्छा करके भी मन से नहीं जाना जा सकता और जो मन को जानता है, उसी ब्रह्म को तू जानकर उसकी उपासना कर।

जो आंख से दिखाई नहीं देता और जिससे आंखें देखती हैं, उसी को तू ब्रह्म जान और उसी की उपासना कर अर्थात् उससे भिन्न जो सूर्य, विद्युत, अग्नि आदि पदार्थ हैं उनकी उपासना मतकर।

जो कान से नहीं सुना जाता और जिससे कान सुनते हैं उसी को तू ब्रह्म जान और उसी की उपासना कर।

जो प्राणों से चलायमान नहीं होता और जिससे प्राण गति करते हैं, उसी को तू ब्रह्म जान, और उसी की उसासना कर। जो उससे भिन्न यह वायु है उसकी उपासना मत कर।

(१६) नित्योनित्यानां चेतनश्चेतनानामेको बहूनां यो विदधातिकामान् ।
तमात्मस्थम् येऽनुपश्यन्ति धीरास्तेषां शान्ति शाश्वती नेतरेषाम् ॥

कठ० ५ । १३

परमात्मा की नित्यता, चेतन्ता और एकत्व अद्वितीय है, सबका यथायोग्य फल दाता तथा जीव-मात्र का साक्षी और अन्तर्यामी है, जो एतद्गुण सम्पन्न परमेश्वर को अच्छी प्रकार ज्ञाननेत्रों से जानते हैं, वह ही शान्ति प्राप्त करते हैं अन्य किसी प्रकार शान्ति प्राप्त नहीं हो सकती । अतः ज्ञान और परमानन्द के इच्छुक को ऐसे सच्चिदानन्द स्वरूप परमात्मा की उपासना करनी चाहिए, अन्य किसी पदार्थ की नहीं, जिसका परिणाम अज्ञान के अतिरिक्त और कुछ नहीं ।

(१७) अपाणिपादो जवनोग्रहीता पश्यत्यचक्षुः सश्रृणोत्यकर्णः ।
सवेत्तिवेद्यम् न च तस्यास्तिवेत्ता तमाहु रग्रथम् पुरुषम् महान्तम् ।।

श्वेत० ३ । १९

परमेश्वर निराकार है और उसमें सब शक्तियां हैं । उसके हाथ नहीं किन्तु उसकी हाथ सम्बन्धी ऐसी शक्ति है कि समस्त चराचर को ग्रहण कर रखा है । पांव नहीं किन्तु सबसे अधिक वेगवान् है । आंख नहीं और चराचर को सर्वकाल में देख रहा है । कान नहीं, चराचर की बात सुनता है । मन बुद्धिचित्त अहंकार तो नहीं किन्तु इनकी शक्ति उसी के दान है और अपने स्वरूप का स्वयं यथावत् ज्ञाता है । वह सब कुछ जानता है किन्तु कोई यह नहीं जान सकता कि वह कितना बड़ा है ? किस प्रकार का है अथवा कितनी सामर्थ्य रखता है । इस परमेश्वर को ज्ञानी और शास्त्र सर्वोत्कृष्ट पूर्ण और सनातन वर्णन करते हैं ।

कुछ अन्य प्रमाण

(१) अव्यक्तं व्यक्तिमापन्नं मन्यन्ते मामबुद्धयः ।
परं भावमजानन्तो मामव्ययमनुत्तमम् ।। गीता ७ । २४

जो परमेश्वर मूर्ति से रहित है उसको बुद्धिहीन, मूर्ख लोग मूर्तिमान् मानते हैं और परम्भाव अथवा अभिप्राय को नहीं जानते कि वह सब से उत्तम और विनाश से रहित है ।

(२) अवजानन्ति मां मूढ़ा मानुषीं तनुमाश्रितम् ।
परम् भावमजानन्तो ममभूत महेश्वरम् ।। गीता ९ । ११

जो मूढ़ अर्थात् मूर्ख लोग परमेश्वर को मनुष्यवत् देह धारण करने वाला मानते हैं । वह सूक्ष्म भाव को नहीं जानते कि भगवान् तो सबका अधीश्वर और सर्वव्यापक होने से मूर्तिमान् नहीं हो सकता ।

(३) यस्यात्म बुद्धिः कुणुपे त्रिधातुके स्वधी कलत्रादिषु भौम इज्यधीः ।
यस्तीर्थ बुद्धिः सलिलेन कर्हिचित् जनेष्वाभिज्ञेषु स एव गोखरः ।।

भागवत पुराण

जो तीन प्रकार के धातुओं से निर्मित्त शरीर में आत्म बुद्धि करते हैं, स्त्री पुत्रादि में आत्म बुद्धि रखते और नदी, पर्वत, मन्दिरादि में तीर्थ बुद्धि समझते हैं वह मनुष्य सर्वथा पशुओं के समान गधे अथवा बैल हैं ।

(४) मृच्छिला धातु दार्वादि मूर्तावीश्वर बुद्धयः ।
क्लिश्यन्ति तपसा मूढ़ा परां शांतिम् न यान्ति ते ।। महा भारत

जो जीव धातु, पत्थर, लोहा, पीतल, चांदी, सुवर्णादि किसी प्रकार की मूर्ति का निर्माण करके उसमें ईश्वर बुद्धि रखते हैं वह मूर्ख लोग कष्टों को प्राप्त करते हैं और परम शान्ति कदापि प्राप्त नहीं कर सकते ।

(५) किसी महात्मा का कथन है कि —

तीर्थेषु पशु यज्ञेषु काष्ठपाषाणमृण्मये ।
प्रतिमादौ मनो येषां ते नराः मुढ़ चेतसः ।।

तीर्थों और पशु हिंसक यज्ञों में, काष्ठ, पाषाण और मृतिका से निर्मित प्रतिमाओं अर्थात् मूर्तियों में जिनका मन है वह मनुष्य मूर्ख और मूढ़चित्त वाले हैं ।

मूर्ति पूजा के सम्बन्ध में बाबा नानकादि गुरुओं की सम्मति

महल्ला एक । बावा नानक जी कहते हैं:—

(१) घर में ठाकुर नज़र न आवे । गले में पाहन ले लटकावे ।।
अरे भोला साकत फिरता । नीरबरूले खपखप मरता ।।
पात्थर बोले न कुछ देव । फोकट कर्म निष्फल है सेव ।।

(२) पाहन, पितर खायें भाई क्या मांगे क्या दें ।

(३) पाथर ले पूजे मगध गवार ।
जो आप डूबे तुम्हें कहां तारनहार ।।

(४) एको सिमरो नानका जो जल थल रहिया समाए ।
दूजा काहे सिमरिये जो जनमे ते मर जाए ।।

(५) जमे न मरे, आवे न जाए । नानक का प्रभुरहिया समाए ।।

(६) रूप न रेख रंग, तेरे गुण ते प्रभ भिन्न । ....

महल्ला पांचवां:—

(७) सगली तिथ डार कर रखी, अष्टम तिथ गोविन्द जमनासी ।
भरम भोले तरकरत कचरायन जनम मरण रहित नारायण ।।

महल्ला पांचवां:

(८) सगली अपराध दे टोरन ।
सो मुख जले जो कहे ठाकुर जीते ।।

महल्ला पंचम:—

(९) मोया-काहू ने पाहन पूज धरियो ।
सरका होने संग गले लटकायो ।।

काहू लखियो प्राची दिशा में ।
काहू पच्छम को सीस निवाइयो ।।
क्यों उनको पूजत है-और क्यों ।
पाषाण को पूजन धायो करो ।।

दशम महल्ला:--

करिया और सभो जग सारा ।
सिरी भगवान भेद न पाइयो ।।

(१०) नाहीं पछानत न महान् यश जाको ।
परताब हतियों परमाई पूजतें ।
परमेशर को जी के परे परयोग पराहीं ।
पाप करो-परमारथ कर छिपाईं ।
ते अति पाप तजाईं ।
पाईं पड़ परमेशर की ।
जड़ पाहन में परमेशर नाहीं ।।

(११) सोया पाहन परमेसर क्या पूजे सब संसार ।
तिस भरोसे जो रहे सो डूबे काल धार ।।

कबीर जी कहते हैं:—

(१२) जो पाथर को कहत हैं देव ।
तिन की निष्फल जावे सेव ।।
जो पाथर की पाईन पाईं ।
तिन की खाल अजाईं अजाईं ।।

(१३) भात बहुत अरलापई कर गए का सार ।
भोगन हार भोगिया इस मूरत के मुख चार ।।

(१४) पाषाण घड़ के मूरत कीनी दीत छाती पाए ।
जो ओह मूरत साची है ता घड़न हारे नूं खाए ।।

अन्य पुस्तकों से—कबीर जी:—

(१५) पत्थर पूजे हर मिले, तो हम पूजें पहाड़ ।
इस पत्थर से चक्की भली, जो पीस खाए संसार ।।

(१६) पाथर पूजे मुलले सतअठ तीरथ नहाए ।
देखे देखे स्वाँग धर भोले झटका खाए ।।

दादू जी:—

(१७) दादू दुनिया बावरी मढ़ियां पूजिन ऊत ।
आप मोए जग छाड गए इनसे मांगे पूत ।।

(१८) पत्थर पीवे धोए के पत्थर पूजे प्राण ।
अन्त काल पत्थर भए भव डूबे इस ज्ञान ।।

(१९) पाहन की पूजा करे कराए आत्म घात।
मौत कहूं ससती नहीं सो प्राणी दोज़ख जात ॥

एक महात्मा का वचनः—

(२०) पत्थर को तो भोग लगाए वह क्या भोजन खावे रे।
अन्धे आगे दीपक बाले वृथा तेल जलावे रे! ॥

हे प्रकाश स्वरूप परमात्मन्! अपनी परम दयालुता से इसके पढ़ने पढ़ाने वालों को सत्यमार्ग वेद की ओर चलने का ज्ञान प्रदान कर। जिससे यह अविद्या का जाल आर्यावर्त से शीघ्र दूर होवे।

ओं शान्ति शान्ति शान्ति।

मूर्ति प्रकाश समाप्त हुआ।

इतरे+ रूहानी + बजवाबे गुलाबे× चमन+।

दोहा

जितने फूल जहान× के उन पर मन मत फूल।
सिर पर खड़ी खिज़ां+ है होगा बहुत मलूल% ॥

आद मध्य और अन्त से जो न्यारा है एक।
निश दिन दृढ़ कर प्रेम से उसकी पकड़ो टेक ॥

निर्गुण सगुण पार ब्रह्म कभी न होवे औतार।
सर्व शक्ति और ज्ञान से निर्धारण उद्धार ॥

सृष्टि के आरम्भ में वेद किये प्रकाश।
ऋषि चार के हृदय में जैसे आवे श्वास ॥

कबित

दया और आनंद मिलके बने स्वामी दयानंद।
सूरज और चांद की मिसल मशहूर हैं ॥

ध्यान और ज्ञान अकेले जहान में।
शान्त किये पोप जो पेट के मज़दूर हैं ॥

विद्या से हैं जो नवीन वेदान्त वाले।
पूजा करावें अपनी ज्ञान से नफूर+ हैं ॥

पोल इनका फोलफाल जाल को जला देना।
ढोल की उतार खाल किये चकनाचूर हैं ॥

+ इतर=फूलों का रस + रूहानी=आध्यात्मिक × गुलावे चमन=उद्यान के पुष्प।
× संसार + खिज़ां=शिशिर × मलूल=दुःखी।

खुलासा ⌋ अज पोथी गुलाब चमन +मुसन्नफा गुलाबदास मोसन्थ।

पोथी एक गुलाब चमन भाषा अन्दर जान।
गुलाब दास की कृत है ख़ास पंजाब ज़बान॥

जिससे बहुत वेदान्ती फंसे अन्दर भोग।
पाप पुण्य नहीं मानते करते योगायोग॥

मुख प्रयोजन यही है इस पोथी में जान।
शंकाओं से दूरकर भोग करे इनसान+॥

आद से लेकर अन्त तक देखी चमक गुलाब।
आई गन्दी वासना मन होएया बेताब॥

राह में मिले महात्मा उनसे पूछा हाल+।
बोले पोथी गुलाब चमन विषयन जान कमाल॥

इस कारण से सोच कर कहूं जवाब बनाए।
ता इस झूठे बाग़ पर मत कोई मन भरमाए॥

पहिला मानो मानव कहे विप्र कहते दास गुलाब।
यह बेकार मिलें हैं नीच तमांम ख़राब॥

दूजा है मा बाप जो भाई बन्द और मीत।
इनसे मोह त्यागदे करो फकीरी रीत॥

तीजा जो है स्त्री आवे वह किस काम।
मतकर मेहनत चाकरी भोग सद आराम॥

कर विवेक की पारता कहते हैं महाराज।
कुल, लोक और वेद की सभी त्यागो लाज॥

करते दूर अन्देशियां मुंह से झड़े गुलाब।
नंगे हो हो बैठते बिन देखे दर बाब+॥

कर निषेध तिन देखियो जीवु न तनमें कोई।
बुद्धि द्वारे जीव है देह सच्चे हुई॥

वेद पुराण की खोज के कहते किया विचार।
एक परमात्म तत्व है और न कोई विस्तार॥

तात्पर्य कुल ग्रन्थ का यह है निश्चय जान।
जीव कहे हूं अहं ब्रह्म और न दूजा जान॥

+ भगोड़े × संक्षेप + लिखित
× मनुष्य
+ पानी।

भोग इन्द्रियों का कर्म है जो सदा निर्लेप।
पाप पुण्य नहीं चीज़ कुछ, झूठे सभी विक्षेप ॥

चौपाई

वैर ज्ञानं ब्रह्म–अहं ब्रह्मास्मि । अयमात्मा ब्रह्म–तत्त्वमसि ॥
चार वेदों के चार महा वाक् । मूल यही है कहूं बे बाक ॥

कर्म कांड है सारा वेद । कर्म ज्ञान में बहुता भेद ॥
इस कारण सब धंदे छोड़ । महा वाक से मन को जोड़॥

सोऽहं जाप पुकारें वेद । जीव ब्रह्म में मूल न भेद ॥
जो चित्त चाहे वह खाओ निसंग । पहनो जो कुछ मांगे अंग ॥

भूल से ईश्वर हो गया जीव । ज्ञान होवे फिर ईश्वर थीव ॥
और दूजा कोई ईश्वर नाहीं । जो कुछ है सो है मन माहीं ॥
और ज्ञान वृथा सब जान । ज्ञान यही सुख भोग जहान ॥

दोहा

पुरुषार्थ को छोड़ दे उद्यम पर मत डोल।
कृष्ण कन्हैया की तरह तुम हरदम करो कलोल ॥

इतर रूहानो बजवाब-गुलाब चमन ।

दोहा

ब्रह्मा से ले व्यास तक जितने ज्ञानी होई ।
चार वेद मन्तव्य थे निश्चय जानो सोई ॥

मानव कह देह दुर्लभ है मिले न बारम बार।
इस कारण इस देह से कर अपना निस्तार ॥

कर्म उपासना और ज्ञान तीनों मिलकर जान ।
एक भक्ति तब हुई है पूर्ण ऐ विद्वान् ॥

कर्म से रीत उपासना वृत्ति होती साफ़ ।
और उपासना कर्म बिन जान ज्ञान ख़िलाफ़ ॥

बिन ज्ञान के परम भी भरमावें दिन रात ।
बिना ज्ञान उपासना के भी आधीरात ॥

असल प्रयोजन जान ले कर के सोच विचार।
इस मिसाल पर ग़ौर कर तीनों बात तय्यार ॥

भोजन बनाना कर्म है उपासना खाना जान ।
तृप्ति होना ज्ञान है और सभी अज्ञान ॥

बिस्तर बनाना कर्म है उपासना पोशश जान ।
गरमी सरदी शर्म को ढकना जान ज्ञान ॥

विद्या पढ़ना कर्म है अमल उपासना जान ।
भ्रम निवारण ज्ञान है तीनों तत्व पछान ॥

पैदा होना कर्म है विद्या उपासना ज्ञान ।
परोपकार ज्ञान है जिससे तरे जहान ॥

जिन कों बुद्धि ज्ञान की वह समझे हैं खूब ।
बिन मिलने इन तीन के कब पाए महबूब+॥

वेद को छोड़ें झगड़ें बेशक कर्म त्याग ।
मुख से मत खो ज्ञान जब अंदर विषयन आग ॥

जो जाने है भोग को पैदा हुआ बशर ।
वह अज्ञानी सूर है या श्वान या खर ॥

नहीं कुछ जलवा ज्ञान का उस के मन प्रकाश ।
वह चमगादड़ अन्ध है या उल्लू बिन बास ॥

कर्म उपासना ज्ञान से जो है मानुष हीन ।
उसको वेद पुकारते दुष्ट महां मलीन ॥

संध्या करना कर्म है, उपासना प्राणायाम ।
अर्थ सहित जो ध्यान है वह है ज्ञान मदाम।।॥

सेवा माई और बाप की नित कर्म पछान ।
यजुर्वेद में हुकुम है देवता इन को मान ॥

श्रद्धा सेती टहल कर तृप्त करो चितलाए ।
यही तर्पण श्राद्ध है मुआ न भोजन खाए ॥

जन्म समय मां बाप जो टहल करें दिन रात ।
दुःख उठावें अते कठिन भोगें नरक उपात ॥

हर मानुष पर फ़र्ज है सेवा करें हमेश ।
इन की सेवा करिये×जांपे सहें क्लेश ॥

× प्रियतम । ٦ वराह । × कुत्ता । + गधा ।
٦ सदैव । × मृतक । × और । × कर्तव्य ।
× अपने पर । + मूर्ख ।

रामचंद्र महाराज जो पूर्ण थे विद्वान् ।
आज्ञा पालन बाप की बन को गए पछान ॥

और हजारों बुद्धिमान् उन का यह फरमान ।
माई बाप के सरण पर हो गये हैं कुर्बान ॥

चाहिये होना सिंहवत् आप खाए जग दे ।
टुकड़े नित फकीर से क्या पुरुषार्थ भये ॥

विद्या वान् संन्यास लिये उपदेशी संसार ।
मूरख जो संन्यास लिये आप डुबे मंझधार ॥

विद्या वान संन्यास लिये होगा जगत् उपकार ।
मूरख जो संन्यास लिये देखी सुन्दर नार ॥

विद्यावान् सन्यास लिये वेद का करे प्रकाश ।
मूरख जो सन्यास लिये चरस भंग का नाश ॥

मूरख जब संन्यास लिये बनें अघोरी जान ।
मानुष गन्दगी खाए है घोड़े श्वान समान ॥

ऋण की चाह के कारणे जो कोई बने फकीर ।
+दीन दुनी✓ के बीच में समझते हुए हकीर× ॥

जगत् छोड़ कर जाएगा तू बतला किस कोन● ।
सारी पृथिवी जगत् है जिस पर करते गोन ॥

जती★ रहना कब धर्म है बिन धारे ब्रह्मचर्य ।
सब जग जेकर जती होवे मचे फतूर❀ और हर्ज⌐ ॥

बंद होवे रोजगार सब टूट जावे प्रवाह ।
तां तुम समझो सोच कर कभू न होवे निबाह ॥

स्त्री करना धर्म है वेद हुकुम सच जान ।
गृहस्थाश्रम के वक्त* में मन न होवे हैरान ॥

स्त्री ढाल गुनाह की रहे पाप से दूर ।
जो कुछ पाप अभोग का उससे बचे जरूर ॥

अव्वल† करो ब्रह्मचर्य और पीछे करो गृहस्थ ।
तीजा✓ बानप्रस्थ है चौथा है संन्यस्त ॥

+ धर्म । ✓ संसार । × नीच, घृणित । ● दिशा । ★ यति । ❀ झगड़ा । ⌐ हानि ।
* समय । † प्रथम । ✓ तीसरा ।

अर्द्धंगी है स्त्री हुकुम× मनु का जान ।
बिन स्त्री जग होवे कहां त्यागो झूठ गुमान ।।

झूठी लाज जहान✶ की त्यागो करो विचार ।
सत हुकुम जो वेद का, वह नहीं त्यागन हार ।।

वेद कहे जब एक ब्रह्म त्यागो और पखण्ड ।
पापी कारण जगत् में बने साम और दण्ड ।।

ब्रह्म ज्ञाता जगत् का जीव भरा ज्ञान ।
ब्रहम व्यापक सर्व में जीव आधुनिक मान ।।

अब बतलाऊं जीव को समझो करके ख्याल ।
बुद्धि द्वारे परखना है यह बात मुहाल✓ ।।

बुद्धि और मन चित्त सब आसरे जीव के जान ।
बिना सहारे जीव के चले न प्राण अपान ।।

देह को त्यागे जीव जब पड़ी रहे तब देह ।
रहे न सुध बुध चितौना करे न कोई स्नेह ।।

देह का मालिक जीव है और साक्षी प्रभ पछान्* ।
देह रेल जीव ड्राईवर और इन्जीनियर है जान† ।।

लिखा साफ है वेद में सूक्ष्म देह से मन ।
मन से परे बुध है बुध से जीव कठिन+ ।।

परे जीव से ब्रह्म है जिस का सब प्रकाश ।
सर्वव्यापी ब्रह्म है सत् चित्त आनंद स्वभाव ।।

बुद्धि मन और चित्त सब जरा सोच कर देख ।
आश्रित सब हैं जीव के प्रभु न्यारा पेख ।।

अध्याय चालीसवां तू यजुर्वेद का जान ।
उस में जीव और ईश का वर्णन किया बखान ।।

ऋग्वेद में देखलो ब्रह्म का ज्ञान विचार ।
हालत÷ पूरी जीव की तुझ पर होई इजहार● ।।

सामवेद में ब्रह्म को निश्चल खोज हमेश ।
अथर्व वेद ब्रह्म जीव का कामिल× है उपदेश ।।

× आज्ञा । ✶ संसार । ✓ कठिन । * पहचान । † जीवन । + सूक्ष्म । ÷ अवस्था । ●प्रगट ।
× पूर्ण ।

निश्चित वेदों में न फर्ज़ी× महावाक ।
पूछ किसी विद्वान् से खोल भ्रम की ताक ॥

लेकिन√ इन का अर्थ भी आपने समझा और ।
एकता जीव और ब्रह्म की नहीं इनमें कर +गौर ॥

सारी श्रुति त्याग कर दो अक्षर लिये *धार ।
इन से दास गुलाब जी कभू न हो निस्तार ॥

एकता जीव और ब्रह्म को निपट असंभव जान ।
यह सरापा† भ्रम है नहीं ज्ञान, अज्ञान ॥

चौपाई

कर्म उपासना तेरा ज्ञान । इन से मिल कर है विज्ञान ॥
इन चारों का कामिल÷ हाल× । वेदों में है पढ़ कर भाल+ ॥

कर्म उपासना पूरी जान । पूरा ज्ञान है कुल विज्ञान ॥
सुनें ग्रन्थ प्रमुख है वेद । ज्ञान दे दें पावें खेद ॥

सोऽहं* जाप नहीं विच वेद । इस कारण है ग़म और खेद ॥
महावाक का अर्थ है और । वेदान्त ध्वान्ति को पढ़, कर गौर ॥

विद्या बिन कब होवे ज्ञान । बिन विद्या नर पशु समान ॥
वेदान्त शास्त्र जो करत व्यास । इससे मिटते सब विश्वास√ ॥

साफ लिखा है पढ़ो विचार । सब सुख मीठा ब्रह्म इक सार ॥
भोगों पर* मत डोल अज्ञानी । तत् वस्तु की सार न जानी ॥

देह गर विषय पान भव करे । आवत जावत जन्मे मरे ॥
जल से धोवे बहु देह अनीत । शुद्ध कहां आवे काची भीत ॥

जिह्वा इस के हो आधीन । फंसे जाल में जैसे मीन ॥
मन कामना भोग में चिपटे । गर्व गुमान न मनते मिटे ॥
भक्त भाव तरे संसार । बिन भक्ति नर होवे ख्वार ॥

दोहा

पार ब्रह्म करतार में भूल न कभु जान ।
सर्वज्ञाता पार ब्रह्म कैसे होवे नादान+ ॥

× कल्पित । √ किन्तु । + विचार । * धारण । † सिर से पांव तक । ÷ पूर्ण । × वृत्तान्त ।
+ समझ । * में । † ध्यान पूर्वक । √ भ्रम । * पूजक । + अज्ञानी ।

ब्रह्म मिसाल समुद्र के जीव मछली जान ।
न हवा में समुदर और न सागर में पहचान ।।

भोग लिखे जो कृष्ण के गोपियों के संग जान ।
वह सब भागवतकार के कपोल कल्पना जान ।।

करके अन्त समाप्ति कह दिया साफ पुकार ।
सच्चा ×चमन है वेद का जिस में सदा बहार+ ।।

नहीं विक्षेप न पक्षपात सच सच किया बयान† ।
बिन विद्या और वेद के कभू न होवे ज्ञान ।।

—०—

× उद्यान । + वसन्त । † वर्णन ।

सांच को आंच नहीं

※ बनाम आँकि नामश मी आवेद ।
रसानद ना उमीदांरा बा उमेद ॥

भूमिका

धर्म सभाओं के प्रायः उपदेशक जब उन से और कुछ नहीं बन सकता तो अपने व्याख्यानों में श्री स्वामी जी महाराज को ही कोस कर (गालियां दे कर) मन को ठंडा कर लिया करते हैं, साथ ही उन के चार पांच उपदेशक विद्वत्ता प्रदर्शनार्थ सत्यार्थप्रकाश की अशुद्धियां भी निकाला करते हैं, जो अपढ़ मूर्खों के सम्मुख कुछ विशिष्ट विद्वान् समझे जाते हैं। हमने फ़िरोजपुर, लाहौर अमृतसर, लुध्याना, पिशावर, वजीराबाद, गुजरात, रावल पिंडी, मुलतान, नाहन, सहारनपुर, बनारस, और हरिद्वार में उनके व्याख्यानों को सुना और उनके मासिक पत्र और तीन चार छोटे ट्रैक्ट भी अध्ययन किये। सभी में सामूहिक रूप में वही प्रश्न और तर्क देखे। इन दिनों हमारे पास एक दयालु श्रीमान् ने श्री स्वामी दयानंद सरस्वती की महिमा नाम पत्र प्रेषित किया। जिन्हें एक महोदय शिवनारायण प्रसाद कायस्थ ने लिखा है।

उन्होंने उन सब प्रश्नों को एकत्र करके ५३ पृष्ठ की छोटी साईज़ में यह पत्रिका लिखी है। हम प्रश्नों को देख कर प्रसन्न होते हैं और परमेश्वर जानता है कि यदि सत्यान्वेषणार्थ प्रश्न किये जायें तो+चश्मे मा रौशन दिलेमा शाद।

हम प्रत्येक समय सत्य के विरोधियों को उत्तर देने पर समुद्यत और किसी स्पष्ट प्रश्न की स्वीकृति से कभी इनकार नहीं करते तथा इनकार कर ही कैसे सकते हैं। जब कि हम एक ऐसे नियम के आधीन हैं। जिसके कारण से हम समस्त असत्य मतों से विशिष्ट हैं अर्थात् "सत्य के ग्रहण करने और असत्य के त्यागते में सर्वदा उद्यत रहना चाहिये।"

यही कारण है कि हम इस पुस्तिका को भी अपने स्वभावानुसार ध्यान से कई बार पढ़ कर उस का उत्तर लिखने के लिये लेखनी उठाते हैं। पूर्ण आशा है कि इसे पढ़ कर सत्यान्वेषी महानुभाव और सत्य से किसी प्रकार हटे हुए मन अवश्य सत्य की ओर ध्यान देंगे।

प्रश्नों के उत्तर

(आक्षेप) जो लोग स्वामी जी महाराज पर अधिक विश्वास रखते हैं, वह तो यहां तक कहते हैं कि धर्म सम्बन्धी जितने मन्तव्य हैं, सब सत्यार्थप्रकाश में लिखे हुए हैं। यही एक पुस्तकें है जो वेद और

※ भावार्थ...उसके नाम से आरम्भ करता हूँ कि जिसका नाम सदैव रहेगा। जो निराश लोगों की निराशा दूर करके उनकी आशायें पूर्ण करता है। (अनुवादक)

+ हमारी आँख प्रकाश युक्त और हमारा मन प्रसन्न। यह एक फारसी की उक्ति प्रसन्नता के लिये कही और लिखी जाती है। (अनुवादक)

धर्म शास्त्र तथा अन्य सब सत्यशास्त्रों का काम दे सकती है। यदि इस भारतवर्ष का भला (उपकार) होना है तो इसी के साधन से होगा और यदि इस देश की उन्नति होगी तो इसी के द्वारा होगी। स्वामी जी ने हमारे ऊपर बड़ी दयालुता कर के सागर को गागर में भर दिया है। पृ० २

(खंडन) यह आपने जनता को भ्रम में डालने वाले शब्द लिखे हैं। हम ऐसा कदापि नहीं मानते हैं कि वेद और सत्यशास्त्रों का काम भी एक पुस्तक दे सकती है। आर्यसमाज के प्रत्येक सदस्य का विश्वास है कि "वेद सब सत् विद्याओं का पुस्तक है, वेद का पढ़ना पढ़ाना, सुनना, सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।"

वेदों से बड़ कर हम किसी पुस्तक को सर्वोच्च नहीं मानते और न पवित्र वेद के अतिरिक्त किसी और ग्रन्थ पर हमारे धर्म का आधार है। भारत वर्ष और संसार का भला जो कुछ होगा वह पवित्र वेद की शिक्षा पर आचरण करने और वैदिक धर्म के मानने से होगा। किन्तु अब यह प्रश्न शेष रहा कि सत्यार्थप्रकाश क्या है ? इस का उत्तर यह है कि वह आर्यसमाज के संस्थापक, पवित्र वेद के अद्वितीय भाष्यकार श्री स्वामी दयानंद जी महाराज द्वारा लिखित एक वैदिक ग्रन्थ है और उन की ऐसी लिखित ३९ पुस्तकें और भी हैं जिनसे १५ व्याकरण सम्बन्धी और शेष सब धर्म सम्बन्धी हैं उनमें से एक सत्यार्थप्रकाश भी है।

इस में स्वामी जी ने भारतवर्ष ही नहीं किन्तु समस्त संसार के मत मतान्तरों का बहुत ही खोज पूर्ण अन्वेषण से सार यथार्थ अवस्था में लिखा है और उन के समक्ष वैदिक धर्म की विशेषताएं सिद्ध की हैं।

यहां तक ही धैर्य नहीं किया किन्तु वैदिक धर्म के सम्बन्ध में कई आवश्यक बातों का संक्षेपत: वर्णन भी किया है। और अधिकतर न्यायपूर्वक समुचित युक्तियों से सैंकड़ों आक्षेपों की निवृत्ति भी की है। अत: सत्यार्थप्रकाश अन्यमत मतान्तरों के सम्बन्ध में स्वामी जी के अन्वेषण का भंडार और वैदिक धर्म की ओर लोगों का यथार्थ नेतृत्व है किन्तु भूमिका और वेदभाष्य बहुत ही उत्तम अमूल्य ग्रन्थ हैं, जिन में पवित्र वेद के सम्बन्ध में पौराणिक और तान्त्रिकमत वालों के आशीर्वाद मिथ्या आक्षेपों का खंडन और योरोपीय दार्शनिकों के नास्तिकपन के विचारों का निराकरण स्पष्ट बौद्धिकतर्कों से किया है। वाम मार्गियों और मूर्ति पूजकों के समस्त भ्रमों को मिटा कर देवता पूजन और भौतिक पदार्थों के पूजन की भित्तियों को गिरा के ढेर कर दिया है, जिन के कारण पवित्र वेद का सूर्य अपने वास्तविक प्रकाश में संसार में चमक रहा है। यह इन्हीं पवित्र कृतियों का परिणाम है। अन्यथा संस्कृत भाषा और वैदिक शिक्षा से वाममार्गी भाष्यकारों के कारण लोगों की जितनी घृणा हो गई थी, हमारे वर्णन करने के अतिरिक्त आपकी धर्म सभा और उस के समर्थकों से भी तिरोहित नहीं। किसो ने सत्य कहा है कि—

* है सत्य भाष्य तेरा मुज़हिरे मतालिबेदीद।
जुबां होती है जिस तरह तरजमाने दिल॥

---

* जिस प्रकार जिह्वा मन के भावों को प्रकट करती है। हे ऋषिवर ! इसी प्रकार से आपका सत्यभाष्य दर्शनीय मन्तव्यों का प्रकाशक और दिग्दर्शक है। (अनुवादक)

(आक्षेप) प्रथम सत्यार्थ में पृष्ठ के पृष्ठ मृतक श्राद्ध के समर्थन में रंगे हुए हैं और द्वितीय सत्यार्थप्रकाश में मृतक श्राद्ध का विपरीत खंडन किया। यह प्रैस वालों की भूल नहीं है, स्वामीजी की ही है। पृ० ४, ५ का संक्षेप)

(खंडन) आप का और धर्म सभा के बहुत से पंडितों का यह निराधार आक्षेप है और आर्य समाज के सदस्यों की दृष्टि में उसकी कुछ भी महत्ता नहीं है। पक्षपात वश आप मानें अथवा न मानें किन्तु आपको वास्तविक स्थिति से अवगत करते हैं। आप और पाठक उस पर कुछ विचार करें:—

सत्यार्थप्रकाश प्रथम एडीशन १८७५ ईस्वी में वाराणसी में प्रकाशित हुआ है। उस ही वर्ष की प्रकाशित कुछ और पुस्तकें भी हैं प्रत्युत उस से एक दो वर्ष पूर्व की भी।

सर्वतः प्रथम जो पुस्तक आर्यसमाज के लिए प्रकाशित हुई। वह भाष्य सहित संध्योपासना है। यह संस्कृत भाषा में आश्विन संवत् १९३१ तदनुसार ११ अक्टूबर १८७४ ईस्वी आर्य प्रकाश प्रैस बम्बई में प्रकाशित हुई। उस के २० और २१ पृष्ठ पर मृतक श्राद्ध का खंडन है। पुनः यह पुस्तक उसी वर्ष नवल किशोर प्रैस में प्रकाशित हुई उसमें भी पृ० १० पंक्ति ३ में मृतक-श्राद्ध का खंडन है। केवल इतना ही नहीं प्रत्युत २ अगस्त १८७५ ईस्वी को स्वामी जी ने पूना में जो व्याख्यान दिया है, उस में भी मृतक श्राद्ध का खंडन किया है। यहां तक हो नहीं किन्तु प्रथम संस्कारविधि में भी मृतक श्राद्ध का खंडन किया है जो संवत् १९३२ विक्रमी में प्रकाशित हुई थी। उसके अतिरिक्त जो व्याख्यान स्वामी जी ने १८७४ ईसवी में हाथरस में दिया था उस में भो मृतक श्राद्ध का खंडन किया था। मुन्शी कन्हैया लाल अलखधारी ने अपनी पत्रिका में उस पर टिप्पणी भी दी थी।

इनके अतिरिक्त वेद भाष्य भूमिका जो भाद्रपद शुदी सम्वत् १९३३ मिक्रमी तदनुसार २० अगस्त १८७६ ईसवी को प्रकाशित हुई, उसके पृ० २५१ से २६६ तक मृतक श्राद्ध का खंडन विद्यमान है। वेदभाष्य के साथ पूर्व ही यह विज्ञापन दिया गया कि मृतक श्राद्धवेद विरुद्ध है।

इसके अतिरिक्त स्वामी जो ने उस छपी हुई भूल के ज्ञात होते ही एक विज्ञापन भी छाप कर प्रकाशित कर दिया था। अतः आर्यसमाज में सामूहिक भावना से मृतक श्राद्ध को वैदिक माना कभी भी उचित नहीं समझा गया किसी सदस्य का ऐसा विश्वास भी नहीं है और न कभी आर्यसमाज की स्थापना के पश्चात् ऐसा सिद्धान्त रहा। अतः यह आक्षेप सर्वथा निराधार है। अवश्य प्रैस वालों की भूल है। क्योंकि आर्यसमाज की स्थापना करने से कुछ समय पूर्व स्वामी जी इस विचार को अवैदिक समझ चुके थे। आर्यसमाज के सदस्य ऐसे व्यर्थ आक्षेपों से कुछ की भय नहीं खाते क्योंकि आंरा कि हिसाब पाकस्त अज़ मुहासबत चिह बाक"। ×

(आक्षेप) स्वामी जी पूर्व के समस्त ऋषिमुनियों से अधिक योग्यता रखते थे, वह स्वयं इसके साक्षी हैं। जैसा कि वह लिखते हैं कि "जो ब्रह्मादिक महर्षियों के बनाए ग्रन्थ हैं उन को परतः प्रमाण अर्थात् वेदों के अनुकूल होने से प्रमाण और जो इन में वेद विरुद्ध वचन हैं उनका अप्रमाण करता हूं"

इस अन्तिम वाक्य में स्वामी जी ने स्पष्ट लिख दिया है कि ब्राह्मण आदि ग्रन्थों में वेद विरुद्ध वचन हैं। (पृ० १२-१४)

+ जिसका हिसाब ठीक है उसे हिसाब देने से क्या भय हो सकता है। (अनुवादक)

(खंडन) भ्राता जी ! आप इस का अभिप्राय सर्वथा नहीं समझे। क्योंकि स्वामी जी ने वेद को स्वतः प्रमाण माना है और समस्त ऋषिमुनि भी इनहें स्वतः प्रमाण मानते थे अतः आवश्यक हुआ कि स्वतः प्रमाण और परतः प्रमाण के अर्थ किये जाते। यदि सब ऋषियों ने वेदों को स्वतः प्रमाण माना है तो स्पष्ट प्रगट है कि उन्होंने किसी ऋषि अथवा किसी ग्रन्थ को किसी बात को जो वेद विरुद्ध है, उसे प्रमाण नहीं माना एक महात्मा का वचन है कि:—

स्मृतेर्वेदविरोधेतु परित्यागो यथाभवेत्।
तथैवलौकिकं वाक्यं स्मृतिबाधे परित्यजेत्॥

अर्थात् जिस प्रकार स्मृति वचन वेदविरुद्ध होने से त्यागने योग्य है उसी प्रकार स्मृति के विरुद्ध लौकिक बातें त्याग देनी चाहियें।

एक और महात्मा ने भी कहा कि :—

श्रुति स्मृति पुराणानां विरोधोयदि दृश्यते।
तत्र श्रौतं प्रमाणं तु द्वयोर्विरोधे स्मृतिर्वरा॥ (व्यास स्मृति १।४)

अर्थात् श्रुति, स्मृति पुराण (इतिहास) का जहां विरोध हो, वहां श्रुति स्मृति के विरोध में श्रुति को मानना चाहिये और स्मृति तथा पुराणों के विरोध में स्मृति बलवान् है।

ऐसा ही मनु ने लिखा है कि जो स्मृति वेद विरुद्ध हो वह त्यागने योग्य है। महाभाष्य में लिखा है कि :—

नैवेश्वर आज्ञापयति नापिधर्मसूत्रकारा पठन्ति॥ महाभाष्य १।१।६।४१

अर्थात् न तो ईश्वर ने वेद में आज्ञा दी है और न धर्म सूत्रकार ऋषि आज्ञा देते हैं।

पुनः हम श्रुति और स्मृति के विरुद्ध किसी का वचन कैसे स्वीकार कर सकते हैं ? मम महोदय ! यही अभिप्राय स्वामी जी का है और इससे तो संभवतः किसी स्वार्थी के अतिरिक्त कोई बुद्धिमान् इन्कार नहीं कर सकता कि स्मृतियों, ब्राह्मणों, इतिहास और सूत्रों तक में प्रक्षेप (मिलावट) कर दिया गया है। चाहे वह इच्छा से हो अथवा अनिच्छा से ही हो।

निरुक्त में भी केवल ५ प्रकाशनों के देखने से पचासों स्थानों पर पाठभेद दिखाई दिया है। जो पं० सत्यव्रत सामश्रमी ने प्रगट कर दिया है। (देखो निरुक्त एशियाटक सोसाइटी कलकत्ता द्वारा प्रकाशित)

यही अवस्था मनुस्मृति की है। ब्राह्मण ग्रन्थ भी इससे सुरक्षित नहीं। वाममार्गियों के प्रक्षेप से वह कदापि नहीं बचे। उनका बच सकना संभव भी न था क्योंकि प्रथम तो उनकी कोई संख्या नियत नहीं। द्वितीय उनकी सुरक्षा का कोई समुचित और नियमित प्रबन्ध नहीं। और वाममार्गियों के युग में तो विशेषकर उन्हीं को वेद माना जाता था "अंधेर नगरी चौपट राजा" की भान्ति उन्हीं को वेदों का स्थानापन्न समझा गया। तन्त्रों के मूल भी यही ग्रन्थ ठहराए गये और उन्हीं के प्रमाण प्रत्येक स्थान पर वाम मत के ग्रन्थों में पाए जाते हैं। अतः इनमें वेदविरुद्ध वचनों के मिलाने से कौन साहसी पुरुष है जो आर्यसमाज के सम्मुख इन्कार कर सके। हम एक दो नहीं, बीसियों प्रमाण देने को समुद्यत हैं।

(आक्षेप) स्वामी जी ने सत्यार्थप्रकाश पृ० ३०६ पर लिखा है कि रामनाम स्मरण निष्फल है। हरि, राम, कृष्ण, नारायण, शिव और भगवती नाम स्मरण से पाप कभी नहीं छूटता। चलो भगवद् भजन और राम नाम स्मरण से तो छुटकारा मिला।

(खंडन) निःसन्देह, राम, हरि इत्यादि के नाम स्मरण से पाप नहीं छूटते। दंड प्राप्ति के बिना पाप छूट भी नहीं सकता और वेदोक्त पद्धति के अनुसार राम, हरि, कृष्ण यह तीनों परमेश्वर के नाम नहीं हैं। इनमें से पहिला नाम परशुराम, बलराम और रामचन्द्र इन तीनों का अथवा तीनों में से प्रत्येक का है। हरि—बन्दर और घोड़े का नाम है। कृष्ण-कृष्णचन्द्र और व्यास जी का नाम है और कृष्ण पक्ष अर्थात् १५ अंधेरी रात्रियों का भी नाम है, परमेश्वर का नाम कदापि नहीं और वेद-भगवान् के किसी मंत्र में अथवा निरुक्त आदि किसी वैदिक कोष में भी परमेश्वर के यह नाम नहीं लिखे। राम अयोध्यावासी शिव कैलाशवासी और कृष्ण द्वारिकावासी के ईश्वरीय अवतार माने जाने के पश्चात् यह नाम परमेश्वर के कल्पित किये गये। अन्यथा इससे पूर्व किसी ग्रन्थ में यह नाम परमेश्वर के नहीं। अतः इन नामों का जाप पाप छुड़ाने के अर्थ करना पाप का भागी बनना है क्योंकि शास्त्रों में लिखा है कि ईश्वर को छोड़कर जो किसी देवता को उपासना करता है वह पशु है। शेष नारायण, शिव और भगवान् में से सारे तो नहीं किन्तु एक दो अवश्य वेद में प्रयुक्त हुए हैं और ऋषि मुनियों ने तीनों नाम ईश्वर के नाम में प्रयुक्त किये। इनके जाप करने में पाप नहीं है। स्वतः यह उत्तम हैं किन्तु (8)तोबा वालों की भान्ति पाप इनके जाप से भी नहीं छूट सकता। वह तो फल प्राप्ति से ही छूटेगा।

+ तस बीह बदस्ते जाहिद चश्मश बमाले मर्दुम।

कबीर जी ने भी कहा है कि :—

"माला फिरी न मन फिरा, फिर-फिर गयो शरीर।"

अतः (माला के साथ नाम स्मरण भी) सर्वथा व्यर्थ और निरर्थक कार्य है। वास्तव में अपने ऊपर मनः तोष के लिये यह एक प्रकार की छल-कपट की रस्सी है। इसीलिये स्वामी जी ने इसका निषेध किया है। हां, एकान्त में ईश्वर चिन्तन और स्मरण को किसी स्थान पर बुरा नहीं कहा किन्तु उसको आज्ञा दी है (देखो वेदभाष्यभूमिका में प्रार्थना विषय)

जिस प्रकार स्वामी जी ने लिखा है उसी प्रकार पातञ्जलि जी ने योग में लिखा है कि—

तस्यवाचकः प्रणवः, तज्जपस्तदर्थ भावनम् ॥ योग पाद १

अर्थात् ईश्वर परमात्मा का वाचक सबसे उत्तम नाम ओ३म् है। योगीजन वा उपासक को चाहिये कि ओ३म् नाम का अर्थों को समझकर जप करे। क्योंकि सुश्रुत में धन्वंतरि जी ने कहा है कि—

यथाखरश्चन्दनभार वाहो भारस्य वेत्ता न तु चन्दनस्य। एवं हि शास्त्राणि बहून्यधीत्य………॥

जैसे गधे के ऊपर चंदन लादने से वह बोझ को जानता है किन्तु चंदन को नहीं। ऐसे ही शास्त्रों के पाठमात्र करने से यदि अर्थ से वंचित है तो केवल गधा है।

(आक्षेप) हवन से भी स्वतन्त्रता मिल जाती है। होम क्या है? वायु शुद्धि की प्रक्रिया। (पृ० ६)

---

(8) मुसलमानों में तोबा=प्रायश्चित से पाप-क्षमा का सिद्धान्त माना जाता है।

+ तसबीह=माला तो भक्त के हाथ में है और उसकी आंख मनुष्यों के समान पर है। (अनुवादक)

(खंडन) यह आपने आर्यसमाज से अथवा स्वामो जी से ही विरोध नहीं किया किन्तु समस्त ऋषियों और मुनियों और वेद भगवान् से विरोध किया है। ×हजरत ! ऋषियों की यही आज्ञा है और आपके माने हुए भगवान् कृष्ण जी ने भी ऐसा ही लिखा है (देखो गोता ३।१४, १५)

मनु जी ने भी ऐसा ही लिखा है (देखो मनुस्मृति ३।७०,७६)
और आपके माने हुए शिव स्वरूप शंकराचार्य ने भी ऐसा ही स्वीकार किया है।
(देखो गीता भाष्य अ० ३)

निःसन्देह यज्ञ का फल वही है जो वेद में लिखा है और वैसा ही स्वामी जी ने सत्यार्थप्रकाश, सन्ध्या और भूमिका में वर्णन किया है। आपका आक्षेप बुद्धिमत्ता से रहित है। सबको ईश्वराज्ञा पर यथा संभव चलना चाहिये।

(आक्षेप) भले चंगे में आचमन और मार्जन करना निष्फल है क्योंकि आचमन स्वामी जी के लेखानुसार कफ़ और पित्त की निवृत्ति के लिये हैं और मार्जन आलस्य दूर करने के हेतु है और जल प्राप्त न हो तो धन्यवाद है। (पृ० १६)

(उत्तर) आचमन का फल वही है जो स्वामी जी ने लिखा है। देखो मनुस्मृति में भी लिखा है (अ० २।५३,६०,६१,६२,७०) इनमें आचमन का वर्णन है। ५३ में तो आचमन भोजनान्त में लिखा है। इसका अभिप्राय केवल वैद्यक के नियमानुसार पाचन शक्ति की सहायतार्थ जल का प्रयोग है क्योंकि वैद्यक शास्त्र की रीति से भोजन के बीच में जल नहीं पीना चाहिये। ६०, ६२ तक सन्ध्या में आचमन की विधि है। वहा भी पवित्रता और शुद्धता से अभिप्राय है। परन्तु संभवतः आपके कोमल विचार में कफ़ निवृत्ति और पित्तनिःवृत्ति शुद्धता नहीं ? कंठ की शुष्कता का दूर होना ही वहां अभिप्रेत है क्योंकि प्राणायाम में प्रायः ऐसा होता है कि प्रात.काल उठकर भी प्रायः यह अवस्था होती है। जो लोग संन्ध्या करते हैं वह इस बात से अच्छी प्रकार परिचित हैं। आप नहीं जानते तो अपने वास्तविक बन्धु आर्य भाईयों से आचमन के लाभ पूछिये जो नित्यप्रति संध्या करते हैं। तात्पर्य यह कि प्रत्येक प्रकार आचमन से कफ़ और पित्त की निवृत्ति अभिप्रेत है, चाहे वह कंठ की हो अथवा जिह्वा की हो।

श्लोक ७० में भी वेदपाठ से पूर्व आचमन करने की आज्ञा है। यहां भी कंठ की कफ़ पित्त निवृत्ति अभिप्रेत है क्योंकि श्वास की तीव्रता से कंठ शुष्क हो जाता है और व्याख्यान में जलपान का अभिप्राय भी यही है। यदि यह बातें न हों अथवा जल न हो यदि हम आचमन और मार्जन न करें तो संध्या में कोई रुकावट नहीं। जल से आलस्य निवृत्ति तो एक स्पष्ट सी बात है। निद्रा निवृत्ति का भी यह उत्तम उपाय है और एक प्रकार का सैल्फ़ मैस्मरेज़म भी है, यह है स्वामी जी की फिलालफी, अब आपको चाहिये कि यज्ञ, मार्जन और आचमन के सम्बन्ध में शिव और नारायण का नाम लेकर हमें कोई पौराणिक फिलासफी बताइये।

✲ अगर सिद्कदारी बियारो बिया।

(आक्षेप) संस्कारविधि में यज्ञोपवीत करने वाले बालक को तीन दिन का उपवास करना लिखा

× महोदय।

✲ यदि सत्यता रखता है तो उस पर चल और उसी पर पहुंच। (अनुवादक)

है और सत्यार्थप्रकाश पृ० ४४१ पर लिखा है कि किसी का उपवास सत्य नहीं है. व्रत से कष्ट होता है। इन दोनों में परस्पर विरोध है। स्वामी जी की अन्तिम आज्ञा भी है कि उपवास करना सत्य नहीं, जिसमें आराम मिले वही सत्य है। (पृ० १६)

(खंडन) शोक कि लोग जान-बूझकर सत्य से मुख छिपाया करते हैं। देखिये कि यह कैसी बुरी बात है। मेरे हज़रत ! वहां ऐसा कदापि नहीं।

सत्यार्थप्रकाश पृ० ४४०, ४४१ में स्वामी जी ने इस बात का वर्णन किया है कि जैनी लोग जो हिन्दुओं के व्रतों को बुरा कहते हैं और अपने व्रतों को अच्छा, यह उनकी भूल है। वहां के ठीक शब्द यह हैं कि—"अपने यच्च खाणादि व्रतों को अतिश्रेष्ठ और नवमी आदि को दुष्ट कहना मूढ़ता की बात है। क्योंकि दूसरे के उपवासों की तो निन्दा और अपने उपवासों की स्तुति करना सज्जनों का काम नहीं। हां, जो सत्य भाषणादि व्रत धारण करते हैं, वे तो सबके लिये उत्तम हैं, जैनियों और अन्य किसी का उपवास सत्य नहीं है।" (समु० १२)

शेष रही संस्कारविधि की बात, उसमें भी ऐसा नहीं। वहां तो तीन दिन दूध, जौ, आमिक्षा (जो दूध, दही, चीनी, केसर के संमिश्रण से बनता है) के खाने पीने की आज्ञा है। अर्थात् तीन दिन केवल इन तीनों में से कोई भोजन खावे। तात्पर्य यह है कि सत्त्वगुणयुक्त भोजन करे जिससे वह संयम में रहना सीखे और इससे आगे समस्त व्रत अर्थात् नियमों को पालन करने में तत्पर हो, वह तो यज्ञोपवीत का एक साधन अथवा पद्धति ऋषि प्रणीत है। अतः आपका आक्षेप आशिरः पाद निराधार है। बतलाइये ! आपने यह कितना वास्तविकता के विरुद्ध लिखा कि किसी को उपवास से नहीं व्रत से कष्ट होता है। किन्तु यह सर्वथा सत्यार्थप्रकाश पृ० ४४१ में नहीं है, और संस्कारविधि में भी वैसा नहीं है। शोक ! कि लोग दोषारोपण के लिये सत्य की कुछ भी अपेक्षा नहीं रखते।

(आक्षेप) यज्ञोपवीत की इससे अधिक कोई प्रतिष्ठा नहीं कि उसे स्वामी जी ने विद्या का चिह्न माना है। (सत्यार्थप्रकाश पृ० ३८५)

(खंडन) भाई कायस्थ जी ! आप यज्ञोपवीत को क्या जानें ? क्षमा कीजिये। अकारण दोषारोपण से क्या लाभ ? यज्ञोपवीत वास्तव में विद्या का चिह्न है। बड़ा स्पष्ट प्रमाण इसका यह है कि उसके पश्चात् ही विद्या का आरम्भ होता है। स्वयं यह शब्द भी यज्ञ+उपवीत इन दो से संयुक्त है है जिसके अर्थ स्वामी जी के अर्थों के अतिरिक्त नहीं हैं। पंच यज्ञों (ब्रह्म यज्ञ, देव यज्ञ, पितृयज्ञ, अतिथियज्ञ, बलि वैश्वदेव यज्ञ) का अधिकार भी यज्ञोपवीत के पश्चात् प्राप्त होता है और ब्रह्मयज्ञ के एक अर्थ वेदाध्ययन के भी हैं। उसी समय से उसे गायत्री सिखाई जाती है। शास्त्रों में कहीं नहीं लिखा कि जो विद्या न पढ़े उसे यज्ञोपवीत दिया जाए। तीन आश्रम जिन्हें वेदानुसार पांच यज्ञों का करना कर्तव्य है। तीन वर्ण जिनके लिये वेदाध्ययन आवश्यक है। वही यज्ञोपवीत धारण करने के अधिकारी हैं। तीन अवस्थाओं में यज्ञोपवीत का अधिकार है और यही कारण है कि यज्ञोपवीत के तीन तार होते हैं। स्वयं परमेश्वर का निज नाम ओ३म् भी तीन अक्षरों से युक्त है। व्याहृतियां तीन हैं। गायत्री के भी तीन पाद हैं उसका उच्चारण भी तीन भाग करके किया जाता है। यह भी तीन तार होने का कारण है। तीन गांठें भी तीन प्रसिद्ध मन्तव्यों का बाह्य तथा आभ्यान्तरिक रहस्य है—ब्रह्मचर्य, विद्याध्ययन और ईश्वर भक्ति अर्थात् उसकी आज्ञा का पालन करना। ऐसे-ऐसे बीसियों

पवित्र नियमों पर इसका आधार है और सबका मूल विद्या है। हमारे विद्वान् मित्र पं० भीमसेन जी ने भी इस पर अच्छा प्रकाश डाला है।

अतः मनु जी ने लिखा है कि जो विद्या न पढ़े अथवा सन्ध्यादि पंच यज्ञ न करे उससे यज्ञोपवीत उतार कर शूद्रों में प्रविष्ट करना चाहिये। इसीलिये महाभारत में लिखा कि :—

ब्राह्मणोपिक्रिया हीनः शूद्रादप्यवरोभवेत्।
शूद्रोपि व्रत संयुक्तो ब्राह्मणः सः युधिष्ठिर॥

ब्राह्मण—द्विज अपनी नियत वेदाध्ययन क्रिया रहित होने पर शूद्र हो जाता है और शूद्र ब्रह्मचर्यादि व्रत धारण करने से ब्राह्मण बन जाता है।

शास्त्र की विधि यह है कि यज्ञोपवीत नाभि से ऊपर होना चाहिये, घुटने तक नहीं जिससे कान पर चढ़ाने की आवश्यकता न हो। दोष यूं आया कि ब्राह्मण अथवा पुरोहित अपने शरीर के नाप से बनाते हैं यजमान के ढंग से नहीं। क्योंकि ऋषि स्वतन्त्र, महात्मा, एकान्त सेवी होते थे। अतः यह उनका ✎ "कम खर्च बाला नशीं" पदक है। यदि राजा लोग इसके निर्माता होते तो संभवतः सुवर्ण का होता। किन्तु यह *"बर्गे सब्ज़स्त तोहफ़ाए दरवेश" के अनुसार एक साधारण वस्तु अर्थात् सूत से बनाया जाता है। जिससे कुछ व्यय न हो और सब लोग सत्य धर्म के पवित्र नियम को धारण कर सकें। पूर्वकाल में स्त्रियां भी इसे पहनती थीं। वेद में इसका कोई निषेध नहीं है किसी ऋषि का कोई सूत्र भी स्त्रियों के यज्ञोपवीत धारण का निषेध नहीं करता। किन्तु पुरुषों के शूद्र होने के कारण वह महाशूद्र हो गईं। एक समय था जब यह पवित्र धर्म और विद्या का सम्बन्ध समस्त संसार में फैला हुआ था जैसे कि आजकल विद्युततार। किन्तु अब केवल पारसियों और आर्यों के अतिरिक्त किसी जाति में नहीं है। ईश्वर करे कि लोग सत्यधर्म को ग्रहण करके इस पवित्र बन्धुत्व को (यज्ञोपवीत द्वारा) स्वीकार करें।

(आक्षेप) सत्यार्थप्रकाश पृष्ठ २५९ में लिखा है जिसका सार यह है कि डाढ़ी-मूंछ कभी नहीं रखनी चाहिये और गरम देश में चोटी तक मुंडवा डालनी चाहिये। क्योंकि भारत गरम देश है। यहां के निवासियों को स्वामी जी के इस उपदेश के अनुसार शिखा तक मुंडवा देनी चाहिये और डाढ़ी-मूंछ चट करा देनी चाहिये। अन्यथा घाम के कारण बुद्धि में गड़बड़ हो जाएगी।

(खंडन) आपने बहुत धोखा खाया और लोगों को भ्रम में डालना चाहा। यह स्वामी जी ने मनुस्मृति का अनुवाद लिखा है। मनु २/६५ के अनुसार ब्राह्मण के सोलहवें, क्षत्रिय के बाईसवें, और वैश्य के चौबीसवें वर्ष में केशान्त कर्म—मुंडन हो जाना चाहिये।

मनु १२/२६९ में है कि सर्वथा मूंड मुंडाई अथवा जटाजूट रहे या केवल शिखा रखे। जैसे उसकी इच्छा हो करे। ब्रह्मचारी के लिये कोई निषेध नहीं है। ऐसा ही संन्यासी के लिये ६/५२ में

✎ न्यून व्यय और ऊंचा बैठना।
* हरा पत्ता ही फकीर का तोहफ़ा=भेंट है। (अनुवादक)

लिखा है और ६/६६ में भी बाह्य चिह्नों को धर्म नहीं माना है और इन सबका आधार मनु २/६६ का वह प्रमाण है।

इन सब प्रमाणों को मिलाने से स्पष्ट सिद्ध है कि यह सब वैकल्पिक हैं। शाश्वत धर्म के साथ इनका कोई सम्बन्ध नहीं है। यह केवल जाति को प्रथाएं हैं और जहां तक इनमें लाभ है उन्हें रखना उचित है। अन्यथा कोई आवश्यकता नहीं।

आप विचार करें कि भारत में मेहतर, भंगी, चमार, भील, गोंड, सांसी, बावरिये, मेघ यह सब शिखाधारी हैं। इनके अतिरिक्त चारों वर्ण सभी शिखाधारी हैं।

आर्यावर्त के अतिरिक्त चीन, ब्रह्मा, अनाम, सियाम, जापान, तिब्बत, लंका में बौद्ध, जैन, सब शिखाधारी हैं। चीन के मुसलमान भी शिखा रखते हैं। शिया लोग भी प्राय: चोटी रखते हैं। साधारणत: मुसलमानों में सैंकड़ों लोग अपने बच्चों के चोटी रखना पवित्र मानते हैं। किन्तु इसके साथ ही बंगाल के लाखों हिन्दु चोटी नहीं रखते। गुजरात और बम्बई के सहस्रों व्यक्ति शिखाधारी नहीं। गुजरात, कठियावाड़ में सहस्रों हिन्दू धाम आदि के कारण सिर के मध्य के बाल शिखासहित कतरवा देते हैं पुनरपि हिन्दू हैं, इनमें ब्राह्मण, राजपूत, वैश्य आदि सभी में यह प्रथा है। किन्तु वहां के बोहरे मुसलमान भी रखते हैं। हिन्दुओं में लाखों संन्यासी चोटी नहीं रखते और सहस्रों मुस्लिम फ़क़ीर शिखाधारी हैं।

अब बताइये कि शिखा से आप क्या निर्णय कर सकते हैं? कुक्कट के सिर पर भी चोटी है जिसके कारण संस्कृत में उसे शिखी कहा जाता है। हुदहुद नाम के पक्षी के सिर पर भी शिखा होती है।

शिखा के अर्थ सर्वोच्च वस्तु के हैं। तराजू की शिखा भी होती है जिसे पकड़ कर किसी वस्तु का वज़न किया जाता है। इसी प्रकार हिमालय पर्वत और वृक्षों को चोटियां भी होती हैं। किन्तु इससे किसी धर्म का निर्णय नहीं होता। सहस्रों दृढ़ हिन्दुओं की शिखाएं वृद्धावस्था में गिर जाती हैं, कभी-कभी रुग्णावस्था में और युवावस्था में भी चांद निकल आती है। कहां तक इसका निर्णय कर सकते हैं? हमें आश्चर्य है कि शिखा से धर्म का निर्णय कैसे हो सकता है?

शेष रही दाढ़ी और मूंछ की बात तो काशी के समस्त ब्राह्मण दोनों को चट कर देते हैं। काशी की बात ही क्या है? काश्मीर और पंजाब को छोड़कर अन्य सभी हिन्दुमात्र मुंडवाते हैं ×

सैंकड़ों राजपूत भी मुंडवाते हैं तथा भद्रा पर तो सब हिन्दुमात्र मुंडाते हैं+

अब बताइये धर्म कहाँ रहा? जिन जातियों का मुसलमानों से मेल अधिक रहा अधिकतर वही दाढ़ी प्रेमी हैं यथा कश्मीरी पंडित, राजपूत, कायस्थादि।

अत: दाढ़ी का रखाना, न रखना धर्म की बात नहीं। यदि कोई रखे तो उसकी इच्छा मुंडवावे तो भी उसकी इच्छा। अकबर सम्राट् जैसे बली राजाओं ने भी भारत की प्रथानुसार दाढ़ी को मुंडवाते

× अब तो कश्मीरी और पंजाबी भी प्राय: मुंडवा देते हैं। (अनुवादक)

+ अब आर्यसमाज के प्रचार से यह प्रथा समाप्त होती जा रही है। (अनुवादक)

रहना ही आवश्यक समझा था, दूसरों की बात ही क्या है ? इसका दीन और धर्म से कोई सम्बन्ध नहीं । मुसलमानों में सहस्रों मुंडवाते और सहस्रों रखते हैं। सैनिक मुसलमान तो प्राय: टर्की में भी मुंडवाते हैं । विदेश में कृत्रिम डाढ़ियाँ भी बिकती हैं। कुछ एक पशुओं के डाढ़ी मूंछ भी होती है। एक महात्मा ने क्या ही अच्छा कहा है :—

साईं से तो प्रीत रख, सन्तां सील स्वभाओ।
भांवे लंबे केस रख भावें घोट मुंडाओ ॥

हमें आज तक कोई ऐसी युक्ति प्राप्त नहीं हुई और न कोई श्रुति मिली है कि हम उन्हें धर्म में सम्मिलित करें। अतः बाधित हैं किन्तु हमारा और हमारे कई भद्र पुरुषों का यह विचार है कि विधर्मियों के आक्रमणों के पश्चात् हमारे भाईयों ने इसे जातीय और धार्मिक चिह्न नियत किया था कि जो शिखा रखे वह अपना सहायक अथवा स्वजातीय माना जाता है। अत: वह चिह्न जिसमें ब्राह्मण से लेकर भंगी तक सब हमारे सहायक हैं वह शिखा का रखना है। जब तक सब जगत् के लोग वैदिक धर्म को स्वीकार न करें तब तक शिखा रखना अनिवार्य समझा जाए क्योंकि इन मतों में से कुछ के यहां शिखा रखनी पाप समझा जाता है अतः अवश्य शिखा रखनी उचित और आवश्यक है।

(आक्षेप) छूतछात का विचार व्यर्थ है। इसमें सत्यार्थप्रकाश पृ० ३६३ में सिद्ध किया है कि स्वामी जी ने लिखा है कि शूद्र के हाथ का भोजन खाना चाहिये अर्थात् सखरी निखरी कुछ नहीं। पृ० १८

(खंडन) यह आक्षेप उस अज्ञानता का है जिसकी सीमा विचार से बाहिर है। महोदय ! आप को ज्ञात नहीं कि भारत की प्रथा और व्यवहार क्या है ? हम आपको इसकी समस्त व्यवस्था सुनाते हैं और पुनः ज्ञात करेंगे कि सखरी निखरी कहाँ है ?

पंजाब में सभी जातियां कहारों के हाथ की बनी रसोई खाती हैं। कान्यकुब्जों और गौड़ों में कहार का आटा गूंधा हुआ प्रयोग में लाना उचित समझा जाता है। कहार चौका से बाहिर बैठकर रोटी बेल बेल कर चौका में देता जाता है और अन्दर कान्यकुब्ज पकाता जाता है और नाई उनकी पकी हुई पूरी को उठा कर बिरादरी में पहुंचा सकता है। कशमीरी पानी भरने वाली स्त्रियां अथवा पुरुष मुसलमान हैं। वहां लोग जब भात पकाते हैं तो मुसलमानों की छूतछात का कोई विचार नहीं करते। यदि पति राजकीय कार्यालय की सर्विस में है तो भात बरतन में रख कर मुसलमानों को दे दिया जाता है जिस से वह उसे कचहरी (न्यायालय) में पहुंचा आवे। काबुल में पानी भरने वाली चौका देने वाली, आटा गूंधने वाली, दाल चढाने वाली, बरतन मांजने वाली मुसलमान स्त्रियां हैं। पंजाब में मुसलमानों के भुने हुए दाने खाते हैं। अलीगढ़ और भारत के मध्यभागों में मुसलमानों के हाथ की बनी हुई रेवड़ियाँ खाते हैं और पापड़ भी खाये जाते हैं। कहारों के बने हुए चड़वे सभी ब्राह्मण खाते हैं। विशेषतः कान्यकुब्ज, गौड सास्वत चरसा का पानी राजस्थान, फिरोजपुर, हिसार और भारत में सभी पीते हैं। कश्मीरी मिथिल, कान्यकुब्ज, बंग ब्राह्मण और सारस्वत मांस खाते हैं। वैराग्यों के चेले सीत प्रसाद खाते हैं और गोकुल गोसाईयों के चेले उनके झूठे (उच्छिष्ट) भोजन को खाते हैं। सहस्रों, लाखों हिन्दू प्रत्येक वर्ण के वेश्याओं के यहां जाते हैं और वाराणसी, मथुरा, मेरठ, बरेली, देहली

जैसे नगरों में तो प्रायः तथाकथित उच्च हिन्दुओं ने वेश्याएं रखी हुई हैं। सिन्ध में किसी के हाथ का खाना न खाना इस का कोई चिह्न शेष नहीं है।

रामचंद्र जी ने भीलनी के झूठे बेर× खाए, कृष्ण जी ने कुब्जा के घर में भोजन खाया√

जरासन्ध के घर काल यवन अतिथि बन कर रहा। मनसूरदेव तहसील जीरा फिरोजपुर जनपद एक क्षत्रियों के बरात गई थी आग जलाने का कार्य चूहड़ों (जमादारों) के जिम्मा था और नाईन भोजन बनाती थी। पर्वती प्रदेशों में नीच से नीच समझी जा रही जातियों से बरतन मांजने का कार्य कराते हैं। गुजरात काठियावाड़ में राजपूतों और मुसलमानों का हुक्का एक है। समस्त पश्चिमी और उत्तरी देशों में मुसलमान यदि चटाई पर बैठा रहे तो उच्च जातीय हिन्दू पूरी खा लिया करते हैं। कनखल की वेश्याओं के घरों में ब्राह्मण एकादशी आदिक की कथा करते और श्राद्धों की रसोई जीमते हैं।

समस्त भारत के लोग चूहड़ों और भंगियों के हाथ का बना हुआ गुड़ खाते हैं और घी तथा दूध तो सभी के हाथ का लोग प्रयोग में लाते हैं।

राजस्थान में सखरी निखरी का कोई भेद नहीं। बम्बई और मद्रास में भी सखरी निखरी का भेद कुछ पाखंडियों के अतिरिक्त किसी में नहीं। समस्त भारत के लोग शूद्रों के हाथ का खाते हैं। पुराणों के कथनानुसार स्त्रियाँ शुद्र हैं, सभी इन के हाथ का खाते हैं। सब तम्बाकू सेवी लोग चूहड़ों का बनाया हुआ तम्बाकू पीते हैं। मट्टी के बरतन मुसलमान कुम्हारों के बनाए हुए प्रयोग में लाते हैं। कायस्थ, बंगाली, और पंजाब के प्रायः मद्यपान करने वाले मुसलमानों के हाथ की बनी हुई शराब लेकर-मुसलमान तो कब हाथ लगाते हूंगे-उन से नीच जातियों की बनाई हुई शराब और सोडा वाटर प्रयोग में लाते हैं। वाम मार्गी भंगिन तक से संयोग करते और सब वर्णों को भैरवीचक्र में एक समझते हैं और यह मत सब वर्णों और चारों दिशाओं में विद्यमान है। अरट के कूप का जल सभी पीते हैं। सहस्रों हिन्दू कबीर, जौलाहे मुसलमानों के अनुयायी हैं। सहस्रों कायस्थ हसन हुसैन को मानते हैं और ताज़िया बनाते हैं। कई लोगों के नाम ही हुसैन बख्श हैं। हैदराबाद दक्षिण, हैदराबाद सिन्ध, ग्वालियर, कश्मीर, लखनऊ, पटियाला में इस की प्रथा है। हमारे एक कायस्थ मित्र ने फिरोजपुर में ताजिया के नीचे से अपना बालक निकलवाया था। कई लोग ताजिया के साथ प्रार्थना लिख कर बाँधते हैं। सखी सरवर के अनुयायी हिन्दू वहाँ सब अनुचित कार्यवाई करते हैं और यही अवस्था निगाहे और शैख सिद्धू की है। कई कायस्थ नमाज पढ़ते और रमजान मास में व्रत रखते हैं। कश्मीरी मांस खाते किन्तु पलांडु सेवन नहीं करते। बनिये, ब्राह्मण, गौड़ प्याज का बीज कलोंजी खाते हैं किन्तु प्याज नहीं खाते। कान्यकुब्ज लहसन खाते प्याज नहीं खाते किन्तु मांस खाते हैं। बम्बई वाले शुष्क पलांडु का सेवन करते किन्तु हरा प्याज नहीं खाते। गुजराती हरा खाते, शुष्क नहीं खाते, इसी प्रकार किसी को लहसन से इन्कार और किसी को प्याज से। इस पर भी इन प्रथाओं के होते हुए सखरी निखरी पर वादविवाद होता है और अभी

× वाल्मीकि रामायण में झूठे बेरों का वर्णन नहीं है। केवल फलादि का वर्णन है। राम भक्तों ने ही झूठे बेरों की कल्पना की है। (अनुवादक)

√ कृष्ण कुब्जाविलास पुराणों की उपज है। महाभारत में कुब्जा का नाम तक नहीं है। (अनुवादक)

तक कोई मूर्ख हिन्दू कोई पुत्र के हाथ की नहीं खाता और कोई पिता के हाथ की। और पिता को उत्तर देता है कि हम तो तुम्हारे से उत्पन्न हुए, ज्ञात नहीं तुम किस से हुए ? अतः हम तुम्हारे हाथ की नहीं खाते। स्यात् कायस्थों की शराब नाव के निर्माता गौड होंगे अथवा गौमती चक्र के बनाने वाले दाक्षिणात्य ब्राह्मण होंगे ? शोक ! मूर्खता और अविद्या का पारावार नहीं कि इन सब बातों के होते हुए भी और इन सब प्रथाओं के प्रचलित रहने पर भी एक धर्म रक्षक, भारत के महान् उपदेशक विश्व के मार्ग प्रदर्शक जिसने संसार को वैदिक सन्मार्ग पर चलाया उन पर दोषारोपण किया जाता है और दोष लगाने वाले भी कौन ? वही कायस्थ लोग। प्रसिद्ध है कि "नौ सौ चूहे खा के बिल्ली हज्ज को चली" "सदमूष खुर्दा गुर्बह बराये हज्ज खां शुद" (सौ चूहे खा कर बिल्ली हज्ज के लिये चलो) "जहे हज्ज और वाह हाजी" भाई साहिब ! स्वामी जी ने तो केवल शास्त्रानुसार भक्ष्याभक्ष्य की विधि बताई है। सखरी निखरी का ऐसा व्यर्थ पामर वर्णन शास्त्रों में नहीं है। शास्त्र में तो स्पष्ट लिखा है :—

आर्यधिष्ठाता वा शूद्राः संस्कर्तारः स्युः।

आपस्तम्ब धर्म सूत्र पटल २

कि वेदमत के मानने वाले द्विजों के घर में शूद्र स्त्री पुरुष रसोई बनाना आदि कार्य करें।

मनुस्मृति में जो तीन वर्णों के कर्म लिखे हैं उन में कहीं रसोई बनाने का वर्णन नही, हाँ शूद्र के लिये लिखा है कि वह तीनों वर्णों की प्रत्येक प्रकार की सेवा करे, एक स्थान पर तो रसोई बनाने की आज्ञा भी है। यही बात संक्षेपतः स्वामी जी ने सत्यार्थप्रकाश के भक्ष्याभक्ष्य विषय में लिखी है।

अब हम आप से पूछते हैं कि आप हमें सखरी निखरी का भेद बताइये और पूर्ण विचार से बताईये। भाई साहिब ! आपने जिस को हिन्दू धर्म माना हुआ है उसका तो कोई ठिकाना नहीं और न कोई उस के नियम हैं। उस की नीचावस्था दयनीय है। उस रोगी हिन्दू धर्म की जीवन समाप्ति जैसी दशा है—

"तन शुदा जुमला दाग दाग, पुम्बा कुजा कुजा निहद"

अर्थात् समस्त शरीर आघातों से भरपूर है तू रूई कहा २ रखेगा ?

अतः अच्छा है कि आप सखरी निखरी की नखरा बाजी को छोड़ कर वैदिक सत्य धर्म को स्वीकार करें और अपने अन्य भाईयों के स्वास्थ्य के शुभेच्छु बनें।

(आक्षेप) सदाव्रत न लगाओ, कितने गृहस्थ लोग सदाव्रत और क्षेत्र करते हैं, वह अनुचित करते हैं।

(खंडन) भाई साहब ! वहां का पूरा लेख यह है कि :—

"कितने गृहस्थ लोग सदाव्रत और क्षेत्र करते हैं, वे अनुचित करते हैं क्योंकि बड़े धूर्त, गांजा और भांग पीने वाले तथा चोर और डाकू वैसे ही लुच्चे सदाव्रत से अन्न लेते और क्षेत्रों में भोजन कर लेते हैं। यह कुकर्म ही करते रहते और दुराचारी हो जाते हैं। बहुत से लोग अपना काम-काज छोड़कर

सदाव्रतों और क्षेत्रों के ऊपर घर के सब कार्य और सेवादि कार्य छोड़कर साधु तथा भिखारी बन जाते हैं। पर अन्न खाते और सोए पड़े रहते हैं। इससे संसार को बड़ी हानि होती है। अतः जो कोई सदाव्रत क्षेत्र करता है। उसमें सज्जन वा सत्पुरुष कोई नहीं जाता। इससे इन गृहस्थों का पुण्य कुछ नहीं होता किन्तु पाप ही होता है। इससे गृहस्थ लोग अन्नादि दान करना चाहें तो पाठशाला खोलें। उसी में सब दान करें अथवा जो श्रेष्ठ धर्मात्मा गृहस्थी और विरक्त होवें उनको अन्नादि देवें और यज्ञ करें तब उनको बड़ा पुण्य होवे पाप कभी न होवे।

अतः आप कुछ इसे दो-तीन बार ध्यान से पढ़ें और देश दुर्दशा पर विचारें। किसी ने सत्य कहा है कि :—

"एक चौथाई भारतवासी भीख मांग कर खाते हैं।"

(आक्षेप) तीर्थों की बुराई की है।

(खंडन) स्वामी जी ने तीर्थों की बुराई नहीं की है किन्तु उनकी वास्तविकता बताई है और स्पष्ट लिखा है कि जल स्थल तीर्थ कभी नहीं हो सकते। जल स्थल तारक नहीं किन्तु डुबा कर मारते हैं। तरणि (नौका) आदि का नाम तीर्थ हो सकता है क्योंकि उनसे समुद्रादि को तैरते हैं। सत्यार्थ-प्रकाश पृ० ३२५

आप संस्कृत नहीं जानते अतः आपको ज्ञात नहीं कि शास्त्रों में किनको तीर्थ कहा है। ब्रह्मचर्य सेवन, विद्याध्ययन तीर्थ हैं। जिनको आप लोगों ने तीर्थ माना हुआ है उनका वर्णन कदापि किसी सच्छास्त्र में नहीं है। शंकर मतानुसार संन्यासियों के दश नामों में से एक तीर्थ भी हैं और सच्छास्त्रों के विपरीत वाममार्गी लोग मद्य को तीर्थ कहते हैं। गंगादि को तीर्थ मानना और उनके स्नान से मुक्ति जानना न केवल वेदशास्त्र के विरुद्ध किन्तु योगाभ्यास के विरुद्ध भी है और सबसे बढ़कर ज्ञान और बुद्धि के विपरीत भी है क्योंकि साधारण रोग तो इनसे दूर नहीं हो सकते पुनः मुक्ति प्राप्ति कैसे संभव है? महाभारत में लिखा है कि हे युधिष्ठिर! संयम पुण्य तीर्थ, सत्य जल, शील संतोष तट और दयारूपी जिसमें लहरें हैं उस आत्म तीर्थ में तू स्नान कर क्योंकि जल से अन्तरात्मा शुद्ध नहीं हो सकता। यदि अब भी विश्वास न हो तो हरिद्वार, कनखल और ज्वालापुर के पंडों, मथुरा के चोबों और काशी के उद्दंडों की अवस्था स्वयं जाकर देखो और काशी महात्म्य हरिश्चन्द्रकृत का अध्ययन करो। किसी ने सत्य कहा है :—

रांड, सांड, सीढ़ी, संन्यासी, इनसे बचे तो परसे काशी।

कबीर जी का वचन भी है कि :—

बहुतीरथ हम फिर-फिर आये, देखा देखी जा-जा नहाये।
चलते-चलते कमर पीड़ानी, बात न पूछी पत्थर पानी।

(आक्षेप) स्वामी जी ने सत्यार्थप्रकाश प्रथम संस्करण पृ० १२३ में लिखा है कि पंचमहायज्ञ करना अविद्वानों अर्थात् मूर्खों का काम है।

(खंडन) वहां का मूल पाठ यह है :—"पांच यज्ञ अपने सामर्थ्य के अनुकूल यथाशक्ति करे, इन्हें कभी न छोड़े किन्तु यह कार्य योग से नीचे हैं। पूर्णज्ञान के हो जाने पर योगाभ्यास करे, इनको न करे क्योंकि यह सब पूर्णज्ञान से नीचे आरम्भ करने वालों के लिये हैं और जो ज्ञानी हैं यथार्थ पदार्थ विद्या और परमेश्वर को जानते हैं वह योगाभ्यास करें। सत्यशास्त्रों को विचारें, ब्रह्मविद्या को प्राप्त करके उपदेश भी करें। इसमें मनुभगवान् का प्रमाण है इत्यादि दैनिक महायज्ञ हैं अर्थात् जितने ज्ञानी हैं वह पांच महायज्ञों को ज्ञान क्रिया से ही करते हैं. बाह्य चेष्टा से नहीं क्योंकि वह यज्ञशास्त्र के तत्त्वों को जानते हैं। ज्ञान और योगाभ्यास से विषयों को इन्द्रियों को होम कर दे। इन्द्रियों को मन में, मन को आत्मा में और आत्मा को परमात्मा में युक्त करने को योग कहते हैं। उनको बाह्य चेष्टा आवश्यक नहीं।"

अब बताइये आपने कितना सत्य से पराङ् मुख होकर यह व्यर्थ अपलाप किया। बताइये आपके उस आक्षेप और आपको दुर्भावना का इससे क्या सम्बन्ध है ?

नियोग सम्बन्धी आक्षेप

पृष्ठ २१ से २४ तक आपने अपने गर्व में चूर्ण होकर बताया है कि यह व्यभिचार है जैसा कि प्राय: धर्मसभा के लोग आक्षेप किया करते हैं।

(खंडन) महाशय ! आप स्त्रियों के पुनर्विवाह को अपनी विशाल बुद्धि से व्यभिचारादि शब्दों से स्मरण करते हैं किन्तु जो पुरुष होकर चार-चार तथा एक-एक सौ और १६१०८ स्त्रियों को उचित मानते हैं उनको आप व्यभिचार नहीं मानते जबकि यह दोष बड़े-बड़े देवताओं पर पुराणों ने लगाये हैं। वाममार्गी लोग दुराचार न करने वाले को कंटक कहते हैं और माता भगिनो तक से दुराचार करने को पाप नहीं मानते। ऐसा ही चोलीमार्ग और बीजमार्ग है। आपके हिन्दू भाई प्रसन्नतापूर्वक इन मतों को स्वीकार करते और महाविद्याओं का जाप करते रहते हैं। मोहिनी अवतार और आपके शिव नारायण की कथा तो आपकी मनमानी है। भला आप उससे कब इन्कार कर सकते हैं ! शिव जिसे लोग नारायण भी मानते हैं उसका ऋषि पत्नियों से व्यभिचार आपने शिवपुराण हिन्दी कविता शंकरदयाल कृत अध्याय ४१ नहीं पढ़ा ? शंखचूड और वृन्दा जलंधर तथा तुलसी महाराणी की कथा, विष्णु को दुराचार के कारण शाप मिलना और शालिग्राम बन जाना आपने देवी भागवत और कार्तिक महात्म्य काहे को पढ़ा होगा ? कृष्ण का गोपियों के संग व्यभिचार क्या भागवत में विद्यमान नहीं ? और नग्न देखने की कथा विद्यमान है ? वह शिव और नारायण जिनका आप अपने को भक्त मान रहे हैं उनकी ऐसी अवस्था है। इसके पश्चात् कुछ गहन अध्ययन कीजिये और श्लोक २३ में ब्रह्मा का स्वपुत्री से व्यभिचार पढ़िये। हमें ज्ञात नहीं कि आप इन्हें महान् मानते हैं अथवा नहीं और इस बात को व्यभिचार भी जानते हैं अथवा नहीं ? और शिव पुराण हिन्दी कविता का १८ वां अध्याय भी दृष्टि से ओझल न करना और उसके साथ योगवसिष्ठ वैराग्य प्रकरण सर्ग लोक ५७ से ६६ तक भी हमारी प्रार्थना पर पढ़ने की कृपा करें। जिससे आपको ज्ञात हो कि रामचन्द्र किन-किन पापों के शाप से उत्पन्न हुए थे। देखो योग वसिष्ठ संस्कृत संवत् १९३६ का संस्करण।

शोक ! लोग अपनी आंख के शहतीर को निकालने का यत्न नहीं करते और नियोग जैसे पवित्र

सिद्धान्त पर आक्षेप करते हैं। नियोग पर हम विस्तार से पुस्तक लिख चुके हैं और ऐसी अन्य दो तीन पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। इसी प्रकार विवाह के स्वरूप पर भी बहुत कुछ लिखा जा चुका है अत: ऐसे आक्षेप सर्वथा व्यर्थ हैं इन पर ध्यान देना उचित नहीं।

३० से ३३ पृष्ठ के आक्षेपों का निराकरण

(आक्षेप १) सत्यार्थप्रकाश के आरम्भ में ही अलंकार की व्याख्या करके स्वामी जी ने लिखा है कि ऐसा ही वेदादि सत्य शास्त्रों में स्पष्ट व्याख्यान है, चाहे किसी वेद में देख लो। इस प्रकार की व्याख्या कहीं भी नहीं लिखी।

(उत्तर) शोक कि आप पक्षपात के आधीन होकर सत्यासत्य को एक ही प्रकार का समझ रहे हैं। स्वयं सत्यार्थप्रकाश में सारे प्रमाण वेदादि सत्य शास्त्रों के उद्धृत हैं (देखो ७ से १६ तक) विशेषत: यजुर्वेद अध्याय ४० मंत्र १७ तथा योग शास्त्र पाद १ और मांडूक्योपनिषद् सम्पूर्ण।

(आक्षेप २) "गायत्री मंत्र चारों वेदों में है" ऐसा स्वामी जी ने पंच महा यज्ञविधि पृ० २६ पर लिखा है किन्तु हमने कितने पंडितों से दिखवाया उनके अथर्ववेद में कहीं भी नहीं मिला।

(उत्तर) निस्सन्देह यह मंत्र चारों वेदों में अथवा उनके मानने वाले ऋग्वेदी, यजुर्वेदी, सामवेदी और अथर्ववेदी ब्राह्मणों की संध्या में समानरूपेण है।

यजु० ३६।३, ऋ० ३। ६२।१०, साम प्र० ६ अनु० ३ अ० १३ खं० ४ मंत्र १० +तथा इसी के भाष्य में सायण ने ऐसा ही लिखा है कि यह मंत्र अथर्व में भी ऐसा ही है जैसाकि उनका लेख इस प्रकार है कि :—

गयशब्दस्यान्नपरश्चैवमाथर्वणिक छन्दसि।

(देखो जिल्द ४ पृ० ५३८ सन् १८७७ कलकत्ता एशियाटक सोसायटी)

(आक्षेप ३) प्रथम सत्यार्थप्रकाश के पृ० १४७ पर लिखा है कि "यद्वै किंचिद् मनुरवद् तद् भेषजं ....।

उनिषदें छान मारो किसी में नहीं मिलेगा।

(उत्तर) वास्तव में यह छान्दोग्य का वचन है। छान्दोग्य के दो भाग हैं, ब्राह्मण और उपनिषद्, सम्पूर्ण को छान्दोग्य ब्राह्मण ही कहते हैं। सर्वत: प्रथम कुल्लूक भट्ट ने इसका प्रमाण दिया है पश्चात् मनुस्मृति के अन्य टीकाकारों ने लिखा। मुंशी इन्द्रमणि जी ने भी "सौलते हिन्द" में यही प्रमाण दिया है और राजा शिवप्रसाद ने "मानव धर्म सार" में भी इसका प्रमाण दिया है पृ० १, मनु में लिखा है कि जो कुछ वेद में लिखा है उसे जीव के लिये औषधि समझना। आगे यही प्रतीक लिखी है देखो १८८१ ईस्वी का संस्करण। इसकी शुद्धि पर पांच प्रसिद्ध पंडितों के हस्ताक्षर हैं।

+स्तुता मया वरदा वेदमाता प्रचोदयंतां पावमानीद्विजानाम्। अथर्व १६-७१-१ में गायत्री महात्म्य वर्णित है। इस मंत्र का देवता भी गायत्री है। अत: ऋषि दयानन्द ने पंचमहायज्ञ विधि में गायत्री वर्णन चारों वेदों में समानरूपेण माना है।

(अनुवादक)

(आक्षेप ४) सत्यार्थप्रकाश पृ० १३५ में यह आधा श्लोक--

विविधानि चरत्नानि विविक्तेषूपपादयेत् ।

यह मनु के प्रमाण से लिखा है और इसका भाषार्थ यह किया है कि नाना प्रकार के रत्न स्वर्णादि धन संन्यासियों को देवें ।

यह श्लोक भी स्वामी जी की मनुस्मृति में ही था और किसी में न मिलेगा । इस पर यदि कोई आक्षेप करे कि स्वामी जी ने लोगों को लूटने के लिये अपने मन से यह श्लोक घड़ लिया था, यह सर्वथा मिथ्या है क्योंकि उन्हें एक दमड़ी का भी लोभ न था, केवल देशोन्नति का विचार था, यदि लोभ ही होता तो अपने घर की महाजनी क्यों छोड़ते ? पुनः घोषपूर्वक कहते थे कि हमें धनादि कुछ नहीं चाहिये वह कुछ छाती पर धर कर भी साथ नहीं ले गये ।

(उत्तर) भाषा विज्ञान और पुरातन वस्तु विश्लेषण से अनभिज्ञ लोग प्रायः ऐसे ही व्यर्थ आक्षेप किया करते हैं । वेदों को छोड़कर शेष सभी प्राचीन ग्रन्थों में प्रक्षेप हुआ है । वेदों के ईश्वरीय ज्ञान होने के कारण कंठस्थ किया जाता था और इनकी रक्षा के कठोरनियम बनाए गये थे और इनके एक-अक्षर की रक्षा करना धर्म समझा जाता था । किन्तु लेखकों के आलस्य और प्रमाद तथा कवियों के अंधालंकारों के कारण अथवा विस्मृति दोष से यह श्लोक किसका और कहां का है ? ऐसी पुस्तकों में बहुत सा प्रक्षेप हो रहा है ।

महाभारत और शाहनामा फ़ारसी जैसी बड़ी पुस्तकों में सबसे अधिक प्रक्षेप हुए हैं और सैंकड़ों सहस्रों श्लोक इन क्षेपकों की कृपा से बढ़ा दिये गये हैं । (देखो महाभारत और शाहनामा एशियाटक सोसायटी कलकत्ता)

और ऐसा ही निरुक्त में भी पाठभेद है । मनुस्मृति के बहुत बड़ी पुस्तक न होने के कारण प्रक्षेप की कारिस्तानी भी बहुत नहीं हुई । आर्यसमाज के विद्वानों तथा अन्य विद्वानों की भी यही सम्मति है । देखो मनु स्मृति छः टीका वाली बम्बई संस्करण ।

राव विश्वनाथ नारायण मांडलिक सी० एस० आई० प्राड्विवाक बम्बई ने जो मनुस्मृति की व्याख्या की है उसमें भी माना है कि बहुत स्थानों पर पाठभेद और प्रक्षेप हो गया है । यहां तक कि श्लोकों के श्लोक मिलाये गये हैं । योरुप के अन्वेषकों ने भी ऐसा ही निश्चय किया है । देखो प्रोफ़ेसर जाली की स्मृति जिस में सैंकड़ों श्लोकों का पाठ भेद और मूल भेद बताया है और प्रायः ऐसे श्लोक भी लिखे हैं जो सर्वथा अब मनु स्मृति में नहीं हैं ।+

इस श्लोक की भी यही अवस्था है । हमारे पास एक बहुत प्राचीन मनुस्मृति हस्तलिखित है, उसमें न तो वह श्लोक है जो वर्तमान मनुस्मृति में है और वह भी नहीं जो स्वामी जी ने लिखा अर्थात् दोनों नहीं । प्रोफ़ेसर जाली साहब की मनुस्मृति में इस ११-६ का भी पाठ भेद है जैसाकि अन्यत्र सहस्रों में है । बोहलर साहब ने भी इस श्लोक पर संदेह व्यक्त किया है । श्लोक इस प्रकार से है कि —

+ मनुस्मृति कुल्लूक भट्ट प्रणीत मन्वर्थ मुक्तावली में क्षेपक तथा परिशिष्ट लोकों की सूची दी गई है । क्षेपकों को यथास्थान कोष्ठान्तर्गत लिखा गया है तथा परिशिष्ट लोकों की सूची ग्रन्थ के अन्त में प्रकाशित की गयी है । यह ३५५ श्लोक वर्तमान मनुस्मृति में नहीं हैं । (अनुवादक)

विविधानि च रत्नानि विविक्तेषूपपादयेत्।
वेदवित्सु च विप्रेषु प्रेत्य स्वर्ग समश्नुते।।

इसका पाठ भेद कुछ ग्रन्थों में इस प्रकार से हैं :—

धनानितु यथाशक्ति विप्रेषूपपादयेत्।
वेदवित्सुविविक्तेषु प्रेत्यस्वर्गं समश्नुते।।

चौथी प्रतीक दोनों में एक है। दूसरी प्रतीक× में विप्र और विविक्त का पाठ भेद है। तीसरी प्रतीक में भी विप्रेषु और विविक्तेषु का पाठभेद है। प्रथम प्रतीक में रत्नानि और धनानि का शब्द भेद है अर्थ भेद नहीं।

प्रथम प्रतीक का अर्थ है कि अनेक प्रकार के रत्न संन्यासी को देवे जो वेद का विद्वान् हो। ऐसा दान देने वाला मरने के अनन्तर सुख (स्वर्ग) को प्राप्त होता है।

दूसरा पाठ भेद का यह अर्थ है कि यथाशक्ति धन विद्वान् को देवे। कैसा विद्वान् हो जो संन्यासी और वेद का ज्ञाता हो। ऐसा करने से मरकर सुख या स्वर्ग को प्राप्त होता है।

बताईये ! अर्थ भेद कहां है ? यहां यह बता देना भी आवश्यक है कि विविक्त का अनुवाद कुछ संस्कृत का ज्ञान न रखने वालों ने गृहस्थी ऐसा किया है जो सभी कोषों के विरुद्ध है। विविक्त का अर्थ "पृथक् किया हुआ" है। गुहा में रहने वाला, अकेला, सांसारिक विषयों से पृथक् अर्थात् विरक्त अथवा जोवन मुक्त। (देखो संस्कृत इंगलिश कोष शिवराम आप्टे एम. ए. प्रिंसीपल व प्रोफेसर संस्कृत पूना कालिज १८९१ ई०)

तथा शब्दार्थ चिन्तामणि कोष में भी ऐसा ही लिखा है। (देखो पृ० ३४७)

शंकराचार्य, द्रोणाचार्य, कृपाचार्य आदि महात्मा परोपकारार्थ धन प्राप्त करके परहितार्थ धन व्यय करते थे और ऐसा धन लेना न तो बुरा है और न पाप है किन्तु लोगों को दान करने की शुद्ध पद्धति सिखाना है। इसी प्रकार स्वामी जी ने बताया है कि विद्वान् ज्ञानी महात्मा संन्यासियों को दान दो। जिससे वह तुम्हारे उपकार और मंगल कार्य में धन का व्यय करें। कोई २ महात्मा संन्यासी दान ले कर तालाब बनवा देते हैं, यज्ञ कर देते हैं, गो शाला बनवा देते हैं। यह सारे पुण्य हैं और ऐसा दान किसी अवस्था में बुरा नहीं।

देश में वेदभाष्य की आवश्यकता थी, वेद का अनुवाद सर्वथा सनातन ऋषि मुनियों की इच्छानुसार नहीं मिलता था और संस्कृत के समझने वाले लोग भी न्यून थे। ऐसी अवस्था में आवश्यक था कि वेद का अनुवाद सामान्य सरल भाष्य में किया जाता। और साथ ही जब कि लोग वैदिक धर्म को छोड़कर मुसलमान और ईसाई भी बहुत हो रहे थे, केवल इतना ही नहीं किन्तु जो वेदों के नाम मात्र नाम

+मनुस्मृति कुल्लूक भट्ट में यह श्लोक निम्न प्रकार से लिखा है :—

धनानितु यथा शक्ति विप्रेषु प्रतिपादयेत्।
वेदवित्सुविविक्तेषु प्रेत्य स्वर्गं समश्नुते।। मनु० ११-६ (अनुवादक)

लेवा सहायक कहलाते थे वह वाम मार्ग, चोली मार्ग, मूर्ति पूजा, पीपल पूजा, नदी पूजा, बीज मार्ग, कबर पूजा, तम्रज़िया पूजा, सर्व खल्विदं ब्रह्म आदि निषिद्ध मार्ग पर फंसे हुए थे। अतः ऐसे समय में इस बात की बहुत ही आवश्यकता थी। इसी कारण से इस आवश्यकता को दृष्टिगत करके स्वामी जी ने वैदिक यन्त्रालय के लिये धन एकत्र किया और वह धन एकत्र करके एक परोपकारिणी सभा को दे दिया। जो अब तक दो लाख के लगभग इस सभा के पास विद्यमान है।

जिन लोगों ने दान दिया था और वापिस लेना चाहा, उन सबको लौटा दिया तथा जिन्होंने न लेने की इच्छा की उनकी इच्छानुसार वह धर्मार्थ रहा।

बताईये ! इसमें स्वामी जी का कौन सा लोभ और अभिप्राय था। अतः यह समस्त आक्षेप, गालियां और बहाने आपकी बुद्धिमत्ता से प्रायः दूर हैं।

(आक्षेप ५) सत्यार्थप्रकाश पृष्ठ ३३४ में लिखा है कि अक्रूर जी कंस के भेजने से वायु के वेग के समान दौड़ने वाले घोड़ों के रथ पर बैठकर सूर्योदय से चले और चार मील गोकुल में सूर्यास्त समय पहुंचे। पोप लोग कहते हैं कि भागवत में ऐसा कहीं नहीं लिखा। इससे सिद्ध है कि उनकी भागवतें अपूर्ण हैं।

(उत्तर) भागवत में यह लिखा हुआ है। जो इन्कार करता है चाहे पोप हो अथवा आप हूं वह सत्यवादी मनुष्य नहीं है। देखो भागवत १०।३८।२४ से १०।३९।३८ तक। इतने शब्द वहां विद्यमान हैं :—

रथेन गोकुलं प्राप्तः सूर्यश्चास्तगिरिं नृप ।। भागवत १०।३८।२४

भगवानपि संप्राप्तो रामा क्रूरयुतो नृप।
रथेन वायुवेगेन कालिन्दीमवविनाशिनीम् ।। भागवत १०।३९।३८

आप संस्कृत नहीं जानते अतः हम आपको उर्दू भागवत से ही बताते हैं।

सहरगाह कारवाने अखतरो माह।
हुआ लेकर खां जब ख़ीलो ख़रगाह ।।

हुआ बेदार मर्द पाक अक्रूर।
हजूर कंस आया शादो मसरूर ।।

हुआ रुख़सत चढ़ा रथ पर शिताबी।
चला शादां बराहे कामयाबी ।।

ग़रज़ इस ध्यान में अक्रूर तनहा।
बवक्त शाम वृन्दावन में पहुंचा ।।

(भागवत उर्दू जगन्नाथ खुशतर कृत अध्याय ३९ पृ० ५३ नवल किशोर १८६७ ईस्वी)

और इसके साथ देखो भाषा की बड़ी भागवत नवल किशोर छापा। वहां भी विस्तार से है।

अतः स्वामी जी का आक्षेप सर्वथा यथार्थ है। जब तक भागवत संसार में विद्यमान है भागवत मानने वालों का इस आक्षेप से छुटकारा नहीं और ऐसी ऐसी गप्पें होने के कारण वह व्यास कृत नहीं किन्तु बोप देव वाम मार्गी की है।

(आक्षेप ६) स्वामी जी ने भागवत प्रमाण से प्रह्लाद की कथा में लिखा है कि लोहे के तपे हुए स्तंभ पर चींटियां चलती हुई दृष्टिगत हुईं। तब प्रह्लाद का साहस बंधा। किसी के पास स्यात् ऐसी भागवत मिले जिसमें यह कथा निकले।

(उत्तर) स्वामी जी ने न तो वहां भागवत नाम लिखा है और न उसका कोई प्रमाण दिया है। केवल प्रह्लाद की कथा तथा नृसिंह अवतार की कथा जिन २ पुस्तकों में है। उन पर उन्होंने आक्षेप किया है और जहां तक हमने विचार किया है, यह आक्षेप जो स्वामी जी का सत्यार्थप्रकाश पृ० ३३५ पर है, बहुत तर्क पूर्ण है किन्तु हाँ यह चींटियों की कथा भी उसी प्रसंग से सम्बन्ध रखती है। कोई रासलीला देखने वाला मनुष्य जिसने कभी नृसिंह अवतार लीला देखी है, इससे इन्कार नहीं कर सकता।

भागवत टीकाकार प्रसिद्ध कृष्ण भक्त श्रीधर ने भी इसे स्वीकार किया है। भागवत के फ़ारसी अनुवाद में फ़ैज़ी ने और उसके संक्षेप में सुलतान अली शीराज़ी ने लिखा है कि :—

हिरण्यकश्यप ख़शमगीन शुदा शमशीर बरकशीद व दरम्यान स्तून ज़द व पारह गर दानीद खुर्द। मोरचेह स्याह आमद ज़िकनान अज़ म्यान स्तून बर आमद। ×

(देखो भागवत फ़ारसी पृ० १० प्रकाशित १८७० ईस्वी)

इस स्थान पर हम उचित समझते है कि पुराणों के सम्बन्ध में समस्त प्रमाणों को एक ही बार आप दृष्टि कर लें, तो आप के आक्षेपों की भूल आपको ज्ञात हो जाए।

(आक्षेप ७) स्वामी जी ने सत्यार्थप्रकाश २८७-२६० में लिखा है कि दो जैन ऊपर से कथन मात्र वेद मत और भीतर से कट्टर जैन अर्थात् कपटमुनि थे। शंकराचार्य उन पर अति प्रसन्न थं उन दोनों ने अवसर पाकर शंकराचार्य को ऐसी वस्तु खिलाई कि उनकी क्षुधा मंद हो गई, पश्चात् शरीर में फोड़े फुंसी होकर छे मास के अन्दर शरीर छूट गया।

(उत्तर) स्वामी जी ने जो कुछ लिखा है वह सर्वथा सत्य और आशिरः पाद घटनानुसार है और ऐसा ही शंकर दिग्विजय में लिखा है। उनकी ३० वा ३२ वर्षीय आयु स्वयं इस बात की गवाह है कि उनकी मृत्यु असाधारण हुई और जितने सुधारक इस छोटी सी आयु में मरे हैं उनकी मृत्यु ऐसे ही कारणों से हुई (देखो मसीह जीवन)

अब हम आपको बताते हैं कि शंकरदिग्विजय में लिखा है कि "अभिनव गुप्त नामी एक मंत्र शास्त्री ने छल से युक्त होकर शंकराचार्य के मारने के लिए एक अभिचार कर्म किया, जिससे उनको

+हिरण्यकश्यप ने क्रोधित होकर तलवार निकाली और स्तंभ के मध्य में मारी और खंडित कर दिया। एक काली चींटी स्तंभ के मध्य से निकली। (अनुवादक)

गदर रोग हो गया। इससे वह कुछ समय तक रुग्ण रहे। अन्ततः उन्होंने बहुत दुखी होकर महादेव की प्रार्थना की और महादेव ने अश्विनो कुमार देवता वैद्यों को भेजा जिन्होंने आकर उसे स्वस्थ किया तब वह शिव लोक को चले गये।"

(संक्षेपतः देखो माधवी शंकर दिग्विजय सर्ग १६)

यह ग्रन्थ बम्बई में प्रकाशित हुआ है और इस पर गुजराती टीका भी है इसी का अनुवाद हिन्दी भाष्य की कविता में होकर नवल किशोर प्रैस में भी संवत् १६३५ में प्रकाशित हुआ है। उसके पृष्ठ ३३० से ३३६ तक यही वृत्तान्त विस्तार सहित लिखा है।

इस वर्णन से प्रगट है कि महादेव की प्रार्थना और अश्विनी कुमार का आना तो सारे कपोल कल्पित प्रशंसात्मक शब्द हैं। और गाय पर बैठ कर शिवलोक जाना भी वैसा ही है। किन्तु अभिनव गुप्त आदि के अभिचार कर्म अर्थात् किसी वस्तु में विष युक्त वस्तु अथवा दुःखदायक औषधि के खिला देने से वह लगभग छे मास रुग्ण रहकर मर गये अथवा पौराणिक वर्णन शैली के अनुसार वह शिवलोक को गये। यही अभिप्राय स्वामी जी का उस लेख से है।

(आक्षेप ८) सत्यार्थप्रकाश ३३८-३४३ में सिद्धान्त शिरोमणि का जो प्रमाण दिया है। असंभव है किसी और को इसका ज्ञान नहं।

(उत्तर) यह लेख सूर्य ग्रहण और चंद्रग्रहण के सम्बन्ध में है। स्वामी जी ने बताया है कि "इस प्रकार जब सूर्य और भूमि के मध्य में चंद्रमा आता है तब सूर्य ग्रहण और जब सूर्य और चंद्र के मध्य में पृथिवी आती है तब चन्द्रग्रहण होता है।"

नवीन पुराण वादियों के राहु केतु की कथा का खंडन किया है। अतः जो कुछ स्वामी जी ने लिखा है। वैसा ही सूर्य सिद्धान्त शिरोमणि में है और जो स्वामी जी ने प्रतीक लिखी है वह ग्रह लाघव का प्रमाण है। (देखो अध्याय ४ श्लोक ४) परन्तु उसने भी उन्हीं के प्रमाण से लिखा है।

(आक्षेप ९) सत्यार्थप्रकाश १९७-१९९ में शारीरिक भाष्य का प्रमाण दिया है। यह भी कहीं नहीं मिलता।

(उत्तर) यह स्वामी जी ने प्रमाण नहीं दिया नवीन वेदान्तियों ने दिया है और शारीरिक भाष्य में यह कारिका भी है। इससे भी तो कोई बुद्धिमान् इनकार नही कर सकता। और वेदान्तियों की तो यह प्रसिद्ध ढाल है। स्वयं हम से कई बार उन्होंने शास्त्रार्थ में यह श्लोक उपस्थित किये। आप जान बूझ कर धोखा न दें।

(आक्षेप १०, ११) १८७-१८६ तथा ५८६-६०० लेख के प्रमाणित वचनों पर है।

(उत्तर) यह दोनों प्रमाण यदि किसी ग्रन्थ के न भी हूं तो भी बहुत उत्तम हैं एक तो योग समधी और परमानंद के सम्बन्ध में और दूसरा धर्म की महिमा पर है। स्वामी जी ने इन्हें उपनिषदों के प्रमाण से लिखा है किन्तु नाम का उल्लेख नहीं है और हमें अभी तक मिला भी नहीं, संभवतः इन दस उपनिषदों में नहीं है तो क्या आपत्ति है? हम आर्यसमाज के नियम संख्या ४ के अनुसार उन्हें स्वीकार करते हैं और :—

अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि०॥ य०

के अनुसार हम उन को यथार्थ समझते हैं। आप बताइये इन में कौन सी भूल है? जिससे हम स्वीकार करें। अथवा इन में कौन सी बात वेदविरुद्ध है जिस पर आप ने आक्षेप किया है। किसी ने सत्य कहा है कि—

स्वार्थी दोषं न पश्यति।

—०—

श्रुतिस्मृति संबंधी आक्षेप

अब हम उन आक्षेपों का उत्तर निवेदन करते हैं जो आपने इस विचार से किये हैं जिस से लोगों को स्वामी जी से संदिग्ध करें अर्थात् यह कि स्वामी जी ने श्रुति और स्मृति में सुधार किया है? जबकि यह सर्वथा मिथ्या है। (पृष्ट ३३ से ४१ तक)

(आक्षेप १) दूसरे और तीसरे संस्करण के सत्यार्थप्रकाश के पृष्ठ १८८ में दिये श्रुति प्रमाण में वेद्यं के स्थान पर विश्वं और महान्तं के स्थान पर पुराणं बनाया है। तथा ऐसा ही मनुस्मृति २।१०३ में शूद्रवत् के स्थान पर साधू भी बना दिया है।

(उत्तर) यह श्वेताश्वतरोपनिषत् का वचन है। वेद मंत्र नहीं और यह उस का पाठ भेद है। स्वामी जी का परिवर्तन नहीं। आप भिन्न २ लेखबद्ध और छपे हुए का अध्ययन कीजिये। आप का संदेह दूर हो जायगा। यह आक्षप आशिरःपाद सत्य से दूर है।

(आक्षेप २) इसी प्रकार मनुस्मृति अध्याय १७६ वें चतुर्थ श्लोक को पृष्ठ ११० पर सर्वथा परिवर्तित कर दिया है और मुंडकोपनिषद् की श्रुति पृष्ठ १५९ पर ठीक लिखी है और पृष्ट २४० पर परिवर्तन कर दिया है। देखो सत्यार्थप्रकाश तीसरा संस्करण।

(खंडन) यह आप की भूल है। उस पुस्तक का शुद्धि अशुद्धि पृष्ठ दूसरे संस्करण के अन्तिम पृष्ठ पर देखिये। ऐसे ही कई बार आपने धोखा देना चाहा अथवा धोखा खाया। और पृष्ठ १५६ भी आप ने ठीक नहीं लिखा। वास्तव में पृष्ठ १२५ है। इन दोनों के लिए तृतीय संस्करण में शुद्धि अशुद्धि पत्र विद्यमान है। कुछ आंखें खोल कर अध्ययन कीजिये और प्रथम के पृष्ठ १४५ पर भी ऐसा ही लिखा है। अतः आप का यह आक्षेप सर्वथा निराधार है।

(आक्षेप ३) सत्यार्थप्रकाश द्वितीय संस्करण के पृष्ठ ४३ पर लिखा है जो कुलीन शुभ लक्षण युक्त शूद्र होवे तो उन को मंत्र संहिता छोड़ कर सब शास्त्र पढ़ावे और पृष्ठ ७४ पर उस के विरुद्ध वेद के अनुसार सब को वेद का अधिकार लिखा है। संभवतः इसलिए कि उन के पन्थ में शूद्रों का बाहुल्य है।

(उत्तर) यहां भी आप की समझ की भूल है। वह स्वामी जी की सम्मति नहीं किन्तु सुश्रुत कारने अपनी भाषा में कुछ लोगों की सम्मति लिखी है कि ऐसा मत भी अनेक आचार्यों का है और जो स्वामी जी ने पृ० ७४ पर वेद मंत्र लिखा है वह तो स्वयं ही सैंकड़ों ऋषियों से बढ़ कर आज्ञा है और ऐसा ही सहस्रों ऋषियों का मत है कि सब को वेद पढ़ाना चाहिये और सहस्रोंऋषि-वाल्मीकि, वासिष्ठ, गौतम, व्यास, विश्वामित्रादि शूद्र कुल में उत्पन्न हो कर ब्राह्मण बन गये।

आर्यसमाज में शूद्रों का बाहुल्य नहीं है। किन्तु ब्राह्मण, क्षत्रिय तथा वैश्यों का बाहुल्य है। जब हम वर्ण व्यवस्था कर्मानुसार मानते हैं तो हम इस को यदि ऐसा हो भी तो भी आपत्ति जनक नहीं समझते किन्तु शूद्रों का बाहुल्य वाममार्ग, वैरागियों, कबीर पन्थियों, दादू पन्थियों राम स्नेहियों, चक्रांकरों, निर्मलों और उदासियों में है।

एक हमारा प्रश्न आप पर भी है कि धर्म वाले कायस्थों को किस वर्ण में समझते हैं व्यवस्था लेकर तो बताइये क्योंकि इन में से सहस्रों मद्य मांस के सेवन करने वाले और सैंकड़ों ऐसे हैं जिन्होंने मुसलमान वेश्याएं घर में डाली हुई हैं।

(आक्षेप ४) आर्योद्देश्य रत्नमाला के ११वें पृष्ठ पर आर्य की व्याख्या की है कि जो आर्यावर्त में सब दिन से रहने वाले हैं। पुनः सत्यार्थप्रकाश पृष्ठ ३३ पर लिखा है कि मनुष्यों की आदि सृष्टि तिब्बत में हुई पुनः आर्य लोग आर्यावर्त की भूमि को उत्तम समझ यहां पर आकर निवास करने लगे।

(खंडन) आप का सारा अन्वेषण अपूर्ण, मिथ्या और संदेह वाहक है। वस्तुस्थिति यह है कि स्वामी जी ने इस विषय में जो कुछ लिखा है वह सब सच्छास्त्रों के अनुसार है। जिसे स्वामी जी ने आर्यों का आदि उत्पत्ति स्थान माना है वह हिमालय के उत्तरीय भाग में है और वह प्राचीन मनु के काल में जिस का नाम भी मनु था, आर्यावर्त के साथ शामिल था जैसाकि भूगोल अस्थामलक में भी लिखा है "सीमा इस देश की भिन्न २ समय में भिन्न २ प्रकार से रही, कभी लोगों ने ब्रह्मा, स्याम, मलाया और कोचीन को भी इस में गिना और कभी काबुल कन्धार और तिब्बत को इस में मिलाया" पृष्ठ २० सन् १८७६

अमरीका के प्रसिद्ध डाक्टर जैक्सन डैविस साहिब ने भी ऐसा ही लिखा है कि आदि सृष्टि मनुष्यों की तिब्बत अर्थात् हिमालय के उत्तरी दामन में हुई (हार मोनिया जिल्द ५)

और यह मनु के अनुसार भी है देखो—मनु २।१७ जिस का संक्षिप्त अभिप्राय यह है कि ब्रह्मपुत्र नदी अर्थात् सरस्वती नदी से लेकर दृषद्वती अर्थात् काले पत्थरों वाली सिन्धु नदी तक जो देश है, वह ब्रह्मवर्त कहलाता है। अब विचार करो कि वह देश कौन सा है? आप अंग्रेजी जानते हैं। एटलस खोलकर आँखों के सम्मुख रखो और देखो कि ब्रह्मपुत्र और सिन्धु के मध्य में छोटा तिब्बत आ जाता है या नहीं? और यह भी देखो कि बड़े तिब्बत का बहुत सा भाग भी उस में मिल गया है। यदि इंगलिश ऐटलस पास न हो तो उर्दू देखिये जो १८९० ईस्वी में मुंशी गुलाब सिंह के प्रैस में प्रकाशित हुआ है। यदि यह सत्य है कि इन दो नदियों के मध्य छोटा तिब्बत और कुछ भाग बड़े तिब्बत का आ जाता है तो कदापि स्वामी जी की बात में विरोध नहीं है। ऐसा ही है और अवश्य है। और यही विदेशी स्कालरों की सम्मति है। निस्सन्देह स्वामी जी उन्हीं ऋषियों की सन्तान से थे जो आदि सृष्टि में त्रिविष्टप अर्थात् तिब्बत में (जिस का दूसरा नाम स्वर्ग अर्थात् सुख भूमि भी है) उत्पन्न हुए और इन्हीं महा-पुरुषों की ओर मनु जी ने २/२० में इङ्गित किया है। महाभाष्यादि की दृष्टि से उस का नाम कुरुक्षेत्र भी है और उस का पता बताया है "उत्तर कुरवः" अर्थात् कुरुक्षेत्र (कुरुदेश) उत्तर में है। यदि हम स्वामी जी के अन्वेषण को यथार्थ मानें और वाममार्गी पंडितों के वचन पर विश्वास करें तो यह कुरुक्षेत्र नाम कौरव पांडव युद्ध के पश्चात हुआ, और मनुस्मृति की रचना उसके पश्चात् हुई जबकि यह सर्वथा मिथ्या है क्योंकि इस युद्ध से सैंकड़ों वर्ष पूर्व के ग्रन्थों में कुरु आदि नाम विद्यमान हैं। अतः

स्वामी जी की आज्ञा सर्वथा स्पष्ट है अन्यथा इस के विरुद्ध मानने से समस्त सद्ग्रन्थों से इनकार करना पड़ेगा।

(आक्षेप ५) स्वामी जी ने कहीं लिखा है कि परम पद को प्राप्त हो कर नित्य आनंद में रहते हैं। पुनः कई स्थानों पर मुक्ति से लौट आना भी लिखा है।

(उत्तर) यह आक्षेप कई कारणों से मिथ्या है। प्रथम कारण यह कि शब्दों की भरमार के अतिरिक्त ज्ञान जीवन में इस का कोई प्रमाण नहीं किन्तु समस्त प्रमाण इस के विरुद्ध हैं। कृष्ण महाराज जो योगेश्वर और मुनीश्वर उभयपक्ष सम्मत महा पुरुष हैं, वह स्वयं गीता में कहते हैं कि :—

बहूनि में व्यतीतानि जन्मानि तव चार्जुन।

हे अर्जुन ! मेरे और तेरे बहुत से जन्म हो चुके हैं।

शंकराचार्य जो आप के वचनानुसार शिव स्वरूप थे वह भी मुक्ति से पुनरावृत्त हो कर शरीर धारी हुए।

जय विजय वैकुंठ अर्थात् मोक्षपदवी से पृथक् किये गये और वही रावण कंसादि होते रहे।

ब्रह्मा के व्यास जी अवतार हुए और इसी प्रकार दत्तात्रेय, रामचंद्र तुलसी दास जी अथवा पुराणों के वचनानुसार साक्षात् विष्णु स्वरूप, किन्तु मनुष्य जन्म में अवश्य आए सीता, हनुमान्, लक्ष्मण आदि सब की यही अवस्था है। मानुषी जीव तो एक ओर, स्वयं परमेश्वर को भी पौराणिक लोगों ने वैकुंठ में आराम से न बठने दिया। सूकर, मच्छ, कच्छ, सिंह, घोड़ा, कुत्ता, स्त्री आदि के शरीरों में आना मान लिया और नवीन वेदान्त ने तो संसार को नास्तिक बनाने का मानो ठेका ही ले लिया है। यह जितनी योनियां हैं अथवा जितने जीव हैं, सब ही ब्रह्म हैं। केवल अविद्या के कारण अथवा माया के मोह में ब्रह्म भूल कर शंकराचार्य जी के वचनानुसार जीव कहलाते हैं।

भाई शिव नारायण जी ? आप ध्यान दें, मुक्ति से पुनरावृत्ति का सिद्धान्त कोई नया नहीं है। समस्त महात्माओं ने मुक्तात्माओं के पुनः लौटने का सिद्धान्त स्वीकार किया है।

दूसरा कारण-जिसका आदि है उस का अन्त भी अवश्य है। एक ओर जैसे मोक्ष का आदि है तो कोई कारण नहीं है कि उस का अन्त न हो।

तृतीय कारण-मुक्ति कर्मों का फल है और कर्म सीमित हैं, अतः आवश्यक है कि मुक्ति सीमित हो।

चतुर्थ कारण-कोई वेद मंत्र मुक्ति के सीमा रहित होने पर नहीं है। हां, ऐसे मंत्र अवश्य हैं जिन से पाया जाता है कि मुक्ति सीमित है और परान्त काल के पश्चात् पुनः लौट आना होता है।

क्योंकि मोक्षकाल इतना बड़ा है कि मनुष्यों की गणित विद्या वास्तव में उस की गणना नहीं कर सकती। अतः महात्माओं ने कुछ स्थानों पर उसकी व्याख्या में सदैव का शब्द प्रयुक्त कर दिया है किन्तु सभी स्थानों पर उस का अभिप्राय परान्त काल से है। इसके सम्बन्ध में हम ने "नजात" (मोक्ष) नामी पुस्तक में विस्तार के साथ लिख दिया है।

अतः आप का यह लिखना कि जालंधर में एक मौलवी से शास्त्रार्थ करने पर स्वामी जी ने युक्तियुक्त उत्तर न आने पर नित्य मुक्ति से इनकार कर दिया-यह सर्वथा मिथ्या है। क्योंकि न तो वहां

पुनर्जन्म और चमत्कारों के अतिरिक्त किसी और मन्तव्य पर शास्त्रार्थ हुआ और न ऐसा विषय उपस्थित हुआ। यहां का सारा शास्त्रार्थ विधर्मियों की ओर से प्रकाशित विद्यमान है। उसमें सर्वथा इस का वर्णन नहीं अतः भाई साहब ? उचित है कि प्रथम तो प्रश्न को मन में तो लो, पुनः मुख से बोलो : कहा है कि :-

न गुफ्तह नदारद कसे बा तो कार।
व लैकिन चूं गुफ्ती दलीलशबियार ॥ ×

शास्त्र के वचनों के अर्थ

(आक्षेप १) सत्यार्थप्रकाश पृष्ठ ८६ पर गीता १८।४३ का यह अर्थ किया है कि जो भागने अथवा शत्रु को धोखा देने से जीत होती हो तो ऐसा ही करना चाहिये। किन्तु प्रत्यक्षतः गीता के इस श्लोक का विपरीत यह अभिप्राय है कि शत्रु के सामने से भागना क्षत्रियों का धर्म नहीं है।

(आर्य) भाई साहिब ! धोखा न दीजिये। स्वामी जी ने जिस विशेषता से इसका अनुवाद किया है वह युद्ध नियमों के सर्वथा विरुद्ध नहीं किन्तु तदनुसार है। वह लिखते हैं—"सैंकड़ों सहस्रों से भी युद्ध करने में अकेला भय न होना, सदा तेजस्वी अर्थात् दीनता रहित प्रगल्भ दृढ़ रहना, धैर्यवान् होना, राजा और प्रजा सम्बन्धी व्यवहार और सब शास्त्रों में अति चतुर होना, युद्ध में भी दृढ़, निःशंक रह के उससे कभी न हटना न भागना अर्थात् इस प्रकार से लड़ना कि जिससे निश्चित विजय होवे, आप बचे, जो भागने से वा शत्रुओं को धोखा देने से जीत होती हो तो ऐसा ही करना, दान शीलता रखना, पक्षपात रहित होके सबके साथ यथायोग्य वर्तना, विचार के देना, प्रतिज्ञा पूरी करना, उसको कभी भंग होने न देना। यह ग्यारह क्षत्रिय वर्ण के कर्म और गुण हैं।"

यह भागना जो स्वामी जी ने लिखा है वह भीरुता का भागना नहीं है किन्तु एक मिलट्री शब्द है अर्थात् युद्ध सम्बन्धी परिभाषा है। संसार की समस्त विजय दुन्दुभियों को किसी न किसी अवसर पर इस पर आचरण करना पड़ा बोनापार्ट और सिकन्दर की जीवनी पढ़ो, तैमूर की दैनन्दिनी का अध्ययन करो। यदि स्वामी जी इस विस्तार से न लिखते तो भी कृष्णचन्द्र जी की जीवनी पर कौन हड़ताल लगा सकता है ? कालयमन से भागे पुनः दो बार मथुरा से भागकर द्वारका में जा बसे। स्वयं शिवजी कृष्ण जी के सामने भाग गये। कृष्ण जी का नाम रण छोड़ तो प्रसिद्ध है। अतः आपका यह आक्षेप वास्तव में यदि है तो कृष्ण जी पर है न कि स्वामी जी पर। किन्तु यह आक्षेप नहीं, प्रत्युत युद्ध विद्या की एक पद्धति है अथवा शत्रु की चोट से अपनी सुरक्षा करना है।

(आक्षेप २) मनुस्मृति १०।६५ का अनुवाद अशुद्ध किया है।

(आर्य) यह अनुवाद अशुद्ध नहीं है। आपको पक्षपात ने शुक्र देवता की भान्ति आलोचना के अतिरिक्त न्याय से कार्य करना आपके स्वभाव से रहित कर दिया है। स्वामी जी से बहुत पहिले भी विद्वान् पंडितों ने उसका यही अनुवाद किया है। जैसा कि आर्यसमाज की स्थापना से पूर्व संवत्

×नहीं बोले तो कोई भी व्यक्ति तुझ से प्रयोजन नहीं रखता किन्तु जब तू बोलने लगा तो युक्ति और तर्क भी साथ ला। (अनुवादक)

१९३० विक्रमी तदनुसार १८७३ ईस्वी में कलकत्ता के एक ब्राह्मण विद्वान् शास्त्री ने भोजन विचार ग्रन्थ लिखा था। उसके पृष्ठ २३ पर इस श्लोक का अर्थ उसी प्रकार किया है—"शूद्र ब्राह्मणता को प्राप्त होता है और ब्राह्मण शूद्रता को, इसी प्रकार क्षत्रिय और वैश्य को भी जानो।"

(भोजन विचार पृष्ठ २३ रामायण प्रैस कलकत्ता)

न्याय की बात यह है कि श्लोक का शब्दार्थ यही है और ऐसा ही मनु जी ने लिखा। निरक्षरों से हमें प्रयोजन नहीं और न पक्षपात करने वाले से कोई प्रयोजन है। मनुस्मृति के लेख से अपरिचित लोग बहुत सी लम्बी भाषा इसमें घुसेड़ कर अनुवाद करते हैं जो सिर से पांव तक अशुद्ध है।

इसी के साथ देखो मनु ९।२२-२६ और महाभारत में इसके अतिरिक्त और भी विस्तार से लिखा है। हमने इसी पुस्तक में इसका विस्तृत वर्णन किया है। लाला मुंशीराम प्रधान आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब ने अपनी पुस्तक वर्णव्यवस्था में और आर्यसमाज मेरठ ने भी इसी नाम की एक पुस्तक में पर्याप्त प्रमाण दे दिये हैं। अल आक़िलो तकफ़ी लूइशारतो।×

(आक्षेप ३) मनुस्मृति ९।६९ के उत्तरार्द्ध का अर्थ भी अशुद्ध किया है। स्वामी जी इसे पुनर्विवाह पर लगाते हैं। अन्य टीकाकारों ने कुछ और ही समझ रखा है।

(आर्य) वर्तमान धर्म सभा के पंडितों की अवस्था और उनके शिष्यों की मनोवृत्ति अकथनीय है। जितनी जातीय सुधार की बातें और जिस प्रकार के सांसारिक परोपकार के कारण हैं, यह लोग उन सबसे ही रुष्ट रहते हैं। पं० ईश्वरचन्द्र विद्यासागर जैसे विद्वानों और बड़े-बड़े योग्य पंडितों ने पुर्नविवाह को उचित बताया है और स्वामी जी ने भी इसके उचित होने पर व्यवस्था दी है। जातीय सुधार करने वाली सबकी सब सभाएं इसको उचित मानती हैं किन्तु यदि विरोधी हैं तो केवल यही मनमाने पदों से विभूषित महामहोपदेशक महाराज ही हैं।

पराशर ने पराशर स्मृति में (जिसे धर्म सभा वाले मानते हैं) स्पष्ट पुर्नविवाह की आज्ञा दी है और पंडित गुरु प्रसाद जी ने इस श्लोक का अर्थ भी स्वामी जी के अनुकूल ही किया है। किन्तु शोक है उन लोगों पर जो अकारण ही जाति के शुभचिन्तकों की पुण्यप्रद बातों और सदुपदेशों से लाभान्वित नहीं होते किन्तु किसी ऋषि की उस सम्मति पर जो वेदशास्त्र के विरुद्ध हो, आचरण न करना चाहिये और सगाई से इस श्लोक का कोई सम्बन्ध ही नहीं है। क्योंकि सगाई अथवा मंगनी शब्द स्वयं वेद-शास्त्र के विरुद्ध है। देखो सम्पूर्ण तीसरा अध्याय।

सगाई, मुकलावा, गोना, दुरागमन सारी की सारी पोपलीला की प्रथाएं हैं और यदि आपका अर्थ यथार्थ मानें तो सर्वथा असंगत है क्योंकि लाखों कन्याओं की सगाई होने पर जो लड़के मर जाते हैं तो क्या वह रांड हो जाती हैं? उनका श्लोक ६९, ७० के अनुसार आचरण होता है अथवा कभी हुआ? अतः यह आपका अथवा किसी और का कथन और इस पर हठ करना केवल मिथ्या है और यदि इसी अध्याय के श्लोक ७१, ७२ प्रक्षिप्त न मानें जैसा कि आप लोग नहीं मानते तो संभवतः सारा भारत राण्ड हो जावे। अतः क्या ऐसा अर्थ कभी संभव है? अब इसके वास्तविक शब्दार्थ सुनिये

× बुद्धिमानों के लिए इशारा पर्याप्त है।
अलमति विस्तरेण बुद्धिमद्वयपु। (अनुवादक)

"जिस कन्या का केवल वेदमंत्रों अर्थात् सत्य वाणी से विवाह हुआ हो किन्तु अभी सहवास न हुआ हो अर्थात् अक्षत योनि हो, ऐसी अवस्था में यदि पति मर जाय तो शास्त्र के प्रसिद्ध नियमानुसार उस पति के दूसरे भाई अथवा निकट सम्बन्धी से उसका पुनर्विवाह किया जाए" अतः आपका आक्षेप आशिरः पाद मिथ्या है।

(आक्षेप ४) मनुस्मृति ९।७६ का भी अशुद्धार्थ किया है। सत्यार्थप्रकाश पृष्ठ ११९

(आर्य) निस्सन्देह इन श्लोकों का वास्तविक अर्थ तो यही है कि--

"विवाहित स्त्री का यदि विवाहित पति परदेश गया हो तो आठ वर्ष और कीर्ति के लिये गया हो तो छे और धन के लिये गया हो तो तीन वर्ष तक बाट देखे।"

और आपका यह वचन भी ठीक है कि "जैसाकि केवल इतने शब्दों से पूरा-पूरा अभिप्राय प्रगट नहीं होता, सब टीकाकार इसके आगे अपनी योग्यतानुसार जो व्याख्या उचित समझते हैं बढ़ा कर लिख देते हैं।"

किन्तु हम आपसे पूछते हैं कि लोग क्या-क्या व्याख्या करके बढ़ा देते हैं आपने उनका उल्लेख नहीं किया तो हम बताते हैं। सुनिये—किसी ऋषि की सम्मति है कि नियत समय के व्यतीत होने के पश्चात् स्त्री दूसरा विवाह कर ले। किसी की सम्मति यह है कि अपने पति को ढूंढने के लिये जावे।

किसी की सम्मति है कि भोजन न्यून करके योग में अपना जीवन व्यतीत करे, किसी की यह सम्मति है कि परिश्रम पूर्वक मज़दूरी करके अपनी आयु व्यतीत कर दे। ऐसी-ऐसी बहुत सी सम्मतियां हैं।

अब पाठक न्याय करें और ऊंच नीच सोचकर उत्तर दें कि अच्छी बात क्या है? उर्दू मनुस्मृति नवलकिशोर के टीकाकारों ने लिखा है कि इसके पश्चात् क्या करना चाहिये इसका वर्णन नारद स्मृति में मनुस्मृति के प्रमाण से लिखा है और इस स्थान पर भी श्लोक ७४ साथ मिलाकर पढ़ना चाहिए (देखो पृ० ३४०)

छः टीका वाली मनुस्मृति में एक दो टीकाकारों की यही सम्मति है। मैक्समूलर ने अपने आंगल अनुवाद में (जो १८८४ ई० में विदेश में प्रकाशित हुआ) भी ऐसी ही टिप्पणी दी है अतः हम अपने पाठकों को अधिक आकृष्ट करना चाहते हैं कि वह विचार करें कि पुरुष जब ब्रह्मचर्याश्रम के पश्चात् विवाह करके स्त्री से वचनबद्ध हो जाए कि हम और तुम एकत्र और एक दूसरे से समस्त सांसारिक कार्यों में सम्मिलित होकर धार्मिक कर्तव्यों का पालन करते रहेंगे तो जब पुरुष ने उस पारस्परिक निर्णय को तोड़ दिया अर्थात् वह सूचना दिये बिना विद्या, धन अथवा यशः प्राप्ति के लिये घर से चला गया किन्तु स्त्री के लिये निर्वाह का प्रबंध नहीं कर गया तथा पत्र व्यवहार का क्रम भी जारी नहीं किया और न तीन से आठ वर्ष तक घर लौटा तथा स्त्री को भी साथ नहीं ले गया। पुरुषों की अवस्था परदेश में जाकर जितनी सदाचार पर स्थिर रहती है वह आप लोगों से छिपी नहीं है। इस अवस्था में स्त्री क्या करे? इन चार बातों में से किसको वह स्वीकार कर सकती है? अच्छी बात तो यह है कि पुरुष जब विदेश जाए तो पत्नी को सदैव साथ रखे जैसे रामचन्द्र जी सीता को और बृहस्पति अरुन्धति को अथवा श्रीकृष्ण रुक्मणी को और योरोपियन लोग मेम साहिबों को साथ रखते हैं। यदि किसी कारण

से साथ न रख सके तो निर्वाहार्थ धन भेजता रहे अथवा पत्रव्यवहार करता रहे वह उसके लिये सम्बन्धियों की देखरेख में निर्वाह का प्रबन्ध कर जाय। यदि इनमें से वह किसी बात को पूरी नहीं करता तो उसकी पत्नी को शास्त्रीय आज्ञा है कि वह नियमेन सन्तानाभाव के कारण पुनर्विवाह करे। अब बताइये, इसमें कुछ दोष है अथवा यह समस्त दोषों की जड़ काटने वाली आज्ञा है। इसके साथ नारद स्मृति को विचारपूर्वक देखो।

(आक्षेप ५) सत्यार्थप्रकाश द्वितीय संस्करण पृष्ठ १०५ और तृतीय संस्करण पृ० १०३ में श्री स्वामी जी महाराज ने मनुस्मृति ४।१९० का अर्थ किया है वह अन्य टीकाकारों के विरुद्ध है। दूसरों ने यह अर्थ लिखा है कि जो ब्राह्मण तप और वेदाभ्यास नहीं करता है और दान लिया करता है वह दाता सहित डूबता है जैसे जलमग्न पत्थर की नौका डूबती है।

अब कुछ विचार कीजिये कि स्वामी जी के किये हुए अर्थ में कितनी उत्तमता है अर्थात् उनकी व्याख्या के अनुसार अत्यन्त धर्मार्थ दान लेने वाला भी डूब जाता है। इससे बढ़कर और अधिक पवित्रता क्या होगी ?

(खंडन) भ्राता जी ! स्वामी जी का भी यही अभिप्राय है किन्तु कुछ आपकी समझ का फेर है। उन्होंने विस्तार अधिक किया है अर्थात् जो ब्रह्मचर्यादि तपरहित है और दान लेता है तथा जो अनपढ़ मूर्ख होकर दान लेता है जो केवल दान पर ही अत्यन्त रुचि रखता है कुछ परमधर्म नहीं कर सकता। यह तीनों गुणों वाला अथवा इनमें से एक, सबही दुःख सागर में डूबेंगे। इसी के साथ स्वामी जी की सम्मति की पुष्टि करने वाले मनुस्मृति के निम्न लोकों २१३ व १८८ पर ध्यान दीजिये। अतः यह आक्षेप आशिरः पाद आन्तरिक विरोध का कारण और सत्यान्वेषण से कोसों दूर हैं।

(आक्षेप पृ० ४५) स्वामी जी की अनोखी (विचित्र) रीसर्च कि उन्होंने वेदों का प्रकाश अग्नि आदि चार ऋषियों के आतमा में लिखा है और समस्त ऋषियों के विरुद्ध ब्रह्मा पर नहीं लिखा।

(खंडन) ब्रह्मा को वेद की प्रेरणा होने का वर्णन किसी विश्वस्त ग्रन्थ में नहीं है किन्तु यह पुराणों का मिथ्या अनुकरण है। हम यदि पुराणों और उनकी इस मान्यता को यथार्थ मानें तो ब्रह्मा पर ईश्वरीय प्रेरणा होने के बदले स्वयं ब्रह्मा के जीवन पर एक बड़ा भारी कलंक का टीका लगता है। ब्रह्मा और उसके चार मुख होने की कथा (देखो भागवत, शिवपुराण, देवी भागवतादि) और उसकी पूजा का पवित्र होना सर्वथा विचार योग्य है। अतः न तो ऐसे विचित्र उत्पत्ति वाले कोई ब्रह्मा हुए और न उनका किसी सच्छास्त्र में वर्णन है। वेद द्वारा प्रकाश के कर्त्ता अथवा कोई और यदि ब्रह्मा की कथा को आंखें खोलकर अध्ययन कर लेते तो कदापि ऐसे कामी पुरुष और उसके ऋषित्व तथा उसकी उत्पत्ति पर विश्वास न करते। किन्तु वह बेचारे क्या करें।

अब हम बताते हैं कि गोपथ ब्राह्मण शतपथ ब्राह्मण और मनुस्मृति आदि सनातन ऋषियों के ग्रन्थों में अग्नि, वायु, आदित्य, अंगिरा आरंभ सृष्टि के महर्षियों के आत्माओं में वेदों के प्रकाश का वर्णन है (विस्तार देखो वेदभाष्य इन्डोसंस्कृत पं० देवदत्त शास्त्रीकृत)

ब्रह्मा जी पर वेदों का प्रकाश तो मूर्ति पूजा के सिद्धान्त की भान्ति वेद और सच्छास्त्रों के विरुद्ध है। हम इलहामे वेद नामी पुस्तक में इस पर विस्तृत खोज उपस्थित करेंगे।

(आक्षेप पृ० ४६) सत्यार्थप्रकाश पृ० ८७ में ब्राह्मणादि की पुराणोक्त उत्पत्ति पर स्वामी जी ने जो आक्षेप किया है उस पर उपहासात्मक प्रश्नोत्तर किये हैं।

(खंडन) हमारे कायस्थ दयालु को अपने नाम की भांति शिव शक्ति के रूप के अतिरिक्त और कोई आक्षेप करना आता ही नहीं। अच्छा उनकी इच्छा। किन्तु हम इस अवसर पर पुनः उनसे प्रार्थना करते हैं कि वह सत्यार्थप्रकाश के इस लेख को पुनः अध्ययन करें और व्यर्थ सत्पुरुषों की निन्दा न करें।

कारे पाकांरा क़यास अज़ खुदगीर।
गरचेहे मानंद दरनविश्तन शेरोशीर॥+
तो बसूरत रफ्तह दर मान्दह।
वेदे अक्दसए च मुतलिक़ ख़ान्दा॥×

स्वामी जी ने तो पवित्र वेद के उस मंत्र का अनुवाद ब्राह्मण व्याख्या कारों के अनुकूल किया। पुनः लिखते हैं कि "सब अंगों से मुख श्रेष्ठ है वैसे ही पूर्ण विद्या और उत्तम गुणकर्म स्वभाव से युक्त होने से मनुष्य जाति में उत्तम ब्राह्मण कहलाता है जब परमेश्वर के निर्विकार होने से मुखादि अंग ही नहीं हैं तो मुख से उत्पन्न होना असंभव है जैसाकि बन्ध्या स्त्री के पुत्र का विवाह का होना।"

ऋषि इतना लिख कर अब पुराणोक्त हठी लोगों पर प्रश्न करते हैं कि जो मुखादि अंगों से ब्राह्मणादि उत्पन्न होते तो उपादान कारण के सदृश ब्राह्मणादि की आवृति अवश्य होती जैसाकि मुखाकार गोल मोल है वैसे ही उनके शरीर का गोलमोल मुखाकृति के समान होना चाहिये। क्षत्रियों के शरीर भुजा के सदृश, वैश्यों के ऊरु के तुल्य, शूद्रों के शरीर पग के समान आकार वाले होने चाहियें (क्योंकि उनकी उत्पत्ति भिन्न-भिन्न उपादान कारणों से है) किन्तु ऐसा नहीं होता। और यदि कोई तुम से प्रश्न करेगा कि जो-जो मुखादि से उत्पन्न हुए थे उनकी ब्राह्मण संज्ञा हो परन्तु तुम्हारी नहीं, जैसेकि सब लोग गर्भाशय से उत्पन्न होते हैं वैसे ही तुम भी होते हो। तुम मुखादि से उत्पन्न न होकर ब्राह्मणादि संज्ञा का अभिमान करते हो अतः तुम्हारा कथन व्यर्थ अर्थात् अप्रमाण है और जो तुमने अर्थ किया है वह सच्चा ही रहा। अर्थात् वह उन लोगों पर खेद प्रगट करते हैं जिन्होंने झूठी कथाएं बनाकर ब्रह्माजी के मुख को कलंक लगाया अर्थात् उनके मुख को गर्भाशय ठहराया और इसी प्रकार उनके सारे शरीर को भी पुनः उससे गर्भ स्थिति बताई। पुराणों के अनुरूप किसी बुद्धिमान् ने कहा है कि—

"तन शुदा जुमला दाग़ दाग़।
पुंबा कुजा कुजा नही॥⌐

+ पवित्रात्माओं के कार्य का अनुमान स्वयं कर। यद्यपि फ़ारसी में शेर तथा शीर (दूध) एक जैसा लिखा जाता है।

× तू अपने रूप को बिगाड़ बैठा तूने पवित्रवेद को सर्वथान हीं पढ़ा। (अनुवादक)

⌐ समस्त शरीर आघात पूर्ण है तू रोई (मरहम) कहा रखेगा ? (अनुवादक)

(परिणाम) बुद्धिमान् मनुष्यों से छिपा हुआ न होगा कि स्वामी दयानन्द के प्रगट होने से सर्व हिन्दू जाति की अवस्था कैसी रद्दी और भद्दी हो रही थी। न दीन का ठिकाना न धर्म का ज्ञान। द्वार-द्वार मट्टी फांकते टकराते फिरते थे। ब्राह्मण जिनका धर्म वेदशास्त्र का प्रचार था वह लोगों का सुधार करने के स्थान पर स्वयं जैनी और वाममार्गी तथा बीजमार्गी होकर कालिमा का टीका लगा चुके थे, क्षत्रिय कुछ रासधारी बनकर और कुछ वैश्याओं के चुंगुल में फंसे हुए तथा मद्यपान सेवी होकर दुष्कर्मों में फंसे हुए दीन-हीन अवस्था में पहुंचे हुए थे और धर्म की दृष्टि से निगाहो, सददाद चखिया बाबा और धोंकल पर जाने अथवा वृक्षों और पत्थरों से मुरादें मांगने के या बहुविवाह के अतिरिक्त सर्वथा जानते ही क्या थे? वैश्य मैली धोती और रोटी की छूत-छात के अतिरिक्त धर्म का नाम तक न जानते थे। हमारे परममित्र मुंशी इन्द्रमणि जी कुछ फ़ारसी अरबी की शिक्षा प्राप्त कर के अपने धर्म की रक्षा पर कटिबद्ध हुए किन्तु संस्कृत से अनभिज्ञ होने के कारण वह किसी परिणाम पर पहुंचने के लिये सफल न हो सके और वापिसी के प्रायश्चित्त के लिये उनके पास मौनालंबन के अतिरिक्त अन्य क्या उत्तर था। वह स्वयं वैश्य होने और बिरादरी को जंजीर में जकड़े होने के कारण हृदय से मानने पर भी कभी एक पग भी बाहिर न धर सके सुधार तो दूर की बात है। इसी प्रकार ब्राह्म समाज का उभार और उनकी असफलता संसार से कुछ छिपी नहीं। इस आधार पर आर्यसमाज की एक जातीय और धार्मिक सुधारक संस्था के सम्बन्ध से निम्न सुधारों के लिये आवश्यकता थी:—

प्रतिदिन हिन्दुओं का ईसाई और मुसलमान होना, वैदिक धर्म से हटकर भिन्न-भिन्न देवताओं की पूजा करना, परस्पर धर्म कर्म का विरोध, एक दूसरे के हाथ के न खाने पीने को धर्म समझना, नवीन वेदान्त का झक्कड़ और जाति का धर्म कर्म से बेसुध हो जाना संस्कृत विद्या से निरपेक्ष हो जाना, वाम मार्ग और चोली मार्गादि से जो निर्दयता तथा दुराचार प्रवृत्ति आ गई थी उसको दूर करना, इसी प्रकार के और भी कई कारण थे जिसके लिये एक सुधारक के आने और सुधार करने की अभिलाषा लग रही थी। जिसके पूर्ण करने के हेतु स्वामी दयानन्द का शुभागमन हुआ और यह भी एक विशेष नियम है जिसके अनुसार विरोध भी घर से ही आरम्भ हुआ। अधिक विरोधी अपनी जाति ही हुई। इस भाग्यहीन जाति के सुधार का जिसने बीड़ा उठाया उसी से उसने विरोध किया और उसे शत्रु समझा, पत्थर और ईंटें मारीं, प्रत्युत संगसार किया। विष का प्याला पिलाया और बदनाम किया, दोषी ठहराया। हे अधःपतन को प्राप्त हुई और बेसुध हिन्दू जाति! सद्धर्म से पतित और मार्ग भ्रष्ट आर्य जाति!

तुम्हीं को जगाता था शंकर बिचारा, तुम्हीं को उठाता कुमारिल सिधारा।
हुआ विष्णु भी था क़ुर्बान तुम्हारा, दयानन्द ने तुम पे सर्वस्व वारा।
तुम्हारी मगर क़ौमेहालत* वही है, हुई सुबह+पर ख़ाबे× ग़फ़लत वही है।

प्रिय ऋषि पुत्रो! आर्य बन्धुओ!! अब इस न्याय प्रियता के युग में और विशेषतः ऐसी दयालु माता के राज्य में जिसके राज्य में सूर्यास्त भी नहीं होता किन्तु सदैव प्रकाश देता है। आपका

---

* जाति + प्रातः × बेसुधी की निद्रा।

सोते रहना और उसके दया की छाया *में आराम पाकर भी सत्य वैदिक धर्म की ओर ध्यान न देना कितने दुर्भाग्य का चिह्न है। यदि इस समय भी आपने अंगड़ाई न ली और वैदिक ध्वनि सुनकर भी आपके कान न खुले तथा पूर्ववत् जड़पूजा और वाममार्ग को घिनौनी शिक्षा के रक्तपात से मलिन मन और मद्य के नशा से चूर और घूर्णित रहे तो महाप्रलय तक भी जागना कठिन है।

तुम्हीं अपनी मुश्किल[१] को आसां[२] करोगे, तुम्हीं अपनी मन्जिल[३] का सामां[४] करोगे।
तुम्हीं दर्द[५] का अपने दरमां[६] करोगे, करोगे तुम्हीं कुछ अगर यां करोगे।
छिपा दस्ते[७] हिम्मत[८] में दस्ते क़जा[९] है, मिसल[१०] है कि हिम्मत का हामी[११] खुदा[१२] है।

(नोट) महारानी विक्टोरिया की प्रशंसा केवल उसको धार्मिक स्वतन्त्रता की घोषणा के कारण से है। अन्यथा विदेशी राज्य की प्रशंसा करना पं० लेखराम जी का अभिप्राय नहीं था। क्योंकि वह एक सरकार से सहायता प्राप्त मिर्जाई पार्टी के साथ शास्त्रार्थों के कारण ही शहादत (बलिदान) को प्राप्त हुये थे। (अनुवादक)

(नोट) उर्दू के कठिन शब्दों के अर्थ—

(१) कठिनाई (२) सरल (३) पढ़ाव (४) सामान (५) दु;ख (६) उपचार) (७) हाथ (८) पुरुषार्थ, साहस (९) भाग्य का वरदहस्त (१०) दृष्टान्त (११) सहायक (१२) भगवान्।

आर्यसमाज में शान्ति का सत्योपाय
और
रामचन्द्र जी का सच्चा दर्शन
प्रथम भाग

मांस खाना पाप है अर्थात् पवित्र वेद सच्छास्त्रों के दृष्टिकोण से मांसाहार का खंडन और विरोधियों के प्रश्नों का उत्तर।

जिस समय संसार में वैदिक धर्म का प्रचार था और सच्छास्त्रानुसार लोग अपने जीवन का सुधार करते थे उस समय न तो जड़ोपासना का नाम था और न मूर्तिपूजा का वहमो+ गुमान× था। ईश्वर के वराह और नृसिंह अवतार नहीं माने जाते थे और न उसे गोपियों के साथ वास विलास और रास लीला के कलंक लगाए जाते थे। एक जगदीश्वर के अतिरिक्त किसी देवता की पूजोपासना नहीं जानते थे और पंच महायज्ञों के अतिरिक्त किसी पीर परस्ती अथवा गुरु पूजा को नित्यकर्म नहीं मानते थे। उस समय माता, पिता, अतिथि, आचार्य और परमात्मा इन पांच के अतिरिक्त किसी और से प्रयोजन न था और न कोई उपासना के योग्य गणना में आता था। चारों वर्ण और चारों आश्रम गुणकर्मानुसार जारी और सारी खुदाई का इस पर आचरण था। उस काल के देवता दिव्यगुणयुक्त, सत्त्वगुणी, शान्तात्मा, कामक्रोध, लोभ मोहाहंकार इन पांच विकारों से सुरक्षित, भक्त और पुण्यवान् हुआ करते थे। न तो उन दिनों काली, ज्वाला, पशुपतिनाथ या भैरु जी संसार की पृष्ठभूमि पर विराजमान थे और न चामुंडा, डाकिनी, शाकिनी आदि नामधारी देवता प्रमाण योग्य थे। यदि कहीं ईश्वर न चाहे यह विद्यमान थे तो भी इस शरीर और इस भोजन से सर्वथा रहित थे। न उनके यह रूप थे और न ऐसी भयानक मूर्तियां एक शानदार युग तक विद्यमान थीं।

इसी प्रकार सत्य का दौर-दौरा रहा और ईश्वर पूजा की समस्त संसार में प्रसिद्धि रही। अन्ततोगत्वा वैवस्वत मनु की २८ वीं चतुर्युगी के तीन युग (कलियुग) की संधि के समय "हरकमाले राज़िवाले"ⓧ के अनुसार उन्नति के शिखर पर चढ़ी हुई आर्य जाति को आलस्य ने आ घेरा और और दुराचार तथा व्यभिचार ने उनके मन के संसार पर डेरा जमा दिया। मद्यपान, मांस सेवन, मछली को कूट और भून कर खाना, दुराचार मुद्रा (वाममार्गियों का विशेष चिह्न) एक दूसरे के पश्चात् फैलाने लगे। सर्वतः प्रथम राजाओं में इसका आरम्भ हुआ क्योंकि दूसरों की अपेक्षा यह सामान इन्हें शीघ्र सरलता से प्राप्त हो सकते हैं कोई दंड देने वाला भी नहीं होता और न किसी का

+ भ्रम × विचार।

ⓧ प्रत्येक उन्नति को अवनति भी प्राप्त होती है। (अनुवादक)

भय होता है। राजाओं के पुरोहित अथवा आचार्य प्रायः पालीसी के पुतले होते हैं जिधर राजा की रुचि देखी झट उसी के अनुसार श्लोक बनाने लगे। सअ़दी ने कहा है कि :—

अगरशाह रुज़ रागोयदशबस्त ईं।
बबायद गुफ्त ईनक माहव परवीं ॥+

और एक दूसरे स्थान पर लिखा है कि :—

खिलाफ़ राए सुलतान राए जुस्तन।
ज़िख़ूने ख्वेश बायददस्त शुस्तन ॥☼

सत्पुरुषों, महात्माओं और सर्वसाधारण से छिपाए रखने के लिये साधारण बोल-चाल में इन वस्तुओं के दूसरे नाम रखे गये। मद्य का नाम तीर्थ, मांस का नाम शुद्धि और पुष्प तथा महाप्रशाद, मछली का नाम जलतुम्बिका, मुद्रा का नाम चतुर्थी, मैथुन का पंचमी, वैश्या का नाम देवांगना, अप्सरा और कुल वधु, तथा इनके प्रयोक्ताओं के नाम कौल, आर्द्रवीर, शाम्भवगण और जो लोग इन्हें बुरा समझते, उनका नाम कंटक, विमुख, शुष्कपशु रखा। इस सम्पूर्ण मक्कारी का और फ़रेब का अभिप्राय यह था कि कोई पहचान न कर सके और किसी पर यह रहस्य प्रगट न हो, प्रथम पूरी, कचोरी, शराब और दुराचार से इसका आरम्भ हुआ। मांस उसके पश्चात् सम्मिलित किया गया किन्तु खाने न खाने की स्वतन्त्रता दी गई क्योंकि उन्हें ज्ञात था वा अनुभव करके देख लिया था कि दुराचार और मद्यपान के साथ मांस सेवन से मनुष्य बच नहीं सकता। पुनः इस मांस सेवन के दो भाग किये गये—खुश्की के पशुओं का मांस और समुद्री प्राणियों का मांस। संक्षेपतः धीरे-धीरे मुर्ग़ी-मुर्ग़ा से लेकर बकरी-बकरे तक पहुंचे। किन्तु यहां तक धैर्य किस प्रकार हो सकता था, गाय, भैंस और मनुष्य तक खाने लगे और उस समय वाममार्ग न रहा किन्तु अघोरी और कौल हो गया अर्थात् सिर से पांव तक सर्वथा अन्धकार। जैसा कि उनके ग्रन्थों में लिखा है कि :—

अघोरात् परतरं नास्ति, कौलात् परतरं नास्ति।

दुराचार भी केवल विवाहिता स्त्रियों तक सीमित न रहा। वेश्याओं, विधवाओं से गुज़र कर चूढ़ी, चमारी, धोबिन, कसाईन, कलालिन, चंडालिन तक फैल गया और माता, बहिन का भेद न रहने दिया। मद्यपान के लिए मटके भर दिए गए। दुराचारी व्यभिचारी राजाओं को प्रसन्न करने के कारण जिन्होंने सबसे अच्छे श्लोक बनाए, वही अधिक प्रिय होकर जागीरदार और पदाधिकारी बनाए गए। इस अपवित्र इच्छा को पूर्ण करने के हेतु वेद मंत्रों के अर्थों में खेंचा तानी होने लगी और किसी ने कहा भी है कि :—

कामातुराणां न भयं न लज्जा। ×

+ यदि राजा दिन को कहे कि यह रात है तो कहना चाहिये कि यह चांद और तारे हैं। (अनुवादक)

☼ बादशाह की इच्छा के विरुद्ध सम्मति देना अपने रक्त से हाथ धोने के समान है। (अनुवादक)

× कामातुरों को न भय और न लज्जा होती है। (अनुवादक)

जब वेदों से उनकी इच्छानुसारी कामना पूर्ण न हो सकी और पांच मकारों को सिद्ध कर सकने वाले मंत्र न मिल सके तो बाधित हो कर वेदों को द्वितीय श्रेणी में ठहरा कर उनसे ऊपर प्रथम श्रेणी में शाम्भवी विद्या के ग्रन्थ नियत किए गये। जैसा कि हठ दीपिका में लिखा है कि :—

वेद शास्त्र पुराणानि समस्त गणिका यथा।
एकैव शांभवी विद्या गुप्ता कुल वधूरिव॥

वेद, शास्त्र, प्राचीन ब्राह्मण ग्रन्थ यह तो वेश्याओं की भान्ति प्रगट बातों का वर्णन करते हैं, केवल एक शांभवी विद्या अर्थात् वाम मार्ग के ग्रन्थ ही हैं जो पर्दा में गुप्त कुल वधू की भान्ति गुह्य रहस्य बताते हैं। (विस्तृत देखो सत्यासत्य विचार संस्करण १८७६ ई०)

पाठक वृन्द! इस श्लोक का विशेष अभिप्राय और गुप्त प्रयोजन आप समझ गए होंगे। स्वयं वाम मार्गियों ने भी जब वेद से अपनी इच्छा पूर्ति इच्छानुकूल सैकड़ों खेंचातानियों पर भी न देखी तो बाधित होकर पृथक् हुए और स्पष्ट कह दिया कि वेद उन गुप्त बातों अर्थात् पांच मकारों की आज्ञा नहीं देते वह तो बाह्य कर्मकांड और संध्या गायत्री के प्रचारक हैं। पुनः वाममार्गी राजाओं ने और उनके अनुकूल गृहस्थियों ने श्राद्धादि सत्कर्मों और अतिथि सत्कारों में भी मांस ही देना शुरू किया। उस समय की पुस्तकों में लिखा है कि सैंकड़ों बार इन लोगों ने अन्य पशु तो एक और दूसरों के बाल बच्चे मार कर स्वयं खा लिए अथवा आए हुए अतिथियों को खिला दिए और लाखों बार देवताओं पर मनुष्यों का रक्त बहा दिया। भागवत जानने वाले जड़ भरत की कथा से अच्छी प्रकार परिचित हैं।

वाम मार्ग के लिए न तो जीवित विद्वानों को देवता माना गया और न किसी मरे हुए ऋषि मुनि की पूजा की गयी। किन्तु नए देवता और नवीन देवियां कल्पित की गईं जिनका सत् शास्त्रों में कुछ भी वर्णन नहीं। जैसे पशुपति नाथ, काली, चंडी, चांडाली, महाकाली, कामुक्ष्या, ज्वाला, चामुंडा, भूतनाथ, भैरों, डाकिनी, शाकिनी, बगुलामुखी, आदि इसी प्रकार उनका भोजन भी सम्पूर्ण ऋषि मुनियों के विरुद्ध नियत किया गया है। माँस, शराब, मुर्दा, हड्डी, वमन और ऐसे हो कुत्सित उनके लिवास (पहरावे) और सवारियां नियत की गईं।

चोली मार्ग, पांच मार्ग, तान्त्रिक, कौल, मशअलकशां, ज़ाकरिया इसमाईली आदि सब इसी वाममार्ग की शाखाएं हैं। अब तक भी जो हिन्दु लोग देवी और भैरूं को नहीं मानते और वैष्णव कहलाते हैं वह माँस शराब के प्रयोग को बहुत बड़ा पाप मानते हैं। मंत्रों और जन्त्रों के लिखने के लिए भी रक्त की स्याही और हड्डी की लेखनी और चमड़े के काग़ज़ से काम लिया गया। पवित्र यज्ञ और शुद्ध हवन कुंड माँस मदिरा से अपवित्र किये गए और नवीन २ एक अक्षरी, दो अक्षरी मंत्र बना कर गोमेध, अश्वमेध, अजामेध सिद्ध किये गये और मूर्खों तथा आक्षेपकों को सन्तुष्ट किया गया कि हम पशुओं को पुनः मंत्रों से जीवित कर लिया करते हैं। महाभारत युग से लेकर बुद्ध काल तक यह अन्धाधुन्ध आंधी हर कि आमद बरांमज़ीद कर्द+ कभी २ धीरे और कभी २ बहुत बड़े बलपूर्वक जारी रहा। वेद ज्ञाता महात्मा ब्राह्मण भी भिन्न २ समयों में साथ के साथ विरोध करते रहे और इन बुरी कुरीतियों के हटाने में पूर्णतः यत्नवान् रहे। किन्तु "यथा राजा तथा प्रजा" सर्वथा इस खराबी की जड़ न काट

+ जो कोई आया उसे अधिक बढ़ाया। (अनुवादक)

सके। सब से पूर्व इसका खंडन महाराज कृष्ण द्वैपायन श्री वेद व्यास जी ने किया। जैसा कि वह कहते हैं कि :—

सुरामत्स्या पशोर्मांसं द्विजातीनां बलिस्तथा।
धूर्तैः प्रवर्तितं ह्येतन्नैव वेदेषु दृश्यते॥

(अनुशासनपर्व २६४।६)

मद्य, मत्स्य, अन्य पशुओं का मांस और मनुष्य बलि धूर्त लोगों ने चलाई है, वेद में कदापि इस को आज्ञा नहीं है। व्यास के सुपुत्र सुखदेव मुनि जी कहते हैं कि :—

युपं कृत्वा पशुं हत्वा कृत्वा रुधिर कर्दनम्।
यद्येव गम्यते स्वर्गे नरकंकेन गम्यते॥

लकड़ी से बांध और पशुओं को मार कर पृथिवी को रक्त रंजित करना यदि इस प्रकार मनुष्य स्वर्ग में जाता है तो बताईये नरक में किस प्रकार जावेगा।

सत्यं यूपस्तपोऽग्निश्च प्राणाश्च समिधो मम।
अहिंसा परमो धर्म एष धर्मः सनातनः॥

सत्यव्रत हमारा यूप है, तप हमारी अग्नि है और प्राणापान हमारी समिधा है क्योंकि अहिंसा परम धर्म है और यही सनातन से माना गया है।

प्राणा यथात्मनोऽभीष्टा भूतानामपि ते तथा।
आत्मौपम्येन भूतानां दयां कुर्वन्ति साधवः॥

प्राण जैसे मनुष्य को प्रिय हैं इसी प्रकार अन्य जीवों को भी वैसे ही प्रिय हैं। वैसे ही विद्वान् लोग सब प्राणियों पर दया करते हैं।

ऐसे कई और महात्मा मेधावी बौधायन आदि सत्य धर्म का उपदेश और इन वेद विरुद्ध बातों का खंडन करते रहे किन्तु दुष्ट प्रभाव बढ़ रहा था और यहां तक बढ़ चुका था कि स्त्रियों को पशुओं के संग कुकर्म कराए जाने लग गये थे। और केवल आर्यावर्त में ही नहीं किन्तु सब देशों में यह खराबी फैल चुकी थी।

मस्नवी रूमी में रूम की एक कथा लिखी है। इस्माएली मत जहाँ मौजूद है उस की वह प्रथा है। इटली देश में भी ऐसे कार्य होते थे। बदकार (बुरा काम कराने वाली) स्त्रियों के मकान जिनके सब नमूने नीपल्ज नगर के अजायब खाना में रखे हुए हैं। यह सब कार्य यूस्पाई नगर में होते थे जो १८६७ ईस्वी में ज्वाला मुखी पर्वत के लावा के कारण बरबाद हो गया (विस्तार देखो आर्य समाचार पत्र मेरठ फाल्गुण १९४० विक्रमी)

निजामी ने सिकन्दर नामा में भी ऐसा ही लिखा है। अन्ततः जब यह वाममार्ग बहुत जोर पकड़ गया और इसने बहुत खराबी फैला दी तो विक्रम से ५०० वर्ष पूर्व कपिल वस्तु में बुद्ध ने उत्पन्न हो कर

और इस अघोर वाममार्ग से बाधित होकर दयाधर्म का प्रचार शुरू किया बुद्धमत के बनाए ग्रन्थों में अपने विचारानुसार बड़े २ दोषारोपण किये हैं और प्रबल आक्षेप किये हैं किन्तु वास्तव में कोई आक्षेप यथार्थ नहीं क्योंकि जो आक्षेप हैं वह वाममार्ग मत पर हैं और इन्हीं की वर्णित कलंकित बातों पर हैं न कि पवित्र वेद पर। वाममार्ग से ले कर बुद्धादि मत मतान्तरों ने जो जो आक्षेप पवित्र वेद पर किये हैं वह सारे के सारे निर्मूल हैं।

कुछ ही हो। बुद्ध ने वाममार्ग वा स्ववचनानुसार वैदिक मत वालों पर आक्षेप किये और इस विशेषता से किये कि लोगों ने बुद्ध बनना स्वीकार किया किन्तु मांसाहारी वैदिक बनने से घृणा करने लगे और ऐसे वेदों को भी उन्होंने मानने से इनकार कर दिया क्योंकि यदि महीधर और सायण के अर्थ ठीक हैं तो ऐसे धर्म पुस्तक के मानने से नास्तिक होना सहस्रों गुणा अच्छा है? और यदि वाममार्ग यथार्थ है जैसा कि प्रायः हिन्दुओं का विश्वास है तो धर्म निर्पेक्ष होना उस से अच्छा है। बुद्ध की शिक्षा से यद्यपि लोग ईश्वर और वेद से श्रद्धा रहित हो गये और उस वेदोक्त समझे जा रहे धर्म अर्थात् वाम-मार्ग की निन्दा होने लगी। किन्तु यथार्थ बात यह है कि क्रियात्मक रूपेण एक बात (ईश्वर की सत्ता के इनकार) के अतिरिक्त और प्रायः समस्त वैदिक सिद्धान्तों पर आचरण होने लगा अर्थात् पशु को मार कर यज्ञ करना बन्द हो गया और बलि वैश्व देव यज्ञ प्रति दिन होने लगा। अन्धे, लूले, लंगड़े, साधन रहित दरिद्र मनुष्यों और पशुओं के लिये हस्पताल और गरीब खाने तय्यार हो गये। अनाथालय जारी किये गये। (देखो मनु ३।९४) पुनर्जन्म और शुभ कर्मों पर जीवन का आधार माना गया। यद्यपि बुद्ध इतना सफल न हुआ किन्तु उसके कई सिद्धान्त सर्वथा वेदोक्त थे जिस प्रकार आजकल कुछ व्यक्ति पुराणों वा महीधर के भाष्य को पढ़ कर ईसाई हो जाते हैं। ठीक यही अवस्था बुद्ध की थी। न उसका दोष और न वेदों का। यह सारा का सारा दोष वाममार्गियों का था जिन्होंने बुद्ध की आत्मा को बाधित किया कि वह इस धर्म को छोड़ दे।

इस बुद्ध के नास्तिक मत का खंडन करने वाले सबसे पहिले भट्ट पाद कुमारिल आचार्य हुए। उनके बारे में वर्णन है कि वह जिस समय वेद शास्त्र को पढ़ चुके तो एक दिन एक मकान के नीचे से गुज़र रहे थे। महल के ऊपर एक राज कुमारी धर्म की बुरी अवस्था को सोच २ कर यह आधा श्लोक पढ़ रही थी :—

किं करोमि क्व गच्छामि को वेदानुद्धरिष्यति।

कि मैं क्या करूं और कहां जाऊं। इस अन्धकार युक्त बुद्धमत के युग में कौन वैदिक धर्म की रक्षा करेगा?

तब उसके उत्तर में कुमारिल आचार्य बोले :—

मा विभैषी वरारोहे भट्टाचार्योस्ति भूतले ॥

कि हे प्रिय! मत सोच कर। भट्टाचार्य पृथिवी पर विद्यमान है।

इसके पश्चात् यह सामान्यतः प्रसिद्ध है कि उन्होंने बुद्धमत का खंडन शुरू किया, किन्तु साथ ही वाम-मार्ग का भी। इनके बनाए ग्रन्थों में भी मांस शराब का समान रूप से खंडन विद्यमान है।

इसके पश्चात् २२ सौ वर्ष का समय हुआ कि शंकराचार्य हुए। उन्होंने भी माँस शराब के प्रचारक

मतों का उसी प्रकार खंडन किया जिस प्रकार कि बुद्ध और जैनियों का। और अभी तक उनके मतानुयाई कुछ वाममार्गी गोसाईयों को छोड़कर शेष सब मांस और शराब को बुरा मानते हैं।

पश्चात् ११५० ईस्वी में रामानुज हुए उन्होंने तो वाममार्ग और मांसाहार के विरुद्ध खुल्लमखुल्ला वैष्वमत का प्रचार किया। उनकी जीवनी का सार समस्तरूपेण रामचन्द्र जी की जीवनी थी और उन का निश्चय था कि वह कदापि मांसाहारी न होंगे।

इनके मत में १४८८ ईस्वी में कबीर हुए। उसने भी इस्लाम मत छोड़कर वैष्णव मत को स्वीकार किया और मांसाहारादि सिद्धान्तों का खंडन शुरू किया।

कबीर जी का वचन है कि—

इन झटका उन बिस्मल कीना दया दोहां से भागी।
कहे कबीर सुनो भाई साधो आग दुहां घर लागी॥

जीव बध धर्म कर थापियो अधर्म कहां कहो भाई।
आपस को मुनिवर कर थापियो का को कहत क़साई॥

कबीरा तेरी झोंपड़ी गलकटियन के पास।
करेंगे सो भरेंगे तू क्यों भयो उदास॥

इन्हीं दिनों अथवा उससे कुछ पूर्व एक साधु हो गये। उन्होंने भी कई अच्छी बातों का प्रचार किया जिनका नाम दादू था उनका वचन है कि—

पाहन परमेश्वर क्या कराए आत्माघात।
सत्य कहुं संशय नहीं सो प्राणी दोज़ख जात॥

इससे कुछ पूर्व एक महात्मा जंभा जी देहली के आसपास हुए उन्होंने इसलामी विद्वानों से शास्त्रार्थ करके बहुत कुछ उन्हें अनुकूल बनाया और सैकड़ों व्यक्तियों को इस्लाम मत से घृणा दिलाकर वैदिक धर्म का अनुयाई बनाया और ऐसा ही उपदेश चेतन ने किया। किन्तु वाममार्गी संसार से सर्वथा समाप्त न हुए वह पूर्ववत् छिप-छिपकर अपना काम जितना हो सका करते रहे और बदकारी में पग धरते रहे।

मुसलमानी अत्याचार के युग में एक और महात्मा ऊधो जी हो गए हैं। उन्होंने भी सहस्रों मनुष्यों को मूर्ति पूजा, मांसाहार और जीव ब्रह्म की एकता से हटा कर ईश्वर की भक्ति का उपदेश दिया किन्तु इस्लाम मत का खंडन भी साथ ही करते थे।

इसी कारण से बादशाह की आज्ञा से उनका वध कराया गया। बाबर के समय में बाबा नानक जी भी जहाँ तक हमें ज्ञान है—मांसाहार का खंडन किया और मांसाहारियों को इसके छोड़ने का उपदेश दिया जैसाकि—

भंग मछली, सुरापान जो जो प्राणी खाए।
धर्म नेम जितने किये, सभी रसातल जाए॥

जे रत लगे कपड़े, जामा होए पलीत।
जो रत खावे मानसा, तन निर्मल कहां चीत॥

असंख्य मूर्ख अन्ध घोर,
असंख्य चोर हराम खोर।
असंख्य अमर को जाएं चोर,
असंख्य गल बढ़ हत्या कमाएं।
असंख्य पापी पाप कर जाएं,
असंख्य म्लेच्छ मलबिख खाएं :
खुश खाना है खिचड़ी जामें पड़े टुक लोन
मांस पराया खायके गला कटावे कौन।
मांस खानड़े कर नवाज,
छुरी व गाएं तन गल ताग।
तन घर ब्राह्मण पूरे नाद,
उनां नही आधे आधे स्वाद।
कूड़ी रास कूड़ा व्योपार,
कूड़ बोलें करें आधार।
शर्म धर्म का डेरा दूर
नानक कूड़ रहया भरपूर।
मत्थे टीका तेड़ धोती लगई,
हथ छुरी जगत् क़साई।

५०० वर्ष का समय हुआ कि सायणाचार्य और उसके निकट समय में ही महीधर हुए। यह दोनों वाममार्गी थे। वह राजाओं को वश में करके वेदों के द्वारा वाममार्ग के प्रचार में कटिबद्ध हो गये और उन्हीं दिनों में एक गोसाई शवर हुए। उन्होंने भी वाममार्गी होने के कारण मांस शराब का खूब प्रचार किया। पहिले ने ऋग्वेद पर भाष्य बनाया और दूसरे ने यजुर्वेद और तीसरे ने मीमांसा पर भाष्य किया। हम अधिक विस्तार नहीं करना चाहते कि उनके ग्रन्थों से प्रमाण लिखें। ग्रन्थों के नाम से ही आप समझ जावेंगे। महीधर ने मंत्र महोदधि बनाया। अतः आप जान सकते हैं कि उन्होंने इन भाष्यों में सत्यधर्म का किस प्रकार सत्यानाश करने का यत्न किया। बहुत कुछ वाममार्ग की चर्चा इनके भाष्यों में से भी हुई और लोग सद्धर्म से पदच्युत हुए और यह ज्ञान शून्य आंधी दिन प्रतिदिन बढ़ती गई। इन्हीं भाष्यों की कृपा है कि पं० जगन्नाथ शास्त्री जैसे वैश्याओं के अन्धकूप में डूबकर मुसलमान हो गए।

स्वामी दयानन्द जी महाराज और मांस

पंडित धर्मनिरपेक्ष नास्तिक, मुहम्मदी वा ईसाई हो जाते और वदिकधर्म को लोग घृणा की दृष्टि से देखकर तटस्थ हो जाते कि एकाएक महात्मा जीव ने इस संसार में पवित्र तिथि १८८१ संवत् विक्रमी गुजरात में जन्म लिया और पूर्ण युवावस्था में सत्यशास्त्रों के पठन-पाठन और वेदों के अभ्यास से निश्चय कर लिया कि इस समय की समस्त अवस्था सर्वथा वेदों के विरुद्ध है। जैसा कि काशी आदि में सैकड़ों पंडितों के साथ शास्त्रार्थ कर सबके पोल खोल दिये। किसी कवि के कथनानुसार :—

किया काशी आदि में शास्त्रार्थ भारी।
हुए शान्त सब पोप दुष्कर्मचारी ।।
दया और आनन्द है मूल जिनकी।
घोर धर्म जिज्ञासु अब याद तिनकी ।।

उन्होंने १८७५ ई० के शुरू में बम्बई नगरी में सर्वतः प्रथम आर्यसमाज की स्थापना की और कई व्याख्यान मद्य मांसादि के खंडन में दिये और इसी प्रकार मूर्ति पूजादि वेद विरुद्ध विषयों पर भी प्रवचन हुए। इसके पश्चात् जौलाई १८७५ ईस्वी में पूना नगर में व्याख्यान दिये जो उसी समय मरहठी भाषा में प्रकाशित हो गए।

८ जौलाई १८७५ ईस्वी—"अहिंसा परमोधर्मः। धृतिः क्षमा इत्यादि, धर्म और अधर्म अनेक हैं। परन्तु उनमें विशेष रीति से यह धर्म और यह अधर्म है—उसको हम प्रथम कहते हैं—

प्रथम अहिंसा का लक्षण :—

अहिंसा सत्यास्तेय ब्रह्मचर्यापरिग्रहा यमाः।

(योगशास्त्र पाद २ सूत्र ३०)

अहिंसा इसका अर्थ सामान्यतः यह है कि पशुओं को न मारना किन्तु व्यास जी ने इसका विशेष अर्थ इससे बढ़कर किया है कि :—

सर्वथा सर्वदा सर्वभूतानामनभिद्रोहः अहिंसाज्ञेया।

अर्थात् सब प्रकार और सदा सब प्राणियों से वैर विरोध का त्याग अहिंसा है। (पृ० १)

पुनः एक और व्याख्यान २० जौलाई १८७५ को संस्कार पर दिया। उसमें यज्ञ की व्याख्या करते हुए कहा कि "यज्ञ में मांस नवीन पंडितों की रचना है। होम देवताओं का हो और मांस पशुओं का डाला जाए और यह व्यवस्था परमेश्वर की हो, हमें विश्वास नहीं क्योंकि परमेश्वर की व्यवस्था में ऐसा अन्याय नहीं हो सकता। यह तो हमने पशुओं के न मारने के संबंध में कहा किन्तु क्या किसी होम में पशु मारे भी जाते हैं? इस शंका का उत्तर देते हैं। होम दो प्रकार का है। एक राज धर्म सम्बन्धी, दूसरा सामाजिक। अब तक हमने सामाजिक होम का निरूपण किया और शेष रहा राज धर्म सम्बन्धी होम, उसकी व्यवस्था सारी की सारी पृथक् है। उसमें पशुओं के मारने की क्या प्रतिष्ठा है? उसमें मनुष्य भी मारे जाते हैं। अर्थात् युद्ध संबंधी सहस्रों मनुष्यों के प्राण लेने राज धर्म में उचित हैं। जो जंगली दुष्ट पशु खेतों को बरबाद करते हैं उनका मारना ठीक है और जंगली सिंह व्याघ्रादि की हत्या भी यथार्थ है। किन्तु होम सम्बन्धी मांसाहार जो कहते हैं वह सर्वथा अयोग्य है किसी प्राणधारी को कष्ट देना कैसे हो सकता है? किसी जीव के प्राण लेने से यह धर्म ईश्वरीय नहीं हो सकता।"

(पृ० ६)

स्वामी जी ने जो उपदेश बम्बई में १८७५ ईस्वी में दिए और जिस सिद्धान्त पर बम्बई आर्य समाज स्थापित हुआ, उसी के अनुसार लीलाधर हरिदास ने एक पुस्तक सत्यासत्य विचार १८७६ ईस्वी में प्रकाशित कराई। उसके पृष्ठ २८ से ३४ तक मद्यमांस आदि का खंडन विद्यमान है। पुनः स्वामी जी

ने भाद्रपद १६३३ तदनुसार सितम्बर १८७६ ईस्वी में भूमिका लिखनी आरंभ की उसके पृष्ठ १७१, १७२ पर लिखा है कि :—

"सब भूतों (प्राणियों) से सदा सर्वदा सर्वप्रकारेण वैर न करना यह अहिंसा है जो उपासक के लिए आवश्यक है—संक्षेपतः।"

पुनः पृष्ठ २७६ से २७८ तक मद्य मांसादि का खंडन करते हुए लिखते हैं कि :—

"इत्यादि अनेक अनर्थ कथा तन्त्र ग्रन्थों में लिखी हैं वह सब वेदादि शास्त्र, युक्ति प्रमाणों से विरुद्ध होने के कारण श्रेष्ठ पुरुषों के ग्रहण करने के योग्य नहीं क्योंकि मद्यादि सेवन से मुक्ति कभी नहीं हो सकती परन्तु ज्ञान का नाश और दुःख अर्थात् नरक की प्राप्ति दीर्घ काल तक होती है।"

संवत् १६३४ तदनुसार १८७७ ईस्वी में स्वामी जी ने आर्योद्देश्य रत्नमाला लिखी और अमृतसर में प्रकाशित कराई। उसके अंक ४१ में लिखा है कि :—

"(आर्य) जो श्रेष्ठ स्वभाव, धर्मात्मा, परोपकारी, सत्यवादी, गुणयुक्त और आर्यावर्त देश में सब दिन से रहता हो वह आर्य है।"

अंक ५७ में परोपकारी की व्याख्या की है कि :—

"अपनी सामर्थ्य से जो तन मन धन से प्रयत्न करना है वह परोपकार कहलाता है।"

अंक ४२ :—

"दस्यु अनार्य जो अनाड़ी, आर्यों के स्वभाव और निवास से पृथक्, डाकू, चोर, हिंसक कि जो दुष्ट मनुष्य हैं वह दस्यु कहाते हैं।"

पुनः स्वामी जी ने लाहौर में जो १८७७ ईस्वी में व्याख्यान दिए हैं उनमें से एक व्याख्यान में कहा कि मैं जो ऐसा दृढ़ और हृष्ट पुष्ट हूं मांस खाने और हाड चबाने से नहीं हुआ किन्तु अन्नादि के खाने और ब्रह्मचर्य से हुआ।"

और भी कई बार उन्होंने मांस का खंडन किया।

पुनः स्वामी जी ने गोकरुणानिधि सम्वत् १६२७ तदनुसार १८८० ईस्वी में लिखी और यही ग्रन्थ उनके जीवन में दूसरी बार २० अप्रैल १८८३ ईस्वो तदनुसार विसाख १६३६ विक्रमी में छपा। उसके पृष्ठ ६ से १४ तक प्रत्येक प्रकार के मांस शराब का बड़ी प्रबल युक्तियों से खंडन किया है।

पुनः स्वामी जी ने भाद्रपद शुक्ल संवत् १६३६ तदनुसार १३ सितम्बर १८८२ ईस्वी को सत्यार्थ, प्रकाश समाप्त किया। उसमें निम्न स्थलों में मांस का खंडन लिखा है।

पृष्ठ ४५ पर लिखते हैं कि—

"क्योंकि जैसे पशु बलवान् होकर निर्बलों को दुःख देते और मार भी डालते हैं। जब मनुष्य शरीर पाके वैसा ही कर्म करते हैं तो वह मनुष्य स्वभाव युक्त नहीं किन्तु पशुवत् हैं और जो बलवान् होकर निर्बलों की रक्षा करता है वही मनुष्य कहाता है और जो स्वार्थवश होकर प्राणीमात्र की हिंसा करता रहता है वह जानो पशुओं का भी बड़ा भाई है।" (सत्यार्थप्रकाश की भूमिका)

पृष्ठ २७ पर लिखा है कि :—

"माता और पिता को अति उचित है कि गर्भाधान के पूर्व मध्य और पश्चात् मादक द्रव्य, मद्य,

दुर्गन्ध, रूखे, बुद्धिनाशक पदार्थों को छोड़कर जो शान्त, आरोग्य, बलबुद्धि, पराक्रम और सुशीलता से सभ्यता को प्राप्त करें वैसे घृत, दुग्ध, मिष्ट, अन्न, पान (पेय) आदि श्रेष्ठ पदार्थों का सेवन करें कि जिससे रज वीर्य सब दोषों से रहित होकर अत्युत्तम गुण युक्त हो।" (समुल्लास ६)

पृष्ठ ३४, ३५ में लिखा है कि :—

"जिस प्रकार आरोग्य विद्या और बल प्राप्त हो उसी प्रकार भोजनाछादन और व्यवहार करें करावें अर्थात् जितनी क्षुधा हो उससे कुछ न्यून भोजन करें। मद्यमाँसादि के सेवन से पृथक् रहें।" (समुल्लास २)

पृष्ठ ५०, ५१ में ब्रह्मचारी और ब्रह्मचारिणी का वर्णन करते हुए विशेष रूप से मद्य, मांस, प्राणीहिंसा, द्यूतादि का निषेध किया है। (समुल्लास २)

पृष्ठ १४४-१४६ तक राजधर्म का वर्णन करते हुए कहते हैं :—

"काम से उत्पन्न विषयों में से सब से बड़े यह हैं, नशाबाजी, जुआबाजी, दुराचार, शिकार खेलना, यह सारे के सारे एक दूसरे से बढ़ कर बुरे हैं। दुष्ट स्वभाव में फंस जाने से मर जाना अच्छा है। (संक्षेप) (समुल्लास ६)

पृष्ठ २६४ पर लिखा है कि :—

जो, लोग मांस भक्षण और मद्य पान करते हैं, उनके शरीर और वीर्यादि धातु भी दुर्गन्धादि से दूषित हो जाते हैं। अतः इनके संग करने से आर्यों को भी यह कुलक्षण न लग जाए यह तो ठीक है।" (सम्मुल्लास १०)

"इतना अवश्य चाहिये कि मद्य मांस का ग्रहण कदापि भूल कर भी न करें।" (समुल्लास १० पृ० २६५)

"हां, मुसलमान ईसाई आदि मद्यमांसाहारियों के हाथ के खाने में आर्यों को भी मांसादि खाना पीना अपराध पीछे लग पड़ता है। परन्तु आपस में आर्यों का एक भोजन होने में कोई भी दोष नहीं दीखता।" (समुल्लास १० पृष्ठ २६६)

"और मद्य मांसाहारी म्लेच्छ कि जिन का शरीर मांस के परमाणुओं से पूरित है इनके हाथ का न खावें। (समु० १० पृ० २६७)

गाय, बकरी, हाथी, घोड़े, ऊंट, भेड़, गधी आदि से भी बड़े उपकार होते हैं इन पशुओं के मारने वालों को सब मनुष्यों की हत्या करने वाला जानियेगा।" (समु० १० पृ० २६८)

(प्रश्न) जो सभी अहिंसक हो जाएं तो व्याघ्रादि पशु इतने बढ़ जाएं कि सब गाए आदि पशुओंको मार कर खा जाएं। तुम्हारा पुरुषार्थ ही व्यर्थ हो जाए।

(उत्तर) यह राज पुरुषों का काम है कि हानिकारक पशु वा मनुष्य हों तो उन को दंड देवें और प्राण से भी वियुक्त कर देवें।

(प्रश्न) फिर क्या उनका मांस फेंक दें ?

(उत्तर) चाहे फैंक दें चाहे कुत्ते आदि मांसाहारियों को खिलावें वा जला दें अथवा कोई मांसाहारी खावे तो भी संसार की कुछ हानि नहीं होती किन्तु उस मनुष्य का स्वभाव मांसाहारी होकर हिंसक हो सकता है। जितना हिंसा, चोरी विश्वासघात, छल, कपटादि से पदार्थों को प्राप्त होकर भोग करना है वह अभक्ष्य और अहिंसा धर्मादि कर्मों से प्राप्त होकर भोजनादि करना भक्ष्य है। जिन पदार्थों से स्वास्थ्य, रोगनाशक, बुद्धि, बल, पराक्रम वृद्धि और आयु हो जाए, उन तंडुलादि गन्दुम, फल, मूल, कन्द, दूध, घी, मीठा आदि पदार्थों का सेवन यथायोग्य पाकमेल करके यथोचित समय पर सदाहार भोजन करना सब भक्ष्य कहाता है। जितने पदार्थ अपनी प्रकृति से विरुद्ध विकार करने वाले हैं उन उनका सर्वथा त्याग करे और जो-जो जिस-जिस के लिये विहित है उन-उन पदार्थों का ग्रहण करना यह भी भक्ष्य है।" (समु० १० पृ० २६८)

"जैसे कि मद्य सेवन, बालावस्था में विवाह और स्वेच्छाचारादि दोष बढ़ जाते हैं। समु० ११ पृ० २७६)

पश्चात् जब विषयासक्त हुए तो मांस मद्य का सेवन गुप्त-गुप्त करने लगे।"

(समु० ११ पृ० २८२)

"अर्थात् यज्ञ में मांस खाने में दोष नहीं ऐसे पामरपन की बातें वाममार्गियों ने चलाई हैं। मांस भक्षण करने, मद्य पीने, परस्त्री गमन करने आदि में दोष नहीं यह कहना छोकरापन है क्योंकि बिना प्राणियों के पीड़ा दिये मांस प्राप्त नहीं हो सकता और बिना अपराध के पीड़ा देना धर्म का काम नहीं।" (समु० ११ पृ० २८६-२८७)

"पशु मारना वेदादि सत्य शास्त्रों में कहीं नहीं लिखा।" (समु० १२ पृ० ३९६)

और जो मांस खाना है यह भी इन्हीं वाममार्गी टीकाकारों की लीला है। अतः उनको राक्षस× कहना उचित है परन्तु वेदों में कहीं मांस खाना नहीं लिखा।

मिथ्या बातों का पाप उन टीकाकारों को और जिन्होंने वेदों को जाने, सुने बिना मनमानी निन्दा की है—निस्संदेह लगेगा। सत्य तो यह है कि जिन्होंने वेदों से द्रोह किया और करेंगे वह अवश्य अविद्या रूपी अंधकार में पड़ के सुख के स्थान पर दारुण दुःख जितना पावे, उतना ही न्यून है। अतः मनुष्यमात्र को वेदानुकूल चलना समुचित है। जो वाममार्गियों ने मिथ्या कपोल कल्पित करके वेदों के नाम से अपना प्रयोजन सिद्ध करना अर्थात् स्वरुचि के अनुसार मद्य मांस खाने और पर स्त्रीगमन करने आदि दुष्ट कार्यों की प्रवृत्ति होने के अर्थ वेदों को कलंक लगाया। इन्हीं बातों को देखकर चारवाक, बौध तथा जैनी लोग वेदों की निन्दा करने लगे और पृथक् वेद विरुद्ध, अनीश्वरवादी अर्थात् नास्तिक मत चला लिया।

जो चार वाक आदि वेदों का मूल अर्थ विचारते तो मिथ्या टीकाओं को देखकर सत्य वेदोक्त

× राक्षस शब्द संस्कृत का है। वैदिक में इसके अर्थ निम्न हैं।

अमर्षणमननुबन्धं कोप प्रहारं क्रूरमा················
मांस प्रयतं स्वयं नायासं बहुलमीर्षतं राक्षसं विद्यात्॥

सहनशक्ति से रहित, हठी, क्रोध से मारने वाला, कठोर भोजन में रुचि रखने वाला, मांस प्रेमी, सोने के लिये श्रमशील, ईर्षालु को राक्षस कहते हैं।

मत से क्यों हाथ धो बैठते ? बिचारे क्या करें ? विनाश काले विपरीतबुद्धिः ।" जब नष्ट-भ्रष्ट होने का समय आता है तब मनुष्य की विपरीत बुद्धि हो जाती है ।" (समुल्लास १२ पृष्ठ ४०८)

ईसाईयों और यहूदियों के खुदा के सम्बन्ध में मांस सेवन का दोष लगाया है और मांस सेवन पर आपत्ति भी उठाई है। (देखो समु० १३ धारा ६, १५ पृ० २७६, २८१)

पृष्ठ ५३१ में मुसलमानों पर मांस सेवन के सम्बन्ध में आक्षेप किये हैं। (देखो समु० १४)

पृष्ठ ५७६ के नम्बर २४ में स्वमन्तव्य के वर्णन में तीर्थ, यमादि का वर्णन है और यम की व्याख्या (देखो पृष्ठ ४७ समुल्लास ३)

नम्बर २८—यज्ञ की व्याख्या जिसमें सब जीवों को सुख पहुंचाना है। उसको उत्तम समझता हूं।

और ऐसा ही नम्बर १३, १४ में भी इसी की ओर इशारा है। और अन्त में दूसरे प्रकरण का प्रमाण दिया है। (देखो पृष्ठ ५८१ और दूसरे प्रकरण में देखो मांस का खंडन)

(पृ० ३४ पर) प्रसिद्ध अन्वेषक पं० तारानाथ तर्क वाचस्पति अपने कोष में लिखते हैं कि :—

वामाचारः—वामः वेदादिविरुद्धाचारः ।
तंत्रोक्तमद्यमांसादि सेवनरूप आचरणं ॥

(शब्दस्तोममहानिधि द्वितीय वार १८७ ईस्वी कलकत्ता पृष्ठ १०१६)

यह मत वाममार्ग वेदादि सत्य शास्त्रों के विरुद्ध पद्धति को कहते हैं। यह सर्वथा तन्त्रों के अनुसार है। इस मत में मद्य मांसादि का सेवन करना पड़ता है।

वेद से मांस खंडन

(१) **य आमं मांसमदन्ति पौरुषेयं च ये क्रवि ।**
गर्भान्खादन्ति केशवास्तानितोनाशयामसि ॥ अथर्व ८।६।१५

जो कच्चे मांस को खाते हैं और जो मनुष्य के निमित्त मांस को अर्थात् पका कर खाते हैं और जो अंडों को खाते हैं, ऐसे दुष्टों का मैं नाश करता हूं।

(२) **यथामांसं यथा सुरा यथाक्षापरिदेवने ।**
यथा पुंसो वृषण्यतः स्त्रियां निहन्यते मनः ॥
एवाते अघ्न्येमनोधिवत्से निहन्यताम् ॥ अथ० ६।१०।१

जैसे मांस, जैसे मद्य, जैसे द्यूत, (प्राणी और अप्राणी से दाओ लगाना) और जैसे व्यभिचार से मन हनन होता है। ऐसे ही हे स्त्री ! तेरा मन भी पर पुरुष में हनन होता है।

इस वेदमंत्र की व्याख्या मनुस्मृति में की गई है :—

पानमक्षाः स्त्रियश्चैव मृगया च यथाक्रमम् ।
एतत्कष्ट तमं विद्याचचतुष्कं कामजे गणे ॥ मनु० ७।५०

नशा पीना, द्यूत क्रीडा, दुराचार, शिकार खेलना यह चारों काम से उत्पन्न होने वाले दोष एक दूसरे के मुकाबला में बहुत दुःखदायक हैं।

पुनः मनु ७।५३ में स्पष्ट बताया है कि दुष्ट व्यसनों में फंसने से मर जाना अच्छा है क्योंकि जो दुष्टाचारी पुरुष हैं, जितना वह अधिक जियेगा, उतना अधिक पाप करेगा।

(३) **ये वाजिनं परिपश्यन्ति पक्वं य ईमाहुः सुरभिनि हरेति।**
ये चार्वतो मांसभिक्षामुपासते उतो तेषामभिगूर्तिन इन्वतु ॥

ऋ० १।१६२।१२

भावार्थ :—जो लोग अन्न और जल को शुद्ध करना, पकाना और उसका भोजन करना जानते और मांस को छोड़कर भोजन करते हैं वह उद्यमी होते हैं।

(४) **यन्नीक्षणं मांस्पचन्या उखाया या पात्राणि यूष्ण आसेचनानि।**
ऊष्मण्यापिधाना चरूणामङ्काः सूनाः परिभूषन्त्यश्वम् ॥ ऋ० १।१६२।१३।

भावार्थ :—जो मनुष्य मांसादि पकाने के दोष से रहित, बरतनों के धरे जलादि का प्रयोग करने अग्नि को जलाने और उसको ढकनों से ढांपने को जानते हैं, वह पाक विद्या में कुशल होते हैं।

(५) यजु ३५।३६ पर स्वामी जी लिखते हैं कि—"यदि कोई घोड़े आदि उपकारी पशुओं और उत्तम पक्षियों का मांस खावे तो उनको यथापराध अवश्य दंड देना चाहिये।"

(६) इसी प्रकार यजु० २५।३७ पर भावार्थ में लिखते हैं कि :—

"हे मनुष्यो ! जैसे विद्वान् जन मांसाहारियों को निवृत्त कर घोड़े आदि पशुओं की वृद्धि और रक्षा करते हैं। वैसे तुम भी करो और अग्नि आदि विघ्नों से पृथक् रखो।

(७) **प्रजां में पाहि शंस्य पशून्मे पाहि।** यजु ३।३७

हे जगदीश्वर ! आप मेरी प्रजा और पशुओं की रक्षा कीजिये।

(८) **मित्रस्याहं चक्षुषासर्वाणिभूतानि समीक्षे ॥** यजु ३६।

मैं मित्र की दृष्टि से सब प्राणियों को भले प्रकार देखो।

(९) **शन्नोअस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे ॥** यजु ३६।८

हे प्रभो ! आपकी कृपा से दोपाए और चौपाए सबका कल्याण हो।

(१०) यजु १३।५१ का भावार्थ :—

"मनुष्यों को उचित है कि बकरी और मोर आदि श्रेष्ठ पशु-पक्षियों को न मारें और उनकी रक्षा करके उपकार के लिये संयुक्त करें।

(११) यजु १३।५० का भावार्थ :—

हे राजन् ! जिन भेड़ आदि के रोम और त्वचा मनुष्यों के सुखों के लिये होते हैं और जो ऊंट भार उठाते हैं। मनुष्यों को सुख देते हैं। उनको जो दुष्ट जन मारना चाहें। उनको संसार के दुःखदायी समझो और उनको अच्छे प्रकार दंड देना चाहिये।

(१२) यजु १३।४९ का भावार्थ :—

हे राजपुरुषो ! तुम लोगों को चाहिये कि जिन बैल आदि पशुओं के प्रभाव से खेती आदि कार्य होते हैं और जिन गो आदि से दूध घी आदि उत्तम पदार्थ होते हैं और जिनके दूधादि से सब प्रजा की रक्षा होती है उनको कभी मत मारो और जो जन इन उपकारक पशुओं को मारें उनको राजा आदि न्यायाधीश अत्यन्त दंड देवें।"

(१३) यजु १३।४८ का भावार्थ :—

मनुष्यों को उचित है कि एक खुर वाले घोड़े आदि पशुओं और उपकारक वन के पशुओं को कभी न मारें। जिनके मारने से जगत् की हानि और न मारने से सबका उपकार होता है, उनका सदैव पालन-पोषण करे और जो हानिकारक पशु हों, उनको मारे।

(१४) यजुर्वेद १३।४७ का भावार्थ :—

कोई भी मनुष्य सबके उपकार करने वाले पशुओं को कभी न मारें, किन्तु इनकी अच्छे प्रकार रक्षा कर, और इनसे उपकार लेकर सब मनुष्यों को आनन्द देवें। जिन जंगली पशुओं से गांव के पशु, खेती और मनुष्यों को हानि हो, उनको राजपुरुष मारें और बन्धन करें।

(१५) ऐसा ही अथर्ववेद कांड ५ वर्ग २१ मंत्र २ तथा कांड २ वर्ग ३५ मंत्र ५ और कांड १२ वर्ग २ मंत्र १५ में स्पष्ट रूप से मोर, बकरा, कोंच, भेड़, घोड़े, गाय, बकरी आदि दुःख न देने वाले पशुओं के मारने का कठोरता से निषेध किया गया है। और कांड ४ वर्ग ३६ मंत्र ७-८ और कांड ५ वर्ग २९ मंत्र १०, १२ में मांस खाने वालों को राक्षस, पिशाच और दुष्ट घोषित किया गया है।

इसी प्रकार कणाद मुनि वैशेषिक शास्त्र में लिखते हैं कि :—

तद् दुष्ट भोजने न विद्यते ।। वैशे० ६।१।६

वह आत्मिक ज्ञान दुष्ट भोजन में नहीं है।

दुष्टं हिंसायाम् ।। वैशे० ६।१।७

दुष्ट भोजन वह है जिसमें हिंसा हो।

तस्य समाभिव्याहरतो दोषः ।। वैशे० ६।१।८

क्योंकि उसके खाने और खाने वाले के संग से दोष लगता है।

तददुष्टे न विद्यते ।। वै० ६।१।९

किन्तु हिंसा से रहित भोजन में वह दोष नहीं है।

पुनर्विशिष्टे प्रवृत्तिः ।। वै० ६।१।१०

और हिंसा रहित भोजन से ही शुभकर्मों में प्रवृत्ति होती है।

गौतम मुनि जी ने लिखा है—पृष्ठ ३५ :—

तत्र सामान्यानिधर्मे श्रद्धा अहिंसाभूतहितत्वं सत्य वचनमस्तेयम् ।।

इसी के अनुसार मनु १०।६३ में लिखा है कि अहिंसा, सत्य, अस्तेय, शौच, इन्द्रिय-निग्रह, यह साधारण धर्म चारों वर्णों के लिये है।

महामुनि पतंजलि जी की सम्मति :—

अहिंसा सत्यास्तेय ब्रह्मचर्यापरिग्रहाः यमा ।। योग २।३०

अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह यह पांच यम हैं।

तत्राहिंसा सर्वथा सर्वदा सर्वभूतानामनभिद्रोहः ।
उत्तेर च यमनियमास्तन्मूलास्तत्सिद्धि परतयैवतत्प्रति पादनाय प्रतिपादयन्ति ।

इस पर व्यास जी ने भाष्य किया है कि सब प्रकार से सब काल में सर्व प्राणियों के द्रोह के त्याग को अहिंसा कहते हैं। यह अहिंसा शेष सत्यादि यमों का मूल है। इसके सिद्ध होने से वह सब सिद्ध होते हैं और वह सब इसी की पुष्टि करने के लिये उपदेश किये गये हैं।

इस व्यासभाष्य पर भोज देवराज अपनी वृत्ति में कहते हैं कि :—

तत्र प्राण वियोग प्रयोजन व्यापारो हिंसा ।
साचसर्वानर्थहेतुस्तदभावोऽहिंसा ।।

किसी प्राणी के प्राण का वियोग करना इसका नाम अहिंसा है। वह सब अनर्थों का कारण है। उसके न करने को अहिंसा कहते हैं। हिंसा सब प्रकार से त्यागने योग्य है।

समाधि प्राप्त करने में प्रथम साधन यम है और यम में प्रथम उपदेश अहिंसा है। (देखिये इससे स्पष्ट रूप से प्रगट है कि मांसाहार ईश्वर प्राप्ति की जड़ काटतो है)

जाति देशकाल समयानवच्छिन्नाः
सार्वभौमा महाव्रतम् ।। योग २।३१

जाति, देश, काल और समय की अपेक्षा से अहिंसा चार प्रकार की होती है अतः सब अवस्थाओं में, सर्व देशों में प्रत्येक समय और प्रत्येक अवस्था में अहिंसा धर्म का पालन करना चाहिये।

वितर्का हिंसादयःकृतः कारितानुमोदिता ।
लोभ क्रोध मोहपूर्वका मृदुमध्याधिमात्रा ।।
दुःखाज्ञानानन्त फला इति प्रतिपक्षभावनम् ।। योग २।३४

मांस खाने के लिये हिंसा करना कराना व अनुमति देना। लोभ, मोह, क्रोध के भय से हिंसा के बहुत भेद हैं। वह सब ही दुःख अज्ञानादि अनन्त पाप के देने वाले हैं। अर्थात् इन सब प्रकार की हिंसा करने से कर्ता को अनन्त दुःख और अज्ञानरूपी फल प्राप्त होते हैं।

अहिंसा प्रतिष्ठायां तत्सन्निधौ वैरत्यागः । योग २।३५

जब अहिंसा प्राणीमात्र को किसी प्रकार का दुःख न देना) यह धर्म निश्चय हो जाता है। तब उस पुरुष के मन से वैर भाव छूट जाता है।

विपक्षियों की प्रतिपत्तियों का समाधान

अपूपवान्मांसवांश्चरेह सीदतु ।
लोककृत. पथिकृतोयजामहे येदेवान्तं हुतभागा इह स्था ॥
अथ १८ कांड, वर्ग ४ मन्त्र २

यं ते मन्थं यमोदनं यन्मांसं निपृणाभिते ।
तेते सन्तु स्वधावन्तो मधुमन्तोघृतश्चुतः ॥
अथ० कांड १८ वर्ग ४ मन्त्र ४२

मंत्र २० के कठिन शब्दों के अर्थ :—

(अपूपवान्) तिलादि (मांसवान्) मृत शरीर (देखो उणादि कोष ३।६४)

(चरु) हवन की सामग्री (सीदतु) इसके अर्थ नष्ट करने के हैं (देखो धातु पाठ पृष्ठ १२ पंक्ति २४)

यह दोनों मंत्र एक ही कंडिका के हैं और यह सब सोलहवें संस्कार अर्थात् मृतक शरीर के जलाने के सम्बन्ध में हैं। इस कंडिका में २९ मंत्र हैं।

हम पाठकों से इस सारी कंडिका देखने की प्रार्थना करते हैं और कुछ मंत्रों की प्रतीकें अपने अर्थ के समर्थन में उपस्थित करते हैं।

इस वर्ग का प्रथम मंत्र जीव को सम्बोधन करके पढ़ा जाता है, जिस जीव ने शरीर छोड़ दिया है। जिसके अर्थ यह हैं कि परमेश्वर जगत् स्रष्टा के भंडार में पितरों के मार्ग से गमन कर।

दूसरे मंत्र में देवयान और स्वर्गलोक शब्द मौजूद हैं जिसका अर्थ यह है कि तू उन दो मार्गों से जा। जिनसे भजन करने वाले स्वर्ग की अवस्था प्राप्त करते हैं। दो मार्ग अर्थात् पितृयान और देवयान प्रसिद्ध हैं (विस्तार देखो वेदभाष्य भूमिका पृ० २०५)

तीसरे मंत्र में भी स्वर्ग यात्रा (सुख प्राप्ति) आदित्य आदि शब्द विद्यमान हैं। दसवें मंत्र में भी वर्णन है कि हे अग्ने ! आप इस जीव को स्वर्गलोक में सैकड़ों सूक्ष्म शक्तियों से विद्युद् रश्मियों द्वारा ले जाओ जहां मुक्त जीव आनन्द भोगते हैं। प्राचीन ऋषि और आजकल के उत्तम दार्शनिक विद्वान् सूर्य की किरनों द्वारा जीव की गति मानते हैं। (पुनर्जन्म के विषय में दी आफ़ ट्रुथ का अध्ययन करो)

मंत्र नं० २० का अनुवाद—

तिल और हवन की सामग्री के साथ मृतक शरीर को दो।

इसमें मांस खाने अथवा जीव हत्या का कदापि वर्णन नहीं।

मंत्र नं० ४३ का अनुवाद :—

जो घी चावल, मृत शरीर का मांस तुझ में डालता हूं, वह सब प्रशस्थ अन्न माधुर्य और जल के झरने वाले हूं।

यह सारी कंडिका मृतक संस्कार के बारे में है। अतः इससे मांस भक्षण सिद्ध करना बड़ो भारी

भूल है। यह तो ऐसी ही बात है जैसे किसी ने भूखे से पूछा कि चांद और सूर्य क्या हैं ? उत्तर दिया कि दो रोटियां। ऐसे ही जहां मांस का शब्द देखा। न लेख से प्रयोजन न उसके अभिप्राय की चिन्ता। माँसाहार का ध्यान आ गया।

एतदुवास्वादीयो यदाधिगवं क्षीरं वा मांसं वा तदेवनाश्नीयात्

अथर्व कांड ६ वर्ग ६ कंडिका ३ मंत्र ३९

(कठिन शब्दों के अर्थ) (स्वादीय:) स्वादयुक्त (अधिगवम्) अधि=ऊपर (देखो वेदांग प्रकाश पृ० ३) जैसे अधिराज=राजाओं के ऊपर इत्यादि। गवम् गो से बना है। अज प्रत्यय लगता है। गो के अर्थ विष्ठा या गोवर के हैं (देखो धातु पाठ पृष्ठ २४ पंक्ति १८) (क्षीर) दूध, मांस के अर्थ गोश्त (नाश्नीयात्) नहीं खाना चाहिये। अश् धातु खाने के अर्थ में है। जैसे फलाशी सभा और अन्न-प्राशन संस्कारादि।

(शब्दार्थ) वह दूध जिसमें गोबर अथवा मूत्र× ऊपर से मिल गया हो वह यदि स्वादु भी हो और मांस, उनको कभी नहीं खाना चाहिये।

कुछ वैदिक अर्थ पद्धति को न जानने वाले लोग किसी के बहकावे में आकर आक्षेप करते हैं कि इस मंत्र में "अतिथेः पूर्वम्" अर्थात् अतिथि से पूर्व की अनुवृत्ति आती है। क्योंकि यह शब्द ऊपर के मंत्र में आये हैं, किन्तु यह आक्षेप कई कारणों से ठीक नहीं।

प्रथम कारण:—वेद अष्टाध्यायी के सूत्र नहीं हैं कि वह स्वयं अपना अर्थ न दे सकें कि जब तक पूर्व सूत्रों के शब्दों की अनुवृत्ति न लाई जाए। और वेद के किसी मंत्र में अकारण अनुवृत्ति लाने की पद्धति नहीं है।

द्वितीय कारण :—वेद में अनुवृत्ति लाने का क्रम नहीं है क्योंकि इनमें कर्ता कर्मादि विद्यमान रहते हैं।

तृतीय कारण :—इस कंडिका का प्रत्येक मंत्र स्वतः पूर्ण है।

चतुर्थ कारण :—वेद में परस्पर विरोध नहीं है। जबकि इससे परस्पर विरोध आता है। (देखो ऋग्वेद मंडल १ सूक्त १६२ मंत्र १२ स्वामी जी का भाष्य)

अब हम बताते हैं कि इस कंडिका में कैसी उत्तम रीति से उपदेश का क्रम है। इस कंडिका में ३१ से ३९ तक ९ मंत्र हैं। ३१ से ३६ तक के मंत्रों के अर्थों का संक्षेप यह है कि अतिथि से पूर्व भोजन नहीं करना चाहिये। ३७ में अतिथि के गुण वर्णित हैं कि वह श्रोत्रिय वेदवित् होना चाहिये। मंत्र ३१ से ३६ तक अतिथेः पूर्वं शब्द आता है और इन सबमें विद्यमान है। वेद के पढ़ने वाले जानते हैं कि वेद मंत्रों में जब अन्त में दूसरे मंत्रों की प्रतीकें आने लगती हैं तो एक शून्य का चिह्न लगा के इस मंत्र को लिख देते हैं। पहिला मंत्र पूर्ण लिखते हैं और जब विषय समाप्त होता है तो अन्तिम मंत्र भी पूरा लिखते हैं। वही बात यहां पर है। पाठक अथर्ववेद को निकाल कर देख लें। मंत्र ३७ में अतिथि का लक्षण है। वहां वह शब्द नहीं और ३८ में यजमान के लिये उत्साह बढ़ाने वाली आज्ञा है। और ३९ में दोनों के लिये आज्ञा है। अतः इसमें न अतिथि का शब्द है और न यजमान का तथा कोई समय की

× अधिगवम् के सीधे अर्थ हैं कि जो दूध गाय (बछड़ी, बछड़े) के अधिकार का है। उसे कदापि ग्रहण न करे। अर्थात् बछड़ा बछड़ी की आवश्यकता से अधिक जो दूध हो वही प्राप्त करे।

(अनुवादक)

नियुक्ति भी नहीं है। इसलिये यह सामान्य सदैव की आज्ञा है। जो लोग इस ३९ वें मंत्र का और प्रकार का अर्थ करें वह अपना प्रमाण उपस्थित करें वा किसी प्राचीन ऋषि का प्रमाण दें। जिससे हम तुरन्त समझ लें कि यहां उनके मनमाने शब्द विद्यमान नहीं।

सयएवं विद्वान् मांसमुपसिच्योप हरति।

यावद् द्वादशाहेनेष्ट्वा सुसमृद्धेनावरुन्धे तावदेनेननावरुन्धे॥

अथव ९।६ (३)। ८

वह विद्वान् जो और किसी अच्छी वस्तु को ठीक बनाकर भोजन देता है। द्वादशाह यज्ञ से जितना फल होता है उतना उसको फल मिलता है जो ऐसा करता है।

ज्ञात हो कि इससे ऊपर तीन मंत्र और हैं। एक में घी या मक्खन देने का वर्णन और दूसरे में दूध देने की और तीसरे में मधु देने की तथा पांचवें में पानी देने की आज्ञा है पश्चात् यह वर्ग समाप्त हो गया। क्रम से रहित होने का दोष वैदिक मंत्रों में नहीं है। इस आधार पर इन युक्तियों से सिद्ध है कि यहां सामान्यतः मांस शब्द के अर्थ किसी हृदयग्राही वस्तु के हैं, मांस के नहीं।

प्रथम कारण :—निरुक्त जा वेदों का प्रामाणिक कोष है उसमें मांस शब्द के यह अर्थ लिखे हैं—

मांसं मानवं मानसंवा-मनोऽस्मिन्ससीदतीतिवा॥ निरुक्त अ० ४

मांसमन् धातु से बनता है। उसका अर्थ मान है, मन सम्बन्धी या जिसमें मन लगता है। यह सब मांस शब्द के अर्थ हैं।

द्वितीय कारण :—इस वर्ग में घी, दूध, मधु, जल सब बहने वाली वस्तुएं हैं। अतः यह भी कोई ऐसी बहने वाली वस्तु है। शरीर खंड नहीं।

तृतीय कारण :—इसमें पकाने, काटने और रक्त से पृथक् करने का वर्णन नहीं। इस आधार पर यह मांस नहीं कोई और वस्तु है।

चतुर्थ कारण :—इसमें यह नहीं बताया कि किस पशु का मांस हो, यदि यह विशेषण होता, तो अवश्य आपका प्रयोजन सिद्ध था किन्तु वह तो सर्वथा नहीं। आप सिद्ध नहीं कर सकते हैं कि कुत्ते का मांस, मनुष्य का मांस अथबा उल्लू का मांस। केवल अकेले शब्द के वही यौगिक अर्थ हैं जो निरुक्तकार यास्कमुनि ने किये हैं न कि कुछ और। जबकि इसके ऊपर प्रथम वर्ग में ही लिखा है कि मांस कदापि न खावे।

पंचम कारण :—यह कोई वस्तु धोकर वा शुद्ध करके प्रोसने की है, पकाने के योग्य वस्तु नहीं। ऐसी घिनौजी वस्तु भी नहीं जैसे कि मांस। इस कंडिका का अभिप्रायः यह है कि घी, दूध, शहद और अन्य कोई अच्छी वस्तु जैसे अर्क, सोम, शरबत, ईखरस जो उस समय समुचित हों, देवें। पश्चात् पानी देवें। अतः किसी प्रकार इस वर्ग में मांस खाने का वर्णन नहीं।

पाठकों को स्मरण रखना चाहिये कि यह सारे पांचों मंत्र यदि साधारण अतिथि के सम्बन्ध में हैं तब तो हमने बता दिया कि निरुक्त के अनुसार वहां मांस शब्द के अर्थ किसी मन पसन्द वस्तु के हैं। यदि हवन का विषय है जैसा कि कई विद्वान् पंडितों का विचार है तो मांस शब्द के अर्थ जटामासी अर्थात् बाल छड़ के हैं जो हवन की सामग्री में से एक वस्तु है (देखो रिचर्डसन साहिब की संस्कृत इंगलिश डिक्शनरी) और ऐसा ही शब्दस्तोम महानिधि में भी लिखा है।

इसके अतिरिक्त हवन में मांस न पड़ने का एक और भी पुष्ट प्रमाण है। सूत्र में लिखा है :--

हौमियं मांसवर्जम् ।। आश्व १।६।६

अर्थात् हवन की सामग्री में मांस कदापि नहीं है। और मनु० ११।६५ में भी लिखा है कि मद्य-मांस पिशाचों और राक्षसों का भोजन है, वह ब्राह्मणों को न खाना चाहिये। क्योंकि वह देवताओं और मुनियों के अन्न, फल, फूल, कन्द, मूल के खाने वाले हैं, जो हवन के योग्य वस्तुएं हैं।

अथर्ववेद में परमेश्वर ने खानपान के सम्बन्ध में स्पष्ट रूप से आज्ञा दी है कि :--

पयश्च रसश्चान्नं चान्नाद्यं चर्तं च सत्यं चेष्टं च पूर्तं च प्रजा च पशवश्च ।

अथर्व १२।५।१०

जो दूध और जलादि, रस अर्थात् शकर औषधि और घी आदि हैं। उनको वैद्यक शास्त्र की रीति से यथावत् शोध करके भोजनादि करते रहो। वैद्यक शास्त्र की रीति से चावल आदि अन्न का यथावत् संस्कार करके भोजन करना चाहिये। (देखो वेदभाष्य भूमिका पृ० १०५, १०६)

अतः सभी वेद के मानने वालों को योग्य है कि यथार्थ सच्छास्त्र की रीति के अनुसार वह मांसादि दुष्ट वस्तुओं का त्याग करके सदैव उस भोजन का प्रयोग करें जो रक्त रंजित न हो जिसके लिये हमें हानि न पहुंचाने वाले पशुओं के गले पर छुरी न चलानी पड़े। यही ईश्वर की आज्ञा है।

—०—

मांस खाना पाप है।

दूसरा भाग

रामचंद्र जी का सत्य दर्शन

वाल्मीकि रामायण का सार।

रामायण के अध्ययन से किसी प्रकार का संदेह नहीं रहता कि रामचंद्र जी महाराज किस जाति से थे और वह किस कुल के पुकारे जाते थे। समस्त वेद शास्त्र के मानने वाले एक मत होकर कहते हैं कि वह सूर्यवंशी कुल में प्रसिद्ध राजर्षि थे। उनका समस्त जीवन हमें उपदेश दे रहा है कि वह आर्य जाति के शिरोमणि और वैदिक धर्म के मानने वाले सत्य के पुजारी और सत्यता पर कुर्बान थे। उनका धर्म हमें रामायण के इस एक ही श्लोक से पूरा हो जाता है कि :—

रक्षितास्वस्य धर्मस्य स्वजनस्य च रक्षिता।
वेद वेदांग तत्वज्ञो धनुर्वेदे च निष्ठितः॥

(वाल्मीकि रामायण सर्ग १।१४)

अपने धर्म की रक्षा करने और प्रजा पालने में तत्पर, वेद वेदाँग तत्व ज्ञाता, धनुर्वेद में निष्णात थे।

वह ईश्वर के भक्त, वेद के ज्ञाता, स्वभार्या के प्रिय, प्रजा के दुःख दूर करने वाले, भाईयों को हृदय से प्रिय, माता पिता के आज्ञाकारी पुत्र थे। वचन के दृढ़, सत्यवादी, शरीरों, राक्षसों, मांसाहारियों के शत्रु और ऋषियों की सच्चे हृदय से सेवा में तत्पर थे। जैसा कि रामायण अयोध्याकांड १८।३० में तथा कई अन्य स्थानों पर इस बात को रामायण कर्ता ने अच्छे प्रकार से प्रगट किया है।

बालकांड में भी लिखा है कि :—

धर्मज्ञः सत्यसंधश्च प्रजानां च हितेरतः।
यशस्वी ज्ञान संपन्नः शुचिर्वश्यः समाधिमान् ॥१२॥
प्रजापति समः श्रीमान्धाता रिपुनिषूदनः।
रक्षिता जीवलोकस्य धर्मस्य परिरक्षिता ॥१३॥
सर्व शास्त्रार्थ तत्वज्ञः स्मृतिमान् प्रतिभावान्।
सर्वलोक प्रियः साधुरदोनात्मा विचक्षणः ॥१५॥
सर्वदाभिगतः सद्भिः समुद्रइव सिन्धुभिः।
आर्यः सर्वसमश्चैव सदैव प्रिय दर्शनः ॥१६॥

(बालकांड १।१२, १३, १५, १६)

धर्मज्ञ, सत्य प्रतिज्ञ, प्रजा हितरत, यशस्वी, ज्ञान सम्पन्न, शुचि तथा भक्ति तत्पर हैं। शरणागत रक्षक, प्रजापति समान प्रजा पालक, तेजस्वी, सर्व श्रेष्ठ गुणधारक, रिपु विनाशक, सर्व जीवों की रक्षा करने वाले, धर्म के रक्षक, सर्व शास्त्रार्थ के तत्ववेत्ता, स्मृतिमान्, प्रतिभावान् तेजस्वी, सब लोगों के प्रिय, परम साधु, प्रसन्न चित्त, महा पंडित, विद्वानों, विज्ञान वेत्ताओं तथा निर्धनों के रक्षक, अर्थात् सज्जनों के सहायक, विद्वानों के आदर करने वाले जैसे समुद्र में सब नदियों की पहुंच होती है वैसे ही सज्जनों की वहां पहुंच होती है। परम श्रेष्ठ, हंस मुख, दुःख सुख के सहन कर्ता, प्रिय दर्शन, सर्व गुणयुक्त और सच्चे आर्य पुरुष थे।

इसी रामायण में एक स्थान पर लिखा है कि कौशल्या के आनंद बढ़ाने वाले, समुद्र के समान गम्भीर स्वभाव, ज्ञानवान्, हिमालय समान धैर्यवान्, पराक्रम में युग समान, चन्द्रवत् प्रियदर्शन, क्रोध के समान कालाग्नि के समान, रक्षा करने में पृथिवी के समान, दान देने में कुवेर के समान, सत्य बोलने में मानो दूसरे धर्म, रामचंद्र जी ऐसे गुणी और पराक्रमी थे।

पुनः लिखा है कि :—

आनुशंस्यतनु क्रोशः श्रुतंशीलं दमः शमः।
राघव शोभयन्त्येते षड्गुणाः पुरुषर्षभम्॥ (अयो० ३३।१२)

अहिंसा, दया, वेदादि सकल शास्त्रों में अभ्यास, सत्य स्वभाव, इन्द्रिय दमन करना, शान्त चित्त रहना, यह छे गुण राघव (रामचंद्र) को शोभा देते हैं।

रामचंद्र जी का जीवन हमें रामायण से ज्ञात होता है। उससे स्पष्ट है कि उनका जीवन गर्भाधान संस्कार से अन्त तक सारा का सारा एक श्रेष्ठ आर्य धर्म जीवन है। चारों वेदों के विद्वान् उसके संस्कारों में विद्यमान रहे।

संक्षेपतः रामचंद्र जी चंद्रमा की भांति दिन प्रति दिन विद्या की उत्तम कलाओं से सम्पन्न होते गए। जब वह युवावस्था को प्राप्त हुए तो अभी ब्रह्मचर्याश्रम पूरा नहीं किया था। सर्वप्रकारेण शास्त्र और शास्त्र विद्या में संलग्न थे कि अकस्मात् एक दिन महर्षि विश्वामित्र महाराजा दशरथ के पास पधारे उनको अपनी आत्म कथा सुनाई और कहा कि जब हम यज्ञ किया करते हैं, उसमें राक्षस विघ्न डाला करते हैं। जब हम बहुत दिनों तक यज्ञ करते रहते हैं और यज्ञ समाप्त होने को पहुंचता है तो वह बड़े पराक्रमी, बड़े चतुर, मारीच और सुबाहु नामी दो राक्षस आकर वेदी पर मांस, रुधिर की वर्षा करने लगते हैं। जिससे हमारे यज्ञ की प्रतिज्ञा उनके ऐसा करने से भ्रष्ट हो जाती है। जैसा कि यह श्लोक लिखा है कि :—

मारीचश्च सुबाहुश्च वीर्यवन्तौ सुशिक्षितौ।
तौ मांस रुधिरौघेण वेदिं तामभ्यवर्षताम्॥ (बालकांड १९।५)

ज्ञात होता है कि इस समय तक वाम मार्ग का चिह्न भी संसार में विद्यमान न था। इन दिनों यह दुष्ट मद्यमांस हवन की सामग्री में गिने न जाते थे। कुछ जंगली असभ्य दस्युओं के अतिरिक्त कोई आर्य पुरुष इसका प्रयोग न करता था। किन्तु पवित्र ऋषियों के हवन यज्ञ और उनके पवित्र कुंड मद्य मांस के डालने से भ्रष्ट हो जाते थे न कि पवित्र और शुद्ध।

महाराज दशरथ ने जब यह वृत्तान्त सुना तब बोले कि मुनि जी महाराज ! मैं वृद्ध हूं ! राक्षसों

के साथ पराक्रम की शक्ति नहीं। शरीर रोग ग्रस्त है। रामचंद्र अनुभव शून्य और विद्यार्थी तथा नवायु है। कभी किसी युद्ध में नहीं गये। तब विश्वामित्र ने कहा कि महाराज ! ऐसा नहीं है। रघुवंश वीर-वश है। इसके नवायु बालक भी बहुत बड़े वीर होते हैं और रामचंद्र तो अब पूर्ण युवक हैं। आप को पितृ स्नेह के कारण अनुभव हीन प्रतीत होते हैं। वरन् ऐसा नहीं है। अन्ततोगत्वा वसिष्ठ जी ने कह सुनकर महाराज दशरथ के दो प्रिय, जिगर के टुकड़े रामचंद्र, लक्ष्मण ऋषि के साथ कर दिये। वहां से कोसों दूर विश्वामित्र जी का आश्रम था।

इस समस्त यात्रा में राम लक्ष्मण ऋषि के साथ दोनों काल सन्ध्या और अग्निहोत्र करते रहे तथा परमेश्वर के भजन में तत्पर रहे। कई प्रकार की विद्याएं भी ऋषि से प्राप्त कीं। गन्तव्य स्थान पर पहुंच कर कुछ समय वहां ठहरे और ऋषि का यज्ञ सम्पूर्ण किया। दुष्ट मांसाहारी राक्षसों को मार कर उनका काम समाप्त किया और भी कुछ विद्या महात्मा विश्वामित्र से प्राप्त की।

इन्हीं दिनों में सीता के स्वयंवर की सूचना भी वहां पहुंच गयी और ऋषि जी के साथ दोनों राजकुमार वहां जा विराजे। जैसा कि वहां भी भाग्यवश समस्त महाराजाओं के बहुत बड़े समारोह में रामचंद्र जी ने ही धनुष तोड़ा अर्थात् स्वयंवर की शर्त को पूरा किया और सीता ने भी इन्हीं के गले में जयमाला डाली। महाराज दशरथ अयोध्या से राजकीय बरात लेकर पधारे और एक ही दिन चारों भाईयों का चार कन्याओं से विवाह हो गया।

अयोध्या में बरात के लौट आने के पश्चात् कई वर्ष तक रामचंद्र जी अयोध्या में रहे। जब पूर्ण अनुभव की अवस्था में इन्हें युवराज बनाने का निर्णय होने लगा तो उनकी सुतीली माता ईरान के राजा की लड़की केकयी रुष्ट हुई और उसने महाराज से अपने गत वचनों के पूर्ण करने की इच्छा व्यक्त की।

दशरथ महाराज वचन के दृढ़ प्रतिज्ञ थे। पूर्ण करने पर समुद्यत हुए। उसने श्री रामचंद्र जी के लिये चौदह वर्ष के बनवास की आज्ञा मांगी और भरत जी के लिये युवराज बनाने की सम्मति दी। अन्ततः महाराजा ने न चाहते हुए भी आज्ञा दे दी। रामचंद्र जी सिर आंखों से स्वीकार करके बन जाने की मान गये। सीता जी ने साथ जाने का अनुरोध किया। लक्ष्मण जी सहगामी होने के लिये कटिबद्ध हुए। अन्त में तीनों प्रसन्नता पूर्वक राजकीय वस्त्र उतार कर ऋषियों के साधारण वस्त्र धारण करके महाराजा को नमस्कार करने के हेतु समुपस्थित हुए, उस समय केकयी माता ने यह आज्ञा दी कि तुम अभी इस अभिषेक को छोड़कर चौदह वर्ष तक दंडकारण्य में जाकर वास करो वहां जटा चीरधारी बन कर तपस्वियों की भान्ति रहना। (अयोध्या कांड सर्ग १८ श्लोक ३७)

पुनः राजा दशरथ ने जब धनादि साथ ले जाने को कहा तो रामचंद्र जी ने उत्तर दिया कि "हे राजन् ? जब हम सब भोग विलास छोड़कर निःसंग हुए, बन के कन्द मूलादि भोजन कर जीवेंगे तो हमारे संग धन दौलत सेनादि का क्या काम है ? हमारे लिये अब मुनियों के पहनने योग्य चीरादि की आवश्यकता है, सो मांगते हैं। जिस में चौदह वर्ष तक हमें बन में निवास करना है। बीच में टूटफूट न जाए। कन्द मूल खोदने के लिये एक कुंथा (कुदाल) और एक पिटारी चाहिये। सो आज्ञा करें कि केकयी की दासियां शीघ्र लावें। हम बन को चले जावें। (अयोध्याकांड सर्ग ३७ लोक २, ४, ५)

केकयी ने यह सब कुछ शीघ्रता से मंगवा दिया। यही कन्दमूल फल खाने का वचन देकर मुनियों की भान्ति रहने पर दृढ़ रहूंगा, कह कर घर से निकले।

इसी प्रकार जब रामचंद्र जी माता कौशल्या से मिलने गये तो वहाँ भी यह वचन दिया।

चतुर्दशहि वर्षाणि बत्स्यामिनिर्जनेवने ।
कंद मूल फलै जीवन् हित्वामुनिवदामिषम् ।।

(अयोध्या कांड सर्ग २०।२६)

हे माता ? मैं १४ वर्ष तक वन में मुनियों की भान्ति कंदमूल और फलों से अपना जीवन निर्वाह करूंगा न कि मांस से (क्योंकि वह राजसीय भोजन है) और ऐसा ही आगे श्लोक ३१ में भी लिखा है :

"इसलिये वन के कन्द, मूल, फलादि भोजन करते हुए चौदह वर्ष निर्जन वन में बसेंगे।" इस के पश्चात् कौशल्या ने रामचंद्र जी के वन जाते समय जिन शब्दों में आज्ञा दी है वह भी ध्यान देने योग्य है "मुनि वेश धारण किये महावन में विचरते हुए हे पुत्र ? तुम को सब देवता सुखदाई हों। राक्षस, पिशाच, दैत्य आदि जितने क्रूर कर्म करने वाले माँस भक्षी हैं, हे पुत्र ? वन में इनमें से किसी का भय तुम को न हो। इन के अतिरिक्त और जो दुष्ट जाति मनुष्य मांस भोजन करने वाले वन में रहते हैं उन सब के लिये भी मैं ईश्वर से प्रार्थना करती हूं कि तुम को वन में न मारें।" (अयोध्या कांड सर्ग २५ लोक १६, १७)

पुनः वह स्थान भी देखने योग्य है जहां रामचंद्र जी वन का वृत्तान्त सीता को सुनाते और वहां कष्टों का वर्णन करते हुए कहते हैं कि, वृक्ष से अपने आप गिरे हुए फल भोजन करने को थोड़े बहुत मिलते हैं, रात्रिदिवा इन्हीं पर सन्तोष कर बैठना पढ़ता है।" पुनः फल प्रति दिन नहीं मिलते। कभी २ उपवास भी करना पड़ता है।" फिर जितना मिल जाएगा, उतने से ही निर्वाह करना पड़ेगा। बनवासियों को मन माना भोजन कभी नहीं मिलता, इस से वन दुःखदायी है।" (अयो० सर्ग २८।१२, १३)

भरद्वाज और रामचंद्र जी की बात चीत में लिखा है कि :—

"पुनः धीरे २ आगे को बढ़े, देखा तो महात्मा भरद्वाज जी अपने शिष्यों के संग बैठे हुए तपस्या करते और अग्नि में आहुति दे रहे थे। उसी समय में राम लक्ष्मण सहित जानकी प्रणाम करने लगे। प्रणामानन्तर अपने को बताया कि हे मुनिराज ? हम दोनों महाराजा दशरथ जी के पुत्र हैं और राम, लक्ष्मण हमारे नाम हैं। यह जनक की कन्या वैदेही मेरी १ स्त्री है। जब हम वन को चले तो यह भी पीछे वन को चली आईं। हमारे पिता जी ने वनवास तो मुझे दिया था पर हमारे भाई लक्ष्मण भी यही परम दृढ़, व्रत धारण कर प्रेमवश साथ आये। अब सब को पिता जी की आज्ञा समझिये जो तपो वन को आए हैं। यहां मुनियों के महा कंद मूल फल ही भोजन करते हैं।

महाराज कुमार श्री रघुराज के ऐसे वचन सुन मुनिराज ने कुशल प्रश्न पूछ चरण धोने और पीने के लिये जल दिया। पश्चात् नाना प्रकार के रस, अन्न, फल, मूलादि तीनों के भोजनार्थ मंगवाए।"

(अयो० ५४/११-१८)

पुनः भरत जी ने जो शपथ महाराणी कौशल्या के सम्मुख इस बात के प्रमाणार्थ खाई हैं कि मेरी स्वीकृति से रामचंद्र जी को वनवास नहीं हुआ। मैं सर्वथा निर्दोष हूं। वहां भी इन बुरे कार्यों को निन्दनीय लिखा है :—

"जिस की सम्मति से राम वन को गए हूं उस को वह दोष लगे जो मद्य, मधु, माँस, विषादि

निषिद्ध वस्तुओं को बेच द्रव्य एकत्र कर उसी से गृह युक्त और कुटुंबों के पालन पोषण करने वालों को होता है। (अयो० ७६/३८)

पुनः जब भरत जी रामचंद्र जी से चित्रकूट में मिलने आए। उस समय रामचंद्र जो ने उन को जो उपदेश किये हैं उन में अथर्व कांड ६ मंत्र १ तथा मनु ७।५० आदि के अनुसार आखेट, द्यूत, मद्यपान, दुराचारादि बातों का बहुत निषेध किया है। (अयो० १००।७१)

जब जाबाल नास्तिक बन कर रामचंद्र जी को बहकाने लगा तब रामचन्द्र जी ने कहा :—

हे जाबाल जी ? तुम से पहिले जितने ब्राह्मण हुए, सभी ने वेदानुसार बहुत शुभ कर्म किये। इसी से तुम्हें छोड़ कर अब भो जो ब्राह्मण हैं यह लोक पर लोक सब छोड़कर कल्याण कारक यज्ञ करते और सत्य बोलते हैं। आप की भान्ति झूठ नहीं बोलते। और धर्म से युक्त सज्जनों के साथ तेजस्वी, दान देने वा सब शुभ गुणों में प्रधान, जीव हिंसा रहित, निर्मल चित्र, वसिष्ठादि मुनि लोक में पूज्य हैं।"

(अयोध्या काँड १०९।३६)

जब दंडकारण्य में राम जी ने प्रवेश किया तो वहाँ रामायण में लिखा है कि "नाना प्रकार के फल मूल कंदादि मुनियों के भोजनार्थ एकत्र हैं। वनके बड़े बड़े पुण्य दायक वृक्षविद्यमान हैं जिन में अति स्वादिष्ट फल लगे हैं।

और जब रामचंद्र जी वहां के ऋषियों से मिले तो उन्होंने उन्हें क्या दिया। लिखा है "ऋषियों ने परमानन्दित हो स्वास्ति वचनादि मंगल दायक शुभ स्वर से पढ़े। इस के पश्चात् मूल फल पुष्पादि दिया, पुनः सुन्दर स्थान रहने के लिये बनाया। (अरण्य० १।५, १७)

निखाद का राजा गूह जव शुभ वस्तुएं लाया था, रामचंद्र जी ने लेने से इन्कार कर दिया। इन सब को हमने जाना। परन्तु ग्रहण नहीं कर सकते। क्योंकि हम कुशा, चीर, मुगचर्म धारण, किये हुए हैं और फल मूलादि ही भोजन करते हैं। (अयोध्या काँड ५०।४४)

जब सुतीक्ष्ण ऋषि से मिले तो वहां लिखा है कि :—

"फल मूलादि भोजन कर श्रीराम, लक्ष्मण व जानकी जी सुतीक्ष्णा से पूजा पाए रात्रि भर नहीं सोए। बड़े प्रातः काल जागे और शौच स्नान कर संध्या, आग्निहोत्र किया।" (अरण्य कांड सर्ग ७/१-४)

जिस समय श्री राम चंद्र जी वनवास को गए और धनुषबाण कंधे पर धारण कर ऋषि की सुरक्षा का विचार किया। इस का कारण रामायण में यह लिखा है कि :—

रामचंद्र जी ने जावाल से कहा कि जो पुरुष वेद मर्यादा से रहित हैं, वे पापाचार युक्त होते हैं। इसी से वेद से वाहिर चलने के कारण सज्जनों के समाज में उन का मान नहीं होता। पुनः आप के वचन भी वेद विरुद्ध ही ठहरे इस लिये सज्जन लोग निरादर करते हैं। कुलीन, अकुलीन, वीर और भीरु पवित्र, पवित्र पुरुष अपने आचरण से ही जाना जाता है। जो वेदानुसार कार्य करता वह कुलीन जाना जाता जो वेद विरुद्ध आप के वचनानुसार चाल चलन रखता, वह अकुलीन, इसी प्रकार वीर और भीरु, पवित्र और अपवित्र में भी भेद जानो। (अयोध्याकांड १०९।३, ४)

अयोध्या के वर्णन में वालमीकि ने सब वस्तुओं का वर्णन किया है जो उस समय थीं, किन्तु कसाइयों की दुकानों का कहीं भी वर्णन नहीं और न बकरे लटकने वा उनकी ग्रीवा मारने का कहीं

वर्णन है। वास्तव में उस समय अयोध्या स्वर्ग भूमि थी।

बहिश्त आंजा कि आज़ारे न बाशद।

कसेरा बा कसे कारे न बाशद ॥+

झगड़ा, रक्तपात, वध, दुराचारादि का चिह्न तक भी नहीं मिलता।

विरोधियों के आक्षेपों का उत्तर

सद्धर्म के विरोधी, मांसाहारी लोग रामचंद्र जी के जीवन पर कलंक लगाने के लिये प्रसिद्ध करते हैं कि उन्होंने मृग मारे हैं और आखेट किया है। इसके अतिरिक्त उन्होंने मांस भी खाया है।

इस आधार पर हम विरोधियों के समस्त आक्षेपों का खंडन करते हैं।

(प्रश्न १) रामचंद्र जी ने वनवास के समय सूत से कहा कि हम नहीं जानते कि अब पुन: कब सरयू के तट पर पुष्पित वन में शिकार खेलेंगे और अपने माता पिता से मिलेंगे। (अयो० ४९।१५)

(उत्तर) शिकार खेलना सर्वथा बुरा नहीं है और विशेष करके उस समय जब दुष्ट पशुओं, सिंह, भेड़िया आदि का मारना प्रयोजन हो।

और यह शास्त्रानुकल है किन्तु हानि न करने वाले पशुओं का मारना बहुत बड़ा पाप है। जैसा कि स्वयं रामचंद्र जी ने भरत को इसका निषेध किया है। हानिकारक पशुओं के मारने के लिये सदैव संलग्न रहना और उसे एक आवश्यक कर्तव्य कर्म जानना भी निषिद्ध है। जैसा कि स्वयं रामचंद्र जी ने भी इससे अगले श्लोक में कहा है कि कुछ शिकार खेलना हमको बहुत प्रिय नहीं। अत: इससे किसी प्रकार मांस खाना प्रयोजन नहीं। क्योंकि वह केवल दुष्ट जीवों के दंड देने के लिये शिकार खेलते थे न कि पेट पूजा के लिये अथवा उदर को पशुओं का कबरिस्तान बनाने के लिये।

(देखो अयो० ४९।१६, १७)

स्वयं रामायण में भी लिखा है कि वहाँ जो दुष्ट मृग पक्षी थे को डराते हुए श्री रामचन्द्र एक मुहूर्त भर में प्रयाग में मुनि भारद्वाज के पास जा पहुंचे। (अयो० ५४।९)

वनस्थ मुनि लोग पशु पालन कार्य करते थे न कि भक्षण। रामायण के इसी सर्ग में लिखा है कि:

मुनिराज के चारों ओर पालतु मृग, पक्षी और मुनि लोग बैठे थे। सबके साथ रामचन्द्र जी की पूजा कर भरद्वाज जी धर्मयुक्त वचन रामचन्द्र से बोले। (अयो० ५४।१९, २०)

(प्रश्न २) रामचन्द्र जी मृग मारने के लिए गए और पीछे रावण सीता को ले गया। इससे प्रगट है कि वह हिरण मारकर अवश्य खाया करते थे।

(उत्तर) इस स्थान अथवा अन्य किसी स्थान पर मृग को खाने के लिए मारने का कोई वर्णन नहीं। किन्तु स्वर्ण रूप हिरण देखकर सीता का मन ललचाया। वह उसके रूप पर मुग्ध हो गई और रामचन्द्र को उसके पकड़ने के लिए प्रार्थना की। उसके हठ के कारण पहले राम पुन: लक्षमण दोनों गए और जब पकड़ा तो ज्ञात हुआ कि वह छल था, वास्तविक हिरण न था। मारीच नाम का एक दैत्य या असभ्य जंगली मनुष्य हिरण का स्वांग धारण कर व खाल ओढ़कर भरमाने आया था। जिससे पीछे रावण सीता को भगा ले जाए। जैसा कि रामायण में इस स्थान पर लिखा है कि:—

+स्वर्ग वहां, जहां दुःख न हो और किसी को किसी से काम न पड़े।

इदंहि रक्षो मृग संनिकाशं प्रलोभ्यमां दूरमनुप्रयातम् ।
हतं कथं चिन्महता श्रमेण स राक्षसोऽभून्यमृण्भाण एव ।।
मनश्च मे दीनमिहा प्रहृष्टं चक्षुश्च सव्यं कुरुते विकारम् ।
असंशयं लक्षमण नास्ति सीता हृता मृता वा पथि वर्तते वा ।।

(अणय० ५७।२२, २३)

यह मृग रूप राक्षस हमको ललचाता हुआ बहुत दूर चला गया था। वहां बड़े श्रम से हमनें उस को मारा तो यह मरण समय राक्षस ही निकला। मेरा मन दुखी है। बाईं आंख फड़कती और विकार + युक्त हो रही है। कुछ संशय नहीं है। हे लक्ष्मण ! कि अब सीता वहां नहीं है। कोई हर ले गया, वा मर गई अथवा मार्ग में है।

इसी अवसर पर रामचन्द्र को विद्वान लोगों ने दोष दिया है कि वह ऐसे बुद्धिमान होकर किस प्रकार स्वर्ण मृग के होने पर विश्वास कर बैठे। जैसाकि हितोपदेश के लेखक विष्णु शर्मा जी ने कहा है कि :—

स्वर्ण के हिरण का होना असंभव है किन्तु पुनरपि रामचन्द्र जी लोभ में आ गए। इसमें कोई संदेह नहीं कि विपत्ति काल में बुद्धिमानों की बुद्धि पर भी आवरण (पर्दा) पड़ जाता है।

(प्रश्न ३) सीता ने यमुना से पार उतरते समय मांस और मद्य के घड़े उसमें डालने के वचन से नदी से प्रार्थना की कि यदि मेरा पति सुखपूर्वक घर लोटे तो मैं ऐसा करूंगी।

(उत्तर) यह बात कई कारणों से मिथ्या है।

(प्रथम कारण :—) यह है कि यमुना अथवा गंगा दोनों नदियां जड़ हैं। उनकी पूजा इन पदार्थों से कदापि नहीं हो सकती। इसको वह मानें जो इन्हें चेतन अथवा इस जड़ पूजा और नदी पूजा मानता हो।

द्वितीय कारण :—

जब सीता वापिस आई तो यह वचन कदापि पूर्ण नहीं किया गया। इस लिये भी मिथ्या है कि किसी मद्यमांस के आसक्त वाममार्गी नें यह श्लोक डाल दिये हैं। अन्था लेख के विषय से इस का कोई सम्बन्ध नहीं और न यह घटना हुई।

तृतीय कारण :—

इस श्लोक में मांस शब्द नहीं है और न किसी पशु के मारने का उल्लेख है किन्तु श्लोक में तो गो सहस्रेण सुरा घट शतेन लिखा है। (अयोध्या कांड ५५।१६, २०)

अतः मांस का इस से कोई सम्बन्ध नहीं। शेष रही सुरा की बात। इस का खंडन राम लक्ष्मण के वहनों से स्वयं सिद्ध है जैसाकि एक बार सुग्रोव नें मद्य पान किया तो राम लक्ष्मण ने उसे वहां बहुत ही बुरा कहा। भरत जी ने शपथों में भी इस का खंडन किया है। अतः यह घटना कदाषि घटित नहीं हुई।

(प्रश्न ४) जब रामचंद्र जी चित्र कूट में पहुंचे तो झोंपड़ी बना कर लक्ष्मण को आज्ञा दी कि

+ ऐसा लोक प्रसिद्ध हैं किन्तु काल्पनिक है। (अनु०)

हिरण मार कर लावे जिस से यज्ञ किया जाए। लक्ष्मण जी इस आज्ञानुसार हिरण मार कर लाए जिससे यज्ञ किया और पकाया गया। (मांस प्रचार पृष्ठ ५६)

(उत्तर) वहां तो ऐसा नहीं किन्तु इसके विरुद्ध लिखा है। हे लक्ष्मण ? एक मृग पकड़ लाओ। उस को पर्णशाला (कुटिया) के द्वार पर बांधेंगे। तब वास्तव की पूजा करेंगे। क्योंकि जो लोग बहुत दिन जीना चाहते हैं उन को चाहिये कि विना वास्तव की पूजा के उस में न रहें। (अयो० ५६।२२)

हे लक्ष्मण ? इससे अति शीघ्र मृग लाओ। सन्ध्या न होने पावे। जैसी शास्त्र में वास्तु पूजा लिखी अवथा जैसे कुल की रीति है। वैसा पूजन करें। (अयो० ५६।२३)

भ्राता के वचन सुन, लक्ष्मण जी शीघ्र एक मृग लाए। तब रामचंद्र जी पुनः बोले।
(अयो० ५६।२४)

हे लक्ष्मण ? इस मृग के खाने के योग्य कुछ फल लाओ। उन्हें अग्नि में सेंक इस के भोजन के लिये दो और उन्हीं फलों से हम वास्तु शान्ति के लिये हवन भी करें। अतः शीघ्रता कीजिये। क्योंकि ध्रुव मुहूर्त्त है। इसी में दिन के रहते पूजा हो जाए। (अयो० ५६।२५)

रामचंद्र जी के ऐसे वचत सुन, वह जो कृष्ण मृगों के खाने योग्य फल लाए थे। अग्नि जला कर लक्ष्मण जी ने पकाए। (अयो० ५६।२६)

जब बन कर परिपक्व हुए। फलों को लालिमा जाती रही तब लक्ष्मण जी पुरुषों में सिंह रूप राम चंद्र जी से बोले। (अयो० ५६।२७)

हे देवताओं के समान रूप श्री राम ? कृष्ण मृगों के खाने योग्य फल हम ने पकाए हैं। अब देवताओं की पूजा कीजिये कि आप इस कर्म में कुशल हैं। (अयो० ५६।२८)

यह सुन स्नान कर जप करने में चतुर एक ओर से सब मंत्र पढ़ २ कर आहुति देने लगे। यहां तक कि वास्तव पूजन समाप्त हुआ। (अयो० ५६।२९)

सब वास्तु देवताओं ने आ प्रत्यक्ष में अपना २ भाग लिया। उन को देख, प्रसन्न चित्त हो, राम चंद्र जी ने इस कुटिया में प्रवेश किया। (अयो० ५६।३०)

उस समय उन्ही हुत शेष फलों से बलिवैश्व देव और रौद्र बलि सब किया। (अयो० ५६।३१)

इस के पीछे जप कर के नदी में पुनः यथाविधि स्नान कर के पाप नाशार्थ पुनः फलों की बलि दी। (अयो० ५६।३२)

पुनः उस पर्ण कुटीर में वेदियां बनाई। देवताओं की सहायता की उनके लिये पृथक् २ चबूतरे बना दिये। जिस प्रकार का वह स्थान था उस के अनुरूप छोटे २ स्थान देवताओं को स्थापित किया।
(अयो० ५६।३३

अतः देखिये। इस में मृग मारने और उस के खाने का वर्णन कहां है ? सर्वथा नहीं। यद्यपि इस में+काल्पनिक देवताओं की पूजा के चिन्ह पाए जाते हैं जो किसी प्रकार भी उचित नहीं किन्तु मांसा

+यह सर्ग प्रक्षिप्त है। वर्तमान रामायण में मांस प्रेमियों ने मृगों को मारकर उससे मांस बलि देने का विधान भी कर दिया है। जड़ पूजा तथा मांस बलि को सिद्ध करने के लिए ही वाममार्गियों का यह सारा प्रयास क्षेपक होने से वेद विरुद्ध है। बर्तनान रानायण में कई स्थानों पर क्षेपक लिखा हुआ है। [अनुवादक]

हार तो इस में कदापि नहीं। (देखो रामायण नवलकिशोर १८८५ ई० पृष्ठ ३५१, ३५२ जिसमें वाल्मीकि का शब्दानुवाद विद्यमान है)

फ़ारसी महाभारत जो फैजी ने रामचंद्र जी की जीवनी लिखी है वहां लिखा है कि :—

"ता आं कि रामचंद्र रा चित्रकूट दीदन्द कि बसूरते सन्यासियान बर आमदह लिबास अज़् चर्मआहू साख्तह मू हाए यूलीदह बर सरे दारद व तीर कमान बदस्त गिरुफ्तह बा लक्ष्मण वसीता दरबियाबान बसर में कर्दन्द। व औकात बबर्गे दरख्तां व गया व सहरा व मेवाए जंगल में गुजरा नीदन्द।×

कुछ रामायणों में इस स्थान पर विशेषयः बम्बई संस्करण में पाठ भेद है। संभव है कि उस से झटका प्रचारक अथवा मांस प्रवर्तक लोग कुछ खेंचातानी करके मांसाहार सिद्ध करना चाहें। इस आधार पर हम निम्न कारणों से उन का खंडन करते हैं।

प्रथम कारण :—

यदि असंभव को माना जाय कि उन्होंने हिरण हवन के लिये मारा और पुनः "परमात्मा न चाहें खाया भी। जबकि यह सिद्ध नहीं तो उन का कर्म स्वयं उनके प्रबल वचनबद्धता के विरुद्ध है, जो वह माता कौशल्या, केकई, दशरथ और भारद्वाज आदि के सामने सोच समझकर होश के साथ कर चुकें हैं। और रामायण में यह भी बीसियों स्थानों पर लिखा है कि वह सत्य प्रतिज्ञ थे।

(देखो अरण्य कांड १०।१८, १९)

द्वितीय कारण :—

उन का ऐसा करना ऋषि मुनियों और सूत्रकारों के विरुद्ध है।

आह्वनीये मांस प्रतिषेधः।

(कात्यायन श्रौत सूत)

हवन की अग्नि में मांस कदापि न डालना चाहिये। और आश्वलायन ऋषि कहते हैं हवन की सामग्री में मांस नहीं है।

तृतीय कारण :—

इस सर्ग में स्पष्ट वर्णन है कि उस स्थान पर फलमूल कंद बहुत अधिक थे।

(देखो अयो० ५६।६-१४)

अतः वचन तोड़ने की कोई आवश्यकता नहीं थी।

×(भावार्थ) जब लोगों ने राम चन्द्र को चित्रकूट में देखा कि सन्यासियों के रूप में मृगचर्म ओढ़े हैं जिसपर बाल थे। धनुष हाथों में लिए लक्ष्मण और सीता के साथ वन में निवास करने लगे और वृक्षों के पत्तों, जंगल की घास और वनस्थ फलों पर निर्वाह करते थे। (अनुवादक)

चतुर्थ कारण :—

देवताओं की स्थापना अर्थात् मूर्ति पूजा जो मांसाहार से भी अधिक पाप है। उस का भी इस सर्ग में उन पर दोषारोपण किया गया है। जबकि उस समय इन बातों का नाम और चिन्ह भी न था। और सब से बढ़ कर वास्तु गृहाधिष्ठातृ देवता का पूजन स्वयं वेद विरुद्ध है। अतः किसी प्रकार यह बात उचित नहीं हो सकती और रामचंद्र जी के सत्यवादी होने के कारण यह दोषारोपण सर्वथा मिथ्या हैं।

पंचम कारण :—

अन्य बीसियों स्थानों पर भी रामचन्द्र जी झोंपड़ी (पर्णशाला) बना कर रहे। किन्तु इस दोष का कहीं वर्णन नहीं या तो अन्य सब स्थानों पर पापी रहे और यहां धर्मात्मा। या अन्य सब स्थानों पर धर्मात्मा। किन्तु बात यह है कि वह वास्तव में धर्मात्मा थे। किसी वाममार्गी ने पाठ भेद कर दिया है और यथार्थ वही है जैसाकि स्वयं रामचंद्र ने सर्ग १० लोक १२ में कहा है कि मांस खाना राक्षसों और दुष्टों का काम है। आर्य लोगों का नहीं।

इस के अतिरिक्त महाभारत में जो वेद धर्म के मानने वालों और सत्य प्रिय राजाओं की सूची लिखी है, जिन्होंने समस्तायु न मांस खाया और न मद्य पान आदि दुराचार में फंसे। उन में भी हमारे राजर्षि रामचन्द्र जी का शुभ नाम विद्यान है।

(प्रश्न ५) भरद्वाज ने जो भोजन भरत जी की सेना को दिया। उसमें मांस व मद्य विद्यमान था।

(उत्तर) निःसन्देह वहां सेना के आतिथ्य में इन दोनों बातों का वर्णन है किन्तु वहां यह भी लिखा है✇ कि इन्द्र की समस्त अप्सराएँ और ब्रह्मा की समस्त स्त्रियाँ तथा विश्वकर्मा, कुबेर यमराज इन्द्रादि सब का आह्वान कर के बुलाया संसार भर की नदियों को वहां बुलाया और सबसे विचित्र बात वहाँ लिखी है कि वह वन जो उत्तर कुरु देश में हैं जिन के वृक्षों में सुन्दर नारियां ही फल लगती हैं। उन कुवेर के वनों को बुलाते हैं।

✇रामायण में पाठ भेद बहुत हैं और उत्तरकांड तो सर्व सम्मत किसी ने पीछे से लिखकर मिला दिया है। शेष रहे छः कांड उनमें इन्द्र की समस्त अप्पसरायें और ब्रह्मा की समस्त स्त्रियां तथा विश्वकर्मा, कुबेर, यमराज, इन्द्रादि सबका आह्वान करके बुलाया।

जिनका कोई विश्वास नहीं। एक तो अयोध्या काण्ड में देखो पृष्ठ ३८८ ओर दूसरे अरण्य कांड में देखो पृष्ठ ५५० बम्बई संस्करण १८८८ ईस्वी।

गंगा उत्पत्ति का सर्ग भी तुलसीदास के समय न था क्योंकि जो रामायण चित्रंकूट से तुलसीदास की लिखी हुई निकली है उसमें सर्वथा नहीं (बालकांड सर्ग ३९-४४ तक)

और युद्धकांड में भी दो सर्ग प्रक्षिप्त हैं। जो रामायण लखनऊ में नवल किशोर के यहाँ १८८९ ईस्वी में छपी है। उसमें युद्धकांड के १२८ सर्ग हैं। और जो बम्बई में प्रकाशित हुई है उसमें १३० हैं। केवल यही नहीं किन्तु बम्बई और कलकत्ता वाली [रामायण] में बहुत अन्तर है और श्लोकों का तो बहुत स्थानों पर पर भेद है।

प्रयोजन यह कि समस्त वन, पर्वत, समुद्र, नदियां वहां बुलाई गई। एक २ व्यक्ति की सेवार्थ पंद्रह-पंद्रह स्त्रियां नियत की गई।

ऐसी २ अन्धेर की बातें इस सर्ग में लिखी हैं जो सारी की सारी चमत्कार युक्त हुई।
(देखो अयोध्या कांड सर्ग ९१।१-३८

अतः जो इन समस्त चमत्कारों और व्यर्थ मिथ्या बातों पर विश्वास करे। जो सब असंभव बातों को माने और बुद्धि को तिलांजलि दे दे। उसका अधिकार है कि किसी को मांसाहारी कहे। इस आधार पर यह सारी बान घड़ण्त व्यर्थ और मिथ्या होने से विश्वासनीय नही। किन्तु इस चमत्कार पूर्ण वर्णनों के भरत और रामचंद्र के मांस खाने का यहां भी उल्लेख नहीं। अतः हम तो इन महात्माओं की जीवनी बतलाते हैं अन्य सेवाकारों की नहीं।

(प्रश्न ६) रामचन्द्र जी ने बिना अपराध हिरणों और राक्षसों को क्यों मारा?

(उत्तर) ऐसा कदापि नहीं। किसी को अपराध के बिना नहीं मारा। स्वयं रामायण में इसका कारण भी लिखा है कि "ऋषियों ने रामचन्द्र जी को कहा कि कुछ बात बनावट की नहीं कहते। आप यहां पधारें और देखें कि महात्मा मुनियों के अस्थि-पंजर पड़े हैं जिनको राक्षसों और जंगली लोगों ने मार मार कर भक्षण कर लिया है। प्रायः जो मुनि लोग पम्पा नदी से लेकर मंदाकिनी के तट तक के वनों में निवास कर रहे हैं और जो चित्र कूट पर्वत पर निवास करते हैं उन्हीं लोगों का नाश यह राक्षस लोग

कई स्थानों पर बड़ी गप्पें भी हैं जो किसी प्रकार विश्वासनीय नहीं। रामचन्द्र जी ने दस सहस्र वर्ष तक राज्य किया। (लंका कांड सर्ग १२८ श्लोक ९५ व कुम्भकरण दस सहस्र वर्ष तक जल में तपस्या करता रहा। विभीषण पांच सहस्र वर्ष तक एक पांव पर खड़ा तपस्या करता रहा। रावण दस सहस्र वर्ष तक निराहार तपस्या करता रहा और अपने दस सिरों को बारी बारी आग में जलाता रहा। इससे यह बल प्राप्त किया। (उत्तरकांड सर्ग-१०।३-१२ अयो० सर्ग ५३। श्लोक ९, १०, १२ में रामचन्द्र जी की ओर से पिता को मूर्ख और कामी बताया है। और बाल कांड सर्ग ४८-४९ अहल्या की कथा सर्वथा असंभव और अनुमानरहित बातों की नकल है।

इसी प्रकार बालकांड सर्ग ४५ में समुद्र मन्थन की भी केवल पौराणिक गप्प है। और जो कोई सारा वाम-मार्ग और महीधर भाष्य का प्रभाव देखना चाहे तो कृपा करके बालकांड सर्ग १४ श्लोक ३३, ३४ को देखें। और प्रत्यक्षतः यदि कोई ध्यान दे तो उसे स्पष्ट प्रतीत होगा कि सारा अश्वमेध प्रकरण सर्वथा कल्पित है। क्योंकि ऋषि श्रृंग को वह राजा रोम पाद के देश में केवल पुत्रेष्ठि के लिए लाए थे। (देखो सर्ग ११ श्लोक ५ से ३१ तक) और उसके साथ देखिए सर्ग १५ श्लोक १, २, ३ आदि। मध्य में सम्बन्ध और प्रकरण के बिना अश्वमेध का सदाचार विरुद्ध वर्णन कर दिया। अयोध्या कांड के सर्ग १०६ के श्लोक १४ आदि बुद्ध मत के पश्चात मिलाए गए और इसी प्रकाय सर्ग १०० श्लोक ३८ में भी बुद्ध, जैन और वाम मार्ग के पीछे डाले गए। अतः किस प्रकार सम्भव है कि रामचन्द्र के जीवन पर इन वाम मार्गियों ने थोड़ा बहुत कलंक लगाने का यत्न न किया हो। सैंकड़ों स्थानों पर इनके सम्बन्ध में वर्णन है। वह स्वयं वचन बद्ध हैं कि हम फल, मूल आदि खाने वाले हैं और सबसे बड़ी विचारणीय बात यह है कि परमात्मा न करे यदि रामचन्द्र भी मांसाहारी सिद्ध हो जाएं तो राम और रावण अर्थात् आर्य और राक्षस में कुछ भेद नहीं रहता। पाठक अवश्य विचार करें और इस वाम मार्ग में से निकलकर सत्य धर्म के प्रचार में तत्पर हों।

करते हैं। (देखो अरण्य० सर्ग ६।१६, १७) इसी लिए रामचन्द्र जी ने इन दुष्टों के मारने का संकल्प किया।

मृग के अर्थ समस्त वनस्थ पशु हैं। केवल हिरण नहीं किन्तु सिंह, व्याघ्र, भेड़िया आदि सब इस में शामिल हैं। जैसाकि यह बात किसी संस्कृत के ज्ञाता से छिपी नहीं। रामायण में जहां राक्षसों का वर्णन लिखा है। वहां स्पष्ट लिखा है कि यह मांसहारी लोग थे। लगभग दो तीन सौ स्थानों पर रामायण में मांसाहारी को राक्षस लिखा गया है। स्वयं रावण के सम्बन्ध में भी ऐसा लिखा है। उसके मरने पर कई पशुओं का वध किया गया। (देखो युद्धकांड)

वास्तव में मांस खाना अथवा पशुओं को खाने के लिए मारना, राक्षसों की विधि है। रावण के कार्यों और राक्षसों के कर्मों से हमें कोई प्रयोजन नहीं। वह तो सदैव शास्त्रोक्त कर्मों से रहित है। हमारा उद्देश्य राम जीवन कथा वर्णन करना है कि इस पवित्र राजर्षि ने कहीं भी मांस नहीं खाया। किन्तु वह इसे राक्षसों का भोजन बताते हैं। जैसा कि हम एक अन्तिम घटना सुनाकर समाप्त करते हैं।

जब रामचन्द्र जी सुतीक्ष्ण मुनिराज (जो सब प्राणिमात्र के हित में तत्पर था) की कुटिया में पहुंचे और उससे मिले तथा कोई अन्य स्थान रहने के लिए पूछा तब ऋषि ने उत्तर दिया कि:—

"हे राम! यदि ऐसा चाहते हो? तब तो यही आश्रम सर्वगुण युक्त है, आनन्द से रहिए। ऋषि लोग भी यहां विचरा करते हैं। इससे किसी प्रकार का भय भी नहीं और फूल मूल फल यहां सब काल में मिला करते हैं। हां, एक बात है। यहां बड़े व्याघ्र, सिंहादि मृग आया करते हैं। परन्तु वह किसी को नहीं मारते। केवल अपना रूप दिखा, सबको लुभा निर्भय यहां से चले जाते हैं। आप उनसे न डरिएगा, न उन्हें मारिएगा। यही एक दोष मृगों के आने जाने का कुछ २ है और कुछ भी नहीं। महर्षि के ऐसे वचन सुन अतिधीर रामचन्द्र जी धनुष पर वाण चढ़ाकर बोले कि हे महाराज! उनके आगत मृग समूहों को अतितीव्र वाणों से हम मार डालेंगे। क्योंकि जो आपको उनसे कष्ट हुआ तो इससे अधिक हमें और क्या कष्ट होगा?

यह सुन मुनिराज कुछ न बोले। रामचन्द्र जी ने जाना कि मुनि को मृगों का वध रुचिकर नहीं। उससे कहा कि इस मृग बाधित स्थान पर हम बहुत दिनों तक बसना नहीं चाहते। यह कहकर रामचन्द्र जी संध्या करने लगे। सायं संध्योपासन कर वहीं सुतीक्ष्ण जी के आश्रम पर लक्ष्मणजी के समेत निवास किया।"

(अरण्यकांड सर्ग ७।१७-२३)

इससे आगे सर्ग ९ में सीताजी ने मनोहर वाणी से रामचन्द्र जी को कहा कि तीन बड़े भारी पाप ताप हैं। एक पर स्त्री गमन, दूसरा मिथ्या भाषण, तीसरा अकारण किसी की हत्या करना। इनमें से पहिला और दूसरा तो आपमें सर्वथा नहीं। हां, तीसरा है कि आप अपराध और शत्रुता के बिना राक्षसों को मारते हैं, इसपर सीता जी ने रामजी को एक प्राचीन इतिहास सुनाया कि एक ऋषि किसी वन में तपस्या करते थे। इनकी बहुत तपस्या देख ईर्षा वश ब्रह्मा देश वासी राजा इन्द्र हाथ में तलवार लिए, योद्धा का रूप बनाए मुनि के आश्रम पर आया। अति पुण्य रूप तपस्या करते हुए मुनि के समीप अपनी तलवार धरोहर रखकर चला गया। मुनि इस असि की रक्षा में निमग्न हुआ कि कोई उसे न ले जाए। प्रायः उसे पास रखता था। प्रतिदिन शस्त्रधारण किए विचरने के कारण मुनि की बुद्धि अति रुद्र रूप हो गई। तपस्या करने का विश्वास जाता रहा।

प्रतिदिन उससे जीवों को मारने लगे। ऐसा रुद्र स्वभाव हो गया कि महा प्रमत्त हो गए। सद्धर्म जाता रहा, तीक्षण शस्त्र धारण करने से मृत्यु के उपरान्त मुनिराज नरक को गए।"

यह कह सीता जी बोलीं कि आप भी अपराध और वैर के बिना किसी मृग, पक्षी और राक्षस के मारने की बुद्धि न कीजिए। क्योंकि हे वीर ! अपराध के बिना किसी को मारना कदापि वीरता नहीं और न इसकी प्रशंसा विद्वान लोग करते हैं। क्षत्रियों को धनुष धारण करना निरपराध जीवों को मारने के लिए नहीं है। प्रत्युत दुःखी दीनों की रक्षा, सहायता के लिए है।

(संक्षेपतः अरण्य कांड सर्ग ९)

इसका उत्तर रामचन्द्र जी ने इससे अगले सर्ग १० में यह दिया कि "ऋषि मुनि लोग अति क्रूर कर्म करने वाले राक्षसों से सुख नहीं पाते क्योंकि वह लोग माँसभक्षी ठहरे। पुनः सभी के रूप भयानक तो होते ही हैं। वह आकर यज्ञ विध्वंस करने और ऋषियों को मारते पीटते हैं। अतः हम ऋषि रक्षा के लिए दुष्टों के संहारार्थ शस्त्र धारण करते हैं, दीन हीन पशुओं के मारने के लिए नहीं।"

(देखो अरण्य० सर्ग १०)

इसके अतिरिक्त जब बाल्मीकि रामायण की रचना ही एक ऐसी घटना से हुई जो सर्वथा आशिरः पाद दया पर आधारित है, तो कदापि उसका भाव अथवा इसके नायक का भोजन मांस नहीं हो सकता। वह यह है कि जब बाल्मीकि ने एक निषाद को देखा कि उसने एक क्रौंच को मारा तो इन्हें बड़ी दया आई और उस दुष्ट को शाप दिया तो भला वह दुष्ट अवगुण उनके नायक रामचन्द्र में किस प्रकार हो सकते हैं ? (देखो बालकांड सर्ग १२।९-१६)

चाणक्य ऋषि ने भी चाणक्य नीति में जो उसने महाराजा चन्द्रगुप्त (जिस ने सलूकस बाबल के बादशाह की पुत्री से विवाह किया था) के लिए बनाई थी जिसपर समस्त आयु उसका आचरण रहा लिखता है कि :—

मांसभक्षैः सुरापानै मूर्खैश्चाक्षर वर्जितैः ।
पशुभिः पुरुषाकारैं भाराक्रान्तास्ति मेदिनी ॥

(चा० नीति ८।२२)

मांस खाने वाले, शराबी, विद्याहीन, निरक्षर भट्टाचार्य जिनमें ऐसे दुर्गुन हों, वह वास्तव में मनुष्य रूप में पशु हैं और पृथिवी पर भार रूप हैं।

पुनः उसी नीति में लिखा है किः—

त्यजेद् धर्मं दयाहीनं विद्याहीनं गुरुं त्यजेत् ।
त्यजेत् क्रोधमुखीं भार्यां वि रहितान्बान्धवांस्त्यजेत् ॥

(चान्नीति ४।१६)

जिस धर्म में दया नहीं है उसे छोड़ देना चाहिए और जिस गुरु में बिद्या नहीं उसे भी छोड़ दे तथा लड़ने वाली और क्रोध मुखी स्त्री त्याग दे और जो तुम से प्रेम न करें ऐसे मित्रों को भी त्याग दो।

पुनः इसी नीति में लिखा है कि :—

यत्रहिंसा परो धर्मः पापिष्ठस्तत्र कीदृशः ।
मांहहारी द्विजो यत्र राक्षसस्तत्र कीदृशः ।।

जिस स्थान पर अथवा जिस मत में जीवों का मारना परम धर्म है वहां अथवा उस मत में ज्ञात नहीं पाप कैसा होगा ? और जिस स्थान पर ब्राहमण, क्षत्रिय, वैश्य मांस सेवन करते हैं, ज्ञात नहीं वहां राक्षस कैसे होंगे ?

ऐसे ही विद्वान लोग मुद्रा राक्षस नाटक के नाम पर भी ध्यान दें यह चाणक्यजी का वचन भीष्म जी के वचन अनुकूल है । फ़ारसी महाभारत में महापातकी की व्याख्या में लिखा है कि :—

"महा पातकी आंरा गोयन्द कि ब्राह्मण रा नाहक्क कुश्तह बाशद, या तला बजीदह बाशद, या शराब व गोश्त खुर्दह बाशद, या बाज़ने उस्ताद जिना करदह बाशद, ईरा महापातकी गोयन्द । कि बतरीके ऊला दोज़खी बाशद । (पृ० २२२ जो १०८१ का हस्तलेख है)+

ऐसे ही शुभ कार्यों और उत्तम उपदेशों से महाराज चन्द्र गुप्त एक बृहत् राज्य का सम्राट् हुआ । राजकीय नीति और सांस्कृतिक नीति में जितना यह सम्राट् चन्द्र गुप्त योग्य हुआ है, युधिष्ठिर के पश्चात् ऐसा कोई नहीं हुआ । राजाभोज के समय तक मांसभक्षण, सुरापान और दुराचार आदि से लोगों को बहुत घृणा थी । किन्तु वाममार्ग के फ़ैलने और राजाओं के दुराचारी हो जाने से दिन प्रति दिन दुष्ट कार्यों की अधिकता ही रही थी । एक बार राजा भोज की सवारी बाजार में जा रही थी । इतने में राजा ने देखा कि एक साधू संन्यासी वेश धारण किये रंगा गीदड़, प्रगट साधू किन्तु अन्तः वाममार्गी कसाई की दुकान पर मांस खरीद रहा था । उसे देख कर आश्चर्य दृष्टि से राजा भोज ने प्रश्न किया कि भिक्षो मांस निषेवणं प्रकुरुषे, किंतेन मद्यं विना । मद्यंचापि तव प्रियमहो वारां गनाभिस्सह । तासामर्थ रुचि : कुतस्तवधनं, द्यूतेन चौर्यणवा । चौर्यंद्यूत परिग्रहो पिभवतो नष्टस्यकान्यागति ।।

हे सन्यासिन ? तू मांस खाता है ? उस ने उत्तर दिया कि महाराज ? अकेला मांस नहीं खाता मद्य के साथ खाता हूं । राजा ने कहा कि क्या तू मद्य भी पीता है ? कहा, वह भी अकेला नहीं, वेश्याओं के साथ पीता हूं । राजा ने कहा कि यदि तू वेश्या गमन करता है तो धन कहां से लाता है ? क्योंकि तू तो भिक्षु है । तेरे पास धन कहां ? भिक्षु अर्थात् संन्यासी ने निवेदन किया कि महाराज मैं द्यूत क्रीडा करता हूं और चोरी करता हूं । इन कार्यों से धन प्राप्त करके लाता हूं । राजा ने पुनः कहा कि अरे भिक्षु । तू जुआरी और चोर भी है ? उसने हाथ बांध कर निवेदन किया कि महाराज ? जब भ्रष्ट ही होने लगा तो पुनः न्यूनता क्यों रहने दूं ?

प्रिय आर्य भाईयो ! यही अवस्था आज कल कुछ संन्यासियों की है । वह सर्वथा थाली मत हो रहे हैं । धर्म कर्म से कोई प्रयोजन नहीं । सदुपदेश करना वह अपना कर्यव्य नहीं जानते और ऐसे ही उनके मित्र कुछ गृहस्थ हैं जो उन्हें इन कार्यों के लिए धन देते हैं । आतशिक, सोजाक आदि रोगों में

+महा पातकी उसको कहते हैं कि जो ब्राह्मण (विद्वान) को निरपराध मारे, वा मद्य मांस खावे, वा गुरु की स्त्री से दुराचार करे । इसको महापातकी कहते हैं कि वह निश्चय से नरक गामी होते हैं । (अनुवादक)

ग्रसित हैं । प्रति दिन गृहस्थियों की स्त्रियों और बच्चों को बिगाड़ रहे हैं । हरिद्वार के कुंभपर जो आर्य भाई गए, उन्हें भली प्रकार ज्ञात है कि यह संन्यासी, उदासी ग्रौर निर्मले भिखारी कहां २ से स्त्रियां भगा कर और बच्चों को वहका कर अपने फंदे और जाल में फंसा रहे हैं । गृहस्थियों का घर लूट २ कर ग्रौर अपने देश के भोले राजाओं को गुरु पूजा का पाठ सिखा कर कैसे २ मठ बनाते हैं । केवल कौदन और मूर्ख जिन्हें किसी ज्ञान से कुछ भी काम नहीं ग्रौर जिन के आचरण भी शोचनीय हैं । केवल यही नहीं किन्तु जिन्हें सत्य धर्म से कुछ भी परिचय नहीं । जिन को वासनाएं साधारण गृहस्थ से भी निचलीं हैं । उनके विश्वास पर रह कर ग्रौर सत्य धर्म से दूर रह कर मांसाहार के चसके में चूर हो कर तथा मद्य पान के नशे में भर पूर हो कर आप कब तक कुंभकरण की निद्रा में सोते रहोगे ? कृपा पूर्वक ईश्वर के नाम पर जागो और अपने वेद धर्म की रक्षा करो । लोग इसे बिगाड़ रहे हैं, खराब कर रहे हैं । वही गन्दी और घिनौनी वाममार्ग की शिक्षा ग्रौर पांच मकारों की पेटियां देश ग्रौर जाति तथा सत्य धर्म के विरोधी लोग यहूदी अस कर यूती की भान्ति ग्रथवा अभिनव गुप्त की भान्ति ग्राप में घुस कर आप के भाईयों में धीरे २ फैला रहे हैं ।

ग़मेदीन खुर कि खुश ग़मे दीनस्त ।
जुमला ग़म हाए फ़िरोतर ईंनस्त ।।×

प्रिय भाईयो ? धर्म की रक्षा करो । उसे ग्रधर्म से बचाओ ' धर्म करो, धर्म करो और पाप से बचो । साहस पूर्वक कटिबद्ध हो जाग्रो । तुम्हारे सम्पूर्ण यत्न जग्रफरियों के जीत ने ग्रौर सत्य धर्म प्रचार के यत्न में खर्च होने थे । वह घर के सुधार में खर्च हो रहे हैं । विधर्मियों में कार्य करने का समय था । हम स्वयं रुग्ण हो गये किन्तु पुनरपि परमेश्वर का सहस्रों वार धन्यवाद है कि हमें समय पर सूचना मिल गई । सुरंग लगाने से पूर्व सुराग (पता) लग गया । अब संभव नहीं है कि सत्यासत्य का निर्णय न हुआ करेगा ।

एक को दो से गवारा ।
कहीं जाना नहीं मशफ़क़ हमारा ।।

ग्रार्य धर्म का सेवक :—
निवेदक लेखराम आर्य मुसाफिर

—०—

× धर्म की चिन्ता खाग्रो कि सबसे बड़ा प्रसाद कर्म चिन्तन है । शेष सब चिन्तन इससे नीचे हैं । (अनुवादक)

कृश्चन मत दर्पण

भूमिका

मनुष्य संसार में केवल इसीलिये नहीं आया कि अन्यापशुओं की भान्ति खावे, लड़े, सोवे और चल बसे, किन्तु इस का सब से बड़ा प्रयोज स्वहित सिद्धि है। जो शारीरिक और आत्मिक दो भागों में विभक्त है और इस का आधार धर्म पर है। जहां तक विचार किया जाता है, सद्धर्म परोपकार का हेतु और असत्य तथा अधर्म खराबी का कारण है। देखो कौन चाहता है कि उसे कष्ट हो दुःख में रत रहे कष्टों का जीवन व्यतीत करे।

सब मनुष्य सुख ही चाहते हैं, सभी कल्याण के इच्छुक हैं, मोक्ष के लिये हाथ पांव मार रहे हैं, सब की इच्छा होने पर भी प्राप्त करने वाले बहुत ही थोड़े हैं। उद्दिष्ठ स्थान पर पहुंचने को सभी इच्छा रखते हैं। किन्तु सहस्रोंलक्षों मार्ग भ्रष्ठ हो जाते हैं। ठग भी इस प्रकार की सान्त्वना देते हैं। प्रिय मित्र बन जाते हैं। बलि बलि होने का विश्वास दिलाते हैं। किन्तु वह सन्तोष नहीं, छिपा हुआ धोखा है। वास्तविक प्रयोजन उनका माल मारने और राही को नरक में उतारने से है। संसार में ठगा जाना संभव है। मनुष्य छल कपट का शिकार बन सकता है। करोड़ों उदाहरण इस के विद्यमान हैं। पुनः मन और बुद्धि रखते हुए हम अन्धाधुन्ध किसी का अनुकरण क्यों करें ? क्या हम अपने कर्मों के उत्तर दायी नहीं।

जब प्रत्येक धर्म और बुद्धि तथा सृष्टि नियम की दृष्टि से भी हम अहने कर्मों के उत्तर दाता हैं तो पुनः क्यों सोच विचार कर काम न करें ? क्यों आंखें मूंद कर पग धरें? जिस से मूर्खता और अंधकार के गढ़े में गिरना पड़े।

संसार में बहुत से मत मतान्तर हैं और सभी अपनी ओर निमन्त्रण देते हैं। उन सब में एक ईसाई मत है जिस के संबंध में हम इस पुस्तक में अन्वेषण करेंगे।

हम अपने कृपालु ईसाई भाईयों की सेवा में नम्रता पूर्ण हाथ जोड़ कर निवेदन करते हैं कि वह हमारी प्रार्थना की पक्षपात दृष्टि से नहीं किन्तु न्याय और सत्यता की आंख से देखें। यथार्थता को दृष्टिगत रख कर अध्ययन करें। इस पुस्तक के पढ़ते समय फिलासफी को हृदय से भुला न दें।

विज्ञान को अपने मन से (जो सत्य का सहायक है) दूर न कर दें। क्योंकि हम और आप भाई हैं। आर्य सन्तान हैं। चिरकाल से बिछड़े हुए मिले हैं। धर्म का विचार भेद जो वास्तव में बहुत कठोर है, क्या ही अच्छा हो यदि सत्यता के आधीन हो कर स्वार्थ का परित्याग कर के ज्ञान विज्ञान से काम लेकर निर्णय शक्ति का प्रयोग करें। आर्यसमाज के सदस्यगण सच्चे हृदय के साथ समुपस्थित हैं कि

असत्य को छोड़ने में सहायक हो। परन्तु क्या आप लोग भी किसी प्रकार समुद्यत हो सकते हैं ? क्या गलीलियो आदि फिलासफरों को दुःखदायक अपवित्र विचार आप के मन से अभी तक दूर नहीं हुए ? जो धर्म जैसी बौद्धिक वस्तु को द्वार के ऊपर रख देते हो। यह बात न्याय से बहुत दूर है।

दर्शक महानुभाव ! अपनी वर्षों की गवेषणा आपकी सेवा में उपस्थित करने से प्रयोजन सत्यता का प्रकाश करना कराना है। किसी का मन दुखाना नहीं। बाईबल के सम्बन्ध में चिरकाल से जो हमें लाभ हुआ। वह सब आप की भेंट है। जगत् पिता परमात्मा सब को सर्वप्रिय बनावें जिस से सच्चाई का प्रकाश और असत्य का नाश हो।

—०—

प्रथम अध्याय

मसीह खुदा का बेटा नहीं, यूसुफ़ नज्जार का पुत्र था।

जिस प्रकार हम माता पिता से उत्पन्न होते, गर्भ में रहते हैं। हमारे माता, पिता विवाह करके एकान्तवास करते हैं। नियत समय के पश्चात् गर्भ से बाहिर आते हैं। दूध पीते, खेलते, कूदते हैं। जिस प्रकार हम बालक से युवा युवा से वृद्ध होते और अन्त में मर जाते हैं। अथवा युवावस्था में दोष करते, दंड पाते, फांसी वा तलवार से गला कटाते हैं। वही अवस्था मसीह की है। मसीह आकाश से नही गिरा और न भूमि से फूट निकला किन्तु मसीह यूसुफ़ के बीज से उस की स्त्री मर्यम के गर्भ में ठहर कर नियत समय के पश्चात् विशिष्ठ स्थान से उत्पन्न हो कर दूध पीता रहा। और केवल वह एक ही उस मार्ग से उत्पन्न नही हुआ। किन्तु और भी उस के भाई उसी मर्यम के गर्भ से उत्पन्न हुए। समस्त जीवन भर उन के बेटा कहलाता रहा किन्तु ईसाई उन बातों के होने पर भी उसे खुदा का बेटा मानते और मर्यम से यूंसफ द्वारा नहीं, किन्तु कुंवारी होने की अवस्था में पवित्रात्मा से गर्भवती मानते हैं।

स्पष्ट हो कि ईसाई यद्यपि उस को खुदा का बेटा मानते हैं किन्तु मर्यम को खुदा की स्त्री और यूसुफ को खुदा का रकीब (स्त्री का मित्र) नहीं जानते।

सामान्य परिभाषा में उसे बुद्धि के विरुद्ध केवल विश्वास के कारण खुदा का बेटा जानते हैं और वास्तब में उन का ईमान यही है। कि पिता सर्वशक्तिमान्, पुत्र सर्वशक्तिमान् पवित्रात्मा सर्वशक्तिमान्। इन सब का आधार मसीह का कुंवारी से उत्पन्न होना है। क्योंकि यदि वह कुंवारी से उत्पन्न नहीं हुआ तो खुदा का बेटा भी नहीं, निष्पाप भी नहीं और संसार का मुक्ति दाता भी नहीं हो सकता। यद्यपि ईसाई विशेषतः पादरी लोग इस बात पर ईमान रखते हैं कि मसीह कुंवारी से उत्पन्न हुआ और यही-मानना उन की मुक्ति का हेतु है। इसी का प्रतिदिन सहस्रों ईसाई बाजारों में उपदेश करते हैं। किन्तु शोक कि जहां तक हम बाईबल को देखते हैं। इस बात का ज्ञान नहीं होता। अब ईसाईयों के पास सब से बड़ा प्रमाण (वास्तव में ईसाई दीन का आधार) यह है कि "यह सब कुछ हुआ, जो खुदावन्द ने नबी के द्वारा कहा था पूरा हुआ कि देखो एक कुंवारी गर्भवती होगी बेटा जनेगी और उस का नाम अमा नवाईल रखेगी।" जिस का अनुवाद यह है कि "खुदा हमारे साथ"।

(मती की इञ्जील १।२२, २३)

अब पड़ताल करनी चाहिये कि वह भविष्यवाणी जिस का मती ने प्रमाण दिया है, कहाँ लिखी है और किस नबी की है? पादरियों ने जो इस का निर्णय किया है और प्रमाण में लिखा है वह यह है (यशाया ६।१४)

अब हम देखते है कि वहां क्या लिखा है? मूल इबरानी बाईबल में यह लेख है कि :—

(१४) उजीन बनीन ओवनाई यह वाला खम ओस तहन हा अलम।हुहा राह वेल दस बैल वक्रा-रास शमो अमा नवाईल।

(१५) हमाह वबेश योग्रकल लदअ तो मा ओस बार अ व बाहूर बतराब

(१६) बतरम मदीअ हन अरश्रोस बाए व वाहूर वतवाब तगारेब हा ओमाह ग्राशाना व कास मफसनी शनी मलाफीहा। (देखो यशाया ७।१४, १५, १६) ×

अनुवाद :—

(१४) इस के होते भी कि खुदावन्द तुम को एक निशान देगा। देखो, युवति गर्भवती होगी श्रौर पुत्र जनेगी श्रौर इस का नाम अमान वाईल रखेगी।

(१५) वह दही और शहद खाएगा जिस समय वह बुरा छोड़ने और भला पसंद करने का विवेचन करे।

(१६) पर उस से श्रागे कि यह लड़का बुराई छोड़ने श्रौर भलाई पसंद करने का भेद पावे। यह भूमि जिसे तू बरबाद करता है श्रपने दोनों बादशाहों से छोड़ी जाएगी।

यह भविष्यवाणी कई कारणों से मसीह के सम्बन्ध में नहीं हो सकती।

प्रथम कारण :—

इस प्रमाण के आदि श्रौर अन्त में विचार करने से स्पष्ट प्रगट् है कि यह किस के सम्बन्ध में है ? इस सप्तमाध्याय के श्रारम्भ से श्रन्त तक का संक्षेप यह है कि इसराईल के राजा पर विजय प्राप्ति के हेतु बादशाह शाह इराम नें सेना से चढ़ाई की परन्तु विजय प्राप्ति न हुई। पुनः यहूदिया के शाह को सूचना मिली कि शाह इराम श्रफ्राईम और मलिया के बेटे को साथ ले के सेना बढ़ाता है अर्थात् दूसरी बार सेना बढ़ाकर पुनः चढ़ाई करेगा। उस समय शाह यहूदिया और उस के लोगों के हृदय कांप गए। तब खुदा ने उस समय के नबी हजरत यशाया से अहा कि यहूदिया को सान्त्वना दे और उसे कह कि अधीर मत हो श्रौर तेरा मन न गबरावे और इन धूम युक्त काष्ठों से मत डर क्योंकि जो तेरे विरुद्ध विचार करते हैं। उन के निश्चय को स्थिरता नहीं। अतः, ऐसा न होगा। पुनः खुदावन्द नें यशाया नबी से कहा कि शाह यहूदिया से कहो कि अपने खुदा से कोई चमत्कार मांग। उसने मांगने से इनकार किया और कहा कि मैं खुदावन्द को नहीं श्राजमाता · उस पर यशाया नबी ने कहा कि इस के होते भी (अर्थात् न मांग ने पर भी) खुदावन्द तुम को एक चमत्कार देगा, देखो कि एक युवति गर्भवती होगी और पुत्र जनेगी और उस का नाम अमानबाईल रखेगी और वह लड़का दही और शहद खाया करेगा अर्थात् यह उस का भोजन होगा श्रौर उस के युवा होने से पूर्व यह दोनों तेरे विरोधी बादशाह नष्ट हो जाएंगे।

(अध्याय ७ आयत १-६ तक)

+श्रो. पादरी श्रनेक जोयल साहब ने भी श्रपनी पुस्तक अवतार परीक्षा में यशाया ७।१४ श्रौर ६।६ को मसीह के बारे में लगाया है। देखो इनकी पुस्तक पृ० २७ संस्करण १८८३ ईस्वी। श्रौर यही गवाही पादरी समिथ डबल्यू पोर्ट साहब ने सत्यमत परीक्षा में दी है। (देखो पृ० ३६५ सन् १८६३)

द्वितीय कारण :—

यह लड़का जिस के उत्पन्न होने की यशायाह नबी ने सूचना दी थी। इन्हीं दिनों में उत्पन्न भी हो गया था और उस का उत्पन्न होना उसी पुस्तक के अगले अध्याय से उन्हीं दिनों में प्रगट् है।

(देखो यशायाह की पुस्तक अध्याय ८ आयत ३-४, और अध्याय ९ आयत ६-७)

प्रतीत होता है कि हजरत यशायाह ने अपनी स्त्री से वह लड़का उत्पन्न किया। जैसा कि लिखा है :—

"बाअहलिया नजदीकी करम ओ हामला शुदह पिसरेरा जायद ८।३

अनुवाद : — मैं बनीह के पास गया, सो वह पेट से हुई और एक बेटा जनी।

इस पर स्वयं पादरियों ने प्रमाण में यशाया की पुस्तक अध्याय ७ आयत १६ लिखा हुआ है। जो बात सर्वथा उसी लड़के के सम्बन्ध में है। (देखो बाईबल पृ० ७३९ सन् १८८३ ईस्वी लुध्याना)

और उसी लड़के के सम्बन्ध में आगे चल कर बाई बल में लिखा है कि :—

हमह सलाह पहलवानां दर हंगामा रजम बलि बास हाए गरीक खून, सोखतह लुकमह आतिश गरदीद, जेरा कि बराए मा तिकले जाएदह शुद वफरजंन्दे बमा बखशीदा शुद कि हुकुमरानी बर दोष ओखाहद बूद अफजायश हुकुमरानी व सलामती बेइन्तहास्त बर तखत दाउद व बर सल्तनतश ता आंरा बाइनसाफ व निओकारी अज हाल ता अब्दुल आंबाद मुकरर व पाए दार नुमायद।

(यशाया अध्याय ९ आयत ५, ६)

अनुवाद :—

"युद्ध में खुरपे (हथियार) पहने हुए लोगों के सब हथियार और वस्त्र जो रक्तरंजित हूं, जलाने के लिए आग का ईंधन हूंगे क्योंकि हमारे लिये लड़का उत्पन्न हो गया। हम को एक लड़का दान में दिया गया कि राज्यभार उसके कन्धे पर होगा उस के राज्य का प्रभाव और शान्ति की कोई सीमा न होगी। वह दाऊद के राज्य सिंहासन पर और उसक राज्य विस्तार पर आज से लेके सदैव तक प्रबंध करेगा और न्याय और सत्यता से उसे दृढ़ता देगा।"×

इसी पर पादरियों ने प्रमाण दिया है—

(यशाया ७।१४ देखो पृष्ठ ७३७ लुध्याना १८८३ ईस्वी)

तृतीय कारण :—

क्योंकि उस लड़के के बरे को त्यागने से और शुभ को चुन लेने के ज्ञान से आगे वह भूमि जिसके दो राजाओं के कारण तूवह खेत है उजाड़ हो जाएगी और अध्याय ९ आयत ५ से :—क्योंकि हमारे लिए एक बालक उत्पन्न हुआ और हमें एक पुत्र दिया गया जिसके कन्धे पर प्रभुता होगी और वह उस नाम से खाया जावेगा। आश्चर्यमय मंत्री, शक्तिमान् ईश्वर, सनातन पिता, कस्तल का राजपुत्र" (पृ० ७)

× जहां तक हमें पुरातन अनुवाद मिले हैं उन सब में ऐसा ही है जैसा कि देखो बाईबल नागरी सन् १८६० ईस्वी लंडन में अध्याय ७ आयत १६ में इस प्रकार लिखा है।

और उसका समर्थन तारीख बी शमऊन से प्रगट है कि यह चमत्कार उसी समय उन्हीं दिनों में पूर्ण हो चुका था किसी और समय से उस का कोई सम्बन्ध नहीं। मसीह के उत्पन्न होने से अहाज बादशाह को क्या लाभ था? और उस युद्ध और घबराहट के अवसर पर मसीह की शुभ सूचना से क्या सम्बन्ध था? और अहाज बादशाह और मसीह का परस्पर क्या सम्बन्ध था? क्योंकि वह बादशाह मसीह से ७४० वर्ष पूर्व हो चुका है। जबकि मसीह के माता पिता भी अस्तित्व के पृष्ठ पर प्रगट न हुए थे।

और यह तो प्रत्येक प्रकार से प्रगट ही है कि उसी समय का हिज़कियाह बादशाह इस लड़के का रूप है क्योंकि वही हजरत दाऊद की चौदहवीं पीढ़ी में था और उसी को दुःख था और उसी पर उसके लिए बाईबल के कथनानुसार उन्हीं दिनों में इलहाम हुआ था।

पादरी हनरी टी० जी० स्काट साहब अपने भाष्य में कहते हैं (मती १।२२) यह नबुव्वत यशाया नबी से अहाज बादशाह के समय में मसीह से ७४० वर्ष पूर्व लिखी गई। (देखो यशाया ७।१४-१७)

उन दिनों सूर और इसराईल के बादशाह यहूदिया देश पर युद्ध के लिये चढ़ाई करने वाले थे और अहाज असूर्या के बादशाह से सहायता चाहने को हो थे कि यशाया नबी ने उस से कहा कि खुदा तआला से एक निशान (चमत्कार) मांग, जिस से ज्ञात हो कि वह तुझे बचावेगा। किन्तु अहाज ने न मांगा। तब यशाया नबी ने उस से कहा कि खुदा स्वयं तुझे निशान देगा अर्थात् एक कुंवारी गर्भवती होगी और बेटा जनेगी और उस का नाम अमान वाईल रखेगी। अब इस साध्य विषय की सत्यता पर विचार किया जाए कि प्रथम अर्थ इस निशान के यह हैं कि उस समय के यहूदी सूर और इसराईल के बादशाहों से बचेंगे और हर अवस्था में पहिले अर्थ अवश्य हैं किन्तु दूसरे अर्थ यह भी निकलते हैं कि यह निशान (चमत्कार) यसूअ मसीह से सम्बन्ध रखता है जो कुंवारी से उत्पन्न हुआ और अमा नवाईल अर्थात् खुदा हमारे साथ है और जो हमें अपने शत्रुओं से बचाता है। किन्तु जो कोई समझे कि दूसरा अभिप्राय उस नबुव्वत से नहीं निकलता तो यही उसकी व्याख्या हो सकती है कि जो खुदा तआला ने उस लड़के के सम्बन्ध में नबी के द्वारा कहा था, वह यसूअ के उत्पन्न होने से सब अनुकुल है अर्थात् अनुकूलता की दृष्टि से पूरा हुआ कि एक बात का वर्णन हुआ और दूसरी बात इस की भान्ति घटित हुई (मती १।२३)

यशाया नबी के वर्णन से उस का प्रगट अभिप्राय यह पाया जाता है कि खुदा अपने लोगों का रक्षक व सहायक होगा। किन्तु संभव है कि इस स्थान पर एक उच्च अर्थ निकलते हैं कि खुदा शरीरी हो कर हमारे मध्य वर्तमान है। कुछ भी हो यसूअ की पवित्रता केवल इस नाम से सिद्ध न हो तो भी यदि हम विचार करें कि मती किस अनुमान और किस अवसर पर उसका वर्णन करता है तो एक युक्ति निःसन्देह उस की पवित्रता के प्रमाण की निकलती है।" (देखो हनरी टी जी स्काट की तफसीर (भाष्य) इञ्जील मती रोमन पृ० २५ इलाहाबाद)

अब एक बात विचारणीय है और वह यह है कि यशाया अध्याय ९ आयत ६ में एक प्रतीक शेष है जिसका अनुवाद उर्दु बाईबल में यह किया गया है कि :—

"अजीब मशीर खुदाए कादिर, अबदीयत का बाप, सलामती का शाहजादा।"

ज्ञात हो कि यह अनुवाद यथार्थ नहीं क्योंकि जिस शब्द का अनुवाद खुदाए कादिर (सर्व शक्तिमान् ईश्वर) किया गया है वह मूल इबरानी की बाईबल में "ईल गिबोअर" है जिस के अर्थ हैं सरदार

जोर ग्रावर (बलवान् सेनापति अथवा पहलवान) न कि खुदाए कादिर (देखो विलियम होपर का इबरानी कोष पृष्ठ ५९ और उर्दु बाईबल १८६७ ईस्वी मिरजापुर पृष्ठ ७११ और जबूर ३२ की आयत ३) इनमें इसी इबरानी गबोअर शब्द का ग्रनुवाद पहलवान किया गया है। इसके अतिरिक्त स्वयं बाईबल में भी यह शब्द बहुत बार मनुष्य के लिये आया है। विचार से बाईबल इबरानो के निम्न स्थानों को देखो :—

उत्पत्ति १८।१२ साराने इबराहीम को कहा। निर्गमन ७।१ में खुदा ने मसा को कहा जबूर १२।६ में पदाधिकारियों के लिए बोला गया।

जिबराईल ग्रौर गिबराईल भी उस के समानार्थक प्रतीत होता है। ईरानियों ग्रौर इबरानियों में गिबर और ग्ररबी में जिबर एक हैं। गिबराईल के उलटाने से ईल गबूअर बन जाता है। अतः इस का अनुवाद बलवान् पहलवान है न कि खुदाए कादिर।

दूसरा शब्द जिस का अनुवाद "ग्रबदीयत का बाप" किया गया है। वह इबरानी में "ग्रबीअद" है। इसके अर्थ अबदीयत का बाप अर्थात् नित्यत्व का पिता नहीं। क्योंकि अद के ग्रर्थ समय के हैं ग्रौर इसी समीप अरबी ग्रहद है ग्रौर अबी के ग्रर्थ पिता के हैं। जिस के समीप ग्ररबी "अब" है ग्रौर ग्रबी, ग्रबू मी इस अर्थ में ग्राए हैं। परन्तु यहूदी परिभाषा में पिता शब्द के ग्रर्थ मालिक के हैं। ग्रतः अर्थ हुए समय का बादशाह।

ग्रब जो कुछ विचार से देखा जावे तो बाईबल का जानने वाला मनुष्य भली भान्ति समझ सकता है कि यह सारे गुण हिजकियाह बादशाह में विद्यमान थे। अर्थात् बहुत बुद्धिमान्, बलवानों का सरदार, समय का बादशाह, शान्ति का वाहक, क्योंकि उस को विचित्र विजय प्राप्ति हुई उसके साम्मुख्य में शाह असूर की एक लाख पचासी हजार सेना युद्ध के बिना मर गई। ग्रौर शाह असूर भाग गया। (विस्तार देखो सलातीन २ अध्याय १९ ग्रायत १-३६ तक ग्रौर देखो सलातीन २-१८।१५-१६)।

चतुर्थ कारण :—

वह लड़का जिस के उत्पन्न होने की सूचना थी और जिस के सम्बन्ध में अहाज को सुसमाचार दिया गया था वह उन्हीं दिनों में उत्पन्न होकर युवावस्था में लड़कर विजय प्राप्ति में सफल होकर यहूदियों को शान्ति तथा अन्य शोभनीय विजय प्राप्त कराने के पश्चात् चिर समय तक राज्य कर के मर भी गया (देखो सलातीन २ अध्याय २० ग्रायत २१)

ग्रब कुंवारी गर्भवती होगी। इस शब्द का ग्रन्वेषण भी ग्रावश्यक है। और इसी पर ईसाईयों का आधार है। इस को कुछ अधिक ध्यान से देखो। मूल शब्य यशाया की पुस्तक में अलमा है। जिस का अनुवाद याहूरियों ने मसीह के विश्वास के लिये कुंवारी किया है। और हमारे हिन्दु भाई अज्ञान वश इसी की नासमझी में सत्यमार्ग से विचलित होकर मसीह दास ग्रौर ईसा चरण बन गए। शोक!

ज्ञात हो कि यह ग्रनुवाद ठीक नहीं। अ़लमा के अर्थ वास्तव में बालिग़ युवति के हैं।
(देखो विलियम हूपर का इबरानी कोष पृ० २९०)

कुंवारी के लिए इब्रानी में शब्द बहतूला है। (देखो वही कोष पृष्ठ ५९)

प्रोफेसर राबिनसन की भी यही सम्मति है कि अ़लमा नव वधू अथवा उस स्त्री को कहते हैं जिस

का नया विवाह हुआ हो और इस प्रोफ़ैसर ने अपने इस वचन को पुष्टि में यूनानी भाषा के प्रसिद्ध नामी कवि हूमर का एक छन्द भी लिखा है और उक्त प्रोफ़ैसर का विचार है कि उक्त आयतों में नवी का शब्द अ़लमा से युवती नव वधू की ओर इंगित है। (देखो कीटो साईकलो पेडिया रौमन कैथुलिक)

और विलियम ग्रीनूस साहब जिन्होंने आंगल भाषा में इबरानी कोष के वर्णन में पूर्ण अन्वेषण के पश्चात् एक पुस्तक लिखी है। कहते हैं कि "अ़लीम पुल्लिग है उसके अर्थ युवा, विवाह योग्य के हैं। (देखो उनकी पुस्तक संस्करण १८५८ ईस्वी)

समवाईल १ अध्याय १७।५६ में यही शब्द है वहां यही अर्थ लिये गए हैं। अ़लमा इसका स्त्री-लिंग में रूप बनता है। उसके अर्थ हुए जवान लड़की। देवी, स्त्री, विवाह योग्य। और यही (अ़लमा के) फ्रैंड डिक्शनरी यूनानी और अनुवाद अक्वैला और थोडोशन, समक्सन में किए गये हैं—जो हमने किए।

इस काल के पादरियों ने मसीह को कुंवारी से सिद्ध करने के लिए (जिससे कहीं चमत्कार मिथ्या न हो जाए और यूसुफ़ का बेटा सिद्ध न हो जाए) बाईबल के सब स्थानों को ईसाई मत की पुष्टि के लिए बदल कर सब स्थानों पर कुंवारी कर दिया। जज़ाकल्लाहो।+

किन्तु हम उनको डंके की चोट से कहते हैं कि इस कोष का अ़लमा में कुंवारापन किसी प्रकार प्रविष्ट नहीं है। कुंवारी के लिए इबरानी में शब्द "बतूला" है (देखो ग़ज़लुलग़ज़लात अध्याय ६।७)

और यह बात जिसके अन्वेषणार्थ हमने लेखनी उठाई है, साधारण ईसाईयों को छोड़कर विशिष्ट यथार्थवादियों को ज्ञात भी है परन्तु वह भी (ईश्वर जाने किस बात की प्रतीक्षा कर रहे हैं) समझने पर भी तटस्थ हो रहे हैं और सत्यता पर कटिबद्ध होने के लिए समुद्यत नहीं हुए। जैसा कि एक अन्वेषण स्वभाव पादरी अर्थात् मिस्टर अब्दुल्लाह आथम साहब कहते हैं कि यह तो हम को ज्ञात है कि अलमा और बटेल शब्द में यह भेद है कि अ़लमा में विवाहिता और अविवाहिता की कोई शर्त नहीं। जब कि बतेल अविवाहिता को कहते हैं। (देखो उनकी पुस्तक नमूनाए आज़ादी पृष्ठ १२ अमृतसर)

श्रीमन्! निःस्सन्देह हमारा भी तो यही भाव है कि अलमा में विवाहिता और अविवाहिता का विशेष शर्त नहीं है। अर्थात् विवाहित, अविवाहित, बालिग़ युवती, विवाह योग्य को कहते हैं। विवाहिता को भी अलमा कहते हैं। और युवती बालिग़ स्त्री को भी अलमा कहते हैं। किन्तु कुछ कहिए तो सही कि पुनः ईसाईयों ने क्यों अकारण खुदावंद मसीह के पक्षपात में "कुंवारी गर्भवती होगी" अनुवाद किया। जब कि कुंवारी के लिए बतेल शब्द है अतः यह अनुवाद चाहिये था और ऐसा ही है कि विवाहिता स्त्री गर्भवती होगी अथवा युवती स्त्री गर्भवती होगी।

क्योंकि मरियम किसी अवस्था में और किसी प्रकार कुंवारी नहीं थी। किन्तु बालिग़ युवती विवाहिता स्त्री थी। और रोमन कैथुलिक संप्रदाय की ओर से इन्जील उर्दू आगरा कैथोलिक चर्च में बिकती है। उसमें भी कुंवारी अनुवाद नहीं किया गया। किन्तु "बियाही हुई" अनुवाद किया गया है।

हमारे कृपालु पादरी आथम साहब ने एक युक्ति दी हैं। अलमा का अनुवाद कुंवारी करने पर जिस युक्ति से बढ़कर किसी पादरी के पास और कोई युक्ति नहीं। हम उस पर बहुत ध्यान से विचार करते हैं।

+ईश्वर तुम्हें यथार्थ फल दे। (भावार्थ) (अनुवादक)

डिप्टी अब्दुल्लाह् आथम उसी पुस्तक में लिखते हैं कि :—

"सपोरजन्ट में जो अनुवाद प्राचीन काल का इबरानी से यूनानी में सत्तर यहूदी विद्वानों ने लगभग मसीह् जन्म से तीन सौ वर्ष पूर्व किया था (उसमें) अलमा शब्द का अनुवाद कुंवारी ही किया गया है।"

(खंडन) जब कि उसी सपोर जंट वाले अनुवाद में अलीम का अनुवाद बालिग़ युवा हुआ है। और अलमा उसका स्त्रीलिंग है। अतः पुल्लिंग के अर्थ युवा पुरुष और स्त्रीलिंग के अर्थ युवती स्त्री ही होने चाहियें। जिसमें कुंवारापन अथवा अविवाहित अवस्था किसी प्रकार प्रविष्ट नहीं। अतः स्पोरजंट में यशाया के अ़लमा शब्द का अनुवाद यथार्थ हुआ है। क्योंकि वह यशाया नबी की स्त्री विवाहिता थी। जैसा कि वह कहता है कि :—

बा अहलिया नज़दीकी करदम ओ हामला शुदा पिसरा राज़ायद।

अर्थात् मैं नबिया के पास गया। सो वह पेट से हुई और एक बेटा जनी।

(यशाया अध्याय ८।३-४)

मसीही विद्वान् भी इस बात (प्रगट अंधकार) से परिचित नहीं हैं कि अ़लमा के अर्थ युवती स्त्री अथवा विवाहिता नव वधू के हैं। किन्तु शोक है तो यह है कि वह ईसाई होने की अवस्था में मती पर भी संदेह नहीं कर सकते। जैसा कि हमारे कृपालु विद्वान् श्रीमान् अब्दुल्लाह् आथम साहब कहते हैं कि :—

"यथार्थ अन्वेषण का दाता मती और लूक़ा में से केवल लूक़ा को हो है" अर्थात् मती को नहीं।

(देखो नमूना आज़ादी पृ० ८)

×मती की भूलों को अन्य पादरियों ने भी स्वीकार किया है। और यही कारण है कि पादरियों को इस भविष्यवाणी और मती को इञ्जील में मिलान करते हुए बहुत कठिनता उपस्थित हो रही है।

कुछ का विचार है क्योंकि मसीह कुंवारी मरयम से उत्पन्न हुए थे अतः युवती स्त्री से उत्तम रीत्या उत्पन्न हुए औन वह सुसमाचार जिस में इन का प्रत्यक्षतः युवती से उत्पन्न होना वर्णन हुआ है और दूर की खेंचातानी द्वारा कुंवारी से भी अभिप्राय प्रतीत होता है। (भविष्याणी) पूर्ण रीत्य ठीक रही।

इस का उत्तर यह है कि यह सब सम्मतियां उसी मिथ्या विश्वास पर आधारित है कि मसीह वास्तव में मरियम कुंवारी से (खुदा नखास्ता=ईश्वर न चाहे) उत्पन्न हुए थे। किन्तु इस प्रकार का तर्क करना और मसीह की उत्पत्ति को सृष्टि नियम के विरुद्ध प्रथम मान लेना-उसके पश्चात् हजरत यशाया नबी के सुसमाचार से अनुकूलता करने के लिये खेंचातानी करना लाभरहित यत्न है जो बुद्धिमता और सत्यान्वेषण के सर्वथा विरुद्ध है।

×तारीखे ईस्वी श्री डाक्टर डैविड फ्रीडर्क अस्ट्रास साहब लिखित में मती की बहुत सी अशुद्धियां प्रगट की गई हैं जिनका उत्तर आज तक किसी ईसाई से न बना। वह लिखते हैं कि मती से इतिहास या तिथि लिखने में बहुत सी अशुद्धियाँ हुईं। अतः इसकी वाणी विश्वसनीय नहीं।

क्योंकि यशाया का सुसमाचार (बुशारत) अहाज बादशाह के लिए है। जो मसीह से सात सौ वर्ष पूव हुआ है और उस की रक्षा के लिये एक लड़के के होने का उसे शुभ समाचार दिया गया और वह लड़का हो भी गया, विजय प्राप्ति कर गया। यहूदियों को सलामती (सुरक्षा) भी दे गया। अतः मसीह से यशाया की पुस्तक का किसी प्रकार और कदापि राई समान भी सम्बन्ध नहीं।

माननीय श्रेष्ठ पादरी रिचार्ड वाटसन साहब फरमाते हैं कि :—

"यह सामान्य निश्चय था कि हजरत ईसा यूसुफ के बेटे हैं और उनका चमत्कार रूपेण उत्पन्न होना (जैसा कि आज कल ईसाई मानते हैं) सर्वथा प्रसिद्ध नहीं किया गया था। किन्तु यूसुफ और मरियम के हृदयों में छिपा था। यदि यह बात प्रसिद्ध हो जाती तो लोग प्रायः हजरत मरियम को तंग किया करते। लूका के इस वाक्य से कि "वह यूसुफ का बेटा समझा जाता था" यह प्रगट होता है कि मसीह के उन्नत होने के पश्चात् यह बात ज्ञात हुई और किसी सन्देह के बिना (केवल धार्मिक विश्वास युक्ति और तर्क के बिना) यह मान लिया गया। इसी कारण से यह बात मती और लूका ने इञ्जील में प्रविष्ट की है।

यहां पर हम यह भी बताना चाहते हैं कि यशाया की भविष्यवाणी का मसीह से किसी प्रकार का सम्बन्ध हो भी नहीं सकता। निम्न युक्तियों के आधार पर :—

(१) मसीह का नाम अम्मानवाईल नहीं रखा गया किन्तु यसूअ रखा गया। जो दोनों नाम-नाम और अर्थ की दृष्टि से भी परस्पर विरुद्ध हैं। क्योंकि यसूअ के अर्थ हैं लोगों को पाप से बचाने वाला। (देखो मती १।३३) और अम्मानवाईल के अर्थ हैं—खुदा हमारे साथ (मती १।२४), किन्तु हिजकियाह बादशाह का दूसरा नाम भी अथवा वास्तविक नाम भी अम्मानवाईल रखा गया।

(देखो यशाया की पुस्तक अध्याय ८।८)

(२) दही और शहद खाया करेगा। मसीह ने यह वस्तु सारी आयु में नहीं खाई। परन्तु हिजकियाद बादशाह खाया करते थे। किन्तु उस के समय में उसकी बहुत ही अरजानी (सस्तापन) थी।

(देखो यशाया अध्याय ७।२,२३)

(३) दोनों बादशाहों के मरने का मसीह से कोई सम्बन्ध नहीं किन्तु आखिर और हिजकिया से है। (देखो यशाया की पुस्तक और सलातीन की पुस्तक)

पंचम कारण :—

दाऊद के तख्त पर बैठना भी हजरत मसीह के भाग्य में नही हुआ और न होना चाहिये था। पादरी साहिबान मती का प्रमाण देते हैं :—

"नबी के द्वारा यूं कहा है। बैतुल्लहम यहूदाह की भूमि ! तू यहूदाह के सरदारों में कदापि तुच्छ नहीं है। क्योंकि तुझ में से एक सरदार निकलेगा जो मेरी जाति इसराईल का पक्षपोषक होगा।"

(मती २।६)

और योहन्ना की इञ्जील का प्रमाण देते हैं कि :—

"क्या पुस्तकों में यह बात नहीं कि मसीह दाऊद की नसल (जाति) से और बैतुल्लहम की बसती (नगर) से जहां दाऊद था आता है। (योहन्ना ७-४२)

और लूका का प्रमाण भी देते हैं कि "खुदावन्द खुदा उस के बाप दाऊद का तख्त उसे देगा।" (लूका २।३२)

और इन प्रत्येक दोनों प्रमाणों में पादरियों ने मीकाहनवी ५।२ का प्रमाण भी दिया है। किन्तु वहां मसीह का कोई नाम भी नहीं है।

अब हम इन सब प्रमाणों का मौखिक बातों से नहीं किन्तु स्वयं बाईबल से ही खंडन करते हैं। जहाँ पर लिखा है कि :—

"इसलिए यहूदाह के बादशाह यहू वकम के सम्बन्ध में खुदावन्द यूं कहता है कि उस की नसल में से कोई न रहेगा, जो दाऊद के तख्त पर बैठे।" (यरमियाह नबी की पुस्तक ३६।३०)

अब कुछ कृपा करके मती १।१२ को देखिये। जहां लिखा है कि मसीह उस की नसल से है। अतः वह किसी प्रकार भी दाऊद के तख्त पर नहीं बैठ सकता।

मती और लूका के अतिरिक्त मरकस और यूहन्ना मसीह की उत्पत्ति का वर्णन तक भी नहीं करते। हां, यूसुफ का बेटा होने को स्वीकार करते हैं।

"वह यूसुफ का बेटा यसूअ नासरी है।" (यूहन्ना १।२५)

"और उन्होंने कहा कि यह यसूअ यूसुफ का बेटा नहीं जिस के बाप को हम जानते हैं। (यूहन्ना ६।४२)

"क्या यह मरियम का बेटा बढ़ई नहीं ? और यअकूब और यूबिस और यहूबाह व शमऊन का भाई नहीं और क्या उस की बहनें हमारे पास नहीं है ? (मरकस ६।३)

इनके अतिरिक्त स्वयं मती और लूका में उस को यूसुफ का बेटा लिखा है :—

"क्या यह बढ़ई का बेटा नहीं और उसकी मां मरियम नहीं कहलाती" (मती १३।५५)

"और जिस समय+माता पिता उस लड़के यसूअ को अन्दर लाते थे जिस से उस के लिए शरीयत की पद्धति पर आचरण करें।" (लूका ३/२७)

+पादरी ठाकुरदास साहिब फ़रमाते हैं कि निरसन्देह इञ्जील से ऐसा ही प्रतीत होता है कि प्रथम मरियम और यूसुफ़ के अतिरिक्त अन्यों पर यह बात छिपी थी और हम यह बात भी मान लेते हैं कि यदि मरियम यूसुफ़ इस बात को प्रसिद्ध करते तो लोग प्रायः मरियम को कष्ट देते क्योंकि सामान्य विचार ऐसी ही उत्पत्ति के विरुद्ध था और न सृष्टि नियम के विरुद्ध उत्पत्ति की आशा की जाती थी।

और जब मरियम और यूसुफ़ को यह भय था। और दूसरी ओर लोगों के विचार अन्य प्रकार के थे तो ऐसे विचारों के कारण वह बैतुल्लहम के कार्यालय में यूसुफ़ का बेटा लिखा गया। जिस विचार का लूका वर्णन करता है। जब उसने देखा जिससे मसीह की वंशावली लिखे और अपनी ओर से यह बढ़ाया कि जैसा समझा जाता था और पुनः जैसी वंशावली को उपस्थित करता है। (इनफसाल विलादते मसीह १८८२ ई० सियाल कोट पृ० २९)

यह फरमाते हैं कि "आप लोगों के विचार से समझते हैं क मसीह यूसुफ़ के बीज से था। तो हम लोगों के ऐसे विचार या वगाही को इस दृष्टि से मिथ्या समझते हैं कि इस विषय में केवल मानुषी गवाही कुछ महत्ता नहीं रखती क्योंकि वह उस गर्भ के आंख देखे गवाह न थे और न हो सकते हैं।" (पृ० २९)

वह यूसुफ का बेटा था। (लूका ३।२३)

यह यूसुफ का बेटा यसूअ नासरी है। (यूहन्ना १।४५)

उसके माता पिता प्रतिवर्ष ईद फसह में यरोशलम जाते थे। (लूका २।४१)

वह लड़का यसूअ यरोशलम में रह गया। पर यूसुफ और उस (मसीह) की मां ने न जाना।
(लूका २।४३)

उस की मां ने उस से कहा। हे पुत्र! किस लिये तू ने हम से ऐसा किया, अर्थात् गुम हो गया। देख? तेरा बाप×और मैं कुढ़ते हुए तुझे ढूंढते थे। (लूका २।४८)

विशेष बात :—ईमानदार ईसाई भी मसीह को शारीरिक दृष्टि से मनुष्य मानते हैं। अतः आवश्यक है कि वह शारीरिक दृष्टि से मनुष्य के बीज से उत्पन्न हुआ। अन्यथा मनुष्य न होगा।

लतीफ़ा

ईसाई कहते हैं कि वह कुंवारी से उत्पन्न हुआ। हम कहते हैं कि सारा संसार कुंवारियों से उत्पन्न होता है। उसकी कोई विशेषता नहीं क्योंकि सब स्त्रियां आरम्भ में कुंवारी होती हैं।

कुछ लोग इस बात पर भूल कर जाते हैं कि यदि मसीह खुदा नहीं था। अथवा खुदा का बेटा नहीं था तो शिष्य उसे रब्बी क्यों कहते थे अर्थात् खुदा।

इसका उत्तर यह है कि यह पादरियों का धोखा और तुम्हारी ना समझी है। रब्बी के अर्थ खुदा के नहीं हैं किन्तु उस्ताद (गुरु) के हैं। (देखो लूका १।३८)

इब्ने मरियम के शब्द ने भी बहुत लोगों को धोखे में डाला है। किन्तु इस का कारण बहुत थोड़े लोग जानते हैं। और वह यह है कि अल्पायु में और मसीह की प्रसिद्धि से पूर्व ही यूसुफ की मृत्यु हो गई थी। सारे घराने पर मरियम के अतिरिक्त अन्य कोई बड़ा न रहा था।

(देखो जीवन चरित मसीह सैन्ट अनीन साहिब पृ० ७९)

किन्तु इब्ने मरियम (मरियम का बेटा) वर्णन करने से मसीह बिन बाप सिद्ध नहीं हो सकता। क्योंकि मूसा की उत्पत्ति जो कुरान में है। उस में केवल उस की माता का वर्णन है। उस के पिता का कुछ भी वर्णन नहीं। और न बाईबल में ही उस के माता पिता का नाम विद्यमान है। किन्तु संक्षिप्त

+पादरी ठाकुरदास साहब इस पर लिखते है कि :—

"इस स्थान पर नबियों शिष्यों ने मरियम का वचन वर्णन किया है। जिसने "तेरा बाप" का शब्द प्रयुक्त किया। किन्तु मरियम जानती थी कि वास्तव में यूं नहीं है। जैसा कि इसका भी शिष्यों ने वर्णन किया था। तो उससे स्पष्ट परिणाम यही निकलता है कि मरियम ने प्रगट रूपेण अथवा अपेक्षा से ऐसा कहा था और अधिक संभव है कि कहा करती होगी। (इनफसाले वलादत पृष्ठ २६)

पाठक वृन्द! मरियम तो यूसुफ़ को मसीह का बाप बताती है और पादरी साहब इनकार करते हैं। किन्तु क्या ऐसे अवसर की गवाही माता से बढ़कर कोई हो सकती है।

लिखा हुआ है कि लावी के घराने के एक व्यक्ति+ने जा कर लावी की नसल में एक स्त्री से विवाह किया। वह स्त्री गर्भवती हुई और बालक जनी और उसने उसे सुन्दर देख कर तीन मास तक छिपा रखा। जब आगे को न छिपा सकी तो टोकरी में रख कर नदी में डाल दिया। हां, जब फिरऔन की बेटी ने नदी से उसे निकलवा कर उसे पाला और जब लड़का बढ़ा तब वह फिरऔन की बेटी का बेटा ठहरा और उस ने उस का नाम मूसा रखा।

(देखो खुरूज-(बहिर्गमन) अध्याय २ आयत १-१० तक)

मूसा के अतिरिक्त अन्य बहुत लोगों की प्रसिद्धि माता से प्रसिद्ध है। इब्ने हिन्दह और इब्ने अमीना। यह दोनों प्रसिद्ध कवि हुए हैं किन्तु दोनों अपनी माता के नाम से प्रसिद्ध हैं।

(देखो दारुल्म आरिफ जिल्दी)

इन के अतिरिक्त इब्ने मरियम एक कवि भी हुआ है। (देखो विलादते मसीह पृष्ठ ७५)

हिन्दुओं में भी पिता होने पर भी कुछ व्यक्ति केवल माताओं के नाम से प्रसिद्ध हैं—कुन्ती पुत्र युधिष्ठिर=कुन्ती का बेटा युधिष्ठिर (देखो महाभात)

सत्यवती सुत=सत्यवती का बेटा व्यास। (देखो महाभारत)

अंजना पुत्र हनुमान्। (देखो रामायण)

गांगेय भीष्म=गंगा का पुत्र भीष्म (महाभारत)

गरुड़ का नाम वैनतेय=विनता का पुत्र। (रामायण)

मआज़ल्लाह (ईश्वर से रक्षा मांगता हूं)

क्या यह सब खुदा के बेटे थे! जिस प्रकार यह सब माता के नाम पर प्रसिद्ध हो जाने के कारण भी खुदा के बेटे नहीं थे। इसी प्रकार मसीह भी इब्ने मरियम=मरियम का बेटा कहलाने पर भी यूसुफ़ का बेटा था न कि खुदा का।

कुछ ईसाई अविद्या वश मसीह के प्रेमपाश में फंसे हुए मरियम को समस्त जीवन चार पांच पुत्र पुत्रियां उत्पन्न होने पर भी कुंवारी रहने का विश्वास रखते हैं और ऐसे ही मुसलमान भी। क्योंकि उन का सारा विश्वास मौखिक तक़लीद (अनुकरण) पर है। हज़रत स्वयं उम्मी (अनपढ़) थे।

किन्तु शोक कि वह इञ्जील से अपरिचित हैं। यदि यूसुफ़ मरियम का पति है। यदि मरियम यूसुफ़ की पत्नी है। यदि ईसा मरियम और यूसुफ़ का बेटा है तो युत्रीस, यअक़ूब, यहूदा और शमऊन अवश्य उसके भाई हैं। अर्थात् मरियम कुंवारी के उदर से उत्पन्न हुए हैं और इसी प्रकार उसकी बहनें भी हैं। क्योंकि इञ्जील में लिखा है। क्या यह मरियम का बेटा बढ़ई नहीं? और यअक़ूब और योबीस और यहूदा शमऊन का भाई नहीं और क्या उसकी बहनें हमारे पास नहीं हैं? (मरकस ६।३)

यसूअ़ ने भी इसका इनकार नहीं किया किन्तु केवल यह कहा कि :—

+शोक कि बाईबल के खुदा को भी मूसा के माता पिता का पता नहीं लगा। अन्यथा अवश्य लिखते। जब कि साधारण २ लोगों की वंशावली लिखी हैं। यह नादानी और खुदाई का दावा।

"नबी बेइज्ज़त नहीं किन्तु अपने देश में और अपने परिवार और घर में। और वह कोई चमत्कार वहां न दिखा सका।" (मरक़स ६।४)

इसी प्रकार देखो (योहन्ना २।१२ मती १३।५५ मरक़स ३।३१ से ३५ लूक़ा ८।१० से २१ योहन्ना ७।३-१० लूका २३।१६)

फ्रांस देश के एक योग्यतम इतिहासज्ञ अरनिष्ट अनीन साहब ने इस कठिनाई को इस प्रकार खोला है कि यह चार व्यक्ति जो कि इन्जील मती १३।५५ मरक़स ६।३ में वर्णित हुए हैं और भी दूसरे स्थान पर मरियम और कलियाफस के बेटे गिने गए हैं। यह कठिनाई इस बात के समझने से दूर होती है कि इन दो सहनाम बहनों मरियम के तीन २ चार २ लड़के एक ही नाम के थे। मसीह के वास्तविक भाई पूर्व उससे शत्रुता रखते थे। जब इन्जील के लिखने वालों ने कलियाफ़स के लड़कों को प्रत्येक समय मसीह के साथ देखा और इनका भाई कहलाते सुना तो भूल से कुछ स्थानों पर सगे भाईयों के नाम के स्थान पर उनका नाम लिख दिया। मसीह के सगे भाई अपनी माता की भान्ति उनकी मौत के पश्चात् प्रसिद्ध हुए। किन्तु पुनरपि उनको इतनी प्रसिद्धि प्राप्त न हुई थी। जैसा कि उनके मुसेरे भाईयों को हुई। मसीह की बहनें नासिरह में ब्याही गई थीं। मसीह ने अपनी आरंभिक युवावस्था के दिन वहां ही व्यतीत किये।" (देखो मसीह का जीवन चरित लंडन पृष्ठ ४६)

एक और अन्वेषक विद्वान् इतिहास वेत्ता भी इसका समर्थन करके मरियम के संबंध में लिखता है कि इन्जील से हर अवस्था में सिद्ध है कि मसीह के सगे भाई बहनें कुवारी मरियम के उदर से थीं।

पुनः वह लेखक लिखता है कि :—

"इस बात के मानने में उन लोगों के अतिरिक्त जो मरियम को नित्य कुंवारी के सिद्धान्त को मानते हैं (अन्य) किसी को कुछ कठिनाई प्रतीत नहीं होती और यदि सब आक्षेपों को मान भी लिया जाए तो भी इन्जील मती १।२४,२५ का क्या उत्तर होगा ? जहां लिखा है कि यूसुफ अपनी पत्नी को अपने पास ले आया और उसको न जाना, जब तक वह अपना पहलोठा बेटा न जनी। इसी प्रकार इन्जील लूका २।६,७ में लिखा है कि उसके जनने के दिन पूरे हुए और वह अपना पहलोठा बेटा जनी।"

अतः यदि शिष्यों (नबियों) को यह निश्चय न होता कि मसीह के अन्य छोटे भाई बहिनें भी हैं। तो वह कदापि उसको पहलोठा बेटा न कहते।" (देखो साईकलो० बरतानिया जिल्द ४)

योग्य और ईमानदार पादरियों ने जिन्हें मसीह से बहुत अधिक प्रेम था—बहुत यत्न किया है कि मरियम को सदैव के लिये कुंवारी सिद्ध करें। इस अतिशय प्रेम ने उनके मन में यहां तक प्रभाव डाला कि उन्होंने मसीह और मरियम पर बहुत अधिक संदेह करने वाले वाक्य इन्जील से जान बूझ कर निकाल दिये। जैसा कि योरोपियन विद्वान् हारन साहिब ने फ़ाफ़ साहब की पुस्तक से इन्जील में दीनदारों की प्रशंसा करने के संबंध में भी सविस्तार वर्णन किया है। जैसा कि इन्जील मती १।१८ में यह शब्द "पूर्व इसके कि वह सहवास करें और मती १।२५ में "उसका पहलोठा" शब्द कुछ पुराने ग्रन्थों में जान बूझ कर छोड़े गये हैं, जिससे हज़रत मरियम के सदैव के कुंवारेपन पर संदेह न होने पाए" देखो हारन साहब की पुस्तक जिल्द २ अध्याय ८ संस्करण १८८२ ईस्वी।

और रोमन भाष्य में हनरी टी. जी स्काट साहब ने भी पक्षपाती पादरियों से डरते २ दबो ज़बान से उसको स्वीकार किया है। (देखो उक्त भाष्य इलाहाबाद पृष्ठ २५ मिशन प्रेस)

मती के इस वाक्य (जब उसकी सगाई) मरियम की मंगनी यूसुफ़ के साथ हुई तो उनके इकट्ठे होने से पूर्व वह पवित्रात्मा से गर्भवती पाई गई। (मती १।१८)

(इस वाक्य) ने भी बहुत से लोगों को भ्रम में डाला है। और यह वास्तव में दो कठिन वाक्य हैं। प्रथम मंगनी और दूसरा इकट्ठे आने से पहिले।

स्पष्ट हो कि मंगनी का उस समय एक ढंग यह भी था कि पति पत्नी सहवास करें। जैसा कि लिखा है कि :—

"मंगनी (सगाई) के उचित होने के लिए अवश्य था कि तीन पद्धतियों में से एक पर अवश्य आचरण किया जाए।

(१) धन वा कोई वस्तु सगाई के चिह्नरूप में लड़की को (यदि वह आवश्यक हो) तो उसके पिता को दिया जाता।

(२) पत्र या लेख बद्ध वचन लड़की या उसके पिता को पुरुष देता।

(३) सहवास जबकि स्त्री पुरुष दो गवाहों के सम्मुख सगाई का वचन कहकर एकान्त में चले जाते थे। किन्तु यह आश्चर्य माना जाता था और पुरुष को सावधान रहने की आज्ञा दी जाती थी। (देखो केटोज़ साहब का साईक्लोपीडिया मैरिज की व्याख्या)

और ऐसा ही डाक्टर समिथ साहब की बाईबल डिकशनरी में भी तालमूल यहूद से यह तीनों बातें लिखी हुई हैं, अर्थात् धन, वचन बद्धता और सहवास। और इसको पादरी ठाकुरदास साहब ने भी इनफसाल पृष्ठ ३६ पर स्वीकार किया है।

इससे स्पष्ट प्रगट है कि शरीयत+ यहूद के अनुसार सगाई समय यूसुफ और मरियम एकत्र हुये थे और सहवास किया था और उसी प्रथम सहवास में जैसा कि सहस्रों बार होता है। मरियम गर्भवती हो गई थी। अतः सिद्ध है कि मंगनी वाली स्त्री केवल एक बार सहवास करके जब तक माता पिता के घर रहती थी तब तक वह मंगेतर कहलाती थी और जब पति के घर आ बसती थी अथवा पति उसे अपने घर ले आता था। तब मंगेतर के स्थान पर जोरू (पत्नी) कहलाती थी।

+तौरेत में लिखी यहूदी शरीयतः—

"यदि कोई पुरुष पति वाली स्त्री से दुराचार करते पाया जाए तो वह दोनों मार डाले जाएं।" और जो लड़की किसी की मंगेतर हो और कोई अन्य व्यक्ति उसे नगर में पाकर सहवास करे तो उन दोनों को पथराव करो कि वह मर जाएं, इसलिये कि उसने अपने हमसाए की जोरू को दोष युक्त किया।

किन्तु यदि कोई पुरुष एक लड़की को जो किसी की मंगेतर है, मैदान में पाए और पुरुष बलपूर्वक उससे मिल बैठे तो केवल पुरुष मार डाला जाए।"

और यदि कोई पुरुष कुंवारी लड़की को पावे जो किसी की मंगेतर हो और उसे पकड़ के उससे सहवास करे

जैसा कि तौरेत की शरीयत निम्न टिप्पणी से प्रगट है कि उसने अपने पड़ौसो की पत्नी को रद्द किया। न यह कि कुंवारापन नष्ट किया।

अत: स्पष्ट सिद्ध है कि मरियम मंगनी के समय यूसुफ़ से गर्भवती हो गई और उन दोनों के यूसुफ के घर में एकत्र एक स्थान पर निवास करने से पूर्व ही वह गर्भवती पाई गई।

एक साथ आने के लिये यूनानी में दो शब्द हैं। एक सव, दूसरा अलतहापन, सबके अर्थ एक साथ और अलतहापन के अर्थ आना जाना के हैं। अत: अर्थ हुए एक साथ आना या जाना। अर्थात् पिता के घर के अतिरिक्त अपने पृथक् घर में पिता के घर से आना या पति के घर से पिता के घर में जाना। अर्थात् मरियम उस समय गर्भवती हो गई कि जब वह पिता के घर में प्रथम एकान्त वास में यूसुफ़ के पास गई थी और उसी समय वह यूसुफ़ के घर में एक साथ आने से पूर्व गर्भवती पाई गई और इस एक साथ आने के अर्थ जैसा कि हमने वर्णन किये हैं। वैसे ही इञ्जील में भी विद्यमान हैं।

(देखो मती १।२५)

अत: स्पष्ट सिद्ध है कि यदि यूसुफ का अपना गर्भ था। तो वह डरा क्यों ?

इसका पुण्यमय उत्तर यह है कि यहूदियों के नियमानुसार यदि उसकी स्त्री प्रथम सहवास में गर्भवती हो जाती थी। तो उसे संभवत: स्त्रियां डाँटती थीं अथवा केवल बड़ों की दृष्टि में कुछ शीघ्र कारी प्रतीत होता। जो प्रथम अवसर होने के कारण लज्जित होता है। इस से मती के कथनानुसार यूसुफ थोड़ा सा डरा और विचार किया (जैसाकि शीघ्रकारी (उतावला) जब पारिवारिक कष्ट सामने आता है तो घबराता है) कि छोड़ दूं किन्तु निर्धनता अथवा मरियम के सौन्दर्य या समझ आ जाने के कारण मौन हो गया। समझ गया कि सब के सिर पर यही बात गुजरा करती है। अत: इस कारण से न छोड़ सका। और यह भी ज्ञात हो कि यह बात केवल मती की ना समझी से ज्ञात होती है और उस को सत्यान्वेषण का दावा भी नहीं। किन्तु ऐसा ठीक दावा केवल लूका को है जैसाकि अब्दुल्लाह आथम के कथन से पोछे हम सिद्ध कर चुके हैं। अब देखिये कि लूका जैसा अन्वेषण स्वभाव क्या कहता है ? वह उस समय से पूर्व यूसुफ का कोई वर्णन नहीं करता। जब तक कि नाम लिखवाने के लिये यूसुफ़ अपनी धर्म पत्नी मरियम के साथ बैतुल्लस्म को गया। जैसाकि लिखता है :

और वह पकड़े जाएं तो पुरुष ने जो उसके साथ दुराचार किया। लड़की के पिता को ५० मिसकाल रुपये दे और वह उसकी पत्नी होवे। देखो इसतिस्ता (अध्याय २२ आयत २२,२३,२५,२६)

हमने तौरेत को ध्यान से देखा। कहीं भी विवाह पद्धति इससे अधिक विस्तार अथवा संक्षेप से भी नहीं पाई गई। यदि है तो कोई ईसाई बताए।

पादरी ठाकुरदास साहब ने भी "इन्फसाल" पृष्ठ ३६,३७ पर इसको स्वीकार किया है और आगे चलकर लिखा है कि यहूदियों की मंगनी की रसम में पुरुष और स्त्री के पति पत्नी रूपेण होकर रहने के वचन दृढ़ और पूर्ण हो जाते थे, और पुन: दोहराए न जाते थे और पुरुष स्त्री को तलाक़ के विना नहीं छोड़ सकता था और लड़की शरीयत की दृष्टि में उस भावी पति की पत्नी समझी जाती थी। (इनफसाले वलादत पृष्ठ १३८)

"और यूसुफ भी जलील के नगर नासरत से यहूदिया में दाऊद के नगर की जो बैतुल्लहम कहलाता है गया इसलिये कि वह दाऊद के घराने और सन्तान से था कि अपनी मंगेतर मरियम के साथ जो गर्भवती थी नाम लिखा जाए और ऐसा हुआ कि जब वह वहां थे उसके जनने के दिन पूरे हुए और अपना पहलोठा बेटा जनी।" (देखो लूका २।४-६)

पादरी साहेबान ! न्याय स्वभाव ! कुछ ध्यान से देखें कि मती १।२५ में लिखा है कि "वह अपनी पत्नी को अपने यहां ले आया परन्तु उस को न जाना। जब तक कि वह अपना पहलोठा बेटा न जनी और उस का नाम यसूअ रखा।"

लूका अन्वेषण लिखता है कि यूसुफ गर्भवती मरियम के साथ नाम लिखाने गया। उसे ज्ञात था कि उसे गर्भ है और वह मेरा है क्योंकि उस ने वहां कुछ भी किसी प्रकार का आश्चर्य या दुःख या शोक तक नहीं किया। और पुनः नियमानुसार प्रसन्नता पूर्वक उस का नाम रखा। खतना कराया और खुदावन्द के उपस्थित करने को दोनों पति पत्नी पहलोटे बेटे को यरोशलम में लाए और पुनः लिखा है कि जिस समय माता पिता उस लड़के यसूअ को अन्दर लाते थे जिससे उस के लिए शरीयत की रीत्यनुसार कर्म करें। तब यूसुफ उसके बाप और मरियम उस की माता ने इन बातों से आश्चर्य किया और जब वह खुदावन्द की शरीयत के अनुसार सब कर चुके, तो जलील में अपने नासरत नगर को चले गए। उस के माता पिता प्रति वर्ष फसह की ईद में यरोशलम को जाते थे।"

(देखो लूका अध्याय २ आयत ४ से ४१)

शोक कि इतने कार्य होते रहे। लड़का हुआ। खतना हुआ। मूसा की शरीयत पर आचरण आदि आदि किन्तु मरियम बेचारी अभी तक मंगेतर रही। विवाहिता नहीं लिखा और न विवाह का वर्णन किसी इञ्जील में है। विवाह के विना सहवास पाप है। अतः वह मंगेतर नहीं थी और यूसुफ के वीर्य से ही गर्भवती थी। और केवल यही एक बार नहीं किन्तु ५, ६ बार गर्भवती हुई। बाल बच्चे हुए। किन्तु शोक कि अब तक कुंवारी और मंगेतर रही। न कुवारापन टूटा और न विवाह हुआ। किन्तु यह कोई आश्चर्य की बात नहीं। क्योंकि लूका की इञ्जील में ही लिखा है :—

"और असीर के घराने से अना नाम फानोरेल की पुत्री एक बनियह थी। जो बहुत बूढ़ी थी। और उसने अपने कुंवारेपन से सात वर्ष एक पति के साथ विवाह किया था और वह विधवा लगभग चौरासी वर्ष की थी।" (लूका २।३६)

वास्तविक बात यह है कि लड़की माता पिता के घर में सदैव लड़की ही कहलाती है। चाहे कुछ लड़के बालों की माता भी हो। और सुसराल के घर में बेटी विवाहिता भी बहू (स्त्री) कहलाती हैं। और बूंढ़ी होने तक भी वह बहू ही कहलाएगी। चाहे उस के बेटे की नववधू भी आजाए।

माताओं के नाम पर लड़के क्यों प्रसिद्ध होते हैं :—निम्न कारण हैं :—

(१) माता किसी धनी की लड़की और पिता निर्धन हो तो भी प्रायः ऐसा ही होता है। अथवा माता प्रसिद्ध वंश से और पिता अप्रसिद्ध से। ×(१)

+(१) शम्साबाद ज़िला फ़रुख़ाबाद के नवाबज़ादे अपनी माता के नाम से लिखे जाते हैं जैसे नवाब जाफ़र अ़ली ख़ान बिन्त नवाब जाफ़र बेगम साहिबा और श्रीमती मलका क्वीन विक्टोरिया कैसरे हिन्द के राजकुमार अपनी माता के नाम से।

(२) नानके में लड़का उत्पन्न हो अथवा उसका पिता भी धर्म पत्नी के कारण उसके पिता के घर जा रहे।^(२)

(३) पिता छोटी आयु में मरजाए और घर का प्रबन्ध स्त्री के पास रहे।×(३)

(४) किसी व्यक्ति की बहुत स्त्रियां हूं। तो भी लड़के माताओं के नाम से प्रसिद्ध होते हैं।+(४)

(५) अथवा पति जीवित होने पर भी स्त्री कुलटा हो जाए या मरने पर दुराचारिणी हो अथवा हराम का लड़का हो। दुराचार से लिया गया हो तो भी माता के नाम से प्रसिद्ध होता है।×(५)

अब हम बताते हैं कि ईसाई ईसा को खुदा का कैसा बेटा कहते हैं।

(१) खुदा को किसी ने कभी न देखा। इकलौता बेट जो बाप की गोद में है। उसी ने बता दिया। (यूहन्ना १८)

(२) क्योंकि खुदा ने संसार को ऐसा प्यार किया कि उसने अपना इकलौता बेटा प्रदान किया। (यूहन्ना ३।१६)

(३) क्योंकि खुदाने अपने बेटे को जगत् में इसलिये नहीं भेजा कि संसार पर दंड की आज्ञा दे। (यूहन्ना ३।१७)

(४) बाप बेटे को प्रेम करता है। (यूहन्ना ३।२५)

(५) यही खुदा का बेटा है। (यूहन्ना १।३४

(६) आरंभ में कलाम (वचन) था, कलाम खुदा के साथ था और कलाम खुदा था और यही प्रारंभ में खुदा के साथ था। (यूहन्ना १।१-२)

(७) क्योंकि बाप भी अपने पूजकों को चाहता है। (यूहन्ना ४-२३)

(८) यह मेरा प्यारा बेटा है। जिस से मैं प्रसन्न हूं। (मती ३।१७)

(९) और मेरा प्यारा जिस से मेरा मन प्रसन्न है। (मती १२।१८)

(१०) उस बादल से एक आवाज आई इस विषय की कि यह मेरा प्यारा बेटा है। (मती १७।५)

(११) और उन्होंने जो नौका पर थे आ के उसे प्रणाम किया कि तू सत्यमेव खुदा का बेटा है। (मती १४।३३)

---

^(२) हनुमान् अंजना पुत्र।

×(३) मसीह मरियम का पुत्र।

+(४) कौशल्या पुत्र राम। केकयी पुत्र भरत। कुन्ती पुत्र युधिष्ठिर। कौन्तेय=अर्जुन।

×(५) वेश्याओं के लड़के प्रायः माताओं के नाम से पुकारे जाते हैं अथवा अन्य हरामी लड़के भी केवल माताओं के नाम से कहलाते हैं।

(१२) और बादल से एक आवाज निकली कि यह मेरा प्यारा बेटा है उसकी सुनो। (लूका ६।३५)

(१३) बादल से एक आवाज आई और यह कहती थी कि यह मेरा प्यारा बेटा है। (मरकस ६।७)

(१४) पवित्रात्मा शरीर के रूप में कबूतर की भान्ति उतरी और आकाश से एक आवाज यह कहती आई कि तू मेरा बेटा है। (लूका ३।२२)

(१५) ऐसी आवाज आई कि यह मेरा प्यारा बेटा है। जिससे मैं प्रसन्न हूं। (पतरस १।१७)

(१६) जिस कृपा से उस ने हमें उस प्यारे में स्वीकृति प्रदान की। (इफीस्यून १।६)

(१७) पिता मुझे इस लिए प्रेम करता है कि मैं कपना बलिदान देता हूं। (यूहन्ना १०।१७)

(१८) अपने प्रिय पुत्र के राज्य में शामिल कराया।× (कुलिस्स्यू १।१३)

(१९) खुदा के बेटे यसूअ मसीह की इञ्जील का आरंभ। (मरकस १।२)

(२०) आप को बचा यदि खुदा का बेटा है। (मती २७।४०)

(२१) क्योंकि वह कहता था कि मैं खुदा का बेटा हूं। (मती २७।४३)

(२२) आसमान से एक आवाज आई कि तू मेरा प्रिय पुत्र है। (मरकस १।११)

(२३) वह महान् होगा और खुदावन्द तआला का बेटा कहलाएगा। (लूक़ा १।३२)

(२४) सरदार काहन ने कहा कि यदि तू मसीह खुदा का बेटा है तो हम से कह। यसूअ ने कहा, उस से, हां, वही जो तू कहता है। (मती २६।६३)

(२५) उस के पश्चात् तुम आदम पुत्र को सर्वशक्तिमान् के दक्षिण ओर बैठे और आसमान के बादलों पर आता देखोगे। (मती २६।६४)

(२६) जिस से तुम ईमान लाओ कि यसूअ मसीह खुदा का बेटा है। (यूहन्ना २०।२१)

(२७) कुदरत के साथ उस के जी उठने के पश्चात् खुदा का बेटा सिद्ध हुआ। (रोमियों का पत्र १।४०)

(२८) उस के बेटे यसूअ मसीह का रक्त है कि सारे पापों से पवित्र करता है। (यूहन्ना की पत्री १।७)

(२९) पिता ईश्वर, और ईश्वर के पुत्र खुदावन्द यसूअ मसीह की ओर से। (यूहन्ना की पत्री २ १।३)

(३०) इसलिये तुम जा कर उन्हें पिता, पुत्र और पवित्रात्मा के नाम से बपतस्मा दो। (मती २८।२९)

+यह यूनानी शब्द है और इबरानी में प्रिय पुत्र की।

यह उपरिलिखित प्रमाण हैं। जिन को पादरी लोग पुस्तकों अथवा व्याख्यानों में, मेला, बाजारों में सुनाया करते हैं। उनमें से संख्या ८, ९, १०, १२, १३, १४, १५, २२ वह प्रमाण हैं, जो बादलों उन की प्रतिध्वनियों अथवा आसमानी आवाजें या कुमरियों, कबूतरों की आवाजें गुट गू आदि हैं। जिनका मसीह अथवा इञ्जील लेखकों के अतिरिक्त और कोई गवःह नहीं।

शेष+संख्या १, २ उसे इकलौता बेटा कहते हैं।

संख्या ३, ५, ९, २३, २६, २७, २८, २९, २० में केवल बेटा कहा है।

संख्या ४ में प्रिय पुत्र कहा है।

संख्या ६ में उसे खुदा कहा है।

संख्या ७, १६, १७, १८ में केवल प्रेम करने के कारण बेटा कहा है क्योंकि मैं खुदा से प्रेम करता हूं। अतः उस का बेटा हूं।

इन समस्त उपरिलिखित प्रमाणों से सिद्ध है कि वह केवल प्रेम करने के कारण से ईश्वर पुत्र अपने आप को कहता था और क्योंकि ईश्वर को प्यार करता था। जिससे कोई विशेष वैशिष्ट्य सिद्ध नहीं होता।

क्योंकि उन्हीं इञ्जीलों में उसे आदम पुत्र, दाऊद पुत्र, इबराहीम पुत्र, यूसुफ पुत्र, मरियम पुत्र और नबी भी कहा है।×

अब हम यह बताते हैं कि और लोग भी संसार में ईश्वर पुत्र, पहलोठा, प्यारा, खुदा, नबी, मसीह कहलाते रहे। न कि केवल मसीह। विस्तार देखो बाईबल के निम्न स्थलों को :—

इसराईल खुदा का बेटा किन्तु पहलोठा था (खुरूज ४।२३)

फरिश्ते खुदा के बेटे (अयूब १।६)

नबी खुदा के बेटे (अयूब ३८।७)

मैं ने तो कहा कि तुम सब इलाह हो और सब खुदा के बेटे हो। (जबूर ८२।६)

दाऊद बादशाह मसीह है। खुदा का बेटा है। खुदा उसका पिता है। वह खुदा का पहलोठा है। (जतूर ८९।२१, २६, २७ १३२।१०)

+मती १६।२७ २४।३० २५।३१ २६।६४

योहन्ना १।५१ मती १६।१३ १६।२७ १८।११

×मती १।१ २०।३२

मती १।२

यूहन्ना १।४५ ६।४२

मरकस ६।३ मती १३।५५

लूका २।२७ २।२१ २।२३

मती २१।११ यूहन्ना १७।३ २।४८ मती १।१६ लूका ४।२२

सुलेमान पैगाम्बर खुदा का बेटा और खुदा उसका बाप और सुलेमान मसीह और महान् है।
(समवईल २ ७।१४ सलातीक १।१.३६ तवारीख २ २६।१, २२)

यसाया नबी अपने आप को मसीह कहता है (६१।१)

खोरस बादशाह मसीह है। (यसाया ४५।१)

प्रेम करने वाले ईश्वर पुत्र। (मती ५।६)

आदम ईश पुत्र है। (लूका ३।३८)

सब ईश्वर पुत्र (यूहन्ना ११।३५)

सहस्रों लाखों ईश्वर पुत्र। सब संसार के लोग ईश्वर पुत्र हैं। (उत्पत्ति २।६)

इन के अतिरिक्त फिरऔन, नमरूद, शद्दाद, हिण्य कश्यप, बहलोल, मनसूर, यजीद, भुलाशाह, आदि समस्त संसार के सूफी, नवोन वेदान्ती मायावादी लोग अपने आपको खुदा कहते हैं। जब यह अवस्था है। तो मसीह की कोई विशेषता न रही।

किन्तु सर्वसाधारण की भान्ति वह भी एक मनुष्य ठहरा, न कि (ईश्वर रक्षा करे) खुदा या खुदा का बेटा। अब हम यह दिखलाते हैं कि खुदा का बेटा कहने का विचार ईसाईयों को कहां से सूझा और मसीह को किस लिये खुदा का बेटा लिखना और बनाना पड़ा।

स्पष्ट हो कि यूनानियों की यह साधारण बोल चाल की बात थी कि बहुत पूज्य और महान् व्यक्तियों को खुदा का बेटा कहते थे। जैसा कि प्रसिद्ध विद्वान् और योग्य लोग खुदा का बेटा कहलाए। फीसा गोर्स, रामेवल्स, हर क्यूलस, इन सब को यूनानी खुदा का बेटा पुकारते थे। सिकंदर बादशाह भी अपने आप को खुदा का बेटा कहलाता और सब दार्शनिक उसे ईश्वर पुत्र पुकारते थे जब कि उन सब के पिता विद्यनाम थे।

जब यूनान के लोगों की योग्यता और महत्ता होने पर भी यह अवस्था थी तो इस को दृष्टि में रख कर जब शिष्यों को इन्जील का यूनानी भाषा में अनुवाद करके ईसाईमत को लेख बद्ध करना चाहा तो उन्होंने पौलुस (रसूल) के इस वचनानुसार कि :—

"यदि मेरे असत्य के कारण खुदा की सच्चाई उस के जलाल (प्रकाश) के लिये अधिक प्रगट हुई, तो मुझ को क्यों पापी की भान्ति आज्ञा होती है। और हम क्यों बुराई न करें जिस से भलाई निकले।"
(रूमियों ३।८)

यह भयानक नियम फैलाना शुरू किया। क्योंकि जब तक मसीह को ऐसी उत्तम पदवियों से विभूषित न करते तब तक मूर्ख लोग कभी उन की बातों पर कान न धरते। इसी लिये ऐसी महती पदवियों से मसीह को प्रसिद्ध करना पड़ा क्योंकि ऐसे ही विचार यूनानियों के सर्वथा अनुकूल थे और अवश्य ऐसा ही किया गया।

इस पर पादरी ठाकुरदास महोदय फ़रमाते हैं कि :—

"यूनानी अपने महान् पुरुषों को उन खुदाओं का बेटा कहते थे जो स्वयं मनुष्य थे और वास्तव

में हरक्यूलस और जोपड़ आदि के पिता थे। किन्तु मृत्यु के उपरान्त खुदा बन गए थे। क्या यहूदी जो एक उत्पत्ति कर्ता भगवान् के मानने वाले और उस पर विश्वास रखने में गर्व करते थे। उस सदीनी के विचार को अपने विचारों का सांचा समझते और उसके अनुसरण से अपने विचारों के अनुरूप होते। कदापि नहीं।"

(इन्फ़साले वलादत पृ० ३३)

शोक कि पादरी महोदय ने उत्तर लिखने से पूर्व यह न सोचा कि यहूदियों का ईश्वर वही है जिसने बादल में होकर बनी इसराईल का नेतृत्व किया। आग में मूसा से बातें कीं और मुख दर्शन के बदले में पीठ दिखाई। क्या वह उत्पत्तिमान् ईश्वर नहीं ? जो पछताता दुःखी होता है। जिसने शैतान के बहकाने से मुफ्त में अय्यूब नबी का घर बरबाद किया। यूनान+ को बौद्धिक चालाकियां तो यूनान के साथ रहने दीजिये। हम तो आपको भारत में भी वह सारी कारवाई बताते हैं। देखिये, ईसाईयों का एक भजन है कि :—

ईसा मेरा राम रमय्या। ईसा मेरा कृष्ण कन्हैया॥
मुख से ईसा ईसा बोल। तेरा क्या लगेगा मोल॥

वर्तमान में ही मुक्ति फौज (साल्वेशन आरमी) वालों ने ठाकुरदास, ईशरदास, रामदास, विशन दास, भगवान् दास आदि अपने नाम रखकर और गेरवे वस्त्र पहन कर हिन्दुओं को बहुत धोखा में डाला है और केवल इसी को पर्याप्त नहीं समझा किन्तु "यसूअ् मसीह प्रचोदयात्" वाली गायत्री बना ली है। नंगे पांव फिरते और चंदन का तिलक आदि लगाते हैं। अतः इन सारी बातों पर विचार कीजिये कि ठाकुर, ईश्वर, राम, भगवान्, विष्णु आदि नाम हिन्दुओं के महापुरुषों के हैं। जिनको वह ईश्वर मानते हैं और वही यहां ईसाईयों ने इस प्रकाश युग में भी स्वीकार कर लिये तो क्या उस अन्धकार के युग में इनके पूर्वजों ने ऐसी कारवाई न की होगी ? अथवा करने में कुछ कमी रहने दी होगी ? कदापि नहीं।

+(१) इन्जील से प्रतीत होता है कि मसीह खुदा का बेटा नहीं क्योंकि वह स्वयं कहता है कि मैं भूमि पर शान्ति कराने नहीं किन्तु तलवार चलाने को आया हूं क्योंकि मैं आया हूं कि पुरुष को उसके पिता और बेटे को उसकी माता और पुत्र वधू को उसकी सास से पृथक् करूं और मनुष्य के शत्रु उसके घर के ही लोग होंगे।

(मती १०।३४-३६)

(२)पुनः खुदावंद मसीह अपनी आग बरसाने वाली जिह्वा से फ़रमाते हैं कि मैं पृथिवी पर आग लगाने आया हूँ और मैं क्या ही चाहता हूँ कि लग चुकी होती। क्या तुम विचार करते हो कि मैं पृथिवी पर मेल करवाने आया हूं, नहीं, मैं तुम्हें कहता हूँ प्रत्युत पृथकता। (लूका १२।४३)

मुसलमानों की एक हदीस में है "अल्ख़ल्को अयालुल्लाहे फ़ाअहब्बुल्ख़ल्क़ा इलल्लाहे मिन अहसिन ली अयालूह, (अनुवाद) खलकत अर्थात् समस्त लोग खुदा के बेटे हैं अतः प्रियतर मनुष्यों में खुदा के समीप वह मनुष्य है जो भलाई करे खुदा के हाँ बच्चों के साथ। इसी हदीस पर मौलवी रूमी मस्नवी में लिखते हैं।—मा अय्यालो हजरे हिम वंशमशीरखाह ; गुफ्त अल्ख़ल्को अय्यालुल्लाहे।

जब यह अवस्था है तो किसी प्रकार भी मसीह का खुदा होना या खुदा के बेटा या इकलौता या पहलोठा होना सिद्ध नहीं हो सकता। केवल एक मिथ्या और धोका देने वाला वर्णन पीछे से पौलुस आदि ने सम्मिलित कर इन्जील को बढ़ा दिया। जो सत्यान्वेषकों के पक्षपातपूर्ण अन्वेषण के विना सिद्धि के पद तक न पहुंच सका और इसीलिये बहिष्कृत है और शुद्ध करने योग्य है। परमातमा जन्म मृत्यु, दुःख, रोग, शोक से शुद्ध है। वह सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी है और शरीर रहित तथा निराकार है। उसकी सत्ता में कोई किसी प्रकार का दोष नहीं। यह सारे दोष मनुष्यों में हैं। ईश्वर में नहीं।

अब हम अन्त में यह बताते हैं कि बाईबल की दृष्टि से भी प्रायः स्थानों पर केवल ईश्वर के एक होने की शिक्षा मिलती है। तीन की नहीं और तीन अक़नूम का वर्णन भी पाया जाता है। देखोः—

यशाया ४५।५ ४६।६ इसतिस्ना ४।३५,३६ ६।४ खुरूज ६।३,७ १५।१६-३७ २०।१-३ मती २२।२५ २०।२०,२२ ६।१६,१७ २७।४६ १।२४ २३।२३ मरकस १२।३८ १३।३२ १०।२६,२६ यूहन्ना १७।३ १६।१७ तमताऊस २।५ ॥

एक बार पेशावर छावनी में लेखक बाबू सर्जन मल मंत्री आर्यसमाज पेशावर के साथ पादरी जोकस महोदय मिशनरी मिशन अफ़ग़ानिस्तान से मिलने गया। परस्पर के वार्तालाप में पादरी महोदय ने दावा किया कि बाईबल में खुदा को बाप कहा है। ऐसी उत्तम शिक्षा किसी धार्मिक पुस्तक में नहीं है।

मैंने उत्तर दिया कि नहीं और धार्मिक पुस्तकों विशेषतः आर्ष ग्रन्थों में इससे बढ़कर विद्यमान है। उन्होंने कहा किसी में भी नहीं, उनको सूझी ही नहीं। उनकी इस शैख़ी बघारने पर मैंने कहा कि आर्ष ऋषि तो एक ओर रहे वह तो विद्वान् ही थे। बाबा नानक जी ने भी बाईबल से बढ़कर शिक्षा दी है। पूछा, कहां ? मैंने कहा, देखिये :—

तुम मात पिता हम बालक तेरे।
तुमरी कृपा सुख घनेरे॥

देखिये ! बाईबल से सहस्रगुना बढ़कर माता भी कहा है कि ईश्वर को तुम माता पिता से अधिक अथवा माता पिता के समान प्रेम करो।

बतलाईये ! ऐसी शिक्षा बाईबल में कहां है ? यह तो प्रगट ही है कि माता का प्रेम पिता की अपेक्षा अधिक होता है। और संभवतः इस प्रेमाधिक्य के कारण मसीह भी मरियम पुत्र कहलाया, यूसुफ़ पुत्र नहीं। पादरी महोदय निरुत्तर हो गए।

अजमेर में पादरी गिरी महोदय से मिलने का अवसर बना। पादरी महोदय ने फ़रमाया कि तुम लोग बातें बाईबल से चुराकर कहते हो कि यह शिक्षा वेद की है जब कि वेद में कोई अच्छी शिक्षा ईश्वर संबंधी नहीं है। मैंने कहा कि यदि कोई आर्य ऐसा करता है, तो मैं उसे छली कपटी समझता हूं। आप कृपा करके कोई ऐसी शिक्षा बाईबल की बताएं जो वेद में न हो, आर्य लोग वेद की ठहराते हों और वह बाईबल की हो। फ़रमाया कि ईश्वर को पिता कहना यह शिक्षा केवल बाईबल है। तुम भी पादरियों की देखा देखी खुदा को बाप कहते हो। भला बताओ तो सही। यह वेदों में कहां है ?

मैंने निवेदन किया कि यह शिक्षा वेद की है। बाईबल की नहीं। देखिये पवित्र वेद की श्रुति :—

स नो बन्धुर्जनिता स विधाता धामानि वेद भुवनानिविश्वा।
यत्र देवाः अमृतमानशानास्तृतीये धामन्नध्यैरयन्त ॥

(यज० ३२।१०)

वह परमात्मा हमारा बन्धु, पिता, माता वह सर्व कार्यों का पूर्ण कर्ता, समस्त लोक मात्र नाम, स्थान, जन्मों को जानता है और जिस नित्यानंद को अमृत लोक प्राप्त होके स्वेच्छा से विचरते हैं। वही हमारा प्रेरक, राजा न्यायकारी है। उसी की भक्ति करना आवश्यक है।

और इसी प्रकार देखो ऋ० १०।८२।३

इस पर पादरी महोदय लाल, पीले हो गए और कुछ उत्तर न दे सके।

—०—

दूसरा अध्याय

मसीह निष्पाप नहीं किन्तु पाप युक्त था

ईसाई पादरी कहते हैं कि मसीह निष्पाप था, अतः हमें मुक्ति दे या दिला सकता है। हम कहते हैं कि ऐसा नहीं किन्तु वह पाप युक्त था और इसी लिए ईसाईयों की मोक्ष आशिरःपाद असंभव है।

शोक कि ईसाईयों ने अपने इस निराधार दावा को पूर्ण करने के लिये मसीह का जीवन चरित्र कहीं नहीं रहने दिया और न इंजील ही कुछ बतलाती है। क्योंकि ३२ वर्ष की उसकी आयु थी। जिनमें से ३० वर्ष का कोई यथार्थ वृत्तान्त किसी को ज्ञात नहीं। ३० वर्ष की जीवनी में उसने उपदेश शुरू किया और दो वर्ष ही व्याख्यान दिये कि सलीब पर लटकाए गये।

हम उस का प्रमाण किसी बाह्य गवाही से नहीं किन्तु इञ्जील से ही देते है। देखो लिखा है कि :—

यसूअ आप तीस वर्ष का हुआ जब शुरू किया।" (लूका ३।२३)

तीस वर्ष की आन्तरिक जीवनी का यथार्थ और विस्तृत वृत्तान्त किसी को ज्ञात है तो मसीह के पक्षपात में प्रगट करना नहीं चाहता जिस से कहीं सारे के सारे कलंक प्रगट न हो जाएं। विचार का स्थान है कि सभ्य जाति ईसाई, संसार के अन्वेषक ईसाई, समस्त संसार के इतिहासज्ञ ईसाई और घर के संस्थापक के इतिहास पर यह अंधेरी घटा छाई हो। शोक! शतसहस्र शोक!!

क्योंकि मसीह का जीवन चरित सम्पूर्ण नहीं मिलता। केवल दो वर्षों के वृत्तान्त थोड़े थोड़े इञ्जीलों से प्राप्त होते हैं। इसलिए हम बाधित होकर उस पर सन्तोष करके मसीह के चाल चलन को संसार पर प्रगट करते हैं। ऐसा न हो कि कोई अज्ञानता से धोखा खाये। और धर्म और आत्मा को किसी की चाटुकारिता में आकर हानि पहुंचाए। नंबर (१) मसीह की निर्दयता :—

"यह मत समझो कि मैं भूमि पर मेल कराने आया हूं किन्तु तलवार चलाने को आया हूं। क्योंकि मैं आया हूं कि पुरुष को उस के पिता और पुत्री को उस की माता और पुत्र वधू को उस की सास से पृथक् करूं।" (१०।३४, ३५)

पुनः वह स्वयं फरमाता है कि—

"मैं भूमि पर आग लगाने आया हूं। और मैं क्या ही चाहता हूं कि लग ही चुकी होती। परन्तु मुझे एक बपतिस्मा पाना है और मैं कैसा तंग हूं जब तक कि पूरा न हो। और क्या तुम समझते हो कि मैं पृथिवी पर मेल कराने आया हूं। नहीं, मैं तुम्हें कहता हूं किन्तु जुदाई।" (लूका १२।४९-५१)

पुनः मसीह प्रेरित करता है कि—

"यदि कोई मेरे पास आवे और अपने माता पिता, पत्नी, लड़के, भाई बहिनें अपनी आत्मा की शत्रुता न करें मेरा शिष्य हो नहीं सकता। (लूका १४।२६-२७)

पुनः रसूल मसीह फरमाता है—

"और उस समय भूमि के सब घराने छाती पीटेंगे।" (मती २४।३०)

पुनः दयालु मसीह के सम्बन्ध में लिखा है—

"और उनसे कुछ दूर बहुत सूरों का समूह चरता था। सो देवों ने उस की स्तुति कर के कहा कि यदि तू हम को निकालता है तो हमें उन सूरों के समूह में जाने दे। तब उसने उन्हें कहा कि जाओ और वे निकल के सूरों के समूह में गए और देखो सूरों का सारा समूह तट पर से नदी में कूदा और पानी में डूब मरा।" (मती ६।३१, ३२)

पादरी क्लारक महोदय ने इस पर भाष्य किया है कि "वह सूर संख्या में दो सहस्र थे।" इस पर मौलवा नूरुद्दीन महोदय ने क्या अच्छा कहा है कि "बौद्ध, आर्यों और जेनियों के सिद्धान्त ईसाई मत की दया से अधिक दया पर आधारित हैं कि किसी एक भी प्राणधारी को सताना धर्म और उचित नहीं समझते।"

पुनः मसीह ने तलवारें खरीदने को सब शिष्यों को आज्ञा दी। जैसाकि लिखा है कि "और जिस के पास नहीं अपने वस्त्र बेचकर तलवार खरीदे।" (लूका २२।३६)

इंजील में मसीह के तलवार चलाने का वर्णन भी विद्यमान है। "जब यहूदा जो उन बारहों में से एक था, आया और इस के साथ एक बड़ी भीड़ तलवारें और लाठियां लिये सरदार काहिनों और कौम के बुजुर्गों की ओर से आ पहुंची। उसके पकड़वाने वाले ने उन्हें यह कह कर पता दिया था कि जिसे मैं चूमूं, वही है, उसे पकड़ लेना उस ने वहीं यसूअ के पास आ कर कहा हे रब्बी ? सलाम। और चूम लिया। यसूअ ने कहा। ऐ मियां। तू काहे को आया ? तब उन्होंने यसूअ पास आ कर यसूअ पर हाथ डाले और उसे पकड़ लिया और देखो यसूअ के साथियों में से एक ने हाथ बढ़ा कर अपनी तलवार खेंची और सरदार काहिन के नौकर पर चला कर उस का कान उड़ा दिया।" (मती २६।४७-५२)

पुनः लिखा है कि :—

"जब उन्होंने जो उसके आस पास थे जो अवस्था होने वाली थी-देखी तो उस से कहा हे खुदावन्द ? क्या हम तलवार चलाएं ? उन में से एक ने सरदार काहन के नौकर पर तलवार लगाई और उस का दक्षिण कान उड़ा दिया।" (लूका २-४६, ५० यूहन्ना १८।१० मरकस १४।४६-४७)

(२) मसीह का झूठ

"तब उस के भाईयों ने उस से कहा यहां से चला जा और यहूदिया में जा। जिससे उन कार्यों को जो तू करता है तेरे शिष्य भी देखें।

क्योंकि ऐसा कोई नहीं जो कुछ काम छिप कर करे और चाहे कि आप प्रसिद्ध हो। यदि तू यह कार्य करता है तो अपने को संसार को दिखा। क्योंकि उस के भाई भी उस पर ईमान न लाए। तब यसूअ ने कहा कि मेरा समय अभी नहीं आया। पुनः तुम्हारा समय सदैव बना है। संसार तुम से शत्रुता नहीं रखता। परन्तु मुझ से शत्रुता रखता है। क्योंकि उस पर गवाही देता हूं कि उस के कार्य बुरे नहीं तुम ईद में जाओ मैं अभी ईद में नहीं जाता कि मेरा अभी समय पूरा नहीं हुआ। सो वह यह बातें

उन्हें कह के जलील में रहा। किन्तु जब उसके भाई चले गए थे तब वह भी ईद में गया, प्रगट नहीं किन्तु छिप के। तब यहूदी उसे ईद में ढूंडने लगे। (देखो यूहन्ना १७।५-११)

(३) मसीह शराबी था

इञ्जील में लिखा है :—इब्ने आदम खाता पीता आया और वह कहते हैं कि देखो एक खाऊ, शराबी, महसूल लेने वालों और गुंडों का यार है।" (मती ११।१९)

पुनः मसीह फरमाता है कि :—

'मैं तुम से सत्य कहता हूं कि मैं अंगूर का रस (अंगूरी शराब) जिस दिन तक खुदा की बादशाहत में उसे नया न पियों पुनः न पियूंगा।" (मरकस १४।२५)

पुनः एक जलील में एक विवाह हुआ यसूअ का शिष्यों सहित वहां निमंत्रण था। पीते २ शराब घट गई। मसीह ने वहां छः मटके शराब के (ईसाईयों के कथनानुसार चमत्कार से) उत्पन्न कर दिये। प्रत्येक मटके में दो या तीन मन शराब की समाई थी अतः ३×६=१८ मन शराब वहां पर मसीह ने लोगों पर (खुदा के मार्ग में) बांटी और पिलाई। (विस्तार देखो यूहन्ना २।१-११)

(४) माता का निरादर

लिखा है कि "उस की माता और उसके भाई बाहिर खड़े हुए उस से बात किया चाहते हैं पर उस ने उत्तर में सूचना देने वाले से कहा "कौन है मेरी माता और कौन हैं मेरे भाई"
(मती २।४७ लूका ८।१८ मरकस ३।४)

पुनः लिखा है कि जब शराब घट गई तो यसूअ की माता ने उससे कहा कि उन के पास शराब नहीं रही। यसूअ ने उससे कहा कि हे औरत (स्त्री) मुझे तुझ से क्या काम? (यूहन्ना २।४)

(५) चोरी=पशु चुराना

मसीह ने एक गधी उसके बच्चे सहित चुरवाई और फरेब सिखाया कि यदि कोई पूछे तो कहना कि मालिक ने मांगी है।

(६) धोखा

जैसाकि इञ्जील में लिखा है और जब वह यरोशलम के समीप पहुंचके बैतफिगा जैतून के पर्वत पास आए तब यसूअ ने दो शिष्यों से यह कह कर भेजा कि सामने के ग्राम में जाओ और वहां एक गधी बंधी है। उस के साथ उसका एक बच्चा पाओगे। खोल कर मेरे पास लाओ यदि कोई तुमसे कुछ कहे तो कहियो कि खुदावन्द को आवश्यकता है। वह उसी समय उन्हें भेज देगा। शिष्यों ने जैसा यसूअ ने फरमाया था वैसा किया और उस गधी को बच्चा समेत ले आए और वस्त्र उन पर डाले और उसे उस पर बिठलाया। (मती २१।१-७)

इंजीलों का इस में परस्पर विरोध है चूंकि मती की इञ्जील प्रथम नंबर पर है इस आधार पर हम भी इसी को पर्याप्त समझते हैं। किन्तु हम समझते हैं कि इतना विरोध क्यों हुआ? मती जो सीधा

सादा मनुष्य था उस ने यथार्थ रूपेण गधी और बच्चा दो लिखे और सब स्थानों पर बहु वचन का प्रयोग किया। किन्तु दूसरे शिष्यों को यह बात सूझ गई कि यह तो चोरी है और मसीह पापी ठहर जाता है अतः गधी को दूर कर केवल गधी का बच्चा रहने दिया।(देखो मरकस११११-६लूका१६-३० यूहन्ना १२।१४)

जिससे जुर्म बहुत थोड़ा हो जाए और मसीह दोषी न कहलाये। किन्तु सूर्य प्रकाशवत् बात कब छिप सकती है।

देखिये ! एक तो मसीह ने गधी चुरवाई या चुराई और दूसरा गधी का बच्चा चोरी किया है। इस का उत्तर भारतीय दंड विधान में देखो। कि स्वामी की आज्ञा के बिना वस्तु लेना। सो मसीह ने किया। गधी का मूल्य न्यून १०) और बच्चा का मूल्य ५) कुल योग १५) चोरी हुए माल के होते हैं।
(देखो भारतीय दंड विधान धारा ३७६)

फ़ेब (धोखा) इसलिए है कि शिष्यों को कहा कि यदि कोई पूछे तो कहना कि खुदावन्द मांगता है। खुदावन्द के अर्थ कोष में स्वामी=मालिक के हैं। ऐसा ही सामान्येन मालिक के अर्थों में प्रयुक्त होता है और मसीह को शिष्य भी खुदावन्द कहते थे। अभिप्राय यह कि जब कोई मार्ग गुजरने वाला देखकर पूछे तो खुदावन्द के अर्थ मालिक समझ कर चला जावेगा. और उनका अभिप्राय दोधारी तलवार की भान्ति मालिक और ईसा से था। जिससे स्पष्ट चोरी और फरेब=धोखा प्रगट होता है। जैसे कोई व्यक्ति किसी मकान का स्वामी=मालिक है और उसका नाम इब्राहीम है, एक चोर है उसका नाम भी इब्राहीम है। मालिक की अनुपस्थिति में एक व्यक्ति उस के अन्दर जा कर उस का कुर्ता उतारता है और ले जाता हो। जब कोई नौकर अथवा साधारण परिचित व्यक्ति उस से पूछे कि कहां ले जाता है ? तो वह कहे कि इब्राहीम ने मांगा है। वह वहां बाजार में खड़ा है। तो निस्सन्देह उस पर विश्वास करके जाने देगा। ऐसी धोखा दही की चोरी प्रायः नगरों में होती है। ठीक ऐसी ही अवस्था इस स्थान पर हुई। इस आधार पर यह दो जुर्म (दोष) हैं। एक पशु चोरी तथा दूसरा दोष फरेब का है। (३७६ भारतीय दंड विधान और १७० धारा, भारतीय दंड विधान) और मसीह इन दोनों धाराओं के दोष का दोषी है। स्पष्ट हो कि यह गधी और गधा दोनों मसीह के जीवन काल तक स्वामी को लौटाए नहीं गए और न उन का मूल्य दिया गया। अतः स्पष्ट चोरी है। कोई सत्य स्वभाव जज इस से इन्कार नहीं कर सकता और न उसके दोषी को छोड़ सकता है।

(७) मसीह की अज्ञानता

इञ्जील में लिखा है कि प्रातः वह बैतेअनीना से बाहिर आए। उसको भूख लगी और दूर से अंजीर का एक वृक्ष पत्तों से लदा हुआ देख के वह (मसीह) निकट गया कि संभवतः उस में कुछ पावे। जब वह समीप आया तो पत्रों के अतिरिक्त कुछ न पाया, क्योंकि अञ्जीर की ऋतु न थी। यसूअ ने उसे संबोधित करके कहा कि तुझ से फल कोई कभी न खावे। और इस के शिष्यों ने सुना।
(मरकस ११।१२-१४ मती)

एक योरोपियन विद्वान् ने इस पर क्या अच्छा फरमाया है कि "यदि ईसाई मत के वाहयात सिद्धान्त, अकारण अत्याचार और अविद्या देखनी चाहो तो मती और मरकस की इञ्जील खोलकर अञ्जीर की गाथा पढ़ो। उस वृक्ष के ऋतु के न होने से फल उत्पन्न न होने के कारण भूख के समय

शाप देकर सुखा दिया था। यदि ईसा शक्तिमान् खुदा था। तो अञ्जीर के वृक्ष को उसने स्वयं बनाया था। उसके पढ़ने की स्वयं नियत की थी, स्वयं ही उस के फल देने के लिये समय ठहरा दिया था। इस प्रकार स्वयं ही उस को ऋतु न होने पर फल देने से रोका था। स्वयं ही उस वृक्ष से फल देने की आशा की। जिस पर फल का होना असंभव बना दिया था। और अपने असीम प्रेम से इस दोष पर क्रोध आया कि वृक्ष ने वह वस्तु क्यों नहीं दी जो वस्तु उत्पन्न करने से स्वयं खुदा ने उस वृक्ष को निषेध कर दिया था यदि ईसा का यही प्रम है, तो उस के शिष्य बहिश्त स्वर्ग (यदि कोई है) नहीं जा चुके।"

(८) पर नारियों से अकारण प्रेम

पहिली घटना इञ्जील में है कि वह एक ग्राम में पहुंचा और मिरथा नामी एक स्त्री ने उसे अपने घर में उतारा। मरियम नामी उस को बहिन थी। जो यसूअ के पांव के समीप बैठ के उस का क ाम-वचन सुनती थी। पर मिरथा बहुत सेवा से घबराई हुई उस के समीप आकर बोली कि हे खुदावन्द? क्या तुझे अपेक्षा नहीं कि मेरी बहन ने मुझे अकेली सेवा में छोड़ा है, अब उसे कहे कि मेरी सहायता करे। तब यसूअ ने उत्तर में उसे कहा मिरथा? तू बहुत वस्तुओं के लिए चिन्ता और घबराहट में है। सो मरियम ने वह अच्छा भाग चुना है। जो उससे पुनः न लिया जायेगा। (लूका १०।३८-४२)

पुनः लिखा है कि मिरथाने जब सुना कि यसूअ आता है, उसका स्वागत किया। पर मरियम घर में बैठी रही। (यूहन्ना ११.२०)

पुनः लिखा है कि मिरथा यह कह के चली गई और चुपके अपनी बहिन मरियम को बुला के कहा कि उस्ताद=गुरु आया है। और तुझे बुलाता है, वह बात सुनते ही शीघ्र उठी और उस के पास आई। (योहन्ना ११।२८)

दूसरी बार शिष्य खाने को मोल लेने नगर में गए। सामरिया को एक स्त्री कुप पर पानी भरने आई। यसूअ ने कहा कि मुझे पीने को दे। सामरिया को इस स्त्री ने उससे कहा क्योंकर तू जा यहूदी है। मुझ से जो सामरिया की स्त्री हूं। पानी पीने को मांगता है? क्योंकि यहूदी सामरियों से प्रेम नहीं रखते हैं। यसूअ ने उत्तर में उससे कहा कि यदि तू खुदा की बखशीश को और जो तुझसे कहता है कि मुझे पीने को दे। यह जानती है कि वह कौन है? तो तू उससे मांगती। और वह तुझे पानी देता है।"
पुनः लिखा है कि :—

यसूअ ने उससे कहा कि जाके अपने पति को बुला और यहां आ। स्त्री ने उत्तर दिया कि मैं पति रहित हूं। यसूअ ने कहा कि तूने ठीक कहा कि मैं पति रहित हूं क्योंकि तू पांच पति कर चुकी है और वह जो अब तू रखती है तेरा पति नहीं। तूने यह सत्य कहा कि इतने में उसके शिष्य आए और आश्चर्य किया कि वह स्त्री से बातें करता था। पर किसी ने कहा कि तू क्या चाहता है, अथवा उससे किसलिये बातें करता है?" (योहन्ना ७।७-२० मती २६।७-१३)

तीसरी घटना- यसूअ ने एक दुराचारिणी स्त्री को अकारण बहाना बनाकर बचा दिया। जबकि उसने दुराचार कराया और पकड़ी गई थी ज्ञात नहीं इस परदा डालने से क्या प्रयोजन था?

(देखो योहना अ० ८)

चौथी घटना—बैतअना के स्थान पर एक स्त्री मरियम नामी (संभवतः वही पहिली घटना वाली)

संगमरमर के इतर दान में बहुमूल्य इतर उस के पास लाई। जब वह खाने बैठा, तो उसके सिर पर डाला। शिष्यों ने कई बार आक्षेप किया। किन्तु मसीह ने उसको न रोका और यह कहा कि जहां इञ्जील की मनादी=घोषणा होगी। यह भी उसकी स्मृति के लिये कहा जाएगा।

(देखो मती २६।६-१३ योहन्ना १२।४)

(९) सब्त के दिन कार्य किया

लिखा है। उस समय यसूअ सब्त के दिन खेतों में से जाता था। और उसके शिष्य भूखे थे। वह बालें तोड़ तोड़ कर खाने लगे। तब फ़रीसियों ने देख के उससे कहा। देख तेरे शिष्य वह कार्य करते हैं, जो सब्त के दिन करना उचित नहीं। (मती १२।१,२)

और खुदा की आज्ञा थी कि :–

"सब्त को काम करने वाला मार डाला जाए।" (इसतिसना २१।३३)

(१०) मसीह गाली निकालता था।

इञ्जील में लिखा है। मसीह के वचन–हे फ़रेबी फकीहो ! और फ़रीसियो ! तुम पर शोक। हे अंधे मार्ग प्रदर्शको ! तुम पर शाक। हे बेसमझो और अन्धो ! तुम प्रगट में सत्यवादी दिखाई देते हो पर आन्तरिक रूपेण ठगी और शरारत से भरे हो इत्यादि २।

देखो मती अ० २३ – लूका अ० १२—मरकस अ० १२

इतने दोष हमने उस चुने हुये और मसीह के कल्याणेच्छु शिष्यों के बने हुये इञ्जील नामी पुस्तक से उद्धृत किये हैं। जो वास्तव में शपथ ग्रहण करके बैठे थे कि मसीह की बुराई को पुस्तक में न लिखेंगे। किन्तु (कल्याण हो) इस सावधानी के होते हुए भी मसीह दोषी हैं।

स्त्री का बच्चा नेक नहीं है।

"मनुष्य कौन है कि पवित्र हो सके। और वह जो स्त्री से उत्पन्न हुआ ? क्या है कि सच्चा ठहरे ?" (अयूब १५।१४)

"कौन है जो अपवित्र से पवित्र निकाले ? कोई नहीं।" (अय्यूब १४।४)

"क्या मरणधर्मा मनुष्य खुदा के सम्मुख सच्चा ठहरेगा ?" (अय्यूब ४।१८)

"मनुष्य खुदा के आगे क्योंकर सत्यवादी ठहरेगा ?" (अय्यूब ९।२)

"पस खुदा के सम्मुख मनुष्य क्यों कर सच्चा समझा जाए और वह जो स्त्री से उत्पन्न हुआ है क्योंकर पवित्र ठहरे।" (अय्यूब २५।४)

"कोई मनुष्य प्राणधारी तेरे सम्मुख सत्यवादी नहीं ठहर सकता।" (ज़बूर १४३।२)

"यदि हम कहें कि निष्पाप हैं तो हम झूठे हैं और आपको धोखा देते हैं।"

(योहन्ना की पत्री १।८)

"कोई सत्यवादी नहीं। एक भी नहीं। कोई शुभ कर्मा नहीं। एक भी नहीं।"
(रूमियों की पत्री ३।११,१३)

"कौन कह सकता है कि मैंने अपने हृदय को पवित्र किया है ? मैं पाप से पवित्र हूं।"
(अमसाल २०।१९)

"कोई मनुष्य भूमि पर ऐसा सच्चा नहीं कि पुण्य करे और भूल न करे।" (वाइज़ ७ २०)

परिणाम—१

मसीह क्योंकि स्त्री का बच्चा है। इसलिये नेक नहीं। मरियम हव्वा के क्रम से अपवित्र थीं। अतः उससे पवित्र नहीं निकल सकता और न कोई निकाल सकता है। अतः मसीह न तो नेक है और न पवित्र है। और यह हम ही नहीं कहते किन्तु स्वयं मसीह को भी स्वीकार्य है कि "तू मुझे नेक क्यों कहता है ? नेक कोई नहीं किन्तु एक अर्थात् खुदा। (मरक़स १०।१८ मती १९।१७)

शरीयत की पाबंदी ?

मसीह कहता है "यह मत समझो कि मैं तोरेत या नबियों की पुस्तक मन्सूख़=स्थगित करने आया हूं। मन्सूख़=रद्द करने नहीं किन्तु पूरी करने आया हूं।" (मती ५।१७)

मसीह ने अपना खतना कराया। बपतस्मा पाया। योहन्ना का शिष्य हुआ इत्यादि शरीयत की रीतियों को पूरा किया। अब हज़रत पौलुस कहते हैं कि "पस कोई मनुष्य शरीयत पर आचरण करने से सच्चा न ठहरेगा। (रूमियों ३।२०)

पुनः लिखा है "जो शरीयत पर विश्वास रखता है वह लानत के आधीन में है।"
(गलतियों ३।१०)

पुनः स्पष्ट लिखा है "मसीह ने हमें मोल लेके (खरीदकर) शरीयत की लानत से छुड़ाया कि वह हमारे बदले में लानती हुआ।"

परिणाम

न स्वयं उसकी मुक्ति हुई और न किसी को (ईश्वर रक्षा करे) मुक्ति दिला सकता है। अतः उस पर विश्वास रखना भयावह है।

मसीह लकड़ी पर फांसी दिया गया।

जैसा कि मूसा पैगम्बर फरमाते हैं "क्योंकि वह जो फांसी दिया जाता है। खुदा का लानती है।
(इसतिसना २१।२३)

पुनः पौलुस फरमाते हैं "क्योंकि लिखा गया, जो कोई काठ पर लटकाया गया सो लानती है।"
(गलोतों ३।१३)

जजमेंट=फैसला=निर्णय

हज़रत पौलुस फ़रमाते हैं कि :—

"चोर, लालची, शराबी, गाली बकने वाले लुटेरे, खुदा की बादशाहत के वारिस=उत्तराधिकारी न होंगे। (फ्रनतियों १।६।१०)

"प्रत्येक जो खुदा से उत्पन्न हुआ वह पाप नहीं करता। और जो पाप करता है वह ···का बेटा है।" (योहन्ना १'३।८,६)

लानती सदैव की आग में रहेंगे। जैसा कि लिखा है "हे लानतियो! मेरे सम्मुख से चले जाओ, उस सदैव की आग में जो इबलीस=शैतान और फ़रिश्तों के लिए तैय्यार की गई है। (मती २५।४१)

ईसाई न तो ईमानदार हैं और न मुक्ति प्राप्त करेंगे।

इन्जील में ईमानदारों के यह चिह्न लिखे हैं :—"और वे जो ईमान लाएंगे। उनके साथ यह चिह्न होंगे कि वे मेरे नाम से देवों को निकालेंगे और नई भाषाएं बोलेंगे, सांपों को उठा लेंगे और यदि कोई मार देने वाली वस्तु पीयेंगे, उन्हें कुछ हानि न होगी। वे रोगियों पर हाथ रखेंगे तो चंगे हो जायेंगे।" (मरकस १६।१७,१८)

क्योंकि मैं तुम से सत्य कहता हूं कि यदि तुम्हें राई के दाने के बराबर ईमान होता तो यदि तुम इस पर्वत से कहते कि यहां से वहां चला जा तो चला जाता और कोई बात तुम्हारी असंभव न होती। किन्तु इस प्रकार के देव प्रार्थना और व्रत के विना नहीं निकाले जाते। (१७।२०,२१)

क्योंकि ऐसा संसार में कोई नहीं। अतः गतं न शोचामि कह कर हम दावा के साथ कहते हैं कि इस समय कोई ईमानदार नहीं। क्योंकि ऐसे चिह्न ईसा के कथनानुसार किसी के साथ नहीं। किन्तु योहन्ना के कथनानुसार सब पापी हैं। यह तो इन्जील में ही लिखा है कि जो पाप करता है वह ··· का बेटा है।

जैसा कि पादरी सफ़दर अ़ली महोदय फ़रमाते हैं कि "इसीलिये पवित्र इन्जील की आज्ञा हुई है कि जो लोग ईश्वरीय आदेशों और वाणी से परिचित नहीं हैं और पाप करते हैं। न्यून दंड भुक्तेंगे। किन्तु जो ईश्वरीय वाणी पाकर और जान बूझ कर पाप संयुक्त होते हैं वह अधिक दंड के भागो बनेंगे। अतः यह आदेश निस्संदेह न्यायकारी भगवान् का है। जिसके सामने किसी का पक्षपात नहीं है।

(न्याज़ नामा पृष्ठ ३८ लखनऊ १६७८ ईस्वो)

इन सब प्रमाणों से प्रगट है कि मसीह ने मोक्ष प्राप्त नहीं किया और न ईसाई मोक्ष पावेंगे। यदि बाईबल सच्ची है तो भी ईसाईयों की मुक्ति बाईबल की दृष्टि से असंभव है।

तौरेत की दृष्टि से नियोग ठीक है।

नियोग सम्बन्धी आदेश :—यदि कई भाई एक स्थान पर रहते हूं। और एक उनसे सन्तान रहित मर जाए तो उस मृत की स्त्री का विवाह किसो अपरिचित से न किया जाए किन्तु उसके पति का भाई

उससे एकान्त वास करे और उसे अपनी पत्नी करले । भावज का अधिकार उसे प्रदान करे और यूं होगा कि उसका पहलोठा जो उससे उत्पन्न हो, तो उसके मृत भाई के नाम पर स्थिर होगा । जिससे उसका नाम इसराईल में से न मिट जाए ।" (तौरेत इसतिसना २५'५,६)

नियोग न करने पर दंड :—

और यदि वह पुरुष अपने भाई की पत्नी को लेना न चाहे तो उस मृत भाई की पत्नी द्वार पर बुजुर्गों के पास जाए और कहे कि मेरे पति के भाई के इसराईल में अपने भाई का नाम स्थिर रखने से इन्कार किया और भावज का अधिकार देना स्वीकार नहीं किया । तब उसके पति के वंश के बड़े उस पुरुष को बुलाएं और उससे बातचीत करें । सो यदि वह इस बात पर स्थिर रहे और कहे कि मैं नहीं चाहता कि इसे लूं । तब उसके भाई की पत्नी बड़ों के सम्मुख उसके समीप आवे और उसके पांव से जूती निकाले और उसके मुख पर थूक दे और उस पुरुष के साथ जो अपने भाई का घर न बनावे यही किया जाएगा । और इसराईल में उसका यह नाम रखा जाएगा कि यह उस मनुष्य का घर है जिसका जूता निकाला गया ।" (इसतिसना २५।७-१०)

पुन: रूत की पुस्तक में रूत की गाथा पढ़ो और राख़िल और लियाह दो अन्य स्त्रियों के समाचार का अध्ययन करो । इसी रूत के उदर से बूअज़ के वीर्य से उबैद नाम का लड़का उत्पन्न हुआ । जिसका पोता दाऊद नबी था । और इसी के वंश से ईसाईयों के कथनानुसार मसीह उत्पन्न हुआ ।"

(रूत की पुस्तक ४।१-२२)

पादरी डी. जी महोदय अस्काट फरमाते हैं—"एक वंशावली लूक़ा की इञ्जील में भी है । उसमें प्रत्येक कुछ उसके विरुद्ध पाया जाता है । (लूक़ा ३।२३-४८)

किन्तु इन दोनों का सामंजस्य कठिन नहीं । अधिकतर भाष्यकारों का यह विचार है कि जो यसूअ़ का पिता कहलाता है । याक़ूब का सगा पुत्र और शरीयत की दृष्टि से हेली का उत्तराधिकारी और बेटा था । अर्थात् जब हेली निःसन्तान मर गया तो उसके भाई याक़ूब ने शरीयत के आदेशानुसार अपने भाई की पत्नी ले कर उसके लिये वंश चलाया । (लूका २० २८ इसतिसना २५।५)

जैसा कि यह बात वंशावली से प्रगट हो सकती है । इसका विस्तार यह है कि सुलैमान और नाहितान दाऊद के दोनों पुत्र थे और नाथान सुलेमान के वंश से हुआ । और मथान नाहितान से । जब मथान ने असथा को पत्नी बनाया और उससे हेली उत्पन्न हुआ । अतः यह दोनों अर्थात् याक़ूब और हेली एक ही माता के पुत्र थे । और जब हेली पत्नी कर सन्तान विहीन ही मर गया तब उसके भाई याक़ूब ने उसकी विधवा को अपनी पत्नो कर लिया । जिससे यूसुफ उत्पन्न हुआ । अतः यूसुफ याक़ूब का औरस पुत्र और हेली का क्षेत्रज पुत्र था । और इससे दोनों वंशावलियों की सच्चाई प्रगट है ।

(तफ़सीरे मती इलाहाबाद संस्करण पृ० २१,२२)

वंशावली यह है ।

दाउद

रायान — नथान

मथान — असथा — ननहात

| याकब — एक पत्नी — हेली |

उत्तराधिकारी और औरस पुत्र

अर्थात् नियोग-जन्य क्षेत्रजपुत्र यही मसीह का पिता

यूसुफ़

—०—
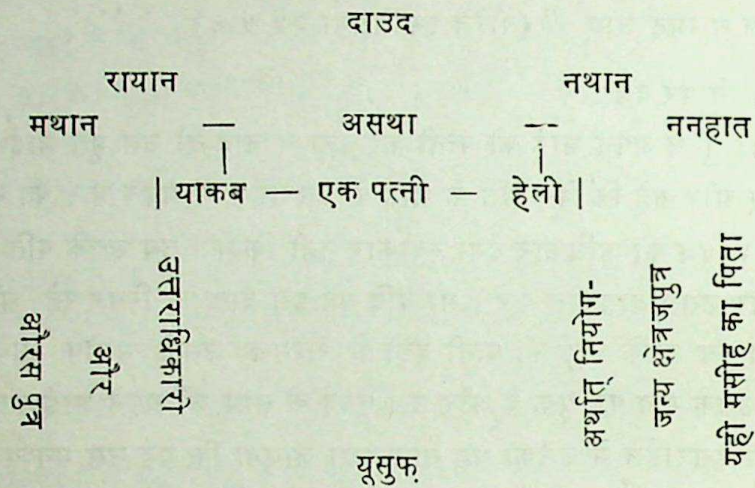
तीसरा अध्याय

मसीह के चमत्कार

मूर्ख हिन्दुओं को फुसलाने और जाल में फंसाने के लिए ईसाई लोग चमत्कार का वर्णन किया करते हैं कि ईसाई मत की सच्चाई का यह प्रमाण है कि मसीह ने चमत्कार दिखाए । अतः वह खुदा था । इत्यादि ।

स्पष्ट हो कि यदि चमत्कार दिखाना ही धर्म के सच्चा होने का प्रमाण है तो संसार में कोई मत भी झूठा नहीं है । और सभी चमत्कार दिखाने वाले खुदा हैं । जैसे यहूदियों में नूह, इब्राहीम, दाऊद, मूसा, याकूब, यसूअ आदि ने बाईबल की दृष्टि से चमत्कार दिखाए । और मोहम्मदियों में मोहम्मद, अब्दुलक़ादिर जैलानी, शम्स तबरेज़, मुईयुद्दीन चिश्ती आदि ने हदीसों और इसलामी पुस्तकों की दृष्टि से चमत्कार दिखाए ।

बुद्धों और जैनियों में बुद्ध, आदि नाथ, पारसनाथ, महावोर आदि ने आश्चर्ययुक्त बातें अर्थात् बौद्ध, शास्त्रादि की दृष्टि से किए । पारसियों में ज़रदुश्त ने असंख्य चमत्कार दिखाए ।

(देखो ज़न्दावस्ता)

हिन्दुओं में गोरख नाथ, शंकराचार्य, नानक, कबीर, पूर्ण, महादेव, विष्णु, कृष्ण, राम, बावन, काली, भैरों आदि ने सैंकड़ों चमत्कार दिखाए । किन्तु ईसाई इन सब मतों को मिथ्या और चमत्कारों को झूठा जानते हैं । तो पुनः हम इन्हीं बातों से मसोह को और बाईबल को किस प्रकार सच्चा मान सकते हैं ? जब कि स्वयं बाईबल में लिखा है कि:—

"बहुत से झूठे नबी उठेंगे जो बहुतों को गुमराह करेंगे । और अधर्म के बढ़ाने से बहुतों का प्रेम ठंडा हो जाएगा ।" (मती २४।११)

"यदि कोई तुम से कहे कि मसीह यहाँ या वहां है तो उसे न मानना । क्योंकि झूठे मसीह और झूठे नबी उठेंगे और ऐसे बड़े चिह्न और चमत्कार दिखावेंगे कि यदि हो सकता तो वह पूज्यों को भी मार्ग भ्रष्ट करते ।" (मती २४।११)

"नबी मेरा नाम लेके झूठी नबुव्वत करते हैं । वह झूठे स्वप्नों, झूठे परोक्षज्ञान और निराधार बातें तथा अपने हृदयों की मक्कारियां नबुव्वत की भान्ति पर प्रगट करते हैं ।" (यरमियाह १४।१४)

"मैं ने सुना जो नबियों ने कहा । मेरा नाम लेके झूठी नबुव्वत करते हैं और कहते हैं कि मैं ने स्वप्न देखा । कब तक यह नबियों के मन में रहेगा कि झूठी नबुव्वत करें । हां, वे अपने मन की कायरता के नबी हैं ।" (यरमियाह ४३।२५, २६)

"बहुत से झूठे पैग़म्बर संसार में निकल आए हैं ।" (योहन्ना १।१६।१)

"पर झूठे नबियों से सावधान रहो जो तुम्हारे पास भेड़ों के वेश में आते हैं। पर अन्दर में फाड़ने वाले भेड़िए हैं।" (मती ७।१५)

"झूठे नबी ही उस जाति में थे जैसे कि झूठे गुरु तुम में होंगे।" (पतरस २।२।१)

"क्योंकि झूठे मसीह और झूठे नबी उठेंगे और निशानियां (चिह्न) और चमत्कार दिखायेंगे। यदि संभव होता तो महा पुरुषों को भी मार्गभ्रष्ट करते।" (मरकस १३।४२)

"वे तुम से झूठी नबुव्वत करते हैं कि तुम को तुम्हारे देश से आवारा करें (भटका दें।" (यरमियाह २७।१०)

झूठे नबी तलवार और काल से मारे जाएंगे।" (यरमियाह १४।१५)

अब हम मसीह के सम्बन्ध में ऊपरि लिखित स्मृतियों की पड़ताल करते हैं। संख्या (१) मसीह ने चमत्कार दिखाए। संख्या (२) मसीह सलीब से मारा गया। अर्थात् अपनी मौत से नहीं मरा।

संख्या (३) देश में फूट डलवाना और लोगों को घर बार से खदेड़ना चाहता था।

संख्या (४) मसीह के चमत्कारों के सब गवाह बेईमान हैं। निम्न प्रमाणों :—

(क) यहूदाह बेईमान हैं। (मती २६।१४, २१, २५)

(ख) पतरस बेईमान और शैतान के भक्त हैं। (मती २६।६६, ७५, १४ २६, १४।२६)

(ग) याकूब और योहना बेईमान हैं। (मती १,,१७।१७)

(घ) सब बारह शिष्य बेईमान हैं। (मरक़स १६।१५ मती १६।६-८, १०।२ पतरस १, २।२ योहन्ना ६।६६ मती १७।१४-२१)

अतः मसीह झूठा नबी है। जब अन्य चमत्कार दिखाने वाले झूठे हैं तो मसीह किस प्रकार सच्चा हो सकता है ? जबकि जहाँ किसी विद्वान् योग्य यहूदी ने चमत्कार के सम्बन्ध में प्रश्न किया। वहां हज़रत मसीह स्पष्ट टाल गए। चमत्कार सर्वथा न दिखा सके। अतः हम अथवा कोई अन्य उन के सच्चा होने पर किस प्रकार और कब विश्वास कर सकता है ?

मसीह के चमत्कारों के प्रकार

(१) मृतकों को जीवित करना।

(२) अन्धों को आंखें देना। कोढ़ियों को चंगा करना।

(३) जिनों, भूतों, देवी, बुरी रूहों का स्त्रियों और बच्चों से निकालना।

(४) मछली का शिकार जाल से मारना।

(५) थोड़ी वस्तु बहुत लोगों को खिला देना।

इन पांच प्रकार से बहुत अधिक चमत्कार मसीह के जिनों, भूतों, देवी और बदरूहों का स्त्रियों और बच्चों से निकालना। जिन का हम ही खंडन नहीं करते प्रत्युत स्वयं पढ़े लिखे ईसाई और विशेषकर

योरोपियन डाक्टर महोदय इस प्रकार के चमत्कारों का खंडन कर रहे हैं, और कहते हैं कि यह मूर्खता के युग की बातें हैं।

अन्धों को आंखें देना आदि आज कल के युग के बौद्धिक युग में सैंकड़ों डाक्टर आंखों का उपचार करते हैं और आंखें निकाल कर बना देते हैं जिससे सहस्रों, लक्षों मनुष्य ठीक हो जाते हैं। यह वैद्यक की बात है। चमत्कार का इससे कोई सम्बन्ध नहीं। भारत में भी सैंकड़ों सियाने अंधों का उपचार करते और उनकी आंखों में मट्टी डालकर आखें देते हैं। उन दिनों वहां एक तालाब में भी ऐसा ही प्रभाव विद्यमान था। (योहन्ना ५।१-६)

मृतकों को जीवित कर देना यह केवल एक कहानी है। क्योंकि मसीह महोदय का वहाँ यह कथन विद्यमान है। यह मरा नहीं किन्तु केवल बेहोश है। लड़की मरी नहीं किन्तु सोती है।

(मती ६।२४, मरकस ५।३६)

क्योंकि मसीह ईसाईयों के कथनानुसार सच्चा मनुष्य था, छली कपटी नहीं था। अतः उसने अवश्यमेव सत्य कहा कि वह सोती है, मरी नहीं। अतः यह किसी प्रकार का चमत्कार नहीं है।

मछली का शिकार भी सैंकड़ों मछली पकड़ना जानने वाले करते हैं, और लाखों ऐसे विद्यमान हैं, जो मसीह से बहुत अधिक मछली पकड़ सकते हैं। गंगा नदी में नरोरा राज घाट जिला बुलन्दशहर जहां से बड़ी नहर निकली है। अंग्रेजों ने ऐसी चतुराई की है कि मिनटों में मनों मछली पकड़ सकते हैं। अतः यह उस से सहस्र गुना बढ़ कर चमत्कार है। शेष रहा, थोड़ी वस्तु से बहुतों की भूख मिटाना। यद्यपि यह चमत्कार घी में भी विद्यमान है किन्तु ऐसे ही घोषित चमत्कार सहस्रों व्यक्ति मानते हैं कि मुहम्मद साहिब, पीर रत्न नाथ साहिब और खाजा मुय्यीयुद्दीन साहिब ने किये। आगे झूठ कहने वालों की गर्दन पर। और वास्तविक बात सब के लिए यही है कि :—

पीरां नमेपरन्द मगर मुरीदां मे परानंद।+

अब केवल एक चमत्कार अवशिष्ट है। अर्थात् मसीह का मृतकों से जी उठना। पाठक इस को भी देखलें कि यह कई कारणों से मिथ्या है। ईसाई कहते हैं कि मसीह आसमान पर खुदा के दाएं (दक्षिण) हाथ बैठा है। हम पूछते हैं कि क्या खुदा के दक्षिण, वाम हाथ भी हैं। यदि नहीं तो बैठना स्वयं असंभव है। दूसरी बात क्या आसमान कोई बहुत है? यदि नहीं? जैसा कि समस्त ज्ञानी बुद्धिमान् मानते हैं। तो मसीह का जाना, बैठना और जीवित होना तीनों केवल झूठ हैं। इस के अतिरिक्त मृतकों से जीवित होने के जितने गवाह है, वह विश्वास के पद से गिरे हुए हैं।

(१) हाकिम, वह मसीह का सहायक था। (देखो मती २७।२६)

(२) हाकिम (अधिकारी) की स्त्री, वह मसीह की बहुत शुभेच्छु थी। (मती २७।१६)

(३) पहरेदार, यह सारे यही बात चाहते थे। (मती २७।५४)

पलातुस हाकिम को मसीह के मरने पर आश्चर्य है। (मरकस १५।४४)

बहुत लोग दुबदह (सन्देह) में रहे। (मती २८।१७)

+पीर नहीं उड़ते किन्तु मुरीद (शिष्य) उड़ाया करते हैं। (अनुवादक)

अतः अवश्य लाश छिपा दी गई और उसका आसमान पर जाना प्रसिद्ध किया गया। जिस प्रकार अब तक भी सहस्रों वर्षों के मृतक पीर मुरीदों को हरे तोते के रूप से एकान्त में दृष्टि गोचर होते हैं। ऐसे ही मसीह भी शिष्यों को दिखलाई दिया और आंखों के तोते उड़जाने से उस का आसमान पर चला जाना मान लिया किन्तु शोक कि दुबदहा (संदेह) में रहे। और अब जो आसमान ही सिद्ध नहीं होता तो समस्त ईसाई और भी कठोर दुबदह (संशय) में हैं।

दुब्धा में दो रस गए।
न माया मिली न राम॥

प्रसिद्ध विद्वान श्री ह्यूम महोदय करामत (चमत्कार) के सम्बन्ध में फरमाते हैं:—

"चमत्कार सृष्टि नियम का टूटना है। क्योंकि इन सृष्टि नियमों को एक सीधे=अपरिवर्तित अनुभव ने स्थापित किया है, अतः इस वास्तविकता का वास्तव में स्वभाव ही से चमत्कार के विरुद्ध ऐसा पूर्ण प्रमाण है। जैसा कि संभव अनुभव से कोई तर्क युक्तियुक्त हो सकता हो"

अब भ्रान्त में हम इंगलिस्तान के अनुपम विद्वान्, वैज्ञानिक, समय के महा वेत्ता, प्रोफेसर हक्सले महोदय की सम्मति का उल्लेख करते हैं, जो उन्होंने सामान्यता इन्जीलों और विशेषतः इन्जीली चमत्कारों के सम्बन्ध हे प्रगट की है।

प्रोफेसर हक्ससे महोदय फरमाते हैं कि—

"दूसरी (इन्जील मरफ़स) में एक वर्णन पाता हूं। जिसकी साक्षी प्रगट रूप से उसी प्रकार है। जिस प्रकार कि किसी और घटना की जो उस इतिहास में हैं। यह प्रसिद्ध देवों अथवा भूतों की कहानी है जो कि एक व्यक्ति से निकाले गए थे और जिनको आज्ञा दी गई थी कि वे एक सूरों के गल्ले में प्रविष्ट हो जाएं। जिस से गडरियों अर्थात् सूरों के निर्धन और निर्दोष मालिकों की बहुत हानि हुई। इस में कुछ संदेह नहीं हो सकता कि चमत्कारों का प्रचारक पाठकों पर यह प्रगट करना चाहता है कि उसका विश्वास है कि यह (भूतों को) निकालना और प्रविष्ट करना यसूअ नासरी (नासरत के निवासी) की ओर से हुआ। उस कार्य से यसूअ ने इस विश्वास पर बल दिया कि कोई कानूनी अथवा सदाचार सम्बन्धी प्रश्न उस के मन में उत्पन्न न हुए।

इसके विरुद्ध जो कुछ मैं फरनायोजी और पैथालोजी के सम्बन्ध में जानता हूं। उससे मुझे विश्वास करना पड़ता है, कि वह घटनाएं जो देवों के पकड़ने से बताई जाती हैं, वह ऐसी नियमित हैं जैसे कि चेचक के रोग और जो कुछ मैं इन अरापालोजी अर्थात् मनुष्य विद्या के सम्बन्ध में जानता हूं, यह ज्ञान मुझ में यह विश्वास उत्पन्न करता है कि देवों और उन की पकड़ का विश्वास पुराने अविद्या के युग के मिथ्या भ्रमों में से अवशिष्ट अज्ञात है और इस युग में इस की प्रथा साधारण शिक्षा, बुद्धि और सुनिश्चित विचार युक्त मनुष्यों के विचारों से विरुद्ध है (अर्थात् ज्यों २ ज्ञान और बुद्धि तथा निश्चित धारणा लोगों की वढ़ती जाती है, वह विचार बलहीन होते जाते हैं)

जो कुछ मुझे कानून और न्याय के सम्बन्ध में ज्ञात है। मुझे निश्चय दिलाता है कि अन्य लोगों की मलकियत अकारण व्यर्थ गंवा देना एक बड़े नमूना की बदमाशी है। इतिहास विशेषतः पंद्रहवीं, सोलहवीं, सत्रहवीं शती के इतिहास का अध्ययन मेरे मन में कुछ भी सन्देह शेष नहीं रहने देता कि

पकड़ और भूत विद्या की सत्यता में विश्वास जो रोमन कैथुलिक और प्रोटेस्टेन्ट लोगों ने इस अध्याय और ग्रन्य असंख्यवाक्यों पर जो नए और पुराने टेस्टामेंट में पाए जाते हैं। ठीक रूप में आधारित किया। इस विश्वास ने बहुत से भयावह कष्ट उठाए। निर्दोष व्यक्तियों, स्त्रियों, बच्चों को न्यायालय की आज्ञा से वध कराया। जो ईसाईयों और पादरियों कि विशेष प्रभाव से गठित हुए। जबकि मैं विचार करता हूं कि ऐसे अवसर पर एक सीधे सादे वक्तव्य का लेख कि भूत विद्या और पकड़ में विश्वास एक व्यर्थ शरारत की बात है। मिडिल अञ्जीर के अति विस्तृत कष्ट को असंभव कर देती।

एक अपमानित करने वाला समझ कर दूर करने को उद्यत हूं।

"ऐ नापाक रूह (हे अपवित्र जीव) तू मनुष्य से निकल आ"। (मरकस ५।८)

यह शब्द हैं जो यसूअ से बताए गए हैं।

यदि मैं यह कहूं जैसे कि मुझ को कहने में कोई लज्जा नहीं है। कि मैं अपवित्र रूहों (भूतों) की सत्ता और इस अपेक्षा से कि मनुष्यों से उन के बाहिर निकालने की सम्भावना पर सर्वथा विश्वास नहीं रखता। मैं समझता हूं कि डाक्टर वाक मुझ को यह कहेगा कि मैं अपने खुदावन्द (ईसा मसीह) की साक्षी को वजनदार नहीं समझता। किन्तु यदि यह शब्द वास्तव में प्रयुक्त किये गए थे तो सामंजस्य करने वालों में से बहुत चतुर मनुष्य भी इस बात के कहने के लिए कठिनता से साहस करेगा कि यह शब्द इन बातो में अविश्वास से मेल खाते हैं। जैसा कि विद्वान् और न्यायप्रिय तथा धर्मप्रिय डाक्टर अलगजन्डर बिलेबिकल साईकलोपेडिया में डी मोती ऐक्स आर्टीकल (लेख) पर अग्रलेख के टिप्पण में कहते हैं कि—

"न्यून से न्यून हमें खुदावन्द और उसके शिष्यों को एक सत्य प्रिय व्यक्ति मानना चाहिये। यद्यपि सत्य भाषण की आवश्यकताओं में से यह नहीं है कि शब्दों को सदैव केवल उन के अपने धातुज अर्थों में प्रयुक्त किया जाए किन्तु यह आवश्यक है कि वह इस प्रकार से प्रयुक्त न किए जाएं कि जिन से वह अर्थ निकलै कि जिनको कहने वाला झूठा समझता है। यद्यपि हमारे खुदावन्द और उसके शिष्य पकड़ आदि के शब्दों को कुछ एक रोगों की अपेक्षा साधारण शब्दों के रूप में प्रयुक्त कर सकते थे। उस बात पर विश्वास करने के बिना कि इस प्रकार की प्रगट करने की पद्धति को जड़ में थे किन्तु वे भूतों का मनुष्यों मे प्रविष्ट होना अथवा उन से बाहिर निकाला जाना नहीं कह सकते, जब तक कि वे इस बात को न मानें कि मनुष्य वास्तव में देवों में जाते हैं। अतः उन का यह विश्वास नहीं था तो वह सत्यप्रिय मनुष्यों की भान्ति नहीं बोले।" (देखो बेली कल साईकलोपीडिया जिल्द १ पृष्ठ ६६४ की टिप्पणी)

यह बात जिस पर हम बहस कर रहे हैं केवल दूसरी इञ्जील की गवाही पर ही आधारित नहीं है। तीसरी इञ्जील दूसरी का विशेषतः अपवित्र रूहों को मनुष्य से बाहिर निकालने के आदेश के बारे में समर्थन करती है। यद्यपि पहिली इञ्जील या तो उसी किस्सा को भिन्न रूप में वर्णन करती है अथवा उसी प्रकार का किस्सा वर्णित करती है। किन्तु आवश्यक वाक्य उसमें भी लिखा है "यदि तू हमको बाहिर निकालता है तो सूरों के समूह में हमको भेज दे और उसने उनको कहा कि जाओ।"

(मती ८।३१,३२)

यदि तीनों इञ्जीलों को गवाही एक ऐसे विषय में समस्त बौद्धिक सन्देह को दूर करने के लिये

वास्तव में पर्याप्त है। कि जो कर्म और ज्ञान रूपेण बहुत महत्व रखती है और जिसमें विश्वास अथवा अविश्वास मनुष्य की जीवनी अथवा उनका दूसरे मनुष्यों से बरतने पर बड़ी धीरता से प्रभाव रखती है। तब मैं इस बात के विश्वास करने पर बाधित हूं कि यसूअ ने तिरोहित रूप से वर्णन किया कि मुझ को अदृश्य संसार का ज्ञान है। जिसने भूतों और पकड़ों में विश्वास किया जो कि उस समय उसके काल में रहने वालों में विद्यमान था, कहानी सत्य है तो मध्य युग का अनुमान अदृश्य संसार के संबंध में संभव और बहुत संभव है कि सर्वथा सत्य हो और सर्पिंचर ऐलेक सगंस और मेथर तक चुड़ैलों को ढूंडने वाले बहुत बदनाम किये हुए लोग हैं।

इसके विरुद्ध मनुष्यता इस विश्वास के बहुत भयावह परिणाम को देखकर और साधारण बुद्धि उन सब विषयों में जिनकी उचित और पूर्णरूपेण खोज की गई है। गवाही को अयोग्य समझकर तथा विज्ञान विद्या "पकड़" के विषय को पैथालोजी अर्थात् चिकित्सा की मर्यादा में धीरे २ लाकर जहां तक कि वह पोलोस की पकड़ में नहीं आते यह समस्त बलवती शक्तियां हमें इस विश्वास की उस गवाही पर जिस पर यह आधारित है। बहुत बल के साथ खोज करने के बिना स्वीकार करने के विरुद्ध सूचित करने में सहमत होती हैं।

मैं इस परस्पर विरोध से रक्षा का कोई प्रकार नहीं देखता। या तो यसूअ ने वह कहा जो लेख में है। उसने कहा या उसने नहीं कहा। पहिली अवस्था में यह आवश्यक है कि उसकी मान्यता ऐसे विषयों में जो अदृश्य संसार से संबंध रखती हैं, बहुत बलपूर्वक हिलाई जाए। दूसरी अवस्था में इञ्जीलों की गवाहियों पर चोट लगती है। यदि इञ्जीलों की रिपोर्ट ऐसी बड़ी भारी और दूर तक प्रभाव डालने में क्रियात्मक रूप में अविश्वासनीय है तो हम कैसे विश्वास कर सकते हैं कि वह और विषयों में विश्वसनीय हो। वह मुख चढ़ा उत्तर जिसमें बहुत बाधित किया हुआ समर्थन करने वाला आश्रय लेता है कि बाईबल पदार्थ विद्या सिखाने के लिए नहीं है।"

इस विषय में ठीक नहीं हो सकता कि भूतों और उनसे पकड़ की सत्ता का प्रश्न यद्यपि साईंस के साथ संबन्धित है किन्तु साथ ही सदाचार और धर्म से भी दृढ़ संबंध रखता है। यदि शारीरिक और मानसिक रोग भूतों के कारण से होते हैं तो ग्रे गरी आफ़ टावर्स और उसके समकालीन लोगों का यह विचार ठीक था कि "जिन भूतों के निकालने वाले डाक्टरों से अधिक लाभदायक हैं।" और उन व्यक्तियों के मानसिक और क़ानूनी उत्तरदायित्व के लिये बड़े भारी प्रश्न उत्पन्न होते हैं जो कि भूतों से ग्रस्त हूं। और संसार तथा उससे हमारे सम्बन्धों के सारे विचार सर्वथा भिन्न हो जाते हैं। यदि हम दूसरा विचार न रखें।

एक मध्य युगीन साधारण ईसाई के जीवन का विचार एक उन्नीसवी शताब्दी के साधारण अंग्रेज से उस प्रकार भिन्न था कि जिस प्रकार पश्चिमी अफ्रीका के हबशी का इन विषयों में इस समय है। आजकल का संसार धीरे किन्तु निश्चय पूर्वक इन और इसी प्रकार के शेष असभ्य भ्रमों को दूर करता जाता है। और चाहे कुछ ही क्यों न हो पुनः कीचड़ में आसन्न होने के लिए नहीं आएगा कि जब तक इसके विरुद्ध सिद्ध न किया जाए।

मैं इस संदेह करने का साहस करता हूं कि इस समय में कोई प्रोटैस्टैंट आत्मविद्या में निष्णात जिसके पास कोई प्रतिष्ठा खोने को है—कहेगा कि वह गैदरिंग की घटना पर विश्वास रखता है। अतः

दो बातों में से एक को स्वीकार करना चाहिये। या तो यह कि जिन्होंने इञ्जीलें लिखीं उन पर विश्वास न करना अथवा खुदावन्द पर विश्वास न करना जिस खुदावन्द की वह सरल लोग शैतान को अदृश्य संसार पर राज्य की ऐसी कथायें लिखने से प्रतिष्ठा करना चाहते थे। यही परस्पर विरोध है×। किसी बड़ी भारी योग्यता के और ठीक किये हुए अनुवाद के अतिरिक्त जिसके लिए यह समझा जाता है कि जो कुछ विद्या कर सकती है - कर चुकी है अन्य किसी वस्तु की आवश्यकता नहीं है। और न साधारण बुद्धि के ज्ञान बिना साधारण नियमों के बरताव के किसी और बात की आवश्यकता है। हम इस बात के स्वीकार करने वाला बनाने के लिए कि इन दो बातों में से एक बात चुनलें। इसमें कुछ भी सन्देह नहीं हो सकता कि कहानी जो प्रथम इञ्जील में लिखी गयी है। वह दूसरी और तीसरी इञ्जील का अनुकरण है। तो भी जो विरोध हैं। वह भारी और इस प्रकार के हैं कि उनमें सामंजस्य नहीं हो सकता। और इसी कारण पर न्यून से न्यून हमको चाहिए कि सम्मति देने से मौन रहें। किन्तु इसके अतिरिक्त और भी बहुत कहा जा सकता है। उस समय से जब तर्क के साथ बाईबल का अन्वेषण आरंभ हुआ—इस समय तक इस देर तक रहने वाले विचार के विरुद्ध कि तीन इञ्जीलें तीन स्वतन्त्र व्यक्तियों की बनी हुई हैं जिनको खुदा की ओर से इलहाम हुआ—प्रबल गवाही से एकत्र हो गई हैं। यहां तक कि इस समय इस परिणाम से सुरक्षा नहीं हो सकती कि इन तीनों में से प्रत्येक एक एक की कृति है जिसके दो भाग हैं। एक तो आधार जो तीनों के लिए सामान्य है और दूसरा वह जो प्रत्येक के लिए विशेष है। शब्द, आधार और मकान से यह अर्थ कदापि नहीं निकलना चाहिए कि मकान आधार से पीछे तैय्यार किया गया। इसके विरुद्ध इसके कुछ भाग संभव है कि हूं और अधिक संभव है कि आधारशिला के कुछ भागों से अधिक पुराने हों।

गेडरेन के सूरों की कहानी आधार से संबंधित है। न्यून से न्यून इसका वह आवश्यक भाग जिस में भूतों की पकड़ का विश्वास प्रगट किया गया है और इसलिए पहिली दूसरी और तीसरी इञ्जीलों के संपादक जो व्यक्ति थे। उन्होंने इस विश्वास को स्वीकार किया—(जो वास्तव में उस युग के यहूदियों और अन्य जातियों में बहुत था) और यसूअ् से जोड़ दिया। इस आधार (अर्थात् इस तीन प्रकार की रिवायत=गवाही) के जिस पर यह तीनों सहमत हैं--उत्पन्न करने वाले या उत्पन्न करने वालों के सम्बन्ध में हमें क्या ज्ञात है ? कि हम केवल उनके कथन को इतना महत्वपूर्ण समझें कि जिससे मनुष्यता, बुद्धि और ज्ञान के विरुद्ध युक्तियों को न्यून कर दिया जाए। और उनके उस्ताद (गुरु) की

×क्या कोई व्यक्ति यह बात कह सकता है कि कोई आन्तरिक अथवा बाह्य नियम है कि जिससे एक बाईबल के वर्णन को पढ़ने वाला जिसमें कोई ज्ञान युक्त बात हो इस बात के लिए निर्णय कर सके कि उसको गंभीरता से लेना चाहिए या नहीं ! क्या तूफान का वृत्तान्त जो कि न्यू टैस्टामेंट में ठीक माना गया है वह इब्राहीम की मांग की अपेक्षा जो कि उसमें ठीक मानी गई है—वह न्यून स्पष्ट है। किस चिह्न से अरण्य के साथ मन (एक प्रकार के आसमानी भोजन ?) में पालन पोषण की घटना (जिसमें बहुत कुछ तर्क सम्बन्धी प्रश्न उत्पन्न हो सकते हैं यह प्रगट हो सकता है कि यह भक्ति के लिये है) और कानून का हव्वा के हाथ से पत्थर पर लिखे जाने की कथा शाब्दिक ठीक है—यदि आदम के निकाले जाने कीं घटना एक ऐतिहासिक घटना का ठीक वर्णन नहीं है तो पौलुस का मजहब कहां रहता है। किन्तु पौलुस की कहानी तर्क के उतने ही विरुद्ध है और विश्वसनीय शहादतों से इतनी दूर है जैसा कि उत्पत्ति और तूफान की घटना। जिनके साथ कहानियों का क्रम जोड़ता है।

प्रतिष्ठा को भय में डाला जाए। जिससे बहुत लोग अनुकूल होने के लिए प्रसन्न होंगे। सर्वथा कुछ भी नहीं। इस बात के लिए कोई प्रमाण भी नहीं है और साधारण परिजीएशन से बढ़कर भी कुछ नहीं कि कोई इञ्जील जिस अवस्था में हम उसको शुद्ध अनुवाद में पाते हैं। दूसरी शताब्दी से पूर्व अथवा अन्य शब्दों में घटनाएं जो बर्णन की गई हैं। उनके पश्चात् साठ या सत्तर वर्ष के अन्दर वर्तमान थी। और उस समय से और अब से पुरानी इञ्जील के वर्तमान हस्तलिखित इञ्जीलों के मध्य यह नहीं कहा जा सकता कि कितने परिवर्तन और परिवर्द्धन हो गए हूं। यह कहा जा सकता है कि यह समस्त केवल विचार ही विचार है। किन्तु यह बहुत कुछ अधिक अर्थात् विचार से बढ़कर है। हमारे अनुवादक क्यों कि वह योग्य विद्वान् और ईमानदार(धर्मनिष्ठ) व्यक्ति हैं। वे इस बात के प्रगट करने में बाधित हुए हैं कि ऐसी वस्तुएं अर्थात् परिवर्तन और परिवर्द्धन सबसे वर्तमान पुरातन इतिहासों के पीछे भी घटित हुई हैं। दूसरी इञ्जील की सबसे पुरानी कापियां १६।८ तक समाप्त हो जाती हैं। शेष की १२ आयतें अर्थात् पीछे मिला दी गई हैं। और यह बात ध्यान देने योग्य है कि प्रक्षिप्त करने वाले ने इस कालम के प्रविष्ट करने में देर नहीं की। कि जहां यसूअ अपने शिष्यों को वचन देता है कि वे मेरे नाम से देवों को निकालेंगे। दूसरा टुकड़ा जो किनारे पर फंका (अर्थात् लिखा) गया है। इससे भी अधिक शिक्षा वह है। यह वह प्रभावशाली समापन उस स्त्री का जो दुराचार करते पकड़ी गई थी—है कि जिसके सदाचार रूप से बड़े भारी अर्थ हैं। जिसके संबंध में यदि आन्तरिक गवाही निर्दोष होती तो यह कहा जा सकता था कि मसीह की शिक्षा का बड़ा भारी आदर्श है। किन्तु शोधक निर्दयता पूर्वक कहते हैं कि बहुत से पुरातन लेख योहन्ना ७।५३ से ८।११ तक प्रविष्ट नहीं करते हैं। अब कोई बुद्धिमान् व्यक्ति अपने आप से यह प्रश्न पूछे कि यदि इसके पश्चात् जब लगभग यह निर्णय हो गया कि न्यू टेस्टामेंट क्या है? और चौथी तथा पांचवीं शताब्दी के पीछे भी प्रक्षेप करने वाले लोगों में इतना साहस और कारीगरी थी कि वह इस प्रकार के प्रक्षेप और मिलावटें कर सकें। अत: उन्होंने क्या कुछ किया होगा? जब कि किसी व्यक्ति को यह प्रश्न सूझा भी नहीं था कि वास्तविक इञ्जील किसको समझा जाए? जबकि मौखिक गवाही जो अभी तक पूर्ण नहीं हो चुकी थी। उन लिखी हुई बातों से अधिक बहुमूल्य समझी जाती थी जो प्रथम शताब्दी के अन्तिम भाग में विद्यमान थीं। अथवा दूसरा विचार अच्छा समझने पर यदि वे व्यक्ति जिन्होंने केनन (इसमें वह इञ्जीलें प्रविष्ट हैं जो स्वीकार को जाती हैं) के संबंध में धीरे २ निर्णय किया। वे उन पुरातन लेखों की सत्ता से परिचित नहीं थे जो हमारे पास विद्यमान हैं। अथवा यदि परिचित हैं। तो उनकी गवाही को खंडित किया अर्थात् न माना। सत्यान्वेषकों की अवस्था में उनकी योग्यता का क्या अनुमान हो सकता है? वह लोग जो ईसाईयों की पवित्र पुस्तक की स्वतंत्रतापूर्वक अन्वेषण पर आक्षेप करते हैं। भूल जाते हैं कि जो कुछ वह हैं उसी स्वतन्त्रतापूर्ण अन्वेषण के कारण से हैं। जब तक इहलाम के विश्वासी इस बात के कहने के लिए उद्यत न हों कि बहुत सारे प्रतिष्ठित पादरी बहुत सारी शताब्दियों में भूलों से सुरक्षित रहे हैं। क्योंकि यदि हम इस बात को भी स्वीकार करलें कि उस काल की कुछ एक पुस्तकें इलहामी थीं तो वे बहुतों में से थोड़ी ही थीं। और उन लोगों को जिन्होंने केनन की पुस्तकें चुनीं। केवल सत्यान्वेषक ही समझना चाहिए। जब तक वे इलहामी न हों और उस गवाही से जो वह अपने बौद्धिक नमूना के लिये छोड़ गये हैं। सर्वथा सत्य की खोज न करने वाले अन्वेषक थे। जब कोई व्यक्ति समझता है कि ऐसे नाजुक प्रश्न ऐसे व्यक्तियों के हाथ में पड़े जैसे कि पी. पी. अस जिसका अंगूर की प्रसिद्ध कहानी में विश्वास था और एरीनी अस अपनी युक्तियों सहित जो उसने केवल चार इञ्जीलों के लिये दीं और ऐसे शान्त लेखक जैसे टूलोली अनजस ने कहा

कि मैं विश्वास करता हूं। वह जो असंभव है। आश्चर्य यह है कि वह चुनना जिससे हमारा न्यू टैस्टामेंट बना हु ा है। प्रकाश में आक्षेप वाली वातों से इतनी बड़ी है जितनी कि वह उपाकरफ़ा (अर्थात् वह इन्जीलें जो न्यू टैस्टामेंट में प्रविष्ट नहीं की गई हैं) वाली इन्जीलें वास्तव में इसी योग्य हैं कि वह इपा करफ़ा हूं× । किन्तु मनुष्य सन्देह कर सकता है कि कुछ अधिक अन्वेषणपूर्ण विशेषता इपाकरफा को बहुत बढ़ा देती है। इस स्थान पर एक स्पष्ट आक्षेप उत्पन्न होता है जिस पर ध्यान देना चाहिए। यह कहा जा सकता है कि सत्यान्वेषण सन्देह इस सीमा पर जहां ले जा चुके हैं ऐतिहासिक रूप से पीरोनज़म है। कि यदि हमें किसी पुरातन अथवा नूतन इतिहासज्ञ पर सर्वथा विश्वास नहीं करना है। क्योंकि इसने एक असत्य बात को सत्य स्वीकार कर लिया है तो अच्छा यह होगा कि हम इतिहास की ओर सर्वथा ध्यान दें। यह कहा जा सकता है कि और बहुत ही न्याय से कि अजनहार्ड की लाइफ़ अफ़शाल में न्यून विश्वास के योग्य नहीं है क्योंकि हिस्ट्री आफ़ वी ट्रान्सलेशन आफ दी बलेसड मारटर्स मार सी ली नस ई पाल में सीमा से अधिक विश्वास की विचित्र अवस्था यथार्थ बुद्धि की न्यूनता और इसके साथ आठवीं आज्ञा की न्यूनता प्रगट होती है अथवा इस रिसाला के अन्तिम शब्दों से यदि हम पीछे न जावें। तो निश्चितरूपेण उस योग्य देवी मिस सटरक अवशिष्ट अस्थि पंजर के खाने के कारण से जिसको कि उसने ऐसा प्रतीत होता है कि जान बूझ के विना बनाई है। सर्वथा अविश्नीय नहीं समझना चाहिये। यह तो सर्वथा ठीक है। मुझे भय है कि कोई व्यक्ति जीवित नहीं जिसकी गवाही स्वीकार की जावे। यदि पहिली शर्त यह हो कि उसने कोई कहानी नहीं बनाई और प्रसिद्ध भी नहीं की। हम सबके मनों में ऐसे झूठे स्थान विद्यमान हैं। जैसा कि एक चट्टान पर छोटे चिह्न होते हैं। जैसा कि छोटी हरी घास उत्पन्न हो सकती है। जहां पर कोई खाने का बीज पड़ जावे। वहां अवश्य कुछ न कुछ निश्चित फल फूल लावेगा। इस बात के विना कि हमारी सत्यता अथवा पवित्रता को और विषयों में कुछ भी प्रभावित करे। सर वालटर स्काट को ज्ञात था कि वह एक कहानी का उसके विना जैसा उसने स्वयं कहा कि जब तक मैं उसकी नई टोपी और सोटी न दे दूं वर्णन नहीं कर सकता था।

हममें से बहुतों का सर वालटर से यही भेद है। हम परिचित नहीं हैं कि यह कहानी बनाने वाली शक्ति हमारे ज्ञान के विना अपना प्रभाव प्रगट कर देती है। किन्तु यह भी सर्वथा सत्य है कि यह किस्सा कहानी बनाने वाली शक्ति प्रत्येक मनुष्य में एक ही मन की प्रत्येक अवस्थाओं और प्रत्येक भागों में समान रूप से तीव्र नहीं होती। डैविड ह्यू म वास्तव में इस कहानी घड़ने वाली शक्ति का इतना समर्थहीन नहीं था जितना कि दनेरेमिल बेडिया। कुछ एक नये इतिहासज्ञ जिनका नाम लिया जा सकता है। और ऋषियों से बड़ा वहमी व्यक्ति भी यदि उसने पांच पौंड देने हूं कभी यह विचार नहीं करता कि मुझे सौ देने हैं। साधारण बुद्धि का नियम तो यह है कि ऐसे गवाह पर इन सब बातों में

×विद्वान् पिपस्स की पुस्तक सायनीडेकन की इंजीलों के चुनने के सम्बन्ध में एक विचित्र कार्यवाई मैडिम बलैवस्टकी महोदया लिखती हैं कि "जब बहुत सी इंजीलें (जो ७४ से अधिक थीं) एकत्र हो गईं। तो कौन्सल नालीस ने उनके इलहामी गैरइलहामी होने के भेद के लिए यह निर्णय किया कि गिरजा में मेज के नीचे सम्पूर्ण इंजीलें मिलाकर रख दी जायें और सारी रात इस रूप में प्रार्थना करें कि हे खुदावन्द ! जो पुस्तकें इलहामी हैं। वह मेज पर चढ़ जायें..... और जो इलहामी नहीं वह नीचे पड़ी रह जायें—जैसा कि उसी के अनुसार हुआ।"

(आईलस इनवेल्ड जिल्द २ पृष्ठ २५१ प्रकाशन १८७७ ईस्वी न्यूयार्क)

विश्वास करना चाहिए। जिसमें उसका स्वार्थ अथवा उसका अपनापन अथवा उसके पक्षपात या उस वैचित्र्य का प्रेम जो सब मनुष्यों में थोड़ा बहुत विद्यमान रहता है बहुत बलके साथ विद्यमान न हों और यदि वह हों तो उस समय इतनी समर्थित गवाही का मांगना जितनी की वह वस्तु जिसकी वह गवाही दी गई है। संभावना के विरुद्ध हो। गडरियों के किस्सा पर युक्ति के विना मैं संदेह नहीं करता हूं। यदि मैं यह कहूं कि उन देवों की सत्ता जो मनुष्य से सूरों में इस प्रकार लाए जा सकते हैं संभावना के विरुद्ध है।

मैं स्वीकार करता हूं कि मेरे पास कोई अनुमान प्रमाण नहीं है। प्राकृतिक वस्तुएं ऐसी हैं जैसी कि टी० नी० ई० ग्रौर टरक्की नी० ई० जो सूरों से मनुष्यों में और मनुष्यों से सूरों में जाई जा सकती हैं। तथा जो दोनों पर बहुत शैतानी और मृत्यु लाने वाला प्रभाव उत्पन्न करती हैं। संभव है कि आध्यात्मिक वस्तुएं भी ऐसी विद्यमान हूं जो इस प्रकार परिवर्तित हो सकें। और जिनके प्रभाव समान हूं। साथ ही मैं यह भी कहने को बाधित हूं कि बहुत ही सच्चे मनुष्य जिनके लिए मेरी बड़ी भारी प्रणति है। ग्राज कल की रूहों की कहानियों में विश्वास रखते हैं जो कि विचाराधीन किस्सा की भांति सम्भावना से दूर है। अतः जहां तक पवित्रता से हो सकता है। मैं कहता हूं कि मेरे पास कोई कारण नहीं कि जिस से यह सिद्ध हो सके कि इन परिवर्तनशील देवों की सत्ता नहीं। न मैं इनकार कर सकता हूं कि केवल समस्त रोमन कैथुलिक चर्च ही नहीं। किन्तु बहुत प्रसिद्ध वेनीस काफ़िर (ग्रर्थात् जिन को वीस महोदय काफ़िर = नास्तिक कहते हैं) इस बात में ईमानदारी ग्रौर दृढ़ता से विश्वास रखते हैं कि ऐसे देवों की कार्य करने वाली शक्ति इस १८८६ ईस्वी में बड़े बलपूर्वक है। किन्तु तो भी जैसा कि नेक-विशप बट कहता है कि "पुरानी बिलटी जीवन की प्रेरक है।" और मुझ को प्रतीत होता है कि यह उन अवस्थाग्रों में से एक है कि जहां विश्वास और गवाही का वह नियम जिस को मैं ने वर्णन किया, पूर्ण बल रखता है। ग्रतः पुरातन और नूतन भूत विद्या की सत्यता के लिए बहुत सारे (किसी कारण से सारे नहीं) गवाहों के लिए प्रतिष्ठा के साथ भी मैं ध्यान रखता हूं कि उन की इस विशेष विषय में शहादत (गवाही) उनके परिणाम निकालने के इतनी थोड़ी है कि उपहास होता है। जो कुछ कहा जा चुका है। इसके पीछे मैं कोई विचार नहीं करता कि कोई योग्य व्यक्ति यदि वह क्रोधित न हो, तो मुझ पर खुदावंद ग्रौर उसके शिष्य के विरुद्ध कहने के विरुद्ध दोषारोपण करेगा। यदि मैं दूसरी बार इस बात को कहूं कि मैं समस्त गडरियों की कहानी में विश्वास नहीं करता। किन्तु यदि वह सारी कहानी विश्वास के योग्य नहीं है। तो ग्रन्य समस्त भूतों की पकड़ की कहानियों के सम्बन्ध में सन्देह पड़ जाता है और यदि भूतों की पकड़ में विश्वास जोकि ग्रारंभिक ईसाईमत का आधार है, हिल जावे (समाप्त हो जाए) तो उस अवस्था में इंजीलों की भविष्य वाणी आगामी संसार की अपेक्षा अविश्वस्त गवाही के लिए क्या कहना होगा? (पत्रिका नाईरिसी सेनेचरी अंग्रेजी प्रकाशित लंडन फ़रवरी १८८६ ईस्वी पृष्ठ १७१ से १७८ तक)

—०—

चतुर्थ अध्याय

बाईबल का खुदा न दयालु न न्यायकारी किन्तु अत्याचारी है

एक व्यक्ति पादरी खड़गसिंह जी ने × अपने रिसाला अंक २,३ में परमेश्वर के प्रेम और न्याय के सम्बन्ध में धर्म के सिद्धांतों के विरुद्ध आक्षेप किये थे। जिसका उत्तर हमने "सदाक़त असूलों तअलीमे आर्यसमाज (आर्य समाज की शिक्षा और नियमों की सत्यता) अंक २, ३ में दिया। और बाईबल के खुदा की निर्दयता, अत्याचार और अन्याय प्रियता भी कुछ प्रगट कर दी थी। किन्तु अब हम इस रिसाला 'कृश्चनमत दर्पण' में बाईबल के सम्बन्ध में उसी मन्तव्य पर यथार्थतापूर्ण लिखना चाहते हैं।

पादरी महोदयो ! क्या आप लोगों ने कभी सोचा भो ? कि इस मन्तव्य पर ईसाईमत की क्या शिक्षा है ?

कुछ न्याय की वस्तुस्थिति पर दृष्टिपात कीजिए। जिसके पूर्ण करने को ईसाईयों के कथनानुसार खुदा ने अपने इकलौते बेटे को (जो वास्तव में पिता था) यह था कि अबुल्बशर+ आदम को (इस शर्त के साथ कि मनुष्य जाति-विद्या के उदाहरणों में जिस से सिद्ध होता है कि मानवोत्पत्ति एक से नहीं किन्तु बहुत से भिन्न २ व्यक्तियों से हुई और मानव हज़रत आदम की सत्ता से करोड़ों वर्ष पूर्व विद्यमान थे, अपने कार्य व्यवहार करते और मरते थे) यह पदवी अबुल्बशर (मनुष्यों का बाप) हज़रत आदम के लिए शोभा दे। एक ऐसे वृक्ष के फल खाने से (जो देखने में शोभनीय भक्षण करने के योग्य बुद्धि प्रद बना) निषेध करके स्वयं तथा शैतान के सम्बन्ध से आज्ञा के उल्लंघनार्थ प्रेरित किया। क्योंकि लिखा है कि "खुदावन्द खुदा ने सांप शैतान और स्त्री-हव्वा के वंश के मध्य शत्रुता डाली।"

(पैदाएश ३।१४, १५)

"हे खुदावन्द ! तू ने ही सम्पूर्ण वस्तुजात उत्पन्न कीं और वह तेरी ही इच्छा से हैं।"

(मुकाशफ़ात १४।६१)

"जब शैतान ने अपने छल कपट से हव्वा को ठगा।" (कुरसियान ११।३)

"क्योंकि लिखा है— फ़रेब खाने वाला और फ़रेब देने वाला दोनों उसी (खुदा) के हैं।"

(अय्यूब १२।१७)

"क्योंकि तूने (खुदा ने) उनके मनों से बुद्धि को छिपाया।" (अय्यूब १७।४)

× पादरी महोदय के छे व्याख्यानों के उत्तर में लेखक ने छे व्याख्यान प्रकाशित किये हैं जिनका नाम सदाकते असूलो तअलीम आर्यसमाज व पक्षपाती पादरियों की नासमझी का प्रतिकार है।

+ समस्त संसारस्थ मानव के पिता। (अनुवादक)

"और पुनः उस खुदा सर्व शक्तिमान् जिसने सब कुछ अपने हाथ रखा है । हज़रत आदम से इस आज्ञा उल्लंघन का बदला लिया (दण्ड दिया) और न केवल हज़रत आदम से किन्तु हम तुम सब से (बदला लिया) ।

अब महोदय ! फ़रमाईये । हमारा क्या दोष ? केवल यही कि इन्जील की शिक्षानुसार आदम की सन्तान समझे जाते हैं । वाह वाह ! क्या प्रकाशयुक्त न्याय है ? और ईश्वरीय महत्ता का यही महत्व है कि स्वयं ही लोगों को बहकावे । जैसा कि लिखा है कि "खुदा ने एक बुरी रूह उन के मध्य डाली है ।" (यसाया १६।१४)

पुनः लिखा है कि :—

"खुदा ने अबीमलिक और सिकम के लोगों के मध्य झगड़ा कराने वाली रूह को भेजा ।" (काज़ी ६।२३)

"खुदा ने उस को बुद्धि वंचित किया ।" (अयूब २६।१७)

"खुदा ने तुम पर नींद लाने वाली रूह को विजयी बनाया और तुम्हारी आंखें मून्द लीं ।" (यसाया ३६।१०)

खुदा का श्वास जातियों के मुख में लगाम होकर उन्हें मार्ग भ्रष्ट करे ।" (यसाया ३०।२७,२८)

"उसने उनकी आंखें बन्द की हैं । वे देखती नहीं और उनके मन भी (बन्द किए हैं) समझते नहीं ।" (यसाया ४४।१८ प्रकाशन ६८ ईस्वी)

जैसा कि लिखा है कि :—

"खुदावन्द ने आज तक उन्हें ऊंघने वाली रूह और ऐसी आंखें कि न देखें और ऐसे कान कि न सुनें दिये हैं ।" (रूमियों ११।७, ८)

और पुनः स्वयं ही हिसाब लेने लगे और यही दया स्वरूप और न्यायकारी कहलावे । खुदा के लिए कुछ तो सोचिये कि बल हीन मनुष्य खुदा की शक्ति का मुकाबला क्योंकर कर सकता है और जब वह बुरा कार्य करने पर समुद्यत करे अथवा आज्ञा दे जैसा कि खरक़ील २०।२५ प्रकाशन १८६० ईस्वी से प्रगट है कि खुदा ने इसराईल के लागों को बुत परस्ती (मूर्ति पूजा) की प्रेरणा और आज्ञा दी, तो कौन इस से इन्कार करे, और जो ईश्वरीय आदेश अथवा ईश्वरीयेच्छा की आज्ञा पालन करे । यदि वह इसके विपरीत दंडनीय भी हो तो उससे कौन श्रेष्ठता की आशा रखे और वास्तव में इस से किसी को भलाई की आशा न रखनी चाहिए । क्योंकि वह सर्वथा स्वतंत्रता पूर्वक अपनी इच्छा और अधिकार को प्रयुक्त करता है । और किसी की इच्छा, कर्म, वचन पर कुछ भी ध्यान नहीं देता । "पस वह जिस पर चाहता है । दया करता है और जिसे चाहता है उद्दण्ड करता है ।" (रोमियों ६।१८) (खरूज ७।३,४)

हम नहीं समझते कि ऐसे स्वतंत्र और इगवा करने वाले (बहकाने वाले) खुदा को कौन प्रेम और न्याय के गुणों का गुणी बता सकता है । जैसा बाईबल में दाऊद नबी ने कहा है कि—

"दाऊद ने जब उस फरिश्ता को जो लोगों को मारता था तो खुदावन्द से कहा । पाप तो मैंने किया और बुराई मुझ से हुई । पुनः इन भेड़ों का क्या दोष है ?" (समवाईल २।२४।१७)

क्या उपरिलिखित प्रमाणों से कुछ भी प्रेम और न्याय की गंध आती है ? कदापि नहीं। किसी ने किया और किसी को पकड़ लिया। और कहने लगे कि वाह ! हम ने तुम्हारे लिये अपनी गर्दन कटाई और गर्दन कटाकर भी प्रत्येक व्यक्ति को मुक्ति प्रदान नहीं की। किन्तु उन्हीं को (प्रदान की) जो मसीह की खुदाई पर विश्वास रखकर ईमान लाएं और बपतस्मा लें। मानो उस का रक्त पानी के छींटों की सहायता के बिना किसी के पाप का धब्बा नहीं धो सकता। और विश्वास की खूबी भी उपरिलिखित प्रमाणों के अनुसार मनुष्य के हाथ नहीं। वह या तो उसके हाथ में या किसी ऐसे बलवान् के अधिकार में जिस के मारे खुदावन्दी रूह भी कांपती है। और वह कौन ? हजरत शैतान दीन और ईमान का नाशक जिस की शक्ति का स्वीकार स्वयं खुदा ने यूं किया है। "इस बात के होते भी तूने मुझे उभारा है कि अकारण (संभवतः न्याय अथवा प्रेम की आवश्यकता से) उसे अर्थात् अयूब को दुःखों की मार मारूं।" (अय्यूब २।३)

और जिस की शक्ति का प्रकाश तसलीस (त्रिनेटी) के दूसरे खुदा पर इस प्रकार पूर्णता से हुआ कि जजाकल्लाह ×। जैसा कि स्वयं इञ्जील लिखने वालों को स्वीकार है कि "तब शैतान यहूदा में समाया और उसने जा के सरदार काहनों और सिपाहियों के सरदार से मंत्रणा की कि उस अर्थात् मसीह को किस प्रकार उन के सुपुर्द करे।" (लूका २२।३, ३१ यूहन्ना १३।२२)

और परिणामतः फांसी के तखते पर पहुंचाया। जिस के दुःख से मसीह (द्वितीत खुदा) यूं चिल्लाया। एली एली लिमा सबकतनी। हे खुदा ! हे खुदा !! तू ने मुझे क्यों भुला दिया। किन्तु शोक ! कि काम के समय कुतिया हगाई। प्रथम खुदा या मसीह का बाप उस समय सर्वथा सहायतार्थ न पहुंचा। संभवतः डर गया कि ऐसा न हो कि इस समय शैतान अलेहिररहमत (उस पर दया हो) मुझे भी सलीब पर चढ़ावे। वास्तव में अच्छी सोची। अन्यथा खुदा न खास्ता (खुदा न चाहे) कठिनाई पड़ जाती।

शैतान की शक्त मती १३।१८ और मरकस ४।१४ में इस प्रकार स्वीकार किया गया है :—

"तब शैतान आके उस कलाम को उनके मन से निकाल ले आता है। जिस से ऐसा न हो कि ईमान ला कर मोक्ष प्राप्त करें।"

"इस संसार के खुदा (शैतान) ने उन की बुद्धियों को सूक्ष्म कर दिया जिससे न होवे, मसीह जो खुदा की मसीह ही क्या आदम भी खुदा की सूरत था (पैदायश १।१७) (पैदायश ३।२२ जो उत्पन्न होते हो शैतान की उम्मत में प्रविष्ट हुआ। खुदा के भी केवल गजब (क्रोध) में आया और जिसकी सन्तान निर्दोष (केवल ईसाईयों के खुदा के न्याय पूर्ति के कारण से आदम के दंड भुक्तलेने पर भी और मनुष्यों के पाप के प्रायश्चित्त रूप में मसीह के फांसी चढ़ जाने पर भी लानत की जञ्जीर में बंधी है। सूरत है, उस के प्रकाश जलाल वाला इञ्जील का प्रकाश उन पर चमके।"

(फेन्तान २।४।४)

उस ने उन की आँखें अन्धी की और उन के हृदय कठोर किये है जिससे न होवे कि वे आंखों से देखें और मन से न होवे कि वे आंखों से देखें और मन से समझे तथा ईमान लावें और मैं उन्हें चंगा करूं।" (योहन्ना १२।४०)

× अल्लाह तुझे फल दे।

"हे खुदावन्द ! तू ने क्यों हमें अपने मार्गों से भ्रष्ट किया। क्यों तू ने हमारे हृदय को कठोर किया कि तुझ से न डरें।" (यसाया ६३।१७)

इसीलिये बाईबल का दयालु खुदा फरमाता है कि—

मैं कृपा न करूंगा और न छोड़ूंगा और दया न करूंगा किन्तु उन्हें मारूंगा।

(यरमियाह ६३।१७)

"सो तू अब जा और अमालीक को मार। और सब कुछ जो उनका है एक साथ हराम कर और उन पर दया मत कर। किन्तु स्त्री पुरुष, छोटे बालक, दूध पीते शिशु सब की हत्या कर।"

(समबईल १ १५।३)

"इन का उत्पत्ति कर्ता इन पर दया नहीं करता। और उन का बनाने वाला उन पर तरस नहीं खाता है।" (यसाया १७।११)

कुछ तो फरमा दीजिये कि इस अवस्था में हमारा हजरत मसीह पर ईमान न लाना दोषयुक्त है। या मजबूरी में ?

हमें तो ऐसा प्रतीत होता है कि वह खुदा जो क्रोधातिरेक या बदला लेने के जोश में प्रायः सोचे समझे बिना जो चाहता वह कर बैठता था।

उदाहरणतः जब उसने नूह के काल में शीघ्रता से लोगों को मार दिया और न केवल लोगों को किन्तु उन के साथ (न्याय या प्रेम के तकाजा को पूरा करने के लिये) निर्दोष प्राणियों और वनस्पतियों को भी (हलाक किया) और परिणामतः पछताया और मन में दुःखी हुआ कि मैं पुनः ऐसा कार्य न करूंगा।

अथवा जैसा बनी इसराइल (इसराइल की सन्तान) को दाऊद के साथ (इस कारण से कि दाऊद ने शैतान के बहकाने से प्रत्युत सुलैमान २१।१ प्रकाशन इलाहाबाद १८५५ ईस्वी राजा का मन परमेश्वर के हाथ में नदियों के जल की न्यांहि है। वह उसे जिधर चाहता है, उधर फेरता है" स्वयं दयालु खुदा के बहकाने से बनी इसराइल की जनगणना करानी चाहिये) जो सर्वथा निर्दोष थे उन को प्रेम अथवा न्याय के कारण प्रथम मार डाला और पुनः उदास हुआ।" (तवारीख २१।२ सन् १८ ५५ इस्वी)

अथवा जैसे खुदा अपनी दंड की व्यवस्था से जो उस ने ननवा नगर के लोगों पर यूनस के द्वारा प्रगट की थी पछताया और ईश्वर ने उनके कार्यों को देखा कि वह अपनी २ कुमार्ग से फिरे और ईश्वर इस बुराई से पछतावा जो उन पर लाने को उस ने कहा था और उसने उन से वह बुराई न की।"

(यूना ३।१०)

खुदावन्द फरमाता है (हे यरोशलम) तू पीछे फिर, मैं तुझ पर अपना हाथ बढ़ाऊंगा और तुझे बरबाद करूंगा। पछताते पछताते मैं थक गया।" (यरमियाहे १५।१६)

ऐसा खुदा परिणामतः अपनी करतूतों से यहां तक लज्जित हुआ कि अपनी गर्दन कटाने के विना उसका चित्त शान्त न हुआ। अन्यथा कहां का प्रायश्चित्त और कैसा बलिदान ?

न्यायकारी पापी को कभी नहीं छोड़ता और न निर्दोष को किसी के पापों के बदले में दंड देता है। पुनः स्वयं अपनी पवित्र सत्ता को दंड देना जिसे इञ्जील के अनुसार अधिकार था कि चाहे रक्त

पात के बिना हजरत मसीह के कारण से पाप एक ही लेखनी से समाप्त कर देता। क्योंकि इस आज्ञा से सब को लाभ पहुंचता। निम्नलिखित इन्जील मती २०।१-१५ के अच्छों को कड़कड़ाने का अधिकार न होता और अब तो बिचारे की जान गई और उनके भावे ही नहीं।

बहुत से लोग शिकायत का अधिकार रखते हैं। उदाहरणतः वह लोग जिनके कानों तक अभी मसीह की इन्जील ही नहीं पहुंची। द्वितीय वह बालक जो उत्पन्न होते ही मर गये, या थोड़े दिन के पश्चात् मरे। तृतीय वह जो जन्मतः पागल हैं जो समस्त आयु इसी रोग में पकड़े रहे और मजबूरी के कारण न मसीह पर ईमान ला सके और न बपतस्मा पासके यदि क्षमा न किए जाएंगे तो न्यायालय की जंजीर अवश्य खड़कावेंगे। यदि क्षमा कर दिए गए तो बुद्धि से कोरे हैं और जो बुद्धि व ज्ञान के कारण जादूगर, साहिर, शोबदा बाज़, भूत पिशाच और झूठे चमत्कारों के निपुण लोगों पर ईमान न लाए। अथवा जो दयालु भगवान् या हज़रत शैतान की इच्छानुसार ईमान न ला सके अपनी निर्दोषता पर तर्क करेंगे। और पाप के बोझ को दयालु भगवान या शैतान या पादरी साहिबान (जिन्हों ने इच्छा या अनिच्छा द्वारा इंजील सुना कर पापी बनाया) के आगे सिर धरेंगे। तब न जाने प्रेम अभिभूत हो अथवा न्याय। हमें तो इंजील से मसीही खुदा के क्रोधाभिभूत अत्याचारी और रक्त पिपासु होने के असंख्य प्रमाण मिलते हैं। हम नहीं जानते कि इन प्रमाणों के आगे कौन उन से प्रेम कर सकता है! और यदि कहें तो इसके अतिरिक्त बुद्धिमान् यूं समझें कि बकता है और क्या समझा जा सकता है?

(१) देखो खुदा ने आदम से उसके उस कर्म की जो ईश्वरीय इच्छा के अनुसार और शैतान की प्रेरणा तथा विशेषावास्थाओं के बल पर घटना हुई थी कैसा बदला लिया? उसे तो उसे, उस की सन्तान को भी न छोड़ा किन्तु अपनी गर्दन पर छुरी चलाए बिना न रहा।

(२) शैतान जैसा प्रबल, अकारण हमारे बहकाने पर जिसका परिणाम नित्य काल के दंडरूप में होगा—नियुक्त किया। क्या वह सर्वशक्तिमान् दयालुता और शैतान के दोनों कार्य सम्पन्न कर देने से लाचार (बाधित) था। नहीं शैताननियत से हाथ उठा लेना अभी नहीं हुआ। जैसा कि उपरिलिखित प्रमाणों से प्रगट है। तो भी उसने अपने लिये एक उप कार्यकर्त्ता नियत किया। जो शक्ति और बल में उससे भी बढ़ गया। क्योंकि वह उसे धोखा देने लगा और कठिनाईयों तथा कष्टों में गिरफ्तार करने लगा (पकड़ने लगा) जैसा कि मसीह पर प्रकाश में आया कि वह "एली एली लिमा सबकतनी"

अनुवाद—हे खुदावन्द! तू ने मुझे क्यों छोड़ दिया।" (मती २७।४६)

"हे बाप हे पिता! तुझ से सब कुछ हो सकता है। यह प्याला मुझ से टाल दे।"
(मरकस १४।३६)

और प्रार्थना की कि यदि तुझ से हो सके तो यह घड़ी मुझ से टल जाए।" (मरक़स १४।३४)

पुकारता पुकारता मर गया। न जाने उस ने किस से प्रार्थना की और पुनः क्यों खाली गई वह तो आप ही खुदा था। सब कुछ कर सकता था। खुदा ही ने बेटा (पुत्र) बन कर अवतार लिया था। या ऐसा कहो कि बाप खुदा ही बेटा खुदा बन गया था। यदि वह चाहता था कि ऐसा अवश्य होना है और शैतान के पंजा से छुटकारा असम्भव है तो अपनी कमज़ोरी (बलहीनता) से क्यों न शरमाया?

(३) तूफ़ान नूह उसी की निर्दयता का नमूना था।

(४) सदूम और अमूरा पर (पूर्ण दया से ?) आग और गंधक बरसाई।

(५) बनी इसराईल के कारण से मिश्र के लोगों के पहलोठे मार डाले और उन्हें नील नदी में डुबा दिया।

(६) समय २ पर बनी इसराईल को उभारता और उन से दूसरी जातियों को मरवाता रहा और प्रत्येक अवसर पर मिश्र की पराधीनता से निकाल लाने का तंग बरतन की भान्ति एहसान धरता रहा। (वर्तमान समय में) थियोडर पारकर की जीवनी पढ़ो। किस प्रकार उसने गुलामी का सत्यानाश किया। किन्तु गुलामों को कभी नहीं जतलाया कि मैं ने तुम को यूं स्वतंत्र किया है। बाईबली खुदा से तो थियोडर पारकर सहस्र गुना शुभ साहसी रहा। एहसान करके भुला देना, न जतलाना उच्च विचार सम्पन्नता है। किन्तु शोक ! कि बाईबली खुदा ने उसके विरुद्ध किया। निम्नलिखित प्रमाण खुदा की निर्दयता और क्रोध को सिद्ध करते हैं न कि प्रेम और प्यार को।

(१) मैं इफ़ारायम के लिए शेर बबर की भान्ति और यहूदा के घराने के लिए जवान सिंह की भान्ति होकर इन्हें फाड़ूंगा। (हौसीअ़ ५।१४)
(नोहा यरमियाह २।८, ११)

(२) इसीलिए मेरी आपत्ति को देखा कि वह अधिक होती है। तू शेर की भान्ति मेरा शिकार करता और पुनः विचित्र रूपों में हो के अपने प्रति मुझ पर प्रगट करता। (अयूब १०।१६)

(३) और मैं मिश्र के लोगों को परस्पर विरुद्ध कर दूंगा और उनमें से प्रत्येक अपने भाई से लड़ेगा। (यसाया)

(४) और मैं ने उन्हें वह कष्ट दिए जो ठीक न थे और विधान कि जिन से वह जीते न रहें।
(हिज़्क़ील २०।२५)

(५) परमेश्वर तुम्हारे पूर्वजों पर सीमातीत क्रोधित हुआ। (ज़करिया १।२)

(६) और मेरे आसमानी दूत ने मुझे कहा कि यह कहके पुकार कि रब्बुल अफ़वाज़ (सेनाओं का रब्ब = ईश्वर) यूं फ़रमाता है कि मुझे यरोशलम के लिए जोश आता है किन्तु बड़े जोश और इन विजातियों से जो अब बड़े आराम से हैं, बहुत अप्रसन्न हूं कि मैं थोड़ा सा विरक्त था और उन्होंने इस आपत्ति को अधिककर दिया। (ज़करिया १।१४, १५)

(७) हे मकतीस के रहने वालो ! तुम मातम करो (रोवो) क्योंकि सारे व्यापारी मारे गए। वह जो चांदी को उठाए लिए जाते थे सो काटे गये और इस समय ऐसा होगा कि मैं दीपक ले के यरोशलम में ढूंढूंगा और जितने अपने तलछट पर जम गए हैं और अपने मन में कहते हैं कि खुदावन्द न भला करेगा, न बुरा करेगा— उनको दंड दूंगा तब उनके धन दौलत और सामान न लूटे जायेंगे और उनके घर उजड़ जाएंगे। (सनफियाह १।११,१३)

(८) मैं देश के तल पर से सब के सब को सर्वथा नष्ट कर दूंगा। (सनफ़िया १।२)

(९) परमेश्वर क्रोधी और बदला लेने वाला ईश्वर है। और वैरियों के लिये क्रोधित होता है। परमेश्वर क्रोध में धीमा है किन्तु बहुत दृढ़ है। वह पापियों को निष्पापी कभी न ठहरावेगा। पुनः प्रायश्चित और दया कैसी ?

(१०) और मैं अपना मुख उनके विरुद्ध फेरूंगा। वह एक आग से निकालेंगे और दूसरी आग उन्हें जलावेगी और जब मैं अपना मुख तुम्हारे विरुद्ध फेरूं, तब तुम जानोगे कि मैं परमेश्वर हूं (क्रोध स्वरूप से भी डरा करते हैं) और प्रभु परमेश्वर कहता है कि उनके पाप के कारण से देश को उजाड़ डालूंगा। (हिज़कील १५।७-८)

अवश्य न्याय भी यही चाहता है।

(११) और परमेश्वर ने मुझे कहा कि यदि मूसा अथवा समवाईल मेरे सामने खड़ा हो तो भी उन लोगों पर दया करने को मेरा मन नहीं झुकता। मेरे आगे से उन्हें दूर कर वह चले जाएं। (यरमियाह १५।१)

(१२) "इस लिए तू उन लोगों के लिए प्रार्थना न कर क्योंकि आपत्ति के समय मैं इन की न सुनूंगा।" (यरमियाह १४।२)

(१३) और रब्बुल् अफ़वाज यूं फ़रमाता है कि देख, मैं इन पर दंड निपात करने को हूं। जवान तलवार से मारे जायेंगे और इनके पुत्र पुत्रियां अकाल से मरेंगे। (यरमियाह ११।२२)

(१४) इसलिये खुदावन्द यहूदा कहता है कि देख, मेरा गज़ब और मेरा कहर इस मकान पर और इनसान पर और पशु पर और मैदान के वृक्षों पर और भूमि की उपज पर डाला जाएगा और वह भड़केगा और बुझेगा नहीं। (यरमियाह ७।२०-२१)

(१५) इस लिये परमेश्वर यूं कहता है कि देख मैं उन पर आपत्ति लाने को हूं जिससे वह अपने को न छुड़ा सकेंगे और चाहे वह मुझ से प्रार्थना करें तो भी मैं न सुनूंगा। (यरमियाह ११।११)

(१६) किन्तु तुम्हारे दोषों ने तुम्हारी और तुम्हारे रब्ब (खुदा) की परस्पर पृथक्ता की और तुम्हारे पापों ने उस के मुख को तुम से छिपाया, ऐसा कि वह नहीं सुनता। (यसायाह ५९।२)

प्रतीत होता है कि खुदा पापियों पर दया नहीं करता किन्तु मुख छिपाता है।

(१७) और जब खुदावन्द अय्यूब से यह बातें कर चुका तो खुदावन्द ने अलेफ़ज़तवमीनी से कहा कि मेरा क्रोध तुझ पर और तेरे दोनों मित्रों पर भड़का। क्योंकि तुमने मेरे सम्बन्ध में मेरे भक्त अयूब की ओर नहीं कहा। (अय्यूब १२।७)

पहिले खुदा बात पर क्रुद्ध हो जाता था किन्तु जब से मर गया, ठंडा हो गया। देखो इन बेचारों से रिश्वत ले कर उन का पीछा छोड़ा और रिश्वत भी ली किन्तु अयूब की सफ़ारश से। जैसा कि लिखा है :—

सो अब अपने लिये सात बैल और सात मेंढे लेके मेरे भक्त अयूब पास जाओ और अपने लिये जलती पशु बलि गुजरानो। मेरा भक्त अयूब तुम्हारे लिये प्रार्थना करेगा कि मैं उस के कारण से स्वीकार करूंगा। ऐसा न हो कि मैं तुम्हारी मूर्खता के योग्य तुम्हारे साथ व्यवहार करूं। (अय्यूब ४२।५)

संक्षिप्त बात यह है कि ओल्डटैस्टामेंट खुदा का प्रेम सम्पूर्ण मनुष्य समाज के लिये कदापि सिद्ध नहीं करता हां, उस के क्रोध और ग़ज़ब के सहस्रों भड़कते हुए प्रमाण इस से एकत्र कर लीजिये। अब ओल्डटैस्टामेंट हम छोड़ कर कहते हैं कि स्वयम् मसीह संसार में प्रेम और प्यार का बीज बोने नहीं आया। उससे स्वयं यूं कहा है। देखो न्यूटैस्टामेंट।

"यह मत समझो कि मैं भूमि पर मेल कराने आया हूं। मैं मिलाप कराने नहीं—तलवार चलाने आया हूं। क्योंकि मैं पुत्र को पिता से पुत्री को माता से और पुत्र वधू को उस की सास से फूट करवाने आया हूं और मनुष्य के शत्रु उसके घर ही के लोग होंगे। जो कोई माता पिता को मुझ से अधिक प्रेम करता है वह मेरे योग्य नहीं जो कोई पुत्र वा पुत्री को मुझ से अधिक प्रेम करता है मेरे योग्य नहीं है।"
(मती १।३४-३८)

अब कुछ मसीह खुदा के सम्बन्ध में भी विचार कर लीजिये कि चाहे ८ और १६ के प्रमाणों के अनुसार पापियों को दंड के बिना कदापि न छोड़ेगा तो भी वह इन कर्मों के लिये जिनके करने में वह उपरिलिखित के अनुसार सर्वथा बाधित हैं, वह कुछ दंड देने में भी हिचकिचाता।

'यरोशलम को सान्त्वना दो और उसे पुकार के कहो कि उस की आपत्ति के दिन जो युद्ध और लड़ने के थे निकल गए। उस के पाप का प्रायश्चित्त हुआ और उसने खुदावन्द के हाथ से अपने सब पापों का दुगना पाया।" (यसाया ४०।२, ३)

पादरी खड़गसिंह जी को इस वैदिक सिद्धान्त पर कि कर्मों ही का फल मिलता है बड़ा आश्चर्य है किन्तु उन्होंने इञ्जील की इन आयतों को देखने से सर्वथा आंखें बंद कर ली हैं।

(१) तुम धोखे में न पड़ो। खुदा ठठ्ठों में नहीं उड़ाया जाता। क्योंकि मनुष्य जो कुछ बोता है—वही काटेगा। (गलतियों ६।७)

(२) क्योंकि इब्ने आदम (यसूअ) अपने बाप के जलाल में (तेजस्वितामें) अपने फरिश्तों के साथ आवेगा। तब प्रत्येक को इस के कर्मों के अनुसार फल देगा। (मती १६।२७)

(३) क्योंकि तू अपनी बातों से ही निष्पाप और अपनी बातों ही से पापी ठहराया जाएगा।
(मती १२।३७)

(४) पुनः उसने उस से कहा सावधान रहो कि तुम क्या सुनते हो। जिस माप से तुम मापते हो उसी से तुम्हारे लिये नापा जाएगा (मती ४।२४)

(५) कि राज्याधिकारी शुभ कर्मा लोगों को नहीं किन्तु बदकारों को भय का कारण है। अतः यदि तू चाहे कि राज्य से भय न रहे तो नेकी कर। (रूमियों १३।३)

(६) इस लिये यदि उस के सेवक भी अपने स्वरूप को सत्य प्रियता के सेवकों से बदल डालें, तो कुछ यह बड़ी बात नहीं। परन्तु उन का परिणाम उन के कर्मों के अनुसार होगा। (क्रिन्तियों २ ११।५)

(७) क्योंकि प्रभु की आंख धर्मी लोगों पर हैं और उसका कान उन की प्रार्थनाओं पर। किन्तु परमेश्वर का मुख अभिमान करने वालों के विरुद्ध है। (पतरस १।३-१२)

(८) क्योंकि जिस अवस्था में खुदा ने फरिश्तों को जब उन्होंने पाप किया न छोड़ा किन्तु अन्धकार की जंजीरों से बांधा और नरक में डाल के सुपुर्द किया तब न्यायालय के दिन तक उन की निगरानी हो और अगले संसार को भी न छोड़ा किन्तु तूफान के पानी को अधर्मियों के लोक में भेज कर जीव समेत जो सत्यवादिता की मनादी करने वाले थे आठ को बचा लिया और सदूम और अमूरा के नगरों को भूमिसात् करके तथा मिटजाने की आज्ञा फ़रमा के उन्हें आगामी के अधर्मियों की शिक्षा के

लिये आदर्श बना रखा और उसने सत्यप्रिय लू को जो गुन्डों कीं अपवित्र चालों से दुःखी हुआ रिहाई प्रदान की। (पतरस २ २।८-७)

इन समस्त प्रमाणों से तो स्पष्ट प्रगट होता है कि चाहे मनुष्य स्वतन्त्र कर्ता भी न हो और चाहे खुदा ही उस से पाप कराए तो भी अपने कर्मों और आचरणों के सुख दुःख रूप फल से बच नहीं सकता। किसी के साथ पक्षपात न होगा। हां, अति हो जाए तो कुछ आश्चर्य नहीं। जैसा कि यसाया। ४०।२ के उपरिलिखित प्रमाण से प्रगट होता है।√ अपना काल की पुस्तक २१।१७ के इन शब्दों से प्रगट होता है कि—

"तब दाऊद ने खुदा से कहा कि क्या मैंने लोगों को नहीं गंवाया अर्थात् मैं ने ही पाप किया और सत्य यह है कि बुराई की। परन्तु इन भेडों (बनी इसराईल) ने क्या किया है कि मेरी आपत्ति इन पर पड़ी। हे मेरे खुदावन्द ? हे मेरे खुदावन्द, मैं तेरी मिन्नत (प्रार्थना) करता हूं कि तेरा हाथ मुझ पर और मेरे बाप के घराने पर पड़े किन्तु इन पर नहीं"

दाऊद की यह प्रार्थना सत्तर सहस्र मनुष्यों के मरणोपरान्त कुर्बानी छुड़ाने से स्वीकार हुई।

पादरी महोदयो, पवित्र वेद में जाति पाति का कोई भेद नहीं। इस की शिक्षा और समस्त मानव मात्र के लिए एक जैसा है (जैसा कि हम व्याख्यान नंबर ३ के उत्तर में सिद्ध कर चुके हैं। किन्तु तो भी अपरिचिति के कारण आप अधिक आश्चर्य चकित न हूजिये मसीह के खुदा की प्रारंभिक अवस्था आप भूल गए। यह बेचारा खुदा बनी इसराईल के घर जा कर बछड़े खाता रहा। नहीं अग्नि में, अग्निस्तंय में अथवा बादल के मार्गगामी हुआ, कहीं लड़ा, याकूब से पहलवानी में पराजित हुआ, कभी मन (खाद्यवस्तु जो आकाश से खुदा गिराता था) और कभी बटेरे ला कर खिलाता और मीठा पानी चट्टान से निकाल कर पिलाता रहा।

संक्षेपतः छोटी सेवाकारी में बहुत समय व्यतीत किया यहां तक कि खैमों की चौकीदारी करता रहा परिणामतः वही कौम उस की न हुई किन्तु उसके, रसूलों और नबियों को बहुत नीच समझा और कष्ट दिये और बाधित बेचारे को उस राजा के समान (जिस का दृष्टान्त मती २२।१-१६ में लिखा है) और जिस के निमन्त्रण में निमन्त्रित लोग सम्मिलित नहीं हुए बाधित हो कर उसे अन्य लोगों को बुला कर खाना देना पड़ा और विजातीयों से अपने लिए लोग चुनने पड़े।

यदि हम आपके वक्तव्य को (जो वास्तव में असत्य और निराधार है) मान भी लें कि जात पात का भेदादि प्रामाणिक पुस्तकों में पाया जाता है तो सत्य कहना। वह भेद बनी इसराईल और विजातीयों से अधिक कठोर है क्या ? हम तो ओल्डटैस्टमेंट में पढ़ते है कि बनी इसराईल के लिये संसार के खुदावन्द ने वह २ कार्य किये जो उसकी ईश्वरीय शोभा के कदापि योग्य नहीं थे।

—०—

√प्रत्येक ने स्पष्ट खोल दिया कि कोई भी छूटेगा नहीं, एक भी नहीं छूटेगा। भोले लोगों सावधान हो जाओ कोई अपवाद नहीं।

पंचम अध्याय

ईसाई मत संसार में किस प्रकार फैला ?

समस्त चालाकियों से पादरी महोदय नासमझ बच्चों अथवा ग्रामीण सादा लोगों को इस प्रकार फुसलाया करते हैं और किसी समय नगर के प्रतिष्ठित धनी वर्ग को जो इतिहास का नाम तक भी नहीं जानते यही विश्वास दिलाया करते हैं कि कृश्चन मत की सत्यता और उसकी कारवाई का यह खुला प्रमाण है कि वह सारे विश्व में फैलता जाता है, उसके राज्य में शान्ति है, वह शान्ति से बाईबल द्वारा प्रचार करते हैं। बल प्रयोग से नहीं। वह तलवार नहीं चलाते किन्तु बुद्धि पूर्वक समझाते हैं। प्रेस, रेल, इंजन, घड़ी, विद्युत तार, डाक्टरी, कालिज, स्कूल सब ईसाई मत की बरकतें हैं। और कई अपनी गोरी चमड़ी को भी गवाही में उपस्थित किया करते हैं।

निःस्सन्देह अनजान मनुष्य ऐसी बातें सुन कर फिसल जाता है। यदि ईसाई मत का वास्तव में यही दृश्य है। तो बेचारा गंवार क्या बुद्धिमानों को भी इस का साथ देना चाहिये। प्रश्न उत्पन्न होता है कि क्या ईसाई मत ऐसा नहीं है ?

(उत्तर) कदापि नहीं। और उस को हम विस्तार सहित एक पूर्ण अन्वेषण के साथ सिद्ध करना चाहते हैं।

स्पष्ट हो कि प्रथम तो ईसाई मत समस्त संसार में नहीं फैलता जाता और न फैल चुका है। इस समय भी इसाई मत से बुद्ध बहुत अधिक हैं। फ्रांस, जर्मन, इग्लैंड, नारवे, अमरीका और अफ्रीका के भिन्न भिन्न भागों में लोग ईसाईयत का परत्याग कर रहे हैं। बीसियो समाचार पत्र बाइबल के विरुद्ध प्रचलित हैं। आर्य समाज का पवित्र यत्न ईसाई वृक्ष को सफल नहीं होने देता। बुद्ध वाद वेदवाद, योरुप के प्रायः स्थानों पर फैल रहा है और मन्दिर बन रहे हैं।

भारत के अधिक स्थानों पर भी लोग ईसाई मत का परित्याग करते जाते हैं। मद्रास और पंजाब के वृत्तान्त साक्षी हैं। अभी एक दो वर्ष हुए कि योरुप के एक प्रसिद्ध पादरी सर एज़क टेलर महोदय ने ईसाईमत का दिन प्रतिदिन गिरते जाना अति उत्तमरूपेण वर्णित किया था जिस पर बहुत सी खलबली मची। किन्तु जितना ईसाईयों के पास उन्नति करने का सामान है उतना यदि आर्यों के पास हो तो वह ईसाईयों से सैंकड़ों गुना अधिक उन्नति कर सकते हैं। वह कार्यकर्ता और सामान न होने पर भी वैतनिक पादरियों और बिशपों के मुकाबला में बहुत कुछ कर रहे हैं। ईसाईमत के कारण से राज्य में शान्ति नहीं किन्तु महारानी क्वीन विकटोरिया के सुप्रबन्ध और पार्लियामेंट की उत्तम कोन्सल के कारण से शान्ति है। यदि ईसाईमत के कारण से शान्ति है—तो रूस में कुप्रबन्ध क्यों है ? क्या वह ईसाई नहीं ? अथवा वहां गिरजे और इन्जील नहीं ? पहिले योरुप के बादशाहों के कालों में कुप्रबन्ध क्यों था ?

यद्यपि उस समय इन्जीलें, सलीबें, गिरजे सब थे। किन्तु जितना एक सहस्र वर्ष तक योरुप में पोप का राज (अर्थात् चतुर्थ शती से सोलहवीं शती तक) रहा। इसमें इतनी खराबियां, अत्याचार, शरारतें, नहूसतें, बेईमानियां, तबाहियां, दुराचार स्वार्थादि थे कि जिनकी गणना सीमातीत है। जो समस्त ईसाई, राहिरों, बिशपों, पोपों के हाथों से योरुप के देशों में केवल ईसाईमत के कारण से प्रगट हुई। केवल इन खराबियों के अन्य कोई उन्नति न हुई।

(विस्तार देखो डरबेपर महोदय की कानफ़्लक बटक दीन असेजन इन साईंस अध्याय १० पृष्ठ २५५ से २८५ तक ८वीं बार लंडन १८८७ ईस्वी)

बाईबल की प्रीच (प्रचार) भी शान्ति से नहीं हुई और न अवसर प्राप्त होने पर ईसाईयों ने तलवार चलाने और बल प्रयोग करने से कुछ भी संकोच किया। किन्तु यथावसर शताब्दियों तक तलवार चलायी। स्वयं ईसाईयों में भी मज़हबी युद्धों ने चिरकाल तक रक्त को नदी बहाई।

रौमन कैथुलिकों का व्यवहार प्रोटैस्टेंटों से और उनका दूसरों से बहुत ही शिक्षाजनक था। एक दूसरे के रक्त पिपासु रहे। अतः प्रसन्नता उत्पन्न करना भी कोई ईसाईमत की विशेषता नहीं। प्रैस और रेल का आविष्कार भी ईसाईमत से नहीं। किन्तु भिन्न २ देशों के विद्वान् साईंसदानों और फलासफरों के पुरुषार्थ का परिणाम है। न कि पादरियों के साहस अथवा ईसाईयों को बरकत का। इन वस्तुओं के आविष्कारक प्रायः सच्चे ईश्वर भक्त और कुछ नास्तिक थे। अतः बाईबल से इसका कोई सम्बन्ध नहीं।

अब हम चाहते हैं कि ईसाईयों का ज्ञान, सदाचार, ज्ञान से प्रेम और ज्ञान संपन्न पुस्तकों तथा विद्वानों से व्यवहार और स्वयम् ईसाईयों का पारस्परिक वर्ताव इन सब बातों को योरोपियन विद्वानों और दार्शनिकों की खुली साक्षियों से निवेदन करें। जिससे हमारे न जानने वाले भाईयों को ज्ञात हो कि प्रत्यक्ष श्वेत रंगत के ईसाई क्षणिक टीपटाप में पौडर और साबुन से धुले हुए ईसाई आन्तरिक पवित्रता से कितनी मंजिलें दूर हैं।

"संगीनदिलस्त हरकि बजाहिर मुलायमस्त।"+(१)
पिनहांदरुं पुंबानिगर पुंबा दाना रा।×(२)

"वृक्ष अपने फल से पहचाना जाता है।" मती १५।२०

तीन सौ वर्ष मसीह की मृत्यु के पश्चात् कान्सनटन बादशाह इस नवीन मत का बड़ा रंकन था। वह नसिया की कौंसल में उपस्थित था। जहां से ईसाई तसलीस के तीन खुदाओं के पद नियत हुए। उसने कफसा के बंद करने के लिए कानून (विधान) स्वीकृत किये। और ईमान वालों के लाभार्थ काफिरों की जायदाद को जब्त किया। उसने धन के द्वारा सहस्रों को ईसाई मत की ओर आकर्षित किया। गिरजे की गोद में बहुत ऐश्वर्य डाला। और सरकारी कोष को उस पर व्यय किया तथा अपने

+(१) वह कठोर हृदय है जो कोई प्रत्यक्षतः (देखने में) कोमल है।

×(२) रोई के अन्दर तिरोहित बिनौले को कोमल मत समझ। (अनुवादक)

आदेश से बिशपों को रुपए दिए । संक्षेपतः जो कुछ एक बादशाह ईसाईमत के लिए कर सकता था। कांसटन्टन ने ईसाई मत के लिए किया । और जो ईसाई मत का परिणाम होना था । वह भी उस बादशाह में प्रगट हो गया अर्थात् यह कि वह अन्तिम काल तक बपतिस्मा से टाल मटोल करता रहा, जिससे वह स्वतन्त्रापूर्वक निर्भय होकर पाप कर सके । उसने अपने लड़के को मारा । अपनी पत्नी का वध किया । वह एक अत्याचारी बादशाह और फज़ूल खर्च था ।

प्रथम शती के ईसाईयों का चाल चलन

यदि पाल पीटर जैविड की नविशतें (लिखी बातें) प्रथम शती में लिखी गई हों तो उस समय भी ईसाईयों का सदाचार बहुत संदिग्ध था । (देखो फ्रन्तियोन ५।१)

द्वितीय शती

प्रसिद्ध इतिहासज्ञ कहता है कि 'जो व्यक्ति पुण्य पाप का विचार नहीं रखता तो वह आचार का बुरा मार्ग दर्शक है । यदि यह बात सत्य है तो यह पदवी पहिले ईसाई प्रचारकों को दी जा सकती है । क्रश्चन लोगों ने छल कपट से कृत्रिम पुस्तकें बनाई और दीन फैलाने के लिये बहुत से मज़हबी छल कपट किये ।''

तृतीय व चतुर्थ शती

तीसरी शती में वही इतिहासज्ञ मौशीम ईसाईयों के बिशपों की ऐश व मौज और पादरियों की इसी प्रकार बुराईयों का वर्णन करता है । और चतुर्थ शती के वर्णन में वही इतिहासज्ञ शोक से लिखता है कि दुराचार. ऐश और आवारा लोगों के जत्थों से ईसाई दीन कलंकित हो रहा है । पापियों और मौज करने वाले लोगों की अधिकता के कारण अच्छे मनुष्य बहुत ही थोड़े रह गए थे । इससे स्पष्ट प्रगट होता है कि ईसाई दीन मुख्य पद के पुण्य कार्य सर्वसाधारण में फैलाने में असफल रहा ।

पांचवीं शती

मार सिलेज़ का पादरी सेलवीअन पांचवीं शती के अपने सहधर्मियों की दुष्प्रवृत्तियों का वर्णन इन शब्दों में करता है । वह पूछता है कौन ऐसा व्यक्ति है जो दुराचार के दलदल में फंसा हुआ न हो ।

यदि इससे अधिक पूछना चाहने हो तो मैं आगे बताता हूं । जो कुछ मैं आगे बताना चाहता हूं । वह बहुत गम्भीर किन्तु दुःख से पूर्ण है ! स्वयं खुदा का गिरजा और उसमें यह बुराईयां ? शोक ! और किस प्रकार खुदा को क्रोध दिला सकते हैं । कुछ व्यक्तियों के अतिरिक्त जो बुराई से भागते हैं । प्रायः प्रत्येक ईसाई का समस्त बुराईयों का दुर्गन्धित छज्जा है । क्योंकि तुम कठिनता से ऐसे व्यक्ति को पाओगे जो शराबी, पेट पूजक, दुराचारी, अय्याश, चोर, मानव घातक न हो और सबसे बुरी बात यह है कि यह सब प्रकार के मनुष्य असंख्य हैं । मैं अब समस्त ईसाई लोगों से ईमान से पूछता हूं । कि क्या तुम एक भी व्यक्ति पा सकते हो जो इन सभी बुराईयों और पापों में जो मैंने बताए हैं फंसा हुआ

न हो। किन्तु कौन ऐसा है जो सब का दोषी न हो। सत्य तो यह है कि ऐसा ईसाई पाना अधिक सुगम है इसकी अपेक्षा ऐसा ईसाई जो किसी बुराई का दोषी न हो। प्रायः सभी पादरियों का समूह इस लज्जास्पद बुराई में ऐसा डूबा हुआ है कि समस्त ईसाईयों में उसको एक प्रकार से पवित्र गिनते हैं जो अन्यों से न्यून दुष्काम हो। (देखो मियाल्ज मिमाएर्ज आफ अरली क्रश्चानेटी पृष्ठ ३६६, ३६७)

जान डेवन्पोर्ट कहते हैं कि वास्तव में मसीहीदीन के अगुआ लोगों की दुष्कामता से ईसाईयों के हृदय भर गए थे। ऐसा कि ब्रूस महोदय अपनी पुस्तक ट्रावलस नामी जिल्द १ पृष्ठ ५०१ में लिखते हैं कि :—

ईसाईदीन के अग्रगण्य ऐसे झूठे, दुर्वक्ता और मक्कार थे जो झूठे चमत्कार दिखाते थे। इन सब बातों से बढ़कर यह था कि इन लोगों ने धार्मिक बातों में ऐसी सुस्ती और बेपरवाई बरती थी कि अरब में ईसाईयों का नाम बदनाम हो गया था।"

इसी पाँचवीं शती में एक दार्शनिक स्त्री हेपेटिया नामा थी। उसकी इस जुर्म में कि फिलासफरी फैलाती है। पादरी सरल के शिष्यों की सेना ने अपने खुदा के बाईबली आदेशानुसार (खूरूज २२।२०) जब कि वह अपने व्याख्यान के लिए रोम को जा रही थी रथ पर से घसीट कर सिकन्दरिया की शोभायमान गिरजा में ले गए। पहिले नगा किया। पुनः गिरा दिया। और उसके शरीर को सीप के टुकड़ों से काटा, फिर जला दिया। (देखो फरूट आफ क्रश्चेनेटी पृष्ठ ५ वाक्य ३)

शारलमेन ने सकसन के मध्य सेना भेज कर आग और तलवार के द्वारा इस जाति को ईसाई किया। जिनको पादरी और राहिब लोग केवल उपदेश से कृष्टान न कर सके क्योंकि उन्होंने अपने यत्न, जबर और धमकी के बिना किये। (देखो मौशेम की अकली जीकल हिस्ट्री अर्थात् दीनी इतिहास पृष्ठ १७)

पुनः लिखा है कि—

"शकन लोगों ने जब उन्नति की तो इनमें से कुछ ईसाई दीन से काफिर हो गए। जिनमें से अन्ततः एक गाड्स केलस राजब ४४९ ईस्वी में बिशप की कौन्सल में यहाँ तक कोड़ों से मारा गया कि उसने अपने लेख जला दिये (इसीलिए मारा गया था) (देखो पृष्ठ ५ फरूट आफ क्रशनेटी)

ईसाई दीन का वृक्ष जो फल पश्चिम में लाया। उससे पूर्व में भी फलदार हुआ। जैसा कि आरमीनिया में थियोडोरा बादशाह के आदेश से पालोशीअन काफिर के मजहब के एक लाख मनुष्य पकड़े गए। उनका धनादि छीन लिया गया। और स्वयं शिकंजों के दुःख में पीले गये।"

हिम महोदय अपने इतिहास 'मिडिल ऐज्ज' में लिखते हैं कि स्वयं ईसाई दस लाख करोसीड्ज़के जिहाद में मारे गए।"

दसवीं शती

इस शती में नारमन, पौलेंड, रूस, डनमार्क, नारवे इन सबने ईसाई दीन स्वीकार किया।

नारमन लोगों ने एक बहुत सा भूमि का टुकड़ा मांगा था, जिसके बदले में ईसाई दीन स्वीकार किया। और पोलेन्ड वालों ने इस कारण से कि काफिरों के विरुद्ध बड़े कठोर कानून बादशाह ने बनाए।

इस भय के मारे पुरातन धर्म छोड़कर नवीन ईसाई मत स्वीकार किया। नारवे और डैनमार्क वालों ने एक बहुत बड़ी पराजय के पश्चात् ईसाई मत स्वीकार करके जान बचाई अन्यथा तलवार के घाट उतारे जाते।

१०९९ ईस्वी में यरोशलम पर विजय हुई। इस पवित्र नगर में डीडीअम का भजन गाया गया और पुनः ईसा के सैनिक घन्टों पर से उटकर नगर के महलों, गलियों में गए और निर्दयता से पुरुषों, स्त्रियों और बच्चों का वध किया।

उसके पश्चात् दूसरी शती में बी. जाई रेसन नगर प्रान्त अलबी जंस ३३ पर विजय हुयी। "नदरलैंड में आलवा ने १८ सहस्र मनुष्य पाँच या छे वर्ष के राज्यकाल में वध किये।

बकल की हिस्ट्री में लिखा है कि एक वर्ष में आठ सहस्र मनुष्य जलाए गए और जब बपोगनाट लोगों पर आक्रमण हुआ तो उसमें चौदह सौ मनुष्यों का वध हुआ। बादशाह अपने भवन की खिड़की से भागते हुए लोगों पर गोलियां मारता था। गिरजाघर में सर्वसाधारण के वध का घंटा बजा और क़ातिलों का चिह्न सलीब का तमग़ा (पदक) था। यह पदक तेरहवें पोप गरगरी ने उसी जिहाद की स्मृति में बनवाया था।

२४ अगस्त १५७२ ईस्वी में सेंट भारथालमी का वध भी इसी जुर्म में हुआ।

१६८५ ईस्वी में प्रोटेंस्टैन्ट लोगों पर रौमन कैथुलिकों ने आक्रमण किया। जिसमें ऐसी कोई बुराई न रही जो दीन के स्वीकार कराने में उन्होंने न की हो। उन्होंने अपने विरोधियों को बांधा, शिकंजा में रखा, और इसी अवस्था में टूटी (नल) से उनके गले में इतनी शराब डाली गयी कि उसके ज्वर से उनकी बुद्धि मारी गयी और उन्होंने उसी अवस्था में रोमन कैथुलिक होना स्वीकार किया। कुछ को सर्वथा नग्न कर दिया गया और सहस्त्रों प्रकार का अपमान करके उनके आशिरःपाद सूईयां चारों ओर ठोक दीं, चाकू से उनको धीरे २ काटा, गरम चिमटों से उनको नासिकाओं को खींचा, उन को कमरों के अन्दर घसीटते थे, यहां तक कि रोमन कैथुलिक मत स्वीकार किया। अथवा कुछ को भयावह चीखें मारने और खुदा के नाम को शपथ लेने पर छोड़ दिया और कुछ के हाथों तथा पांव के नाखुन बलपूर्वक निकलवा दिये जिससे निःस्सन्देह बड़ा कष्ट हुआ, कुछ के पांव जलवा दिये। कुछ के शरीरों को धोंकनियों से इतना धोंका कि वह फट जाने के समान हो गए। यदि इस प्रकार पर भो वह दीन छोड़ने पर उद्यत न हुए तो उनको तंग और दुर्गन्धित जेलखानों (बन्दीगृहों) में बन्द किया गया। जहां उन पर बहुत निर्दयता की जाती थी। और कुछ स्थानों पर उन्होंने पिताओं और पतियों को चारपायी पर बांधा और ऊनकी आँखों के सामनें उनकी लड़कियों और पत्नियों के साथ हराम (दुराचार) किया। (देखो निकल की हिस्ट्री)

स्त्रियों पर विशेषरूप अत्याचार किये गये। वह ऐसे गन्दे अत्याचार हैं जिन का गन्दा पन कोई गन्दा मग़ज़ (दिमाग़—बुद्धि) भी विचार नहीं कर सकता। किन्तु यह सब केवल इसी लिये किया कि रौमन कैथुलिक हो जाएं।"

अब दार्शनिक असक्युलीनस कुछ आविष्कार संबंधी परीक्षणों के कारण १३३७ ईस्वी में जलाया गया।

जान हंस १४४५ ई० में जलाया गया। जैरोम प्रसिद्ध इतिहासज्ञ १४१६ ई० में जलाया गया। सहवान और तूर इलाराहिब कुछ बुराईयों के दूर करने के कारण १४६८ ईस्वी में जलाए गए।

जी. आर. बरोनो ज्योतिर्वित रोम में १६०० ईस्वी में जलाए गए।

वे. के. नीनो की जिह्वा निकलवा ली गई। और टोलोस में १६१६ में जलाए गये।

पादरी कलवोन की व्यवस्था देने से सर वीटस तसलीस (त्रिनेटी) के सिद्धान्त के विरुद्ध होने के कारण और करूआट समस्त क्रुश्चैनिटी के विरूद्ध होने के कारण स्विटजरलैंड में जलाए गये।

जब प्रोटैस्टैन्ट लोग सप्तम ऐडवर्ड के समय बलशाली हुए तब आर. जो. बिशप करेन को आदेश हुआ कि प्राटैस्टेंट के विरुद्ध लोगों की खोज करो। जिस खोज क कारण जान पोजर और वेन पेरस इंगलैंड में जीवित जला दिये गये।+

सम्राज्ञी एलज़बिथ के समय में प्रोटैस्टैंट लोग विजयी हुए। तो उन्हीं ने १५६२ ईस्वी में प्रोटैस्टैंट बनाने के लिये शिकंजा, फांसी, चमड़ा उतारना, खंड २ करना, इस प्रकार के अत्याचार कार्य में ला कर इंगलैंड वालों को प्रोटैस्टैन्ट बनाया।

शिकंजा में लाने की यह दया पूर्ण नर्म पद्धति थी। जिस के द्वारा इन दयालु प्रोटैस्टैन्ट ईसाईयों ने रौमन कैथुलिकों को प्रोटैस्टेन्ट बनाया, अर्थात् बलूत की लड़की का एक बड़ा चौखटा बनाते और उसे तीन फुट भूमि से ऊंचा लगाते थे। कैदी इस के नीचे रखा जाता था। अर्थात् पेट के बल भूमि पर लिटाया जाता था। उस की मुटाई और टखने रस्सी से बांध कर वह रस्सियां बेलनों से अर्थात् चौखटे में अन्त के दो बेलनों से बांधी जाती थीं। इन बेलनों की दो ढीकली अर्थात् नालियों अथवा चरखियों से चलाते थे। जिससे वह कैदी नीचे से उठना शुरू होता था। तब इससे प्रश्न होते थे। यदि उत्तर अनुकूल न होते तो दोषी को और अधिक खेंचते थे। यहां तक कि पीड़ित की हड्डियां जोड़ों से पृथक् हो जातीं थी। इस प्रकार की नर्म और कोमल पद्धति से प्रोटैस्टेन्ट लोगों ने रौमन कैथलिकों को अपने मत में मिलाया। और यही इङ्गलैंड वाली अवस्था स्काटलैंड और आयरलैंड में गयी।"

(विस्तार देखो बकल हि० जिल्द ३ पृष्ठ १४४ से १४६)

और ऐसी हो अत्याचार अमरीका में प्रोटैस्टेन्ट लोगों ने कवेकर लोगों पर किये।" क्रुश्चैनेटी केवल निर्दयता ही नहीं किन्तु प्रकाश के सम्मुख अधंकार पसंद करती है क्योंकि उसके राज्य की शर्त अविद्या है। उसने ज्ञान के विरुद्ध जिहाद किये। और बहुत शताब्दियों तक मनुष्यों को उन्नति करने से बंद रखा।"

+जान डेवन्पोर्ट लिखते हैं कि १४२५ ईस्वी में जानगलीडन और चार्ड ट्रम्सन असमेतह फील्ड में कुफ्र के दोष में जला दिये गये। और १४१४ ईस्वी में ऐलसगोबह्य, गलास्टर राजर बालंग बरंग और कनैस, सोथोल मारजरी जौरौंन और जानह्य बजरम सहर मतहम मोजर्सन बालंग बरोग ने ······देश से निकाल दिये गये।

(हिस्ट्री आफ बिकल पृ० १४०)

पादरी लोग शुरू से ऐसे मूर्ख रहे कि सातवीं शती तक भी बहुत न्यून पादरी थे। जो लोगों के पढ़ने योग्य पुस्तकें लिख सकें। दसवीं शती के आरंभ में विद्या आने लगी और ज्योतिष को तो इतना उसनें गारत किया कि पंद्रह सौ वर्ष तक ईसाई मत में कोई नजूमी नहीं हुआ। और जब कापर नपे कस पुस्तक छोड़ मरा, तो ईसाई पादरियों ने उस का पीछा किया और पकड़ २ कर मारे तथा पुस्तक को जलवा दिया।" (देखो फ़ूट्स आफ़ क्रश्चैनेटी लिखित मैडिम ऐनी बीसंट महोदया लंडन संस्करण)

भारत में ईसाई हथकंडे

रैवरेंड ऐच बावर महोदय फरमाते हैं कि १५६६ ईस्वी में जो सभा मलयालम में बैठी थी और जिस का प्रैसीडेंट आर्कविशिप मेंजक था। उस में निम्नलिखित व्यवस्था दी गई: "सैशन ६ व्यवस्था २ नीच जाति के लोगों के साथ ईसाईयों को उस समय तक न छूना चाहिये। जब तक वह उच्च जाति वाले हिन्दुओं के साथ हूं। किन्तु जब वहां ईसाईयों के अतिरिक्त कोई न हो तो कुछ दोष नहीं।"

(देखो पादरी महोदय का लेख "हिन्दुओं की जात" पृष्ठ ५३ क्रश्चन ट्रैक्ट आन बुक सोसाएटी बपटैस्ट मिशन प्रैस कलकत्ता १८५१ ईस्वी)

राबर्ट दी नौबलीस महोदय १६०६ ईस्वी में भारत में आया। यह अवस्था उस के समय में थी। जो उस ने अपनी आंख से देखी कि पादरियों ने आरम्भ में यह बात प्रसिद्ध की थी कि हम योरुप के ब्राह्मण हैं और जम्बू द्वीप के पश्चिमी भाग में पांच सहस्र फरसंग की दूरी से आए हैं कि अपने भाई भारतीय ब्राह्मणों से विद्या सीखें और अपनी विद्या उन को सिखलावें। जब उन पादरियों ने अपने आपको ब्राह्मण प्रसिद्ध कर दिया। तब उन्होंने इस जाति का अनुकरण भी आरम्भ किया। वह पीताँबर धोती पहनने लगे जैसा कि भारत के मजहवी पेशवा और फकीर पहनते हैं। और जल देनें लगे जब वह सामान्य जनता के सम्मुख जाते थे माथे पर चंदन लगाते थे। जैसा कि ब्राह्मण लगाते हैं।"

(देखो ए० बी० डियूवाईस पृष्ठ ५, ६) और (पादरी बावर महोदय की पुस्तक पृष्ठ ५४)

केवल यहां तक ही धैर्य न किया "किन्तु इस कार्य के लिये (अर्थात् ब्राह्मणों को अपने में सम्मिलित करने के हेतु) उन्हीं की इन्जील की सत्यताओं और निर्धन विश्वास रखने वालों की स्वतंत्रता को गड़बड़ करते समय भी कुछ न सोचा अपनें आपको उच्च कोटि के ब्राह्मण प्रसिद्ध कर के जो पश्चिमी संसार से आये हैं उन पादरियों ने हिन्दुओं के वास्तविक नाम भी अंगीकार कर लिये और इस जाति की रीति रिवाज को प्रत्येक प्रकार से समर्थन किया। ब्राह्मणों की बहुत जातियां हैं। और इस कपट को अधिक प्रभावशाली बनाने के कारण से नोबलिस महोदय ने अपने आपको सब से उच्च पद का बना कर जतलाया। और अपने विरोधियों की जबान बन्द करने के लिये और विशेषत: उन व्यक्तियों को जो इस के ब्राह्मण होने के कपट को जानते थे, उस ने एक पुराना मैला पार्चमेंट अर्थात् चमड़े का कागज पेश किया। जिसमें पुराने भारतीय शब्दों (अर्थात् संस्कृत) में एक कागज नकली दस्तावेज (भाव जन्म पत्री) का बनाया। इस बात के प्रगट करने के लिए कि रूमा के ब्राह्मण भारत के ब्राह्मणों से अधिक प्राचीन काल के हैं और यह कि रोमा के जसवट्स जाति के पादरी विशेष ब्रह्मा देवता के वंश से हैं। पादरी जोवन्सी एक विद्वान् (जसवट) इस जाति के इतिहास में इस से अधिक बताता है

जब कि इस पहिली दस्तावेज की सत्यता के संबंध में कुछ विश्वास न करने वाले भारतीय हिन्दुओं ने संदेह किया तो नीबीलीलबस ने मदोरा के ब्राह्मणों की पंचायत के सम्मुख शपथ पूर्वक वक्तव्य दिया। कि मैं ब्रह्मा देवता के वंश से हूं। क्या यह आश्चर्य जनक बात नहीं है कि एक प्रतिष्ठित पादरी ने झूठ बोला और क्या यह एक कुफ्र अथवा छल कपट नहीं है? कि उसने इस झूठी शपथखाने और कपट को पवित्र बुद्धिमत्ता वर्णित किया।"

(देखो जसवटस इतिहास जान सी एशियाटिक रीसर कृत जिल्द १४ पृष्ठ ५७) और (रैवरेंड बावर की पुस्तक पृष्ठ ५४, ५५)

पादरी रावर्ठ दी नोबलीबस महोदय ने अपना नाम तत्व बोधज्ञ स्वामी रखा और पादरी आर० सी० जी० बसचो महोदय ने अपना नाम वीरं मुनि रखा। हिन्दु लोग उनको और उनके भाईयों को सदैव उनके हिन्दु नामों ले जानते थे।" (रैवरेंड बावर महोदय की पुस्तक पृष्ठ ५४ की टिप्पणी)

"निर्धन परिवारों के लिये केवल केटीकसट ही पृथक् न थे किन्तु इन के लिये गिरजे भी पृथक् थें। यदि वह कभी उच्च जाति के गिरजे में जाना चाहते थे तो वहां से बाहिर निकाल दिये जाते और उन को कोड़ों से पीटते थे। किन्तु जब वह मर जाते थे, तो ईसाई संन्यासी उन के घर में प्रविष्ट होने से इनकार करते थे। और मरने वाला भाग्यहीन मनुष्य मरण समय में बिस्तरे से घसीट कर लाया जाता था। अथवा किसी दूर के गिरजा में ले जाया जाता था जिस से वह संन्यासी जो उस के घर में प्रविष्ट नहीं हो सकता था। अन्तिम धार्मिक रसम पूर्ण करे। किन्तु तब भी वह उस को छू नहीं सकता था।" (देखो कलकत्ता रेव्यो अंक ३ पृष्ठ ६५) और (रैवरेंड बाहर की पुस्तक पृ० ५७)

एक दिन एक सैनिक अधिकारी ने (जो ट्रंको बार से तरचनापली की यात्रा कर रहा था) एक फ्रांसीसी पादरी को जो इस के बंगला में आया। अपने साथ खाना खाने के लिये कर्तव्य दृष्टि हो बुलाया। उस पादरी को जब यह ज्ञात हुआ भोजन एक परयार ने पकाया है, उस के खाने से अस्वीकार कर दिया, उस ने केवल मेवे खाए और यह बहाना किया कि इस का भोजन खाने के कारण शूद्र लोग ईसाई धर्म से घृणा करेंगे"। (देखो रैवरेंड बावर महोदय की पुस्तक पृ० ५८)

(भारत में और शिक्षा टैवलेन कृत पृ० २०)

ईसाई का बौद्धिक पुस्तकों से व्यवहार

ड्रेपर महोदय फ़रमाते हैं :—

ईसाई जिहादियों ने ट्रिवोली के पुस्तकालय को जिसमें अनुमान करते हैं कि ३० लाख पुस्तकें थीं – जलाया। जिस समय वह प्रथम कमरा में गये, उसमें केवल कुरान और वह पुस्तकें थीं जो अरबी इसपास्टर की समझी जाती थीं, अतः वह जला दी गईं।

स्पेन वाले सैनिकों ने मैक्सिकों में अमरीका के नक़शों के बंडलों के बड़े २ अंबार जला दिये, जो ऐसी हानि है कि पूरी नहीं हो सकती, कार्डनल ज़तेर ने ग्रेंडा के चौकों में अरबी लेखों की ८० सहस्र पुस्तकें जिनमें उत्तम लेखकों के बहुत से अनुवाद थे जला दिये। (देखो हिस्ट्री आफ दी कान्फलक बरोईन साईंस ऐंड़ रिलीजन पृ० १०३, १०४ लंडन १८८७ ईस्वी २०वीं बार)

ऐडवर्ड गिबन महोदय फरमाते हैं :—

"मैं उन अधिकतर बहुमूल्य पुस्तकालयों पर शोक करता हूं। जो (ईसाईयों के) रौमन साम्राज्य में नष्ट हो गये।" (देखो जिल्द ३ अध्याय ५१ पृष्ठ ५६९ अवनति का इतिहास द्वितीय)

पायानीयर समाचार पत्र का योग्य विद्वान् संपादक लिखता है :—

"क्रोसीडर्ज़ ईसाईमत के जिहादियों ने तराबलस का पुस्तकालय जिसमें तीन मिलियन अर्थात् तीस लाख पुस्तकें थीं—जला दिया। स्पेन के लोगों ने मैक्सिकों में अमरीका वालों के नक़शों के लेखों के अंबारों के अंबार जला दिये। कार्डीनल्ज़मोरले ग्रैंड अयाग़रनाता में ८० सहस्र अरबी भाषा को हस्त-लिखित पुस्तकें जला दीं। (देखो पायोनियर अखबार इलाहाबाद ८ अक्टूबर १८७५ ईस्वी)

पुन: एक ऐतिहासिक फरमाता है जब वकलफ के अनुवाद जलाने को आज्ञा हुई। तो १४०१ ईस्वी में एक पुस्तक टीलर ने लिखी और १४२८ ईस्वी में कौंसल बैठी जिसको आज्ञा से वकलफ की हड्डियां क़ब्र से निकाल कर जलायी गईं।

१५२५ ईस्वी में कार्डनल वलसी और बिशप लोगों ने आदेश दिया कि टन्डेल का अनुवाद न पढ़ाया जाए और इस विषय के इश्तहार अपने इलाकों में जारी किये कि लूथर के कुछ मानने वालों ने अनुवाद अशुद्ध किया है, और खुदा की वाणी को मिथ्या अनुवादों और कल्पित टिप्पणियों से खराब किया है। अत: वह अनुवाद जिस २ के पास हूं। तीस दिन के समय में जनरल वाटेकर के पास उप-स्थित करे। अन्यथा कलीसा से निकाला जाएगा और धर्म को बिगाड़ने वाला कहलाएगा। इसी वर्ष रासल बिशप लंडन और टामसमोर ने समस्त जिल्दें खरीद करके पालोक्रास में जला दीं। पुन: १५२९ ईस्वी में यह जिल्दे छपसार में प्रगटत: जला दी गयीं।

जब ५३० ईस्वी मैं टन्डेल ने इस पर दोबारा दृष्टिपात करके छपवाया अजरहान आदि के द्वारा इसके प्रकाशार्थ लंडन के बिशप ने प्रकाशन करने वालों की प्रसिद्धि की और एक लाख अठासी सहस्र चार सौ रुपये छे आने आठ पायी जुर्माना किया।

पुन: १५४६ ईस्वी में अष्टम हैनरी बादशाह इंगलिस्तान का आदेश प्रसारित हुआ कि टंडेल और कोरडेल के अनुवाद तथा वह पुस्तकें जिनकी पार्लियामैंट ने आज्ञा नहीं दी और भी फ्रख्त और कलफ की पुस्तकें न पढ़ी जावें। किन्तु देश के कलीसा के अधिकारियों को दी जावें कि वह जला दें।

पुन: १५५४ ईस्वी में इशतहार जारी हुआ कि नवीनता लाने वाली पुस्तकें कहीं न भेजी जावें और न कोई अपने पास रखे।" (देखो पुस्तक वालटन १७७१ ईस्वी जिल्द ३)

श्री जान डेवन पोर्ट महोदय फरमाते हैं :—

कि नायीसा की कौंसल में यह बात घटित हुई थी कुसतुन्तुन्या के प्रथम बादशाह ने पादरियों की सोसाइटी को वह अधिकार दिया था कि जिससे बहुत भयावह परिणाम उत्पन्न होकर हानिकारक हुए थे। जैसा कि उनसे कुछ खराबियां निम्न हुईं :—

रक्तपात और बरबादी उन मूर्खतापूर्ण नए सलीबी जिहादों की जो इसाईयों ने लगभग दो सौ वर्ष के समय तक तुर्कों पर किए थे। और जिनमें कई लाख मनुष्य मारे गए थे। उन मनुष्यों का

अर्थात् (फरकरानासटम्पट) का जो उस समय मन्तव्य को नहीं मानते थे कि मनुष्य का दोबारा सुधार होना चाहिये—वध करना। लूथर के अनुगामियों और रोमन कैथुलिक मतवादियों का रावन नदी से लेकर अन्तिम उत्तर तक वध होना। वह कत्ल जिसका आदेश हनरी अष्टम और उसकी बेटी महारानी मेरी ने दिया था। फ्रांस में सैंट बारथोलोमियो की हत्या होना, चालीस वर्ष तक अन्य बहुत सी हत्याओं का होना। फ्रांस प्रथम के काल से हैनरी चतुर्थ के पैरस में प्रविष्ट होने तक इस सर्व साधारण की हत्याओं में पांच सौ धनिकों से अधिक और दस सहस्र मनुष्य सर्वसाधारण में से केवल पैरिस की राजधानी में मार डाले गए। मजहबी अदालत की आज्ञा से वध होना घृणा योग्य है क्योंकि वह अदालत पादरियों की सम्मति से बनी थीं।

इसके अतिरिक्त और असंख्य नवीनताओं तथा उन बीस वर्षों की खराबियों का तो वर्णन ही नहीं है जबकि पोप, पोप के संघर्ष और विशप, विशप के संघर्ष में था। विषपान और हत्या की घटनाओं का होना, तथा तेरह चौदह पोपों की निर्दयतापूर्ण लूट और अहंमन्यता की बातें, प्रत्येक प्रकार के पाप, दोष और बदकारी में जो एक नीरो या एक गेले गोला से बहुत अग्रसरता ले गए थे। अन्ततः इस भयावह सूची की समाप्ति होने के लिये एक करोड़ बीस लाख नए संसार (अमेरीका) के निवासियों का सलीब हाथ में लिये कत्ल होना। निश्चय से यह बात माननी चाहिए कि एक ऐसा गन्दा और मज़हबी लड़ाइयों का एक न टूटने वाला प्रवाह चौदह वर्ष तक ईसाईयों के अतिरिक्त अन्य कहीं कदापि जारी नहीं रहा। और जिन जातियों के संबंध में मूर्तिपूजक होने का लांछन लगाया जाता है, उनमें से किसी जाति ने एक रक्त बिन्दु भी धार्मिक युक्तियों के आधार पर नहीं बहाया (एअ़जाजे तन्ज़ील पृष्ठ ४६०, ४६१) और उनकी (पुस्तक अपालोजी लखनऊ पृ. १६८-१६६)

इनसाक्लोपेडिया ब्रटेनिया में ईसाइयों की एक प्रसिद्ध मजहबी अदालत का वृतान्त इस प्रकार लिखा है :—

"इस मज़हबी अदालत का नाम इनकुज़ीशन था और इसका यह कार्य था कि जो लोग ईसाई मज़हब के संबंध में विरोध भाव रखकर नास्तिकता के विचार रखते हूं या उससे सर्वथा इन्कारी हो गए हूं उनको ढूंड करके पकड़े और दंड दे। यह भयावह विभाग जो इस कारण से स्थापित किया गया था कि धार्मिक बातों के विषय में स्वतंत्रतापूर्वक खोज न होने पावे और मज़हब सर्वथा एक सा रहे। सर्वतः प्रथम तेरहवीं शती में स्थापित हुआ था जब कि पोप इनसोसेन्ट तृतीय ने एक कमीशन इस कारण से दो राहिबों का जो कलीसा से संबन्धित थे नियत किया था कि वह एलोजिऐंस लोगों की कुफ़ और नास्तिकता के विरुद्ध प्रचार करें। क्योंकि उनको अपने कार्य में विशेषतः टोलीस प्रान्त में बहुत सफलता प्राप्त हुई। अतः पोप को यह साहस हुआ कि वह कैथुलिक चर्च में इनकुजोशन अधिकारी नियत करे। जिनको बिशप लोगों से कुछ संबंध न हो और जो पाप के इस पवित्र विभाग के वकीलों के रूप में कार्य करें और उनको काफ़िरों के दंड देनेका अधिकार प्राप्त हो। पोप ने अपना यह प्रयोजन पूरा करने के कारण से फ्रांस के बादशाह फ़लीप द्वितीय तथा धनी सेठों को भी इस कार्य में सहायता देने के लिये लिखा और उनके यत्न और पुरुषार्थ के बदले में पारितोषिक रूपेण इनको प्रत्येक प्रकार की विषय वासनाओं की पूर्ति की आज्ञा दी। फ्रांस देशमें धार्मिक दंड विभाग १२६८ईस्वी से अलबजन्स और उसके रक्षक रेमंडषष्ठ कौन्ट आफ़ टोलुस के विरुद्ध आरम्भ हुआ। और प्रत्येक प्रकार का विरोध शीघ्र दबाया जाकर चर्च को अतिशीघ्र ऐसी शक्ति प्राप्त होगई कि वह अपने विरोधियों से जो उसके वश में आजाएं,

जिस प्रकार चाहे व्यवहार करे। जैसा कि ऐसे भाग्यहीन अलबजन्सों की संख्या नियत करना जो १२०० ईस्वी के पश्चात् अग्नि में जला जलाकर मारे गए कुछ सरल कार्य नहीं है। और संभव नहीं कि जो व्यक्ति उस काल के इतिहास को पढ़ें। उसके मनमें बहुत कठोर प्रकार की घबराहट और दया की भावना उत्पन्न न हो क्योंकि वृतान्तों से यह प्रतीत होता है कि किस प्रकार से सहस्रों मनुष्य भिन्न-२ प्रकार को बहुत निर्दयतापूर्ण यातनाओं के साथ एक ऐसे मत की विजय प्राप्ति के लिये मार डाले गये कि जिसमें उसके संस्थापक ने उदारता दयार्द्रता की प्रेरणा की थी। १२१५ ईस्वी में पोप अनुसैन्ट तृतीय ने दशवीं बार एक कौंसल स्थापित करके भिन्न-२ प्रकार के नवीन-२ दण्ड विधान काफ़िरों के लिये निर्मित किये ज़िनका विवरण बहुत लम्बा है। पोप अनुसैन्ट के पश्चात होनोरेस तृतीय ने जो इसका स्थानापन्न था इस पद्धति को जारी रखा। और धीरे-२ प्रचारकों और दण्डदाताओं की एक ऐसी संस्था स्थापित हो गई जिसका नाम धार्मिक पवित्रान्वेषक न्यायालय की सहायक संस्था रखा गया।

१२२४ ईस्वी में इन्कुजीशन (उक्तसंस्था) इटली में भो संस्थापित कर दी गई। जब इन समस्त अत्याचारों के होने पर भी एलजियन्स लोगों ने अपने मन्तव्यों को न छोड़ा किन्तु उनको विशेष नगर रोम में भी फ़ैला दिया। तो पोप ने क्रोधित होकर पूर्व से भी अधिक कठोर २ दंड दिये जाने का आदेश दिया। उदाहरणत: जीवित जला दिया जाना अथवा बिशप लोग काफ़िरों पर दयाकी सम्मति देना चाहें तो केवल जिह्वा छेद करा देना जिससे वह आगामो में खुदा के लिये कोई कुफ्र का शब्द न कह सकें।

फ्रांस और इटली के पश्चात् इनकुजीशन एशियन में स्थापित हुआ और इस मुख्य भूमि में यह पौदा बहुत फूला फला। बादशाह फ़ोनीन्डा तथा महाराणी असाबपला के काल में तो इनक्वी-जीशन अति प्रचलित हो गया। बड़ी शक्ति के साथ चिरकाल तक जारी रह कर अन्तत: १८०८ ईस्वी में समाप्त हुआ। इस देश में ग्रान्ड इनक्वीजीटर जनरल का एक पद और उस के पश्चात् एक कौन्सल आफ सुप्रीम स्थापित की गई जिसकी शाखाएं स्पेन के समस्त मंडलों में फैली हुई थीं। जिनका कार्य दंड विधान का निर्माण करना और इस विभाग की स्थिरता तथा उसकी कारवाई को समानता से प्रचलित रहने की देख रेख करना था। यहां तक कि धीरे २ दु:ख और कष्ट देने का यह विभाग एक ऐसी कला बन गया कि जिसका उदाहरण संसार के इतिहास में उससे पूर्व कहीं दृष्टिगत नहीं होता। दंड विधान संबंधी आदेशों का एक ग्रन्थ सेवेल में छापा जाकर प्रसिद्ध हुआ। जिसको २८ धाराएं थीं ज़िनका विवरण अति विस्तारयुक्त है जैसे छठी धारा में यह उल्लेख था कि जो व्यक्ति अपने पाप से तोबा (प्रायश्चित) करे और क्षमा कर दिया जाए। पुनरपि उसको उस दंड के अवशेष के रू। में जो उसके लिये नियत किया गया था इतना दंड अवश्य दिया जाए कि वह किसो प्रकार के प्रतिष्ठित पेशा स्वीकार करने और सोना, चांदी, रेशम तथा मलमल के प्रयोग से वंचित रखा जाए।

पुन: बीसवीं धारा में लिखा था कि यदि किसी व्यक्ति के मरणोपरान्त उसकी पुस्तकों अथवा जीवन पद्धति से यह सिद्ध हुआ कि वह काफिर था तो उसके विरुद्ध कुफ्र और नवीनता लाने सम्बन्धी दोषी होने की व्यवस्था दी जा कर उस की लाश कबर में फैंक दी जाए। और उसकी सम्पूर्ण धन, संपत्ति जब्त की जाकर उसके उत्तराधिकारियों को कुछ न दिया जाए।

पुन: २२ वीं धारा में यह आज्ञा थी कि जो व्यक्ति कुफ्र की व्यवस्था प्राप्त करके दंडित हुआ

हो और उसको सन्तान अल्पायु हो तो उस के जब्त हुए माल का एक थोड़ा सा भाग दान के रूप में इन को दिया जाए। और वह ईस्वी मजहबी शिक्षा के लिये किसी उपयुक्त व्यक्ति को सौंपा जाए।

जो दोष पवित्र इनक्वीजीशन विभाग के समीप दंडनीय थे। वह यह हैं :—

(१) प्रत्येक प्रकार का ईसाई मत में कुफ्र (इसाइ मत से इन्कार) तथा इलहाद (मजहब में नवीन बातें प्रचलित करना)

(२) यहूदियत, (३) इसलाम

(४) अप्राकृति कर्म के दोष और पत्नियों की संख्या संबंधी।

संक्षेपत: पवित्र न्यायालय ऐसे दबदबा वाले और भवायह बनाए कि माता पिता अपनी सन्तान और पति अपनी पत्नियों तथा स्वामी अपने सेवकों को जुबान हिलाए बिना चुप-चाप उस के सुपुर्द कर देते थे। उस का बल अधिकतर भय ही था। जो उस ने लोगों के मनों में उत्पन्न कर दिया था और मनुष्य समाज के हृदय में उस का भय इतना प्रभाव कर गया था कि सेठों और बादशाहों तक उस के नाम से कांपते थे। जितने मनुष्यों को हत्याएं इस मतान्ध निर्दयी मजहबी अदालत ने कराई उनकी यथार्थ संख्या वर्णित करनी सरल नहीं है। जैसा कि केवल स्पेन ही में सीरुलअरनेटी के कथनानुसार तीन लाख चालीस सहस्र मनुष्य इस विभाग से दंडनीय घोषित होकर किसी न किसी प्रकार कष्टों से बरबाद किये गए। जिन में से लगभग ३२ सहस्र मनुष्य तो जीवित अग्नि में जला कर मारे गए। और यदि इस संख्या में वह समस्त भाग्यहीन मनुष्य सम्मिलित कर दिये जाएं जो मैक्सिको, लीमा, कार्थीजीना, सिसली, सारडीना, ओरन, मालटा, नीलप्स, मेलान और फैंलडर्स की मजहबी अदालतों से जबकि इन देशों में स्पेन का राज्य था दण्डनीय हुए थे तो संभवत: यह सिद्ध होगा कि आधे मिलियन से अधिक भाग्यहीन मनुष्य इस पत्थर हृदय पवित्र विभाग से भिन्न प्रकार के दंड प्राप्त कर के संसार से गए।" (देखो इनसाइकलोपीडिया जिल्द १२) (एजाज़त्न्जील पृ० ४७० से ४७५ तक)

यह विवरण तो रौमन कैथुलिक मत के ईसाईयों के जबर और अत्याचार का था। अब प्रोटैस्टैंट सम्प्रदाय का वृत्तान्त जब कि उन्होंने प्रसिद्धि प्राप्त की सुनिये।

इतिहासकार हालम महोदय फरमाते हैं कि इस सभ्य सम्प्रदाय (प्रोटैस्टेन्ट मत) के भिन्न २ विभागों और फिरकों से सब से बड़ा पाप जो प्रतिफलित हुआ है। वह यह है कि ईश्वरीय प्रजा पर दीन में बल प्रयोग करते हैं। यह पाप ऐसा है कि प्रत्येक ईमानदार सभ्य जितना अधिक पुस्तकों की सैर करता जाता है। उतना ही उस को उन से घृणा और द्वेष होता जाता है।
(देखो इतिहास इंगलिस्तान राज्य विधान जिल्द १ अ० २) और (एजाज़े तन्जील पृष्ठ ४७५)

इतिहासकार लेकी महोदय फरमाते हैं कि जब कालून ने सरवेस को केवल इस कारण से जीवित जला दिया कि उस के मन्तव्य तसलीस के संबंध में तत्कालीन विद्वानों के विरुद्ध थे तो सम्पूर्ण प्रोटैस्टेन्ट सम्प्रदायों ने कालबिन के इस कार्य की बड़ी प्रशंसा की और मला कटन, बनरुजर और फ़ारिल ने इस पाप की प्रशंसा में कवित लिखे और बीजानी ने जो बड़ा विद्वान् था इस कर्म की प्रशंसा में एक बड़ी पुस्तक की रचना की।" (तारीखे मजहबे मअकूल पसंद जिल्द २ पृ० ४६)

पुन: जान डेवनपोर्ट महोदय फरमाते हैं कि "इस काल में ईसाई मत से अधिक कोई वस्तु सर्वथा खराब न थी। वह ईसाईमत की दोनों शाखाएं जो एशिया और अफ्रीका के देशों में फैल गयी थीं।

उन्होंने भिन्न २ प्रकार की नवीनतायें और बुरे विश्वास स्वीकार कर लिये थे। सदैव परस्पर वादविवाद तथा दोषारोपण में संलग्न रहती थीं। एरियन, नस्टोरियन, सोबलियन, पोटियोचियन मत वालों के झगड़ों से बहुत बाधित थीं। उनके पादरियों के स्वभाव—विषय वासना, पदलोलुपता और अविद्या ने ईसाईमत को बड़ा धब्बा लगाया था। और सब ईसाई लोगों को बहुत कुप्रवृत्तियों का बना दिया था।

अरब के जंगलों में मूर्ख और दुर्बुद्धि राहिब (पुजारी) बहुत थे। जो व्यर्थ विचारों की उधेड़ बुन में मग़ज पच्ची करके अपना समय ख़राब किया करते थे, प्रायः इनके जत्थे के जत्थे नगरों में आकर नगर निवासियों को अपने भ्रमजाल—तलवार के बल पर सिखाया और मनवाया करते थे। (देखो उन की पुस्तक—फार मुहम्मद अपालोजी एण्ड दी कुरान लंडन प्रकाशन ८२ ईस्वी पृष्ठ ३ और इसका उर्दू अनुवाद पृष्ठ ७)

पुनः वही महोदय फरमाते हैं कि :—

"उन्होंने अपने विचार में एक नया पुरातन ओलैम्पस कर लिया था। और उसमें अपने मत के वलियों, शहीदों और फरिश्तों को बसा हुआ समझते थे। जैसा कि मूर्ति पूजक अपने देवताओं से ओलैम्पस को बसा हुआ समझते थे। इस काल में ऐसे इसाई भी थे जो यूसुफ की पत्नी मरियम में खुदाई स्थापित करते थे।"

(देखो जान डेविनपोर्ट महोदय की अपालोजी पृष्ठ ४ सन् ८२ ईस्वी)

पुनः वही विद्वान् फरमाता है :—

"इन अपवित्र, अनुचित और अयोग्य घृणित गिरजाओं और उनकी मूर्तियों, पर्वों तथा उत्सवादि की रीतियों से जिनका आधार श्री गाडफ्री हगन्स महोदय के कथनानुसार उन दूषित बातों पर था, जिन को बुतपरस्ती की गोबर कहना चाहिये और जिसमें न केवल एशिया व अफ्रीका किन्तु यूनान और रोम तथा समस्त अफगानिस्तान के ईसाई डूबे हुए थे और जो श्री हेगन्स के कथनानुसार मजहब के पेशवा प्रत्युत स्वयं रोम के पोप की प्रेरणा से आचरण में आती थीं।"

(देखो अपालोजी और एजाज पृ० १४३)

कलार्क महोदय अपनी पुस्तक डीटेजिया अंगलकर में ईसाई जिहाद करने वालों का वृत्तान्त लिखते हैं कि शुरु से आज तक किसी जाति और किसी देश में ऐश और दुराचार का इतना दबदबा नहीं हुआ—जितना सरकारी मुजाहिदों (जिहाद करने वालों) में हुआ था।"

(देखो पृ० ३२६ व अपालोजी पृ० १३१)

—•—

षष्ठ अध्याय

तसलीस और उसका आरंभ

ईसाई मतानुसार खुदा के तीन अक़नूम हैं। और प्रत्येक उनमें से खुदा है। क्योंकि बाप बेटा और रूह, क्लुदुस (पवित्रात्मा) तीनों खुदा होने पर भी एक दूसरे से प्रत्येक प्रकार पृथक् हैं। ईसाई लोग यूं तो इन तीनों को खुदा कहते हैं। किन्तु सांसारिक लज्जा के मारे लोगों के सम्मुख तीन खुदाओं के मानने वाले नहीं।

जब इस सिद्धान्त पर कभी उन से बातचीत होती है तो उत्तर देते हुए उनकी आत्मा कठोर प्रकार के पेचो ताब खाती है।

तसलीसफित्तौहीद, तौहीद—फित्तसलीस=एक तीन हैं और तीन एक हैं। न सुलझने योग्य विचित्र समस्या उसके सम्मुख उपस्थित होती है। जिसको वह किसी प्रकार प्रगट नहीं कर सकते। जब स्वयं ईसाई पादरी और बिशप महोदय इसके समझने से खाली हैं, तो हम क्या कहें।

हमारे सहस्रों दयावान् पादरी महोदय यह जानते हैं कि तसलीस का मानना बाईबल का मन्तव्य है। इञ्जील से निकला है। मसीह इसका निर्माता है। अतः वह इसको ईमान की शोभा जान बाधित होकर मान रहे हैं और हर बार बुद्धिमानों के सम्मुख बुद्धिमत्ता की दृष्टि से उन्हें बार बार लज्जित होना पड़ता है, तो भी इससे इन्कार नहीं करते।

इसलिए हम बहुत नम्रता पूर्ण श्रेष्ठ पादरी महोदयों की सेवा में सकरबद्ध निवेदन करके जतलाना चाहते है कि यह तसलीस का सिद्धान्त आप की पवित्र बाईबल में कहाँ से आया? कब और किस साधन से प्रचलित हुआ। आशा है कि हमारे निवेदन को आप ध्यान से अध्ययन करेंगे।

जान डेवी टोरट महोदय लिखते हैं कि न्यूटन महोदय और गिबन महोदय ने बड़ी रीसर्च और यत्न से सिद्ध किया है कि जिन इञ्जील की आयतों से तसलीस का मन्तव्य सिद्ध किया है।

(योहना १।२)

वह आयतें बनावटी हैं और कामलट महोदय भी यही कहते हैं कि तसलीस के बारे में यह आयत किसी इञ्जील की पुरातन पुस्तक में नहीं। मसीह ने तो एक ही खुदा के विश्वास की आज्ञा दी थी। किन्तु पोलोस और योहन्ना ने जो इफलातून के हीरों में से था। मसीह का मजहब खराब कर दिया। और इसमें से सर्वोच्च सत्ता ईश्वरीय एकता का मन्तव्य निकाल कर (उसके स्थान पर) इफलातून का घड़ा हुआ निरर्थक कुछ समझ न आ सकने वाला तसलीसी सिद्धान्त प्रविष्ट किया। (पृ० ९३)

एक योग्य प्रसिद्ध इतिहासकार फरमाता है कि मसीह से तीन सौ साठ वर्ष पूर्व अफलातून ने इस कठिनायी से (कि एक शुद्ध) पवित्र खुदा से किस प्रकार यह सब प्रकार की सृष्टि उत्पन्न हुई। निकलने

के लिए उसने कल्पना की कि परमेश्वर की सत्ता में तीन भाग हैं। एक फस्ट काज=आदि कारण परमेश्वर दूसरी बुद्धि अथवा लोगास, तृतीय संसार की रूह=आत्मा। इनको अफलातून की फलासफी में तीन देवता वर्णित किया था और यह तीनों एक विचित्र रूप से उत्पत्ति (जजीशन) से मिले हुए थे। लोगास को विशेषत: अटल बाप का (जो सृष्टि का रचयिता और गवर्नर अर्थात् अधिकारी है) बेटा वर्णित किया था। इसको अफलातून ने अति चातुर्य से अदा किया था। और यही उसके स्कूल का रहस्य था। जिसको तीस वर्षों के परिश्रम में विद्यार्थी समझते थे।

(देखो कडोरथ की अन्तलकचवाली सिस्टम पृ० ५६८)

ऐडवर्ड गिबन फरमाते हैं कि :—

यह अफलातून की फलासफी सिकन्दर की विजय यात्राओं के कारण से मसीह से तीन सौ वर्ष पूर्व एशिया और मिश्र में फैल चुकी थी। सिकन्दरिया के स्कूल में यहूदी इसकी शिक्षा प्राप्त करते थे। लोगास का शब्द यहूदियों ने मूसा के जहोवा से वर्णित कर दिया और खुदा के बेटे को प्रगट रूप से संसार में उन कार्यों के लिये प्रविष्ट किया जो खुदा के गुण और स्वभाव के विरुद्ध प्रतीत होते थे। कहते हैं कि यह मजहबी शिक्षा अफलातून की यूनानी फ़लासफी की भान्ति (बेपरवाही) से समझी जाती यदि उसके अन्तिम शिष्य योहना की लेखनी से पुष्ट होती। जो ९७ ईस्वी में पुष्ट होकर नरवा बादशाह के राज्य में पूर्ण हुई। जिससे यह विचित्र रहस्य संसार पर प्रगट हुआ कि लोगास ने जो खुदा के साथ आरंभ से था और जो खुदा था—जिसने समस्त विश्व बनाया था और जिसके लिये समस्त विश्व बना था। उसने नासरत के जोसुस अर्थात् मसीह नासरी के शरीर में उतार लिया जो कुंवारी के उदर से उत्पन्न हुआ और जो सलीब पर मारा गया।

अबून्या वाले मसीह को रसूल तो मानते थे किन्तु योहना की इञ्जील के अनुसार मसीह की यह प्रशंसाएं नहीं मानते थे कि वह खुदा था या खुदा के साथ था।

दूसरे नास्टक्स लोग मसीह को मनुष्य और ईश्वर दोनों मानते थे क्योंकि वह भगवान् का शरीरी होना मानते थे। अभी मसीह का रक्त कालवेरी पर्वत पर सुलग रहा था अर्थात् उसमें से धुआं उठ रहा था कि नास्टक्स लोगों ने एक और कुफ्र और बेहूदगी का विचार उत्पन्न किया कि कुंवारी के पेट से निकलने के स्थान पर मसीह पूरे यौवन में जार्डन नदी के तट पर नाजुल (प्रगट) हुआ था और उसके शिष्यों तथा विरोधियों को धोखा हुआ और ऐसा ही पांबलट के मंत्रियों को धोखा हुआ। क्योंकि सलीब के ऊपर एक बायव्य (हवाई) रूप मसलूब हुआ था। (अर्थात् एक कल्पित रूप को फांसी दी गई थी—अनुवादक)

अत: इसी योहन्ना रसूल के लिखने से फ़लातून की फ़लासफ़ी ईसाईयों में मसीह की दूसरी और तीसरी शती में प्रचलित हुई। क्योंकि इसी योहन्ना ने पहिले ही से इलहाम के विचित्र रहस्यों का मुकाशफ़ा (इलहामसंबंधी स्वप्नों) से ज्ञात कर लिया था, (अर्थात् यह मुकाशफ़ा भी इसी योहन्ना की एक चाल थी) अफलातून के प्रतिष्ठित नाम को ईसाई लोग तो प्रतिष्ठा से स्मरण करते थे और लोग इसकी शिकायत करते तथा इसे बदनाम करते कि इसने सत्यता और भूल वालों का समर्थन किया है।

तसलीस मन्तव्य पर सिकंदरिया के दार्शनिकों और ईसाईयों में वाद विवाद होता था। गुरू और

शिष्यों की भूख शब्दों की भरमार से मिट जाती थी किन्तु सबसे बड़ा बुद्धिमान् ईसाई और मज़हबी ज्ञान का ज्ञाता अथैनोसीएस स्वयं स्पष्ट २ सत्य का हृदय से कहता है कि जब कभी उस ने अपनी बुद्धि लोगास की उलूहियत सोचने पर दौड़ायी तो उसके सब यत्न व्यर्थ गये क्योंकि उसने जितना अधिक सोचा उतना ही न्यून समझा और जितना उसने अधिक लिखा उतना ही वह अपने विचारों को न्यून प्रकाशित कर सका।

प्रथम यह लोगास का रहस्य दार्शनिकों में रहा किन्तु जब मसीहाई ईमान की आशा और भक्ति का प्रयोजन बन गया, तो रोम के राज्य के प्रत्येक प्रान्त में सर्वसाधारण इस को अधिकता स्वीकार करने लगे। स्त्री पुरुष जो कि इसके संबंध में सर्वथा अयोग्य हैं। वह भी इस पर बात चीत करने लगे।

ऐसे समय के संबंध में ट्रैवलिन गर्व से कहता है कि—

"ईसाई कारीगर सरलता से ऐसे प्रश्नों का उत्तर दे सकता था। जिससे बड़े बुद्धिमान यूनानी घबरा जाते थे।

जब ऐसा हो गया, अर्थात् तसलीस सर्व साधारण में फैल गई और मज़हबीजोश भी साथ हुआ। तो ईसाई लोग इसको यूनानियों के देव माला अर्थात् मिथ्यालोजी के सुधार में वर्णन करने लगे। इसके अस्सी वर्ष पश्चात् बथूनिया के पादरी लोगों ने पलनी की कचहरी में स्वीकार किया कि वह इस अर्थात् मसीह को खुदा के सदृश याद करते हैं।

अन्तोगत्वा जब इस कठिनाई पर झगड़े, मनादी और वाद विवाद होने लगे तो एक प्रसिद्ध ईसाई विद्वान् ईरियस ने इससे इन्कार किया। इसके बहुत कट्टर शत्रु भी इस की विद्या और सत्यता को स्वीकार करते थे और वह ऐसा उपराम था कि उसने पादरी का सिंहासन लेने से भी इन्कार कर दिया था। ईरियस के शिष्यों में से उस समय निम्नलिखित व्यक्ति धार्मिक पदों पर नियुक्त थे:—

बिशप, परस बेटर, डेंकन, कनवारिया, एशिया के बहुत से पादरी हैं। यह सब उसके एक विचार के थे। इनके अतिरिक्त सबसे बढ़े विद्वान् पादरी बूसीबीऐस ने इसकी सहायता पर लेखनी उठाई। जब इस प्रकार ज़ोर शोर से शास्त्रार्थ होने लगे। तब बादशाह और लोगों का ध्यान इस मज़हबी वाद-विवाद पर खिंचा और छे वर्ष तक खूब झगड़े होते रहे। अन्ततः इसके पश्चात् ३१८ से ३२५ की नीस नगर की साधारण कौन्सल के अन्तिम निश्चित निर्णय पर यह विषय छोड़ दिया गया और कौन्सल (सभा) विशेषतः इसी निर्णय के लिए बुलाई गई। इस समय तसलीस संबंध में निम्न विषय विवादास्पद थे। जिनमें सब परस्पर एक दूसरे को कुफ़्र की व्यवस्था देते थे। क्योंकि ग़लती और कुफ़्र से कोई रहित न था।

प्रथम सम्मति यह थी जिसको ईरियस और उसके अनुगामी मानते थे कि लोगास आज्ञापालक तो है किन्तु स्वयं उत्पन्न हुआ है। पिता की इच्छा अभाव से उत्पन्न हुई। यद्यपि पुत्र के लिए समस्त विश्व बनाया गया और समस्त सृष्टि से पूर्व भी वह उत्पन्न हुआ और जिसकी आयु के सम्मुख बहुत बड़े से बड़ा ज्योतिष का युग एक नष्ट होने वाले क्षण के समतल भी नहीं है तो भी उसका समय असीम नहीं है और उसका सौन्दर्य उत्पत्ति से कुछ समय पूर्व व्यतीत हो चुका है। अर्थात् उस जन्मे हुये इकलौते

लड़के पर सर्वशक्तिमान पिता ने अपनी बहुत आत्मा डालदी और अपनी तेजस्विता की चमक से उसको तेजस्वी बना दिया। वह तिरोहित पूर्णता का प्रकाशित रूप था, और उसने स्वयं पांव के नीचे असीम दूरी पर बहुत बड़े चमकीले फरिश्तों के तख्त देखे तो वह अकसी प्रकाश से चमकता था और रूमी बादशाहों के सदृश जो कि अगरस अथवा सीरज़ की पदवी से पुकारे जाते थे। वह बाप और बादशाह की इच्छानुसार संसार का राज्य करता है।

दूसरी सम्मति यह थी कि लोगास स्वाभाविक और दूसरों में न जाने वाली वैसी पूर्णताएं रखता है जैसे कि फ़लासफ़ी और धर्म की दृष्टि से खुदा में हैं। तीन भिन्न २ और असीम आत्माएं खुदा के स्वरूप में समान रूप में बराबर और असीम हैं और उनमें से कोई आगे पीछे नहीं हैं। इस सिद्धान्त के मानने वाले और सहायक जिस मन्तक में तीन भिन्न २ खुदा प्रतीत होते थे मिनट काजकी एकत्व स्थिर रखने का यत्न करते थे जो सृष्टि प्रबंध में बहुत स्पष्ट है।

तीसरा सिद्धान्त यह था कि तीन खुदा अपनी सत्ता की आवश्यकता से पूर्णता के रूप में समस्त ईश्वरीय गुणों से विशिष्ट है। जिनका समय सीमा रहित है। परस्पर एक दूसरे के मित्र हैं। समस्त सृष्टि में विद्यमान हैं। यह तीनों ही मनुष्यों को एक प्रतीत होते हैं जो संसार के प्रबंध में भिन्न रूपों में प्रगट हो सकता है।

इस मन्तव्यानुसार वास्तविक तसलीस तीन नामों और तीन गुणों को है जो सोचने वाले के मन में रहती थी। लोगास कोई विशेष व्यक्ति नहीं किन्तु एक विशेषण है और बेटे का शब्द उस पर अलंकार रूप से लगाते हैं और वह बुद्धि है जो खुदा के साथ है जिससे पदार्थ निर्मित हुये हैं। लोगास का अवतार खुदा के ज्ञान का इलहाम है।

जिससे मसीह मनुष्य की आत्मा भरी थी और इसके कार्यों की प्रेरणा होती थी। यह तीन सम्मतियां अभियोग रूप में उपस्थित करने के योग्य थीं।

ईयरनैस को पूर्ण विश्वास था कि यदि अनीस की सभा के पादरी अपनी धार्मिकता और पक्षपात रहित होकर विचार करते तो उनका मन्तव्य स्वीकृत होता किन्तु अन्ततोगत्वा कौन्सल की सम्मति से पिता और पुत्र दोनों की एक ही वस्तु स्थिति मानी गई। जिसको अब प्रोटैस्टैन्ट ग्रीक, लेटिन और नेटल ईसाई अपने धर्म का वास्तविक सिद्धान्त मानते हैं।

कौन्सल (सभा) होने के पश्चात् जो पिता पुत्र के सम्बन्ध में कौन्सल ने होमोशन शब्द लिखा। इस शब्द को भिन्न-भिन्न सम्मति के अनुसार अपने २ सिद्धांतों के स्थिर रखने के लिए भिन्न-भिन्न अर्थ किये।

इसी शब्द को दूसरों ने होमो आईओशन कर लिया था। संक्षेपतः भिन्न प्रकार के फल (उच्चारण) बना कर इस के भिन्न २ अर्थ तराशे। किन्तु दो प्रसिद्ध पादरियों ने (जो उस समय चर्च के स्तंभ माने जाते थे) कौन्सल के अर्थ स्वीकार किये अर्थात् वह एक ही सत्ता है।

इस परस्पर विरोध के दिनों में अन्य १८ सम्प्रदाय खड़े हो गये। जो समस्त ईरियस के शत्रु थे। जैसा कि समय की अवस्था को सैन्ट एलसरो महोदय जो उसी चतुर्थ शती में युवीकर्स संप्रदाय के विशप थे इन शब्दों से वर्णन करते हैं :—

"जहाँ कहीं मैं गया । मैं ने बहुत न्यून पादरी पाए । जिन के मध्य सच्चा ख़ुदा का ज्ञान था । यह बात बहुत शोचनीय और भयावह है कि आज कल मनुष्यों के मध्य इतने सम्प्रदाय हैं जितनी कि उन की सम्मतियां हैं । और इतने उन के विश्वास हैं जितनी कि उन की इच्छायें हैं । और इतने इन में कुफ्र हैं जितने कि उन में दोष हैं । क्योंकि मजहबों को अकारण और इच्छा के बिना लोग स्वभाव से घड़ते जाते हैं । और इसी प्रकार उन का वर्णन कर देते हैं । होमोशन का शब्द कभी खंडित और कभी स्वीकार किया जाता है । और निरन्तर उत्सवों में उस पर झगड़े होते हैं । आज कल के युग में अभागे लोगों की बहस का यह एक विषय है कि पिता और पुत्र में आंशिक समानता है अथवा पूर्णतः । प्रत्येक वर्ष प्रत्युत प्रत्येक मास हम इन भेदों का वर्णन करने के लिए नूतन सम्प्रदाय बनाते हैं । जो कुछ हम ने लिखा, हम इससे पछताते हैं । जो लोग पछताते हैं । हम कभी उनका अनुमोदन करते हैं—पुनः हम उन्हीं लोगों पर कुफ्र की घोषणा करते हैं । जिन को पूर्व हमने बचाया था । कभी हम दूसरों के मन्तव्यों को अपने मध्य आते समय ख़राब कहते हैं । कभी अपने विश्वासों को दूसरों के मध्य पा कर बुरा कहते हैं । एक दूसरे को खंड २ कर रहे हैं । और एक दूसरे की बरबादी का कारण बन रहे हैं ।

(देखो दार्शनिक लाक महोदय की कामन प्लेस बुक फसल ३० पृ० ४७०)

और

(डकलायन ऐंड फ़ाल पृ० ५११)

और

(अपालोजी पृष्ठ १९७)

इसी झगड़े के पश्चात् सलूमिया की सभा हुई किन्तु उसमें भी कोई हृदय ग्राह्य निर्णय नहीं हुआ । उस समय ईस्वी मन्तव्यों पर ऐसा अन्धकार छाया था कि पादरी हलारी स्वयं ३० वर्ष की कौन्सल के पश्चात् यह नहीं जानता था कि मेरा मन्तव्य क्या है ?

जब यह चर्चा पश्चिम में फैली । तो ३६० ईस्वी में एक और सभा रेणी की हुई । इस में नीस की कौन्सल से अधिक पादरी उपस्थित थे अर्थात् चार सौ बिशप से अधिक इटली, अफ्रीका, स्पेन, गाल (फ़्रांस) ब्रटेन—अलीरी के एकत्र हुए थे । इस सभा में ८० व्यक्ति ईरीयन की सम्मति के थे । किन्तु ईरियस के नाम से घृणा करते थे । और इस कौन्सल के उठने से पूर्व ही ऐसे मन्तव्य पर जो सन्दिग्ध था हस्ताक्षर हो गए । किन्तु पीछे इस सभा की भी भूल ज्ञात हो कर वही नीस को कौन्सल के निर्णय को स्वीकार किया गया । क्यों कि इस में ईरियस के कई शब्द प्रविष्ट हो गए थे ।

अन्ततः जब यह झगड़ा बहुत अधिक बढ़ गया तो फ़ान्सटन्टेन बादशाह अलेगज़ण्डर और अप्रीस को पत्र लिखा । जिस में उस ने शोक प्रगट किया कि एक खुदा, एक दीन मानने पर भी ईसाई लोग ऐसी छोटी सी बात पर एक दूसरे के विरुद्ध झगड़े कर रहे हैं और यूनानी दार्शनिकों का उदाहरण दिया कि तुम भी उन्हीं की भान्ति रहा करो । युक्ति-प्रयुक्ति के समय मित्रवत् वाद विवाद करो । यदि उस समय बादशाह यत्न करता तो शान्ति हो जाती । किन्तु उस के (मूर्ति के) अपमान से उस को कल्पित भय हो गया । जिस ने परस्पर मेल की आशा को धूमिल कर दिया क्योंकि उस ने तीन सौ बिशप अपने मकान में एकत्र किये ।

जहां बादशाह होने के कारण बहुत जोर शोर से बहस हुई और स्वयं बादशाह भी वाद विवाद में सम्मिलत हुआ। किन्तु ओसी ऐस जोकि नीस की कौन्सल का प्रधान था। इस की प्रेरणा (अर्थात् इस बात के कहने) से (कि यू सी. बी. एस. ने जिस के पास ईरियस काफिर था, उस ने बादशाह के शत्रु को सहायता दी थी) बादशाह ने नीस की कौन्सल के निर्णय को स्वीकार किया और आज्ञा दी कि जो लोग कौन्सल के खुदाई निर्णय को रोकेंगे अथवा न मानेंगे, वह निर्वासित किये जायेंगे।

बादशाह की इस धमकी पर प्रथम जो सत्ता विरोधी थ। पुनः दौरा के अन्ततः तीन मास प्रतीक्षा के पश्चात् उन को यू. सी. बी. ऐस निर्वासित किया गया। समस्त ईयरनीस सम्प्रदायों का विधानतः अपमान किया गया। इन को पोरफेरीन कहा गया तथा उन की पुस्तकें जलाई गई और उन के वध का आदेश हुआ जिन के पास उन को पुस्तकें निकलीं।" संक्षिप्त देखो— (गिबि हिस्ट्री जिल्द १ अध्याय २१ पृष्ठ ५७१ से ५८७ प्रकाशित वंडास, लन्डन)

जान डेवन्पोर्ट महोदय लिखते हैं कि इस ईसाई सम्प्रदाय को मारियानीडस कहते हैं। इस सम्प्रदाय के लोगों ने चाहा था कि सब मन्तव्यों के साथ तसलीस सफ़ारे में प्रविष्ट करें अर्थात् पवित्र-आत्मा के स्थान पर हज़रत मरियम को तसलीस के तीन अंगों में प्रविष्ट करें।

(पृष्ठ ८ हिजरी १२२७)

अब हम इस तसलीस के मन्तव्य पर कुछ प्रतिष्ठित, माननीय पादरी महोदयों की सम्मति में श्वेत पत्र की नक़ल बुद्धिमानों की सेवा में उपस्थित करते हैं।

(१) पादरी डी० डब्ल्यू तामसन महोदय तसलीस के समाधान से बाधित हो कर लिखते हैं कि जनता की युक्ति प्रयुक्ति और बौद्धिक तर्क इस में नहीं चल सकते, इस की सिद्धि केवल खुदाई कलाम (इञ्जील) पर आश्रित है। (तशरीहुत्त सलीस पृ० २२)

(२) अति प्रसिद्ध पादरी फ़ान्डर महोदय तसलीसो मन्तव्य की व्याख्या करते हुये फ़रमाते हैं कि "मनुष्य बुद्धि अल्प है। अतः ईश्वरीय सत्ता और उस के मसीही तसलीस जैसे भेद को वर्क नहा कर सकती। (मिफ़ताहुल असरार अ० १ पृ० २९ पंक्ति १६)

पुनः लिखते हैं कि :—

"तसलीस उन भेदों और उन मन्तव्यों में से है जिन में बुद्धि को मार्ग नहीं। शब्द प्रमाण पर उस का स्वीकरण उचित है।" (मिफ़ताहुल् असरार पृ० २९ पंक्ति २)

पुनः फ़रमाते हैं कि :—

"हम इन भेदों (तसलीस) के सिद्ध करने के लिए मान व बुद्धि और इस संसार की विद्याओं से नहीं किन्तु केवल यसूअ़ मसीह की वाणी और इञ्जील व तौरात की खुली आयतों से प्रमाण लाएंगे। मनुष्य की दूषित बुद्धि में कदापि इतनी शक्ति नहीं।" (अध्याय १ पृ० २४ पंक्ति १, २)

पुनः फ़रमाते है कि :—

"इन शिक्षाओं का शास्त्रार्थ न बौद्धिक युक्तियों से किन्तु केवल खुदाई कलाम की आयतों से हो सकता है।" (मिफ़ताहुल् असरार पृ०५)

(३) विद्वान् पादरी सफ़दर अली महोदय फ़रमाते हैं कि :—

"तसलीस का मन्तव्य बहुत बड़े तेजस्वी, विशिष्ट, परोक्ष ईश्वरीय सत्ता के स्वरूप के भेदों में से है। बौद्धिक युक्तियों से उस का प्रमाणाप्रमाण दोनों असम्भव हैं।

(न्याज़नामा पृ० १० सन् ७८ ईस्वी)

पुनः लिखते हैं कि :—

"यदि पवित्र पुस्तक सर्वोच्च खुदा की सत्य वाणी न होती तो केवल तसलीस का मन्तव्य क्या प्रत्युत उस की समस्त शिक्षा विश्वसनीय और मानने के योग्य न होती। (पृ० ६)

पुनः फरमाते हैं :—

"इसी तसलीस के सम्बन्ध में यदि कोई कहे कि यह बात सर्वथा मेरी समझ में नहीं आती है। तो इस बात पर इतना निवेदन पर्याप्त है कि सत्य है। आश्चर्य का स्थान नहीं।

(न्याज़नामा पृ० ८ लखनऊ ७८ ईस्वी)

(४) प्रसिद्ध पादरी अमादुद्दीन लाहज़ फरमाते हैं :—

"पवित्र तसलीस पर बौद्धिक युक्ति की मांग करना बुद्धि के विरुद्ध है। जैसे परमेश्वर की एक सत्ता के संबंध में (युक्तिप्रयुक्ति बुद्धि विरुद्ध है)

यहूद के अतिरिक्त जो अन्य लोग हैं। उन को तसलीस पर इस प्रकार मनवा सकते हैं कि प्रथमतः इलहाम की आवश्यकता, द्वितीयतः पवित्र पुस्तकों में उस का आधारित होना बौद्धिक युक्तियों से उन पर सिद्ध करेंगे। और जब उन्होंने उस को स्वीकार किया तो इलहाम के अधीनस्थ होने से उनको भी तसलीस स्वीकार करनी पड़ेगी।"

(देखो उनकी पुस्तक नगमएतंबूरी लाहौर प्रथमवार सन ७४ पृ० ७४)

(५) एक अन्य पादरी महोदय फरमाते हैं कि "यदि कोई इस तसलीस पर आक्षेप करे तो चाहिये कि उससे पृथक् रहे। क्योंकि खुदा की पूर्ण पहचान के लिये हमारी बुद्धि सदोष है। यहां हमारे होश भी परेशान हैं। संक्षेपतः इसकी पहचान असंभव है। और इस को जानना भ्रममात्र है। हमारे लिये यही पर्याप्त है कि जो जो कुछ खुदा ने फरमाया है अर्थात् अपनी आत्मा के सम्बन्ध में सुनाया है। उस पर आक्षेप न करें। कुछ दोष न दें। उसको सत्य समझें और विश्वास पूर्वक मानें।"

(फ़ार क़लीत पृ० ७,८)

चुटकला

तीन निर्धन व्यक्ति एक ईसाई के पास जाकर नसरानी (मसीही) हुए और उनके सिद्धान्त तोते की भान्ति रट लिये। अकस्मान् एक दिन उस ईसाई के यहां एक मित्र मिलने आया।

कल्याण कुशल के पश्चात् पादरी जी से पूछा कि यह तीनों व्यक्ति कौन हैं और कहां से आए हैं? पादरी जी ने कहा कि यह तीनों नूतन नसरानी हुए हैं। और अब सिद्धान्तों के शिक्षण में हृदय से संलग्न हैं। इस मित्र ने उन से पूछा कि तसलीस के मन्तव्य का क्या स्वरूप है? और तुम्हारा विश्वास इस मन्तव्य पर क्या है? उन में से एक ने उत्तर दिया कि मेरे उस्ताद ने ऐसा सिखाया है कि तीन खुदा हैं। एक आसमान पर है। जिस को हम मसीह का बाप मानते हैं। और दूसरा वह जो मरियम

के उदर से उत्पन्न हुआ। जिस का नाम यसूअ है। और तीसरा वह जो कबूतर की भान्ति दूसरे खुदा अर्थात् मसीह के सिर पर उतरा। इस पर उस के उस्ताद (शिक्षक) जी ने क्रोधित हो कर उस को धकेल दिया कि यह भोला भाला और कम समझ है। इस की समझ पर पत्थर पड़ें। देर से कुबुद्धि को बतलाता हूं और मग़ज़ खपाता हूं। आज तक एक मन्तव्य तसलीस का न समझा।

दूसरे को पूछा गया तो कहने लगा कि मेरे शिक्षक ने मुझे यूं सिखाया कि पहिले तीन खुदा थे कि अब उनमें से दो जीवित हैं क्योंकि एक बेचारा सूली पर चढ़ा कर मारा गया। शिक्षक जी उस पर भी दुगने क्रोधित हुए। आंखें लाल पीली कर के कहा कि तेरा सत्यानाश जाए। कितनी देर से तुझे समझाता हूं। खोल २ के बताता हूं कि यह मसलस (तिकोन) रूप तेरी समझ से बाहिर है।

अब अवशिष्ट तीसरे सज्जन शेष पोल खोलने लगे। फरमाया कि मुझे यही शिक्षा दी गई है और इस को पत्थर की लकीर की भान्ति याद कर रखा है। इस मन्तव्य से मेरा मन बहुत प्रसन्न है। वास्तविकता यह है कि पूर्वकाल में तीन खुदा थे और तीनों एक ही थे और परस्पर पूर्ण संगठित थे। सो एक इन से मारा गया। अब तीनों संघठन की दृष्टि से फना (नष्ट) हो गए। न ऊजोबिल्ला-हेमिन् जालिका।+

वस्तुस्थिति यह है कि यह ईसाईयत का मन्तव्य ऐसा ज्ञान, समझ और बुद्धि के विरुद्ध है। कि खुदा की पनाह (ईश्वर रक्षा करे) आज तो अन्य एक ओर, स्वयं ईसाईयों की समझ में नहीं आया।

एक सुयोग्य ईसाई विद्वान् जब इस के समझने से बाधित होता तो यह छन्द पढ़ कर अपने मन को सन्तोष दिया करता था :—

×है तसलीसे इलाही< अकले× इनसानी से%गो बाहिर।
×खिरद को छोड़ कर ईमान लाए जिस का+ जी चाहे॥

—०—

+इस से अल्ला के साथ पनाह मांगता हूं। (अनुवादक)

×(१) खुदा सम्बन्धी (२) बुद्धि (३) मनुष्य की (४) चाहे (५) बुद्धि (६) मन

सप्तम अध्याय

ईसाई सम्प्रदायों और बाईबल का अन्वेषण

क्योंकि अपरिचित लोग नहीं जानते कि ईसाई मत की आन्तरिक अवस्था क्या है ? और ईसाई बनाने से पूर्व स्वयं ईसाई वह पुस्तकें जो उन की वास्तविकता प्रगट करने के लिए उच्चबुद्धि लेखकों ने बनाई हैं—नहीं दिखलाते, सदैव तिरोहित रखते हैं जिस से किसी प्रकार नवीन शिकार पक्षीजाल से न निकल जाए। और यह भी देखा गया है कि जब किसी ईसाई ने न्यायपूर्वक ईसाई मत की पुस्तकों को देखा। झट ईसाई शिक्षा से किनारा कर लिया अफ्रीका के प्रसिद्धविशप कोलनज़ो साहब बहादुर का वृत्त पादरियों से छिपा नहीं। फ्रांस के लोग और अम्रीका के विद्वान् भी बहुत कुछ ईसाइयत से तंग आ रहे हैं। बाईबली खुदा की करतूतों से यहां तक शिक्षित लोग तंग आ गये हैं। कि वह उस का नाम पुस्तकों से निकालना चाहते हैं।

स्पष्ट हो कि ईसाई मजहब के बड़े २ सम्प्रदायों का वृत्तान्त जो हमें अधिक अन्वेषण से ज्ञात हुआ है। वह इस प्रकार है (१) एबोनिया (२) मारसियोनी (३) मानी कनीर (४) रोमन कैथोलिक (५) योनीटेरियन (६) यूटक्तकेण (७) मलीकान्या (८) प्रोटैस्टेन्ट।

संख्या (१) एबोनिया संप्रदाय

इतिहास में लिखा है कि यह सम्प्रदाय जो प्रथम शती में हुआ था। यह विश्वास रखता था कि हजरत ईसा केवल एक मनुष्य थे। हजरत मरियम और यूसुफ बजार से अन्य मनुष्यों की भान्ति उत्पन्न हुए और मूसा की शरीयत को मानना केवल यहूदियों पर नहीं किन्तु अन्य लोगों पर भी समुचित है। उस की आज्ञाओं पर आचरण करना मोक्ष के लिये आवश्यक है और जो पौलुस उस पर आचरण करना आवश्यक नहीं कहता किन्तु बड़े बल के साथ उस का विरोध करता है, वह इसको बहुत बुरा कहते थे और उसके लेखों के सम्बन्ध में बड़ा अपमान करते थे। (देखो मौशीम का इतिहास जिल्द १ पृ० ७०)

लार्डनर इस बात के समर्थन में इस सम्प्रदाय के सम्बन्ध में फरमाते हैं कि "इस सम्प्रदाय के दोनों भाग पौलुस की पत्तियों का खंडन करते तथा पौलुस को अच्छा व्यक्ति नहीं समझते थे।"

(देखो उन का भाष्य जिल्द ७ पृ० ३८३)

यूसीबीस कहता है कि यह सम्प्रदाय पौलुस की पत्रियों का खंडन करता और उस को बहिष्कृत बतलाता था। (देखो लार्डनर भाष्य पृ० ३८३)

बेल महोदय फरमाते हैं कि—

"यह सम्प्रदाय ओल्डटैस्टामैंट की सारी पवित्र पुस्तकों में केवल तौरेत को ही मानता और दाऊद,

सुलैमान, हरनिया हिज़कोल के नाम से घृणा करता था। और न्यूटैस्टामेंट से उन के पास केवल मती की इन्जील थी और उस में भी उन्होंने बहुत स्थानों को नहीं माना था विशेषतः पहिले दो अध्याय निकाल दिये थे। (देखो किताबुल् असनाद जिल्द ६ पृ० ३८३)

संख्या २ मारसियोनी संप्रदाय

इस सम्प्रदाय के सम्बन्ध में बैल महोदय फरमाते हैं कि—

"उनका विश्वास है कि दो खुदा हैं। एक पुण्य का उत्पादक, दूसरा पाप का उत्पादक है। और उनका विश्वास है कि ओल्डटैस्टामेंट की तौरेत और सब पुस्तकें दूसरे खुदा की दी हुई हैं और यह न्यूटैस्टामेंट के भी विरोधी हैं। और ईसा मृत्यु के पश्चात् नरक में उतरा और वहां से कावील और सदूम के लोगों को मुक्ति दी। क्योंकि वह ईसा के सम्मुख उपस्थित हुए और उन्होंने अपने २ जीवन में पाप के उत्पादक खुदा की उपासना न की थी। तथा हाबीलनूह, इब्राहीम और पूर्व के सारे पैगम्बरों की आत्माओं को नरक में रहने दिया। क्योंकि प्रथम सम्प्रदाय के विरुद्ध किया था। और उनका विश्वास है कि सृष्टि का उत्पादक वही खुदा नहीं है जिस ने हजरत ईसा को भेजा है और इसीलिये वह ओल्ड टैस्टामेंट को इलहामी नहीं मानता। और न्यूटैस्टामेंट में से इन्जील लूका को मानता था। तथा पौलुस की पत्रियों से दस पत्रियां मानता था किन्तु उनमें भी जो उनके विचार के विरुद्ध था। उनका खंडन कर देता था।

लार्डर महोदय फरमाते हैं कि—

"मार सियोनी सम्प्रदाय ने न्यूटैस्टामेंट की पुस्तकों को सर्वथा पृथक् कर दिया। यह सम्प्रदाय कहता था कि यह पुस्तकें उसकी भेजी हुई हैं कि जो सभी पापों और बुराईयों का उत्पादक है। और यह भी कहते थे कि तौरेत तथा इन्जील एक व्यक्ति को भेजी हुई नहीं इसलिये कि बहुत सी बातें पहिली में दूसरी की विरोधी हैं और कहते थे कि पहिली में वर्णन है कि सृष्टि का उत्पादक अज्ञानी है क्योंकि आदम को पुकारा तू कहां है ! और इसी प्रकार रंग बदलने वाला है कि विरोधी आदेश देता है और संसार के उत्पन्न करने तथा साऊल को बादशाह बनाने से पछताता है।"

(देखो लार्ड महोदय की पुस्तक जिल्द ८ पृष्ठ ४८४)

पुनः लिखा है कि यह संप्रदाय ओल्ड टैस्टामेंट से इतनी घृणा करता था कि न्यू टैस्टामेंट की उन पुस्तकों से जिसको वह मानता था उन सब उपदेशों को जिन में तौरेत अथवा अन्य पैगम्बरों का वर्णन था अथवा उनमें उन पुस्तकों से प्रमाण लिया गया था। उनमें हजरत ईसा के आने की भविष्य वाणी थी अथवा उनमें पिता को संसार का उत्पादक कहा था निकाल कर बहुत से वाक्य अपनी ओर से लगा दिये और कहते थे कि यहूदियों का खुदा अन्य है और ईसा का बाप अन्य और वह तौरेत के आदेशों के मिटाने को आया था क्योंकि प्रार्थनाएं इन्जील की विरोधी थीं। (देखो लार्ड महोदय की पुस्तक जिल्द ८ पृ० ४८६) अतः इसी जिल्द में लिखा है कि मारसियोनी न्यूटैस्टामेंट से सब ग्यारह पुस्तकें मानता था और इन ग्यारह को सदोष तथा परिवर्तित की हुई और इनके दो विभाग करता था। एक इन्जील। द्वितीय पत्रियां। इंजील से केवल इन्जील लूका मानता था और पत्तियों में पौलुस की पत्रियों से बहुत कुछ निकाल कर और बहुत स्थानों पर मिला कर मानता था।

मानी कनीर संप्रदाय

इस संप्रदाय के संबंध में लार्डनर महोदय अपनी जिल्द ३ में अगस्टाएन के वचन के समर्थनानुसार लिखते हैं कि इस सम्प्रदाय का यह विश्वास था कि खुदा जिसने मूसा की तौरेत दी और इबरानी पैगाम्बरों के साथ बोला सच्चा खुदा नहीं किन्तु शैतानों का शैतान है और न्यूटेस्टामेंट की पवित्र पुस्तकों को मानता है किन्तु इनमें प्रक्षेप बताता है और जो इसके पसन्द आता है, ले लेता है। शेष को छोड़ देता है और कुछ छोटी पुस्तकों को उन पर विशेषता देकर कहता है कि यही पुस्तकें सर्वथा सत्य हैं और इतिहासकारों की सहमति है कि समस्त मानी कनीर का सम्प्रदाय प्रत्येक काल में ओल्डटेस्टामेंट की पुस्तकों को नहीं मानता था। श्रेणी कर्मनामी पुस्तक में उनका सिद्धान्त लिखा हुआ है कि शैतान ने यहूदियों के पैगम्बरों को धोखा दिया है और शैतान ही मूसा और यहूदियों के पैगम्बरों से बोला है। जिस के लिए यह सम्प्रदाय योहन्ना की इन्जील १० का प्रमाण देता है कि "मसीह ने इन सब को चोर और डकैत कहा है और शिष्यों के अअमाल को बहिष्कृत कर दिया था और फ़ास्टस कहता था कि यदि तुम इन्जील को मानते हो। तो तुम को चाहिए कि उन सब बातों को मानो जो उसमें लिखी हैं विश्वास करते हो। किन्तु उन भविष्य वाणियों के जो उस बादशाह यहुवा के संबंध में थी जिसको तुम मसीह कहते हो और कुछ आचार संबंधी उपदेशों के अतिरिक्त तुम इसका पौलुस की अपेक्षा जो उसको गन्दगी समझता है कुछ अधिक आदर नहीं करते। अतः तब मैं क्यों न्यूटेस्टामेंट के साथ ऐसा ही न करूं कि जो मेरी मुक्ति के लिए सहायक और ठीक है उसे ही मानू और उन वस्तुओं से इन्कार करू जो धोखा से हमारे बाप दादों ने उसमें प्रक्षिप्त कर दी हैं और उसके सौन्दर्य और अच्छेपन को कुरूप और ख़राब कर दिया है क्योंकि यह सत्य है कि उस न्यूटेस्टामेंट को न हज़रत ईसा ने लिखा है और न उन के शिष्यों ने किन्तु एक समय के पश्चात् किसी गुमनाम व्यक्ति ने लिखा है और जो उसने इस अपेक्षा कि मियात उस का उन अवस्थाओं से जो लिखता है— अपरिचित समझ कर विश्वास न करे शिष्यों और शिष्यों के मित्रों के नाम लगा दिये हैं और उसने ईसा के अनुयाइयों को बड़ा कष्ट दिया कि उन के नाम से उन पुस्तकों को जिनमें बहुत भूलें और विरोध हैं–बनाया। क्या यह हज़रत ईसा के अनुयाईयों के साथ जो परस्पर सहमत और एकमत थे– बुराई करनी नहीं है?

और हमने यह ठीक जान लिया है कि प्रत्येक बात को बुद्धि और ज्ञान के द्वारा पहचान कर उन बातों को जो ईमान में लाभप्रद और मसीह तथा उसके बाप महान् खुदा की प्रतिष्ठा के योग्य हैं, स्वीकार करें और उन बातों को जो लाभप्रद और योग्य नहीं – अस्वीकार करें। और जब हज़रत ईसा ने न्यूटेस्टामेंट में कई बातों को सिखाया और अन्यों का खंडन कर दिया। इसी प्रकार से पवित्रात्मा जिसके संबंध में ईसा ने इन्जील में वचन दिया था हमें सिखाता है कि क्या हम मानें और क्या न मानें, जो तुम ने मसीह के आश्रय से न्यूटेस्टामेंट में किया। विशेषता उस अवस्था में जैसा कि पूर्व कहा गया कि उसे न ईसा ने लिखा, न शिष्यों ने। संपूर्णतः जैसा तुम न्यूटेस्टामेंट से केवल भविष्य वाणियां और आचार संबंधी बातें लेते हो और ख़तना की आज्ञा, कुरबानी तथा सब्त के दिन का खंडन करते हो तो पुनः इसमें क्या दोष है कि हम भी न्यूटेस्टामेंट से केवल वही बातें मानें जो उनकी प्रतिष्ठा के योग्य हैं और जिनको उस ने कहा है। उसका जो शिष्यों ने अज्ञान से कहीं या झूठ और निर्लज्जता से उनकी ओर बताई– बहिष्कार करें।

रोमन कैथुलिक सम्प्रदाय

यह संप्रदाय अब भी ईसाई मत के समस्त संप्रदायों से छे गुना अधिक है और कई राज्य भी इस के अधिकार में हैं। इसी बाईबल के संघात में यह सम्प्रदाय नौ दस अन्य पुस्तकें इलहामी ठहरा कर प्रविष्ट करता है और ईश्वरीयोपासना में ईसा के प्रकाश को मानता और उसको सिज़दा (नमस्कार) करना कर्तव्य समझता है और मूर्ति पूजा भी करता है।

योनी टेरियन

इस संप्रदाय का कथन है कि खुदा का कोई शरीक (समान) नहीं। किसी को क्षमा करने और दंड देने का अधिकार नहीं। शुभकर्मों का परिपाक स्वर्ग और अशुभ कर्मों का परिणाम नरक है। यह प्रोटेस्टेंट और रोमन कैथुलिकादि सब संप्रदायों को बुरा समझते हैं।

यूटलकेन

इस संप्रदाय का संस्थापक एक यूटीचंस नामी यूनानी व्यक्ति था जो पंचम शती में हुआ है। उस ने इस सिद्धान्त की शिक्षा अपने अनुयाइयों को दी थी कि प्रत्येक उज्जवल स्वभाव की इस पद्धति की दोनों विशेषतायें मसीहमें परस्पर ऐसी होगई थी कि उनमें कोई संप्रदाय और भेदादि न रहा तथा मसीह का मनुष्यत्व गुण ईश्वरत्व में इस प्रकार मिल गया जैसे एक जल विन्दु नदीनद में घुल मिल जाता है। (अपालोजी अनुवाद उर्दू पृष्ठ ७ की टिप्पणी)

बलकानिया संप्रदाय

यह लोग मरियम को खुदा के एकत्व में शरीक करते हैं। (देखो जानरिचर्डसन महोदय की अरबी फ़ारसी अंग्रेज़ी डिक्शनरी पृष्ठ ९८८)

प्रोटैस्टेन्ट संप्रदाय

इस संप्रदाय का संस्थापक मार्टन लूथर महोदय है। इसने इञ्जील में बहुत कुछ सुधार किया है। इसका कथन है कि हम मूसा को न सुनेंगे और न देखेंगे क्योंकि वह केवल यहूदियों के लिए था और हमें उससे कोई संबंध नहीं। हम मूसा और उसकी तौरात को स्वीकार नहीं करेंगे। क्योंकि वह शत्रु जैसा है मूसा नौ जल्लादों का सरदार है। (मूसा के) दश आदेशों से ईसाईयों का कुछ संबंध नहीं। इन दश आदेशों का बहिष्कार करना चाहिए कि इस से सारी खराबी अभी दूर हो जाएगी। क्योंकि यह सब कार्य समस्त दोषों के स्रोत हैं।

(वार्डर महोदय का अशुद्धिनामा अंक १८४ पृष्ठ ३७ तथा लोहर की पुस्तक जिल्द ३ पृष्ठ ४०१)

वार्डर महोदय अपनी पुस्तक अशुद्धिनामा में लिखते हैं कि लूथर का शिष्य पोलोन लिखता है कि याकूब अपनी पुस्तक को व्यर्थ की बातों में पूर्ण करता है और पुस्तकों के ऐसे विरुद्ध प्रमाण देता है कि जिसमें पवित्रात्मा नहीं रह सकता। अत: वह पुस्तक इलामी पुस्तकों में गिनी जाए। (पृ० ३७)

जान कालवियन महोदय फरमाते हैं कि पतरस ने कलीसिया में नवीन दोष बढ़ाए और ईसवी स्वतन्त्रता को भय में डाला और ईसवी समर्थता को दूर फेंका है।

(मुबाहिसा प्रकाशित १२७१ हिजरी पृष्ठ २६)

लार्डनर महोदय फरमाते हैं कि जब मैं कुसतुनतुन्या में अधिकारी था। पवित्र इन्जीलें लेखकों के अज्ञान के कारण बादशाह् तासतीशूश के आदेश से बुरी ठहराई गई और उनका पुनः संशोधन हुआ।

(देखो किताबुल् असनाद जिल्द ५ पृ० १२४)

रेनन महोदय तज़्कराए मसीह में कहते हैं कि चारों इन्जीलों में से प्रत्येक इन्जील पर एक प्रसिद्ध व्यक्ति का नाम लिखा है जिसका वृत्तान्त "तज़्कराएह्वारीन" (शिष्यों का वर्णन) और तारीखे इन्जील में लिखा है। किन्तु यह यथार्थ नहीं कि यह चार व्यक्तियों का संघ ही इन्जील चतुष्टय है। इस वचन से कि यह मती ने कहा है, यह मरकस कहते हैं, यह लूका कहते हैं और यह योहन्ना फरमाते हैं। यह अभिप्रेत नहीं कि प्राचीन ईसवी विद्वानों का यह मन्तव्य था कि यह सम्पूर्ण आयात उन्होंने निर्मित की हैं। किन्तु इस वचन से अभिप्रत यह है कि यह आयतें उनसे कही गई हैं। और उनकी ओर अपेक्षित की गई हैं। (अपालोजी पृ० १११)

डाक्टर केनीकाट लिखते हैं कि वर्त्तमान न्यूटैस्टामेंट की लगभग समस्त पुस्तकें सन् एक हजार और चौदह सौ सतावन ईस्वी की लिखी गई हैं। और इसी से युक्ति पूर्वक यह बात कहता है कि समस्त पुस्तकें जो सातवीं या आठवीं शती की लिखी हुई थीं। यहूदियों की कौन्सल की आज्ञा से अभाव-ग्रस्त कर दी गई जब कि वह पुस्तक उन पुस्तकों से जिनको वह श्रेष्ठ समझते थे—बहुत विरोध करती थीं। (देखो रीस की साईक्लोपीडिया की जिल्द ४ बाईबल वर्णन)

रियो महोदय अपने इन्जील इतिहास में मती की इन्ज़ील के सम्बन्ध में लिखता है। कि जो लोग कहते हैं कि मती ने यूनानी में इन्जील लिखी थी—यह बात मिथ्या है। इसलिए कि यूसीबीस अपने इतिहास में लिखता है कि मती ने इन्जील इबरानी में लिखी है—यूनानी में नहीं। और जेरूम कहता है कि पीनटीनस ने इस इन्जील की इब्री जिल्द हबश में पाई थी और उसने उसको सकंदरिया में लाकर सीसरिया के पुस्तकालय में रखा था कि वहां से वह जाती रही किन्तु उसका यूनानी अनुवाद अवशिष्ट रहा और अनुवादक का नाम ज्ञात नहीं है।"

हनरी स्काट के भाष्य में लिखा है कि इब्री इन्जील के गुम होजाने का कारण यह् हुआ कि अबी-यूनिया सम्प्रदाय ने जो मसीह के ईश्वरत्व को स्वीकार न करता था—उस इन्जील में प्रशंसा की थी और यरोशलम की बरबादी के पश्चात् मूल इब्री इन्जील की पुस्तिका जाती रही। और कुछ लोग कहते हैं कि नासरियों अथवा यहूदियों में से जो नूतन ईसाई हुए थे उन्होंने इब्री इन्जील को नष्ट किया था और अबूनिया संप्रदाय ने उसके बहुत से वाक्य निकाल डाले थे।

लीकलकर्क, कोप, मैक्स, लींग, नेमीर, अखोरन, मारस महोदय जो ईसाईमत के प्रसिद्ध अन्वेषक हैं वह सर्वसम्मति से फरमाते हैं कि वास्तव में इब्री इन्जील थी और उसके कई अनुवाद भी थे किन्तु वह अनुवादों सहित गुम है—यह निश्चित सिद्ध है।

यूसीबीस भी अपने इतिहास में लिखता है कि :—

"अरनीस लिखता है कि मती ने अपनी इञ्जील इब्री में लिखी है।"

एक और अन्वेषक कहता है कि सबसे प्रथम कमेटी जो इलहामी पुस्तकों के निर्णय के लिये हुई। कुसतुन्तुनी की आज्ञा से ३२५ सन् नाईस नगर में उसकी बैठक हुई। उसमें एक पुस्तक जोडथ भी इलहामी पुस्तकों में सम्मिलित की गई।

पुनः ३६४ ईस्वी में एक और लोडेसिया नामी समिति स्थापित हुई जिसने जोडथ के तौरेत और इञ्जील के अतिरिक्त अन्य सात निम्नलिखित पुस्तकें माननीय ठहराईं :—

अतः पुस्तक, याकूब की पत्री, पतरस की पत्री, दाऊद की पत्री, यूहन्ना की पत्री, यहूदा की पत्री और पोलुस इब्रानियों के नाम पत्री। और इस आदेश को स्थान २ पर इश्तहारों द्वारा प्रसिद्ध किया।

पुनः ३९७ ईस्वी में एक और समिति स्थापित हुई जिसको कारथिज कहते हैं जिसमें अगस्टाएन के अतिरिक्त जो बड़ा विद्वान् था—एक सौ छब्बीस अन्य बड़े २ विद्वान् थे। इस समिति ने पहिली समितियों की आज्ञा को स्थिर रखकर अन्य निम्नलिखित सात पुस्तकों सहित इलहामी निश्चितकों व ज़डम की पुस्तक, लूब्यास की पुस्तक, बारूक की पुस्तक, ईकल्ज़ पास्टक्स की पुस्तक, मकाबीस प्रथम और द्वितीय, योहन्ना के मुकाशफात।

इसके पश्चात् अन्य तीन समितियां स्थापित हुईं। जिनको कमेटी तरलो, कमेटी फलोरंस और कमेटी तरनत कहते हैं। इन समितियों ने कमेटी कारथज को स्थिर रखा। अतः यह पुस्तकें बारह सौ वर्षों तक ईसाईयों में मानने योग्य रहीं।

इसके पश्चात् १५३० ईस्वी में प्रोटैस्टेन्ट संप्रदाय स्थापित हुआ। इसने बारूक की पुस्तक, टोबयास की पुस्तक, जोडथ की पुस्तक, वजडम की पुस्तक, एकल्ज़ पास्टक्स की पुस्तक और मकाबीस की दोनों पुस्तकों का खंडन कर दिया गया तथा मिथ्या समझा गया। और अरथ की पुस्तक के कुछ अध्यायों को भी इलहामी बताया गया और उसके सोलह अध्यायों में से अब नौ अध्याय हैं तथा दसवें अध्याय की कुछ आयतों को मानते हैं और शेष सबको कृत्रिम बताते हैं।

(अन्दक निवेदन ज़ील पृ० १७)

किन्तु इनमें से कुछ अब तक कैथुलिक संप्रदाय के निकट इलहामी और मानने योग्य हैं।

लार्डनर फरमाते हैं कि "पीपेश लिखता है कि मती ने इंजील इब्री में लिखी और हर किसी ने अपनी योग्यतानुसार इसका अनुवाद किया।" (कुलियात लार्डनर जिल्द २ पृ० ११६३)

पुनः वही गुणी महोदय लिखते हैं—

"यूसीबीस लिखता है कि पीनटीनस जब हबश (एबीसेनिया) में आया। उसने वहां एक इञ्जील मती का नुसखा (कापी) पाया। जो वहां के लोगों को बरथोला हवारी से पहुंचा था और उस समय उनके पास सुरक्षित था। जीरदम लिखता है कि पीनटीनस उस कापी को वहां से सकंदरिया में लाया जो गुम हो गई।" (देखो जिल्द २ पृष्ठ २१७ जिल्द ४ पृष्ठ ९५)

पुनः वही महोदय फरमाते हैं कि —

"मती ने अपनी इब्री इञ्जील यरोशलम में लिखी थी।" (जिल्द ४ पृष्ठ १६५, १७४, १८७, ४३६, ४४१, ५०१, ५३८)

पुनः वही महोदय फरमाते हैं कि—

"इसी वूड के प्रमाणानुसार इन चारों से मती ने केवल इब्रानी में लिखी और शेष ने यूनानी में।" (जिल्द ५ पृ० १३७)

इञ्जील यूहन्ना

इस के सम्बन्ध में अन्वेषक बरशेंड्र और अस्टाडलन तना अनुजीन सम्प्रदाय जो दूसरी शती में था सहमत होकर कहते हैं कि योहन्ना हवारी की रचना नहीं है। निश्चित सकन्दरिया के विद्यालय के किसी विद्यार्थी ने लिखी है।" (कैथुलिक बरस्ड जिल्द ७ पृ० २०५ सन् १८४४)

दूसरी शती में जब लोगों ने इन्कार किया तो उनके उत्तर में अरन्यूस ने यह नहीं कहा कि पोलीरकाब से मुझे यह सूचना पहुंची है कि यह इञ्जील योहन्ना हवारी की रचना से है। जबकि अरन्यूस होलीकारब का शिष्य है और पोलीकारब योहना हवारी का अनुयायी यदि होता तो उसे अवश्य ज्ञात होता और वह उस को बता देता।

रिसाला अअमाल यह भी इलहामी नहीं। और न इस के सम्बन्ध में ईसाईयों के पास कोई प्रमाण है। कहते हैं कि लूका की रचना है किन्तु लूका इलहामीन था। इस के अतिरिक्त इस पत्रिका को पौलुस और योहन्ना का देखना भी सिद्ध नहीं।

पाठक! कुछ विचार करें। कि यह पुस्तकें, रिसाले और पत्र कब इलहामी ठहराए गए? बहुत से पत्र तो कौन्सल के आदेश से (बलात्) इलहामी और शिष्यों की रचना ठहराए गए। जैसा कि इब्रानीनामा, याकूब नामा, यहूदी नामा, पतरस नामा द्वितीय, योहन्ना की पत्री द्वितीय व तृतीय और योहन्ना के मुकाशफात। यह कौन्सल कारथज ३२७ ईस्वी में हुई थी। किन्तु जब इस कौन्सल ने योहन्ना के मुकाशफात को इलहामी ठहरा के विधान के अन्तर्गत किया था। तब उस ने निम्न पुस्तकों को भी तो इलहामी ठहराया था। जोडथ की पुस्तक, तोबियास की पुस्तक, डरडम की पुस्तक, एकल्ज यासटक्स की पुस्तक और मकाबीस की पुस्तकें। किन्तु इन सब पुस्तकों को आजकल के वर्तमान प्रोटैस्टेन्ट विद्वान् मिथ्या और अनीश्वरीय मानते हैं। तथा इसीलिये अब उन इलानी पत्रियों से निकाल दी हैं और हवारियों (साथ रहने वाले शिष्यों) की रचना नहीं मानी जाती हैं।

शेष रही १३ पौलुस की पत्रियां और एक पतरस की पत्री तथा एक योहना की पत्री। सो उनके लिखने के लिए इलहाम की आवश्यकता नहीं है और न वह कभो इस की घोषणा करते हैं। बस यह सारा का सारा संघात जो अनीश्वरीय और अविश्वसनीय है।

पौलुस की घटनाएं नामी पुस्तक जो बोलेने महोदय ने फ्रांसीसी भाषा में लिखी है। उसके दूसरे अध्याय में लिखा है कि किसी सासटन ने अपनी तफसीर अअ्माल हवारीन जो चतुर्थ शती में लिखे हैं–

वर्णन लिखा है कि बहुत से लोग ऐसे भी हैं जो न पोलुस और न उस के संस्थापक के मत को मानते हैं। और नजारीनी सम्प्रदाय जो कि ईसाई मत के आरम्भ में ही ईसाई हुआ था। यह पौलुस को न मान कर उस की मक्कारी के कारण यह कहता था कि वह वास्तव में मूर्ति पूजक था। जो यरोशलम में आया और वहां पर इस आशा पर ठहरा रहा कि बड़े रखाया यहूदी की कन्या से जिस पर वह आसक्त था अपना विवाह करता। जैसा कि इसी कारण से उसने अपना खतना कराया। किन्तु जब अपनी हार्दिक इच्छा पूर्ति न हुई तो उस ने यहूदियों से झगड़ा किया और खतना, सब्त दिवस आदि बहुत से प्रतिष्ठित धार्मिक विषयों पर यहूदियों के विरुद्ध कहना शुरू किया।)जब्दतुल अकावील पृ० ४१)

अपरिचित ईसाई भाईयों को हम एक विशेष सूचना देते हैं कि इन्हीं इञ्जीलों की भान्ति मसीह के अन्य हवारियों (शिष्यों) की इञ्जील भी थीं। जिनको ज्यों २ बुद्धि आती गई–मिथ्या समझने लगे। बुद्धिमत्ता के सामने लज्जित होते रहे, छोड़ते गए। उन की सम्पूर्ण संख्या यह है :–

बरतोलमा की इञ्जील, तोमा की इञ्जील, पतरस की इञ्जील, योहन्ना को प्रथम इञ्जील, योहना की दूसरी इंजील, इंद्रमा की इंजील, मती की इंजील, फिलिप की इंजील, लूका की इंजील, फिलिप की इञ्जील, याकूब की इञ्जील, मकस की इञ्जील, मीता की इञ्जील, बरन बास की इञ्जील।

किसी समय यह चौदह इञ्जीलें मानी जाती थीं और उन्हीं के इलहामी होने का उपदेश था। किन्तु ज्यूं २ इञ्जीलों की वास्तविकता शिक्षित पार्टी पर प्रगट होती गई, लोग इंजीलों को छोड़ते गए। यहां तक कि केवल आठ सौ वर्ष के अन्दर दस इञ्जीलें छोड़ दी गई हैं। अब केवल चार शेष हैं। किन्तु इन को भी कुछ ईसाई इसलिये कि जब पिता, पुत्र, पवित्रात्मा तीन ईश्वर हैं तो इंजीलें चार क्यों ? तीन होनी चाहिये। जैसा कि अब लूका की इंजील ईसाईयों के मन में खटक रही है। संभवतः साहस करते २ कभी निकाल देंगे। क्यों कि:—

×रासती मूजिबरज़ाए खुदाअस्त।
कस न दीदम कि गुम शुद अजरहे रास्त॥

तामसपीन महोदय फरमाते हैं :—

बाईबल की पहिली पांच पुस्तकों का रचयिता मूसा को कहते हैं। युक्तियों से सिद्ध करता हूं कि उन का लेखक मूसा नहीं है किन्तु मूसा काल में भी लिखी नहीं गई। उसके कई सौ वष बीत जाने के पश्चात् किसी अज्ञानी कहानी कहने वाले ने मूसा के काल का वृत्तान्त लिखा है। जैसा कि इस पत्रिका के ऐतिहासिक सहस्रों वर्ष पूर्व के इतिहास को अनुमान से कहते हैं। यदि उस की गवाही प्राचीन काल के ऐतिहासिकों की पुस्तकों से लिखूं संभवतः कुछ पादरी स्वीकार न करें। जैसा कि मैं उनके लेख पर विश्वास नहीं करता। अतः बाईबल से मैं अपनी बात को सिद्ध करता हूं।

सत्यता ईश्वर की इच्छा का कारण है मैंने किसी को नहीं देखा कि वह सत्यमार्ग से गुम हुआ हो।
(अनुवादक)

मूसा की पुस्तक

ऐतिहासिक विद्वान् हारन महोदय फरमाते हैं कि निम्न विद्वान् अर्थात् अखारन, शल्ज, डातह, रूज़न मिलर और डाक्टर जडस इस बात का कथन करते हैं कि मूसा इलहामी नहीं था किन्तु उसने अपनी पांचों पुस्तकें उस समय की प्रसिद्ध रिवायतों से एकत्र कीं।

(देखो हारन महोदय की पुस्तक जिल्द २ पृष्ठ ७९८, ८१८)

आगे पुन: तामसपीन महोदय अपनी ब्रांच आफ रीजन में लिखते हैं कि प्रथम अच्छे प्रकार से इसका खंडन कर क कि यह मूसा की रचना नहीं वह कहते हैं कि इस पुस्तक को महत्ता इस कारण से मिली कि मूसा की रचना सन्दिग्ध है। जब स्पष्ट ज्ञात हुआ कि उसकी कृति नहीं। यह व्यर्थ का कथानक है। जैसे आदम की स्त्री और सांप से बातों का और नूह की किश्ती (तरणि) के वर्णन से मेरी सम्मति में अलिफ लैला की कथाएं तौरात की कहानियों से अधिक रूचिकर हैं। मनुष्यों की आयु कहीं आठ सौ और कहीं नौ सौ वर्ष लिखी है। जैसे मूर्ति पूजकों ने अपने देवी देवताओं की लिखी है। जब तौरेत के विषय और मूसा के कर्म घृणित हैं तो ऐसी पुस्तक में मूसा की बरबरता, जबर, रक्त पात के अतिरिक्त शुभ कर्मों का कुछ चिह्न नहीं मिलता है।

गशी २१।१३-१८ में लिखा है कि जब यहूदियों की सेना रक्त पात और बरबादी करके लौटी तो मूसा ने आदेश दिया कि जितनी लड़कियां हैं सब का वध करो और जो स्त्रियां पुरुषों से सहवास कर चुकी हैं उनका भी वध करो। किन्तु वह लड़कियां जो कुंवारी युवतियां हैं। उन को अपने लिये जीवित रखो। यदि यह मूसा का आदेश है। तो मूसा से अधिक कामाग्नि के आधीन, क्रोध अत्याचार, मूर्खता में अन्य कोई नहीं। ईश्वर के विधान से कभी ऐसा उचित नहीं हो सकता। और ऐसे कर्म की आज्ञा देने वाला कभी ईश्वर का भक्त नहीं हो सकता।

अशअया की पुस्तक

अन्वेषक व ऐतिहासिक अस्टाबलन जर्मन फरमाता है कि अशाया के ४० अध्याय से ६६ अध्याय तक अशाया की रचना नहीं है। (देखो काकरन महोदय की पत्रिका अंक ३)

सुलैमान की पुस्तक हनरी भाष्य

स्काट की अन्तिम जिल्द में लिखा है कि "आवश्यक नहीं कि प्रत्येक लिखा हुआ पैग़म्बर का इलहामी अथवा कानूनी होवे। यद्यपि सुलैमान ने कई इलहामी पुस्तकें लिखीं किन्तु यह आवश्यक नहीं कि जो उन्होंने इतिहास रूप से लिखा वह भी इलहामी हो और स्मरण रखना चाहिए कि पैग़म्बर और हमारी विशेष प्रयोजन और अवसर के लिये इलहामी किये जाते थे।

डाक्टर कनीकाट फरमाते हैं कि जान बूझकर तहरीफ़ (कांट-छांट तथा अदला बदली या घटा बढ़ी) उन लोगों ने भी की है। जो दीनदार कहलाते थे और उसके पश्चात् उसी तहरीफ को विशेषता दी जाती और स्वीकार्य ठहरती थी। (जिल्द २ पृ० ३३१)

डाक्टर कनीकाट फरमाते हैं कि बाईबल की खोज करने वालों ने जो सामरियों पर तहरीफ का

दोषारोपण किया है। वह दोष यहूदियों पर होना चाहिये। क्योंकि सामरियों का लेख मूल है। और हारन महोदय ने भी इसका समर्थन किया है। (देखो जिल्द २ पृ० १४)

अन्वेषक कनीकाट समवाईल की अध्याय १७ आयत १२ से ३१ तक बीस आयतों को प्रक्षेप मान कर निकाल देने के योग्य मानता है। और यही वर्णन बिशप हारलीसी महोदय ने भी किया है।

(देखो जिल्द १ पृ० ३०२)

बिशप हारसली निम्न स्थानों को भी प्रक्षिप्त मानता है। अर्थात् गिनती (अध्याय २६ आयत ३, ४) यूसीअ् पुस्तक (अध्याय १३ आयत ७, ८, २५)

फिजात पुस्तक (अध्याय १२ आयत ४) और समवाईल (अध्याय ३० आयत २०) और समवाईल २ (अध्याय ४ आयत ६) तथा निम्न स्थानों को प्रक्षिप्त मानता है :—

यूसीअ् पुस्तक (३।१२ १०।१५ और १३।१४) फ़िज़ात (१।१-६)

हारन महोदय फरमाते हैं कि योहन्ना ७।५३ से ८।११ प्राय: विद्वानों को आक्षेप है और वह इसकी सत्यता पर वादविवाद करते हैं। तथा क्रेज़ास्टम, थियोफल कस्ट और तूनुस की व्याख्या में न यह वहीं लिखी गई हैं और न उनकी व्याख्या लिखी गई और यही शिक्षाएं कबीरयूस और तरतोलिया-नस के प्रमाणों में भी नहीं है।"

(हारन महोदय की पुस्तक जिल्द ४ पृ० ३१ लंडन तृतीय वार १८२२ ईस्वी)

मती २७।३५ के सम्बन्ध में हारन महोदय फरमाते हैं कि यह भाषा १८१ यूनानो नुसखों में और अनुवाद सुरयानी, कापटक, सहमाडक, अथोवीक और रूसी के समस्त हस्तलिखित नुसखों में नहीं पाई जाती। और क्रीज़ास्टम, तर्तियूसबसटर, यूथमस, थियोफलक्ट तथा अरेजुन अरन्थूस के पुरातन नुसखों के पुराने अनुवादों और अगस्टाईन तथा जौनकोस के प्रमाणों में भो यह भाषा नहों है। ग्रीसवाख़ ने जो इसको निस्सन्देह कृत्रिम समझकर छोड़ा—अच्छा किया।"

(देखो हारन की जिल्द २ पृ० २३०, २३१)

फ्रीनीतोन प्रथम के १०।२८ की भाषा भी कोडक्स अलगन्डरियानोस और वातीकानोस तथा अन्य बारह नुसख़ों में अन्य कई अनुवादों और प्राय: प्रमाणों में नहीं पाई जाती

(हारन महोदय की जिल्द २ पृ० २२७)

ऐतिहासिक हारन महोदय मती ६।३३ को भी प्रक्षिप्त समझता है।

(विस्तार देखो हारन महोदय की पुस्तक जिल्द २ पृष्ठ ३२७, ३२८, ३३२)

पुन: एक ऐतिहासिक लिखता है कि :—

"जो लोग इस बात को मानते हैं कि पवित्र पुस्तकों की प्रत्येक बात और समस्त निवेदन इल-हामी हैं। वह अपनी प्रतिज्ञा को सरलता से सिद्ध न कर सकेंगे। और यदि अन्वेषणमार्ग से हमसे पूछा जाए कि तुम न्यूटेस्टामेंट के कौन से भागों को इलहामी जानते हो तो हम उत्तर देंगे कि मन्तव्य, आदेश

और भविष्य वाणियां ऐसी वस्तु जो ईस्वीमत के मूल भूत सिद्धान्त हैं। इनसे इलहाम का विचार पृथक् नहीं हो सकता। निवेदनों के लिये हवारियों के स्मृति-पत्र पर्याप्त थे।"

(विस्तार और व्याख्या देखो इन्साईकलोपीडिया ब्रटेनिका जिल्द ११ पृ० ४०)

पुन: लिखा है कि जीरूत, ग्रोटीस, अरासमस, प्रोकोपीस और बहुत से लोग कहते हैं कि पवित्र पुस्तकों की सब पुस्तकें इलहामी नहीं हैं। साईकलोपीडिया जिल्द ११ पृ० २७४) और

(एशिया में हारन महोदय का भाष्य जिल्द १ पृ० २४८ में भी लिखा है)

योहन्ना के मुकाशफात को चार सौ वर्ष तक ईश्वरीय वाणी माना गया क्योंकिजश ऐतिहासिक भी उसको योहन्ना लिखित नहीं जानता और प्रोफेसर आएवाल्ड ने भी बहुत रामच के साथ सिद्ध किया है कि वह योहन्ना की रचना नहीं है किन्तु कुछ पुराने ईसाई तो उसे सर नथस मिलावट करने वालों की रचना बताते हैं। (देखो मुबाहसा (शास्त्रार्थ) पृ० ३३ सन १२७१ ईस्वी)

और यूसीपेवस अपने इतिहास में लिखता है कि कुछ ने हमारे से पूर्व योहना के मुकाशफात की समस्त पुस्तक को इलहाम से पृथक् कर दिया और इसके संबंध में लिखा है कि यह सब निरर्थक और बुद्धिहीनता से युक्त तथा बड़ी भारी अविद्या का परदा है। (जिल्द ७ अध्याय ५)

लूका की इन्जील

जब लूका ने इन्जील का लिखना शुरु किया। वह कहता है कि–

"उसने उन बातों का वृत्तान्त उन लोगों से जो आंख से देखने वाले थे सुनकर लिखा। और इसलिये कि वह सब बातों से परिचित था। उसने उचित समझा कि वह बातें पिछली आने वाली पीढ़ियों को पहुंचा दे। (लूका १।१-४) और देखो (इंजील लूका सन् १८७० ईस्वी मिरज़ापुर पृ० ७१) और देखो (डाक्टर वाटसन की जिल्द ४ रिसाला इलहाम)

ऐतिहासिक अरनीसूस महोदय कहता है कि "वह बातें जो लूका ने हवारियों से सीखी थीं–हमें पहुंचाई।"

ऐतिहासिक जीरूम लिखता है—

लूका ने केवल पौलुस से प्रत्युत अन्य हवारियों से भी इंजील की शिक्षा पायी है।

पुन: वही ऐतिहासिक लिखता है कि पौलुस ने बहुत बातें अनीश्वरीय कहीं जो वर्तमान इलहामी पुस्तकों में लिखी हैं जैसे कि निम्न स्थानों को ध्यान से देखो :–

तमताऊस पत्री ५।३३। पत्री तमताऊस २।४-१३ फलीमूं पत्री आयत ३४। और पत्री तमताऊस २।४-२०। अकरन्तियों की पत्री ७।१० ७।१२ ७।२५,२६। और अअ्माल ६।६,७ २३।३,५। और रूमियों के नाम पत्र १५।२४,२८। और पत्र अकरन्तियों १६।५.६,८। और पत्र अकरन्तियो २ ११।१-१८ तक। (देखो वानस महोदय की जिल्द ४ रिसाला इलहाम)

जियोन्गलीसन कहता है कि :—

"पौलुस की पत्रियों में सब पवित्र वाणी नहीं है। इसने कुछ बातों में भूल की है।"

श्री फलक महोदय कहते हैं कि :—

"पतरस हवारी ने प्राय: इन्जील के संबंध में भूल और मूर्खता की है।

डाक्टर कोड महोदय अपनी तुस्तक "मुबाहिसा" (शास्त्रार्थ) में जो फादर गनीनपेन से हुआ था कहता है कि :—

"पतरस ने पवित्रात्मा के उतरने के पश्चात् ईमान में भूल की है।

विद्वान् परनीशश महोदय फरमाते हैं कि—

"हवारियों के सरदार पतरस ने और बरबियाह ने भी पवित्रात्मा के उतरने के पश्चात् व ली-सिया सहित यरोशलम की भूल खाई।

वाई टेकर महोदय कहते हैं कि—

मसीह के आसमान पर चढ़ने तथा पवित्रात्मा उतरने के पश्चात् सब कलीसिया ने भूल की। न केवल सर्वसाधारण ने किन्तु विशेषों ने भी और हवारियों ने भी इसराईलियों से भिन्न लोगों को मसीह मत की ओर से सम्मिलित होने का निमंत्रण दिया और पतरस ने रीतियों में और भी भूल की है। और यह भूल हवारियों से पवित्रात्मा के उतरने के पश्चात् हुई है।"

अन्वेषक यासवेर और लियाकन कहते हैं कि कुछ ऐसी बातें हैं जिनमें इलहाम की आवश्यकता भी नहीं। जैसे जब उन लोगों ने अपनी आंखों से देखकर अथवा थीमर गवाहों से सुनकर लिखा।

—०—

अष्टम अध्याय

ईस्वी घटनाएं

जिस प्रकार हम अन्य इतिहासों में उत्पत्ति आदि का यथार्थ वर्णन न मिलने और उस समय के किसी ऐतिहासिक का लेख प्राप्त न होने से घटनाओं पर पूरा विश्वास नहीं कर सकते। वही बात मसीह और इञ्जील की है। चारों इञ्जीलों में परस्पर विरोध है। जिन का थोड़ा सा वृत्तान्त हम अन्त में प्रगट करेंगे।

मिस्टर तामसपेन महोदय अपने रिसाला एच आफ रीजन में लिखते हैं कि मरियम ने कहा कि वह पुरुष के सहवास के बिना गर्भवती हुई और उस के पति यूसुफ से फरिश्ता ने गवाह के रूप में कहा। हम यूसुफ और मरियम के तर्क शून्य वचन पर किस युक्ति से विश्वास करें। मरियम से यूसुफ ने कोई पुस्तक नहीं लिखी और न उस युग के किसी ऐतिहासिक ने ऐसी विचित्र घटना को लिखा। जिन व्यक्तियों ने एक दूसरे से सुन के कहा। मैं ऐसा निर्बुद्धि नहीं जो निर्मूल बचन पर ईमान लाऊं।

(रिसाला अजर राह यजदां पृष्ठ ६४५)

स्पष्ट हो कि महाराजा युधिष्ठिर से ३१०० वर्ष और महाराजा विक्रम से ५७ वर्ष पश्चात् यूसुफ नाम एक तर (१) खान (बढ़ई) (२) नासिरत नगर, प्रान्त जलील देश रूमयें रहता था। उस का मरियम आमी एक युवती बालिग स्त्री से विवाह हुआ। किन्तु वहाँ पहिले अवसर पर ही जैसा कि प्राय: होता है—अपने पति से गर्भवती हो गई। (ईसाईयों ने यद्यपि इस विवाह को सगाई लिखा है किन्तु हम इसलिए उस को विवाह कहते हैं कि उसके पश्चात् कोई विवाह नहीं हुआ। अन्यथा अवश्य लिखते) जब जनगणना की रसम के लिये यूसुफ स्वपत्नी सहित बैतलहम गया तो रात्रि एक तवेला में रहे और वहीं यसूअ लड़का उत्पन्न हुआ। आठ दिन के पश्चात् मसीह का यहूदी शरीअत के अनुसार खतना हुआ।

यूसुफ को बादशाह की ओर से कुछ भय हुआ। इस लिये वह लड़के और अपनी पत्नी को लेकर गधे पर चढ़ कर मिश्र को भाग गया। जब तक हीरोडेस जीवित रहा। वहीं मिश्र में रहे। (किन्तु ज्ञात नहीं कितने वर्ष तक) उसके मरने के पश्चात् माता पिता के साथ यसूअ अपने पुरातन देश को लौट आया। और तराथ में जाकर अपने पिता यूसुफ के साथ बढ़ई का कार्य करता रहा। बारह वर्ष की आयु में वह एक बार यरोशलम के मन्दिर में भूल कर तीन दिन रह भी गया था। जैसे प्राय: अल्पायु बालक मेलों में भूल जाया करते हैं। अठाईस वर्ष तक मसीह तराथ में माता पिता के आधीन बढ़ई का कार्य करता रहा। इस के अतिरिक्त और किसी प्रकार का वृत्तान्त इञ्जीलों से नहीं मिल सकता।

---

(१) मती १०।१-४ (२) योहन्ना ११।५१

किन्तु एक ऐतिहासिक कहता है–कि "हजरत मसीह लिखना पढ़ना जानते थे। उन्होंने कसबा नासिरा के स्कूल में बाईबल की शिक्षा पाई थी।"

(देखोडीन मलमीन महोदय का कलीसिया इतिहास जिल्द १ अध्याय ३)

पुन: २८ अथवा ३० वर्ष की आयु में चालीस दिन तक एक व्यक्ति से (जिसको इञ्जीलों के लेखक शैतान कह कर पुकारते हैं) शिक्षा प्राप्त करता रहा। (मती ४।१-११)

उस की ३० वर्ष की जीवनी का वृत्तान्त मिश्रियों के अतिरिक्त किसी को ज्ञात नहीं। संभवत: ऐसे ज्ञात होता है और यही वस्तुत: ठीक है कि कुछ बुद्धमत के विद्वान् जिन दिनों मसीह मिश्र में था प्रचार करने सिकंदरिया में गए थे और वहां उन्होंने कई वर्ष तक बुद्धमत का प्रचार किया। मसीह कई वर्षों तक उनके उपदेश सुनता रहा। जिस का परिणाम यह हुआ कि मिश्र से अपने देश में लौट कर वही शब्द अपने मुखारविन्द से नूतन मत स्थापित करने के विचार से कहने शुरू किये। और यह केवल हमारा विचार ही नहीं किन्तु एक प्रसिद्ध सुपरिचित योरुपियन विद्वान् मिस्टर आर्थ लिल्ली महोदय ने इसी विषय पर एक पुस्तक लिखी है कि "ईसाईयत बुद्धमत से निकली है।"

एक और व्यक्ति योहन्ना नाम की भी मसीह ने शिष्यता स्वीकार की और उस से बपतस्मा पाया। बारह शिष्य नियत किये शमऊन जो पतरस कहलाता था। इन्द्रयास शमऊन का भाई, याकूब जब्दी का बेटा, योहन्ना याकूब का भाई, फ़ेबलूस, बिर थोलमा, धोमा, मती महसूल लेने वाला, याकूब हलफा का बेटा, लबी जो ठडो भी कहलाता था, शमऊन कनआनी, यहूदा अस कर्यूती।

इञ्जील से ज्ञात होता है कि वह कभी खुदा को अपना बाप और अपने आप को खुदा का बेटा कहता था ' कभी २ इस देश के वेदान्तियों अथवा सूफी मुसलमानों की भान्ति अपने आप को खुदा कह दिया करता था। जिस प्रकार मुहम्मदियों ने तथा मुहम्मद साहिब के अन्व मतावलंबियों ने अपने सम्प्रदाय के प्रवर्तकों के चमत्कार प्रसिद्ध कर रखे हैं वही वृत्तान्त ईसाईयों का है।

इस समय के बादशाह के इतिहास में मसीह का कोई चमत्कार नहीं लिखा। समस्त यहूदी भी इन्कारी हैं। उस के सौ वर्ष मरने के पश्चात् स्वयं मसीह ने नहीं किन्तु उस के शुभेच्छु शिष्यों ने पीरां नमे परंद मुरीदां में परानंद"+ के विचार से मसीह के वृत्तान्त को उपास्यदेव की रंगतें चढ़ा कर लेख बद्ध किया!

मसीह ने समस्त दो अथवा चार वर्ष प्रचार व उपदेश किया। किन्तु यह समय भी यथार्थरूपेण इञ्जीलों में नहीं लिखा। उसके दो वर्षीय उपदेश से ही लोग बहुत दुःखी हो गए। जैसा कि लिखा है कि "वह लोगों को बहुत दु:ख देता था।" (योहन्ना २।१३-१७)

जब यह शिकायत अधिक हो गई तब यहूदियों के काहनों और करीसों ने सभा बुलाई कि हम सुना करते हैं कि यह व्यक्ति लोगों को हमारे मजहब का अपमान करता है। एक व्यक्ति का जाति के बदले में मरना अच्छा है। न कि सारी जाति मरे।

+पीर नहीं उड़ते मुरीद (शिष्य) उड़ाया करते हैं।

+यके बेह दर आतिश कि खलके बदाग़ ।

कपाफा नाम सरदार काहन ने यह अपनी ओर से न कहा । किन्तु इस कारण से उस वर्ष वह सरदार काहन था । यह उसने भविष्य वाणी की । अर्थात् यह व्यवस्था उसने इलहाम से दी ।

स्वयं उस के प्रिय शिष्य यहूदा असकर यूती ने पकड़वा दिया । और मुफ्त नहीं । किन्तु तीस रुपये के पारिताषिक के लोभ से पकड़वाया । क्योंकि मसीह के पकड़ने के लिये उस देश के बादशाह ने तीस रुपये का पारितोषिक घोषित किया था ।

जब यसूअ पकड़ा जाकर न्यायालय के सम्मुख लाया गया । प्रथम तो इन्कार करने के लिये बहुत यत्न किया । लिखा है कि उत्तर मांगते समय मसीह मौन रहा । किन्तु अन्त में उसने उत्तर दिया । जिस पर सरदार काहन ने (जो एक इलहामी सच्चा नबी था) वस्त्र फाड़ कर कहा कि यह कुफ्र कह चुका । अब हमें अन्य गवाह की क्या आवश्यकता ? तुमने आप इस का कुफ्र सुना । अब तुम्हारी क्या सम्मति ? उन्होंने उत्तर में कहा कि वह वध के योग्य है । तब उन्होंने उसके अर्थात् मसीह के मुख पर थूका उसे घूंसा मारा और दूसरों ने उसे तमाँचा मार कर कहा—बता तुझे किस ने मारा ? पकड़े जाने से पूर्व खुदा के आगे बड़ी प्रार्थना करता रहा किन्तु एक भी स्वीकार न हुई । हर बार रोता रहा किन्तु न सुना गया । पकड़े जाने के पश्चात् शिष्यों ने शिष्यता से इन्कार कर दिया । किन्तु एक ने तो मसीह पर लाअनत भेजी । ✓

जैसा कि विद्वान् अन्वेषक गाडफ्रीहगनीस महोदय फरमाते हैं कि :—

"ईसा के मुख्य शिष्यों के न्यून प्रेम में मौशीम महोदय ईस्वी मत की विशेषता समझते हैं। किन्तु सत्य पूछो तो मैं बाधित होकर कहता हूं कि यदि लाक, न्यूटन जैसे व्यक्ति ईस्वी मत के मुख्य अन्वेषकों में से होते तो मुझ को भी पूर्णसन्तोष वैसा ही होता ।"

(देखो उन की अपालोजी वाक्य १८)

पुन: वही ऐतिहासिक लिखते हैं—

"जब ईसा को सूली पर ले गए तो उस के अनुयाई भाग गए और अपने पूज्य को मृत्यु पाश में छोड़ कर चल दिये । यदि मान लिया जाए उस को रक्षा करने का उन को निषेध था तो उसकी सान्त्वना के लिये तो विद्यमान रहते । और मन से उसके कष्ट देने वालों को धमकाते ।"

(देखो वाक्य १२३)

सरविलियमम्यूज महोदय फरमाते हैं :—

"मसीह के समस्त अनुयाई भय की आहट प्रतीत होते ही भाग गए और हमारे खुदावन्द की शिक्षा ने इन पाँच सौ मनुष्यों के मन पर जिन्होंने उनको देखा था—चाहे कितना ही गहरा प्रभाव डाला हो किन्तु प्रत्यक्षत: इसका परिणाम कुछ दिखाई नहीं दिया ।" (लाईफ आफ मुहम्मद जिल्द २)

+एक ही को अग्नि में डालना अच्छा जो प्राणियों को जलावे ।

✓मती १०।१-४ योहना ११।५१ मती २६।४८-५० २६।६५-६८ २६।६३ २६।७४ २६।६५-६८ २२।३६-४५ लूका २२।४२ मरकस १४।२६ १४।७१ लूका २२।५६

ऐतिहासिक डीन मलमीन महोदय फरमाते हैं कि "हवारियों से जो कमजोर विश्वास और स्थैर्याभाव प्रगट हुआ, वह स्वयं हजरत मसीह के वचन व्याघात का फल है।"

(देखो कलीसिया का इतिहास जिल्द १)

अन्ततः पलातूस ने पकड़ कर उसे कोड़े मारे। सिपाहियों ने काँटों का टोप उस के सिर पर रखा और उसे तमाँचे मारे और उसी वेश में उसे बाहिर लाए। (१) पित्त मिला हुआ सिरका उसे पीने को दिया। उस ने चख कर न चाहा कि उसे पिये। अन्ततः उसे सलीब पर खेंच कर उसके वस्त्रों को बांट लिया। दो चोर भी उसके साथ फांसी दिये गये। एक दक्षिण दूसरा वाम आते जाते लोग उसे लज्जित करते थे। सब लोग उस से उपहास करते थे कि यदि तू खुदा का बेटा है तो सलीब पर से उतर आ, और यह भी कहते थे कि यह लोगों को बचाने आया था किन्तु अपने आप को न बचा सका। यदि इसराईल का बादशाह है तो अब सलीब पर से उतर आवे जिस से हम इस पर ईमान लावें। इसी प्रकार वह चोर भी उसका उपहास करते थे।

नवमें घंटा के लगभग यसूअ ने बड़े जोर से चिल्ला कर कहा—

"एली एली लिमा सबकतनी"

अनुवाद—ऐ खुदा! ऐ खुदा!! तू ने मुझ को क्यों भुला दिया। यह कहते हुए प्राण दे दिये। लाश नियमानुसार क़बर में रखी गई और तसलीस की समाप्ति हुई।

किन्तु ईसाई इन सब बातों के होते भी कहते हैं कि वह तो सारे दिन मृतकों से उठ खड़ा हुआ और शिष्यों को दृष्टिगत हुआ। आसमान पर जाकर खुदा के दक्षिण हस्त जा बैठा किन्तु ईसाईयों का यह कथन कई कारणों से मिथ्या है।

पहिला कारण यह है कि जितने इस बात के गवाह हैं। उन में से एक भी ईमानदार नहीं। यहूदी मानते नहीं बादशाह नहीं मानता। स्वयं शिष्य दुबदे में (संशय में) रहे।

दूसरा कारण—यह कि इस प्रकार की बातें बुद्धि से किसी प्रकार सिद्ध नहीं हो सकती हैं। क्यों कि इस समय विज्ञान से अच्छी प्रकार सिद्ध हो गया है कि आसमान कोई वस्तु नहीं। और न कोई सत्य प्रेमी मानता है कि खुदा आसमान पर बैठा है। पुनः मसीह का पहिले मृतकों से जीवित होना दूसरा आसमान पर चढ़ जाना, तीसरा खुदा के दक्षिण हस्त बैठना प्रत्येक प्रकार से मिथ्या है।

जिस प्रकार सर्वसाधारण नानकपंथी और कबीर पंथी नानक जी और कबीर जी का मरना नहीं मानते। किन्तु लाश का गुम हो जाना मानते हैं। किन्तु समस्त ईसाई उनको झूठ समझते हैं। कारण यह कि मुरदा जीवित नहीं हो सकता। पस हमारा यही उत्तर मसीह के संबंध में पर्याप्त है। वास्तव में बात यह है कि जो संसार में आए जिन्होंने जन्म धारण किया, वह सब अपने नियत समय के पश्चात् मर गए और मर जाएंगे। मट्टी में मिल गए और मिल जाएंगे। स्वयं बाबा नानक जी ने कहा है—

इस संसार में स्थिर नहीं (रेहसी कोई):

राम गया, रावण गया जा के भयो परिवार।
कहो नानक स्थिर कुछ नहीं, सपने ज्यूं संसार॥

...(१) मती २७।३४-३६ लूका २३।३४

कोई शारीरिक वस्तु शेष नहीं रह सकती। अतः मसीह का शरीर भी नश्वर था और यहां ही नश्वर हुआ। जीवात्मा नित्य था वह कर्मानुसार दूसरे स्थान पर चला गया अतः इन सारी बातों की करामातों (चमत्कारों) के हरे उद्यान मूर्खों के फुसलाने और बहकाने के लिये हैं। वास्तव में बात यही है कि वह फांसी पाकर मारा गया। पुनः उतार कर भूमि में गाढ़ा गया। जिस प्रकार मूसा मर गया गाढ़ा गया। किन्तु उसकी कबर किसी को ज्ञात नहीं क्योंकि लिखा है :—

"और उसने उसे मूआब की एक वादी (मैदान) में बैतफजूर के सामने गाढ़ा किन्तु आज के दिन तक कोई उसकी कबर को नहीं जानता।" (इसतिस्ना ३४।६)

इसी प्रकार मसीह ५३ वर्ष की आयु में सलीब पर चढ़ा कर मारा गया और फिर गाढ़ा गया। किन्तु शिष्यों की चतुराई के कारण उस की कबर कोई नहीं जानता। वास्तव में ऊंची कबर नहीं बनाई गई थी। केवल यहूदियों में करामात (चमत्कार) दिखाने के लिये कहीं गुमनाम दफन कर गए। सिद्ध कर दिया कि—

"पीरां न मे परन्द मगर मुरीदां मे परानंद।×

मजहबी हतक तो एक बहाना हो गई थी अन्यथा वह बादशाह के विरुद्ध साजिश करना चाहता था। उस का स्ववचन है कि मैं संसार में तलवार चलाने आया हूं।" बादशाही का इच्छुक था। बलवा करना चाहता था। संसार में युद्ध को अग्नि लगाना चाहता था। शिष्यों से कहता था कि वस्त्र बेचकर भी हथियार खरीद लो। इसी विचार पर पोलीस ने पकड़वा कर फांसी चढ़वा दिया और दो कैदी भी उसके साथ लटकाए गए। लिखा है कि "जो सलीब पर लटकाया गया वह लानती है, जो लानती है वह सदैव के जहन्नम में रहेगा।"

प्रिय पाठक वृन्द ? पढ़ो और ईश्वर के नाम पर विचार करो कि क्या ऐसे मनुष्य का जीवन तुम्हें कोई भी उत्तम शिक्षा दे सकता है ?

इंजीलों के कुछ ऐतिहासिक मतभेद

(१) यूहन्ना बपतस्मा देने वाले ने मसीह को पहचाना कि यह मसीह है। (योहन्ना ११।२८)
योहन्ना ने न पहचाना। (मती ११।२-३)

(२) योहन्ना बपतस्मा देने वाला अलयास था (मती ११।१४)
योहन्ना अलयास न था। (योहन्ना ११।२१)

(३) सलह का पिता अरफ़कसद था (पैदायश ११।१२)
सलह का कन्यान और वह अरफकसद का बेटा था। (लूका ३।२, ६)

(४) मसीह को जब वह बच्चा था, मिश्र ले गए। (मती)
यसूअ को मिश्र में नहीं ले गए। (लूका २।७-२२' ३६ २।३-१५, १६, २३)

×पीर नहीं उड़ते, किन्तु मुरीद उडाया करते हैं।

(५) बपतस्मा पाने के पश्चात् चालीस दिन जंगल में शैतान से आजमाया गया।
(मरकस १।६, १२, १३)

बपतस्मा पाने से तीसरे दिन मसीह जलील में एक विवाह में ग्यारह शिष्यों के साथ।
(योहन्ना १।३२ २।१)

(६) दो अन्धों ने दुआ मांगी। (मती ३।३०)
एक अन्धे ने दुआ मांगी। (लूका १८।३५)

(७) मसीह तीसरे घंटे सलीब दिया गया। (मरकस १५।२५)
छटे घंटे के समीप तक सलीब पर नहीं दिया। (योहन्ना १६।१४)

(८) दो चारों ने मसीह को लज्जित किया।
एक ने मसीह पर मलामतकी। (लूका २३।३९) (मती २७।४४) (मरकस १५।३२)

(९) यहूदा ने तीस रुपये वापिस लौटा दिये। (अअ़माल १११८)
नहीं लौटाए किन्तु अपने पास रखे। (मती २७।२)

(१०) यहूदा ने अपने आप को फांसी दी। (मती १७।५)
नहीं किन्तु वह ऊंधे मुख गिरा। उसका पेट फट गया। फांसी से नहीं मरा।
(आमाल १।१८)

(११) यहूदा ने कुम्हार का खेत ख़रीदा। (अअ़माल १।१८)
सरदार काहनों ने उसके मरने के पश्चात् ख़रीदा। (मती २७।६, ७)

(१२) केवल एक स्त्री मसीह की कबर पर आई। (योहन्ना २०।१)
दो स्त्रियां कबर पर आईं। (मती २८।१)
तीन स्त्रियां कबर पर आईं। (मरकस १६।१)
बहुत स्त्रियां थीं। (लूका २४।१०)

(१३) दो फरिश्ते खड़े हुए कबर पर देखे। (लूका २४।३) (योहन्ना २०।१०, ११)
केवल एक फरिश्ता देखा और वह भी बैठा हुआ।
(मती २८।२, ३) (मरकस १६।५)

(१४) स्त्रियों ने उस के शिष्यों को सूचना दी थी। (मती २८।८) (लूका २४।९)
स्त्रियों ने इन को सूचना नहीं दी। (मरकस १६।८)

(१५) फरिश्तों के आने से पूर्व ही पतरस और योहन्ना देख गए।
(योहन्ना २०।३, ६, १०, १२)

दो नहीं किन्तु केवल अकेला गया। (पतरस)
किन्तु फरिश्तों के आने से पीछे। (लूका २४।४, ८, १२)

(१६) केवल मरियम मेगडलिया को ही मसीह दृष्टि गत हुआ।
(मरकस १६।६) (योहन्ना २०।१४)

दोनों मरियमों को दृष्टिगत हुआ। (मती २८।६)

दोनों में से किसी को दृष्टिगत नहीं हुआ। (लूका २४।१, ११)

(१७) मसीह तीन दिन और तीन रात कबर में रहा। (मती १२।४०)

केवल दो दिन और दो रात कबर में रहा। (मरकस १५।४२. ४७ १६।६)

(१८) मसीह जैतून के पर्वत से उठाया गया। (अग्रमाल १।६, १२)

मसीह बैतईना से उठाया गया। (लूका २४।५,५१)

इन दोनों स्थानों से नहीं उठाया गया (मरकस १६।१४-१६)

यह अठारह मतभेद इञ्जीलों से हम ने उसकी ऐतिहासिक घटनाओं के संबंध में स्पष्ट रूपेण पादरी महोदयों के सम्मुख उपस्थित किये हैं।

गरकबूल उफतद। जहे इज्ज़ो शर्फ॥

दूसरा— मसीह का अरब में अवतार

कृश्चन समाचार पत्र लिखता है कि-

अरब में एक झूठा मसीह और उत्पन्न हुआ है। बहुत से यहूदी उसके साथ हैं। यह व्यक्ति बहुत बड़ा शिक्षित और धैर्यवान् है। यहूदी कहते हैं कि हमारा यहूदी सहायक है और इसी की हमें आशा है। उस की रक्षा के लिए इब्रानी युवकों की गार्ड स्थापित हुई जो प्रत्येक समय चौकी पहरा रखते हैं। ("तोहफाएहिन्द" जिल्द २ अंक ४६ पृ०४)

तीसरा—मसीह का अमरीका में अवतार

यूनाइटिड स्टेट अमरीका में लिबर्टी नगर के दक्षिण में सवाना स्थान से चालीस मील की दूरी पर कुछ विचित्र बातें उपस्थित हैं वहां के हबशी लोगों ने अपने गिरोह छोड़ दिये। खेती अपने पशुओं को चरा दी। अपने खेतों और कार्यों को छोड़ कर एक कृत्रिम मसीह के गिर्द एकत्र हो रहे हैं जो उनको प्रतिदिन उपदेश करता है। इन नवीन मुरीदों के हृदय में मज़हबी जोश इतना बलशाली है कि वहां सदाचार तथा समाज संबंधी एक विचित्र प्रभाव पड़ रहा है। इन हज़रत का आदेश प्राप्त करके स्त्रियां अपने पतियों को छोड़ कर, लड़के अपने माता से भाग कर और प्रायः स्थानों पर वंश के वंश अपना घर बार छोड़ कर इनके साथ हो लिए हैं। इसका आदेश है कि छे अगस्त शुक्रवार के दिन उत्तर की ओर कनआ़न की तय्यारी है। इस अन्तर में रोजा और नमाज से निवृत होकर समुद्यत रहना चाहिये। यह गोरा रूप का है। आयु पैंतीस चालीसके मध्य होगी। लंबाई मध्यम और शरीर की बनावट बलिष्ठ है। उनके स्थूल शरीर नाम क्रीटो मरारथ है और सूक्ष्म शरीर का नाम मसीह है। सिरसे लंबे लंबे बाल लटक रहे हैं जो बहुत बड़े और सुन्दर हैं। चार सौ पचास से अधिक स्त्री पुरुष और बच्चे उसके स्वीकृत हो चुके हैं और उसके साथ रहते हैं। उसके गिरोह में स्त्रियां अधिक हैं। वहां के मूल निवासी

तो उस पर पूरा २ ईमान लाए हुए हैं और केवल यह चार सौ व्यक्ति नहीं जो इसको मान रहे हैं। इस के प्रगट होने से दो सप्ताह तक हबशी ईसाई पादरियों ने लोगों को बहुत रोकने का यत्न किया कि उस की न सुनें। अन्ततः बाधित होकर कि उनकी कोई नहीं मानता था, उन्होंने अन्य गोरे साहब लोगों की सहायता लेनी चाही और इन लोगों ने भी इस विषय में विशेष ध्यान प्रगट किया। क्योंकि मजदूरी महंगी हो चुकी थी जिससे उनकी ही हानि थी। अन्त में परस्पर यह निर्णय हुआ कि इनको पकड़ लेना चाहिए और अस्टापल्स नामी एक देशी पादरी को तिरोहित स्वीकृति पर कि वह खाना बदोश है उसके पकड़ने के लिये समन जारी कर दिये गए और कर्नल नारोड अभियान संचालनार्थ नियत किये गये।

मजहबी जोश फैलने का भय था। किन्तु अरथ अर्थात् मसीह ने अपने साथियों से कहा कि कोई चिन्ता मत करो यह मेरी भविष्यवाणी है कि मैं पकड़ा जाऊंगा। किन्तु मुझको कोई हानि नहीं पहुंचा सकता।

इन महोदय के थोड़े से इंगित पर संभव था कि पकड़ने वाले अधिकारियों के खंड २ हो जाते। किन्तु इच्छा से पकड़े जाकर चले गये और उस स्थान तक जहां उन पर अभियोग चलेगा। बेचारे को कोई बारह मील पैदल जून के सूर्य की धूप में जाना पड़ा। तीन सौ के लगभग स्त्री पुरुष उनके साथ थे। इनमें से आधे सर्वथा सशस्त्र थे। बहुत सी स्त्रियों के पास बन्दूकें आदि थीं। जबकि मसीह को मजिस्ट्रेट के सामने खड़ा किया गया। उन्होंने कुछ डालर के सिक्के पेश किये खाना बदोशी अर्थात् अपना पालन पोषण आप नहीं कर सकता है यह दोष लगा कर डिसमिस कर दिया। उसी समय दूसरा समन जारी किया गया कि वह पागल है। विधानतः दस दिन की पड़ताल आवश्यक थी। एक दिन वह दुगने जत्थे के साथ पधारे। करनल नार्ड ने बड़े दीर्घ और कठोर बयान उनसे लिये। बाहिर उनके साथ का गिरोह यह चिल्लाता रहा कि हमारे क्राईस्ट को ले लिया है। कोई व्यक्ति हमारे ईसा को मारना चाहता है किन्तु यह असंभव है। अरथ ने बताया कि वह पहिले पस्टरी वली अधीन में रहते थे। उस के इंजील के ज्ञान ने अदालत ज्योरी और तमाशा देखने वालों को आश्चर्य चकित कर दिया। नारवुड ने कहा कि यदि तुम मसीह हो तो कोई चमत्कार दिखाओ। उसका उत्तर यह मिला कि शैतान को मेरे पीछे लगाते हो। मैं तुम्हारे फिसलाने में नहीं आऊंगा तुम्हारे ऊपर पागलपन का जुर्म लगाया गया है। अतः यदि ज्यूरी की सन्मति में सिद्ध हुआ तो तुम पागल खाने में भेजे जाओगे। वकील से कहा कि अपने नाखून दिखाओ और सिद्ध करो कि तुम वही ईसा हो जिन को सूली दी गई थी। मसीह ने उत्तर दिया कि यह शरीर का स्वभाव है जो देखते हो कि बदल जाता है और गल सड़ जाता है। यह वह शरीर नहीं जो इससे बांधा गया था। यद्यपि आत्मा मेरे में वही है जो फांसी पर लटकाई गई थी। यही आत्मा प्रत्येक शरीर में है।

(प्रश्न) क्या यह जार्ज वाशिंगटन में थी ?

(उत्तर) निस्सन्देह इब्राहिम लिंकन में भी।

(प्रश्न) क्या वह जफरस डेविस में भी थी ?

(उत्तर) वह थी।

इन मसीह महोदय को बहुत प्रकार से चक्कर दिया गया किन्तु चमत्कार दिखाने के चक्कर में नहीं फंसे। उन्होंने पानी को शराब बनाना इस कारण से स्वीकार नहीं किया कि नशा वाली वस्तु के

बनाने की आज्ञा लेनी पड़ती है। एक वार मैंने यह कहा था किन्तु लोगों ने मेरी इच्छा को सर्वथा दबा दिया।

एक व्यक्ति ने कहा कि मैं तंबाकू चबाता हूं। यदि आप मेरे हाथ को रोक दें तो मैं और ज्यूरी आपको ईसा मान लेंगे। उसने कहा कि मुझे कोई प्रयोजन नहीं कि तुम तंबाकू चबाओ या न चबाओ। मैं तुम्हें जीवन के लिये कुछ नहीं रोकना चाहता हूं।

कमीशन ने आज्ञा पास करदी कि निस्संदेह यह पागल है। एक सरकारी पागलखाना में भेज दिया जावे। उस पागलखाना में आजकल इतनी अधिकता थी कि वहां के सुप्रिन्टेन्डेन्ट ने लेने से इन्कार कर दिया। लिबरटी काउन्टी में जेलखाना नहीं है और यदि वहां रखा जाना है तो राष्ट्र पर अधिक व्यय पड़ेगा, अतः वह पागल छोड़ दिया गया। जब तक उस नगर के जज लोग कोई विधि स्वीकार न करें। अब पुनः वह उपदेश करता है और उसके छूट जाने से वहां के लोगों को अब पवित्र कुदरत का पूर्ण विश्वास हो गया और मजहबी जोश अधिक कठोरता से फैल रहा है।"

(आर्य पत्रिका बरेली पृष्ठ ३ से ५ तक)

अमरीका के प्रसिद्ध जाने हुए विद्वान् पुकीप्सी श्री ए. जे. डे. विस महोदय फरमाते हैं कि—

ऐ पति पर्वत और धरती के।
ऐ मालिक मेंह और आँधी के॥

फूल चमन में खिलाने वाले।
तीतरियों के लुभाने वाले॥

अंध्यारे और उजाले के।
मालिक गोरे और काले के॥

दया से अपनी शान्ति दीजिये।
मन की चंचलता हर लीजिये॥

तेरे पतिव्रत धर्म से हर दम।
सब के सब सन्तुष्ट रहे हम॥

भक्ति में तेरा चित्त लगाएं।
आपस में भी प्रेम बढ़ाएं॥

भाई को भाई दिल से चाहे।
मरते दम तक प्रीत निभाए॥

पौराणिक से फन्दे टूटें।
रागो द्वेष के धन्धे छूटें॥

तेरी मदद से हो कर स्वतन्त्र।
सब हूं निज आदेश पे तत्पर॥

शुद्ध हृदय हों सब के ऐसे।
सत् धर्म पुरुषार्थ सूझें॥

मुझे एक आग दृष्टिगत होती है जो विश्वव्यापी है। अर्थात् असीम प्रेम और मुहब्बत की आग जो घृणा और द्वेष को जलाती है। और जो प्रत्येक वस्तु को जलाकर पवित्र कर रही है।

अमरीका के चटियल मैदानों, अफरीका के विस्तृत देशों, एशिया के पुरातन पर्वतों, और योरुप के विशाल राष्ट्रों पर मुझे इस उज्ज्वल और सर्वकार्यसाधक अग्नि के भड़कते हुए शोले दिखाई देते हैं। इसकी चर्चा सभी प्रकार से हुए स्थानों से आरंभ हुई है।

अपने आराम और उन्नति के लिये मनुष्य ने अग्नि को स्वयं प्रज्वलित किया है। भूमंडल पर मनुष्य की ऐसी सृष्टि है जो आग को जलाकर उसे शक्ति देकर सनातन जीवन दे सकती है।

क्योंकि भूमि के प्राणियों में बोलने वाला बुद्धिमान् भी यही है। इस हेतु से अपने निवासस्थलों में नारकीय अग्नि भड़काने को सबसे आगे है। प्रोनीथश को भान्ति नारकोय स्थानों को मुहब्बत से पवित्र और बुद्धि से तेजस्विता लाने वाली ईश्वरीय ज्योतिर्मयी आग लाने के लिए भी यही सबसे आगे है।

इस असीम आग को देखकर जो निश्चयपूर्वक बादशाहतों, शाहन्शाहों, राष्ट्रों और राजा महाराजाओं तथा संसार भर की राजनैतिक बुराईयों को पिघला डालेगी।

मैं अत्यधिक आनन्दित होकर एक फड़कते जोश का व्यतीत कर रहा हूं। सब ऊंचे-ऊंचे पर्वत जल उठेंगे। घाटियों के सौन्दर्यदर्शी नगर भून जाएंगे प्यारे घर और प्रेमपूर्ण स्वभाव साथ २ पिघलेंगे। पाप पुण्यों में घुल मिलकर इस प्रकार परिवर्तित होकर चमकेंगे जैसे सूर्य की स्वर्णिम रश्मि शृंखला में शबनम।

सीमा रहित उन्नति की विद्युच्छटा से मनुष्य का स्वभाव जल रहा है। आज उसी की केवल चिंगारियां आसमान की ओर लपकती हैं। नक्कारा बजाने वालों, कवियों, गायकों और लेखकों की कृतियों में इतस्ततः देदीप्यमान शोले दृष्टिगत होते हैं।

यह आग सनातन आर्य धर्म को वास्तविकता पवित्र अवस्था पर लाने के लिये एक अंगीठी (हवनकुंड) में थी जिसे आर्यसमाज कहते हैं। यह प्रेरणामय आग आर्यावर्त में एक ईश्वरीय भक्त दयानंद सरस्वती के सीना (मन) में प्रज्वलित होकर देश के अन्य नूरानी हृदयों में प्रकाशित हुई। हिन्दू और मुसलमान इस संसार को रोशन कर देने वाला आग को जो चारों ओर तीव्रता से भड़कती जा रही थी कि उसके संस्थापक दयानंद को गुमान भी न था—बुझाने के लिए दौड़ पड़े। ईसाईयों ने भी जिनके मन्दिरों की आग और जिनकी पवित्र किरनें पहले पूर्व में प्रज्वलित हुई थीं—एशिया की नई रोशनी को समाप्त करने के लिए हिन्दू और मुसलमानों का साथ दिया। किन्तु यह मुबारक आग और भी भड़क उठी और फैल गई।

जाति की सेवा में अपील

हम सब समझते हैं कि अब वह समय आ गया है कि एक बार भारत में इस छोर से उस छोर तक धार्मिक जोश जगा दिया जाए। खालिस और पवित्र आर्य धर्म के सिद्धान्तों को जैसा कि हमारे वेदों में है—सर्वसाधारण में उसका डंका बजा दिया जाए। आर्य उपदेशक नगर नगर, ग्राम ग्राम, वैदिक धर्म का उपदेश करें। यह सिद्धान्त आर्यों के लिये माहर लगो (प्रमाणित) पुस्तक में से हूं। और अब वह

समय आ गया है कि वह प्रत्येक व्यक्ति के मनों में पहुंचा दिए जाएं। हमें पहिले ऐसे प्रचारकों की आवश्यकता है। जो अपने भाईयों को अपने धर्म पर स्थिर रखें। हमारा प्रयोजन तो यही है कि हम वास्तव में बहुत अच्छे अर्थात् आर्य बन जाएं।

यह सब कुछ ठीक है कि भारत बहुत उन्नति कर रहा है। किन्तु जो कुछ कर रहा है। वह वास्तविक उन्नति नहीं है। जैसा हम भी अच्छी प्रकार जानते हैं। देश में नई नई प्रस्तावनाएं दिन प्रति-दिन निकाली जाती हैं। किन्तु उन्नति नहीं होती। क्योंकि सत्यधार्मिक सिद्धान्तों पर नहीं चलते।

हमने सदैव इस बात को बलपूर्वक कहा है कि प्रत्येक सुधार का प्राण धर्म है। इसके बिना किसी प्रकार का सुधार दृढ़ और स्थिर नहीं समझा जा सकता है। हम अपनी प्राचीन महत्ता को नए सिरे से जीवित करने की प्रसन्नता में बार २ यह कह चुके हैं कि हम अपने गन्तव्य स्थान तक नहीं पहुंचेंगे। क्योंकि हमने धर्म को एक ओर ताक़ पर रख दिया है। हम देखते हैं कि राजनैतिक उन्नति के लिए भी पर्याप्त प्रबंध हो रहा है और सामाजिक सुधार में भी लोग यत्नशील हैं तथा उसके संबध में उन्नति के अवसर चारों ओर से प्रभाव डाल रहे हैं। किन्तु धार्मिक सुधार एक ऐसा विषय बन रहा कि सर्वसाधा-रण को विचारधारा के नेता जो प्रत्येक प्रकार के विषय में यत्नशील हैं। उन सबने एक मन होकर यह निश्चय किया है कि उसको (धर्म को) धरोवर रूप में रख छोड़ो। किन्तु हमारी सम्मति है कि अब ऐसे भारी कार्य में गफ़लत नहीं करनी चाहिए। धार्मिक सुधार के लिए ठीक २ तीर निशाना पर लगाने के समान यत्न होना चाहिए।

क्योंकि यह बात लगभग निश्चित हो चुकी है कि सत्यधर्म को सहायता के बिना यह असंभव है कि महत्त्वशाली जाति कहलाने के विचार को भी पूर्ण कर सकें। यह बात भी अच्छी प्रकार से प्रगट है कि हम में से बहुत से लोग धार्मिक विचारों से घृणा करते हैं क्योंकि वह राजनैतिक विचारों में संलग्न हैं। और एक इसी विचार के कारण हम अपने दूसरे लाभों को खोए हुए हैं। और यह भी नहीं सोचते कि राष्ट्रीय तथा जातोय उन्नति का सबसे जो मुख्य साधन है, उसको हमने पृथक् कर रखा है। इससे अब आवश्यक है कि धार्मिक सुधार के लिए एक बड़ा भारी जोश फैलाया जाए। और वह ऐसा जोश हो कि अब तक कभी न हुआ हो। ईसाई, मुसलमान, ब्राह्मसमाजी अपने २ मज़हब के गुण प्रगट करते फिरते हैं। और लोगों को अपने जाल में फांसते जाते हैं। किन्तु शोक है कि हम आर्य लोग जिनकी संख्या सबसे अधिक है। कोई भी नियमपूर्वक प्रचारक और उपदेशक समूह नहीं रखते। किन्तु वह महन्त और पुजारी लोग जो स्वयमेव उपदेशक बन रहे हैं। उनकी अवस्थाएं ऐसी सीमित हो रही हैं, कि वह उस आत्मिक अंधेरे को जो समस्त हिन्दु समाज में फैल रहा है। कदापि २ दूर नहीं कर सकते।

हिन्दुओं के लिए इससे अधिक और क्या शोक और निराशा की बात हो सकती है? जब सम्पूर्ण देश में उनकी संख्या सबसे अधिक है। उनको ऐसे उपदेशक भी प्राप्त नहीं। जो अपने धर्म का उपदेश कर सकें। और इसी ओर अपना तन, मन, धन अर्पण करके उपदेशकों की एक सभा स्थापित कर दें। कुछ लंका ही की और वहां की थोड़ी सी सिंहल द्वीप की प्रजा का विचार कीजिये।

अन्य स्थानों की भान्ति ईसाईयों ने वहां भी बड़ा बल लगाया। किन्तु गौतम बुद्ध के मत का अब भी वहां प्राबल्य है। वहां के गेरवे भगवे वस्त्रों के संन्यासी अपने भूले हुए भाईयों को पुनः संवार रहे हैं और वापिस लेते जाते हैं। इस प्रकार के सहस्रों लोग प्रातः सायं आप देखेंगे। जो अपनामत अपने

भाईयों को सुना रहे हैं। किन्तु शोक कि यहां कोई भी हिन्दुओं को इनका धर्म नहीं बताता। हिन्दु घर से बाहिर जाते भी हैं, तो वही मुक्ति सेना का ढोल अथवा अन्य इसी प्रकार के शब्द कर्णगोचर होते हैं।

हिन्दुस्थान बड़ा भारी देश है। यहां धनी, बुद्धिमान्, विद्वान् लोगों की कमी नहीं है। किन्तु शोक तो यही आता है कि इन सब बातों के होने पर किसी को भी उस प्राचीन धर्म के पुनर्जीवित करने का विचार नहीं है कि जिसमें वह उत्पन्न होते हैं।

विचार का स्थान है कि अपने आप को एक जाति प्रगट नहीं कर सकते हैं। यदि अपने पुरातन पवित्र वेद के धर्म को जो आशिर:पाद युक्तियुक्त है स्वीकार करें और उसी की शिक्षा पर बल दें तथा फ़ैलाएं और इसके समर्थन में छोटे २ पत्र और पुस्तकें इन्हीं विचारों की प्रकाशित करें। अपने बच्चों को आरंभ से वही पढ़ावें जिससे वह एक श्रेष्ठ हिन्दु अर्थात् आर्य होने का गर्व करें। जब तक हमें यह सुधार प्राप्त न होगा। हम अपने राजनैतिक अधिकारों के लिए जितना चाहें, चिल्लावें और पुकारें–कभी भी संभव नहीं कि सैल्फ़ गवर्नमेंट की योग्यता हम में उत्पन्न हो।

(लेखक इन्डियन मिरर कलकत्ता)

आथम महोदय के रेव्यू का उत्तर

हमारे क्रश्चन मतदर्पण पर आथम महोदय ने रेव्यू लिखा है किन्तु शोक कि हमने उसे बहुत कुछ दिखाया किन्तु कुछ भी न पाया।

पहिली धारा में वह हमें नास्तिक बताते हैं। और यही दूषण हमारे मार्ग प्रदर्शक स्वामी जो महाराज पर लगाते हैं। परमेश्वर इन्हें सत्य मार्ग दिखाये और ऐसे मिथ्या भ्रमजाल से बचाए।

धारा २ में उन्होंने पुन: वही पुराना गीत गाया है जिसे हम प्रथम अध्याय में अच्छी प्रकार लिख चुके हैं।

धारा ३ में वह सभ्यता के ओढ़ने से बाहिर होकर भद्दी वाणी पर उतर आए। बस आथम महोदय! हमने तो वृक्ष को फल से पहचान लिया। आप मसीह की वर्तमान इञ्जील जो अधूरी और दोषपूर्ण है उसे छोड़कर मसीह की वास्तविक जीवनी जो तिब्बत से निकली है और जो अब फ्रिंच से अंग्रेजी में अनूदित हो गई है उसका अध्ययन करें जिससे सत्यासत्य का भेद खुले।

धारा ४ में बुरी रूहों के प्रमाण में अलिफ़ लैला के अल्लाहदीन वाले चिराग जैसी कथाएं घड़ते हैं। और तेल में मुख देखकर सिक्का की स्त्री बन जाना बताते हैं।

पादरी महोदय! क्या ऐसे ही स्त्रियों के जादू टोणा की भान्ति आपने ईस्वी चमत्कारों पर ईमान लाया है! इसीलिए एक विद्वान् लिखता है कि वह काल निकट है। जब गिरजा के पादरियों, निरक्षर किसानों और अज्ञानी बूढ़ियों की भाषाओं के अतिरिक्त इसका प्रभाव किसी के मन पर न रहेगा।

धारा ५ तौरेत और वेद के मन्तव्य नियोग में जो भेद आपने समझा—वह नहीं है। किन्तु यह कि वेद में नियोग न करने पर दण्ड विधान नहीं। किन्तु तौरेत में दण्ड भी विद्यमान है। अर्थात् जो इन्कार करे उसके मुख पर समस्त बिरादरी के सामने थूका जाए।

धारा ६ की तीन पंक्तियां यदि आप न लिखते तो अच्छा होता। आप पूछते हैं कि इससे श्रेष्ठ

वास्तव में हम क्या मानें ? उत्तर यह है । कि इन समस्त अत्याचारों और अन्धकार से यदि बचना चाहते हो तो धर्म करके परमात्मा पर ईमान लाओ ।

धारा ७ में आप समस्त विश्वास इतिहासों से इन्कार करते हैं और जिन सत्तर यहूदी विद्वानों को धारा ३ में पूर्व विश्वस्त मान चुके हैं । यहां उनका और समस्त यहूदियों का यह लिखकर खंडन करते हैं । कि यहूदियों और सर सय्यद महोदय के अर्थ ठीक नहीं हो सकते । मेरे श्रीमान् जी ! यह गर्व बुद्धिमता से दूर है ।

पाठकवृन्द ! हमने इस बार क्रश्चन मत दर्पण को कुटेशनों और अन्य प्रमाणों से अधिक स्पष्ट और उजला कर दिया है । विश्वास है कि आप इसमें ईसाई मत का नकशा गत संस्करण की अपेक्षा बहुत अच्छी प्रकार से अध्ययन करके ईश्वरीय प्रजा को उनके छल कपट के जाल से बचाने का यत्न करेंगे ।

वैदिक धर्म का सेवक
आर्य पथिक पं० लेखराम
२ नवंबर १८९६ ईस्वी
स्थान–लाहौर

—०—

सदाकते इलहाम

ईश्वरीय ज्ञान की सत्यता

(तद्वचन) पुस्तकों में धरा है क्या ?
बहुत लिख लिखके धो डालीं।
हमारे मन पर पत्थर की लकीर की भान्ति है तेरा फ़रमाना।

(मद्वचन) किताबे पाकबिन तालीम कब होती है आलम+ में।
बग़ैर× अज़ इल्म नामुमकिन+ है ऐ जां जुहुल×का जाना।।
किताबें गर+ न होतीं किस तरह तालीम पाते तुम।
किसी का शिकमें मादर+में न आलम×में हुआ आना।।
किताबों में धरी विद्या उन्हें धोना जिहालत× है।
इसी बाइस+ ग़लत× है यह सरासर+ तेरा फ़रमाना।।
अगर मानो ज़ेह ख़ूबी न मानो तो शिकायत क्या ?
वलैकिन बिन तालीम आलिम होगा बतलाना।।

आज "दलाएल अग़लाते इलहाम" नाभो पुस्तक अध्ययन में आई जिसके लेखक एलन ह्यूम महोदय और प्रकाशक ब्रह्म समाज है। शोक ? प्रतिवादी ने सभ्यता से कुछ स्थानों पर तटस्थ होकर के बहुत कठोर शब्द प्रयुक्त किये हैं।

आरंभ में इस समस्त झगड़े का कारण यह है कि

"स्वामी दयानंद साहब ने आर्य समाज के मौलिक नियमों को किसी पुस्तक की पूर्ण पवित्रता पर आधारित क्यों रखा है"।

एलन ह्यूम महोदय यदि क्रोध को काम में न लावें तो निवेदन करता हूं कि मनुष्य आत्मा को जितने ज्ञान की आवश्यकता है, जितने पूर्ण उपदेश प्राप्त करने की आवश्यकता है, जितनी वास्तविक शान्ति आत्मा को चाहिए, मनुष्य बुद्धि को जिस सत्य मार्ग पर चलना है, प्राप्तव्य मोती के पाने में जितने कष्ट सम्मुख उपस्थित हैं। जो २ वस्तुएं अथवा दुःख इसके मार्ग में रुकावट हैं। इन सभी बातों को पवित्र वेद बड़ी बुद्धिमत्ता से प्रगट करता है। सदाचार, प्रेम, संघठन के भवन को ऐसी पक्की दृढ़ आधारशिला से उठाना सिखाता है। जिसका परिणाम दिन प्रतिदिन उन्नति और दुरुसती है।

+संसार ×विद्या के विना +असंभव ×मूर्खता +यदि + ×माता के पेट में ×संसार +मूर्खता +कारण +मिथ्या +सर्वथा।

निस्सन्देह कोई कागज़ इलहाम नहीं न उसकी जुज़बन्दी इलहामी है किन्तु वह पूर्ण ज्ञान और पूर्ण सन्तोष जिस पर प्रत्येक प्रकार से विचार करने से पूर्णता और उत्तमता का प्रकाश हो—इलहामी होता है और सर्वसाधारण के लाभार्थ वही पवित्र वेद में लिखा है। जो २ सच्चाईयां आप चाहें अथवा कोई अन्य आपका प्रियवर मित्र मांगे वह पवित्र वेद से बताने को उपस्थित हूं। धार्मिक हूं या संसारी, आत्मिक हूं या शारीरिक, परमात्मा का ज्ञान और उसकी पहचान जितनी वेदों में विद्यमान है अन्यों में उसका दशमभाग भी नहीं। अत्याचार का वेदों में चिह्न नहीं और न वध तथा अग्निदाह का वर्णन है। जिन मिथ्या मन्तव्यों ने पीड़ित मनुष्य जाति को लानत के तीरों का निशाना बनाया है और जिन दुराशाओं ने मनुष्य को सच्चाई के भवन से गिराया है। पवित्र वेद ने ईश्वरीय ज्ञान से उनका खंडन कर के उनके ख़तरों से सचेत किया है। दार्शनिक युग में जब वेद की शिक्षा सबके लिए थी। मनुष्यों पर ईमान लाना गुरुडम का घृणित पौदा चिह्न मात्र भी न था। जैसा कि इतिहास भी इसका साक्षी देता है कि:—

"आर्य लोग पुरातन काल से फ़लासफ़ी में रुचि रखते थे और फ़लसफ़ा, हिन्दसा, गणित आदि के आदि गुरु यही हैं। भिन्न २ कालों में उनके पास दर्शन शास्त्र लिखे गये और वह यह हैं— प्रथम सांख्य जिसका कर्ता कपिल, द्वितीय योग जिसका रचियता पतंजलि, तृतीय न्याय जिसका कर्ता गौतम, चतुर्थ वैशेषिक जिसका लेखक कणाद, पंचम मीमांसा जैमिनि कृत और षष्ठ, वेदान्त महर्षि व्यास कृत है"। (तवारीखे़ हिन्द)

हां, यदि गुरुधारण का अभिप्राय शुभकर्मों और सच्चाई को प्राप्त करना है। जैसा कि आर्य समाज के नियम संख्या-चार में आज्ञा है तो हम को क्या प्रत्युत सम्पूर्ण मनुष्य जाति को आवश्यक है कि वह गुरु धारण जो किसी मानसिक और पाशविक स्वार्थ से दूर हो अवश्य करे। हम क्या प्रत्युत सभी बुद्धिमान करते चले आए हैं। अफ़लातून ने सुक़रात का अनुसरण किया। आर्य समाज वाले भी इससे अधिक गुरु पूजा न करना चाहते हैं और न किसी को प्रेरित करते हैं।

जब से पवित्र वेद की शिक्षा न्यून हुई। जिस का कारण एक प्रसिद्ध महान् ऐतिहासिक घटना चक्र है। मनुष्य समाज भ्रमजाल में फंस गया और इसी काल के पश्चात् कई काल्पनिक पुस्तकें खुदा के नाम से लिखी गईं। जो संबंध वास्तविक चांद को कृत्रिम चाँद से है। वही सम्बन्ध पवित्र वेद को अन्य कल्पित इलहामो से है। यह हम मानते हैं कि आज तक धातुज, वनस्पति सम्बन्धी अथवा अन्य प्रकार के विष से मनुष्य जाति को ऐसी हानि नहीं पहुंची। जितनी कि अत्याचारपूर्णता से पहुंचती है। जिसके कारण से समस्त मजहबी रक्तपात, समस्त सर्वसाधारण की हत्याएं, सम्पूर्ण अग्निदाह, सब कष्ट, दुःख दर्द, बहुत बड़ी बरबादी करना, बेघर बेदर आदि दुःख दिये जाते रहे और जिस से यह भूमि नरक सदृश किन्तु उस से शत गुना बनाई गई है।

किन्तु हे मेरे दयावान् और शीघ्र रुष्ट होने वाले भाई। क्या यह न्याय की शर्त है और इसी का नाम निर्णायक तर्क है तथा आत्मा की आवाज़ है? कि हम पुण्यात्मा को भी दुष्टों के साथ जोड़ दें। न्यायकारी को भी अत्याचारियों के झुंड में सम्मिलित करे? बुद्धिमान् को भी मूर्खता की पदवी दें? यदि आप संस्कृत जानते होते अथवा उस के पढ़ने का यत्न करते तो पूर्ण संभावना थी कि ऐसे मिथ्या परिणाम न निकालते। मनुष्य चाहे किसी भूभाग के निवासी हूं। पठन पाठन के बिना जंगली महामूर्ख और पशुओं से गिरे हुए हैं और थे। प्रतिदिन के अनुभवों ने यह बात प्रत्येक मनुष्य पर (यदि वह सत्य

का इच्छुक है) सिद्ध कर दी है कि कोई शिक्षा के बिना उन्नति नहीं कर सकता। ऐतिहासिक प्रमाणों से यह बात सिद्ध हो गई है कि आरंभ सृष्टि में सृष्टि कर्ता की ओर से संसार के प्रबंध के लिये पूर्ण ज्ञान का इलहाम होना आवश्यक था। अन्यथा एक आवश्यक कारखाना उत्पन्न कर उसके संचालन का प्रबंध न करना सृष्टि कर्ता के ज्ञान का दोष सिद्ध करता है। और यह बात तो सर्वसम्मत है कि वह सर्वज्ञ और सर्वाधिपति है। उस का ज्ञान दोषों और भूलों से रहित तथा पूर्ण है। और हम वेद को इस लिये इलहामी मानते हैं कि इस में जितना मनुष्यात्मा को चाहिये पूर्ण ज्ञान विद्यमान है। और यह बात तो इतिहास से भी सिद्ध हो चुको है कि संसार के पुस्तकालय में पवित्र वेदों से पुरानो पुस्तक नहीं है।

आप कहते हैं कि वेदों की अथवा अन्य पवित्र पुस्तकों की पूर्ण पवित्रता के अर्थ क्या हैं? केवल उस प्रेरक की पूर्ण पवित्रता अभिप्रेत है और उस को आप पूर्ववत् प्रमाण इतिहास से ...

महोदय! इस में आप ने भूल की प्रेरक की पवित्रता या सत्यता जगत् का उपकार करना और निष्काम आध्यात्मिक मार्ग का प्रगट करना है। स्वार्थरहित होकर सम दृष्टि होना है। इन्हीं बातों से ही जो उपदेशक के लिये आवश्यक हैं। कोई श्रेष्ठ उपदेशक अपनी ओर लोगों को नहीं झुकाता किन्तु वास्तविक जीवन से परमात्मा के ज्ञान की ओर ध्यान दिलाता है। भ्रमों से हटाता और असत्य से बचाता है। ऐसी अवस्था में तो कष्ट सम्मुख आवें। बहुत आनंद से वफादारी से उठाता है। और जतलाता है कि—

अंधतमः प्रविशन्ति ये सम्भूतिमुपासते। यजु।

जो किसी उत्पत्तिमान् पदार्थ की उपासना करता कराता है वह घोर अन्धकार में प्रवेश करता है और सत्य मार्ग से दूर हो जाता है, अतः उन्हीं प्राचीन गौतम, वसिष्ठ, व्यासादि महात्माओं की भान्ति हमारे स्वामी जी ने भी जगत् का उपकार किया। और हमें अविद्या के अन्धकूप से भूले भटकों को निकाला तथा तरणिरहित डूबतों को मनुष्य जीवन के ध्येय का तट बताया। जैसे सूर्य के उदय होते ही अन्धकार दूर हो जाता है और कालिमा काफूर (हो जाती है) वही अवस्था आर्यावर्त की हुई। ज्यों ही उस पुण्यात्मा महामानव ने अपनी विद्या के उपकार से हम पर उपकार किया। हमें ऊंच नीच बताया, सर्व संसार की गफ़लत की आंखें खुल गईं वह मनघडंत इलहामी और ज़वानी आदेश जो स्वार्थ की स्याही से लिखे गए थे छोड़ देने आरंभ हुए। यद्यपि लोगों ने लाख स्वांग बनाये, झूठे दोष लगाए। कालमों के कालम अपने निजी स्वार्थ के लिये काले किये। किन्तु अन्त में वही सच्चाई का बोल बाला हुआ। बड़े बड़े विद्वान् पंडित आर्य समाजों के सदस्य होगये और शेष हो रहे हैं। किसी ने क्या ही सत्य कहा है?

ईं सआदत वज़ोर बाज़ू नेस्त।
ता न बख्शद खुदाए बख्शिंदा॥ ×

आप भली प्रकार जानते होंगे कि आर्य समाज वाले किसी मनुष्य के मुरीद नहीं हैं। किन्तु न जाने, आप की लेखनी ने इस स्थान पर ठोकर क्यों नहीं खाई जब कि आप ने वास्तविक सत्यवात के

× यह भाग्यशाली होना बाहुबल पर आधारित नहीं है कि जब तक दयालु परमेश्वर की कृपा न हो।
(अनुवादक)

स्थान पर एक साधारण और अपूर्ण बात को लिख दिया । क्या यह लिखते हुए लज्जा आती थी कि वेदों की पूर्ण पवित्रता से उन के आदेशों का ठीक, पूर्ण और बुद्धियुक्त तथा पवित्र होना सिद्ध है। और यही आर्य समाज का तीसरा नियम है कि वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है वेद का पढ़ना पढ़ाना, सुनना सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है । अब इसी को इतिहास से भी पूर्ववत् अनुमान तथा बौद्धिक युक्तियों से सिद्ध करता हूं :—

"आर्यों के समीप वेद की पुस्तकें बहुत पवित्र हैं । वेदों का मुख्य सिद्धान्त यह है कि ईश्वर एक है जो सबसे उच्चतम आत्मा समस्त सृष्टियों का स्वामी है और उसी ने सर्वसृष्टियां उत्पन्न कीं ।(तारीखे हिन्दुस्तान)

जैसा कि ऐतिहासिक एक मंत्र का अनुवाद भी करता है कि:—

"परमात्मापूर्ण सत्य और आनंद स्वरूप है। उसकी अनुपम सत्ता और नाशरहित है, वह एक और केवल एक है न वाणी को उसके वर्णन की शक्ति है न बुद्धि को उसके ज्ञान की शक्ति । वह सब में प्रगट और सब पर प्रभुत्व रखता है । अपने असीम ज्ञान और अन्त रहित विज्ञान से आनंदित है । काल और स्थान का आश्रय है। उसके पाऊं नहीं किन्तु सब स्थानों पर विद्यमान है । उसके हाथ नहीं किन्तु सम्पूर्ण संसार को उठाए हुए है। आंखों रहित सब पदार्थों को देखता है। कान नहीं किन्तु प्रत्येक आवाज़ को सुनता, सब को समझता है। किसी समझाने वाले के आधीन नहीं है। वह सबका प्रभु है और सब अधिकार रखता है। सृष्टिकर्ता, धारणकर्ता तथा समस्त पदार्थों के रूप परिणत करने वाला वही है।×

जब यह इतिहास से भी भली प्रकार सिद्ध है कि वेदों की ऐसी आज्ञाएं हैं और पुरातन आर्यों की पुस्तकें वहीं हैं। और इसी प्रकार की आज्ञाएं उन्हीं वेदों से स्वामी जी ने प्रचारित की हैं तो मूर्खता और हठधर्मी के अतिरिक्त और क्या कारण है ? यदि हम स्वीकार न करें आर्यावर्त के बड़े २ पंडित जिनसे मेरा मेल हुआ, वह इस बात पर सहमत हैं कि स्वामी दयानंद जी हमसे संस्कृत में बढ़ कर हैं। और विद्वान् होने में अद्वितीय,व्याकरण में पूर्ण, छ: शास्त्रों के ज्ञाता हैं। वेदों का अनुवाद तो ठीक करते हैं किन्तु शोककि पुराणोंको नहीं मानते जिससे अपठित ब्राह्मणोंके टके सिद्ध होते थे उनकी आयको मारना स्वामी जी को उचित न था । बड़ २ पक्षपाती हिन्दु आर्य हो गए। सैकड़ों पंडित सच्चे हृदय से आर्य हैं शास्त्रार्थ चांदपुर, शास्त्रार्थ हुगली शास्त्रार्थ काशी शास्त्रार्थ मसूदा, शास्त्रार्थ अजमेर-संक्षेपत: क्या कहूं और कहां तक लिखूं कि कहीं भी पौराणिक महात्मा सम्मुख में न आए और जहाँ आए वहां सर्वसाधारण की मंडली में आर्य हो गए। आगरा का शास्त्रार्थ और स्वामी का व्याखान सूर्य प्रकाशवत प्रगट है जहांकि कई प्रतीक यमुना में डाले गए। जितनी संस्कृत की प्रामाणिक पुस्तकें हैं सभी वेदों की श्रुति और भूलों से रहित तथा भ्रम जाल से पृथक्, एक परमात्मा की उपासना बताती है। हमारे योग्य विद्वान खुलेरूप में कहते हैं कि वेदों में तो यह नहीं किन्तु पुराणों में अवश्य है और पुराण सैकड़ों युक्तियों से इतिहास, कहानियां और अप्रमाणिक हैं और उनके रचियता स्वयं ही वेदों को इलहामी और सनातन मानते हैं। अत: यदि एक आर्य रिसाला पंडिता कलकत्ता का उत्तर जो हमारे बुजुर्ग भाई लाला साईंदास जी प्रधान आर्य समाज लाहौर की चमत्कारणी लेखनी से निकला है—आप अध्ययन करें, तो

+जैसा कि प्राय: स्थानों पर वेद में लिखा है कि वास्तव में केवल एक परमेश्वर ही है।

इस मेरे लेख का खुला प्रमाण पर्याप्त मानेंगे। जिसका उत्तर आज तक पंडित महोदय न दे सके और संसार मासी जी का घर तो था ही नहीं हमारे जैसा जिगर पहिले कोई उत्पन्न तो कर ले। क्योंकि जहां तक पक्षपात रहित होकर निदान किया गया है। पवित्र वेद सत्यता का कोष पाया गया। अतः इस सत्यता के कारण सन्मार्ग का ख़ज़ाना पवित्र वेद है। आपने कोई ऐतिहासिक प्रमाण या तार्किक प्रमाण प्रतिज्ञा करने पर न लिखा न जाने किस लिये छिपा रखा।

आप फ़रमाते हैं कि कोई पवित्र पुस्तक चाहे कितनी यथार्थता और पवित्रता से क्यों न लिखी गई हो। कुछ स्थानों पर इसमें ऐसे वाक्य अवश्य हूंगे जो न्यून से न्यून दो अर्थों में लिए जा सकते हैं और आदेश वाहक ही से इस बात का निर्णय हो सकता है कि कौन अर्थ स्वीकार किये जायें? पुनः आप का कथन है कि सारी पवित्र पुस्तकों में बहुत से भाग पवित्रता और यथार्थता से लिखे हुए के विरुद्ध भी हैं।

श्रीमान् जी! यदि आप एक ओर की सम्मति न देते तो संभवतः मुझे लिखने की आवश्यकता न पड़ती और प्रायः माननीय होतो। स्वतन्त्रतः भो यदि आप विचार करेंगे तो प्रत्येक के न्यून से न्यून दो अर्थ पाएंगे। और बहुत से ऐसे कर्म होंगे जिनके वास्तविक अर्थ पवित्रता और यथार्थता से आप न समझ सकेंगे। अतः उसके जानने की किसी मास्टर या रिफ़ारमर या फ़िलासफ़र या डाक्टर से आवश्यकता पड़ेगी। और उसका स्वार्थरहित आदेश माननीय होगा। बहुत सी ज्ञान संबंधी बातें हमें पढ़ने, अनुभव करने, कोष देखने, सीखने आदि से प्राप्त होती हैं। और उसी से हमारी अधूरी विवेचन शक्ति पूर्ण ज्ञानवती होती है जिससे हम नवीन २ आविष्कारों पर समर्थ होते हैं। यथार्थ ज्ञान का प्राप्त करना अन्य वस्तु है और कर्मठ बनना अन्य बात है तथा उससे आविष्कारों पर समर्थन प्राप्त करना अन्य बात है। जिस प्रकार ज्ञान संबंधी सूक्ष्म विषय रिफ़ारमर या मास्टर आदि अथवा डिक्शनरी से खुलते हैं। ऐसे ही संस्कृत की मान्य पुस्तकों के द्वयर्थक शब्द कोष और व्याकरण से स्पष्ट होकर योग्य विद्वान् पंडित के फ़रमाने से बुद्धिगत होते हैं। किन्तु उस माननीय विद्वान् का मेरे पूर्व उत्तर के अनुसार जाति का शुभेच्छु और स्वार्थरहित रहना पहिली शर्त है।

पुनः आपका फ़रमाना है कि उसकी भाषाएं अब प्रायः बोली या समझी नहीं जातीं और उनसे बहुत प्रक्षेप सिद्ध हो चुके हैं। प्रत्येक भाग में गड़बड़ और अशुद्धियां उत्पन्न हो गई हैं। और यह भी लिखा है कि कौन से भाग यथार्थ और प्रामाणिक हैं और कौन से अप्रामाणिक।" शोक! यह लेख लिखना आपकी अज्ञानता का एक बड़ा भारी प्रमाण दे रहा है। क्या कोई भाषा या कोई विद्या पढ़ाए बिना किसी प्रकार आ सकती है! जिन लोगों ने भाषा की खोज की है, उन्हीं की गवाहियों से प्रगट है कि संस्कृत सब भाषाओं की जननी है। और उसकी लोकोक्तियां और रूप विभक्ति तथा प्रत्ययादि भी बहुत सरल और पूर्ण योग्यता रखते हैं। प्रत्येक प्रकार के उच्चारण शब्दों के प्रत्येक भाग के अर्थ बताना विशेषतः संस्कृत पर समाप्त हैं। अतः इसके सर्वोत्तम, सभ्य, पुरातन और पवित्र होने में क्या संदेह रहा? पवित्र वेदों में प्रक्षेप सर्वथा नहीं हुआ। प्राचीन से प्राचीन और नवीन से नवीन छपे ग्रन्थ सर्वथा एक दूसरे के अनुसार हैं। हां, लेखक की भूल और बात है जिसके लिये व्याकरण विद्यमान है। अतः उसके ठीक होने में किसी हठी या अज्ञानी के अतिरिक्त और कौन संदेह ला सकता है? जैसे प्रत्येक रोग का निदान है। वैसे ही नासमझी और मूर्खता की औषधि विद्या है अथवा इन्द्रायण जुलाब है। अतः जिस प्रकार आप अन्य बातें पढ़कर प्राप्त कर सकते हैं। उसी प्रकार संस्कृत विद्या अथवा पवित्र वेद

को भी शिक्षा से प्राप्तकर सकते हैं। क्योंकि पवित्र वेद का किसी संहिता में विरोध और स्थगन नहीं है। इसीलिये वही पूर्ण विश्वस्त और प्रामाणिक है। किन्तु अन्वेषण और खोज की शर्त है।

पुनः आप फ़रमाते हैं कि :—

"यदि यह विश्वास कर भी लिया जाय कि अमुक मान्य पुस्तक किसी युग में मानयुक्त पूर्ण हो थी तो अन्तिम काल में जिसे पूर्ण पवित्र पाया जाएगा। उसका प्रकाश किसी विशेष ज्ञान अथवा आदेश वाहक या स्कूल या श्रेणी और समाज आदि की सम्मति पर आधारित होगा।"

हे साहब बहादर! क्या इससे आन्तरिक पक्षपात के अतिरिक्त अन्य कोई परिणाम निकल सकता है? जो पुस्तक किसी युग में पवित्र थी और अब तक यथार्थ और पूर्ण पहुंची। तो उसकी पवित्रता की अब क्या हानि हो गई? क्या प्राचीन अन्वेषण और पुरातन गवाहियां केवल इन्कार से टल सकती हैं? प्राचीन ऋषियों, दार्शनिकों ने जिन्होंने आयुर्वेद, न्याय, ज्योतिष, पदार्थ विद्या, अर्थ शास्त्र, ईश्वरीय योग, सदाचारादि विद्याओं में पूर्ण चातुर्य प्राप्त किया था। उनको इलहामी माना और उनके पवित्र होने के लिये सहस्रों कारण दिये हैं। हमारे पास उनके यथार्थ अनुवाद विद्यमान हैं। उनकी धार्मिक खोजों से बढ़कर कोई ऐसा आविष्कार नए प्रकाश युग वाले प्राप्त न कर सके।

इतिहास साक्षी है कि ईश्वरीय सत्ता और गुण कर्म स्वभाव की ज्ञानदृष्टि उसी युग में ऐसी उन को प्राप्त हो गई थीं। जिसमें यूनान के पूर्ण उन्नति के युग में वहां के बहुत बड़े बुद्धिमान् ज्ञानी विद्वान् लोगों के हृदयों पर बहुत थोड़ा चमकीं।" (तारीखे हिन्द पृ० ६१)

"आर्य लोग यूनानियों से सभ्यता और शिक्षा में बहुत बढ़े हुए थे।" (तारीखे हिन्द पृ० ६१)

अतः किसी प्रकार पवित्र वेद के दोषरहित होने में संदेह न रहा। ईश्वर की कृपा से इस युग में ही हमारे विरोधी सहस्रों ब्राह्मण वेदों को कण्ठस्थ करके रक्षा करने वाले विद्यमान हैं। जो वेदों के दोष रहित होने का चौहरा प्रमाण है कि पवित्र वेद लिखने में प्रक्षेपादि से आशिरःपाद सुरक्षित हैं।

आपका फ़रमाना कि "पुस्तक की पवित्रता मानने का परिणाम इच्छा अनिच्छा से रूहानी क़ैद, मानवी राज्य और किसी पर ईमान लाना मनुष्य की पराधीनता को उत्पन्न करता है तथा अज्ञान का कारण है।"

यदि पवित्र वेद के किसी एक मंत्र गायत्री आदि का ही अर्थ दृष्टिगत रखते। तो यह आक्षेप करने की नौबत न आती। यह पवित्र वेद बुद्धि को सन्दूक में बन्द करने की आज्ञा नहीं देते। किन्तु मानवी सत्यता ईश्वरीय प्रेम के साथ बुद्धि के प्रयोग की शिक्षा भी देते हैं। बौद्धिक उन्नति की ऐसी पूर्ण आज्ञा देते हैं जिससे आत्मिक आनन्द प्राप्त होकर शारीरिक गड़बड़ से स्वतंत्रता प्राप्त होती है। और वास्तविक तेजस्विता का प्रकाश होता है।

पुनः आप फ़रमाते हैं कि—

"वेदों के यथार्थ अनुवाद करने से स्वामी जी सर्वोच्च ईश्वरीयसत्ता के साथ समानता का दावा करता है। और परोक्ष से पूर्ण प्रेरणा होने का प्रमाण दें।" और एक स्थान पर अपने इगित से चमत्कार दिखाने की मांग भी की है।"

हे भाई ! पवित्र वेद का यथार्थ अनुवाद करना उनके ज्ञान की योग्यता और स्वार्थहीनता का प्रमाण है । आर्यावर्त की अवनति को देखकर उसकी वास्तविक उन्नति के सामान प्राप्त करना जाति के शुभेच्छु, देश सुधारक, महान् परोपकारी का काम है । क्या किसी स्वार्थी व स्वप्रशंसक व्यक्ति से यह कार्य सम्भव था ? जिसके लिये उनको उनके पूर्ण गुरु श्री स्वामी विरजानंद सरस्वती जी के आदेशानुसार भाष्य की आवश्यकता हुई । निरुक्त, निघंटु, अष्टाध्यायी, महाभाष्यादि प्राचीन पुस्तकों से अपनी बौद्धिक योग्यता के बल पर भाषा और संस्कृत में सरल अनुवाद करके प्रकाशित किया है । जो प्रत्येक देशीय दार्शनिक को पवित्र वेद की आज्ञानुसार सत्य का प्रकाश और असत्य का नाश कर्त्तव्य है । उसी पर उन्होंने आचरण किया । चमत्कार, करामात और बार २ इलहाम होने से वह स्वयं इन्कारी थे । और उनके खंडन के लिए उद्यत रहे । अर्थात् यह सम्पूर्ण दावा ही आपका व्यर्थ है । अतः हम जोश और क्रोध के विना नम्रतापूर्ण निवेदन करते हैं कि आप ज्ञान के विना ज्ञानी होकर पुस्तकें बनाना सिद्ध करें । आप माता के उदर से किसी बालक का पढ़ा हुआ उत्पन्न होना सिद्ध करें । आप पवित्र वेद से कोई उत्तम आध्यात्मिक रहस्य बतावें । और पवित्र वेद से पूर्व की किसी पुस्तक का संसार के पृष्ठ पर ऐतिहासिक चिह्न बताएं । किसी आर्य के सम्मुख शास्त्रार्थ के लिए आएं । अन्यथा प्रारम्भ सृष्टि में उस सर्वज्ञ की ओर से जगत् के प्रबन्ध के लिए इलहाम का होना आवश्यक था । और वही परिवर्तित न होने वाले शब्द अर्थात् ईश्वरीय इलहाम का संसार के प्रलयकाल के होने तक पर्याप्त है । यह वेद पवित्र में लिखा है । यदि आप अपनी प्रतिज्ञा की सिद्धि में असमर्थ हैं तो विरोध में मेरे पास सहस्रों प्रमाण विद्यमान हैं । जिनको इस समय पुस्तक बढ़ जाने के विचार से दृष्टि से ओझल किया गया किन्तु यथावसर उपस्थित करने को हाज़िर हूं । हां, स्तुत्याचार से उत्तर हो । न्याय को हाथ से देना दृष्टिगत न होगा ।

आप फरमाते हैं कि "पूज्य ईश्वर को एक और पूर्ण पवित्र इलहाम भेजना स्वीकार होता तो उस कार्य को ईश्वर अधूरा न छोड़ता । उसके शब्द पेचीदा न होते । और उनमें अर्थ विरोध की गुंजाएश न होती । मनुष्यों को उसमें भिन्न २ प्रक्षेपों का करना कठिन हो जाता जैसे भूमि के मदार को बदलना ।"

भाई ! मेरे पूज्य भगवान् को जैसे शारीरिक आंखों आदि के लिये सूर्य का बनाना स्वीकार था । वैसे ही रूहानी आंखों के लिये ज्ञान के सूर्य (वेद) का देना भी स्वीकार था । पवित्र वेद अधूरा नहीं है और न उसमें प्रक्षेप हो सकते हैं । और न उसमें पेचीदा बात है । पवित्र वेद की विशेषता किसी स्वार्थ रहित, पक्षपात शून्य, वेदपाठी, संस्कृत के विद्वान् से पूछनी चाहिए ।

"मार गज़ीदा अज़ रेसमान पेचीदा मेतरसद ।"×

इञ्जीली शिक्षा आपको पवित्र वेद से परहेज़ करा रही है । किन्तु मैं द्वितीय वार प्रार्थना करता हूं कि वेद मुकद्दस किस्सा कहानियों, दीर्घ व्यर्थ बातों से रहित और अध्यात्मविद्या तथा विज्ञान से पूर्ण सदाचार तथा सामाजिक नीति से पूर्ण और भरपूर है । पस न्याय से उसका स्वाध्याय करना आवश्यक है ।

× सांप से काटा गया पेचदार रस्सी से डरता है । (अनुवादक)

आप कहते हैं कि "ईश्वरीय सत्यता का कोई पवित्र पूर्ण इलहाम हम मनुष्यों के लिये लाभप्रद नहीं हो सकता। क्योंकि इलहाम पूर्ण अनुभव मनुष्य की सीमित और संकुचित बुद्धि से अवश्य बाहिर होगा तथा ऐसा इलहाम कोई नहीं उतर सकता।"

पुनः आप आगे चल कर वर्णन करते हैं कि सब पुस्तकें न्यूनाधिक सच्चाईयों का प्रकाश करती हैं, सब में न्यूनाधिक इलहाम पाया जाता है। और जब केवल पढ़ने से ही हमें सभों में इतना अमूल्य संभावनामय भोजन मिलता है। और जिस समय मनुष्य किसी पवित्र पुस्तक के अध्ययन में तल्लीन होता है। जो पुरानी आयतों के मृत शब्दों को या किसी विचार को जीवन पद्धति से प्रकाशित करता है। तत्पश्चात् वही जीवित सच्चाईयां और मौखिक इलहाम बन जाते हैं। किन्तु केवल उस के लिये।"

इस समय मेरे दयालु डाक्टर ठाकुर दास महोदय प्रधान आर्य समाज शिमला का वचन मुझे स्मरण हुआ। जिन्होंने पंडित शिव नारायण के एक विशेष बाजारी उपदेश के उत्तर में फ़रमाया था कि मुरदा (मृतक) वह वस्तु होती है जो कभी जीवित न हो। कभी जीवित हो जाए वह मृत नहीं हो सकती। अतः शब्दों को मृत कहना आशिरःपाद मिथ्या और अपमानजनक शब्द है—

बातिलस्त आंचे मुदई गोयद।

खुफ़तारा खुफ़ता कै कुनद बेदार ॥×

प्रिय भाई! यदि इलहाम लाभ दायक न होता, तो आज तक जंगली मनुष्यों की भान्ति हो कर ऐश्वर्य, ज्ञान, सौन्दर्य और कारीगरी की संपत्ति से वंचित रहते। शोक! नमक खाना और नमक दान तोड़ना की कहावत चरितार्थ हो रही है। जो सत्य है सदैव सत्य रहेगा कभी नाश न होगा। अतः जो पूर्व पूर्ण पवित्र थी। वह अब भी पूर्ण पवित्र है। और उसका प्रचार करना वस्तुतः विद्वानों का कर्तव्य और शुभेच्छा पर है। कोई निजी सम्मति अथवा स्वार्थपूर्ण इलहाम के आभूषण से कभी सौन्दर्ययुक्त नहीं हो सकते अतः जिस प्रकार यह पक्का प्रमाण है कि पुस्तक के बिना ज्ञान नहीं आ सकता। वैसे ही ज्ञान के बिना पुस्तक रचना नहीं हो सकती। और न किन्हीं युक्तियों को खोला जा सकता है। ज्ञान रहस्यों और अध्यात्म ज्ञान से आशिर पाद वंचित रहना अज्ञानों के अतिरिक्त और किसी का स्वभाव नहीं हैं। जब तक पढ़े पढ़ाए बच्चे माताओं के उदरों से उत्पन्न नहीं होते तब तक ज्ञान सम्बन्धी पुस्तकों की अत्यावश्यकता है। और इसी आवश्यकता को पूर्ण करना सर्वज्ञ, सदा ज्ञानी की कृपा और इलहाम के अधीन करता है। अतः यथार्थ बुद्धि व्यवस्था देती है कि सोचने की पवित्रता के लिये, आध्यात्मिक सत्यताओं के लिये, आन्तरिक सन्तोष के लिये, आत्म नेतृत्व के लिए, योगके परिचय के लिये, सांसारिक कार्य व्यवहार के लिए, पारस्परिक प्रीति के लिये, एकता के पवित्र अंकुर के लिए, पूर्ण मनुष्यता के लिए, और उपासकों के प्रेममय सम्बन्ध के लिये संक्षेपतः समस्त कठिनाईयों को दूर करने के लिये पवित्र और माननीय इलहाम का सृष्टि उत्पत्ति के साथ आरंभ में दोषों से रहित और पूर्ण होना आवश्यक है। और मनुष्य की बुद्धि निर्बल होने से भूल जाने के कारण स्मृति के लिये उस का लेखबद्ध

× मिथ्या है जो कुछ प्रतिवादी कहता है। सोते हुए को सोता हुआ मनुष्य कब जगा सकता है?

(अनुवादक)

होना भी अनिवार्य है। सब से पुरातन, प्रत्येक प्रकार से पूर्ण, सब से युक्तियुक्त और ईश्वर प्राप्ति का पूर्ण मार्ग प्रदर्शक वेद मुकद्दस का इलहाम है। जिस पर आचरण करने से धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष का द्वार ईश्वरीय आज्ञानुसार खुला हुआ है। और सूर्यवत् उसके ज्ञान विज्ञान की रश्मियां प्रकाश युक्त कर रही हैं। वह कृत्रिम आदेश, वह विषैली मिठाई (अर्थात् ब्राह्म धर्म) जो स्वतन्त्रता स्वतन्त्रता कह कर लोगों को माता पिता से स्वतन्त्र बना रहे हैं। परमात्मा उस से हमारे भाईयों को सुरक्षित रखे।

जवाब (१) उसका अगर (२) माकूल (३) होतो (४) जेबा है।
सबा (५) पैग़ाम (६) यह मेरी तरफ़ से पहुंचाना।।

लेखक :—
लेखराम आर्य पथिक

—०—

×(१) उत्तर (२) यदि (३) युक्तियुक्त (४) समुचित (५) पुरवा वायु पूर्व की वायु (६) संदेश (७) और

सत्य धर्म का संदेश

भूमिका

जो निराकार, सर्व जगदाधार है, उसी की उपासना मनुष्य समाज को योग्य है। जो परिवर्तन शील नहीं, वही एक सब का ईश्वर है। पछताना, थक जाना, दुःखी होना, फ़ाख्ता बनना, इन सब दोषों से उस की सत्ता पवित्र है। अतः (१) जादन, (२) मुर्दन, (३) खुर्दन (४) जवां शुदन, पीर (५) शुदन आदि से भी पवित्र है। क्यों कि सर्वव्यापक और परोक्ष ज्ञाता है। अतः मनुष्यों की सिफ़ारिशों से भी निर्मुक्त है। जिस प्रकार वह स्वयं सनातन और पवित्र है, वैसे ही उस की वाणी भी होनी चाहिये। और वह वेद मुकद्दस है। दूसरी कोई नहीं। ज्ञात हो कि एक योरोपियन पादरी जिन का नाम संभवतः अस्तमह साहिब है। सन् १८७१ ईस्वी में एक पुस्तक (१) दीने हक्क की तहक़ीक (प्रकाशित अमरीकन मिशन प्रेस लुध्याना) इसलाम और हिन्दुओं पर आक्षेप सम्बन्धी छपवाई है। जो मेरे पास विद्यमान है। उसके पृष्ठ १२ से २८२ तक हिन्दु धर्म पर आक्षेप किए हैं। क्योंकि वह पुस्तक सब कारणों से धोखा देने पर आधारित है। अतः हम अपने धर्म के अशिक्षित लोगों को धोखा से बचाने और तिनकों से ढके कूप के जताने के लिये उस की वास्तविकता प्रगट करते हैं। जिससे न जानने से कहीं अन्धाधुन्ध मार्ग भ्रष्ट हो कर इस कूप में न गिर पड़ें और पछतावें। हे परमात्मन्! तेरी कृपा से आशा है कि इस के द्वारा हिन्दुओं के बच्चे जो मिशन स्कूलों में पढ़ते हैं—लाभान्वित होंगे।

आक्षेप पृ० ११२—हिन्दुओं के धर्म की पुस्तकें वास्तव में चार वेद और चार उपवेद तथा छे वेदांग और चार उपांग हैं।

(उत्तर आर्य) यहां पर पादरी महोदय ने यह न समझा कि हिन्दुओं से अभिप्राय हम किस जाति का लेते हैं? क्या वह लोग आर्य नाम से हैं जिन के धर्म की वास्तविक पुस्तक उपरिलिखित हैं अथवा वह मूर्तिपूजक, ज्ञान रहित जो ना समझी से केवल पुराणों के अनुयाई हो गए। और उपरिलिखित पुस्तकों को नाम मात्र कहते हैं कि हमारे धर्म की पुस्तकें हैं। पहिली अवस्था में उन का नाम आर्य लेना था। जो इस आर्यावर्त देश के पुराने निवासी हैं और हिन्दु नाम तो मुसलमान बादशाहों के समय से घृणा की दृष्टि से रखा गया है। वास्तविक पुस्तकों का नाम लेकर उन की वास्तविक अनुयाई जाति का नाम न लेना केवल मिथ्यापन है। दूसरी अवस्था में मूर्तिपूजकों और अपने धर्म के मार्ग भ्रष्टों को जतलाने के लिये पहिले यह कह देना चाहिये था। कि इस देश के वास्तविक निवासी आर्य हैं। भूल और ना समझी से तुम्हें हिन्दु और मूर्ति पूजक बना दिया और तुम्हारे मार्ग दर्शन की यह

—(१) उत्पन्न होना (२) मरना (३) खाना (४) जवानी (५) बुढ़ापा। (अनुवादक)

+सत्य धर्म का अन्वेषण (अनुवादक)

पुस्तकें हैं, तुम वास्तव में आर्य हो । अच्छा, इसे छोड़कर निवेदन करता हूं कि आप के पहिले बचन में कई भूलें हैं । आपने केवल उन का नाम सुना होगा हम आपको उन के मन्तव्य समझाते हैं ।

एक आयुर्वेद है । उस में शुरू से अन्त तक सरजरी, कैमिस्ट्री, मैडीसन, एनालोजी और वैद्यक आदि के वर्णन हैं । धर्म सम्बन्धी बात विशेष नहीं है ।

दूसरा धनुर्वेद है । जिस में समस्त सैनिक और युद्ध सम्बन्धी नियम जो राजाओं को सिखाए जाते हैं और तलवार, बन्दूक तोप, तीर, चक्र आदि को विधियां जो युद्ध में काम आती हैं विस्तार से लिखी हैं । धर्म का कुछ विशेष वर्णन नहीं है ।

तीसरा गन्धर्ववेद है । उस में गान विद्या का विस्तार और खोल कर वृत्त लिखा है । इस का भी धर्म से विशेष सम्बन्ध नहीं ।

चतुर्थ अर्थवेद है । इस में समाज नीति के कानून और प्रत्येक प्रकार की कारीगरी जैसे इन्जीनियरी आदि का वर्णन लिखा है । इस का भी धर्म से विशेष सम्बन्ध नहीं शोक ! कि इन चार उपवेदों को जो सांसारिक पुस्तकें हैं, वास्तविक धर्म सम्बन्धी गिना । यह तब हो यदि हम सब विद्याओं को पुस्तकों और कृत्रिम इन्जीलों को इलहामी पुस्तकें मान कर आपसे उत्तर मांगें दूसरी बड़ी भारी भूल यह है कि चार उपांग हैं जब कि वह छे हैं । और उनमें भी ज्ञान सम्बन्धी नियमों पर तर्क है । और वह यह हैं मीमांसा, सांख्य, योग न्याय, वंशेषिक, वेदान्त । और छे अंग यह हैं । शिक्षा, कल्प, ज्योतिष निरुक्त, अथवानिघंटु, व्याकरण, छन्द । इन में भी वेदमुकद्दस सम्बन्धी ग्राईमर, डिक्शनरी, नियम निर्मित किये गए हैं । अतः इन का भी धार्मिक विषयों से कुछ विशेष सम्बन्ध नहीं ।

वेद मुकद्दस चार हैं । ऋक यजुः साम अथर्व । यह हमारे धर्म के पवित्र ग्रन्थ हैं । जिनको आर्य लोग आरंभ सृष्टि से आज तक इलहामी मानते आए हैं । उन्हीं पुस्तकों से पादरी महोदय को आक्षेप करना उचित था । न यह कि बिला सोचे समझे अन्धाधुन्ध कारवाई शुरू कर दी ।

पृष्ठ ११२ (पादरी) किन्तु इन में चार वेद और छे शास्त्र और अठारह पुराण प्रसिद्ध हैं । जो विशेषतः धर्म और मोक्ष की बात से सम्बन्ध रखते हैं । सो अब उन पुस्तकों को बातें ऊपर चिह्नों से परखी जाती हैं । पहिले यह समझना चाहिये । कि इन पुस्तकों की दृष्टि से खुदा दो प्रकार से जाना जाता है । एक निर्गुण कहलाता, दूसरा सरगुण । निर्गुण के यह अर्थ कि जिस का गुण अर्थात् सिफत नहीं । और ईश्वर जब निर्गुण रहता है तो सृष्टि नहीं रहती और उसकी उस अवस्था का कुछ वर्णन ही नहीं ।

(उत्तर आर्य) पादरी जी का प्रथम वह फरमाना और पुनः अठारह पुराणों का शामिल करना किस तरह टट्टी की आड़ में शिकार खेलना है । जब सोचा कि वेदों और शास्त्रों में आक्षेप की गुंजाईश नहीं । इतिहासों, नावलों अर्थात् अठारह पुराणों को भी शामिल कर लिया । शोक ? परीक्षा करने वाले की योग्यता, जो शब्दों का अभिप्राय समझना तो एक ओर अर्थ भी नहीं समझता । पुनः उनके गम्भीर विचारों की वास्तविकता किस प्रकार जानेगा । हमारा ईश्वर कभी गुण रहित, कभी गुण सहित इस प्रकार समझ लिया होगा । कि जैसे अपने घर में खुदा को असीम और कभी अद्वितीय, कभी तीन और कभी सूक्ष्म और इन्द्रियातीत, कभी स्कूल और कभी दीमक, घुण, फाखता और घोड़े के रूप में, कभी सर्वज्ञ और कभी आंख से भी अन्धा कि अदन के उद्यान में आदम को ढूंडता रहा और बुलाया कि तू कहां है ! और मूसा से पूछा कि तेरे हाथ में क्या है ?

मेरे श्रीमन् ? हमारा उपास्य देव आप की भान्ति नहीं हैं । अब निर्गुण और सगुण के अर्थ जो हमारी पुस्तकों में लिखे हैं—सुनिये पादरी महोदय ? सरगुण शब्द अशुद्ध है । वास्तव में सगुण है, ईश्वर प्रत्येक अवस्था में एक स्वरूप में रहता है, स्वरूप नहीं बदलता इसमें बुराई, अत्याचार, धोखा, हठ, पक्षपात, द्वेष ईर्षा, दूसरे की उन्नति से जलना, क्रोध, मूर्खता आदि सर्वथा नहीं। इसलिये वह निर्गुण है । अर्थात इन गुणों से रहित और पवित्र है। क्योंकि यह गुण उस के ईश्वरत्व के योग्य नहीं । और सगुण इस लिए है कि इसमें पवित्रता, शक्तिमत्ता, न्याय ज्ञान, सर्वज्ञता आदि गुण हैं । अर्थात् उन गुणों से गुणी है । जो उस के ईश्वरत्व के योग्य हैं । निर्गुण के यह अर्थ नहीं कि कोई गुण उस में सर्वथा न रहे । और सगुण का यह अभिप्राय नहीं कि संसार के समस्त अच्छे बुरे गुण उस में आ जावें । अपने निजी गुणों की दृष्टि स सगुण और अन्य गुण (दुर्गुण) न होने से निर्गुण है । जैसा कि इस का उत्तम निर्णय शास्त्रार्थ बरेली में सत्यासत्य विवेक जो स्वामी दयानंद सरस्वती जी महाराज और पादरी स्काट महोदय के मध्य हो चुका है । और यह प्रयोजन और अभिप्राय समस्त शास्त्रों में लिखा है।

पृ० ११३ (पादरी) वह मानो नींद की सी अवस्था है कि इसमें उसे कुछ कहा नहीं जाता कि पवित्र या अपवित्र, सच्चा है या झूठा, शक्तिमान् है या शक्तिहीन, ज्ञानी है या अज्ञानी । क्योंकि वह सर्वथा निर्गुण ही है और इसीलिये वह ब्रह्म कहलाता है । अर्थात् न पुल्लिग और न स्त्रीलिंग किन्तु नपुंसक है । इन पुस्तकों की दृष्टि से ईश्वर सगुण कब होता है ? जब इसका उत्पन्न करने का विचार होता और माया की इसमें गति होती और ब्रह्म में अहंकार समाता तब तीन गुण अर्थात् सत्व, रज, तम उपजते हैं और उनसे सृष्टि उत्पन्न होती और वह सब पदार्थों में व्यापक हो जाता है । और दूध तथा शर्करा की भान्ति मिल जाता है ।

(उत्तर आर्य) यह तो किसी पुस्तक में नहीं है कि वह निद्रावस्था में होता है । न कहा जाता है कि पवित्र या अपवित्र । ईश्वर से रक्षा चाहता हूं । यह तो ऐसी बातें हैं, जैसे हम मार लोनी सम्प्रदाय के प्रमाण ईसाईमत के मन्तव्यों में उपस्थित करें और कहें कि सत्यमेव मूसा और ओल्ड टैस्टामेंट के पैग़ाम्बरों का उपास्य शैतान था । इसके अतिरिक्त उसका नाम ब्रह्म इस कारण से नहीं रखा कि न वह पुरुष न स्त्री किन्तु नपुंसक है । प्रत्युत इसलिए कि वह प्रत्येक वस्तु में है । और ब्रह्म शब्द के अर्थ भी यही हैं । यदि इस कारण से हो तो उसके पुल्लिग नाम क्यों हैं ? और स्त्रीलिंग नाम क्यों हैं ? परमेश्वर के नाम केवल उसके गुणों के वर्णन करने वाले हैं । इनसे यह अभिप्राय नहीं कि क्या लिंग है ? और यह कहना कि वह संसार के न रहने पर निर्गुण होगा—आदि यह केवल आपका मनघड़ंत मन्तव्य है । किसी पूरे और निपुण आर्य से पूछकर लिखना उचित था । और न इसमें वेद मुक़द्दस का प्रमाण लिखा है । अतः यह प्रतिज्ञा युक्तिशून्य, हेच व पोच है ।

पृ० ११३ (पादरी) जैसा कि वेद में लिखा है कि सृष्टि होने के समय खुदा कहता है कि एकोहं बहुस्याम् । अर्थात् मैं एक हूं । बहुत हो जाऊंगा । पुनः वेद में लिखा है कि वही किसान होकर भूमि को जोतता बोता और पानी बनकर उसे सींचता है, और अन्न होकर सबका पेट भरता सत् और असत् उसी से है ।

बैत—सत् असत् हैं दोनों जिससे ।
फिर उनके निर्णय हैं किससे ।।

(उत्तर आर्य) वाह पादरी साहब ! अच्छा प्रश्न किया है ? यदि हम कहें कि मसीह फांसी पर नहीं चढ़ा—यह इञ्जीलों में लिखा है । तो ईसाई कब मानेंगे ? किन्तु कहेंगे कि दिखलाओ कहां लिखा है ? हम भी पूछते हैं कि आप वेद में लिखा दिखाएं । वेद तो चार हैं । ऋग्यजु साम अथर्व । इनमें से किस में लिखा है ? तब उत्तर दिया जाएगा । हे महोदय ! किसी नासमझ, टका के लोभी ने आपको धोखा दिया है ।

यह सिद्धान्त वेद मुकद्दस के विरुद्ध है और किसी वेद में नहीं है । अतः इसको वेद कहना सर्वथा न्याय के विरुद्ध है ।

(पादरी) पृ० ११४ से ११६ तक । बहुत कुछ उपनिषदों और वसिष्ठ तथा दिवोदास आदि के श्लोक लिखकर संक्षेप लिखा है कि हिन्दुओं की पुस्तकों में ईश्वर जो निर्गुण है । उसका वर्णन ही नहीं और संक्षेप का यह श्लोक है :—

एकमेवाद्वितीयं ब्रह्म नेह नानास्ति किंचन ।

अनुवाद—अर्थात् एक ही ब्रह्म है इसके अतिरिक्त कुछ नहीं । वेद शास्त्र और पुराण का सार यही है ।

(उत्तर आर्य) आपने यहां सर्वथा गड़बड़ मचा दी । प्रथम जो श्लोक लिखा । उसका अभिप्राय और है और इस श्लोक का अन्य ही अभिप्राय है । आपने ज्ञात नहीं क्योंकर उन श्लोकों का यह सार समझ लिया और इसके अतिरिक्त उसका अनुवाद भी अशुद्ध समझा । किन्तु इसके अर्थ यह हैं कि ईश्वर केवल एक ही है—दूसरा नहीं है । आपको भ्रान्ति तीन खुदा इसमें नहीं माने हैं । इसलिए तीन की आज्ञा न पाकर आपको आक्षेप का अवसर मिला होगा ? इसमें बहुत्व के मेल को हटाकर वह्दत (एकत्व) का इशारा किया है । दूसरे पदार्थ की सत्ता से इन्कार सर्वथा नहीं किया । शोक आपकी समझदारी पर कि सोचे समझे विना शास्त्र और पुराण का सार निकाल लिया ।

(पादरी) पृष्ठ ११६—ईश्वर जब सगुण हुआ और सर्वव्यापक होके सब बातों का कर्ता ठहरा । उसकी पवित्रता सिद्ध करनी कठिन प्रतीत होती है । अच्छा इस बात के ज्ञात करने में क्या चाहिए कि इन पुस्तकों की दृष्टि से सगुण होने से पूर्व वह देव बना । बस क्या वह देव में होकर पवित्र ठहरता है कि नहीं ? क्योंकि यदि उनमें जो सब देवताओं के सरदार ब्रह्मा विष्णु महेश हैं । पवित्र न ठहरेगा । तो किसमें ठहरेगा ?

(उत्तर आर्य) पारकर महोदय कहते हैं कि यदि भैंस का कोई मज़हब होता तो अवश्य वह अपने उपास्य को भैंस मानती । जिसका प्रत्येक अंग मन पसंद और रूप मन चाहा, लंबाई चौड़ाई में ठीक दृढ़ और बहुत अच्छे चारा स्थानों में चरने वाली मानतीं । यह सत्य है कि :—

फ़िकरे हरकस हिम्मते ओस्त× ।

प्रत्येक अपने विश्वास और अनुमान के अनुसार कहता है । देखिए ! बाईबल में ख़ुदा ने आदम को अपनी सूरत (रूप) पर बनाया । अदन में आदम से वार्तालाप किया । पुनः याकूब से कुश्ती लड़कर

—प्रत्येक व्यक्ति की चिन्ता (सोचना) उसकी समर्थ पर है । (अनुवादक)

पराजित हुआ और रक्षा मांगी। मूसा को दुराचार के लिए इच्छा दिखाई। जैसा कि मूसा की पुस्तकों से जैसे का तैसा प्रगट है। इस प्रकार के व्यर्थ विचारों ने तहक़ीक़दीनेहक़्क़ के लेखक को धोखा में डाल दिया होगा, और समझा होगा कि जैसे मसीह हमारे विश्वास में शरीरी खुदा है उनके मज़हब में भी ब्रह्मा, विष्णु, महेश तीन शरीरी ख़ुदा ठहराऊं और उनका नाम सगुण रूप रखूं। यदि हम आर्य इसको मानते होते—तो हम मसीह का क्यों खंडन करते? अथवा ब्रह्मा, विष्णु, महेश के रूप में तसलीस के भंवर में क्यों न फंसते? किन्तु यह विचार निःसन्देह सीधा नरक में पहुंचाने वाला है और मूर्खता तथा नीचता के कूप में गिराने वाला है। अतः हम कदापि इनको मसीह की भान्ति शरीरी खुदा नहीं मानते। हाँ, पुण्यात्मा महापुरुष जानते हैं। मूर्ख लोगों ने उन पर दोष और तौहमतें अपनी पेट पालना के लिए लगाई हैं। जैसे कि मती ने यरमियाह नबी का नाम और बहस अपनी पुस्तक में लिखी है। इसी प्रकार स्वार्थी, मक्कार लोगों ने ब्रह्मा, विष्णु, महेश महात्माओं पर दोष लगाए हैं। किन्तु बुद्धिमान् लोग जो उनकी शिक्षा पढ़ते हैं और उससे चमकते दिन की भान्ति समझते हैं कि प्रत्येक प्रकार के पाप से परे और पवित्र थे।

(पादरी) पृष्ठ ११७-११८ चंडीपाठ, मत्स्य, विष्णु, लिंग, वायु आदि पुराणों के प्रमाण से लिखा है कि ब्रह्मा सदैव मद्यपान करता था। एक दिन उन्मत्त होके अपनी कन्या पर बुरा विचार किया इत्यादि।

(उत्तर आर्य) कहावत प्रसिद्ध है कि छाज तो बोले किन्तु छाननी क्या बोले, जिसको सहस्रों छेद हैं। हम पर किसी प्रकार दोष नहीं लग सकता। क्योंकि प्रथम तो चंडो पाठ आदि पुस्तकें विश्वस्त नहीं। और इसके अतिरिक्त आप पुराणों की साक्षी लाते हैं। किन्तु अपनी इलहामी बाईबल उत्पत्ति पुस्तक की ओर कुछ ध्यान से नहीं देखते। जहां लिखा है कि खुदा के प्रिय नबी हज़रत लूत ने अपनी दो पुत्रियों से शराब पीकर दुराचार किया। (उत्पत्ति २०।३१-३६) खुदा के आदेश और मूसा की आज्ञा के अनुसार ३२ सहस्र कुंवारी लड़कियों से दुराचार हुआ। इसको पढ़कर लज्जा नहीं आती। कि ब्रह्मा पर प्रमाण के विना दोष लगाते हो और इञ्जील का अध्ययन नहीं करते।

बैत :- तो बर ओज फ़लक चेह दानी चीस्त।
चूं न दानी कि दर सराए तो कीस्त ॥+

(पादरी) पृष्ठ ११८—पद्मपुराण के प्रमाणानुसार विष्णु ने जालधंर दैत्य का आकार धारणकर उसकी पत्नी से सहवास किया—इत्यादि।

(उत्तर आर्य) अपनी आंख में शहतीर नहीं सूझता, किन्तु दूसरे को आंख का तिनका भारी प्रतीत होता है। पद्मपुराण जो किसी कामी पुरुष की रचना है, उसी का प्रमाण उपस्थित किया। जब कि उन पुस्तकों के प्रमाण हमारे महात्मा लोगों के विषय में यथार्थ नहीं। अन्यथा टामस पेन महोदय बहादर की ऐच ओफ रीजन बाईबल के विषयमें प्रमाण माननी पड़ेगी। मूर्खों की बातको प्रमाण मानना उचित नहीं है। वेदशास्त्र से प्रमाण चाहिए। क्योंकि यह दुष्कर और असंभव है। अतः हम इञ्जील से

— तू आकाश के ऊपर क्या जानता है कि क्या है? जबकि तू नहीं जानता कि तेरे घर में कौन है? (अनुवादक)

प्रमाण लाते हैं कि दाऊद ने ओरियाह की पत्नी से दुराचार किया और ओरियाह का जान बूझकर वध कराया। जिसकी सन्तान से हज़रत मसीह खुदा साकार उत्पन्न हुआ। नाक अपना कटा हुआ है। नक्क कटा दूसरों को बतावें। शोक! (देखो समवाईल २ अध्याय २ आयत ३-५)

(पादरी) पृष्ठ ११८—महादेव अपने विवाह में नग्न होकर बैल पर चढ़ा।

(उत्तर आर्य) हज़रत नूह ने भी अगूरी शराब पीकर अपनी नग्नता प्रगट की थी। आपकी इलहामी पुस्तक कहती है। (देखो तौरेत उत्पत्ति अध्याय ९ आयत २२)

इस ओर एक कामान्ध और वाममार्गी की पुस्तक में है। यह कदापि मान्य नहीं। प्रतिवादी ने सिर पैर रहित बातें वेद शास्त्र के प्रमाण के विना लिख दी हैं। सम्पूर्ण आक्षेप उन पुस्तकों पर किए हैं जिनमें ६०० या ७०० वर्षों के अन्दर लोगों ने विचित्र २ कथाएं अपनी स्वार्थ पूर्ति के लिए लिख दी हैं। अतः इस अवस्था में जो सम्पूर्ण आक्षेप सत्यधर्म पर भूल से किए हैं। वह सब निराधार हैं। हम किस का उत्तर दें? यदि कोई आक्षेप वेद मुकद्दस पर करता। तो हम प्रसन्नता पूर्वक उत्तर देने को उपस्थित थे। किन्तु बेचारे पादरी साहब संभवतः उनके नाम से भी अपरिचित हैं। अतः आक्षेप कहां से लाते? और उनकी योग्यता और साहस कहां? हां, पुराणों पर आक्षेप किये हैं। और उन्हीं के मानने वाले ब्राह्मणों से कुछ टक्के देकर आक्षेप लिखा लिये होंगे। क्योंकि आशा नहीं कि पुराणों को पढ़ने की भी कुछ योग्यता रखते हूं? किन्तु हमने तो इञ्जील, फ़ारसी, उर्दू, रोमन, नागरी आदि भी पढ़ी हैं। इसलिए हमने जो प्रश्न किए हैं। बाईबल से ही किये हैं। यदि कोई इन्कार करे तो दिखाने को उपस्थित हैं।

क्योंकि पादरी महोदय ने पुराणों पर आक्षेप करके मूर्ख हिन्दुओं को संशय में डालने के लिए पुस्तक लिखी है अतः हम उसका क्या खंडन लिखें जबकि सम्पूर्ण आक्षेप ही निराधार हैं।

(पादरी) पृ० १२०—तीन देवताओं के विषय को पर्याप्त न समझकर रामचंद्र पर दोष लगाए हैं कि उसने रावण ब्राह्मण को मारा और अपनी स्त्री को जो रावण के घर में प्रविष्ट हुई थी पुनः स्वीकार किया और लोगों ने इसको (अशुद्ध) अपवित्र ठहराया।

(उत्तर आर्य) प्रथम तो यह है किरामचंद्र मनुष्य था। उसकी वीरता की ओर देख कर ईसाईयों को चाहिए कि उसको एक सच्चे नबी की भांति समझें। आज संसार की सभ्य और वैज्ञानिक जाति एक मील की दूरी पर पुल बनाना बहुत कठिन समझती है और वह भी वर्ष दो वर्ष के पश्चात् गिर पड़ता है। इस बहुत बड़े वीर ने २५ कोस समुद्र पर पुल बांधकर लंकामें बड़ी भारी लड़ाई लड़कर विजय प्राप्त की। यह केवल अपने पिता का वचनपालन था और यह सीता की पवित्रता थी कि वैरियों के पास रहना स्वीकार न करके पति के साथ हुई। यदि इस एकान्त अवस्था में किसी ने धोखे से उसकी पत्नी को चुरा लिया और उन्होंने अपने सम्राट् पिता से सहायता न लेने पर भी अकेले विजय प्राप्त करके उस को जो एक पवित्र दामन (देवी) प्रसिद्ध है—फ़ैज़ी के कथानुसार—बैत (छन्द)

तनश रा पैरहन उरियां न दीदह।
चूं जान अन्दर तन वतनजां न दीदह॥×

—वस्त्रों ने उसके शरीर को नग्न नहीं देखा। जैसे शरीर के अन्दर जीवात्मा है और शरीर ने जीव को नहीं देखा। (अनुवादक)

घर में लाया तो इस में उस को क्या दोष आया? हे पक्षपात! तेरा खाना खराब हो। तुझे न्याय से शत्रुता है। सीता जी तो बाधित थी जो रावण के द्वारा भगायी गयी। किन्तु वह ''''''तो प्रसन्नता से ज़करिया के घर में चली गई थी। और उसकी पवित्रता की गवाही भी यहूदी खूब देते हैं। फिर यूसुफ़ ने घर में रख ली थी। जिसका वर्णन लूक़ा की इञ्जील पूछे में है। और याक़ूब नबी की, प्रिय पुत्री वीणा नाम सकम के घर में रही और उससे सहवास भी किया किन्तु याक़ूब ने अपने घर में रख लिया। जिसका वर्णन उत्पत्ति ३४/२,३ में है शोक कि दीन के सेवक "आंख के अन्धे, नाम नैन सुख" अपनी ग्रीवा में मुख डाल के बाईबल को नहीं देखते।

(पादरी) पृ० १२१ से १२२ — पुनः प्रतिवादी कृष्ण जी के संबंध में लिखता है कि भागवत पुराण की दृष्टि से गोपियों के साथ उसका दुष्कर्म करना प्रगट होता है और यह लिखा है कि गोविन्द ने गोपियों के आनंद का अमृत पाया। इन बातों से ज्ञात होता है कि हिन्दुओं की धर्म दृष्टि से भगवान् पवित्र नहीं।

(उत्तर आर्य) प्रथम आपने घर में बाईबल को ध्यान से विचारें। क्या वह भागवत से अधिक ख़ुदा की सत्ता पर दोष नहीं लगाती है। पुनः आप को ज्ञात होगा कि ख़ुदा के उपासकों ने क्या २ नहीं किया ?

यहूदा नबी ने अपने ईर नाम के पुत्र की तिमर नाम पत्नी अर्थात् पुत्र वधु से दुराचार किया जिस का वर्णन उत्पत्ति ३८/१७-१६ में है। और सुलेमान ने एक सहस्र से बढ़ कर स्त्रियों से दुष्कर्म और बुत परस्ती भी की। सलातीन ११/६ में वर्णन है। मूसा ने दो और इब्राहीम ने संभवतः तीन, दाऊद ने ६६ प्रत्युत १०० संक्षेपतः क्या कहूं ? यशाया के अध्याय ३ आयत १७ में ख़ुदा भी स्त्रियों की योनि उखाड़ेगा" :

हे पादरी साहब ! कुछ सोच कर आक्षेप किया करो। कृष्ण जी महाराज जो बहुत बड़े कर्मठ विद्वान् पुण्यात्मा, पुण्य भाग्य साहसी महापुरुष थे। उन को दोषी ठहराते हो और प्रमाण भागवत का लाते हो जो सर्वथा अप्रामाणिक पोथी है। पृ० १२१ में जो आक्षेपक ने गीता का श्लोक लिखा है उससे स्पष्ट सिद्ध हो गया है कि प्रश्न कर्ता संस्कृत से अनभिज्ञ और गीता से सर्वथा अज्ञ है। शोक कि गीता में यह श्लोक सर्वथा नहीं है। अतः उसके सम्पूर्ण आक्षेप प्रमाण रहित ठहरे। जिस व्यक्ति ने पक्षपात रहित मन से गीता का अध्ययन किया है वह कृष्ण जी के आत्मिक प्रभाव को मान सकता है। अब आगे चल कर आक्षेप कर्ता ईश्वर के पवित्र, न्यायकारी, दयालु, परोक्षज्ञाता, सर्वज्ञ, सत्यधर्मा आदि गुण ब्रह्मा, विष्णु, महेश, और राम कृष्ण में ढूंडता है। शोक कि ब्रह्मा, विष्णु, महेश आदि जो किसी काल में मनुष्य थे। उनको हमारा ईश्वर बनाकर उन पर झूठे दोष पुराणों से लगाकर उलाहना देते हैं। जो उन की सभ्यता का वास्तविक नूर (प्रकाश अथवा तेज) है। बस हम इञ्जील में भी ढूंडते हैं कि बाईबल के ख़ुदा में यह छे उपरिलिखित गुण हैं या नहीं। हां, क़ुदूस शब्द इञ्जील में है किन्तु उस की पतित्रता प्रगट नहीं होती। क्या स्त्रियों की योनियां उखाड़ना पवित्रता है ? क्या लूत, दाऊद, सुलेमान, यहूदा, मूसा आदि को मित्र रखना और दंड निपात न करना पवित्रता है ? क्या एक आदम के पाप के बदले में सम्पूर्ण संसार को पापी ठहराना न्याय है ? क्या एक के फांसी दिये जाने से अन्यों के पाप क्षमा किये जाना न्याय है ? क्या एक निष्पाप को फांसी देना न्याय में प्रविष्ट है ? दया गुण के विरुद्ध

ईसाईयों का खुदा जल्लाद है। मूसा ने करोड़ों मनुष्य मारे। सहस्रों का रक्त गिराया। इसके मुरीद यशूअ ने सहस्रों का सत्यानाश किया। समवाईल अध्याय ६ आयत १६ में खुदा ने पचास सहस्र सत्तर मार डाले। खुदा आज्ञा देता है अब तू जा और अमालीक़ को मार और सब कुछ जो उन का है। एक साथ बरबाद कर और उन पर दया मत कर। किन्तु स्त्री पुरूष नन्हे दूध पीते बच्चे और बैल, भेड़,बकरी, ऊंट, गधे तक सब का बध कर। समवाईल १५/३ गिनती २५।१६ चौबीस सहस्र को मार डाला। गिनती ११।२३ मांस दातों के तले था कठोर मारी। हौशीअ १३।१६ उन की लड़कियां फेंकी जावेंगी और गर्भवती स्त्रियां चीरी जाएंगी। समवाईल १।५-६ सिद्दियों को बवसीर से मारा। पैदायश अध्याय ७ तूफान से मारा। अखतर क़ील ३१।३ सब पर तलवार चलाऊंगा। अत: दया कहां रही? किन्तु दयालु हो गया। परोक्षज्ञाता होने का भी इन्जील खंडन करती है आमूस अध्याय ६ में खुदा फ़रमाता है कि मैं उनकी सन्तान को तलवार से मारूंगा। उन में से कोई भाग न सकेगा। और निकल भागे छुटकारा न पाएंगे। यदि वह पाताल में सींध मारे तो मेरा हाथ वहां से खेंच लाएगा। यदि आसमान पर चढ़ जावे तो वहां से उतार लूँ। यदि समुद्र की तह में मेरी दृष्टि से छिप जावे तो वहां सांप को आज्ञा दूंगा कि वह उनको वहां से जा कर काटे। क्या अच्छा परोक्ष का ज्ञाता है? जो ज्ञाता भूमि की छलांगें लगा रहा है। और यह ध्यान नहीं कि सांप आज्ञा पालन न करने से पूर्व लानती हो चुका है। खुदा तूफान को भेज कर पछताया और भूमि के निवासियों को डुबाकर के मन में दुःखी हुआ और तोबा की कि आगामी को ऐसा न करूंगा। (पैदायश अध्याय ६)

अदन के उद्यान में पुकारा। हे आदम! तू कहां है? तुझे किसने जताया कि तू नंगा है? क्या उस वृक्ष का फल तू ने खाया जिसके विषय में मैंने रोका था। (पैदायश ३।११)

खुदा ने क़ायन से कहा तेरा भाई हाबील कहां है। (पैदायश ४।६)

अब उतर के देखूंगा कि उन्होंने सरासर उस चलाने के अनुसार जो मुझ तक पहुंचाया गया है या नहीं और यदि नहीं तो मैं ज्ञात करूंगा। (पैदायश १८।२१)

खुदा ने आदम से कहा कि पुण्य पाप की पहचान के वृक्ष से कुछ न खाना। क्योंकि जिस दिन तू खाएगा अवश्य मरेगा। (पैदायश २।१७)

इसके विरुद्ध बाईबल की दृष्टि से आदम की आयु नौ सौ तीस वर्ष की हुई। हज़रत सर्वज्ञता का पोल खुल है। अब खुदा की सत्यता भी आक्षेप कर्ता को दिखाता हूं। खुदा ने मूसा से कहा कि तू फ़िरऔन को जाकर प्रेरणा कर और मैं फ़िरऔन के मन को कठोर करूंगा और फिरऔन तुम्हारी न सुनेगा। (खरूज ७।२) आदि!

बस, सत्यता इसी का नाम है! और कुद्दूस× की यही वाणी और काम हैं? तो हमारा भी सलाम है।

(पादरी) पुन. महाभारत में कृष्ण के संबंध में यूं लिखा है कि जब उन की आंख राधा से लगी तो एक दिन नन्दवीन घोष की बहिन ने इन दोनों को एक स्थान पर पाया। इस लिये राधा बहुत डर गई। और कृष्ण से कहने लगी कि वह मेरे पति से यह बातें कह देगी और वह आ कर मुझको मार

(१) बहुत पवित्रता

डालेगा। कृष्ण ने इसे कहा कि तुम मत डरो यदि वह संभवतः आवेगा तो मैं काली बन जाऊंगा। और तू मेरी पूजा करने लगियो। बस मैदान जीत लीजियो। शोक! सहस्र शोक? भला ऐसे व्यक्ति में भी कहीं सत्य पा सकते हैं?

(उत्तर आर्य) ज्ञात नहीं कि इन लोगों ने मिथ्या वादन का स्वभाव कहां से सीख लिया है? और क्या इच्छया अनिच्छया लोगों को धोखा देकर फुसला कर मार्ग भ्रष्ट किया करते हैं? हमने महाभारत में पड़ताल की। कहीं इस का चिह्न वर्तमान न पाया। किन्तु यह वर्णन तो भागवत में भी नहीं है। इस लिये हमें कहना पड़ा कि दीने हक्क के लेखक की खोज की बुद्धि पर और इस के झूठे आक्षेपों पर शोक? शत सहस्र शोक। भला ऐसे पादरियों में भी कहीं सत्य का चिह्न पा सकते हैं।

(पादरी) पृष्ठ १३२ से १४४-हिन्दुओं का उत्पत्ति के संबंध में बड़ा विरोध पाया जाता है। कोई शिव, कोई विष्णु, कोई काली देवी को उत्पन्न करने वाला मानता है। पहिले माया से सत्, रज, तम पुनः अहंकार, फिर आकाश, पुनः वायु अग्नि, पानी, पृथिवी-इस से मनुष्य उत्पन्न हुए। और प्रमाण केवल कूर्म पुराण व लिंग पुराण और ब्रह्मवैवर्त्त पुराण व मारकंडेय पुराण व भागवत पुराणादि का देता है।

(उत्तर आर्य) आक्षेप कर्ता से हम पूछते हैं कि बाईबल में जो लिखा है कि कहीं संसार का बनाने वाला गाड, कहीं खुदावन्द, जहोवा, कहीं लार्ड, कहीं फ़ादर, क्या तुम्हारे बहुत खुदा हैं! अथवा यह सब एक ही खुदा के नाम हैं? यदि पहिला वचन ठीक है तो आक्षेप तुम्हारे ऊपर युक्त होता है। यदि दूसरा भाग है तो शिव, विष्णु, देवी, एक ही परमेश्वर के नाम हैं। इस के अतिरिक्त यदि वेद मुकद्दस से उत्पत्ति का वृत्तान्त पढ़ते-जो परमेश्वर ने स्वयं हम को बताया है तो कोई संदेह न रहता। और ज्ञान कर्म के अनुसार था। मूर्खों की पुस्तकों में देख कर, स्वार्थियों के मुख से सुन कर और अपनी मजहबी पुस्तकों में बुद्धि विरुद्ध उत्पत्ति का समाचार पढ़ कर मन में निर्णय कर लिया। जैसे

(अस्पेमन अस्पस्त व असपेदीगरां चूं खच्चरस्त+)

बाईबल में वर्णित उत्पत्ति कैसी ऊटपटांग है। देखिये सात दिन में संसार को उत्पन्न किया अदन में अंगूर का उद्यान लगाया। सायं को खुदा उस में टहल रहा था (कैसी भूल है) आरंभ में खुदा ने आसमान और पृथिवी को उत्पन्न किया। और बेडोल तथा सुन्सान थी। और गहराव के ऊपर अंधेरा था। और खुदा की रूह (आत्मा) पानियों पर जुंबश (गति) करती थी। और खुदा ने कहा-उजाला हो। उजाला हो गया। और पुनः खुदा ने उजाले को देखा कि अच्छा है। और खुदा ने उजाले को अंधेरे से पृथक् किया। और खुदा ने उजाले को दिन कहा और अंधेरे को रात कहा। सो सायं और प्रातः पहिला दिन हुआ। (पैदायश १।१-५)

हम पूछते हैं कि खुदा अनादि है या नहीं। यदि कहो कि अनादि है। तो अनादि में आरंभ नहीं होता। क्योंकि अनादि के अर्थ हैं कि जिस का आरंभ न हो। और आरंभ शुरू को कहते हैं। इस से यह सिद्ध होता है कि ईसाईयों का खुदा अनादि काल से बेकार था। और संसार उत्पन्न करने के ज्ञान से अपरिचित था। जो कहो कि खुदा अनादि नहीं। तो वह खुदा ही नहीं हो सकता। आसमान से क्या

+मेरा घोड़ा घोड़ा है और दूसरों का घोड़ा खच्चर जैसा है। [अनुवादक]

अभिप्रेत है ? खुदा के निवास का स्थान अथवा अवकाश । यदि प्रथम भाग ठीक है । तो जब तक आसमान नहीं बना था । तब तक खुदा किस स्थान पर रहता था । स्पष्ट रूपेण यही कहा जा सकता है कि वह बेघर रहा होगा । अथवा मकान बनाने की चिन्ता में हो । किन्तु कोई नकशा समझ में न आया होगा । जो भाग दो पर विश्वास है तो बाईबल निराधार है । क्योंकि इस में इस का वर्णन नहीं । हां, व्याख्या करने वालों ने अवकाश के अभिप्राय से आसमान लिखा है । खैर बाशद (कल्याण हो) तो इस की उत्पत्ति नहीं हो सकती । क्योंकि यह ऊपर नीचे एकसा है । जब पोल नहीं था तो क्या था । और खुदा कहां रहता था । खुदा का ज्ञान पूर्ण था या बेडोल ? यदि प्रश्न पहिला ठीक हं ? तो इससे पृथिवी बेडोल क्यों उत्पन्न हुई ! और फिर बेडोल अर्थात् ऊचे नीचे को जिस ने समान किया । जो भाग दो ठीक है । तो वह खुदा ही नहीं हो सकता । खुदा सर्व व्यापक या एक देशी—समिति ? भाग प्रथम में खुदा की रूह पानियों पर जुंबश (हरकत) करती थो (जिस को बाईबल में मुरग़ाबी कि शती समझ कर रखा है) ऐसा नहीं हो सकता । जब रूह पानियों पर जुंबश करती मानोगे तो खुदा के शरीर को पानियों में डूबा हुआ अथवा किसी अन्य स्थान पर स्वीकार करना पड़ेगा, जो खुदाई गुणों के सर्वथा विरुद्ध है । दूसरा प्रश्न यह है कि जो सीमा वाला है वह खुदा नहीं । किन्तु मनुष्य, पशु अथवा कोई अन्या वनस्पति आदि है ।

खुदा ने उजाले को देख कर कहा कि अच्छा है । क्या पहिले नहीं जानता था । और उजाला उस के ज्ञान में न था । यदि होता तो देख कर अच्छा न कहता । और खुदा ने कहा कि पानियों के मध्य आसमान हो । और पानियों को पानियों से पृथक् करे । तब खुदा ने आसमान को बनाया, आदि २ । सायं और प्रातः दूसरा दिन हुआ । (पैदायश १।१-८)

विचार कीजिये । यदि पानियों के मध्य आसमान न होता तो पानो रहते ही कहाँ । आसमान को भी आयत में प्रथम दिन ही बनाया था । अब दूसरे रिन उस का क्या बनाया । कहाँ तक लिख जाए । संक्षेप यह है कि तीसरे दिन खुदा ने समुद्र, वनस्पति और चौथे दिन चंद्र, सूर्य संक्षेपतः छे दिन में सब कुछ उत्पन्न करके आदम को अपनी सूरत (रूप) पर बना कर सातवें दिन विश्राम किया । खुदा ने आदम पर भारी नींद भेजी । वह सो गया । उस को पसलियों में से एक पसलो निकाली और उसके स्थान पर मांस भर दिया । और खुदावन्द उस पसलो से एक स्त्री बना कर आदम के पास लाया ।

(पैदायश ३।३१-३३)

सुबहानल्लाह (ईश्वर पवित्र है) और यह कार्य परमेश्वर सर्वव्यापक क्योंकर समस्त लोकों की ख़बरदारी—सावधानता छोड़कर एक बिचारे आदम के पीछे पड़ गया । नींद भी संभवतः वज़नदार वस्तु हो गई ? तभी तो भारी शब्द का उल्लेख हुआ है । संभवतः नींद से बाईबल का अभिप्राय बेहोशी (अचेतना) होगी । क्योंकि पसली काटते हुए आदम को ज्ञान न हुआ । उस स्थान पर चाकू, कारद, खंजर का वर्णन तो नहीं । प्रतीत होता है कि खुदा ने अपने तेज़ नाख़ूनों से जो सिंह समान फाड़ने वाले होंगे, पसली काटी होगी । वह मांस कहां से आया ? जो पसली के बदले में भरा गया । क्योंकि उस समय आदम के अतिरिक्त अन्य कोई उत्पन्न न हुआ था । खुदा ने संभवतः अपनी जांघ काटकर भरा होगा ? मनुष्य की रचना से स्पष्ट प्रगट है कि उसकी कोई पसली न्यून नहीं । और स्त्री पुरुष दोनों के शारीरिक अंगों की रचना एक समान है । भला एक पसली से समस्त शरीर के अंग किस प्रकार बनें ? जैसे आँख, कान, सिर, नाक, हाथ, पैर आदि आदि । योरोपियन सर्जन महोदय विचार करें । संभव है ।

उत्तर में पादरी महोदय मांती बखारेंगे कि खुदा सर्वशक्तिमान् है। वह सब कुछ कर सकता है। हम पूछते हैं। आपके कथनानुसार वह सर्वशक्तिमान् पसलो विना स्त्री नहीं बना सकता था ?

श्रीमन् ! सर्वशक्तिमान् के यह अर्थ नहीं। कि जो अनाप शनाप मनमें आया, कर दिया, स्मरण रहे। वह अपने नियमों के विरुद्ध कुछ नहीं करता। (जैसा कि इसका निर्णय सत्यासत्य विवेक में विद्यमान है देख लेना) थोड़ा सा गर्दन में मुख डालकर देखिये। यह कैसी मूर्खता और अज्ञानता से उत्पत्ति का वर्णन है। यद्यपि पुराणों में भिन्न नामों से उत्पत्ति का वर्णन है। तो भी इसमें उत्पत्ति कर्ता की यह महत्ता दिखाई है कि उसने संसार को ईसाईयों के खुदा के छे दिन में उत्पन्न करके सातवें दिन थकान को दूर करने के लिये विश्राम किया इसके विरुद्ध एक समय में उत्पन्न किया। (विस्तार देखो सद्धर्म विचार में सृष्टि उत्पत्ति संबंधी शास्त्रार्थ का उल्लेख है)

(पादरी) पृष्ठ १४५—हिन्दुओं की पुस्तकों में शहद और दूध आदि के समुद्र लिखे हैं। और प्रमाण भागवत और मार्कंडेय पुराण का देते हैं। इनका भी कहीं ठिकाना नहीं लगता। केवल भ्रम के समुद्र में डूब मरना है।

(उत्तर आर्य) पादरी जी को खुरूज के तीसरे अध्याय की आठवीं आयत देखकर विचारना चाहिए। खुदा फ़रमाता है कि "मैं बनी इसराईल को मिश्रियों के हाथ से मुक्त करूंगा। और इस भूमि से निकाल कर अच्छी विस्तृत भूमि में जहां शहद और दूध लहरें मारता है—पहुंचा दूंगा।"

और इसी प्रकार यशूआ ५।७ में लिखा है—"खुदावन्द ने उनके बाप दादाओं से शपथ खा करके कहा कि मैं तुमको वह भूमि दूंगा जिसमें दूध और शहद बहता है।"

अब हम पूछते हैं कि कहां खुदा ने शहद और दूध के समुद्र बताए ? जिस स्थान पर यह समुद्र हूंगे हमारे ब्राह्मणों ने भी उन्हीं की ओर इशारा किया है। क्या भागवत से बाईबल अधिक प्रतिष्ठा पा सकती है ?

(पादरी) पृष्ठ १४५—हिन्दुओं के मत में भूमि एक चटियल मैदान कमल पत्र की भान्ति है और कछवे की पीठ पर है और कुछ पुराणों में लिखा है कि शेष नाग के सिर पर है। सो हिन्दुओं के शास्त्रों की यह बातें ज्योतिर्विद्या आदि की दृष्टि से स्पष्ट मिथ्या ठहरती हैं। उनके लेखक अज्ञानी थे और भूमि को खड़ी समझते थे। और लोकों की दूरी की गणना को न समझते थे।

(उत्तर आर्य) अवश्य न समझते थे क्योंकि ग्रहणादि का वृत्तान्त जो बताते थे। इसीलिए लोकों को न समझते थे और पत्री अर्थात् जंत्री जो बनाते थे। संभवत: प्रश्नकर्ता उनको अन्यों का आविष्कार समझता होगा ? निश्चित अपने नबी खुदा के उपासक यशूअ् की जो ज्योतिर्विद्या का पूर्ण ज्ञाता था—जिसने १०।११-१४ में सूर्य को कहा कि हे आफ़ताब ! (सूर्य) जबअं पर ठहरा रह। और ऐ महताब (चंद्र) तू भी एलों के मैदान के मध्य (ठहरा रह) तब सूर्य खड़ा रहा और चंद्र ठहर गया। यहां तक कि उन लोगों ने अपने शत्रुओं से प्रतिशोध लिया और सूर्य आसमान के बीचों बीच ठहरा रहा और दिन भर के लगभग पश्चिम की ओर की गति न की।"

संसार में उस समय संभवत: सूर्य और चंद्रमा एकत्र चलते हूंगे ? अत: चन्द्रमा और सूर्य दोनों को यशूअ् ने खड़ा कर लिया। अब खुदा ने उनको पृथक् २ कर दिया। शोक ! इसका क्या उत्तर है ?

यशूअ ने भूमि का खड़ा रहना मन में अवश्य माना होगा। अन्यथा भूमि को भी खड़ी रहो अवश्य कहता और योहना की मुकाशफ़ात १२।१-४ में लिखा है कि :—

"एक दम बड़ा निशान आसमान पर दृष्टिगत हुआ कि एक स्त्री सूर्य को ओढ़े हुए थी और चांद उसके पाऊं तले और उसके सिर पर बारह सितारों का ताज था वह स्त्री गर्भवती थी और दर्द से चिल्लाती थी। जनने को एंठी थी और एक लाल रंग का बड़ा अजदहा आसमान पर दीख पड़ा। जिसके सात सिर और दस सींग हैं और सिरों पर सात शाही ताज रखे हुए हैं और उसकी दुम (पूंछ) ने १।३ भाग सितारों को खेंच कर भूमि पर दे मारा।"

क्योंकि यह मन्तव्य बाईबल का है। ज्ञान विरुद्ध होने पर भी प्रश्नकर्ता को माननीय है। स्त्री की आसमान पर सत्ता और सूर्य वस्त्र था। जिसकी चादर उसने ओढ़ी हुई थी। और आसमान पर गर्भवती भी हुई। क्या यहां पर भी खुदा अथवा पवित्रात्मा की कृपा दृष्टि हुई थी? और उस अजदहा की दुम (पूंछ) कितनी लम्बी होगी? जिसने सितारों के लोक लोकान्तरों के १।३ भाग को भूमि पर दे मारा। ज्योतिष विद्या की डींग मारने वालो! कुछ विचार तो करो कि जितने सितारे हैं। यह सब बड़े २ भूमिलोक हैं। और एक भी इस भूमि पर नहीं आ सकता। क्योंकि उससे प्रत्येक कई गुना बड़े हैं। वह १।३ भाग सितारे किस भूमि पर गिरे? संभवतः पादरी जी के घर पर गिरे हूंगे? शोक कि यह मन्तव्य सत्य किन्तु इनका विश्वास मुक्तिदाता और वह लोग जो सम्पूर्ण लोक लोकान्तरों के नियमों से पूर्ण ज्ञानी और ज्योतिर्विद्या के आविष्कारक हैं उनके वचन ज्योतिष के विरुद्ध! वाह रे यहूदा! तेरा निजी ज्योतिष ज्ञान और सितारों की पहचान।

(पादरी) पृष्ठ १४६—पुनः वेद में लिखा है कि सूर्य अग्नि से और चंद्र सूर्य से उत्पन्न हुआ तथा वृष्टि चंद्रमा से होती है कि विद्युत दो मेघों के मिल जाने से उत्पन्न होती है और बादल तीन कोस से ऊंचा नहीं होता इत्यादि।

(उत्तर आर्य) आपने वेद का नाम तो लिया किन्तु वेद का प्रमाण क्यों न दिया? प्रमाण लिखना तो एक ओर यह भी न लिखा किस वेद में है? हां बाईबल पर वेद का धोखा हुआ होगा? जहां लिखा है कि "उसी दिन बड़े समुद्र के सब स्रोत फूट निकले और आसमान को खिड़कियां खुल गई। (पैदायश ७।११)

खुदा कहता है "जब मैं भूमि के ऊपर बादल लाऊं तो मेरा धनुष बादल में दिखाई देगा।" (पैदायश ६।१४)

"तब खुदावन्द ने सदूम और अमूरा पर गन्धक और आग आसमान पर से बरसाई।" (पैदायश ६।२४)

वाह साहब! क्या आसमान में खिड़कियां लगी हुई हैं? क्या इन्द्र धनुष खुदा का धनुष है? किन्तु ज्ञान से प्रतीत होता है कि जब से सूर्य और वृष्टि है। तब से यह पानी पर सूर्य प्रकाश पड़ने से दीखती है। खुदा ने आसमान पर गंधक और आग के अंबार कर रखे हैं? क्योंकि यह बाईबल के मन्तव्य हैं। इस लिए आक्षेप कर्ता को विद्या से पड़ताल करने का साहस न हुआ। और यह एक साधारण नियम भी है कि अपनी आँख का शहतीर प्रायः पक्षपाती मतों को नहीं दिखाई देता। जिस प्रकार हम ने प्रत्येक

प्रश्न को प्रमाण देकर लिखा है। वैसे ही प्रतिवादी को भी आक्षेप प्रमाण सहित लिखने चाहियें। अन्यथा दावा युक्तिहीन है। लज्जित होने के अतिरिक्त और किसी प्रकार से सिर ऊंचा नहीं।

(पादरी) पृष्ठ १४६ से १५३—हिन्दुओं की पुस्तकों में उपास्य कौन है? क्या ब्रह्मा, विष्णु, महेश अथवा तीनों मिलकर? और लिंगपुराण, मार्कंडेयपुराण, भागवतपुराण, पद्मपुराण, वराहपुराण और ब्रह्मवैवर्त्त पुराण का प्रमाण देखो और परस्पर उनमें विरोध है।

(उत्तर आर्य) यहां पर प्रश्न कर्ता ने अपनी इच्छानुसार सिद्धान्त बना दिया कि तीनों मिलकर हिन्दुओं के उपास्य हूं। इस स्थान पर तसलीस सिद्ध करने का विचार किया होगा? पुराणों के श्लोक लिखकर प्रतिवादी कहता है कि वेद शास्त्र में विरोध है। हम यदि इञ्जील बरनबास और कृत्रिम इंजीलों से विरोध उपस्थित करें तो माननीय होगा या नहीं? आक्षेप कर्ता ने बहुत भूल खाई और निष्प्रयोजन कष्ट उठाया।

(पादरी) पृष्ठ १५३—१५६— शास्त्रों में ही विरोध दिखाई देता है कि अच्छा, शास्त्रों में ऐसे ऐसे बखेड़े हैं और यूं तो विरोधों और भागों से भरे पड़े हैं।

(उत्तर आर्य) हे महोदय! प्रथम तो विरोध नहीं हैं। मान लो यदि हो। तो हमें कुछ भय नहीं क्योंकि वह मनुष्यों की रचना हैं। इलहामी नहीं। किन्तु आपने किसी शास्त्र का कोई प्रमाण नहीं दिया और पुराण किसी प्रकार प्रमाण के योग्य नहीं। किन्तु आपकी इलहामी पुस्तकों में जितना विरोध है उसका हम पूरा अनुमान नहीं कर सकते।

मौलवी रहमतुल्लाह और डाक्टर खुदा खां महोदय ने आपकी पुस्तकों ही से सिद्ध कर दिया और तुमने स्वीकार किया कि चालीस सहस्र विरोध हमारी पुस्तकों में हैं। और डाक्टर गरतहाख ने डेढ़ लाख और वटीसतन महोदय ने दस लाख परस्पर विरोधी वचन इञ्जील मुकद्दस से निकाले। मुख ग्रीवा में डाल कर कुछ विचार कीजिए। क्योंकि सूर्य छत के ऊपर है।

हे प्रश्न कर्ता महोदय! छे शास्त्रों में फ़लासफ़ी हैं। जिनके मन्तव्यों पर दार्शनिकों ने बहस की है। इनमें विरोध केवल युक्तियों अथवा प्रमाणों का है। अर्थभेद अथवा वास्तविक भेद नहीं है। किन्तु उनके समझने के लिए संस्कृत की उच्चतम योग्यता आवश्यक है। और वह उधार लेने से नहीं आती। बस इसके न समझने से आक्षेप सिर से पांव तक व्यर्थ हैं। हम अन्य विरोधों को दृष्टिगत न करके केवल आत्म संबंधी विरोध दिखाते हैं। और न्यायकारी आपको बनाते हैं। आत्मा के विषय में इञ्जील केवल धोखा देती है। न स्वयं उसको समझती है और न बतला सकती है। (पैदायश ९।४) (इसतिस्ना १२।२३) (अहबार १७।११) (ज़बेर १०४।२९) (पैदायश २।७) (इसतिस्ना ३२।४६) (ज़बर ७।५ १९।१६) (अमसाल २३।१५) (पैदायश २५।८ ३७।३५) (गिनती १६।३०-३३) (अयूब ३८।१७ १०।२१ १४।१०) (वाईज़सुलमान १।१० ३।१९-३१) में परस्पर अत्यंत विरोध है। यह दोष जीव के संबंध में उदाहररूपेण लिख दिये हैं।

अल् अक़िलो तकफ़ीहुल्इशारतो।+

यदि अधिक विरोध देखने हों तो बाईबल पर सप्रवरोज़ह आरम्भ से अन्त तक दृष्टिगत करें।

+(भावार्थ) बुद्धिमान् इशारा पर्याप्त समझता है। (अनुवादक)

(पादरी) पृष्ठ १५७ – वेद में चंद्रमा सूर्य, इन्द्र, रुद्र, वायु, अग्नि, जल, वरुण, और प्रत्येक वस्तु की पूजा है। और पुराणों में बहुत पदार्थों की पूजा है और हिन्दुओं की उपासना और पूजा के विषय में बड़ा विरोध है।

(उत्तर आर्य) ओ साहब ! वेद मुकद्दस में चन्द्र, सूर्य वरुण, अग्नि आदि सृष्टि पदार्थों की पूजा नाम को भी नहीं है। किन्तु केवल एक परमात्मा पार ब्रह्म की उपासना का आदेश है। विस्तार देखो सत्यार्थप्रकाश पृ० १—२७ तक। किसी संस्कृतज्ञ से पूछ कर भ्रमदूर कर लीजिये। आपको पृ० ७ की टिप्पणी की भाषा भूल गई है। जहां आपने लिखा है कि ऋग्वेद के भाष्य में वशिष्ठ मुनि लिखता है कि ऋग्वेद ईश्वर के संबंध में यूं कहता है कि वह सर्वशक्तिमान, एक, सर्वोत्तम, सर्वज्ञ और काम, क्रोध लोभ, मोह मद तथा तीनों कालों और तीनों अवस्थाओं से परे है।

और पृ० १६६ पर आप लिखते हैं कि क्या हिन्दुमत में खुदा एक है या नहीं ? और इस बात पर विश्वास भी रखते हो कि हिन्दु एक ईश्वर को मानते हैं। और अपनी ओर से एक श्रुति—"एको ब्रह्म द्वितीयोनाति" लिखी है। और यह कि बोलता वही है। अर्थात् सब में खुदा ही बोलता और माया के वश में हो गया इत्यादि २।

आक्षेप कर्ता की इस भूल पर मन चाहता है कि उसके एक २ अक्षर का दान्त तोड़ उत्तर दिया जाए। किन्तु पुस्तक बड़ी हो जाने का भय लगा हुआ है। देखिए ! पहिली बात, श्रुति ही अशुद्ध लिखी कि 'एकोब्रह्मद्वितीयो नाति' लिखा है। दूसरे यदि माया के वश में भी हुआ। तो भी उस खुदा से जो नवमास पर्यन्त माता के उदर में रह कर रक्त मासिक से पालित पोषित होता रहा और मरते समय बहुत दुःख के साथ प्राण दिये– बहुत दर्जे श्रेष्ठ और उच्च है। हां, यदि यहां ईश्वर के एकत्व के विरुद्ध तसलीस के तर्क उपस्थित करें। तो एक दिन में तीन या तीन में एक— "किश्ती दरूं दरिया दरिया दरूं किश्तो"× कुछ अभाव के चक्कर का साम्मुख्य होता है।

(पादरी) पृ० १५७ से १६२—कितने पुराणों में मद्य मांस निषिद्ध है और भागवत में लिखा है कि कृष्णजी ने मद्यपान किया और मांस खाया। राम और लक्ष्मण ने भी मांस खाया। ऋग्वेद में लिखा है कि गौ का बलिदान करना चाहिए इत्यादि २।

(उत्तर आर्य) स्वार्थियों द्वारा रचित पुराणों से हमारे महात्माओं पर दोषारोपण करना बुद्धिमत्ता से दूर है। किन्तु वहां बुद्धिमत्ता का क्या काम ? जहां पक्षपात और स्वार्थ ने आँखें बन्द कर दी हूं। आक्षेप करते हुए इतना न सूझा कि गीता में कृष्ण जी ने बीसियों स्थानों पर मांस का निषेध किया है और मांस भोजी को पशु कहा है। तथा किसी कारण से भी प्राणी को कष्ट न देना यह हो परमधर्म कहा है। भला जिस व्यक्ति के ऐसे विचार हूं वह मद्यपान और मांस सेवन कभी कर सकता है ? किन्तु पादरी जी का भी कुछ अपना अधिकार नहीं। क्योंकि संस्कृत के तो नाम से भी परिचित न हुए। पढ़ना दूसरी बात है। जो कुछ वाहीतबाही किसी से सुना। अनाप शनाप लिख मारा। गोमेध के यह अर्थ नहीं कि गौ को मार कर बलिदान देना। गो शब्द पृथ्वी और अन्न का नाम है। और मेध शुद्ध करने का नाम है। अर्थात् भूमि और अनाज को शुद्ध करके एक करना चाहिये। विश्वास के लिये अष्टाध्यायी व्याकरण देखो। जो वेदों की ग्राईमर है।

× किशती नदी में नदी किशती में। (अनुवादक)

अब बाईबल से देखना चाहिये कि मद्यमांस की कितनी अधिकता है। नूह का मद्य पान। (पैदायश ११।१)

खुदा का इब्राहम के घर में मांस खाना। (पैदायश १८।८)

लूत का मद्यपान (पैदायश २०।१२) आदि आदि।

जहां तक देखो। बाईबल मद्यमांस से भरी पड़ी है। और अब भी अनुभव से सिद्ध है कि समस्त संसार से अधिक मद्यपान और मांस सेवन करने वाले ईसाई हैं।

(पादरी) पृष्ठ १७७—पुनः शास्त्र के दूसरे स्थान पर लिखा है कि—

दोहा

पल भर में पर्वत कियो, पल में डारियो मार।
यह तो काम करतार के, बूझे बूझनहार॥
और भर्तृशतक का भी प्रमाण दिया है।

(उत्तर आर्य) विचारणीय है कि प्रतिवादी ने कितनी भूल की है—कहां शास्त्र. कहाँ दोहे, कहां धर्म कहां भर्तृशतक।

पादरी पृष्ठ १७६-जैसा कि नेद में यह वचन है-मोक्षस्तु विष्णु प्रसादान्तरेण न लभ्यते॥

अनुवाद—अर्थात् विष्णु की कृपा बिना मोक्ष नहीं होती।

(उत्तर आर्य) ऋग्यजु सामाथर्व वेद चतुष्टय में तो यह वचन कहीं नहीं। हाँ, पुराणों में होगा। संभवतः इसी लिये प्रमाण नहीं दिया कि किस वेद में और कहां है। और इस वचन से हमारी हानि भी नहीं। जिस के आश्रय समस्त सांसारिक पदार्थ ठहरे हुए हैं और जो सर्व पदार्थों को जानता है—वह सर्वव्यापक है—उस परमेश्वर का नाम विष्णु है। उसकी कृपा के विना मुक्ति नहीं होती। और उसकी कृपा तब होती है कि जब पूर्ण रूपेण उसकी आज्ञा का पालन किया जाए।

(पादरी) पृष्ठ १८१—(किसी गोबर गणेश से पैसों से गायत्री लिखवा कर उसका अर्थ लिखता है) अर्थात् ओं भू आकाश स्वः स्वर्ग हम सूर्य के बड़े प्रकाश पर ध्यान करते हैं वह हमारे मन का मार्ग दर्शन करे।

(उत्तर आर्य) आक्षेप कर्ता ने अनुवाद बहुत अशुद्ध, गलत और ना समझी से लिखा है। वास्तविक अनुवाद यह है कि परमात्मा जो प्राणों से प्रिय, सब प्रकार के बन्धन से रहित, सुखों का दाता वास्तविक आनंद का स्रोत, सर्वजगत् प्रकाशक, अत्यन्त ग्रहण करने ध्यान करने योग्य शुद्ध विज्ञान स्वरूप है। और सब के आत्माओं का प्रकाशक है। उसको हम अपने आत्माओं में धारण करें। वह हमारी बल, बुद्धि, ज्ञान को बढ़ावे। यह सब संक्षेप से गायत्री का अर्थ लिखा है। विस्तृत पञ्च महायज्ञविधि में उल्लेख है। बुद्धिमान् स्वयं न्याय करें कि प्रतिवादी ने कितनी भूल की। और आगे चल कर मुक्तानन, तरङ्गिणी और कुलार्णव तथा श्याम रईस आदि से आक्षेप लिखता है। जो सर्वथा हेच व पोच हैं। और

ध्यान देने योग्य नहीं हैं। प्रतिवादी की भूलें कहां तक प्रगट करूं। पादरी ने वेद शास्त्र की भविष्य-वाणी लिखी है कि हिन्दु मत समाप्त हो जाएगा। वेद शास्त्र में यह बात कहीं नहीं लिखी। आप का उल्लेख सर्वथा मिथ्या है। अवश्य प्रमाण दो।

(पादरी) चमत्कार और भविष्यवाणियां हिन्दुमत में नहीं हैं। बड़े बड़े आश्चर्य की बातें राम और कृष्ण के नाम से लिखी हैं किन्तु बहुतेरे राक्षसों ने तपस्या कर के बड़ी बड़ी करामातें दिखाई हैं।

(खंडन) वेद धर्म की दृष्टि से करामात और चमत्कार कोई वस्तु नहीं। और न किसी प्रामाणिक ग्रन्थ में ऐसी व्यर्थ बातों का वर्णन है। ऐसी बुद्धिहीन बातों का इन में नाम और चिह्न नहीं किन्तु बाईबल ऐसी व्यर्थ बातों से भरी पड़ी है। और उसी से यह सिद्ध है कि राक्षस अर्थात् झूठे और दुराचारी लोग नबियों जैसे चमत्कार दिखा सकते हैं।

(देखो मती की इञ्जील अध्याय २४ आया २३-२८)

(पादरी) पृ० २०२ – में लिखता है कि सांख्य शास्त्र सांसारिक शास्त्र में गीता का वर्णन है। जिसमें सम्पूर्ण जगत् की बातें लिखी हैं।

(उत्तर आर्य) तर्कहीन प्रतिज्ञा कुछ भी नहीं। आपने न्याय शास्त्र और सांख्य शास्त्र का सूत्र क्यों न लिखा। बस आप का काल्पनिक दावा आप की अज्ञानता का उत्तम प्रमाण है।

(पादरी) पृ० २०३—इन्द्र ने कामातुर होके अपने गुरु गौतम की स्त्री अहल्या से भोग किया।

(उत्तर आर्य) इन्द्र अहल्या की कथा अलंकार रूप से हमारे सच्छास्त्रों शतपथादि में लिखी है। और इस प्रकार है कि इन्द्र=सूर्य का, अहल्या=रात्रि का और गौतम=चंद्रमा का नाम है। रात्रिमानो चंद्र की स्त्री है। और सूर्य उसका जार है। सूर्य के निकलने से रात्रि का शिंगार बिगड़ जाता है। जैसे मित्र के भोग करने से स्त्री की सजावट में भेद आ जाता है। और वह मित्र के पास नहीं रह सकती। वैसे ही सूर्य के निकलने से रात्रि की अवस्था होती है। विचारणीय स्थान है कि हम पर हेचपोच लच्चर आक्षेप करता है। और अपनी बाईबल की ओर आंख उठा कर देखते हुए लज्जा आती है। कि खुदा के प्रिय बनी इसराईल के प्रिय पुत्र रूबन ने अपने पिता की स्त्री बिलहा नाम अर्थात् माता के साथ सहवास किया। (पैदायश ३५।२२)

उमराम नबी ने पिता की भगिनी से विवाह किया। (खरूज ६।२०)

अमनून नबी तिमर नाम अपनी बहिन के इश्क में रुग्ण हुआ। जब उसका पिता दाऊद देखने को गया। तब अमनून ने अपने पिता दाऊद से कहा कि मेरी बहन तिमिर को मेरे पास आने दीजिये। वह मेरे लिये फुलके पकावेगी और मैं खाऊंगा। संक्षिप्त बात जब तिमिर अकेली इस मकान में आई। तो अमनून साहब ने उस से बलात् दुराचार किया। (समवईल २-१३।१-१४)

वाह साहब ! शर्म चेह कुत्तीस्त कि पेशे मरदां ब्यायद। ×

(पादरी) पृ० २०३—पुनः जो कहते हैं कि वेद अनादि हैं। सो इसका भी प्रमाण कहीं नहीं। पहिले तो यही नहीं ज्ञात होता कि यह कहां से और किससे है।

—लज्जा कौन सी कुत्ती है कि पुरुषों के सम्मुख आवे।

(उत्तर आर्य) वास्तव में सत्य है। कि एक व्यक्ति संस्कृत की केवल सुनी सुनाई बातों पर कारवाई करने वाला—वेद मुकद्दस का स्वरूप क्या जान सकता है ? ध्यान से सुनिये। ईश्वर की ओर से वही पुस्तक हो सकती है, जिसमें यह कुछ प्रमाण पाए जावें।

प्रथम—यह कि वह किसी देश विशेष की भाषा न हो। जिस से सबको पढ़ने में समान परिश्रम हो।

द्वितीय—इसमें किसी विशेष जाति का पक्षपात न हो।

तृतीय—जगदुत्पत्ति के साथ ही प्रगट हुई हो।

चतुर्थ—उसका एक आदेश दूसरे आदेश का विरोधी न हो।

पंचम—सृष्टि नियम जो उसी का निर्मित है। उसके विरुद्ध न हो।

षष्ठ—न्याय और ज्योतिष भी इसको झूठा सिद्ध न करें।

सप्तम—किसी मनुष्य विशेष पर ईमान लाने की प्रेरणा न करे। किन्तु एक परमेश्वर की हो उसमें उपासना हो।

अष्टम—मनुष्य बुद्धि को उन्नत करे।

नवम—उसमें कहानियां न हों।

दशम—समस्त ज्ञान विज्ञान का स्रोत हो। इत्यादि इत्यादि।

पड़ताल करने से ज्ञात हो जाएगा कि इन गुणों से विशिष्ट वेदों के अतिरिक्त कोई पुस्तक संसार के पुस्तकालय में नहीं है। जब स्वीकार किया कि वेद ईश्वरीय ज्ञान है। क्योंकि ईश्वर अनादि है और उसका ज्ञान भी अनादि होना चाहिए। अतः वेदों का अनादि होना सिद्ध होता है। रहा यह कि वेद कैसे प्रगट हुए ? जगत् के आरम्भ में ईश्वर ने अग्नि, वायु, आदित्य, अंगिरा इन चार ऋषियों के मनमें उपदेश किया। क्योंकि इन चारों के कर्म पूर्व सृष्टि के ऐसे ही थे। कि इन पर ही वेद प्रकाशित किए जाते हैं। इन चारों से ब्रह्मा ने पढ़े। जिसको प्रतिवादी ने आगे माना है। वेदों के प्रगट होने का विस्तृत वृत्तान्त स्वामी दयानंद जी महाराज की लिखित पुस्तक ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका में वर्णित है। वहां से देखना चाहिये।

बाईबल में इनमें से एक बात का भी चिह्न नहीं। अतः वह किसी प्रकार इलहामी नहीं हो सकती।

(पादरी) पृष्ठ २०३—ऋग्वेद के आठवें अष्टक में एक ऋचा है। जिसे एक राजा ने अपने दान पुण्य की प्रशंसा में लिखा है।

(उत्तर आर्य) ओ साहिब ! वह ऋचा आपने कहां छिपाली है। और किस लिये नहीं लिखी जिससे आपके आक्षेप की वास्तविकता प्रगट हो जाती। कि सन्मार्ग से कितना गिरा हुआ है।

(पादरी) पृष्ठ २०२ से २०५—वेद में इन्द्र का युद्ध, अग्नि और मनु आदि का वर्णन है। अन्य एक मंत्र है जिसे वसिष्ठ ऋषि ने अन्न चुराते समय एक कुत्ते को भौंकने से रोकने के लिए पढ़ा और पुनः भेड़, बकरी, घोड़े, गधे का बलिदान लिखा है। वाराहवतार का वर्णन भी है। जिसे कहते हैं कि सत्युग में हुआ।

(उत्तर आर्य) शोक कि कोई वेद मुकद्दस का मंत्र नहीं लिखा और जिनको वेद मंत्र समझकर लिखा है। वह ऋग्यजु साम अथर्व इन चारों वेदों में तो सर्वथा नहीं हैं। प्रतिवादी को किसी स्वार्थी ईसाई बने ब्राह्मण ने धोखा दिया है। जो वेदों से केवल उम्मी=अनपढ़ था। और राम तापिनी, गोपाल तापिनी आदि पुस्तकों की भाषा लिखाकर उसको सामवेद की ऋचा कहा है। और कृष्ण जी की उत्पत्ति बताई है। वह भी मिथ्या है। क्योंकि वेद मुकद्दस में उसका सर्वथा निशान नहीं है। और कोई किस्सा कहानी अथवा मानुषी घटनाएं पवित्र वेदों में नहीं हैं। किसी विशेष गिरोह, जाति अथवा मनुष्य से भी इसीलिए वेद संबोधन नहीं करता। और मानुषी सफारिशों की इसीलिए आवश्यकता वर्णन नहीं करता है।

पादरी जी ने पृ० २१० से लेकर २३० तक जो आज कल के ब्राह्मणों के स्वार्थ प्रगट किये हैं। वह वास्तव में इसी योग्य हैं। क्योंकि यह सब बातें अपनी महत्ता की उन्होंने पोथियों में डाल दी हैं। जिससे हमारी प्रतिष्ठा रहे। किन्तु वास्तव में वेद मुकद्दस और पवित्र शास्त्र इसके विरुद्ध हैं। जैसा कि इससे सहस्र गुना अधिक उनका खंडन आर्यसमाज के सदस्य करते रहते हैं।

और पृष्ठ २३० से २४२ तक जो तीर्थ, तपस्या, मूर्तिपूजा के संबंध में लिखा है। वह भी निस्सन्देह अल्पकाल अर्थात् ब्राह्मण काल से इन महाराजाओं ने स्वयं प्रशसक श्लोक बनवाकर नकली इञ्जीलों के रूप में जारी कर दिये थे। जिन का पूर्ण पड़ताल के पश्चात् स्वामी जी महाराज ने खंडन कर दिया।

पृष्ठ २४३ से २४६ तक पुनर्जन्म पर कुछ लिखा है। किन्तु कोई पूर्ण तर्क नहीं दिया। क्योंकि जब यह मन्तव्य बुद्धि और फ़लसफ़ी दावा से भरा हुआ है। इसके साथ ही यह प्रगट है कि प्रतिवादी ईश्वरीय न्याय से भी इन्कारी है। इस विषय का विस्तृत शास्त्रार्थ जो स्वामी दयानंद सरस्वती जी महाराज और पादरी स्काट महोदय के मध्य बरेली नगर में हुआ था, द्रष्टव्य है। (और वह "सत्या-सत्य विवेक" नाम से छपा हुआ पृथक् बिकता है)

(पादरी) पृष्ठ २४६—रामानुज जिसका वर्णन पुराण में लिखा है, १२०० ईस्वी में रचा था।

(उत्तर आर्य) आपने यह पुराणों की एक भूल निकाली आर्यसमाज के सदस्य निरन्तर पुराणों की सहस्रों भूलें स्वयं निकालते हैं। अतः समस्त पुराण किसी प्रकार प्रामाणिक नहीं।

(पादरी) यदि वेद में यह ऋचा लिखी है कि–समाने योग आभुवत सराथे।

अनुवाद––अर्थात् हे इन्द्र ! हमें बड़े लोगों में मिला। और वहीं स्त्री, ज्ञान और भोजन देने के लिये उद्यत हो।

पुनः इसी पृष्ठ की टिप्पणी में बाईबल की यह आयत लिखी है कि––

हे हमारे बाप ! जो आसमान पर है। वैसा जमीन पर भी हो। हमारा प्रतिदिन का भोजन आज हमें दे। और हमारे पापों को क्षमाकर। जैसे हम अपने दोषियों को क्षमा करते हैं।

(उत्तर आर्य) देखिये ! इस स्थान पर कैसी चालाकी है ? कि यजुर्वेद के मंत्र को ऋग्वेद का बताया और प्रथम भाग छोड़ दिया दूसरा लिखा। उसका अनुवाद भी सर्वथा अशुद्ध किया। कुछ

आक्षेप की वास्तविकता देखिये। हमारा मंत्र प्रार्थना का नहीं। केवल ईश्वर के गुण प्रगट करता है। वहां ही लिखा और बाईबल में से जिसको उच्च पद की दुआ—प्रार्थना अपने मन में समझते थे। तीन आयतें इस आधार पर लिखीं और मुकाबला किया। मंत्र का यथार्थ अनुवाद यह है :-

परमेश्वर योगियों का उपास्य होकर उनके मनों को प्रकाशित करता हुआ धनैश्वर्य से परिपूर्ण करता है। और वह योगी कला कौशल और शिल्प विद्याओं से युक्त होते हैं।

अभिप्राय यह कि हे ईश्वर! हम जो तेरी उपासना करते हैं और तुझमें मन लगाते हैं। तू उनके मन और बुद्धि को प्रकाशित करता है। धन और प्रतिष्ठा देता है। और वह लोग भिन्न २ विद्याओं से प्रवीण होते हैं।

अब "बाईबल की प्रार्थना को देखिये। जिस पर पादरी जी को बड़ा गर्व है। अर्थात्—

"ऐ बाप! जो आसमान पर है"

विचारणीय है कि क्या इस वाक्य ने खुदा को सीमित नहीं किया? क्या खुदा आसमान पर ही रहता है? क्या सर्वत्र व्यापक और सर्वज्ञ नहीं?

"तेरे नाम की पवित्रता हो।"

तोबा तोबा! क्या उसका नाम अपवित्र हो सकता है? "तेरी बादशाहत आवे।" क्या भूमि पर आगे शैतान का राज्य है? जो अब खुदा का राज्य आए?

शोक! बाईबल के निर्माता को यह साधारण बात भी ज्ञात न थी कि ईश्वर सर्वत्र विद्यमान और सबको देख रहा है।

"तेरी इच्छा जैसी आसमान पर है वैसी भूमि पर हो।"

इससे स्पष्ट पाया जाता है कि आसमान एक देश है और वहां खुदा भी रहता है। और वहां रहने वालों की इच्छाएं पूर्ण रूपेण सम्पन्न होती हैं। शाबाश है ज्योतिष विद्या के जानने वालो! पृथिवी पर खुदा की इच्छानुसार नहीं होता। और क्योंकर खुदा की सूरत पर जो मनुष्य को बनाया गया। भूमि संभवतः किसी अन्य बलहीन खुदा की निर्मित है। अथवा शैतान खुदा की इच्छा को भूमि पर नहीं आने देता होगा। यदि आने देता? तो उसका इकलौता बेटा ऐसी निराशा में फांसी न दिया जाता।

"हमारे प्रतिदिन की रोटी आज हमें दे।"

क्या ईश्वर ने हाथ, पैर, मन, बुद्धि आदि शारीरिक अंग हमें रोटी कमाने के लिए नहीं दिये? निकम्मा करने को दिये हैं? इससे यह अभिप्राय नहीं निकलता कि हे खुदा! हमारे शारीरिक अंग छीन ले और प्रतिदिन का भोजन हमको परिश्रम के बिना दे दिया कर। क्या मन और बुद्धि के प्रकाश से रोटियों का मांगना समान हो सकता है? कदापि नहीं।

"हमारे पापों को क्षमाकर जैसे हम अपने दोषियों को क्षमा करते हैं।"

क्या ईश्वर न्यायकारी नही? जो पाप क्षमा कर देगा? क्या जो दोषी को क्षमा न करे। वह इस बात का पात्र बन सकता है कि ईश्वर उसके पाप क्षमा करे? क्या इस वाक्य से पाप करने का उत्साह नही बढ़ता? शोक! बाईबल की प्रार्थना है। जिसको बड़े गर्व से पादरी महोदय ने लिखा है।

बरीं अक्लोदानिश बबयाद ग्रीस्त ।+

पाठक वृन्द ! स्वयं न्याय करें। कि किसकी शिक्षा मन और बुद्धि को प्रकाश देने वाली है। और किसकी बेकार=व्यर्थ । कौन धनैश्वर्य तथा प्रतिष्ठा देने वाली और कौन मूर्खता तथा लज्जा कूप में गिराने वाली है ? कौन ईश्वर के सभी शुभ गुणों को स्पष्ट और पूर्णरूपेण वर्णन करती है और किस की अधूरी किन्तु खुदा की खुदाई के गुणों से उतरती और डिसमिस करती है ? शोक शतसहस्र शोक !

(पादरी) पृष्ठ २५५ से २५८ तक–हिन्दुओं के देवता और ऋषियों के चाल चलन अच्छे नहीं ठहरते । इन्द्र, राम, कृष्ण, सूर्य, चन्द्रमा, बृहस्पति, पवन, वरुण, यम, व्यास आदि आदि ने चोरी की और दुराचार भी किया ।

(उत्तर आर्य) ओ साहब ! हमारे महात्माओं पर दोष नहीं लगाया जा सकता । क्योंकि आपने किसी विश्वस्त पुस्तक का प्रमाण नहीं दिया और भागवतादि पुराणों को आप ही पृष्ठ २२९ पर इतिहास से सिद्ध करते हैं कि १२०० ईस्वी के बने हुए हैं । पुनः इनको विश्वस्त समझकर आक्षेप करना निरर्थक है ।

लो हम बाईबल से जिसको आप ईश्वरीय ज्ञान मानते हो । खुदा के प्रिय नबियों का चाल चलन दिखाते हैं ।

प्रथम–आदम उसने खुदा की अवहेलना की । लानती होकर अदन उद्यान से निकाला गया और इसी कारण से भूमि लानती हुई । (पैदायश ३।१७)

द्वितीय––आदम के बेटे काईन ने अपने भाई हाबील को मार डाला और खुदा से झूठ बोला । (पैदायश अ० ४)

तृतीय––नूह ने अपने सम्बन्धियों को किश्ती पर न चढ़ने दिया और सबकी हत्या करा दी । तथा अंगूरी शराब पीकर अपनी नग्नता प्रगट की । (पैदायश अ० १०)

चतुर्थ - इब्राम ने अपनी बहन से विवाह किया । और पत्नी को बराबर बहन कहता रहा । वह मिथ्यावादी था इत्यादि । (पैदायश अ० २०)

इसकी खुदा से उपहास जनक बातें हुई । (पैदायश १८।२३ से ४२)

पंचम—लूत नबी ने शराब पीकर अपनी दोनों पुत्रियों से दुराचार किया । और अपनी पुत्रियों को दुराचार के लिये देता था । (पैदायश अ० १९)

षष्ठ—इसहाक ने भी अपनी पत्नी को बहन कहा । (पैदायश अ० ३१)

इस पर लोभ बहुत सवार था । अपने बड़े बेटे का अधिकार छोटे को दे दिया ।

सप्तम—याकूब ने अपने पिता को धोखा और कपट करके पैगम्बरी प्राप्त की । और अपनी लौंडियों से दुराचार किया । खुदा से कुश्ती लड़ता रहा । स्त्री के इश्क में चार वर्ष तक रातें गुजारता रहा । उसकी लड़की दीना नाम ने सकम के साथ दुराचार किया (पैदायश अ० ३४)

अष्टम—रूबन ने अपने बाप की हरम अर्थात् माता से दुराचार किया । (पैदायश अ० ५)

+इस बुद्धि और समझ पर चाहिये कि रोवें । (अनुवादक)

नवम—यहूदा ने अपनी पुत्रवधू से दुराचार किया। जिसका नाम तिमर था।
(पैदायश ३८।२४)

दशम—यूसुफ़ ने अपने भाईयों को धोखा दिया। (पैदायश अ० ३४)

एकादश, द्वादश—मूसा व हारून, मूसा ने पहिले एक निर्दोष मिस्त्री को मार डाला। इसको बाईबल में धैर्यवान् कहते हैं। और यह बड़े बड़े रक्तपात करता रहा। इसके आदेश से नन्हे नन्हे दूध पीते शिशु, स्त्रियां, भेड़, बकरी, ऊंट, गधे मारे गए और अपनी सेना को दुराचार के लिए उत्साह दिया। (खरूज और गिनती)

हारून ने एक सोने के बछड़े की मूर्ति बनाकर उसे उपास्य बनाया और पुनः इन्कारी हो गया।
(खरूज, गिनती)

त्रयोदश—दाऊद नबी ने औरिया की पत्नी पर आसक्त होकर औरिया का वध करा दिया। और उससे दुराचार किया। इसको खुदा ने कहा कि औरिया के जुर्म में तेरी पत्नी तेरे हमसाया को दूंगा और वह तेरे सामने इससे सहवास करेगा। (समवाईल अ० ११)

चतुर्दश—अमनून ने अपनी बहन से बलात् दुराचार किया।

पंचदश—सुलेमान ने खुदा की आज्ञा का उल्लंघन किया। बुतपरस्ती भी करता रहा। और यह बहुत कामी था।

षोडश—हजरत ईसा, उसकी मां की यूसुफ के साथ मंगनी हुई। एकत्र होने से पूर्व गर्भवती पाई गई यूसुफ़ ने न चाहा कि उसे प्रसिद्ध करे और ईसा ने सर्व के वध की व्यवस्थाएं दीं और कहा कि मैं तलवार चलाने आया हूं। एच व्यक्ति की गधी मूल्य दिये बिना चुरवायी। अन्त में बहुत शोचनीयावस्था में फांसी पाई। और उसके शिष्य भी मिथ्यावादी, दुराचारी और शरारती थे। जैसा कि एक शिष्य ने तीस रुपये के लोभ से हज़रत को पकड़वा दिया। मुशते नमूना अज़खर वारे।+ निवेदन किया गया।

पादरी साहब चुल्लू भर पानी में डुबकी लगा कर मती की इंजील २६।६-१३ तक जो सामरी स्त्री के संबंध में लिखा है। सत्यता की दृष्टि से दोबारा अध्ययन में लावें। तब आपको बहुत कुछ दाल में काला दृष्टिगत होगा। क्योंकि इसकी स्मृति सदैव मसीह के साथ रहेगी।

पादरी—पृ० २७८ में कहता है कि "वेद में मूर्ति पूजा नहीं है।" और पुनः प्रतिवादी पृ० २८२ लिखता है कि "वेद में परमेश्वर की प्रशंसा इस प्रकार की गई है कि वह बिन हाथ पांव के चलता, पकड़ता और बिन आंख के देखता और बिन कान के सुनता, वह सब कुछ जानता किन्तु उसे कोई नहीं जानता। महापुरुष इसी को कहते हैं। इस उत्तम वर्णन के होते हुए पुनरपि प्रतिवादी कहता है कि ईश्वरीय पहचान जो धर्म का आधार है, उसके विषय में हिन्दुओं में तारतम्य और गड़बड़ है।

तहक़ीके दीनेहक्क के आक्षेपों का परिणाम

पादरी साहब के आक्षेप प्रायः पुराणों पर हैं। वेद मुकद्दस पर बहुत न्यून हैं। और जो हैं वह भी स्वार्थियों का धोखा दिया हुआ है। क्योंकि जो श्लोक आदि लिखे हैं। वह वेद मुकद्दस में सर्वथा नहीं

+खजूरों से एक मुट्ठी भर नमूना। (अनुवादक)

पाये जाते । ब्रह्मा, विष्णु, महेश, राम, कृष्ण आदि जो महापुरुष थे । उनको हमारा परमात्मा जानकर उन पर समालोचना की है । जो सर्वथा निरर्थक और व्यर्थ है । क्योंकि कोई आर्य उनको परमेश्वर नहीं जानता और न वेद मुकद्दस और पवित्र शास्त्र उनकी गवाही देते हैं । और पुराण प्रमाण योग्य नहीं है अतः परिणाम यही है कि पादरी साहब के सम्पूर्ण आक्षेप निरर्थक हैं और उनसे कुछ प्राप्त होना प्रयोजन का नाश है ।

समापन

हे पुस्तक दर्शक महोदय ! देखिये कि ईश्वरीय वाणी कौन सी है ? आया इंजील या वेद ? और किसकी शिक्षा में उत्तमता अधिक है ? कौन न्यायकारी भगवान् की न्याय, महत्ता, सर्वशक्तिमत्ता को स्थापित करती है ? और कौन इसे धब्बा लगाती है ? मनुष्य बुद्धि को किसकी शिक्षा आनंद देने वाली है ? और कौन अविद्या कूप में गिराने वाली ? विद्या और सत्य की कान कौन है ? मूर्खता, असत्यता के तूफान किसमें हैं ?

बैत

खुशाबुवद गर महक तजरबा आयद मियां ।
ता सियाह रूए शवद हर कि दरूग़श बाशद ।।+

इस बात के मानने से कोई इन्कार नहीं कर सकता कि मनुष्य को विद्या के बिना ना समझी की दलदल से निकलना असंभव है । और मनुष्य की प्रारंभिक अवस्था पर विचार करने से पाया जाता है कि इलहाम अर्थात् ईश्वरीय ज्ञान के बिना वह किसी प्रकार उन्नति की सीढ़ी तक नहीं पहुंच सकता । और तो एक ओर प्रतिदिन की बोल चाल में भी शिक्षा के बिना असमर्थ हैं । जिससे स्पष्ट प्रगट है कि मनुष्य को विशेषतया सहायता की अधीनता है । हमारे अंग प्रारम्भ से काम करने के लिये निर्मित हुए हैं । किन्तु यदि सामग्री विद्यमान न होती तो उनका निर्माण करना व्यर्थ मात्र था । क्योंकि मनुष्य आरंभ में अज्ञता की अवस्था में था । और होता है । अतः उसकी अज्ञानता दूर करने को और अपना ज्ञान जताने को,संसार के पदार्थों का ज्ञान देने को इलहाम का प्रारंभ सृष्टि से होना उचित है । परमात्मा में न्यायकारी, निराकार, सर्वाधार अर्थात् लोकलोकान्तर रक्षक आदि गुणों का भी सदा से होना आवश्यक है । अन्यथा पश्चात् डिसमिस होने की अवस्था पहुंच जाती है । बस सिद्ध है कि ईश्वरीय वाणी या इलहाम का दोषों से रहित और आरंभ सृष्टि से होना आवश्यक है । अब देखा चाहिए कि संसार की सम्पूर्ण वर्तमान पुस्तकों से पुरातन कौन हैं ? क्या इंजील शरीफ़, या तौरात शरीफ़ या ज़बर शरीफ़ या वेद मुकद्दस । इस बात से कि इंजील, मती और लूका से, ज़बूर दाऊद से, तौरेत मूसा से पूर्व नहीं थी । किसी प्राणी को इन्कार नहीं है अतः कुछ विचार करने से स्पष्ट होता है कि यह पुस्तकें प्राचीन काल से नहीं हैं । सैंकड़ों युक्तियों से सिद्ध है कि संसार के पुस्तकालय में ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद से पूर्व कोई पुस्तक नहीं है । और प्रायः योरिपियन अन्वेषकों दार्शनिकों और पक्षपात रहित लोगों ने गवाही भी दी है । अब संक्षेपतः वेद मुकद्दस की शिक्षा का प्रकाश करता हूं :—

+मियाँ जी ! यदि सुगन्धी परीक्षण और अनुभव में आवे तो अच्छा है । जिससे जो कोई मिथ्यावादी है उसका मुख काला हो । (अनुवादक)

प्रथम— ऋग्वेद इसमें परमात्मा जीव और सृष्टि विद्या, गुण कर्म तथा संसार के समस्त पदार्थों का ज्ञान वर्णित है।

द्वितीय: – यजुर्वेद– इसमें मानवी कर्त्तव्यों का वर्णन करके भिन्न२ विद्याओं की उन्नति की पद्धति बताई गई है। और परमात्मा के ज्ञान और ध्यान का उपदेश भी है। जिससे अन्तःकरण शुद्ध होता है।

तृतीय— सामवेद में आध्यात्मिक विद्याएं और योगादि।

चतुर्थ–– अथर्ववेद सब सत्य विद्या और ज्ञानविज्ञान तथा ईश्वरोपासना जो तीनों वेदों में है। उसे खोलकर विस्तार सहित बताया है।

यह प्रत्येक चार वेद मुकद्दस सृष्टि के आदि में इलहाम द्वारा श्री अग्नि, वायु, अदित्य और अंगिरा जी इन महात्माओं को परमात्मा ने दिये थे। जिससे वह इनके अध्ययन अध्यापन उपदेशादि से ज्ञान प्राप्त करके पूर्ण हो जावें। प्रत्येक चारों वेद मुकद्दस में कोई कथा कहानी कोई किस्सा कोई घटना किसी जाति किसी वंश की नहीं हैं।

अब बाईबल शरीफ को देखिये :—

प्रथम—आदम के पाप करने से उसकी सन्तान के पापी होने का किस्सा।

इब्राहीम और सरः व हाजरा की कहानी। नूहके तूफ़ान और उस की मद्यपान कथा, याकूब और खुदा की कुश्ती, यूसुफ और उस के भाई को चर्चा, मूसा और उस के जल्लादपन और सर्व साधारण के वध के आदेश, लूत और उस की पुत्रियों का पतन, दाउद और ओरिया की पत्नी का सम्बन्ध, सुलेमान की गाथा, मती, लूका, मरकस और योहन्ना की कहानियां, जकरिया और उस के घर बीबी मरियम के जाने का किस्सा, कुंवारी मरियम से ईसा मसीह के उत्पन्न होने का इतिहास और उसके सलीब पर चढ़ाने का वृत्तान्त आदि आदि।

संक्षिप्त निवेदन किया गया है। इस अन्तर के पश्चात् प्रत्येक न्यायकारी स्वभाव वाला मनुष्य सम्मति दे सकता है कि कौन पुस्तक इलहामी है! और कौन जामो और निज़ामी कृत, कहां ईश्वरीय शिक्षा और ईश्वरीय पुस्तक तथा कहां लूत और दाऊद की दासतानें!

"चेह निस्बत ख़ाकरा बा आलमे पाक।+

इञ्जील खुदा के न्याय को दोष लगाती है। मज़हब और सुधार के न्यायप्रिय हमारे कृपालु भाई फ़रमाते हैं कि—

अदल (न्याय) के अर्थ तुला के हैं। न्यायकारी परमात्मा पापियों को उतना दंड देगा-जितना उचित है। और शुभ कर्मियों को उतना फल देगा जिस के वह पात्र हैं। न्यूनाधिक कदापि न होगा। किन्तु इञ्जील इस न्याय के विरुद्ध है। वह कहती है कि जो कोई ईसा को खुदा का बेटा अथवा खुदा मानेगा केवल उसका ही मोक्ष होगा। शेष सब नरक में डाले जाएंगे।

सर्वथा मिथ्या है। कहां न्याय खुदाई कहां यह निरर्थक कारवाई! जो कुछ मेरे भाई ने फ़र-

---

+पवित्र लोक के साथ मट्टी का क्या सम्बन्ध? यह फारसी की उक्ति हिन्दी की इस उक्ति का भाव बताती है कि—कहाँ राजा भोज, कहाँ गंगू तेली। (अनुवादक)

माया है। मैं उस से अधिक कहने की आवश्यकता नहीं जानता किन्तु केवल एक बात—क्योंकि बाप ने सम्पूर्ण अधिकार बेटे को सौंप दिया है। संभवतः ठीक होवे। वेद मुकद्दस में आज्ञा है कि—

परीत्य भूतानि परीत्य लोकान् परीत्य
सर्वा प्रदिशो दिशश्च । यजु० ।

प्रेम जो सदाचार का महत्वशाली भाग है। उस पर बलपूर्वक आदेश फ़रमा कर परमात्मा आज्ञा देते हैं कि हे मनुष्य जाति के लाडलो। दिखावे के जाति भेदभाव के बिना अपने सगे सम्बन्धियों, साथियों, नगर निवासियों से अन्यदेशों में जा कर प्रेम प्रीति से बर्ताव करो। पुनः शास्त्र में आज्ञा है कि :—

मातृ देवोभव । पितृदेवोभव ।
आचार्य देवोभव । अतिथि देवोभव ।।

हे मनुष्य। तू माता पिता बड़ों, अभ्यागतों और आचार्यों विद्वानों को देवता जान। और यथा संभव इन का मान कर।

पुनः वेदमुकद्दस में लिखा है कि—

हे सर्व जगत् के प्रकाशक, अन्तर्यामी, सर्व व्यापक। तेरे ज्ञान से कुछ परे नहीं है। तेरे कार्य-परिणाम किए अन्तरिक्ष, समस्त सूर्यादि ग्रह गतिमान् हैं। तू सर्वेश्वर, सच्चिदानन्द स्वरूप सत्य प्रकाशक है। तेरे ही से सब को प्रकाश मिलता है। तू अनुपम है। तेरे ज्ञान विज्ञान विद्या कभी परिवर्तित नहीं होते। तेरा ऐश्वर्य और जलाल-तेज सब से बड़ा और शक्तिदायक है। तथा तू सब का आधार है। सर्वज्ञाता है। तू आत्मा का भी आत्मा और सब प्रियों से प्रिय है। हम तेरी ही भक्ति करें। और ऋग्वेद। ६२।१० में परमात्मा की एकता और सर्वशक्तिमत्ता वेदों में इस विशेषता से विद्यमान है कि जिस से बढ़ कर वर्णन करना असंभव है। और सब ग्रन्थ इस विषय में वेदों के ऋणी हैं।

गायत्री का मुकद्दस मंत्र वेदों में परमात्मा की तौहीद=एकत्व का एक सर्वोच्च प्रमाण है। इस एक ही मंत्र में ब्रह्म के नो नाम बहुत खुले रूप में तौहीद (एकेश्वर वाद) की ओर प्रेरणा करने वाले विद्यमान हैं। मानुषी ग्रन्थों में इस विशेषता का होना एक न होने वाली बात है। संसार के पृष्ठ पर जितनी पुस्तकें हैं। वेद सब से सनातन पुस्तक है। और इञ्जील आदि अल्प कालीन हैं। अतः इन का वैदिक ख़ोशा चीन (गुच्छे चुनना) होना कुछ आश्चर्यजनक नहीं है। किन्तु प्रत्येक प्रकार से माननीय है। और यह संभव ही नहीं है कि वेदों ने इन बातों में कोई उन से ली हो। अतः वेद ही इलहामी पुस्तक है।

और वेद ही सत्यता का स्रोत है। वेद ही सच्चा ज्ञान है और वेद ही ध्यान का साधन है। इससे अधिक क्या लिखूं ? क्योंकि वेद के अर्थ ही ज्ञान के हैं। और बाईबल के अर्थ पुस्तक के हैं। सब महानुभावों को जो सन्मार्ग, सत्यता के स्वार्थ रहित इच्छुक हैं। उन को योग्य है कि गुलाम मसीह, अब्दुल्मसीह, ईसा बख्श, मसीह दास होने से छूट कर अर्जुन, सुयोधन, व्यास, जनक, सुखदेव बनने को उद्यत हूं। क्योंकि—

बैत

अैशो दुनियाए दूं दमे चंदस्त ।
आखिरश कार बा खुदावन्दस्त ॥+

पादरियों के श्वेत रूप पर मत भूलिये ।

बैत

संगीन दिलस्त हर कि बजाहिर मुलायमस्त ।
पिन्हाँ दरूं पुंबा निगर युंबा दानारा ॥✓

आर्य समाज के मुकद्दस (पवित्र) नियम भी आनंद के दिलाने वाले, मार्ग को ओर ले जाने वाले ज्ञान और बुद्धि के बढ़ाने वाले हैं। पक्षपात को द्वार पर रख कर ध्यान से विचारना चाहिये परमात्मा सब को अन्धकार से बचाकर सनातन धर्म के प्रकाश में लाए।

पहिली कविता

ज़रा+ देखो विचारो दिल✓ में मेरी बात को प्यारे।
कि इक जगदीश है सब का उसी के बंदे× हैं सारे॥
खुदा+ मालिक% है सबका आदिलो—आलिम… भी वह खुद= है।
वह अन्तर्यामी‖ पाते हैं सभों के पाप पुण्य न्यारे॥
सिफ़ारिश वहां नहीं चलती न्याय का कारखाना— है।
सिफ़ारिश और रिश्वत⌒ के सभी हीले÷ नकारे/\ ॥
जो मुरदे× जिन्दा⊘ करता था मरा खुद— दुख उठाकर क्यों।
खुदा फांसी मिला हैरत✓ की जा× है शर्म के मारे॥
हयाते+ दाइमी— चाहे कि मुर्दा से वह मुर्दा है।
शफा× मुशकिल से पाते हैं जहाँ में ऐसे अधिकारे॥

+मजे लूटना और नीचता से एकत्र की दुनिया कुछ क्षणों तक है। अन्ततः खुदावन्द = ईश्वर के साथ ही काम पड़ता है अर्थात् वही फलदाता है। (अनुवादक)

✓पत्थर हृदय है जो कोई प्रत्यक्षतः कोमल है। कपास के भीतर तिरोहित कपास के बिनौले को देख।
(अनुवादक)

+कुछ ✓मन ×उपासक +ईश्वर %स्वामी —न्यायकारी …विद्वान् ‖स्वयं =जिससे …पाप क्षमार्थ बिचौलापन —कार्य स्थान या यन्त्रालय ⌒घूंस ÷बहाने ✓व्यर्थ ×मृतक ⊘जीवित —स्वयं ✓आश्चर्य ×स्थान +जीवन —सदा ×स्वास्थ्य।

तबीब+ हाजिको✓ कामिल... नहीं कोई वैद्य वेदों सा— ।
जो मरजे× जुहुल= को काटेहटा देरूह... के दुःख सारे ॥
इवज़— तक़सीर< खालिद+ के मिलेगर जैद··· को फांसी ।
सरीहन् – जुल्म... है धोखा भी है होला+ और चारे ॥
जो ग़ैर अज़× नेक कर्मों के बनेगा मुक्ति का तालिब+ ।
भटकता रहेगा नादाँ— नहीं पावेगा सुख बारे ॥
सदाकत× माकूलियत+ और क़दामत... और वहदत+ भी ।
मुकद्दस... वेद रखते हैं गवाह इलहाम के चारे ॥
नहीं है बाईबल में एक भी इन चार से कामिल+ ।
निकालें फिर कहां से खादिमाने× दीन— बेचारे ॥
पस ए× भाईयो— मुकद्दम ईज़दी... इलहामे— रब्बानी... ।
मुकद्दस वेद है इस को पढ़ो तब होंगे निस्तारे ॥

दूसरी कविता

नक्कारा धर्म का बजता है आए जिस का जी चाहे ।
सदाकत× वेदे अकदस+ आज़माए जिस का जी चाहे ॥
मनादी जगत् में कर दो कि इक जगदीश है सब का ।
बग़ैर उस के बुतों को सरझुकाए जिस का जी चाहे ॥
नहीं है साला सुसुरा बेटा पोता जगत कर्ता का ।
कलंक इस किसम के झूठे लगाए जिस का जी चाहे ॥
सिफ़ारिश औलियाओ... अंब्या< की वह नहीं सुनता ।
अबस× इलजाम+ रिश्वत✓ के लगाए जिस का जी चाहे ॥
नही बैतुलमुकद्दस× में न काबा— है मकां✓ उसका ।
मुहीते+ कुल को महदूदी— ठहराए जिस का जी चाहे ॥
नहीं वह काठ, पत्थर, आहनो+ सीमो... ज़रो× गोहर÷ ।
हजारों बुतकदों... में बुत बनाए जिस का जी चाहे ॥
जो एली+ एली करता था नहक्क... ने की मददगारी ।

+डाक्टर <बुद्धिमान् ···पूर्ण —भान्ति ×रोग =मूर्खता ...जीवात्मा —बदले में ✓पाप +नाम है ...नाम है —सर्वथा —अत्याचार +बहाना करना ×से +इच्छुक —मूर्ख ×सत्यता +बुद्धिमत्ता ...नित्यता +ईश्वर का एक होना ···पूर्ण पवित्र +पूर्ण ×सेवक-बहुवचन —मत या धर्म ×अतः —हे ···ईश्वरीय —···ईश्वरीय ज्ञान ×सत्यता +पूर्ण पवित्र ...वली का बहुवचन-वली = पहुंचा हुआ फकीर । (२५) नबी का वहुवचन ×व्यर्थ +दोष ✓घूंस ×पवित्र घर = यरोशलम में खुदा के घर का नाम है। —मक्का में खुदा का घर जिसे मुसलमान मानते हैं । ✓मकान +सर्वव्यापक —सीमित +लोहा ...चाँदी ×धनैश्वर्य ·|·हीरे ...मूर्ति रखने के मन्दिर +ईसा का फाँसी पर चिल्लाकर एली एली कहना कि हे खुदा हे खुदा मुझे बचा ···ईश्वर, योग्य ।

तो फिर ख़ातिर पे उस के जां गंवाए जिस का जी चाहे ॥
कोई बिन वेद के पुस्तक नहीं है मानने लाइक= ॥
पुराने सब से और सच्चे दिखाए जिस का जी चाहे ॥
दिलोजान से करो संध्या पढ़ो वेदे मुकद्दस को।
टैक्स से पोप के धन को बचाए जिस का जी चाहे ॥
नहीं है श्राद्ध मुरदों का लिखा वेदे मुकददस में।
यह हुंडी जअ़ल+ की झूठी चलाए जिस का जी चाहे।
सिदक़× दिल से करो भक्ति प्रभु की वेद के द्वारे।
वगरना< शरमसारी को उठाए जिस का जी चाहे ॥

—०—

=योग्य +ठगी ×सच्चा < अन्यथा।

निजात की असली तारीफ़

मोक्ष का वास्तविक लक्षण

शास्त्रार्थ के नियम

(१) पक्ष विपक्ष सभ्यता और शराफ़त से एक दूसरे के साथ बरताव करेंगे।

(२) शास्त्रार्थ लेखबद्ध होगा। प्रश्न और उत्तर के लिये दोनों पक्ष सात सात मिनट बोलेंगे।

(३) इस शास्त्रार्थ के समारोह के प्रबन्धक सरदार ठाकुर सिंह महोदय हूंगे।

(४) शास्त्रार्थ १२ बजे मध्याह्न से दो बजे सायं तक होगा।

शास्त्रार्थ

सय्यद ग़ुलाम क़ादिर शाह--नजात के अर्थ और लक्षण वर्णन करो और उसकी आवश्यकता भी।

पंडित लेखराम--क्योंकि नजात अरबी भाषा का शब्द है। अतः इसके वह अर्थ हमारे विचार में आर्य धर्म के अनुकूल ठीक नहीं। आर्य धर्म में इसके लिये मोक्ष शब्द है। जिसके अर्थ दुःख से छूटना और सुख की प्राप्ति है। क्योंकि प्रत्येक मनुष्य संसार में आकर कुछ कर्म करता है। और वह कर्म अच्छे या बुरे होते हैं। और शुभ कर्म भी कुछ सांसारिक और कुछ पारमार्थिक हैं।

जो सांसारिक कर्म होते हैं। उनका फल शारीरिक और जो पारमार्थिक हैं। उनका फल आत्मिक होना चाहिए। अतः प्रत्येक मनुष्य के मन में यह स्वाभाविक इच्छा है कि मैं दुःख से छूटकर सुख प्राप्त करूं। अतः सत्य ज्ञान वेदों के द्वारा मोक्ष मार्ग बताया गया है। जिस प्रकार हमारी भूख की निवृत्ति के लिये अन्न और आंखों के प्रकाशार्थ सूर्य आवश्यक हैं। इसी प्रकार आत्मिक क्षुधा निवृत्यर्थ मोक्षानंद की आवश्यकता है। और वह शारीरिक-ऐन्द्रियक आनंद नहीं। वह स्त्री, पुत्रादि के आनंद अन्य हैं। क्योंकि वह केवल आत्मिक आनद है और यही उसको आवश्यकता है।

सय्यद ग़ुलाम क़ादिरशाह—पंडित साहब के उत्तर से यह ज्ञात हुआ है कि शुभाशुभ कर्म करने में मनुष्य स्वतन्त्र है। तो क्या मोक्ष भी प्रत्येक मनुष्य के अधिकार में है अथवा नहीं ?

पंडित लेखराम--निस्सन्देह शुभाशुभ कर्म मनुष्य करता है। और वह उसके अधिकार में है। और यही कारण है कि वह उनका उत्तरदायी है। अन्यथा करे ज़ैद और मारा जाए उमर यह समस्त न्यायालय के विधान के विपरीत है। अथवा भोजन खाए बकर और क्षुधा ख़ालिद की दूर हो। यह भी असंभव है। और इसीलिये प्रत्येक मनुष्य को अपने ही कर्मों का उत्तरदायी होना पड़ता है। क्योंकि मोक्ष अथवा दुःख हमारे ही कर्मों का परिणाम है और हमें ही मिलता है। और क्योंकि ईश्वर न्यायकारी है।

और न्याय के अर्थ यही हैं कि कर्मानुसार फल देवे। अतः मोक्ष प्राप्त ईश्वर की आज्ञा का पालन करते हुए अर्थात् ईश्वर के बताए हुए आदेशों को जो समस्त संसार में विश्वव्यापी हैं और जिन पर आरंभ से सृष्टि से आज तक तथा आज से महाप्रलय तक प्रत्येक पक्षपात रहित आत्मा साक्षी है। अतः मोक्ष वह फल है–जो मनुष्य के शुभ कर्मों के परिणाम में ज्ञानोपलब्धि होकर ईश्वर से प्राप्त होता है। वह कर्मों के विना नहीं है। और इसका बड़ा परिणाम यह है कि आज तक कोई ऐसा दृष्टान्त नहीं कि किसी मनुष्य को कोई फल कर्मों के विना प्राप्त हुआ हो। प्रत्येक मनुष्य वही काटता है–जो बोता है। जो नहीं बोता–वह कदापि नहीं काटेगा।

हर आं गि तुखमे बदी किश्त ☼

शास्त्र का वाक्य है कि :—

कुर्वन्नेह कर्माणि······। अर्थात् जब तक तुम जीवित रहो, शुभ कर्मों को करो। क्योंकि "अवश्य-मेव·····। अवश्य है। अपने कर्मों का फल चाहे शुभ हो, चाहे अशुभ हूं—भोगना पड़ेगा। और संभव नहीं कि हमारे कर्मों का फल न मिले।

हम प्रतिदिन देखते हैं कि हमारे प्रत्येक कर्म हमें सुख या दुःख देने वाले होते हैं। अरब का एक प्रसिद्ध प्रचारक कहता है कि अद्दुन्या मज़रअतो ······। संसार परलोक की खेती है। इञ्जील में खुदा-वन्द यसूअ ने फरमाया है। "तुम धोखों में न रहो। खुदा उपहासों में नहीं उड़ाया जाता। प्रत्येक जो बोएगा—वह काटेगा। मैं अलफा और वलेगाइ हूं। मैं आऊंगा जिससे प्रत्येक को कर्मानुसार फल दूं।

पुनः उन लोगों को जो शाब्दिक ईमान रखते हैं। आचरण नहीं करते। जिनके चाल चलन ईश्वरीय आज्ञा के अनुसार शुभ नहीं। जिन्होंने शुभ कर्म नहीं किये। उनके लिए खुदावन्द यसूअ फर-माता है कि "न प्रत्येक जो मुझे खुदावन्द खुदा कहता है—खुदा की बादशाहत में प्रविष्ट होगा किन्तु वह जो खुदावन्द के आदेशों पर आचरण करे।

सय्यद ग़ुलाम कादिरशाह—पंडित जी ने फ़रमाया है कि मोक्ष मनुष्य के अधिकार में है। किन्तु प्रतीत होता है कि पंडित जी ने इस बात का विचार नहीं रखा कि बुरा कर्म एक ऐसा है कि जिसका परिणाम कोई मनुष्य अपनी शक्ति से दूर या पृथक् नहीं कर सकता है। और यदि पंडित साहब के विचारानुसार मनुष्य में यह सामर्थ्य है कि अपने बुरे कर्म का परिणाम अपने से दूर कर सके। तो कुछ आवश्यकता नहीं है कि उस ऐसे एक सर्वशक्तिमान् को माना जाए। और दूसरी बात पंडित साहिब ने यह फरमाई कि मोक्ष या दुःख कर्मों के फल हैं। तो जब मोक्ष और दुःख कर्मों के फल हैं तो कर्म या कर्म का सामर्थ्य यह काहे का फल है ? क्योंकि आर्य धर्मानुसार यह शरीर या यह कर्म जीव के साथ हो न उत्पन्न हुए हैं और न जीववत् अनादि हैं। तो जब यह शरीर या कर्म अनादि नहीं हैं। तो पुनः उनके करने का सामर्थ्य जीव को किस कर्म के कारण से प्राप्त हुआ है ?

पंडित लेखराम—जिस प्रकार दुष्कर्म करने के पश्चात् कोई मानव उसके दंड से बच नहीं सकता। और इसी प्रकार शुभ कर्म।

☼जो कोई बुराई का बीज बोए और शुभ परिणाम पर आँख रखे। वह व्यर्थ बुद्धि को पकाता और मिथ्या विचार रखता है। (अनुवादक)

तो पुनः दुष्कर्म का कर्ता मनुष्य के अतिरिक्त कोई नहीं हो सकता। क्योंकि जीवात्मा चेतन है अपनी सत्ता से ज्ञानवान् है। और साधनों से कार्य करता है। तो कर्म का करना चेतन का गुण है। जब तक चेतन चेतन है। वह जब चाहे कर्म कर सकता है। और जड़ शरीर जीव निर्यात के पश्चात् कुछ भी नहीं कर सकता तो सर्वथा यथार्थ है कि शुभाशुभ मनुष्य के अपने कर्म हैं। किसी अन्य शक्ति की प्रेरणा से नहीं। और यदि अशुभ करना मनुष्य का काम नहीं—शैतान का है तो शुभ भी मनुष्य का कर्म नहीं होगा खुदा का होगा।

इस अवस्था में मनुष्य न शुभ करता है न अशुभ। दोनों से छुटकारा हुआ। और सुख दुःख फल कोई वस्तु नहीं रही। और न कोई उसका भोक्ता रहा। यदि मानें कि कोई भोगने वाला है तो अशुभ का भोक्ता शैतान और शुभ का भोक्ता रहमान (खुदा) हुआ। क्योंकि यह दोनों मन्तव्य जहां तक मेरा निज का ज्ञान है—पक्ष विपक्ष से कोई नहीं मानता। अतः बातिल मिथ्या हैं। मुझसे पूछा गया है कि मोक्ष और दुःख यदि कर्मों के फल हैं तो कर्म या सामर्थ्य कर्म काहे का फल है ? इसका उत्तर यह है कि कर्म—फल नहीं है किन्तु कर्म करना=क्रिया है। और क्रिया फल नहीं हुआ करती। क्रिया करने के पश्चात् फल मिला करता है। जिस प्रकार बीज वपन के पश्चात् फल अथवा असत्य वादन का परिणाम आत्मा में दोष अथवा दुराचार करने का परिणाम आतशिक। आतशिक का परिणाम दुराचार नहीं होता। किन्तु पूर्व दुराचार होता है। तो इस अवस्था में कर्म जीव की एक क्रिया है और कर्म सामर्थ्य जीव का एक गुण है। क्योंकि जीव कर्म करने में स्वतन्त्र हैं। अतः जिस समय वह चाहे, शुभाशुभ कर्म कर सकता है। किन्तु यतः जीव ईश्वर नहीं हैं और जीव अपना स्वामी नहीं। किन्तु समस्त संसार का स्वामी – अधिपति पारब्रह्म परमात्मा है तो इस अवस्था में इस जगतपति ने जीव को मोक्ष मार्ग बताने के लिए स्वसत्य ज्ञान का प्रकाश किया है। और उससे हमें मोक्ष मार्ग दर्शाया गया है। जीवात्मा अनादि है और कर्म करना जीव का गुण है शरीर नश्वर है। और संस्कृत परिभाषा में इसका नाम क्षणभंगुर है। तो इस अवस्था में शरीर अनादि नहीं है। न शरीर से उत्पन्न हुआ कर्म स्वभाव से अनादि है। किन्तु जीव में कर्म करने का गुण स्वरूप से है और शरीर से कर्म करना अथवा शरीर को धारण करना कर्मानुसार है।

सय्यद गुलाम क़ादिरशाह – यह जो पं० ने उत्तर में लिखवाया कि जो बुराई करता है वह बुराई का परिणाम भोगता है तो वास्तव में यह ठीक है। क्योंकि कोई शरीर अपनी बुराई के परिणाम को स्वतः दूर नहीं कर सकता। तो इसीलिए उसके परिणाम से आराम अथवा मोक्ष प्राप्ति के लिए एक अन्य की आवश्यकता है। और वह अन्य ऐसा होना चाहिए। कि जो निष्पाप हो। और जिसे निष्पाप कहते हैं। वह हमारे मन्तव्यानुसार यसूअ है। जिसके अर्थ हैं कि पापों अथवा उसक फल से छुड़ाने वाला इसीलिए प्रत्येक मनुष्य को मोक्ष की जैसे कि आवश्यकता है। वैसे ही एक मोक्ष दाता की। और पंडित साहब के वर्णन में यह भी देखा गया कि परमेश्वर केवल सुख दुःख का दाता है। तो जब सुख दुःख दाता है। तो प्रत्येक पापी अपने पाप के परिणाम से यदि किसी मुक्ति दाता को न माने तो किस प्रकार छुटकारा पाएगा ? और यदि परमेश्वर में केवल यही गुण है कि वह न्याय करे। तो उसका कृपालु अथवा दयालु होने का गुण नष्ट हो जाता है। और वह कभी एक गुण को छोड़कर दूसरा गुण पूरा नहीं करता, तो एक ऐसा धर्म होना चाहिए कि उसके सम्पूर्ण गुण पूर्ण हों। जैसा कि मसीही धर्म में उसके सम्पूर्ण गुण पूर्ण होते हैं। और मनुष्य की मोक्ष पूर्ण होती है। विशेषतः उस समय न्यायकारी और कृपालु अथवा

कृपा पूर्ति के सम्बन्ध में हम खुदावन्द यसूअ मसीह के कफ्फ़ारह (प्रायश्चित्त को देखते हैं। जो उसने स्वयं अपनी इच्छा से पापियों के लिए किया।

पुन: पंडित साहिब ने यह लिखवाया कि जीवात्मा चेतन है और जबकि आत्मा चेतन और अनादि है। तो परमेश्वर के साथ उसकी सत्ता की अपेक्षा कोई संबंध नहीं है। यदि संबंध नहीं है तो उसके कर्मों के परिणामों में भी उसका कोई संबंध नहीं हो सकता। पुन: पंडित जी ने लिखवाया कि कर्म जीव का एक गुण है। यदि यह गुण जीव का स्वाभाविक है तो जीव को कुछ आवश्यकता नहीं है। कि परमेश्वर की ओर झुके। और जबकि जीव ही अनादि है और सब कुछ कर्मों का ही फल पंडित साहिब के कथनानुसार ज्ञात होता है। तो यह जिसको शरीर कहते हैं और जो आत्मा के लिए भारी दान है तो उसके किस कर्म के कारण मिला है ? यदि माना जाए कि किसी कर्म के कारण से मिला है तो पंडित जी यह दिखावें कि मनुष्यात्मा शरीर के बिना कोई कर्म कर सकती है ?

पंडित लेखराम – यह ठीक है कि जीव दुष्कर्म करता है। किन्तु यह ठीक नहीं कि वह उसके परिणाम को दूर नहीं कर सकता। कर्म करना क्रिया है। इस का फल ईश्वर देता है और दंड भुक्तने के पश्चात् दूर हो जाता है। किन्तु किसी व्यक्ति के हमारे और ईश्वर के मध्य बिचौला होने को निम्न कारणों से आवश्यकता नहीं। संसार के आरम्भ से आज तक कोई मनुष्य जीवित नहीं। जिसके चाल चलन को हम पूर्णरूपेण जान सकें। और पूर्ण चाल चलन जानने के बिना किसी पर ईमान लाना बुद्धिमत्ता से दूर है। और यह कहना कि अमुक व्यक्ति निष्पाप है। यह केवल विचार है। जिसका आपने भी कोई प्रमाण नही दिया। किन्तु मैं बाईबल से प्रमाण देता हूं कि वह निष्पाप नहीं था। किन्तु पापी था।

मसीह निर्दयी था। (देखो मती की इन्जील १०।३४-३५) (लूका १२।४९,५१)

मसीह ने दो सहस्र के लगभग सूरों का जीवन बरबाद किया। (मती ८।३१-३३)

पादरी कलार्क महोदय अपने भाष्य में इसका अनुमोदन करते हैं। मसीह ने शिष्यों को तलवारों के खरीदने की आज्ञा दी कि अपने वस्त्र बेचकर तलवारें खरीदो। (लूका २२।३६)

और जब मसीह पकड़ा गया। तब उसी तलवार से शत्रु के सामने मुकाबला किया गया। किन्तु जब सामना करने पर देखा कि हवारियों की तलवार विरोधियों का कान उड़ाने के अतिरिक्त कुछ न कर सकी। (मती ४६।४७)

तो बाधित होकर मसीह मौन रहे। (योहना १८।१०)

योहना की इन्जील अध्याय ७ में मसीह के असत्यभाषण का भी वर्णन है।

मसीह के शराबी होने का वर्णन। इन्जील मती ११।९)

(मरकस अ० १४ में है)

मसीह का निरर्थक शाप देना और उसकी अज्ञानता। (मरकस ११।१२)

(और मती २१, १८ से सिद्ध है)

देखो इन्जील की कथा—इस पर एक योग्य अंग्रेजी विद्वान् की सम्मति है। और वह यह कि यदि ईसाई मत के वाहयात मन्तव्य और अकारण निर्दयता, अत्याचार और मूर्खता देखना चाहो तो मती और मरकस की इन्जील की कथा पढ़ो। (कृश्चन मत दर्पण पृ० ४५)

अतः मसीह पापी था और वह निष्पाप नहीं। और उस पर ईमान लाने से कोई मुक्ति प्राप्त नहीं कर सकता।

सय्यद गुलाम कादिरशाह—यदि पंडित जी के विचारानुसार मनुष्य दुष्कर्म के परिणाम से स्वयं छुटकारा पा सकता है। तो उस समय पंडित जी यह भी दिखा सकते हैं कि एक व्यक्ति यदि अपनी इच्छा से विष खा लेवे। और उसका प्रभाव रक्त में जारी हो जाए। तो वह स्वयं इसको निकाल सकता है। किन्तु ऐसा होना असंभव है। परन्तु वह अवश्य दूसरे के आधीन होगा। इसी प्रकार प्रत्येक मनुष्य दूसरे के आधीन है। जिसका वर्णन ऊपर किया गया है। मती १०।३४, ३५ का अभिप्राय ३७ आयत में लिखा है। जो पंडित जी ने नहीं समझा। लूका १२।४६, ५१ का अभिप्राय वास्तव में सत्य है। कि सत्यता का विरोध होता है। और इसी विरोध का हमारे खुदावन्द ने वर्णन किया है। न कि विरोध सिखाया है।

मती ६।३१, ३२ का प्रमाण सर्वथा मिथ्या है। पंडित ने फरमाया कि लूका २२, ३६ पर आज्ञा दी कि तलवार खरीदो और जब देखा कि अब काम नहीं चलता तो मौन रहा।

पंडित लेखराम—मसीह निष्पाप नहीं है। और जो प्रमाण मैंने दिये। वह सारे के सारे ठीक ठीक इसी प्रकार इन्जीलों में वर्तमान हैं।

निस्सन्देह मनुष्य को मोक्षदाता की आवश्यकता है। और वह मोक्षदाता परमेश्वर है। वह कौन सी न्यूनता, आवश्यकता, इच्छा या मोहताजी है। जिसको खुदा पूर्ण नहीं कर सकता। जिससे मनुष्य को खुदा का विचौला मानना पड़े। और यदि कोई मनुष्य मध्य में मानना पड़े तो बाईबल स्पष्ट कहती है कि कोई मनुष्य विचौला नहीं हो सकता।

अयूब १५।१४ ४।१८ ३६ २५।४ ज़बूर अ० १४३।३ योहना १।१-८ रूमियों ३।११,१३ अमसाल २०।६ वाईज़ ७।२०।

इनसे स्पष्ट सिद्ध है कि जो स्त्री से उत्पन्न हो वह सच्चा या नेक या निष्पाप नहीं ठहर सकता।

मसीह से पूछा गया और मसीह ने कहा। तू मुझे नेक क्यों कहता है नेक तो कोई नहीं किन्तु एक अर्थात् खुदा। (मरकस १०।१८)

अतः मसीह नेक नहीं और अपवाद नहीं हो सकता। केवल परमेश्वर ही समस्त संसार को मोक्ष देने वाला है। और उसी पर ईमान लाने से प्रत्येक की मुक्ति हो सकती है।

पादरी फ़ाउन्डर महोदय के शास्त्रार्थ से, जो मौलवी अबू रहमत के साथ हुआ स्पष्ट सिद्ध है कि मसीह मरने के पश्चात् तीन से अधिक दिन नरक में रहा। तो जो मोक्षदाता स्वयं नरक में जाए तो मुक्ति दे सकता है? परमेश्वर के साथ जीव का सम्बन्ध स्वामी और सेवक का है। कर्मों का परिणाम ही जीव को भोगना पड़ता है। अन्यथा यदि यह न हो तो खुदा का हमारे साथ सम्बन्ध क्या? किन्तु क्यों? हमारे शुभ कर्मों के बदले में। इसकी दया और है और न्याय अन्य। उसकी दया वेद भेजने, वृष्टि भेजने, सूर्य उत्पन्न करने से है। और उसका न्याय दोषियों को दंड देने से है। आप मुझ से पूछते हैं कि आत्मा शरीर के विना कोई कर्म कर सकती है या नहीं? इसका उत्तर यह है कि कर्म नहीं कर सकती। किन्तु फल भोग सकती है। योगविद्या जिसका आजकल बिगड़ा नाम मैस्मरेज़्म है। इसकी दृष्टि से जीव शरीर के विना बहुत से कर्म कर सकता है। और वह सारी बातें शास्त्रों में लिखी हुई हैं। जिस प्रकार बिष के प्रभाव को नष्ट करने के लिये डाक्टर की आवश्यकता हैं। उसी प्रकार मुक्ति के लिए ईश्वर की आवश्यकता है। जीव में समाया विष कोई दूर नहीं कर सकता।

सय्यद गुलाम क़ादिरशाह—शेष योहना १८।११ पतरस को फरमाया कि अपनी तलवार मियान में कर और दूसरे स्थान पर लिखा है कि जो तलवार चलाते हैं। वह तलवार से ही मारे जावेंगे। यह आज़माने के रूप में कहा गया कि तलवारें खरीदो इसके अतिरिक्त जितने प्रमाण पंडित जी ने वर्णन किए हैं। उनका रहस्य कदापि नहीं समझा। यदि समझना चाहें तो यह समझा सकते हैं। और मीज़ानुल्हक्क का प्रमाण जो लिखवाया कि मैं तीन दिन से अधिक नरक में रहा। यह मिथ्या है। और सृष्टि नियम जिसको आप मानते हैं। देखा जाता है कि सम्पूर्ण कार्य विचौलों से पूर्ण होते हैं। और ख़ुदा की इच्छा यह है कि मनुष्य दुःखी न हो किन्तु सदैव का जीवन पावे। तो ख़ुदावन्द फरमाते हैं मती ११।२८ कि जितने पापी हैं। मेरे पास आकर विश्राम पावें। और जो कुछ हमारे प्रभु (यशूअ़) के सम्बन्ध में उन्होंने अनुचित फरमाया, वह वास्तय में बाईबल में नहीं है। जैसा कि अपने ऊपर शत्रु यहूदियों के सम्मुख हमारे प्रभु ने फरमाया कि यदि तुम में से कोई कुछ पाप सिद्ध कर सकता है तो करे। पुनः वह मौन रहे। और अब मैं पंडित जी से ज्ञात करना चाहता हूं कि मुक्ति किस प्रकार आरंभ होती है। और प्राप्त किस प्रकार होती है ?

पंडित लेखराम—आपने जो यह फ़रमाया कि जो तलवार चलाते हैं तलवार से मारे जाते हैं। यह संभवतः तलवार चलाने के पश्चात् की आज्ञा है। और तलवारें खरीदो—यह पूर्व की आज्ञा है।

(२) जितने प्रमाण मैंने दिए, सारे बाईबल और इञ्जीलों में विद्यमान हैं। मैंने ख़ुदावन्द के सम्बन्ध में अनुचित कोई नहीं कहा। किन्तु जो शब्द कहे। सब बाईबल के थे। पुनः कहना कि यहूदियों ने कोई दोष सिद्ध नहीं किया। यहूदियों की कौन सी पुस्तक है ? जिसमें यह लिखा है कि शिष्य गुरु पर ऐसा विश्वास रखे तो उनकी इच्छा। अन्यथा वह आज तक मसीह को पापी मानते हैं। और इसी कारण से वह इस मत पर नहीं आते। और यहूदी क्यों न मानते जब कि इञ्जील यह कहती है कि—

"शरीयत का पालन करने वाला लानती है।" (मती ५।१७)

तौरेत कहती है कि—

"जो फांसी दिया जाता है। ख़ुदा का लानती है।" (तौरेत २१।२३)

हजरत पौलुस फ़रमाते हैं कि—

चोर, लालची, शराबी, गाली बकने वाले ख़ुदा की बादशाहत में कोई प्रविष्ट नहीं हो सकते।

और जब मसीह ऐसा था तो इसलिए वह मुक्ति के योग्य नहीं। और जब उसकी मुक्ति नहीं हुई तो दूसरे लोग किस प्रकार मोक्ष प्राप्त कर सकते हैं ? और जो लानती हैं उसके लिये मती कहता है कि :—

वह सदैव के लिए नरकाग्नि में रहेंगे।

हस्ताक्षर	हस्ताक्षर	हस्ताक्षर
सय्यद गुलाम कादिरशाह	प्रधान - ठाकुरसिंह (आँगल अक्षरों में)	पंडित लेखराम आर्य

—०—

सदाकते ऋग्वेद

ऋग्वेद की सत्यता

पादरी (धारा १) इसलिए कि ऋग्वेद एक बहुत प्राचीन धार्मिक पुस्तक प्रसिद्ध है। लेखक (अर्थात् अब्दुल्लाह आथम) को भी उसके अध्ययन की रुचि हुई। इस आशा से कि इसमें मानवी दुःख और दुःख की औषधि और औषध तक पहुंचने की अवस्था वर्णन हुई है। अनुवाद के ठीक होने पर लेखक को कोई सन्देह न हुआ। क्योंकि अनुवादकों में कुछ स्वार्थपन अथवा अनुचित विचार दृष्टिगत न हुए और भाषा के मूल शिक्षकों का विश्वास अनुवादकों से बढ़कर ज्ञात न हो सका।

उत्तर आर्य (धारा १) निस्सन्देह मुकद्दस ऋग्वेद संसार की समस्त पुस्तकों से बहुत प्राचीन, सत्यता युक्त और संसार की ज्ञानदात्री पुस्तक है। इसीलिए संस्कृत की उत्तम योग्यता प्राप्त करके सत्य के प्रत्येक अभिलाषी को इसके स्वाध्याय से लाभ प्राप्त होना आवश्यक है। सभी आत्म रोगों और दुःखों का पूर्ण निदान, उस निदान के प्रयोग की पहचान और उसके प्रयोग का रूप तथा बुद्धियुक्त पद्धति अर्थात् निदान की सरल प्रयोग विधि को ईश्वरीय पद्धति परमात्मा ने वेद में प्रदान की है। किन्तु विधर्मियों के पक्षपातपूर्ण अनुवाद की शुद्धता उस समय तक नहीं हो सकती जब तक आर्यावर्त के विशिष्ट विद्वान् उनकी विद्वत्ता और वेद वाणी के पारंगत होने की गवाही न दें। और साथ ही कोई सांसारिक स्वार्थ भी चिमटा हुआ न हो।

आर्यावर्त के समस्त ऋषियों और दार्शनिकों ने प्रगट किया है कि वेद ईश्वरीय ज्ञान है और किसी मनुष्य द्वारा रचित नहीं है। इसीलिए वेद मुकद्दस का नाम श्रुति (अर्थात् श्रवण किया हुआ) है। अर्थात् किसी मनुष्य ने वेदों के कर्ता ईश्वर को आंखों से नहीं देखा। जिससे स्पष्ट प्रगट है कि वेद मुकद्दस परमेश्वर ने आरंभ सृष्टि में जगत् में प्रकाशित किए। स्वयं इतिहास भी गवाही देता है कि रूमी, फ्रांसीसी और इंगलैंड आदि के निवासी सबके पूर्वज आर्य थे। अतः वेदों की तिथि वही यथार्थ है जो सूर्य सिद्धान्त आदि (ज्योतिष विद्या) की पुस्तकों की दृष्टि से आर्य लोग मानते आए हैं। न कि पादरियों का इतिहास कि जिनका विजातियों से साथ पक्षपात सूर्य प्रकाशवत् स्पष्ट है। जो सदैव हमारे भाईयों के शिकार में संलग्न रहते हैं। ऐसे लोगों से न्याय की आशा रखना मानो चील के घोंसले से मांस ढूंढना है।

स्वार्थ संयुक्त होने अथवा अनुचित विचारों से ओत प्रोत होने को दृष्टिगत न करने पर भी वही अनुवादक स्वयं भी वेद के विषयों की नासमझी और अज्ञानता को भूमिका में स्वीकार करते हैं। जैसा कि उसी भाष्य के पृष्ठ ३१५ पर स्वयं डाक्टर मैक्समूलर महोदय ने यह सम्मति लिखी है कि तीन वर्ष के समय के पश्चात् जो मैंने ऋग्वेद के मंत्रों और उसकी श्रुतियों के एकत्र करने और छापने में लगाए हैं।

ऋग्वेद के किए हुए भाष्य को सर्वसाधारण के सम्मुख उपस्थित करता हूं, किन्तु तो भी उनमें से समस्त मंत्रों के भाष्य का वचन नहीं देता। क्योंकि चाहे मेरे पास सायणाचार्य का भाष्य और उससे सम्बन्धित भाष्य, कोश, व्याकरण आदि की पुस्तकें बहुत कुछ विद्यमान हैं। तो भी ऋग्वेद में प्रायः ऐसे ऐसे मंत्र हैं जिनके अर्थ ज्ञात नहीं होते। इस बात का कहना कि जिनको मैं बार २ कह चुका हूं कोई आवश्यकता नहीं कि ऋग्वेद के मंत्रों का भाष्य करना असंभव है। जब तक सायणाचार्य का भाष्य, ब्राह्मण ग्रन्थ, निरुक्त, बृहद्वल्ली और सूत्र ग्रन्थों तथा बहुत से संस्कृत के छन्दोविज्ञान, दर्शनविज्ञान और धर्मशास्त्रों के ग्रन्थों को बहुत विचारपूर्वक न पढ़ें।

डाक्टर विलसन महोदय का कथन यह है कि सायण भाष्य का अनुवाद इंगलिश में अच्छी प्रकार नहीं हो सकता क्योंकि अंग्रेजी एक ऐसी अपूर्ण भाषा है कि जिसमें मूल व्याख्या के बहुत से शब्दों और वाक्यों का अनुवाद होना ही असंभव है। आजकल योरुपीय देशों में संस्कृत का ऐसा उत्साह और इतनी उन्नति है कि निश्चित रूपेण पचास वर्षों के अन्दर लोग मेरे भाष्य को सर्वथा भूल जाएंगे। जिसके दोषों और अशुद्धियों से जितना मैं परिचित हूं। अन्य कोई नहीं हो सकता। हां अपने अनुवाद के लिये इतना मैं कह सकता हूं कि यह उन लोगों की उन्नति के लिए जो मेरे पश्चात् संस्कृत विद्या के लिए उत्साह रखें—ऊपर चढ़ने के लिये एक छोटा सा सोपान हो सकता है। और उसके द्वारा ही मनुष्य हमारे पूर्वजों के विचारों की अपेक्षा जिनकी भाषा हमारी भाषा में अब तक विद्यमान है। और भी रचनाएं हमारे लिए अब तक सुरक्षित रखी हुई हैं—विशेषतापूर्वक ज्ञातकर सकेंगे।

अब बुद्धिमान् लोग स्वयं सोच लें कि जिनके भाष्यों को प्रतिवादी आयत और हदीस समझता है। वह कहां तक यथार्थ होंगे ?

प्रतिवादी ने जो इसी धारा १ के नीचे टिप्पणी देकर लिखा है कि :–

"कार्य एक क्रिया है वादी का स्वभाव नहीं और क्रिया काल की अपेक्षा से आवश्यक है कि अपने कर्ता से पश्चात् ही किसी प्रकार से हो। अतः वेद के सनातन होने का दावा तो वास्तविक अर्थों में ऋग्वेद के विषय में स्थिर नहीं रह सकता।

(खंडन) हम आर्य लोग पादरी महोदयों की भान्ति ईश्वरीय कोई खुदावन्द की वाणी नहीं मानते किन्तु हम तो वेदों को ईश्वर का ज्ञान मानते हैं। और ज्ञान गुण है तथा गुण अपने गुणी के साथ रहता है। और जब से गुणी है तब से गुण उसके साथ है। जैसे जब से सूर्य है तब से प्रकाश है। और जब तक (सूर्य) है तब तक रहेगा। और कोई गुण क्रिया नहीं हो सकता। अतः प्रतिवादी का यह तर्क मिथ्या है कि वेद सनातन क्योंकर हैं। यह विचार सर्वथा मिथ्या ठहरा और वेद मुकद्दस की नित्यता पूर्ववत् रही।

पादरी—लेखक एरियन डेनिस के ऋक् में यहोवा शब्द विद्यमान है जो तौरेत का है।

(उत्तर आर्य) पादरी महोदय विधर्मियों के अनुसरण को स्पष्टतः पुण्य समझते हैं। जिससे स्पष्ट प्रगट है कि अपनी बुद्धि नहीं रखते। यदि प्रमाण विद्यमान है तो मंत्र का निर्देश करें। अन्यथा युक्तिहीन तर्क की अपेक्षा इन्कार करना श्रेष्ठ है। मैं कहता हूं कि पादरी महोदय ने बहुत धोखा खाया।

पादरी (धारा २) ऋक् की दृष्टि से मानवी दुःख वही समझे जाते हैं जिनकी निवृत्ति के लिए उसके रागों के कर्ता अपनी प्रार्थना मांगते हैं। जैसा यह कि :—

"हे उपास्य ! हमें दुधारू गौवें दो। भक्षणार्थ जौ, गमनार्थ अश्व, शत्रु हननार्थ बहुत सी बलवान् सन्तान, बलिदानार्थ पशु, और सोमरस तथा आवागवन से छुड़वाकर परलोक सुधारक उपासकों में मिला लो। और भक्तों के दुःखों का निवारक औषध उपरिलिखित ऋचा से रिझाना ही अभिप्रेत है। जो पशुओं और मनुष्यों के बलिदानों के चढ़ाने, सोमरस की पूजा पर छिड़कने तथा ऋक् का राग गाने से रीझते हैं। और इस औषध पर इच्छुक लोगों के साहस और विश्वास से ही योग्यता का अधिकार प्राप्त किया जा सकता है।

उत्तर आर्य (धारा २) प्रतिवादी ने राग शब्द बहुत बार प्रयुक्त किया है। जो लोग राग विद्या के आत्मिक प्रभाव को मानते हैं। वह अच्छी प्रकार जान सकते हैं कि पादरी महोदय तान के बिना सुर अलापते हैं। जिस प्रकार वेद मुकद्दस फ़लासफ़ी की खान है। उसी प्रकार अध्यात्मिकता की भी जान है। आप का ऐसा लिखना कि "हे उपास्य आदि" यह स्पष्ट बताता है कि आक्षेप कर्ता संस्कृत विद्या से सर्वथा नासमझ है। संभवतः बाईबल की इस आयत का ध्यान आ गया होगा कि :—

"अब आदम हम में से एक की भान्ति हो गया।" (पैदायश अध्याय २)

गोदुग्ध, भोजन, अश्व, सन्तानादि परमेश्वर से मांगना क्या किसी सत्य प्रेमी और बुद्धिमान् के निकट आपत्तिजनक हो सकता है ? पवित्र वेदों में साधारणतः और ऋग्वेद में विशेषतः एकेश्वरवाद का बहुत खुला समर्थन है। जिसके प्रमाण धारा ३ के उत्तर में लिखे जाएंगे। पादरी महोदय ने बलि-दानों के सम्बन्ध में भी कोई प्रमाण नहीं दिया। अतः ध्यान देने योग्य नहीं। क्योंकि हम पूरी सच्चाई और निर्भयता से दावा करते हैं कि पवित्र वेदों में बलिदान के सम्बन्ध में कहीं आज्ञा नही है और चिह्न मात्र तक नहीं है। यदि प्रतिवादी के पास कोई श्रुति विद्यमान है तो उपस्थित करे। अन्यथा भाष्यकारों की भूल और अपनी नासझी और पक्षपातपूर्ण सम्मति को स्वीकार करना पड़ेगा। आध्यात्मिक और शारीरिक पापों से बचने के लिए जो तर्क संगत दंड पवित्र वेद ने निदान रूप से वर्णित किया है शोक कि उसके प्रयोजन समझने से वंचित रहने के कारण पादरी महोदय को प्रत्येक स्थान पर तीन काणे सूझते हैं। बाईबल के अग्नि बलिदान, आसमानी देवताओं और पवित्रात्मा के धूममय तथा अग्निदग्ध आतिथ्य इसी प्रकार उसी नूह की कथाएं अभी तक आपकी स्मृति से नहीं भूली। जिसके बदले में आपके कोमल विचार की दृष्टि से वेद मुकद्दस भी प्राणियों को ग्रीवा पर इञ्जील को भान्ति छुरी चला रहा है। छी। अपवित्र भाषण से प्रायश्चित (होना चाहिए)।

सदाचार की, एकेश्वरवाद की पूर्णता, दया की वास्तविकता संक्षेप यह कि वेदों ने सभी विषयों को याथातथ्य खोल कर वर्णन किया। विशाल चक्षु और श्रवण योग्य कर्ण की आवश्यकता है।

पादरी (धारा ३)—ऋक् के मूल भूत मन्तव्यों की शिक्षा तो सर्वं खल्विदं ब्रह्म की ही प्रतीत होती है। जिस में भौतिक तत्व और जीवात्मा नित्य ही कल्पना किये गए हैं। अत्यन्ताभाव से सत्ता में आना किसी का नहीं माना गया। तो भी उस की क्रियात्मक शिक्षा यही है कि द्यावा भूमि तथा तत्रस्थ के ३३ प्रकार के देवता हैं। जो संभवतः तीन के प्रवाह अर्थात सत् रजस् तमस से निर्मित हुए

हैं। पुनः वैसे ही ३३ देवता परिणामतः ×३३ कोटि भी बन गए। जिन में अग्नि, वायु, इन्द्र, विष्णु विशेष से भी विशेष हैं। जो चार तत्वों के प्रकाशक प्रतीत होते हैं। मैक्समूलर महोदय और दयानंद सरस्वती जी तो भिन्न देवताओं को एक सत्ता के ही भिन्न २ नाम ठहराते हैं। किन्तु न्याय और वेदान्त के विद्वान् उनसे कुछ न्यून वैदिक विद्वान् न थे। और निकटतम समय में हो कर अधिक प्रतिष्ठा के योग्य हैं। देवताओं के साथ शारीरिक इलाके भी उन के गुण प्रकाश के कारण लगाए गए हैं। किन्तु उनमें भी बहुत से रहस्य भरे पड़े हैं। परिणामतः ऋक् को इलहाम और दार्शनिक होने का दावा नहीं है और न हो सकता है। तो भी कवित्व सूक्ष्मता और सामयिक रहस्यों से रिक्त वह भी नहीं हैं। और सर्वथा ज्ञान शून्य भी हम इस को नहीं कह सकते हैं।

उत्तर-आर्य (धारा ३) मुकद्दस ऋग्वेद नवीन वेदान्त की शिक्षा के सर्वथा विरुद्ध है। वेदों में उपासना भक्ति की उत्तमता से व्याख्या की गई हैं। योग की फ़लासफ़ी विशेषतः इस अवस्था से पार करने के लिए है। जिस का अन्तिम परिपाक मोक्ष है। इस पवित्र सरणी का अन्य नवीन कल्पित मतों में नाम और चिह्न तक नहीं है। अत्यन्ताभाव से किसी का सत्ता में आना एक ऐसी बात है। जिस का ज्ञान और बुद्धि दोनों साथ नहीं देते। भिन्न २ ज्ञान विज्ञान के अतिरिक्त वर्तमान पदार्थ विद्या के ज्ञान से भी प्रतिवादी अज्ञ प्रतीत होता है। अन्यथा उस की यह बात सर्वथा प्रमाण शून्य है। आर्यावर्त के दार्शनिकों और योरुप के फ़लासफरों ने भी मैटर (प्रकृति) को नित्य माना है। यदि आत्म तत्व को जानना चाहते हो तो योग ज्ञान से रहस्य प्राप्त करो। अन्यथा पवित्रात्मा से पूछ कर विश्वास करलो कि जीव को किस ने किस वस्तु से किस समय और क्यों बनाया ? बड़ी संभावना है कि निश्चय हो जाएगा।

चार मास का समय व्यतीत हुआ होगा कि मैं ने महोदय की कोठी पर जा कर भी इस मन्तव्य = प्रकृति की नित्यता का प्रमाण दे कर उस (अनित्यत्व) के खंडन की प्रार्थना की थी, जिस के सम्बन्ध में आप को अच्छी प्रकार स्मरण होगा।

अतः दूसरी बार भी केवल इतना कथन अच्छा है कि हीन प्रतिज्ञा की पूर्ति लाभान्वित नहीं। देवता के विषय में आपने भूल की। उस के अर्थ प्रकाशमान और विद्वान् के हैं। अतः ऋग्वेद अष्टक ६ अध्याय २ वर्ग ३५ मंत्र, यजुर्वेद १४।३१ अथर्व कांड १० प्रपाठक ३३ अनुवाक ४ मंत्र ३३ ३७ और इसी प्रकार शतपथ कांड १४ प्रपाठक १६ मंत्र ३-१० आदि के अध्ययन करने की प्रार्थना करता हूं। जहां पर विस्तार से आज्ञा है कि एक परमात्मा के अतिरिक्त अन्य कोई उपास्य नहीं है। किन्तु यहां तक आज्ञा है कि जो किसी उत्पत्तिमान् पदार्थ की उपासना करते हैं-वह पशु से भी अधिक मूर्ख हैं।

दर्शकवृन्द ! मैक्समूलर महोदय और दयानंद सरस्वती जी तो भिन्न २ देवताओं के भिन्न २ नाम ही एक ईश्वरीय सत्ता के ठहराते हैं। किन्तु प्रतिवादी (क्योंकि संस्कृत अधिक जानता है ?) को विश्वास नहीं होता। क्या परमात्मा के भिन्न २ नाम होने से ईश्वर असंख्य हो सकते हैं ? संभवतः यहां भी "एक तीन में और तीन एक में" गरदान करने की सम्मति की होगी ?

न्याय और वेदान्त के कर्ताओं को प्रतिवादी इच्छानिच्छया दोष देता है। अतः प्रथम तो आक्षेप

×कोटि क अर्थ प्रकार भी हैं। (अनुवादक)

कर्ता को मैं घोषणापूर्वक सूचना देता हूं कि यदि उस के पास वेदान्त अथवा न्याय का इस के विरुद्ध कोई सूत्र हो तो उपस्थित करे। अन्यथा शतशः शोक ? इस के अतिरिक्त और क्या कहूं ? कि पादरी महोदय अपनी अज्ञानता का प्रतिकार करें। विचित्र कथानकों के इलहामों जैसा वेद का दावा नहीं और न कल्पित बातों तथा कहानियों का वेद भंडार है। आपकी स्वनिर्मित तर्क कल्पना न्याय शास्त्र में तो क्या किन्तु किसी दार्शनिक अथवा फ़लासफर की पुस्तक में भी प्रमाणित नहीं है। अतः वेद मुकद्दस ऐसी फ़लासफ़ी से जो ओल्डटैस्टामेंट और न्यूटैस्टामेंट के मुकाशफ़ात १४।३ में भरी है—उस का बुद्धिमंत्ता और ज्ञान के साथ सिद्ध होना यहां तक है कि आज कल के दार्शनिक विशेषतः आप के अन्वेषक मैक्समूलर महोदय और भी समर्थन कर रहे हैं।

(देखो उक्त डाक्टर महोदय का व्याख्यान—आर्य पत्र का लाहौर में प्रकाशित)

हां, इस का वर्णन करना भी प्रसन्नता से रिक्त नहीं हैं कि बाईबल का मौलिक मन्तव्य सर्व ब्रह्म नवीन वेदान्त) है अथवा नहीं ? यद्यपि बहुत स्थानों से प्रगट होता है कि बाईबल के देश में कोई भारतीय नवीन वेदान्ती जा पहुंचा होगा। जिस से नवीन वेदान्त की बहुत कुछ शिक्षा पाई जाती है:—

(१) आरंभ में कलाम और कलाम (शब्द) खुदा के साथ था। सब पदार्थ उस से विद्यमान हुए। और कोई वस्तु ऐसी न थी जो उस के बिना होती (योहन्ना १।३)

(२) उस दिन तुम जानोगे कि मैं पिता में और तुम मुझ में और मैं तुम में हूं।

(योहन्ना १४।२०)

(३) योहन्ना १४।११ में मैं पिता में हूं और पिता मुझ में है।

(४) योहन्ना १७।२१-२३ तक-जिस से वह सब एक होवें। जैसा कि तू हे पिता मुझ में और मैं तुझ में कि वह भी हम में एक हूं जिस प्रकार हम एक हैं। मैं उन में और तू मुझ में जिस से वह एक होके पूर्ण होवें।

(५) खुदा सब में सब कुछ होवे। (फ्रांसीसियों की पत्री १-१५।२८)

(६) इसी दिन मनुष्य को भी यह कह के बनाया कि हम मनुष्य को अपने रूप और अपनी भान्ति बनावें और खुदा ने मनुष्य को अपने रूप पर उत्पन्न किया। खुदा के रूप पर उस को उत्पन्न किया। (पैदायश अध्याय १ और २)

(७) पुण्य और पाप की पहचान में अब आदम हम में से एक की भान्ति हो गया।

(पैदायश अ० ४)

(८) यसूअ ने कहा कि तुम खुदा हो। (योहन्ना १०।३४ जबूर ८२।६)

(खंडन) (१) हे पादरी महोदय ! जब आरंभ में खुदा के अतिरिक्त अन्य कोई वस्तु न थी, जिस से जगत को बनाया—तो क्या उसी एकेश्वर का बहुत्व नहीं है ? और "वह सब कुछ" में क्या सदेन्ह है ?

(२) जब ईसा खुदा है और हम ईसा में और ईसा हम में तो क्या "वह सब कुछ" न हुआ ?

(३) ईसा खुदा में और खुदा ईसा में क्या किन्तु सब संसार बाप और बेटे में जो मानते हैं। हम उन से "हमा ओस्त" (सब वह है) के अर्थ अवश्य ज्ञात करते हैं।

(४) क्या मसीह महोदय ने इन आयतों में स्पष्ट वर्णन नहीं किया !

दरिया: से हुबाबने… कही यह सदा :
तू— और नहीं मैं और… नहीं।
सब कुछ तेरा ही जल्वा— नुमा
तू और: नहीं मैं और— नहीं ।।

(५) खुदा का सब में सब कुछ क्या "हमा ओस्त" (सब वह है) के अतिरिक्त कुछ अन्य अभिप्राय रखता है।

(६) पादरी महोदय ! क्या खुदा का रूप खुदा नहीं है ! और यदि शैतान का रूप कहें–तो शैतान नहीं हुआ।

(७) क्या वह जितने खुदा उस समय विद्यमान थे। पदवी में समान और सर्व शक्तिमान् थे। यदि हैं तो आदम जब उन में से एक की भान्ति हुआ तो जब ३+३+३—९ किये। तो क्या अन्य एक जो इन तीन में से एक के समान है उन में से प्रत्येक के समान नहीं हुआ। पादरी जी ! वर्ग के चतुष्कोण समान होते हैं। अतः स्पष्ट सिद्ध है कि बाईबल का वास्तविक सिद्धान्त "हमा ओस्त" (सब कुछ वह है) का है। आगे मानना न मानना आप के अधिकार में है।

हां, वेदमुकद्दस में परमात्मा के सर्वज्ञ, सर्वव्यापक और अनन्त अशरीरी होने आदि गुणों का वर्णन तो है। किन्तु हमा ओस्त को सहायक श्रुति कोई नहीं है। यदि है तो विरोधी अर्थात् पादरी जी को हम चैलंज अर्थात् मैदान में बुलाते हैं कि वह श्रुति उपस्थित करें। अन्यथा अपने मिथ्या दावा को लौटालें।

पादरी (धारा ४) (क) अध्याय ८ अनुवाक् १ सूक्त ९ में रुद्रकी लगाओं और मनुष्य घातक वाण से रक्षा मांगी है।

(ख) पुन: अध्याय १ अनुवाक् १८ सूक्त ६ में राजा यहूवा अथवा उसकी रानी लोमाशा की प्रशंसा यह है कि उन्होंने सहस्रों बलिदानों के लिए सौ घोड़े, सौ बैल और बहुत सी गौवें।

(ग) पुन: अध्याय ३ अनुवाक् २२.सूक्त ५ में महेश देवता की प्रशंसा बलिदान के पाठ करने में है। और रासती अनुवाक् के सूक्त ६ में घोड़े की बलि की बड़ी धूम धाम है। जो देवताओं की सवारी के लिये आगे भेजा जाता है और जिसके आगे २ चितलो बकरी भी मिमयाती जाती है।

(घ) पुन: ऋक् की जिल्द १० पर्व १२१ श्लोक ३ में वर्णन है कि खुदा ने अपने आप की बलि दे दी। जिसकी छाया और मृत्यु से नित्य जीवन प्राप्त होता है।

सत्चित् ब्रह्म के पृ० ३६ में लिखा है कि खुदा मनुष्यों के लिए बलि हुआ ऐसा ही तेज़िया अरनीका के पृ० ३३१ में है। पुन: और मांस को भी देवता कहा हैं और उसके खाने वाले को नही।

उत्तर आर्य (धारा ४) आक्षेपकर्ता की योग्यता तो इन प्रमाणों से प्रगट हो रही है। जिनसे पूरा

: नदी …बुलबुला :आवाज —अन्य …अन्य —प्रकाश दृश्य :अन्य —अन्य।

ठीक पता नहीं मिलता। किन्तु पुनरपि सहस्र यत्नों से जहां तक प्रतिवादी के भ्रमों का चिह्न मिल सका यथार्थ अनुवाद सहित दर्शकों की सेवा में उपस्थित करता हूं। स्पष्ट हो कि ऋक् के ८ अष्टक हैं। और प्रत्येक अष्टक में आठ-आठ अध्याय और प्रत्येक अध्याय में कई २ वर्ग और मंत्र हैं। अतः ज्ञात नहीं होता कि श्रीमान् का विश्वास संख्या १ किस अष्टक के आठवें अध्याय पर है। खोज करने पर पाया गया कि ऋग्वेद अष्टक प्रथम अध्याय ८ सूक्त ११४ मंत्र ८ में रुद्र शब्द चाहे विद्यमान है तो भी अनुवाक् और सूक्त के चिह्न विश्वासनीय नहीं और न अध्याय ८ में अनुवाक् और सूक्त ९ कहीं विद्यमान पाया गया। मूल मंत्र यह है कि

मानस्तोके तनये मा न आयौ मा नो गोषु मा नो अश्वेषु रीरिषः।
वीरान्मा नोरुद्र भामितो वधीर्हविष्मन्तसदामित्त्वा हवामहे ॥

ऋ० १। ११४।८

(खंडन) ११४ सूक्त के ११ मंत्र हैं और यह सम्पूर्ण राज्य विषयक हैं और संख्या ६ से लेकर ९ तक विशेष कर उन विषयों का वर्णन है जिनका परित्याग करना राजाओं का बहुत आवश्यक कर्तव्य है।

रुद्र शब्द के अर्थ राजा या सेनापति के हैं जिनका उत्तम कर्तव्य यह होना चाहिये कि अपने और प्रजा के बालकों, कुमारों और गो, घोड़े आदि परोपकारी, प्राणियों के लाभदायक पशुओं का कभी वध न करें। और जिन कारणों से इनकी हानि हो सदैव उनको दूर करे। ऐसे अत्याचार-रहित न्यायकारी राजा की प्रजा को आज्ञा पालन करना आवश्यक है।

मेरे श्रीमान्! इस मंत्र में कहां मनुष्य घातक वाण और रुद्र की लगाऊ का वर्णन है? किन्तु अपमान क्षमा करें—समझ का दोष है।

(विश्वास २) अध्याय १ अनुवाक् १८ सूक्त ९ में समस्त ऋग्वेद में मैंने खोज की किन्तु आपके बताए हुए राजा रानी का वेद मुकद्दस में चिह्न तक नहीं है और न कहीं इन निर्दयता की बलियों का नाम और चिह्न दिखाई दिया तथा न कोई इस प्रकार का वर्णन पाया गया। अतः इस का उत्तर केवल यही है कि कृपा पूर्वक कवियों की सूक्ष्मता और फेलसूफ़ानादावा से रुकिये।

(विश्वास ३) हज़रत! ऋग्वेद के तीसरे अध्याय में कहीं २२ अनुवाक नहीं हैं और न तीसरे मंडल में कोई २२ अनुवाक लिखे हैं। मैं आश्चर्य में हूं कि आपको ऐसे सृष्टि नियम विरुद्ध और मिथ्या दोष कहां से और क्यों सूझते हैं? और तेतीस देवता, बलिदान का घोड़ा या देवताओं का वाहन और चितली बकरी कहां और किस मंत्र में हैं? कहीं मसीह के गधे का विचार तो नहीं आ गया? जो उन्होंने किसी मनुष्य का चुरा कर सवारी की थी। (देखो इञ्जील मती २१।२-४)

(विश्वास ४) हे दर्शक वृन्द! ऋग्वेद में पर्व और श्लोक नहीं हैं। किन्तु वह महाभारत में हैं। कल्याण, सत्य, रक्षार्थ इसका यथार्थ उत्तर निवेदन करता हूं। अष्टक ८ अध्याय ७ सूक्त १२१ में यह मंत्र है:

य आत्मदा बलदा यस्य विश्व उपासते प्रशिषं यस्य देवाः।
यस्य छायामृतं यस्य मृत्युः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ ऋ० १०।

यह उपासना संबंधी मंत्र है जो जगदीश्वर (आत्मा) प्राण और आत्म ज्ञान का दाता है।(बलदा) जो शक्ति और उत्साह पराक्रम का देने वाला है। (यस्य विश्वउपासते) ज्ञानी लोग जिसको स्वीकार करते हैं (यस्यछायामृतम्) जिसके आश्रय और कृपा से मोक्ष सुख प्राप्त होता है (यस्यमृत्युः) और जिसके आश्रय न लेने से जन्म रूप दुःखों का भोगना है (कस्मै देवाय हविषा विधेम) उस सुख स्वरूप परमात्मा की उपासना शुद्ध हृदय से सदैव करनी योग्य है।

प्रतिवादी यदि ज्ञान की योग्यता रखता होता तो कभी किसी स्वार्थ परायण के पीछे चलकर ऐसा न कहता। बलिदान शब्द से आक्षेप कर्ता ने अपनी दूर की सूझ से सम्भवतः मसीह का फांसी चढ़ना और प्राश्चित्त होना ही समझा और विश्वास किया होगा ? जैसा कि इन्डर्द ने बाईबल में कृष्ण शब्द से क्राइस्ट का नाम निकाला और अज्ञानी हिन्दुओं को संदेह में डालना चाहा। किन्तु स्मरण रखें कि अब वह युग नहीं रहा।

ज़माना बसात नौ आईं नहाद।
शुदआंमुर्ग़ किओ बैज़ाज़री नहाद ॥ ⌋

ब्राह्मणों की ग़फ़लत और भोलापन का युग वीत गया और सत्य का सूर्य उदित होकर आर्यावर्त प्रकाशों का उदय स्थान बन गया। अब दिन प्रतिदिन आर्यावर्त निवासी बेसुधी की निद्रा से जागृत हो रहे हैं।

वेद मुकद्दस का अनुकरण घर २ हो रहा है। शीघ्र ही बाईबल की स्वर्णिम जिल्दें अन्य पुस्तकें को लगने वाली हैं हे दर्शक वृन्द !

देख उक्दह सुरय्या उसे अंगूर की सूझी।
क़ुर्बान हों इस समझ के कि क्या दूर की सूझी ×

जैसे कोई मनुष्य दस्तगीर (हाथ पकड़ने वाला) के शब्द से कैदी के अर्थ निकाले और ख़ता बख्श के शब्द से दोष दाता मानले और जौ बेचने और गन्दुम दिखाने से चमत्कारों और सृष्टि नियम विरुद्धता की ही तान लगाए। तो किसी प्रकार उपेक्षणीय न होगा। वैसे ही आक्षेपकर्ता की दौड़ धूप है। यह लोग प्रायः ऐसे हथकंडे चलाया करते हैं जिससे किसी प्रकार लोगों से बात करने का अवसर मिले। जैसा कि समस्त ग्रन्थ साहब से यह श्लोक निकाला है कि :—

पुण्य रख सका काना सीसा।
सिरी असकेत जगत् के ईसा ॥

समस्त पाठक वृन्द जानते हैं कि गुरमुखी में श अक्षर नहीं है। जिससे प्रायः श के स्थान पर स

⌉ समय ने नए विधान का बिछौना बिछा दिया कि वह मानो ऐसी पक्षी हुआ कि सोने का अंला रख दिया (देने लगा)।

× क्योंकि आपका तर्क समस्त संसार से निराला है। अतः आपको ऐसे दोष तराशने में बहुत अभ्यास है। किन्तु वैदिक पद्धति से परिचिति के विना वेद मुकद्दस के अभिप्राय को समझना सरल नहीं है।

का प्रयोग होता है। मूल शब्द ईश का संक्षेप है। भगवान् रक्षा करे। यहां ईसाईयों ने ईसा का वर्णन निकाला है।

शत पथ और ऐतरेय ब्राह्मण संस्कृत के ग्रन्थ हैं। उनमें आप के प्रमाण नहीं हैं कृपा कर के इच्छया अनच्छिया बुद्धिमानों के निकट बौद्धिक विषयों में हस्तक्षेप करना आप के लिए दूर की बात है।

पादरी (धारा ५) (क) अध्याय ४ अनुवाक् २३ में बृहत् इन्द्र देवता अगस्त मुनि से कहता है कि आज कल ठीक नहीं कि हम पर क्या बीतने वाला है।

(ख) और अनुवाक ६ सूक्त २ में ऋक् कर्ता का कथन है कि सर्वसाधारण की अपेक्षा हम भी दोषों से कुछ अधिक सुरक्षित नहीं।

यह है वैदिक इलहाम की निरर्थक प्रशंसा जो उसने स्वयं भी अपनी की है। वेद और पुराण के अनुयायी जो चाहें–मानें और कहें। किन्तु वेदों को न तो चमत्कारों का दावा है और न पवित्र शिक्षा का, न दार्शनिक होने का। और जड़मूल वेद हैं तो शाखा पुराण और शास्त्र क्या कुछ होंगे ? सो ठीक ज्ञात नहीं ? किन्तु मूर्खता भी एक वार्धक्य है जो विभाषा में रहने वाले वेद से उत्पन्न हो रही है।

बस क़ामत खुश कि ज़ेर चादर बाशद।
चूं बाज़ कुनी मादर मादर बाशद॥

उत्तर आर्य (धारा ५) हे पाठक वृन्द ! मुझे शोक है कि ऋग्वेद के अध्याय ४ में अनुवाक २३ कोई नहीं और न मंडल ४ में अनुवाक २३ है। हां, मंडल ४ में सूक्त २३ है। किन्तु वहां क्या समस्त ऋग्वेद में किसी ऋषि की बातचीत नहीं लिखी। सर्वथा अगस्त्यादि किसी ऋषि का नाम निशान नहीं है। और न कोई अनुवाक ६ में सूक्त २ का प्रमाण मिलता है। अत:

गर न बीनद बरोज़ शपरा चश्म।
चश्माए आफ्ताबरा चेह गुनाह॥+

वेदों की कल्पित इञ्जीलों की भान्ति चमत्कारपूर्ण होने का और तौरेत मूसवी के तूर पर सृष्टि नियम विरुद्ध (जैसा कि मूसा को खुदा ने कहा कि मैं फ़िरऔन का हृदय कठोर करूंगा और तू उसे हरा उद्यान बतलाना) चमत्कारों का और चारों इञ्जीलों के रूप में जिनों भूतों के निकालने तथा निरर्थक विषयों पर अविद्या के भंवर में डालने का दावा कहीं नहीं। और न ऐसे उपहासों को सत्यता से कुछ सम्बन्ध है। जिस प्रकार सावन के अन्धे को हरा दीखता है। पादरी जी को भी वेदों में न मंद मंद ज्ञान समीर स्पर्शों का भान होता है और न फ़लासफ़ी आदि का। क्योंकि वेद की फ़लासफ़ी अन्य है। बाई-बल की अन्य है। यह वास्तविक स्वर्ण साधनता अन्य है तथा नकली अन्य। वेद को ज्ञान युक्त बौद्धिक सत्यता का दावा है और दार्शनिक अध्यात्म विषयों की सिद्धि। किन्तु इसके विरुद्ध बाईबल को कथा-नकों और बुद्धिविरुद्ध बातों पर दावा है। √

+यदि दिन में उल्लू नहीं देखता तो सूर्य के प्रकाशस्रोत को क्या दोष ? (अनुवादक)

√खुदा की आत्मा फाख्ता या कबूतर बनकर ईसा पर उतरी (मती इंजील अ० २८) का रंग रूप रेशम और अकीक नामी पत्थर जैसा है। (योहना की मुकाशफात)

श्रौर मूर्खता तथा छल कपट की सिद्धियाँ ।

कुजा वहमो कुजा तालीमे इदराक ।
चेह निसबत खाक राबा आलमे पाक ।।+

हे न्याय प्रिय पाठक वृन्द ! सत्य श्रौर मिथ्या को ईश्वर प्रदत्त बुद्धि तथा मौलिक सत्य सिद्धान्तों की शिक्षा से पहचानो श्रौर देखो कि लोभ क्या उत्तम वस्तु है जो इच्छा या निच्छा या न्याय चक्षुओं पर पट्टी बांध देती है ।

ऐ तबल बुलंद बांग दूर बातन हेच ।
बेतोशा चेह तदबीर कुनी वक्त पसेज ।
रूएतमअ् अज़ खल्क़ बापेच अज़मरदी ।
इन्साफ़गर्ज़ी व ब बुतलान मपेच ।।

पादरी (धारा ६) दयानंद सरस्वती साहब+ एनशियेन्ट के निश्चित हुई है और एनशियेन्ट का सूर्य डूबने को है । दयानन्द जी प्रोग्रेसिव ब्राह्मू के मुख पर तो फूंकते हैं किन्तु विजयी नहीं कि उनकी चालाकी उन पर प्रभाव डाले । इसलिए कि उन की प्राणायाम समाधि केवल अज्ञानियों पर ही प्रभावशाली है । जबकि उनमें विद्या बढ़ती जाती है । और होता भी यही है कि अन्ध विश्वास को स्थान दे तथा इसके पश्चात् अविश्वास विश्वास को स्थान दे । क्योंकि अन्ध विश्वास कोई युक्ति और अपना कोई आधार नहीं चाहता । किन्तु अविद्यामात्र है । और अविश्वास उसका विरोधी है । अन्धविश्वास उठकर तर्कों का ही खंडन कर डालता है । किन्तु घटनाचक्र किसी प्रकार से मिट नहीं सकता अतः अन्ततः यौक्तिक विश्वास अवश्यंभावी है ।

उत्तर आर्य (धारा ६) स्वामी दयानंद जी महाराज ने एनशियेंट (पुराने) ब्राह्मू का साथ नहीं दिया और न प्रोग्रेसिव (वर्तमान) ब्राह्मू की शिक्षा का समर्थन किया । किन्तु आर्यसमाज और ब्राह्मसमाज की परस्पर पूर्व पश्चिम की दूरी है । जिसको सत्यदर्शी आंखें देख सकती हैं । स्वामी जी महाराज की शिक्षा और उपदेश का सहायक तथा प्रेरक वेद है और ब्राह्मसमाज की प्रार्थना और उपदेश केवल भ्रम मात्र और विचार का अवैधानिकपन अथवा इन्जील या कुरान और वेद के गुच्छे चुराना । ब्राह्मसमाज का बल हाथ काटने पर श्रौर आर्यसमाज का इलाज़ करने पर । किन्तु काटना यहां सर्वथा अस्वीकार है क्योंकि—

सहलस्त लाल बदख्शां शिकस्त ।
शिकास्तान्यायद व गर बारबिस्त ।। +

+कहाँ विभ्रम और कहाँ सत्य ज्ञान की शिक्षा ? मट्टी को पवित्र लोकों के साथ क्या संबंध ? (अनुवादक)

×खुदा ने मूसा को कहा—मैं फिरऔन का हृदय कठोर करूंगा तू उसे उपदेश करना । (मूसा की पुस्तक)

+चमकते दमकते हीरे को तोड़ देना सरल है किन्तु टूटे को बार २ जोड़ने पर भी जोड़ सकना कठिन है । (अनुवादक)

अतः पादरी साहब स्वयं न्याय करें।

चिरागे बेवा मुरदा कुजा नूरे आफताब कुजा।
बबीं तफ़ावते राह अज़ कुजा ता बकुजा ॥:

मैं क्या किन्तु सम्पूर्ण बुद्धिप्रशंसक मानते हैं कि युक्तियों पर विश्वास आवश्यक है। किन्तु युक्ति रहित और लिखित सिद्धान्तों पर विश्वास कर बैठना कौन सी बुद्धिमत्ता है? यदि आपका तर्क पर विश्वास है और वास्तव में दार्शनिकों में पग धरते हैं तो मैं आपको चैलेंज करता हूं कि आदम का पाप और उसका कारण तथा मसीह के प्रायश्चित्त को युक्तियों से सिद्ध कर दिखाईये। अन्यथा लाभहीन ऊंची दुकान फीके पकवान के पात्र न बनिये।

पादरी (धारा ७) बुद्धि जो अनुचित विचार और इच्छा की विरोधिनी है अन्ततः विजयी होने तथा अन्तिम युक्ति को प्रथम पद में चाहती है। और जब वह प्राप्त न हो तो उसी दिशा को जाती है। जो सुरक्षित स्थान में रखती हो। भ्रम पूजा, नास्तिकता,नवीन वेदान्त, हठ पूजा,भौतिकतत्व पूजा, ज्ञान-वाद आदि यह सब वह मन्तव्य हैं जिनकी सहायक न तो कोई निर्णायक युक्ति है और न जिनमें कोई आत्मरक्षा है। किन्तु सत्य और सुरक्षा के यह सर्वथा विरुद्ध हैं। मानवी स्वभाव में नेचर के उत्पादक ने यही धर्म दिया है कि सच्चाई के कार्य को और उस दया से उत्पादक से प्रीति लगा कि जिसने उसके न्याय की इच्छा को पूर्ण किया हो — नष्ट न किया हो और उसी के सम्मुख जो तेरा उत्पादक और स्वामी है – अधीन हो के चल। इन्हीं नियमों की व्याख्या बाईबल का धर्म करता है और पूर्ण करता है।

उत्तर–आर्य (धारा ७) निस्सन्देह बुद्धि जो मानसिक इच्छा और अनुचित विचार की विरोधिनी और निर्णायक तर्क की प्रथम दर्जा की इच्छुक है। जब तक वह प्राप्त न हो तो उस सत्य स्रोत अर्थात् पारब्रह्म के संबंध में मनुष्य कई प्रकार के दोष लगाता है और भिन्न २ प्रकार के विचारों के ओदन पकाता है। कोई बेटे को बाप के दक्षिणहस्त बिठाता है। और खुदाई कार्य व्यवहार से खुदा के अधिकार छीनकर आसमानी तख्त से गिरता है और बेकार केवल निराधिकार बताता है। कोई "श्रेष्ठगीत" में (लज्जा योग्य) और कई प्रकार की धन्नासुरी गाता है और कोई उसके तख्त उठाने के लिए आठ फ़रिश्ते लगाता है। कोई उसके मिलने के लिए मेराज अर्थात् ७० सहस्र डंडों वालो सीढ़ी लगाता है। यह सब बुद्धि के न होने का दोष है और अन्धाधुंध अंधविश्वास तथा अंधानुकरण का प्रगट होना है। अन्यथा एक के पाप करने से संपूर्ण सृष्टि पापी हो गई और एक के फांसी चढ़ जाने से पापनिर्मुक्त हो गए। मुझे इस स्थान पर योग्य ईसाई का वचन स्मरण आया है:–

है तलीसे⋰ इलाही+ अक़्ले– इनसानी+ से गोः बाहिर।
खि़रद+ को छोड़कर ईमान⋰ लाए जिसका जी चाहे ॥

: विधवा का मृत दीपक कहाँ और सूर्य प्रकाश कहाँ। देख ! मार्ग का भेद कहाँ से कहाँ तक।
(अनुवादक)

⋰त्रिनेटी = ईसाईयों का तीन खुदा मानने का सिद्धान्त तसलीस कहता है। +ईश्वरीय –बुद्धि +मानवी : यद्यपि +बुद्धि ⋰पैगम्बर पर विश्वास करना।

जिसके कारण बच्चा २ इंजील शिक्षा पर समालोचना करके टिप्पणी कर रहा है। यदि सांसारिक लोभ संलग्न न हो तो फिर देखा जावे कि कितने ठीक आँख वालों को तीन तीन दृष्टिगत होते हैं। ज्यों ज्यों शिक्षा की उन्नति होती जाती है लोग इंजील की शिक्षा व्यर्थ समझ कर प्रकृतिवादी होते जाते हैं स्वयं योरुप ही इसका प्रमाण है कि वहां पर इंजील ने क्या क्या सत्यता फैलाई है? अब वर्तमान विद्याएं (साइंस, ज्यालोजी और गणित विद्या आदि) ने इञ्जीलों की और पोल खोल दी है। इसका यही कारण है कि बाईबल के भवन की आधार शिला रेत पर है। जिस पर सहस्र स्वर्ण फ़ोटो बनाने और सफ़ेदी लगाने से भी उसकी स्थिरता का रूप दिखाई नहीं देता है। हे पाठकवृन्द! क्या कोई सत्य का अनुयायी देख सकता है कि ईसा के फांसी पाने ने खुदा के न्याय की आवश्यकता पूरी की हो (असंभव)

खुदा जानता है कि अधूरा और सदोष पाप करने के लिये जो निरोध और भय था। वह भी दूर कर दिया और खुल्लम खुल्ला स्वतंत्रता दे दी कि---

न अब ख़ौफ़े× ख़ुदा··· है और न अ़दले+ किबरियाई... है।
मचा अंधेर है आओ मसीहा की ख़ुदाई है॥

क्या पाप शारीरिक वस्तु है? क्या किसी का वध करने से पाप का प्रायश्चित्त हो जाता है? क्या रक्त बिंदु पुण्यमय सौभाग्य का चिह्न है? क्या मसीह के पापी होने का अपना भी प्रायश्चित होने के योग्य हो सकता है? यह सब वही विश्वास हैं जिनके सहायक कोई निर्णायक तर्क नहीं हैं? और न कोई सत्य प्रेमी बौद्धिक स्वभव इन्हें स्वीकार करके शान्ति प्राप्त कर सकता है।

पादरी (धारा ८) यह एक बड़ी ही विचित्र बात है कि इस संसार में जो तड़क भड़क खोटे की है खरे को नहीं। आवश्यक तो था कि एकता, गर्व, प्रेम और परस्पर सहयोग खरे की ओर होती और बस। किन्तु इसके विरुद्ध खोटे की ओर है। हम आदेश पर प्रायः यहां बोलते हैं किन्तु ईश्वर के आदेश पर नहीं और इसका कारण यही है कि मनुष्य को अपनी पूजा प्रिय है। ईश्वर पूजा नहीं।

उत्तर—आर्य (धारा ८) पादरी महोदय की बात वास्तव में विचित्र क्या किन्तु अनूठी है ईश्वर उसको खरे खोटे की परख प्रदान करे। अतः परीक्षा पर परखना आवश्यक है। स्वार्थ रहित सद्बुद्धि सच्चा जौहरी बनने योग्य है। प्रसिद्ध है कि सांच को आंच नहीं और खरे को भय नहीं। खोट की तड़क भड़क मूर्ख की आँख को अंधा करती है किन्तु जौहरी के सम्मुख पूरी परख हो जाती है। हठधर्मी और जान बूझ कर न मानना, हमचूंमादीगरे नेस्त (हमारे समान अन्य कोई नहीं) का कोई प्रतिकार नहीं। और अहंमन्यता की ईश्वर पूजा की ओर प्रवृत्ति होना ऐसी कठिन है जैसा कि एक और एक का तीन होना अथवा तीन भिन्न अपूर्ण कल्पनाओं का एक तत्व होना। कुछ भी हो बाईबल की प्रतिज्ञाओं का बौद्धिक प्रमाण प्रत्येक प्रकार से कठिन किन्तु असंभव है।

पादरी (धारा ९) ईश्वर का सत्य धर्म वही है जो ईश्वरीय न्याय से स्पष्टता का विश्वास दिला दे। चाहे उसका ऐसा करना बौद्धिक तर्कों से या संभव चमत्कारों की गवाही से हो और वह व्यक्ति धन्य है जो भय से मुख को नहीं छिपाता किन्तु उसके मिटाने का यत्न करता और उसके वर्तमान परलोक के

× भय ···ईश्वर + न्याय ...महान् ···ईश्वर।

साम्मुख्य में न्योछावर करके अन्तिम लज्जा से बचता है। प्रेम और ईश्वरीय भय का रक्षक ही केवल उसको जीव के गन्तव्य स्थान तक पहुंचा सकता है। और सत्यता ही उसकी सच्ची तलवार और ढाल है कि जिसका साम्मुख्य विरोधी से असंभव है।

उत्तर आर्य (धारा ६) ईश्वर का सत्य धर्म वही है जो ईश्वरीय न्याय पर किसी प्रकार धब्बा न आने दे और परमात्मा की सत्ता को प्रत्येक प्रकार के कलंक, दोषों से रहित सिद्ध करे और उस धर्म का ऐसा करना बौद्धिक युक्तियों से हो न कि व्यर्थ की दास्तानों (कथानकों) से, धोखा देना, चमत्कार, सांसारिकलोभ, सफ़ारशी बातों और सृष्टि के नियमविरुद्ध मन्तव्यों तथा सिद्धियों आदि से जिनकी सिद्धि उससे भी सहस्र गुना अधिक कठिन है। सत्य के अनुसरण में भयों से भयभीत होना पौरुषहीनों का कार्य है और उसके मिटाने में मन और आत्मा से ध्यान देना और सांसारिक प्रतिष्ठा तथा श्वेत रूपता व आलस्य के कारण न भूलना बुद्धिमानों और मेधावी जनों पर समाप्ति है। हमारे भोले भाले सैंकड़ों हिन्दु भाई पादरियों की चाटुकारिता पर प्रसन्न हो वस्त्रों से बाहिर होकर, ज्ञान और बुद्धि को रहन रख कर हुंडी लिखा चुके हैं और परलोक के सम्मुख वर्तमान को बहुत बड़ी उदारता से शर्त लगा दिया जिस कारण से जो था वह सब खो बैठे और जब कुछ न रहा तो आगे अल्लाह अल्लाह, खैर सल्ला। मेम साहबा की बग्घी हांकने के योग्य हो गए।

धन्य वह लोग हैं जो लोभ के लिये जीवन बरबाद नहीं करते, और धोखा की सान्त्वना से बच कर वास्तविक शान्ति को ढूंडते हैं। किसी ढके अन्धकूप में नहीं गिरते और जिनका शास्त्र की इस आज्ञा पर आचरण है कि :–

अर्थात् सत्य की ही अन्त की विजय होती है। हठ और झूठ की नहीं।

—०—

नियोग का मन्तव्य

स्पष्ट हो कि रेवाड़ी के प्रचारक टी. विलियम्स महोदय ने (जैसा कि इन लोगों का चिरकाल से नियम है) जनता को आर्यसमाज और वेदों से संदिग्ध करने के विचार से १७ सितम्बर १८८९ ईस्वी को एक पत्र आर्य पत्रिका लाहौर में प्रकाशित कराया। जिसमें उन्होंने सत्यार्थप्रकाश और स्वामी दयानंद जी तथा ऋग्वेद पर यह आक्षेप किया कि उसमें यमयमी की कथा है। और स्वामी जी से नियोग विषय पर बहुत असभ्य शब्दों में संबोधन करके अपने गर्व से यह सिद्ध करना चाहा कि पंडित दयानंद अपने काल में वेदों के बहुत ही भयानक शत्रु थे।

उसी बार सुयोग्य विद्वान् पं० गुरुदत्त एम. ए. की ओर से पादरी महोदय का उत्तर भी प्रकाशित हुआ। पं० जी ने समयाभाव और रुग्ण होने के कारण उनके वास्तविक आक्षेप के उत्तर में उसी प्रकार की बातें उनकी बाईबल से सिद्ध कीं। और नैयायिक युक्तियों से उनके आक्षेपों का खंडन किया। जिस पर कुछ विरोधियों की यह सम्मति है कि "मिस्टर गुरुदत्त ने पादरी विलियम्स के आक्षेपों को लेकर यह दिखाने का यत्न किया है कि बाईबल की दृष्टि से आपके खुदावन्द मसीह के सम्बन्ध में भी इस प्रकार के दोष लगते हैं किन्तु इससे क्या ?"

पंडित जी का विचार सम्पूर्ण सूक्त का अनुवाद करने और विस्तार से उत्तर देने का था किन्तु शोक कि वह महाशय १९ मार्च १८९० ईस्वी को स्वर्गवास हो गए।

पादरी जी ने वही अपना लेख पृथक् पुस्तक के रूप में नागरी में प्रकाशित किया है। जिसका नाम नियोग खंडन पत्रिका रखा।

आर्यसमाज के स्वार्थी शत्रु किन्तु हठी और अकारण विरोधी मिस्टर शिवनारायण अग्निहोत्री लाहौरी पैग़म्बर ने इच्छयानिच्छया पादरी जी के आक्षेपों को आंगल और नागरी से उर्दू में अनूदितकर एकट्रैक्ट के रूप में लिखा और उसका नाम—

"पंडित दयानंद का झूठ और उनकी पाप युक्त शिक्षा" रख अपने प्रैस में प्रकाशित किया।

अतः हम अपने स्वर्गीय भाई के विचार को ईश्वराश्रित होकर पूर्ण करते और पादरी जी तथा मिस्टर अग्निहोत्री के आक्षेपों की वास्तविकता बतलाते हैं। क्योंकि—

कुफ़्रस्त दर तरीकते मा कीना दाशतन ।
आईने मा अस्त सीना चूं आईना दाशतन ॥+

×हमारी पद्धति (धर्म) में शत्रुता रखनी कुफ्र (नास्तिकता है। हमारा विधान (नियम) मन को दर्पणवत् रखना है। (अनुवादक)

वाममार्ग के प्रकाश और पुराणों के दोषों के कारण कुछ काल से लोगों ने सभी प्रकार के भ्रम-जाल+ वेदों पर मढ़ने आरम्भ किये। देवताओं की कुर्बानियां और बुतों की रक्तकुशानियां भी लोग वेदों से सम्बन्धित बताने लगे। महीधर और सायणाचार्य जैसे वाममार्गियों ने सैंकड़ों प्रकार के कलंक वेदों को लगाए और यत्न किया कि उनकी दूषित शिक्षा वेदोक्त मानी जाए। मनघड़न्त कथाएं घड़कर उन्हें वेदों से प्रमाणित करना और दन्त कथाएं रचकर वेद प्रणीत ठहराना कितनी कठोर परले दर्जे की नास्तकिता थी। किन्तु नास्तिक लोग सर्वथा न चूके और कुछ भी भय मनमें न लाए। गौतम🍃 अहल्या इन्द्र और चन्द्रमा की कहानी ब्रह्म× और सरस्वती के व्यभिचार की कथा, इन्द्र वृत्तसुर युद्ध+ वामनावतार✓ और पृथिवी का तीन पग में मापना, सैंकड़ों प्रकार के तीर्थ+ भिन्न २ देवता — नर-बलि× करवट लेना✹।

यह सब व्यभिचारी लोग वेदों के ही मंत्रों से करते और कराते थे। और प्रमाण उपस्थित किया करते थे। बंगाला का हरिबोल, ब्रह्मा का हिमयुक्त स्वर्ग वेदों के ही प्रमाण देकर सिद्ध किया जाता था।

हम कहां तक वृत्तान्त वर्णन करें—और इस राम कथा को कितना विस्तार दें। सत्य तो यह है कि वेदों की शिक्षा, वेदों की महत्ता, वेदों का एकेश्वरवाद, वेदों का सत्य और वेदों का धर्म सर्वथा नष्ट

+धार्मिक मिन्नत पूरी करने के लिये सुन्दर वन या सागर के द्वीपों में बच्चों को मरने के लिए छोड़ आने की निर्दयता पूर्ण रीति भारतीय विधान की धारा ३१७ के द्वारा १८५६ ईस्वी में बंद की गई।

🍃बनारस की भान्ति के स्थानों पर जो कूर्च की कुरीति थी। वह १८७५ ईस्वी में कानून से निषिद्ध की गई।

×सती होना समस्त भारत से १४ सितम्बर १८२६ ईस्वी को धारा १७ के अनुसार विधान द्वारा बड़े प्रबन्ध के साथ निषिद्ध घोषित हुआ। (ऋ० पृ० ३०)

+स्त्रियाँ वेचना १८४२ ईस्वी में बन्द होकर उसके दोषी के लिए दंड नियत किया गया।

✓धरना देकर बैठने की कुरीति जो प्रायः ब्राह्मण लोग आचरण में लाया करते थे १८२६ में दंडनीय ठहराई गई।

+कन्या हत्या की रोक के लिए पहिले बहुत यत्न हुआ। किन्तु जब पक्षपाती और अभिमानी जातियाँ इससे न रुकीं तो एक नवीन विभाग स्थापित हुआ, जो अब तक विद्यमान है।

—ठग जो भैरूं, काली, चंडी, दूर्गा आदि के नाम पर लोगों को मारा करते थे और झूठे मनघड़न्त मंत्रों को पढ़कर पथिक लोगों का गला दवाते थे—उनके लिए पृथक् विभाग स्थापित हो गया।

(देखो ठग वृत्तान्त और दंड विधान १८६१ ई०)

×विधवाओं पर भी सीमातीत अत्याचार देखकर १८५६ ई० में और १८६६ ईस्वी में विधान स्वीकृत हो गया।

✹ठाकुर अर्थात् मूर्तियों के साथ कन्याओं का विवाह करना और पुनः उन्हें मन्दिरों में रामजनी के रूप में रखना—मद्रास सरकार ने विधानतः घोषित किया। (देखो नसीम आगरा २३ जनवरी १८८१ ई०)

हो चला था। वैदिक जहाज़ के कप्तान वास्तव में +नाखुदा (नास्तिक) हो गये थे। यदि उस समय स्वामी दयानंद जी महाराज उद्योग न करते और परम पुरुषार्थ करके वेदोक्त शिक्षा ग्रहण न करते, वैदिक धर्म न फैलाते। तो यह पादरी लोग क्या किसी के अवशेष छोड़ते? क्या सबके जन्यू (यज्ञोपवीत) तोड़ ईसाई न बनाते? क्या मुक्ति सेना में भरती कर सीधे अन्डेमान द्वीप न पहुंचाते और सत्य धर्म की समाप्ति न कराते? क्या पोप आफ़ रोम की भान्ति तन मन धन अर्पण कराकर हमें कोरा न बनाते? इसमें किसी प्रकार का सन्देह न था। पस वैदिक सूर्य के उदय से अब चमगादड़ें चीखने के अतिरिक्त और क्या कर सकती हैं?

अरबी की किंवदन्ती इसी अवसर के अनुरूप है। कवि वचनानुसार :--

जाअल्हक्को व ज़हक़ल्बातिलो।
अन्नल्बातिला काना ज़हूक़ा।।%

सदाक़त आमद व बातिल रवां शुद।
तलुए शम्सशुद शपर निहां शुद।।:

अब हम पादरी जी के आक्षेपों का उत्तर देना शुरू करते हैं।

अब ज्ञात हो कि वेदों में कोई कथा–कथानक नहीं। न किसी विशेष व्यक्ति या राजा या घटनाओं का वर्णन है। क्योंकि वेदों में समस्त यौगिक शब्द हैं–रूढ़ि नहीं। अर्थात् धातु और प्रक्रिया युक्त हैं। प्रक्रियाहीन नहीं। यही सनातन से ऋषि मुनियों का विचार है। इसी पर आर्य धर्म की आधार शिला है। यही वैदिक इलहाम का सबसे निराला गर्व है। इसमें कोई गाथा वाथा नहीं। जैसा कि महाभाष्य के कर्ता पतंजलि ऋषि फरमाते हैं कि :–

उणादयो बहुलम् ।।१।। बहुल वचनं किमर्थम्। बाहुलकं प्रकृतेस्तनुदृष्टेः तन्वीभ्यः प्रकृतिभ्यउणादयो दृश्यन्ते न सर्वाभ्यो दृश्यन्ते ततः परे। कार्याद्विद्यादनुबन्धमतेच्छास्त्र-मुणादिषु ।। महाभाष्य ३।३।१

प्रायेणखल्वपिते समुच्चिता, न सर्वे समुच्चिताः।

कार्य सशेषविधेयश्च तदुक्तं।

कार्याणिखल्वपि सशेषाणि कृतानि, न सर्वाणि लक्षणेन परिसमाप्तानि।। किं पुनः कारणं तन्वीभ्यः प्रकृतिभ्य उणादयो दृश्यन्ते न सर्वाभ्यो दृश्यन्ते। किं चकारणं प्रायेण

+नाविक

%सत्य आया और असत्य सर्वथा नष्ट भ्रष्ट हो गया। निश्चय असत्य नष्ट भ्रष्ट होने वाला है। (अनुवादक)

: सत्य आया और असत्य चलता बना। सूर्य का उदय हुआ और चमगादड़ छिप गए। (अनुवादक)

समुच्चिता न मर्वे समुच्चिताः । किं च कारणं कार्याणि सशेषाणि कृतानि न सर्वाणि लक्षणेन परि समाप्तानि ।

नैगम रूढि भवंहि सुसाधु ।। नैगमाश्च रूढि भावश्चौणादिकाः सुसाधवः कथं स्युः । नाम च धातुजमाह निरुक्ते ।। नामखल्वपि धातुजम् । एवमाहुर्नैरुक्ताः । व्याकरणे शकटस्य चतोकम् । वैयाकरणानां चशाकटायन आह–धातुजं नामेति ।। यस्यविशेष पदार्थो न समुत्थितः कथं तत्रभवितव्यम् ? प्रतिदृष्टवा प्रत्यय ऊहितव्यः । प्रत्ययंचदृष्टवा प्रकृतिरूहितव्या । संज्ञासुधातु रूपाणि प्रत्ययाश्च प्रायसमुच्चयनादपितेषाम् ।

ऐसा ही वर्णन निरुक्त में यास्क मुनि जी ने भी किया है । (देखो भाग २ खंड १२ अध्याय १ पाद ४ पृष्ठ ८३ कलकत्ता संस्करण)

यही अभिप्राय मीमांसा शास्त्र के विद्वान् रचयिता महर्षि जैमिनी जी का है :––परन्तु श्रुति सामान्य मात्रम् मी० १।१।३१

इसी प्रकार अनुमान (करना चाहिए)

जिससे स्पष्ट है कि सिद्धान्त तथा ऋषि मुनियों के अनुसार वेदों में कोई कथा ढूंडना मानो मूर्खता के मैदान में चक्कर खाकर मरना है । (विस्तार देखो स्वामी जी महाराज की वेदभाष्य भूमिका तथा व्याकरण नियम पृष्ठ ३४१ से ३६४ तक और वेद भाष्य का विजापन बनारस संस्करण संवत् १६३३ विक्रमी पृष्ठ १ से ८ तक)

अतः स्पष्ट प्रगट है कि वेद मुकद्दस में यमयमी की गाथा कदापि नहीं हो सकती और न है। क्यों कि यह बात सर्व ऋषियों के विरुद्ध है ।

अब कात्यायन अपनी सर्वानु–क्रमाणिका में लिखते हैं :—

कि इस सूक्त में विवस्वान् की सन्तान यमयमी का संवाद है । अब प्रष्टव्य यह बात रही कि यह विवस्वान् कौन है ? जब कोश में देखते हैं तो विवस्वान् का अर्थ सूर्य लिखा है ।

(देखो अमर कोश कांड १ वर्ग ३ लोक ३०)

अब विवस्वान् की सन्तान यम और यमी कौन ? स्पष्ट प्रगट है कि दिन और रात । अलंकार शास्त्र के जानने वाले लोग इस पद्धति को अच्छी प्रकार से जानते हैं । स्वयं निरुक्तकार ऋषि का यही विश्वास है कि :—

विवस्वतः सूर्यस्या पुत्री ।
रूपकमेतदाख्यानम् ।। निरु०

कि यम और यमी को सूर्य सन्तान कहने का अभिप्राय अलंकार है ।

(देखो निघंटु अध्याय १ खंड १७)

वास्तव में यम्या शब्द नहीं। यमी है। उस का पुल्लिंग प्रयोग यम है। यम और यमी दिन रात के नाम हैं।

प्रातः काल के समय की लालिमा—उषा को भी यमी कहते हैं। शास्त्रोक्त अलंकारों में सूर्य, दिन, और उषा का बहुत वर्णन आता है। जिस का अभिप्राय केवल यह है कि प्राकृतिक स्वाभाविक दृश्यों से उपदेश फ़रमाना। अथर्व वेद में इस के सम्बन्ध में बहुत मंत्र हैं। वहां यमी का अभिप्राय उषा प्रतीत होता है। (देखो अथर्व वेद कांड १८ अनुवाक १ मंत्र २७ २८)

किन्तु सूर्य और रात्रि का भी अलंकार है। (देखो निघंटु अध्याय ५ खंड ५)

ऐसे ही उणादि कोष में और निघंटु में यह पद का नाम भी है। (देखो ५।५)

इसी प्रकार व्याकरण की दृष्टि से नियमबद्ध जीवन व्यतीत करने वाले स्त्री पुरुषों के लिए भी प्रायः यमयमी का प्रयोग होता है।

यम वायु का नाम भी है। (निघंटु ५।४) और यम योग शास्त्र की दृष्टि से एक विशेष उपासना और मन के निरोध का साधन भी है। (देखो योग सूत्र ३०) और उस के धारण करने वाले को भी यम ही कहते हैं। न्यायकारी होने से यम परमेश्वर का भी नाम है। (देखो ऋग्वेद १।१६४।४६)

तथा

(मनुस्मृति अध्याय ८ श्लोक ९२)

स्मरण रहे कि नियोग भी एक प्रकार नियम अर्थात् प्रतिज्ञा है। अतः यह अर्थ यम और यमी के वैदिक पद्धति से होते हैं।

शेष रहा पौराणिक प्रयोग। उस की दृष्टि से मृत्यु के देवता का नाम भी यम है। यमुना नदी का नाम भी यमी है। जो पोप लोगों ने यम राजा की बहन बनाई और कृष्ण से व्याही है। किन्तु हमें ऐसे अर्थ स्वीकार नहीं। क्यों कि हम वैदिक धर्म के मानने वाले हैं न कि पुराणों के।

इन उपरिलिखित अर्थों के अतिरिक्त कोश में रोकना, बन्द हो जाता। परिणाम उत्सव, कुव्वा, शनि का सितारा भी यम यमी के अर्थों में आए हैं।

ऋग्वेद के इस दसवें मंडल के दसवें सूक्त की सम्पूर्ण १४ ऋचा हैं। जिन में से केवल चार में यमी और यम शब्द है। शेष दस में सर्वथा नहीं। इस दसवें सूक्त के अन्दर ६, ७, ८ वर्ग हैं। मंत्र १ से ५ तक वर्ग ६ है। जिस में यम अथवा यमी का शब्द भी नहीं है। मंत्र ६ से १० तक वर्ग ७ है। जिस में केवल मंत्र ७ से ९ में यह शब्द है। वर्ग ८ मंत्र ११ से १४ तक है। जिस के १३, १४ में यम और यमी शब्द आया है। शेषों में नहीं। यहाँ तक यह सूक्त समाप्त हुआ।

इन तीनों वर्गों में निम्न लिखित विषय हैं :—

वर्ग ६ मंत्र १ ५ तक स्वयंवर विवाह के सम्बन्ध में आज्ञा अथवा पद्धति।

वर्ग ७ मंत्र ६ से १० तक नियोग या पुनर्विवाह की आज्ञा।

वर्ग ८ मंत्र ११ से १४ तक बहिन भाई के विवाह अथवा सगोत्र विवाह का निषेध।

अब हम उचित समझते हैं कि पादरी जी के संशय दूर करने के लिए इस सूक्त के तीनों वर्गों का अनुवाद पाठकवृन्द की सेवा में उपस्थित करें।

वर्ग ६ का अनुवाद स्वयंवर विवाह संबंधी आज्ञा और पद्धति

मंत्र १— हे स्त्री ! मैं तेरा मित्र तेरे सामने वर्तमान तथा समुद्र गाम्भीर्यवत् गम्भीरता को प्राप्त (गृहस्थाश्रमी) होकर तेरे साथ विवाह करना चाहता हूं। जिस से पृथिवी पर निरन्तर प्रकाशमान परमात्मा प्रजापति की कृपा से सन्तान उत्पत्ति हो।

मंत्र २— (यदि स्त्री ब्रह्मचारिणी रहना चाहे तो यूँ कह सकती है) यद्यपि मैं तुल्य गुण युक्त हूं। तो भी आप के साथ संयोग से होने वाली मित्रता को नहीं चाहती। बस, आप किसी अन्य से जो आप के योग्य हो—ऐसी इच्छा करें। (उपनिषदों से प्रगट है कि गारगी आदि सैंकड़ों सुयोग्य विदुषी देवियां समस्त आयु तक ब्रह्मचारिणो रहीं)

मंत्र ३— हे स्त्री ! जो विद्वान् और मेधावी लोग हैं। वह ही ऐसी महत्वपूर्ण पद्धति को चाहते हैं (पशु आदि नहीं क्यों कि उन में कल्याण का मार्ग नहीं) अतः हे उत्तम शरीर युक्ते ! तेरा मन मेरे मन में स्थिर हो। मैं तेरा संतान दायक पति बनूँ। तेरे साथ मेरा विवाह निष्फल न हो। तू मेरे शरीर को प्राप्त हो।

मंत्र ४— धर्मात्मा लोग जो मिथ्या व्यवहार (झूठ, छल कपटादि) कभी नहीं करते। वह हम भी कभी न करें। तेजः स्वरूप शक्ति और प्राण का धारक पुरुष तथा जलादि के कोमल गुणों की धारण कर्त्री स्त्री को (अर्थात् दोनों) परमेश्वर ने उत्पन्न किया है। उसी सम्बन्ध की भान्ति हम गृहस्थ को धारण करें।

मंत्र ५— सब शिल्प क्रिया से बने हुए जगत् के नियन्ता और कर्त्ता, प्रेरक, उत्पादक परमात्मा ने गर्भाधान को सन्तानोत्पत्ति का मार्ग बनाया है। अतः परमात्मा के इन नियमों को कोई भी नहीं तोड़ सकता। पृथिवी अन्तरिक्ष, सूर्यादि लोक जड़ होने पर भी उसी के नियम में चल रहे हैं।

वर्ग नियोग या पुनर्विवाह के संबंध में आदेश और समय

मंत्र ६—मनुष्य के पिछले कर्म को वह परमेश्वर जानता है। सब गुप्त रहस्यों का भी वही ज्ञाता है। वह सब का साक्षी, भोग्य भोक्तृ व्यक्तियों का सर्वोच्च स्थान है। अर्थात् दोनों को उसी ने उत्पन्न किया है। वही उन के स्थान और जन्म को जानता है। यह दोनों परस्पर सम्बन्ध रखते हैं। क्योंकि एक की हानि में दूसरे की हानि है (इस के साथ देखो ऋग्वेद मंडल १० सूक्त ४० मंत्र २ तथा निरुक्त नैगम कांड ३ मंत्र १५ विदेश संस्करण पृष्ठ ५६)

मंत्र ७— जिस प्रकार वेदोक्त बिवाहिता स्त्री स्व पति के हेतु सर्वस्व अर्पण करती है। वैसे हम भी एक दूसरे के अर्पण हूं। नियम पूर्वक कार्य (नियोग) करने में उद्यत पुरुष पुनः संस्कार के नियमों को पालन करने वाली स्त्री का इच्छुक हा। दोनों संयुक्त होकर गृहस्थाश्रम को चलाने वाले हूं।

मंत्र ८— (जो विधवा स्त्री ब्रह्मचारिणी रहना चाहे, वह ऐसा कहे) हे स्त्री रहित पुरुष ! प्राकृतिक संसार के गुण विकारवान् हैं। एक क्षण भर भी स्थिर नहीं। इसी प्रकार इस जीवन का कोई भरोसा नहीं। अतः मैं पुनर्विवाह अथवा नियोग नहीं करना चाहती। तुम विवाह की इच्छा रखने वाली के साथ गृहस्थ रूप चक्र के चालक बनो। (उपनिषदादिकों से प्रगट है कि कई सुयोग्य देवियां पति मरणोपरान्त ब्रह्मचारिणी रहकर सदुपदेश करती रहीं। और ऐसे ही पुरुष भी)

मंत्र ९— जो सूर्य उदय होने से समय होता है। वह नियम पालन करने वाले पुरुष के लिए हो ओर रात दिन उसी नियम में रहें। जैसे द्यौलोक और भूमि लोक परस्पर आकर्षण रखते हैं। वैसे ही संयुक्त स्त्री पुरुष परस्पर नियोग सम्बन्ध को धारण करें।

मंत्र १०— ऐसे युग जब उपस्थि हूं कि कुल वधु कामातुरतादि विशेष आपत्तियों में पड़ कर व्याभिचारादि की ओर झुकने लगें और अयोग्य कर्म में संलग्न हूं। उन समयों में उचित है कि उन को कहा जावे कि हे सुभगे! तू मुझ से अन्य पति की इच्छा कर और उस का पाणिग्रहण कर।

इस मंत्र का निरुक्तकार ने भी यही अर्थ किया है कि :-

आगमिष्यन्ति तान्युत्तरणणि युगानि यत्र जामयः करिष्यन्त्य जामि कर्माणि। जारयतिरेक नाम वालिशस्य वाऽसमानजातीयस्य वोपजनः। उपधेहि वृषभाय बाहुमन्य-मिच्छस्व सुभगेपति मदिति व्याख्यातम्॥ निरुक्तनैगमकांड अ० पादरी खंड ४)

यामी और जामि कुलवधू के लिये प्रयुक्त होता है। और साधारणतः इन्हीं अर्थों में आया है। (देखो मनुस्मृति ८।१७३, ४।१८३, ४।१८५, ४।८५)

वर्ग ८—बहिन भाई के विवाह का खंडन कि सगोत्रों का विवाह संबंध नहीं हो सकता।

मंत्र ११—जिसकी विद्यमानता में बहिन अनाथ हो—क्या वह भाई है? और जो दुःख को भोगे—क्या वह किसी की बहिन है? अर्थात् उसका कोई भाई नहीं। तो यदि भाई को बहिन कहे कि मेरा दुःख दूर करने के लिए मेरे शरीर से अपना शरीर संयुक्त कर—तो भाई क्या करे (इस का उत्तर अग्रिम मंत्र में है) यह केवल प्रश्नात्मक है।

मंत्र १२—हे कामना युक्त! मैं तेरे शरीर से अपना शरीर न मिलाऊंगा। क्योंकि जो मनुष्य भगिनी से सहवास करता है—उसे पापी कहते हैं। इस कारण मेरे बिना गुणकर्मानुसार किसी अन्य पुरुष से शास्त्ररीत्या विवाह कर। तेरा भाई इस पाप को नहीं करना चाहता।

मंत्र १३—हे नियमों को पालन करने में समर्थ पुरुष! तुम बहुत दुर्बल हो रहे हो। क्या मैं तुम्हारे वृतान्त को नहीं जानती? तुम्हें इस स्त्री के स्थान पर अन्य स्त्री को प्राप्त हो। जैसे लता वृक्ष को प्राप्त होती है।

इस मंत्र का ऐसा अनुवाद निरुक्तकार ने भी किया है। (देखो निरुक्त ६।५।५ विदेशी संस्करण पृष्ठ १०२)

बतो बलादतीतो भवति दुर्बलो बतासि यम! नैवतेमनो हृदयं च विजानीमः अन्या किल त्वां परिष्वङ्क्ष्यते कक्ष्येव युक्तं लिबुजेव वृक्षम्। लिबुजा व्रतति र्भवति लीयतो विभजन्तीति। व्रततिर्वरणाच्च सयनाच्च। वाताप्युदकं भवति वातएतदाप्यायति पुनानो वाताप्यं विश्वश्चन्द्रम् (ऋ० ९।९३।५) इत्यपि निगमो भवति॥

निरुक्त नैगमकांड ६।५।६

मंत्र १४—हे नियमों के पालन करने वाली स्त्री ! तू अन्य किसी पुरुष को इस प्रकार प्राप्त हो जैसे लता वृक्ष को। तुम पुरुष के साथ सुन्दर कल्पना करने वाली सम्मति करो। जिससे परस्पर सुख की वृद्धि और दुःख का नाश हो। (इस मंत्र का ऐसा ही और लगभग इस जैसा अनुवाद निरुक्तकार ने किया है। देखो निरुक्त नैगम कांड ५।३।१३

अन्यमेवहित्वं यामिन्यस्त्वां परिष्वङ्क्ष्यते लिबुजेववृक्षं तस्य वा त्वंमनः इच्छ सवा-तवाधानेन कुरुष्व संविदं सुभद्रां कल्याण भद्राम्। यमीयमं चकमे तां प्रत्याचचक्ष इत्या-ख्यानम् ।। निरु० दैवतकांड ५।३।१३

जिसका अनुवाद यह है कि हे यमि ! तू दूसरे को प्राप्त हो और तुम से दूसरा ही संबंध करे। जैसे लता वृक्ष की वैसे तू उसके मन की इच्छा कर। वही तेरी धारणा से तेरे ज्ञान को रखे। वही तुझे सुभद्रा (कल्पना वाली) करे

यमी (उषा) यम (दिन) प्रकाशित करते हुए उस उषा को समय व्यतीत हो जाने पर दिन निषेध करता है।

अब हम पादरी जी के शेष आक्षेपों का उत्तर देते हैं।

(१) पादरी—हम जानते हैं कि पं० दयान्नदजी का नियोग से क्या अभिप्राय है ? अर्थात् जब किसी पति-पत्नी के सन्तान न होती हो—तो उन दोनों में से जो निर्बल नहीं है। सन्तानोत्पत्ति के विचार से किसी पुरुष से संग प्रसंग करे।

आर्य—स्वामी जी का यह अभिप्राय कदापि नहीं है। किन्तु वह लिखते हैं कि—"विवाह वा नियोग सन्तानों के ही अर्थ किये जाते हैं। पशुवत् काम क्रीडा के लिए नहीं"। पृ ११९ पंक्ति ९

और जीते जी नियोग या पुर्नविवाह जो कहा है। उसका यह अभिप्राय है कि

"स्त्री भी जब रोगादि दोषों से ग्रस्त होकर सन्तानोत्पत्ति में असमर्थ होवे। तब अपने पति को आज्ञा देवे कि हे स्वामिन् ! आप सन्तानोत्पति की इच्छा से मुझ को छोड़कर किसी दूसरी विधवा स्त्री से नियोग कर के सन्तान उत्पत्ति कीजिए।" (पृष्ठ ११९ पंक्ति २०)

अतः यह जीते जी नियोग केवल अतिरुग्ण हो जाने वा रोगी के साथ भूल से विवाह हो जाने के कारण से है।

सारा संसार मसीह वा स्वामी दयानंद जी की भान्ति यति नहीं रह सकता। लाखों स्त्रियां अपने रोगी पतियों की सेवा करने को परम धर्म समझती हैं और ऐसे ही लाखों पुरुष भी। अतः वेद मुकद्दस की यह आज्ञा उनके लिए नहीं है। यह तो केवल आपत् काल का धर्म है। जब वह पति की लज्जा में न रह सके वा पति स्त्री की लज्जा में न रह सके अर्थात् जब पति स्त्री व्रतधर्म का पालन न कर सके। तब आवश्यक है कि सब पंचायत के सम्मुख विवाह की भांति पुर्नविवाह वा नियोग करे।

(२) पादरी—मेरा यह अभिप्राय कदापि नहीं है कि वेदों में कोई निर्लज्जता की शिक्षा विद्यमान नही। किन्तु मैं दिखला सकता हूं कि उनमें इस प्रकार के उदाहरण विद्यमान हैं।

आर्य—मेरे श्रीमन् ! यह केवल आप की बाईबली शिक्षा का परिणाम है। अन्यथा वेद मुक़द्दस में (भगवान् रक्षा करे) कदापि कोई निर्लज्जता को शिक्षा नहीं है। हां, सैंकड़ों निर्लज्जता, दुराचार, असभ्यता की बातें आपकी पवित्र बाईबल में विद्यमान हैं। देखो निम्नलिखित नबियों के वृतान्त निम्न स्थानों में हैं।

इब्राहीम नबी का अपनी बहिन से विवाह करना (पैदायश १२।१३७,१९ २०।१२

दाऊद नबी का दुराचार (२ समवाईल ११।१–५) दाऊद नबी के बेटे का अपनी बहिन से दुराचार। (विस्तार देखो २ समवाईल १३।१४)

दाऊद नबी के बेटे अबी सलूम का अपने पिता की स्त्री से दुराचार। (२ समवाईल १६।२२)

लूतनबी का अपनी दोनों युवति पुत्रियों से दुराचार और मद्यमान। पैदायश १९।३०–३७)

याकूब नबी का छल से पैगम्बरी प्राप्त करना। (पैदायश अ० १७ संपूर्ण)

तिमिर नामी स्त्री का अपने श्वशुर यहूदा से दुराचार करना। (पैदायश ३७।१२-४३)

खुदा का मूसा को कपट दिखाना। खुरुज ११।२)

सुलैमान नबी श्रेष्ठ गति में कहता है कि "हे मेरी बुवा ! मेरी स्त्री ! तूने मेरा मन बरबाद किया। हे मेरी बहन स्त्री ! तेरा इश्क़ क्या अच्छा है। (श्रेष्ठ गीत ४।९-१०)

इसके साथ देखो:—

यशाया ३।१६-१८, ४७।३ अफ्रीतूं ५।१-२, ७।३६)

अब अन्त में बाईबल के खुदा का एक आचार संबंधी आदेश भी लिखता हूं और इसका आप ही को जज बनाता हूं।

इसतिसना पुस्तक में मूसा का खुदा आज्ञा देता है :—

"और जब तू लड़ाई के लिए अपने शत्रुओं पर चढ़ाई करे और खुदावंद तेरा खुदा उनको तेरे हाथों में पकड़वाए और तू उन्हें क़ैदी बना लाए। उन कैदियों में तू सुन्दरी स्त्री देखे और तेरा मन उसे चाहे कि तू उसे अपनी पत्नी बनावे। तो तू उसे अपने घर में ला। उस का सिर मुंडवा। नाखून कतरवा। तो वह अपना क़ैद का पहरावा उतारे। और तेरे घर में रहे। और एक मास भर अपने पिता और अपनी माता के शोक में बैठे। उसके पश्चात् तू उसके साथ सहवास कर और उसका पति बन। और वह तेरी पत्नी बने। उसके पश्चात् यदि तू उससे प्रसन्न न हो तो जहां वह चाहे तू उसे जाने दे। (इस्तिस्ना २१।१०-१४)

शोक ! शत सहस्र शोक ! ऐसे स्त्री संबंधी उलट पुलट आचार और दुराचार की आज्ञा का उत्तरदायित्व खुदा पर थोपा।

(२) पादरी—यह शिक्षा वेदों के सिर मढ़ने का अनुपम और अद्वितीय गर्व पं० दयानंद जी संस्थापक आर्य समाज ने ही प्राप्त किया है।

आर्य—ऐसा कदापि नहीं। किन्तु स्वामीजी का तो मन्तव्य यही है जैसा कि उन्होंने स्वयं वेद भाष्य के अंक में लिखा है कि—

"सब को विदित हो कि जी-जो बातें वेदों की और उनके अनुकूल हैं- उनको मैं मानता हूं। विरुद्ध बातों को नहीं। इससे जो मेरे बनाए सत्यार्थ प्रकाश व संस्कार विधि आदि ग्रन्थों में गृह्य सूत्र व मनुस्मृति आदि पुस्तकों के वचन बहुत से लिखे हैं। वह उन उन ग्रन्थों के मतों को जनाने के लिए लिखे हैं। उनमें से वेदार्थ के अनुकूल का साक्षोवत् प्रमाण और विरुद्ध को अप्रमाण मानता हूं जो जो बात वेदार्थ से निकलती है इन सब को प्रमाण करता हूं। क्योंकि वेद ईश्वरीय वाक्य होने से सर्वथा मुझ को मान्य है।"

ऐसा ही (देखो सत्यार्थ प्रकाश पृष्ठ ५७८ संस्करण २)

श्रीमान् पादरीजी! हमने आपको केवल विवाह, पुर्नविवाह अथवा नियोग का जैसा कि वेदों और विशेष कर इस सूक्त में वर्णन है - वह बतला दिया। और जैसा स्वामी जी महाराज ने लिखा है। उसी प्रकार आर्य समाज का भी सिद्धान्त है। "वेद सत् विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना पढ़ाना और सुनना सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।"

आर्यसमाज स्वामी जी को रसूल वा नबी वा अवतार वा ईश्वर पुत्र नहीं मानता। किन्तु सत्य धर्म प्रचारक और धार्मिक रिफारमर मानता है। वेदों के अनुकूल उनकी बातों को जो सबकी सब बुद्धि-युक्त हैं—हम मानते हैं।

५—पादरी—मानो इस स्थान पर वह जान बूझकर झूठ बोलते हैं। मैं पूर्ण दावा के साथ कह सकता हूं कि पं० दयानंद को ज्ञात था कि बात करने वाला यम है। अतः यह झूठ कितना भयानक है कि जिसके हम दोषी ठहरते हैं—हां भयानक है। इसलिये कि वह स्पष्ट रूप से एक ऐसी पुस्तक के विरुद्ध झूठ बोलते हैं कि जिसे वह इलहामी मानते हैं और जिसके इलहामी होने की मनादी करते हैं।

आर्य—स्वामी जी ने जो कुछ लिखा। उन्होंने अपनी आत्मा में ऋषियों की सम्मति और विद्या के अनुसार सत्य समझकर लिखा। जैसा कि उन्होंने सत्यार्थप्रकाश की भूमिका में भी वर्णन कर दिया है। उनकी स्वतन्त्रता, निर्भयता, धैर्य और सत्यप्रेम की गवाहियां सहस्रों विद्यमान हैं। किन्तु हम आप को बताते हैं कि आपके खुदावन्द मसीह साहब पर यह सारे शब्द उपयुक्त होते हैं न कि स्वामी जी पर।

पहिला झूठ—"यसूअ ने उससे कहा कि लोमड़ियों के लिये निवास और वायु के पक्षियों के लिये घोंसले हैं। परन्तु इब्ने आदम के लिए स्थान नहीं।" (मती ८।२०)

इसका खंडन यूहन्ना १।३९ से होता है।

दूसरा झूठ— (मती १२।४०) तीन रात तीन दिन रहने की स्वीकृति है। मरक़स १५।४२ शुक्र के दिन सायं समय दफ़न हुए। मती २८।१-५ मे रविवार।

प्रातः काल लाश क़बर से गुम हुई। इस गणना से दो रात और एक दिन क़बर में रहे।

तीसरा झूठ— मैं तुम से सत्य कहता हूं कि उनमें से जो यहां खड़े हैं। कुछ ऐसे हैं कि जब तक इब्ने आदम (मसीह) को अपनी बादशादत में आता देख न लें। मौत का स्वाद न चखेंगे। मती १६।२८

चौथा झूठ— लूका २३।३९ में उसी दिन स्वर्ग में जाने का वचन है किन्तु पतरस की पहली पत्री ६।१९ के प्रमाण से प्रगट होता है कि वह स्वर्ग में नही गया। जैसा कि पुस्तक हल्लुलश्काल १८७४ ईस्वी पृ० १०६ पंक्ति १३ में पादरी फ़ाउन्डर महोदय ने भी इसको स्वीकार किया है। अतः स्पष्ट प्रगट

है कि मसीह उस समय से तीन रात और तीन दिन नरक में रहा और अअमाल १।३ से प्रगट होता है कि वह चालीस दिन तक भूमि पर रहा। अतः ४३ दिन तक मसीह को स्वर्ग प्राप्त नहीं हुआ और न उस चोर को। यह बाईबल के खुदा का एक बड़ा झूठ है।

मसीह का पांचवां झूठ भी हम लिख देते किन्तु इंजीलें क्योंकि चार हैं। अतः हम भी चार ही पर सन्तोष करते हैं। यदि आप अन्य देखना चाहें तो हमारे बनाए हुए क्रश्चन मत दर्पण पृ० ४३ प्रथम संस्करण में देख लें।

स्वामी जी ने अपनी इलहामी पुस्तक के संबंध में कोई झूठ नहीं बोला किन्तु मति रसूल और इलहामी ने अवश्य बोला। ध्यान से देखो-मती १।२२, २।१५, २।२३, २७।८।

१२—पादरी—पंडित दयानन्द अपने समय में वेदों के बहुत ही भयानक शत्रु थे।

आर्य—जब आपके आक्षेप झूठे सिद्ध हो गये और हम उनका खंडन कर चुके तो पं० दयानन्द जी अपने समय के बहुत ही भयानक शत्रु न रहे। किन्तु सबसे अधिक वेद धर्म प्रचारक और वेदार्थ प्रकाशक सत्यमत के सहायक सिद्ध हो गए। यह केवल हमारी ही सम्मति नहीं किन्तु आपके पादरी ऐफ ऐल, नील्ड महोदय ने भी ऐसा लिखा है कि:—

"स्वामी नयानन्द सरस्वती के घूमने और प्रचार करने से यह हुआ कि उन्होंने धार्मिक पुजारियों को जो मक्कार हैं और सत्य हृदय से ज्ञान की खोज नहीं करते हैं लज्जित किया। सहस्रों वर्षों से जो प्राचीन धर्म नष्ट प्रायः हो गया था, उस को प्रकाश में लाकर भारत के अर्पण किया।" (देखो उनकी वार्षिक रिपोर्ट)

इसी प्रकार एक अन्य योरुपियन महोदय फ़रमाते हैं कि:—

"पांच वर्ष से एक मनुष्य जिस की विद्या और महत्ता में कुछ भी बोलने का स्थान नहीं, इस देश में प्रगट् हुआ है वह नगर नगर फिरता और वेदाज्ञाओं का उपदेश करता है। जिनमें एक परमेश्वर की उपासना की आज्ञा है और अन्योपासना का निषेध है। केवल यही नहीं किन्तु उसने सिद्ध कर दिया कि सती की कुरीति और मूर्ति पूजा तथा अन्य कुरीतियां जो पुराणों में लिखी और स्वार्थी पुजारियों की बनावट हैं। वह वेद के मन्तव्य के विरुद्ध हैं। (समाचार पत्र पायोनियर प्रयाग ३० दिसंबर १०७६ ईस्वी) विस्तार (देखो नुसखाए खब्ते अहमदिया पृ०२२६, २३०)

८, ६, ११ पादरी—तेरहवें मंत्र में यम संबोधन है। वहां लिखा है कि हे यम! और चौदहवें पद में यमी भी संबोधन है अर्थात् हे यमि! यह दोनों अन्तिम मंत्र हैं। व्याख्या से स्पष्ट प्रगट होता है कि संबोधन के अतिरिक्त यहां और कुछ नहीं बन सकता। अतः यह वार्तालाप करने वालों के स्पष्ट नाम हैं .... अब यदि इसके पश्चात् कोई भी यम और यमी के सगे संबन्धी होने के संबन्ध में सन्देह करे और झगड़ने लगे तो उसके मूर्ख होने में क्या सन्देह है ?

आर्य—हमने बहुत ही खुले तर्कों से और यथार्थ प्रमाणों से सिद्ध कर दिया है कि यम नियम करने वाले पुरुष और यमी नियम करने वाली स्त्री अर्थों में हैं और दिन रात अथवा दिन और उषा का इन समस्त मंत्रों में अलंकार है—कोई कथानक नहीं। यहां परमात्मा ने प्राकृतिक दृश्यों से उपदेश दिया है जैसा कि बाईबल में भी लोकोक्ति के ढंग से लिखा है कि :—

आकाश प्रसन्न हो और भूमि वादित्र बजावे। जातियों के मध्य कहो कि ईश्वर राज्य करता है। समुद्र उस समेत जो उसमें भरा है— कोलाहल करे। मैदान भी उन सब समेत जो उसमें है अत्यन्त प्रसन्न हो उठे तब वन के सम्पूर्ण वृक्ष खुदावन्द के सम्मुख गाएंगे।

(इतिहास १-१६।३१-३४ ज़बूर १९।१-५)

ऐ फाटको ! अपने सिर ऊचे करो और ऐ नित्य रहने वाले द्वार ! ऊंचे हो। इसी प्रकार ज़बूर २४ ७-१० ९८.४ व ११४।३-८ व १४८।३-१० और यसाया ४४।२३ व यरमियाह २।१२ में देखो। बहुत सी जड़ वस्तुएं सम्बंधित की गई हैं जो समझाने की एक पद्धति है। जिसका अभिप्राय केवल शिक्षा अथवा अच्छे कार्य की प्रेरणा वा बुराई से घृणा दिलाना है।

यही अवस्था यम और यमो के संबंध में अथवा दिन और रात के विषय में है और यही अभिप्राय देवासुर संग्राम अथवा सूर्य और मेघ के युद्ध से है।

अतः आपके वचनानुसार हमें कहना पड़ा कि यदि इसके पश्चात् भी कोई इस अलंकार और वेदोक्ति को न समझकर यम और यमी भाई बहिन अथवा वास्तविक संबधी समझे अथवा वेद में वास्तव में इतिहास समझे और आर्यों से झगड़ने लगे तो उसके बहुत बड़े मूर्ख होने में क्या सन्देह है ? कदापि नहीं।

लाहौरी पैग़म्बर श्री शिवनारायण की लिखित भूलें और उनकी विद्वत्ता का नमूना।

१०—११—बारहवें मंत्र में यम उससे सहवास करने का संबंध उत्पन्न करने से इन्कार करता है ! क्योंकि जो व्यक्ति सहवास की इच्छा से (स्वसारम्) अपनी बहन के पास जाता है। उसे (नेच्छत्) पापी कहते हैं और इस पद के अन्त में वह कहता है कि हे सुन्दरि ! तेरा भाई (न ते भ्राता समा यच्छयेतः) तेरा भाई इस काम के योग्य नहीं।

आर्य— यह सर्वथा अशुद्ध है और आपकी विद्वत्ता का साक्षी। क्योंकि इस मंत्र में न तो नेच्छत् शब्द है और न नेच्छत् का अर्थ पापी है। ऐसी संस्कृत वेद में विद्यमान भी नहीं है। इस मंत्र में (पापम्) शब्द पृथक् विद्यमान है जिसका अनुवाद पापी है। हम आपके संस्कृत ज्ञान का अभ्यास समझ गए। आपने शब्द निगच्छात् को नेच्छत् समझा जिसका अर्थ संयोग करना है और अपने विचार से उस का अर्थ पापी बना लिया। शेष संस्कृत का खंड भी आपने सर्वथा अशुद्ध लिखा वह वास्तव में इस प्रकार है:—

(न ते भ्राता सुभगे वष्ट्येतत्) इसका अनुवाद भी आपने सर्वथा अशुद्ध किया।

क्या इसी योग्यता पर सबसे बड़े विद्वान् महापुरुष स्वामी दयानन्द जी के समान होने की इच्छा करते हैं और इसी योग्यता पर वेद मंत्रों का अर्थ करने लगे थे ?

पृ० ७ पंक्ति १३ में आपने शतपथ को शतपत लिखा। क्यों न हो आप ईश्वर के नाम पर संस्कृत की योग्यता की भान्ति अग्निहोत्री भी हैं।

वास्तविक बात यह है कि आप इच्छया अनिच्छया आर्य समाज के विरोधी के मित्र और आर्य

समाज के मित्र के कट्टर शत्रु हैं ! पादरी जी ने अपने ट्रैक्ट का नाम नियोग खंडन रखा और आपने वह ऊपर अथवा अधिक अपनी नकल का नाम पंडित दयानन्द का झूठ और उन की पापमयी शिक्षा रखा और अनुवाद में भी जहां सामग्री न्यून थी वहां और नमक मिरच अपनी भोजनशाला से छिड़क दिया। सअ़दी ने सत्य कहा है कि:—

त्वानम आंकि न्याज़ारम अन्दरूने कसे।
हसूदरा चेह्कुनम कि ओज़िख़ुद बरंजदरस्त ×

१०——आगामी को एक योनि के सम्बन्धी अजामि परस्पर वह बरताव किया करेंगे कि जो उन्हें इस प्रकार के सम्बन्ध के योग्य नहीं है। (मंत्र १०)

आर्य——इस मंत्र में ऐसा कदापि नहीं है। आप को संस्कृत न जानने के कारण और पादरी महोदय को सायणाचार्य के अनुवाद से धोखा हुआ। वहां यह शब्द स्पष्ट पड़े हुए हैं कि उप बर्बृहि वृषभाय बाहुमन्यमिच्छस्व सुभगे पति मत्।

और ऐसा ही इस का अनुवाद निरुक्तकार ने भी किया है जो हम ने मंत्रों के अनुवाद में लिख दिया है। अतः इस मंत्र में नियोग अथवा पुनर्विवाह का विषय है जो आपत्काल का धर्म है। आप के व्यर्थ विचार का इस से कुछ सम्बन्ध नहीं।

अब हम सायणाचार्य की सूर्यवत् प्रगट भूलों को प्रकाशित करते हैं।

यद्यपि स्वयं योरुपियन विद्वानों का विचार है कि सायण ने कहीं कहीं भूल की है। जैसा कि "तकज़ीबे बुराही ने अहमिदया" पृष्ठ १६८ से १७५ तक व्याख्या सहित लिखी हैं। तो भी इस सूक्त में विशेष २ मोटी भूलें उन से घटित हुई हैं।

मंत्र १—इस के आरम्भ में सायणाचार्य ने एक मन घड़न्त यम यमी सम्बन्धी कथा लिखी जो उस का जान बूझ कर भूल भुलावा देना है। जो पुराणों की भद्दी कथाओं का परिणाम है। अन्यथा मंत्र और सूक्त से उस का कोई सम्बन्ध नहीं।

मंत्र २—में उस ने अपनी मन घड़न्त कथा को सिद्ध करने के लिये सुलक्ष्मा शब्द का अर्थ सर्वथा अशुद्ध किया है कि "समान योनित्व लक्षणा" किन्तु इसका यह अर्थ नहीं है। उस का अर्थ समान लक्षण अथवा अच्छे लक्षण वाली है। और विषुरूपा का अर्थ भगिनी किया है जब कि इस का अर्थ सुन्दर है।

मंत्र ३—में जब सायण से कुछ अर्थ नहीं बन सका तो केवल एक कल्पित झूठी कथा ब्रह्मा की बेटी से व्याभिचार करने के सम्बन्ध में प्रमाण रहित घड़ कर धर दी। जिस का वेद मंत्र से कोई और किसी प्रकार का सम्बन्ध नहीं।

मंत्र ४—में भी सायण ने अकारण बिना प्रमाण के प्रजापति की कथा जोड़ दी जिस से वह किसी प्रकार बुद्धि विरुद्ध अर्थ कर सके। और यम यमी की कथा की आधार शिला बनाई। और ऐसा ही व्यर्थ यत्न मंत्र ५ में भी किया।

× चाहता हूं कि किसी के मन को दुःख न दूं। किन्तु द्वेषी का क्या करूं कि वह अपने आप ही ईर्षा से दुःखी हो रहा है। (अनुवादक)

मंत्र ६—में दीच्या का अर्थ नरक किया है जो सर्वथा अशुद्ध है । और कहीं भी उस का प्रमाण नहीं मिलता। किन्तु उस को तो अपना कथानक बनाने से प्रयोजन था न कि वेदार्थ से। दीच्या का अर्थ तरंग है। (देखो उणादि कोष ४-७२) और इसी प्रकार (अमर कोश कांड १ वर्ग १० श्लोक ५)

हमें बड़ा शोक है कि यास्क मुनि ने तो अपने निरुक्त में इस फ़लासफ़ी के तीन मंत्र १०, १३,१४ की व्याख्या कर दी। जैसा कि हम अनुवाद में भी लिख चुके हैं। क्यों कि वह अर्थ सायणाचार्य के वाम मार्ग वाले स्वभाव के बहुत विरुद्ध थ। अतः उन का सर्वथा उल्लेख नहीं किया और न उन का प्रमाण दिया। जिस से स्पष्ट प्रगट है कि वह वेद मुकद्दस का मन घड़न्त, कपोल कल्पित अर्थ १८ पुराणों को कथाओं के आधार पर करना चाहते थे। अन्यथा स्वामी जी महाराज की भान्ति ऐसे आवश्यक अवसरों पर निरुक्त का अवश्य प्रमाण प्रस्तुत करते। किन्तु उन्होंने नहीं किया । अतः उन की इंच्छा, उन का न्याय और सत्यता सब लोग अच्छी प्रकार जान सकते हैं।

पादरी महोदय की ज्ञान संबंधी भूलें

१-२ पादरी—वह यह अयोग्य शिक्षा देता है कि निस्सन्तान पुरुष की स्त्री अपने पति के जीते जी दूसरे विवाहित पुरुष के संग भोग करे।

आर्य—यह आप की बड़ी भारी भूल है। स्वामी जी ने ऐसा नहीं लिखा। किन्तु वह तो कहते हैं कि जिस की स्त्री वा पुरुष मर जाता है उन्हीं का नियोग होता है—कुमार कुमारी का नहीं।

(पृ० १४४)

अर्थात् नियोग विधवा स्त्री और रंडवे पुरुष का हो सकता है। स्त्री युक्त पुरुष और पुरुष युक्त स्त्री का नहीं। और वह विवाह की भान्ति नियमपूर्वक होता है। बाईबल की आज्ञाओं के अनुसार केवल सहवास नहीं ।

३—पादरी—यमज भगिनी यमी से संभाषण करता है। किन्तु दया न दे समझ बूझ कर मिथ्या बोलता और पाप का भागी बनता है।

आर्य—यह शब्द आप ने अपने पृष्ठ ३ में तीन बार और सम्पूर्ण में चार बार लिखा है। परन्तु यमज शब्द का अर्थ भगिनी नहीं है। किन्तु सन्तान के हैं। आप की ज्ञान योग्यता उसी से प्रगट है। यमज का अर्थ इस प्रकार होता है :—

यमाज्जायत इति यमजः

इस प्रकार जलज अर्थात् जल से उत्पन्न होने वाला कमल है। और वेद के मंत्रों में यह शब्द नहीं है। शोक ! इसी योग्यता पर स्वामी जो पर आक्षप ? अब बताईये—मिथ्या भाषण का पाप किस को है ? और उस का भागी कौन बना ? स्वामी जी अथवा आप ?

४—पादरी—निरुक्त १—१२—१३ में १४ पद यह वर्णन करता है कि—

यमी यमं चकमे तामु प्रत्याचचक्ष। अर्थात् यमी ने यम के साथ भोग करना चाहा— उस ने स्वीकार किया। यह साक्षात् है। इस में निर्बल पति का कहां वर्णन है ?

आर्य—इस से भी आप की योग्यता प्रगट है। किसो लोभी पोप जी से ऐसा अर्थ करा लिया होगा। किन्तु इस का यह अर्थ कदापि नहीं है। सुनिये, इस का वास्तविक अर्थ यह है । रात्रि अथवा

उषा ने दिन की इच्छा की, दिन ने निषेध किया। किन्तु यहां निर्बल तो नहीं, दुर्बल शब्द विद्यमान है। देखो मंत्र १३—किन्तु हां, वह विषय मंत्र १० तक समाप्त हो गया। इन मंत्रों में अन्य विषय है। जिस से कोई किसी का प्रश्न उपस्थित नहीं हो सकता। हां, आप की योग्यता अच्छी प्रगट हो रही है।

५—पादरी—दूसरे पद में यम यमी को अपनी सुलक्ष्मा कहता है अर्थात् कुटुम्बन।

आर्य—१ से ५ तक यम यमी का शब्द नहीं है, और न सुलक्ष्मा का अर्थ सम्बन्धी अथवा बहिन है। आप ने सायण के भाष्य को भी नहीं समझा। यह आप की ज्ञान सम्बन्धी भूल है।

६—पादरी—चतुर्थ पद में यूं लिखा है गंधर्व और ईश्वर उन से हम दोनों की उत्पत्ति हुई है। इस कारण हम परम जायि अर्थात् सगोत्र हैं।

आर्य—इस का ऐसा अर्थ नहीं है। वास्तविक अर्थ हम ने लिख दिया है। और इस के मिथ्या होने की एक युक्ति यह भी है कि यदि यह अर्थ हो तो वह वैवस्वत की सन्तान न रही। किन्तु गन्धर्व की हो गई। जो सर्वथा मिथ्या है। अवस्था यह है कि यह अर्थ आप के और सायण दोनों के विरुद्ध ही नहीं किन्तु अज्ञानता का प्रमाण है। वेद के इस मंत्र में ऐसा शब्द नहीं है।

७—पादरी—दसवें पद में यम उत्तर देता है कि "यत्र जामयः" अर्थात् अभी से सगोत्र लोग वह कर्म करेंगे जो गोत्र धर्म के अयोग्य है।

आर्य—पाठक वृन्द ! हम ने आज तक यत्र का अर्थ "अभी से" न कहीं सुना और न किसी पुस्तक में पढ़ा। किन्तु इस का अर्थ स्पष्ट है— जहां, जिस स्थान पर और जब। अतः यह अर्थ हुआ कि जब और जहाँ कुल वधु बुरे कार्यों की ओर झुकने लगें तब नियोग करना चाहिए। अतः इस से पादरी जी की योग्यता प्रगट हो गई। वह इच्छयानिच्छया शहीदों में नाम गिनाने और पांचों सवारों में सम्मिलित होने के इच्छुक हैं। अन्यथा वास्तविक बात यह है कि उन के आक्षेप सत्य की कसौटी से सर्वथा गिरे हुए हैं। वह पक्षपात के कारण सत्य का विरोध करते हैं सच्चाई से नहीं।

८-पादरी—दयानन्द का योग्य शिष्य गुरुदत्त अपने स्वामीजी के विषय में कहता है कि वह अपने समय का एक ही पंडित है। अन्यथा मैं इसको भी मानने को उद्यत हूं—अर्थात् इस कारण से कि दयानन्द ने वेद का मिथ्या अनुवाद करके इस पर ऐसी अत्यंत अनुचित शिक्षा का दोष लगाया है। वही दयानन्द अपने समय में वेद का सब से महान् शत्रु ठहरा है।

आर्य—पाठक वृन्द ! स्वर्गीय विद्वान् पं० गुरुदत्त एम० ए० जिन की संस्कृत की योग्यता और वेद ज्ञान की योग्यता को विरोधी और अनुयायी प्रशंसनीय मानते हैं। जिन की वैदिक मैगज़ीन और उपनिषद् भाष्य उन के सत्यान्वेषण और महत्ता के साक्षी हैं। वह तो स्वामी जी को अपने समय का एक ही वैदिक पंडित मानते हैं और इसी प्रकार प्रसिद्ध संस्कृतज्ञ पंडित ठाकुर दत्त आचार्य और पं० ज्वाला प्रसाद जी शास्त्री तथा पं० आर्य मुनि जी आदि सैंकड़ों पंडित और प्रसिद्ध विद्वान् तो स्वामी जी को अद्वितीय विद्वान् और वेद धर्म का पक्ष पोषक मानते हैं। किन्तु पादरी टी० विलियम्स महोदय जिन को साधारण पढ़ने के अतिरिक्त संस्कृत की कुछ भी योग्यता नहीं। वह स्वामी जी को वेदों का महा शत्रु ठहराते हैं। क्यों न हो। पादरी महोदयों को वास्तव में स्वामी जी के महान् अस्तित्व और व्यक्तित्व से बहुत हानि पहुंची। उन के चेले मुंडने न्यून हो गये। सहस्रों मनुष्य ईस्वी मत से हाथ धो प्रायश्चित्त कर आर्य धर्म में सम्मिलित हो गए। आर्य समाज के छोटे २ सुयोग्य विद्यार्थी पादरियों को शास्त्रार्थ

के समय मेलों, मार्गों, बाज़ारों में सर्वथा निरुत्तर कर देते हैं। उन को प्रत्येक प्रकार से और सब ओर से निराशा के अतिरिक्त और कुछ नहीं सूझता। अब मजबूरी है। आश्चर्यचकित और परेशान हो कर बजाए इस के कि ईस्वी मत को सिद्ध करें, वा सिद्ध न हो सकने वाले तसलीस के मन्तव्य की गांठ खोलें, वा बाईबल को इलहामी सिद्ध करें, वा उस की शिक्षा के गुण बतावें, वा उस के नबियों के दुराचार का उत्तर दें--इस के विरुद्ध लोगों को संशययुक्त करके भरमाना चाहते हैं कि स्वामी जी वेद के शत्रु प्रत्युत महा शत्रु थे। ऐसी समझ की बलहारी। स्वामी जी वेद के शत्रु किन्तु महा शत्रु और पादरी महोदय वेद के मित्र और अनुयाई—भगवान् तुझे इस का बदला दे।

यदि स्वामी जी शत्रु हैं—यदि दयानन्द वेदों के शत्रु हैं तो ऐसा शत्रु, महा शत्रु धन्य, सहस्रों बार धन्य हो, जिस ने हमें पादरियों के जाल से छुड़ाया। जिस ने पोपों के फंदे से बचाया। जिस ने वाममार्ग रूपी अधर्मान्धकार को मिटाया। जिस ने मूर्ति पूजा, जड़ पूजा, तस्लीस पूजा और क़बर पूजा के दोषों को समझाया और अविद्यान्धार में डूबों को सत्य मार्ग पर लगाया। सत्य और अध्यात्म के स्रोत पर पहुंचाया। नहीं, नहीं, ईश्वरीय वेदामृत का पान कराया। आगामी के लिए सुदृढ़ सत्य मार्ग बताया। वह तो हमारा शत्रु और पादरी महोदय मित्र। भाईयो! बाड़ खेती को खाती है किन्तु बकरी और गधे खेती के रखवाले हैं। इस बुद्धि के साथ गर्व करता हूं!!!

पादरी महोदयो! हम आप के छल कपट और सब चालों को याथातथ्य समझ गये हैं। अब हम आप के जाल में नहीं फंस सकते हैं। क्यों कि

शुदआं मुर्ग कि ओ बैज़ा ज़र्रीनंहाद।
ज़माना बसाते नौ आईं नहाद॥+

अब आप उस लोमड़ी की भान्ति जो न पहुंच सकने के कारण अंगूरों को खट्टा कह कर हथा मलती है। शोक करते रहिये। किसी के कथनानुसार

कि मुर्ग अज़ क़फ्स रफ्ता।
नत्वां गिरफ्त॥×

अब अन्त में हम बाईबल की दृष्टि से बताते हैं कि नियोग मूसाईयों और ईसाईयों के यहाँ भी उचित माना गया है।

भाई के लिये सन्तान जारी करने की शरीयत।

नियोगाज्ञा--यदि कई भाई एक स्थान पर रहते हों और एक उन से निस्सन्तान मर जाए तो उस मृत की पत्नी का विवाह किसी अपरिचित से न किया जाए। किन्तु उस के पति का भाई उस से सहवास करे और उसे अपनी पत्नी बना ले तथा भावज का अधिकार प्रदान करे। और यूं होगा कि

+जो पक्षी सोने का अंडा देता था वह हवा हो गया। अब समय ने विधान की नूतन चटाई बिछा दी है। (अनुवादक)

×पिंजरे से निकला हुआ पक्षी अब पकड़ा नहीं जा सकता। (अनुवादक)

उस का पलोठा (पहिला लड़का) जो उस से उत्पन्न हो तो वह उस के मृत पति के नाम प्रसिद्ध होगा जिस से उस का नाम इसराईल में से मिट न जाए। (तौरेत इस्तिस्ना २५।५-६)

नियोग न करने का दंड

और यदि वह अपने भाई को पत्नी न लेना चाहे तो उस मृत भाई की पत्नी द्वार (पुलिस स्टेशन×) पर बुजुर्गों के पास जाए और कहे कि मेरे पति के भाई ने इसराईल में अपने भाई का नाम स्थिर रखने से इनकार किया और भावज का अधिकार प्रदान करना स्वीकार नहीं किया। तब उस के पति के बड़े लोग उस व्यक्ति को बुलावें और उस से वार्तालाप करें—सो यदि वह इस बात पर स्थिर रहे और कहे कि मैं नहीं चाहता कि उसे लूं। तो उस के भाई की पत्नी बड़ों के सम्मुख उस के निकट आवे और उस के पांव से जूती निकाले और उस के मुख पर थूक दे और उत्तर दे और कहे कि उस व्यक्ति के साथ जो अपने भाई का घर न बनावे, यही किया जाएगा। और इसराईल में उस का नाम यह रखा जावे कि यह उस व्यक्ति का घर है जिस का जूता निकाला गया। (इस्तिस्ना २५।७-११)

और पुनः रूत की पुस्तक में रूत नामी स्त्री की कथा पढ़ो और राखिल तथा लियाह आदि स्त्रियों के वृत्तान्त का अध्ययन करो। जिन्हों ने तौरेत की आज्ञानुसार नियोग किया। इसी रूत के उदर से बूअज़ के वीर्य से ऊबिया नाम का लड़का उत्पन्न हुआ। जिस का पोता दाऊद नबी था। और उस के बाईबल के कथन के अनुसार मसीह उत्पन्न हुआ। (देखो रूत की पुस्तक ४।१-२२)

पादरी टी० जी० स्काट महोदय ने अपने मती भाष्य में इन्जीलों की वंशावली मिलाते हुए स्पष्ट स्वीकार किया है कि मसीह के बहुत से पूर्वज केवल शरई पुत्र अर्थात् नियोग से जन्मे थे। हम ने कृश्चन मत दर्पण प्रथम संस्करण पृष्ठ ५३ पर विस्तार से लिखा है। पादरी जी ध्यान से पढ़े।

—०—

× यहाँ पंचायत घर का अभिप्राय प्रतीत होता है। (अनुवादक)

सत्यसिद्धांत
और
आर्य समाज की शिक्षा
अर्थात्
पक्षपाती पादरियों की नासमझी का यथार्थ निदान

प्रथम व्याखयान का उत्तर

बुत करे आरज़ू√ खुदाई× की।
शान√ है तेरी किबरियाई की॥

हम पंडित महोदय+ और पत्रिका का नाम टाईटल पृष्ठ पर देख कर समझते थे कि सम्भवतः पांडित्य के साथ आर्य समाज के नियमों और शिक्षा पर बहस की गई होगी और प्रत्येक अवसर पर बुद्धिमत्ता प्रदर्शित की गई होगी। किन्तु शोक कि :—

खुद ग़लत बूद आंचे मा पिंदाशतेम।

(स्वयं मिथ्या था जो कुछ हम समझते थे)

पंडित महोदय तो खडगा अर्थात् तलवार ही निकले—पांडित्य आप के सम्मुख किस प्रकार ठहरता? हां, आपत्ति आती तो आप को ओर मुख करता? किन्तु आप ईसाई और सच्चे ईसाई हैं। तो क्या प्रिय पंडित जी (नाम के) आप को इन महत्वपूर्ण सिद्धांतों के सम्बन्ध में लेखनी उठाने से पूर्व इंजील को हाथ में ले कर यह तो सोचना चाहिये था कि आप के खुदावन्द यसूअमसीह ने यूं फ़रमाया है कि "दोष न लगाओ जिस से तुम पर दोष न लगाया जाए। क्यों कि जिस प्रकार तुम दोष लगाते हो उसी प्रकार तुम पर भी दोष लगाया जाएगा और जिस माप से तुम नापते हो उसी माप से तुम्हारे लिये नापा जाएगा। और उस तिनके को जो तेरे भाई की आंख में है—तू क्यों देखता है? जब कि उस लट्ठे को जो तेरी आंख में है तू नहीं देखता और पुनः तू अपने भाई से क्यों कर कह सकता है कि रजा—इस तिनके की जो तेरी आंख में है निकालू। और देख, तेरी आंख में एक लट्ठा है। हे छली कपटी!

× इच्छा + ईश्वरत्व √ गौरव × महत्ता—बड़ापन।

+ क्योंकि आर्यसमाज के सिद्धान्त और शिक्षा नं० १ के सम्पादित आक्षेपों में ईसाई प्रतिवादी का नाम पंडित खड़ग सिंह लिखा है। अतः यह उनकी ओर संकेत है।

पहिले अपने लट्ठे को अपनी ही आंख से बाहिर कर तब अपने भाई की आंख से तिनका निकाल सकेगा।"

(देखो मती की इंजील ७।१-५)

क्यों कि वही आक्षेप जो आप ने लेखबद्ध किये हैं। आप ही के ओल्ड टैस्टामेंट और न्यू टैस्टामेंट पर लगते हैं और जो दोष आप वैदिक मत में दिखलाना चाहते हैं। वही किन्तु इस से भी बढ़ कर ईस्वी शिक्षा में दृष्टिगत होते हैं। और जब आप हज़रत ईसामसीह की आज्ञाओं की उपेक्षा करके केवल पक्षपात के जोश में उस पुस्तक पर जो वास्तव में आपेक्षों से परे है और जिस के सूक्ष्म सिद्धांत आप के लेखों को देख कर क्षमा करना ? हम भी योग्यता के गुण का अनुमान करके कह सकते हैं कि आप की बुद्धि और पहुंच से बाहिर हैं। अकारण आक्षेप जड़ने पर उद्यत हो गये तो हम आप को :—

"बदनाम अगर हूंगे तो क्या नाम न होगा।"

इस विचार वाले लोगों की पंक्ति में न समझे तो फ़रमाईये, सच्चा मसीही कैसे समझें।

क़दरे जौहर शाह बदानद।
या बदानद जौहरी ॥×

आप इस योग्यता के साथ वेद मुकद्दस पर मुख न खोलिये। अभी तो आप को इस गली की वायु भी नहीं लगी प्रतीत होती। वेद की शिक्षा और समाजों के प्रचार पर मुख आना तो बड़ी बात है। अभी आप यह भी नहीं जानते हैं कि लेखबद्धता क्या वस्तु है और व्याख्यान किसका नाम और व्याख्यान दाता को अपने मन के विचार किस प्रकार से प्रगट करने उचित हैं ? जिन युक्तियों से आप परिणाम निकालते हैं। सत्य यह है कि उन पर युक्ति का शब्द कदापि लागू नहीं होता। हां,

बर अक्स निहन्द वाम जंगी काफ़ूर।+

आप इन्हें युक्तियां नहीं किन्तु सुदृढ़ युक्तियां समझिये। जहां तक हम ने इस पम्फ़लेट के पृष्ठों को उलटा पलटा—वहां तक यही बात प्रगट हुई कि हमारे (नाम के) पं० जी ने केवल काल्पिनिक बातों से उन पक्के तर्कों का खंडन किया है। जिन्हें वह क्या बड़े बड़े योग्य विद्वान् भी अविश्वास की दृष्टि से नहीं देख सकते और जिन का विश्वास हमारे वर्णन की अपेक्षा नहीं रखता।

मिस्टर पंडित जी ! लीजिए, हम आप के लेख की भूल आप ही के वर्णन अथवा उन पुस्तिकों के प्रमाण से प्रगट करते हैं, जिन्हें आप या आप के भाई प्रामाणिक समझते हैं। और इस के साथ ही यह भी दिखा देते हैं कि आप के यह शब्द कि उन में से बहुत से जो अपने आप को आर्य नाम से कहलाते हैं—अपने इस मत से जो उन्होंने स्वीकार किया है— बहुत ही अपरिचित हैं। जो कुछ दूसरे कहते हैं, उस पर वह निर्णय कर बैठे हैं। और वह दोनों अपने लिए इस विषय में अन्वेषण नहीं करते या कर ही नहीं सकते। इन का वेदों की नित्यता और पवित्रता के विषय में और बुद्धिमत्ता तथा फ़लसफ़ा के इस कोश के सम्बन्ध में जो इस में सम्मिलित है—एक मिथ्या विचार है।"

यह शब्द परिवर्तित करके (उदाहरणतः वेदों के स्थान पर बाईबल शब्द पढ़ें और आर्य के स्थान पर ईसाई रखिये) सर्वथा आप पर लागू होते हैं।

×हीरे का महत्व बादशाह जानता है अथवा हीरों का व्यापारी जौहरी जानता है। (अनुवादक)

+हब्शी काले का नाम उसके विरुद्ध काफ़ूर रखते हैं। (अनुवादक)

पहिले अंक के पृष्ठ ५ के अन्तिम वाक्य में जो अन्तिम पंक्ति से आरम्भ हो कर पृष्ठ ६ की पहिली तीन पंक्तियों में समाप्त हुआ है। आप यूं फ़रमाते हैं कि "पूर्व इस के कि हम वेदों की नित्यता के सम्बन्ध में विचार करें—हम उन पुस्तिकों की सूची × प्रस्तुत करेंगे जिन को पंडित दयानन्द ने सत्य माना है और जिस पर उन्हों ने (स्वामी जी ने) आर्य धर्म की आधारशिला रखी है। इस लिए हमारी समालोचना' का आधार भी इन्हीं पुस्तकों पर होगा और जहां कहीं आवश्यकता होगी, उन्हीं पुस्तकों से प्रमाण प्रस्तुत करेंगे।"

इस लेख से हमें यह ज्ञात होता था कि आप वेदों के विरुद्ध अपने इस दावा के अनुसार उन्हीं पुस्तकों से जिनकी सूची आपने उपरिलिखित वाक्य में लिखी है—कुछ प्रमाण लिख कर परिणाम निकालेंगे। किन्तु शोक जब पृष्ठ उलटाए तो पृ० ८ की अन्तिम पंक्ति के अन्तिम भाग से पृ० ९ की पहिली दो पंक्तियों में यह शब्द दिखाई पड़े कि:—

उनके (आर्यों के कथानुसार वेद की नित्यता के प्रमाण का) खंडन करने में हम प्रसिद्ध नामीग्रामी पंडितों का प्रमाण देंगे जो कि दो सहस्र वर्षों से पूर्व जीवित थे। जिस से आर्य लोग यह विचार न करें कि हमने इन युक्तियों को स्वयं घड़ लिया है।"

वाह श्रीमान पंडित साहब वाह? या बाईं शोरा शोरी ✓ व या बाईं बेनमकी। या तो गर्व था कि हमारी बहस का आधार ही उन्हीं (अर्थात् श्री स्वामी दयानन्द जी सरस्वती महाराज की प्रामाणिक पुस्तकों पर होगी और जहां पर आवश्यकता होगी— उन्हीं पुस्तकों के प्रमाण देंगे। या ऐसे गिरे कि परिणामतः उन्हीं के प्रसिद्ध और नामी पंडितों के आंचल में मुख छिपाना पड़ा। क्यों पंडित महोदय ? कुछ खुदा के लिए सत्य कहना कि जब आप अपने पहिले दावा के अनुसार प्रामाणिक ग्रन्थों और अपनी लिखी सूची से खंडन सामग्री एकत्र न कर सके तो आपका अन्यथा वर्णन पाठकों की दृष्टि में कुछ प्रष्तिठा प्राप्त कर सकता है ? कदापि नहीं किन्तु आप क्या करें। प्रसिद्ध है कि दरूगगोरा हाफ़ज़ा न बाशद× जब आप पृष्ठ ८ पर पहुंचे होंगे तो पृष्ठ ६ का विषय भी स्मरण न रहा होगा। अच्छा, अब देखिए— आप कौन से पंडितों का प्रमाण उपस्थित करते हैं ? जो आपक अनुसार दो सहस्र वर्ष से पूर्व हो चुके हैं। केवल एक अर्थात् बुद्ध का।

×इस स्थान पर भी पं० जी ने भूल की है और वह यह है कि उन्हें दस उपनिषदों के नाम भी नहीं आते। कठ और कठोली उपनिषदें नहीं हैं, एक ही है। और श्वेताश्वतर इन दस उपनिषदों में नहीं है। वह दस उपनिषदें यह हैं—ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुंडक, मांडूक्य, तैत्तरीय, ऐतरेय, बृहदारण्यक, छान्दोग्य। अतः इससे यह तो स्पष्ट प्रगट है कि पं० जी केवल नाम के पंडित हैं। अन्यथा उनको यह भी ज्ञात नहीं कि कठोपनिषद् कौन सी है और कठोली उपनिषत् कौन ? समस्त पाठक जानते हैं कि उपनिषत् का नाम कठ है और काँड की भान्ति उसमें वल्ली का प्रयोग होता है। जिसके अर्थ अध्यायादि के हैं। अतः अधिक प्रयोग से कठ वल्ली हो गया। वास्तव में यह दो उपनिषत् नहीं। एक ही है। अतः यह भूल पादरी जी की परिचिति और ज्ञान दोनों के सम्बन्ध में है। जैसे कोई कहे कि तौरात के पुस्तक में लिखा है और खुरूज में भी। जब कि दोनों एक ही का नाम हैं। देखो सत्यार्थप्रकाश पृ० ६९ भूमिका पृ० २७५।

✓या तो ऐसा कोलाहल और या ऐसी स्वादरहित बात। (अनुवादक)

×असत्यवादी की स्मृति नहीं होती। (अनुवादक)

चाहे आपने पृष्ठ ११ की पंक्ति ६ में एक कृतक तीर्थ नामी ब्राह्मण का नाम राजा शिव प्रसाद के इतिहास तिमिर नाशक के आधार पर लिख दिया किन्तु यह कथन उक्त पुस्तक के विरुद्ध है। क्योंकि राजा जी उसमें यह शब्द स्पष्ट रूप से लिखते हैं। पुनः ५६ पीढ़ी रामचंद्र से श्वेताम्बर तक अयोध्या के सिंहासन पर बैठे। श्वेताम्बर अयोध्या का पिछला राजा था और टाड महोदय के विनय कृतक तीर्थ के लिखने के अनुसार विक्रमादित्य के काल में विद्यमान था। (देखो इतिहास तिमिर नाशक भाग ३ नागरी संस्करण मैडीकल हाल वाराणसी १ जनवरी १८७७ ईस्वी के पृष्ठ २२ पंक्ति २२, ३३)

इसमें बिचारे कृतक तीर्थ का कोई वर्णन नहीं और न यह लिखा है कि टाड महोदय की यह सम्मति किन युक्तियों के आधार पर है और यदि टाड महोदय की यह सम्मति हुई तो आश्चर्य ही क्या है? क्योंकि यह बिचारा भी तो ईसाई गिरोह का सदस्य था। जो मसीह से केवल ४००४ वर्ष पूर्व आदम का अस्तित्व संसार में मानते हैं और जिनके पंडितों में से एक ने अकारण राजा जी की पुस्तक का नाम लेकर और (सावधानता से) पृष्ठ आदि का प्रमाण छिपाकर प्रत्यक्षतः कृतक तीर्थ का नाम इसलिए लिख देने का साहस किया कि कुछ वर्णन प्रभावशाली हो जाए। यदि और कोई नहीं तो कुछ न जानने वाले ही (क्योंकि परिचित तो वास्तविकता जानते ही हैं) धोखा खाकर इस कथन को यथार्थ समझ लें वल्लाह (खुदा की क़सम) चाल तो अच्छी चली। संभवतः ईसाई पंडितों का ऐसा ही स्वभाव होता है।

इस सबके होने पर भी यदि हम मानलें कि यह ब्राह्मण जिसने अपने लेख में (केवल आप के कथनानुसार क्योंकि उपरिलिखित प्रमाण तो कुछ और ही बताता है) रामचंद्र जी की पीढ़ियों का वृत्तान्त श्वेताम्बर तक (जो राजा विक्रमादित्य के काल में विद्यमान था) लिखा है। कोई बड़ा भारतीय दार्शनिक हुआ है। और उसने अपने कथन की पुष्टि में कुछ पुस्तकों पर (न कि प्राचीन इतिहास पर जो कि एक समय से अभाव युक्त प्रभाव रखता है– हां, आप पाठकों की दृष्टियों में प्रभाव उत्पन्न करने हेतु उनका नाम कुछ ही लिख मारें) युक्ति पात भी किया है तो भी जब तक प्रामाणिक पुस्तकों के आधार पर ठीक सिद्ध न करलें उस के लेख को विश्वास के साथ तर्क संगत नहीं कह सकते। क्योंकि आप पृष्ठ ९ की पंक्ति १,२, में प्रतिज्ञा कर चुके हैं कि–

"हम नामी प्रसिद्ध पंडितों का प्रमाण देंगे जो दो सहस्र वर्ष से अधिक बीते हैं कि जीवित थे।"

किन्तु यह बात आप की संभावना के घेरे से बाहिर है क्या अर्थ? कि कृतक तीर्थ अधिक से अधिक विक्रमादित्य का समकालीन (जबकि यह व्यक्ति बहुत पीछे हुआ प्रतीत होता है) सिद्ध हो सकता है। जिसे स्वयं इस समय (सम्वत् १९४१) तक भी दो सहस्र वर्ष से न्यून ही व्यतीत हुए हैं। हां, आप व्यास और पतंजलि के लेखों से भी (जिनका वास्तविक विवरण आगे निवेदन किया गया है) एक खेंचातानी से युक्ति उपस्थित करते है। किन्तु वास्तव में आपके भ्रम मात्र की पैदावर है और बस। कारण यह है कि आपके पृष्ठ १५ पंक्ति ११ के लिखे शब्द कि "व्यास जी बुद्ध जी के और राजा चंद्रगुप्त के काल के पश्चात् हुए हैं उसी इतिहास तिमिर नाशक के विरुद्ध हैं। जिनको आप पूर्व ही स्वीकार कर चुके है! ईश्वर के लिए सत्य को खोज का विचार रख कर राजा शिव प्रसाद की इसी कृति का भाग तीन नागरी प्रकाशित एक जनवरी १८७२ ईस्वी के पृष्ठ २७ की सब से अन्तिम टिप्पणी महाभारत शब्द पर दी गई है—अध्ययन और दृष्टिगत कीजिए।

इसकी भाषा के शब्द यह हैं कि :—

"महाभारत के युद्ध के समय मगध का राजा सहदेव था। और उससे पैंतीसवां राजा अजात शत्रु हुआ जिसके समय में शाक्य मुनि गौतम बुद्ध ने ८३३ ईस्वी वर्ष से पूर्व निर्वाण पाया। अब यदि इन पैंतीसों राजाओं के राज्य का प्रत्येक राजा २६ वर्ष का भी लें (संभवतः अटकल और स्वयं की कल्पना से) तो महाभारत का काल सन् ईस्वी से केवल १४५३ वर्ष पूर्व ठहरता है। × —जिससे सिद्ध होता है कि श्री व्यास जो महाराज जो एक रूप से महाराज युधिष्ठिर के दादा थे (देखो महाभारत आदि पर्व अ० १०६) ठीक महाभारत युद्ध के समय और इसके पश्चात् तक रहे और इसलिए बुद्ध जी से ६१० वर्ष पूर्व विद्यमान थे।

बुद्ध का विक्रमादित्य के संवत् से ४७५—और मसीह से ६३२ वर्ष पूर्व होना आप पृष्ठ १५ की पंक्ति ५ में स्वीकार करते और लिखते हैं कि "उस समय राजा चंद्रगुप्त राज्य करता था।" शब्द उस समय से हम नहीं समझते कि आप कौनसा समय अभिप्रेत समझते हैं। आया बुद्ध काल अथवा व्यास जी और पतञ्जलि का (व्यास के साथ पातंजलि हमने इसलिए लिख दिया है कि जब पृष्ठ १५ की पंक्ति १२ में पातंजलि योग सूत्र पर महर्षि व्यास का भाष्य करना मानते हैं। तो यदि पातंजलि को व्यास से पूर्व नहीं तो समकालीन अवश्य मानेंगे) यदि बुद्ध का समय अभिप्रेत है। तो यह लेख न केवल आपकी प्रामाणिक पुस्तक जिसका प्रमाण आपनें ऊपर दिया है इतिहास तिमिर नाशक के विरुद्ध है। किन्तु आप के माननीय डाक्टर हंटर महोदय भी अपने संक्षिप्त भारतीय इतिहास के प्रथम भाग जिसका अनुवाद एच. आर. विलियम महोदय मुख्याध्यापक हाई स्कूल शाहजहानपुर प्रकाशन गवर्नमेंट प्रैस इलाहाबाद वर्ष १८८४ ईस्वी प्रथमवार के पृष्ठ १३० पंक्ति १२ में आपके विरुद्ध इस प्रकार गवाही देते हैं कि "चंद्रगुप्त ने गंगा के मैदान में पूर्व ३१६ ईस्वी से ३९२ तक राज्य किया।" अतः चंद्रगुप्त जो बुद्ध के ३१७ वर्ष पश्चात् सिंहासन आरूढ़ हुआ, बुद्ध का समकालीन नहीं हो सकता और इसी प्रकार इतिहास तिमिर नाशक भाग २ नागरी के पृष्ठ ३९ पर लिखी टिप्पणी के अनुसार लगभग २७१ वर्ष पश्चात् हुआ क्योंकि इसमें सन् ईस्वी से ३७२ वर्ष पूर्व चंद्रगुप्त का सिंहासनारूढ़ होना वर्णन किया गया है। अतः किसी प्रकार चंद्रगुप्त बुद्ध का समकालीन नहीं हो सकता।

और यदि व्यास पातंजलि का समय अभिप्रेत समझा जावे तो आपके लिखे पृष्ठ १५ पंक्ति ११ के शब्द जिनमें आप व्यास जी को बुद्ध और चंद्रगुप्त के पश्चात् का मानते हैं—क्या अर्थ होंगे ? शब्द पश्चात् का अर्थ समकालीन तो हमने आज तक नहीं पढ़ा। किन्तु सत्य है कि बड़ों की बातें बड़े ही समझ सकते हैं। हम नहीं जानते कि आपकी खेंचातानियों को मानें अथवा इतिहास को यथार्थ जानें। क्योंकि

+ प्रामाणिक और क्रमवार इतिहास के न होने से यह एक बड़ी भारी भूल हुई कि लोगों ने केवल एक नाम के मिल जाने से प्राचीन समय मान लिया। जबकि इतिहास विद्या के प्रवीण अच्छी प्रकार जानते हैं कि एक ही वंश में एक ही नाम के कितने ही राजा होते हैं और सामान्य रूप से आजकल संसार में भी देखा जाता है कि एक ही नाम के कई मनुष्य भिन्न २ समय में आगे-पीछे गुजरे हैं। और हमने यहाँ तक देखा है कि बेटे पोते और बाप दादा के नाम भी कभी २ स्पष्ट रूप से एक दूसरे से मिल गये हैं। अत: जब तक सिद्ध न किया जाए कि सहदेव जिससे गणना आरंभ की गई है—वही था जो महाभारत के युग में विद्यमान था—यह केवल काल्पनिक परिणाम है।'.

आप ईसाई हैं, संभवतः डाक्टर हन्टर महोदय का मान करते होंगे—वह भी महाभारत की रचना का काल जिसके रचयिता निश्चित रूप से व्यास जी हैं। जिन्होंने महाभारत २४ सहस्र श्लोकों में समाप्त किया है। मसीह से १२ सौ वर्ष पूर्व स्वीकार करते हैं। (देखो हन्टर महोदय का इतिहास उपरिलिखित का पृष्ठ ९ पंक्ति ८) और इस अवस्था में व्यास जी बुद्ध से ५९८ वर्ष पूर्व का ठहरते हैं।

किन्तु कुछ ठहरिये। हमें भी आपके कथन की एक अन्य भूल दिखानी है। और वह यह कि आप अपनी निरर्थक खेंचातानी के पृष्ठ १५ के अन्तिम पैराग्राफ में इस प्रकार प्रमाण निकालते हैं कि :—

"अतः प्रतीत होता है कि ३०६२ वर्ष गुज़रे हैं कि ऋग्वेद शुरू हुआ और २४१७ वर्ष गुज़रे हैं कि वह समाप्त हो गया।"

क्या ही अच्छा होता कि परिणाम निकालने से पूर्व आप यह सोच लेते कि बुद्ध को अब तक कितना समय बीत चुका है। आप स्वीकार करते हैं कि बुद्ध मसीह से ६३२ वर्ष पूर्व हुआ और अब तक मसीह को १८८७ वर्ष से कुछ ऊपर हो चुके हैं। अतः अब तक बुद्ध को सम्पूर्ण २५१९ वर्ष कुछ मास बीते हैं। और क्योंकि आपके कथनानुसार वेद की समाप्ति को केवल २४१७ वर्ष बीते। इसलिये बुद्ध जी जो आपके कथनानुसार वेद रचना समाप्ति से १०२ वर्ष पूर्व विद्यमान थे। देखो व्याख्यान संख्या १ पृष्ठ ९ पंक्ति ६ सप्रमाण बुद्ध शास्त्र अध्याय २ सूत्र १ "और क्योंकि उनके समय की गणना अशुद्ध है और उनमें परमेश्वर का चिह्न नहीं हैं और बुद्धि विरुद्ध हैं अतः परमेश्वर की वाणी नहीं हो सकते।"

यह बात कदापि नहीं कहते किन्तु स्पष्ट लिख देते कि वेदों की रचना मेरे समय में हो रही है वह कदापि प्राचीन नहीं। क्योंकि उन्होंने ऐसा नहीं कहा किन्तु बहुत ही संदिग्ध और गोल मोल वर्णन किया। इसलिये अवश्य उन्होंने भी आपकी भान्ति धोखा खाया। या जान बूझकर सत्य को छिपाया। और यदि उन्होंने ऐसा किया तो आश्चर्य ही क्या है? जब वह ईश्वरीय सत्ता को अस्वीकार करते थे तो ईश्वरीय वाणी क्योंकर स्वीकार करते? और इस अवस्था में यदि आर्य बुद्ध की उस वाणी पर संदेह रखते हैं तो भूल नहीं करते। आपने जो इसी पृष्ठ ९ की पंक्ति ५,९ में यह लिखकर कि बुद्ध जी जो कि प्राचीन पंडितों में से एक बहुत ही प्रसिद्ध और नामी हुए हैं। वह बुद्ध शास्त्र में फ़रमाते हैं कि 'वेदों के समय की गणना अशुद्ध है और इनमें परमेश्वर के चिह्न नहीं और बुद्ध विरुद्ध हैं अतः वेद परमेश्वर की वाणी नहीं हो सकते।"

इस पर सम्मति दी है कि "आर्य इसका उत्तर देते हैं कि बुद्ध जी वेद मत के शत्रु थे। किन्तु यह किसी प्रकार से परिणाम नही निकलता कि जो कुछ उन्होंने कहा—मिथ्या ही कहा अतः यह कोई उत्तर नहीं है।"

पादरी महोदय! यदि आपने इच्छयानिच्छया पक्षपात से सत्य पर समालोचना करने का उत्तर-दायित्व लिया है तो हमारा इसमें कुछ भी बिगाड़ नही? हां, हम बुद्ध के बदले में मिस्टर चार्लस ब्रेडला सदस्य पार्लियामेंट इंगलिस्तान की रचनाओं के पढ़ने की समस्त मसीही भाईयों को निवेदन करते हैं। जिनमें उसने बाईबल की समस्त शिक्षा की वह धूल उड़ाई है कि धूलि को भी धूलि कर दिया है। और इसके अतिरिक्त बाईबल की प्रत्येक स्थान पर बुद्धि विरुद्ध मूल आयतें और प्रमाण भी लिख कर के बुद्धिमत्ता से इलहाम की क्या अच्छी पोल पट्टी खोली है। और पादरी जी के आक्षेप पर हम यह कहते हैं कि प्रथम तो पादरी बुद्ध जी ने कोई युक्ति नहीं दी। दूसरे वह ईश्वर को मानते नहीं थे। तीसरे

परमेश्वर के चिह्नों की विद्यमानता में वह अकारण सत्य से मुख छिपाते हैं। देखो वेद भाष्य भूमिका पृष्ठ ५६ से ९२ तक और इसी प्रकार सत्यार्थप्रकाश पृष्ठ १७८ से २३१ तक।

अतः बुद्ध जी ने अवश्य मिथ्या कहा। और आपका मत जो बुद्धमत+ की अनुकृति से निकला है। आपने उसका अनुसरण करके अकारण असत्य का समर्थन किया।

चाहे हम आप ही की माने हुए माननीय इतिहास से व्यास का बुद्ध से पूर्व होना सिद्ध कर चुके तो भी हमें उचित प्रतीत होता है कि अब इस का काल हम अपने अन्वेषण के अनुसार सिद्ध करें। मानी हुई बात है कि महा भारत का रचियता श्री महाराज युधिष्ठिर का एक प्रकार से दादा था (देखो महा-भारत आदि पर्व अध्याय १०६) और युधिष्ठिर का समकालीन नूह का होना "आईनाए तारीख नुमा" प्रथम बार गवर्नमेंट प्रैस इलाहाबाद और आईने अकबरी इसमाईल प्रैस १८७४ ईस्वी पृष्ठ २१८ तथा गयासुल्लुग़ात नवल किशोर प्रकाशन १८७७ ईस्वी पृष्ठ ३२५ पंक्ति २१ से विशेषतया सिद्ध है। और ओल्ड टैस्टामेंट तौरेत संस्करण नार्थ इंडिया बाईबल सोसाएटी मिर्जापुर १८६७ ईस्वी के पृष्ठ ६ कालिम २ के प्रमाणानुसार नूह की उत्पत्ति ३९४८ वर्ष पूर्व की लिखी है। और अब तक मसीह को १८८७ वर्ष हुए। अतः ३९४८ + १८८७ = ५८३५ —यह काल लग भग वही है। जो हम लोग महाराजा युधिष्ठिर के सम्वत् से विक्रम के वर्तमान सम्वत् तक गणना करके निकालते हैं। अथवा युगों की गणना से ज्ञात करते हैं। और वेद भाष्य भूमिका में भी श्रीमान् स्वामी दयानन्द जी महाराज ने विक्रमादित्य के सम्वत् १९३३ तक कलियुग के ४९७६ वर्ष बीते लिखे हैं। अतः १९४४ तक ११ + ४९७६ = ४९८६ के होते हैं। (देखो भूमिका पृष्ठ २३० पंक्ति २०) और इस का समर्थन वर्तमान में एक और अच्छी विश्वासनीय गवाही से भी हो गया है और वह यह है :—

सूरत में दो शंकराचार्यों के मध्य धार्मिक शास्त्रार्थ हुआ। जिस के बीच में द्वारिका के मन्दिर से एक तांबे का पत्र उपस्थित किया गया जिस की तिथि सम्वत् १६६३ युधिष्ठिरी थी। अर्थात् यह पत्र मसीह से ४४३ वर्ष पूर्व लिखा गया। जिस का काल सिकन्दर के भारत पर आक्रमण के समय से कुछ पहिले होता है। सो देखो अमरीकन मिशन की नूरअफ़शां पत्रिका पृष्ठ ६ कालम ४ तिथि ५ मई १८८७ ईस्वी। (अर्थात् मसीह से ४४३ वर्ष पूर्व युधिष्ठिर का सम्वत् २६६३ था तो अब ४४३ + १८८७ + २६६३ = ४९९३ सम्वत् हुआ)

ज्योतिष से प्रतीत होता है कि कलियुग के अब तक ४९८७ वर्ष बीते हैं और महाराजा साहब ठीक कलियुग के पूर्व अर्थात् द्वापर के चतुर्थपाद की समाप्ति के काल में जीवित थे। और पुनः आप के प्रामाणिक इतिहास तिमिर नाशक से भी इन की गणना का मेल हो सकता है। इस पुस्तक में राजा युधिष्ठिर से राजा काशी भक्त तक २६ पीढ़ी लिखी हैं। चाहे शोक है कि पीढ़ियों का काल नहीं लिखा।

+एक प्रसिद्ध और अंग्रेजी के योग्य विद्वान् मिस्टर अर्थ मिली महोदय ने एक पुस्तक तैय्यार की है। उसमें बताया है कि ईसाईमत बुद्ध मत से निकला है। और कहते हैं कि बुद्ध प्रचारक वसुका के पीछे सकंदरिया में आए थे।

(देखो मिहर नीम रोज़ तिथि ७ नवंबर १८८१ ईस्वी पृ० ७३६ कालिम पहला व इसी प्रकार इम्पीरियल पेपर लाहौर सन् १८८७ ईस्वी)

किन्तु इस समय तौरेत की उत्पत्ति पुस्तक के अनुसार मनुष्यों की आयु बहुत बड़ी होती थी। जैसे इसी पवित्र पुस्तक में ओल्ड टैस्टामेंट के चतुर्थ अध्याय के आरम्भिक शब्द यह हैं कि :—

"अगले मनुष्य इस समय की अपेक्षा बहुत बलवान् थे। उन की आयु बहुत दीर्घ हुई—आदम ९३० वर्ष का हुआ। उस समय के मनुष्यों की आयु प्रायः इतनी होती थी। जैसा कि शीस ९१२, मतव शालेह ९६९ और नूह की ९५० वर्ष की आयु हुई। और अध्याय ५ में इस प्रकार लिखा है कि इस का (नूह का) बेटा साम भी तूफ़ान के पश्चात् ५०० वर्ष जीता रहा। यह ज्ञात नहीं कि कब उत्पन्न हुआ था। उस का पोता अरफ़खशाद ४३८ वर्ष और उस का बेटा ४३३ वर्ष और उस का पोता ४६४ वर्ष का हुआ। किन्तु इस के पश्चात् मनुष्यों की शक्ति घटती गई कि पुनः किसी की आयु २५० वर्ष से अधिक नहीं हुई।

अतः यदि प्रति पीढ़ी× ६८ वर्ष का माध्यम (कि उस कालकी आयु तौरेत लिखित के सामने कुछ भी अधिक नहीं, किन्तु बहुत ही न्यून है) स्थिर किया जाए तो १७६८ वर्ष प्राप्त होते हैं। इस में पश्चात् की पुस्तकों का समय लिखित आईनाए तारीख़ नुमा सन् १८८७ अर्थात् १९४४ तक जोड़ लीजिये।

(प्रथम) राजा यसरवा से राजा प्रतिमाल तक १४ पीढ़ी ५०० वर्षो माध्यम प्रति पीढ़ी ३५-७१

(द्वितीय) राजा वीर बाहु से राजा अरहन्त तक १६ पीढ़ी ४३० वर्ष। माध्यम प्रति पीढ़ी २६।८७

(तृतीय) राजा रणधीर से राजा राजपाल तक ३६० वर्ष। माध्यम प्रति पीढ़ी ४०।१

(चतुर्थ) राजा विक्रमादित्य से अब तक १९४४ (सम्पूर्णयोग ३२३४)

युधिष्ठर√ से कशीमक तक १७६८ + ३२३४ = ५००२ वर्ष।

अतः ५००२ वर्ष की गणना लगभग नूहके तूफान के अनुसार प्राप्त हो जायेगी और इसका समर्थन कुछ आईने अकबरी के इस वर्णन से भी होती है कि अब तक बंगाल में निम्न हिन्दू राजा राज्य कर चुके हैं :—

क्षत्रिय राजा २४ राज्यकाल २४१८ माध्यम राज्यकाल १००,७

कायस्थराजा ९ राज्यकाल २५० माध्यम २७।०७

कायस्थराजा ११ (अबीश्वरवंश से) राज्यकाल ७१३ माध्यम राज्यकाल ६४,६

,, १० (भोपाल राज्यवंश) राज्य काल ६८९ माध्यम राज्यकाल ६८,९

,, १० (राजपाल वंश) राज्यकाल (समय नहीं लिखा)

×पीढ़ियों का अभिप्राय साधारण पीढ़ियों की भान्ति पिता पुत्र पौत्र क्रमवार उत्पत्ति के अनुसार नहीं। किन्तु राज्यदृष्टि से एक के पश्चात् दूसरा राजा है। चाहे पीढ़ी के अनुसार वह पहिले का पुत्र हो। पोता अथवा कोई अन्य निकट सम्बन्धी यहाँ तक कि कुछ ऐतिहासिकों ने तो पीढ़ियों की गणना से दो छोटे २ राजा निकाल दिये हैं। जिन्होंने थोड़े दिन अथवा नाम मात्र राज्य किया।

√इन गणनाओं के माध्यम पर ध्यान देने से प्रतीत होगा कि युधिष्ठिर से कशीम तक जो २६ पीढ़ी का माध्यम ६८ वर्ष स्थिर किया है वह अनुमान रहित नहीं। और न अपने प्रमाण के लिए बाईबल की गवाही की आधीनता रखता है।

और पुन: वेद राजाओं ने १०६३ ईस्वी से १२०० ईस्वी तक अर्थात् १३७ वर्ष राज्य किया। अत: अकबर बादशाह के काल तक बंगाल में हिन्दुओं के राज्य की पाल वंश के राज्य काल के अतिरिक्त ४२०८ वर्ष व्यतीत हो चुके थे।

अब यदि हम यह कल्पना कर लें। कि आईने अकबरी अकबर के सिंहासन आरूढ़ होने से ३० वर्ष पश्चात् लिखी गई तो उस समय से अब तक ३०७ वर्ष व्यतीत हुए। क्यों कि १५५० ईस्वी में सिंहासनारूढ़ हुआ था। पुन: ४२०८ + ३०७ वर्ष में पाल वंश के राजाओं के राज्य का समय कायस्थ और भोपाल के राजाओं के समय के मध्य ४७८३ माध्यम गणना मान करके ४७३ को बढ़ा दें तो ४६८८ वर्ष प्राप्त होते हैं।

क्यों कि आप की पुस्तकों के अनुसार नूह के तूफ़ान के पश्चात् संसार में प्राणी जीवन नवीनता से आरम्भ हुआ। और उस समय में (प्रत्युत नूह के तूफ़ान से पूर्व--क्यों कि यहां कोई ऐसा तूफ़ान नहीं आया। हां, वृज से लौटते हुए मेघमाला पश्चिम पर टूट पड़ी हूं तो क्या आश्चर्य है)

श्री कृष्ण द्वैपायन जी महाराज प्रसिद्ध नाम वेद व्यास ने शारीरिक सूत्र अध्याय १।३ में वेद को ईश्वरोक्त और अनादि माना है तो, आप को यदि सत्येच्छु हैं—तो क्या न मानना चाहिये ? ईश्वर के लिये कृपापूर्वक पक्षपात को छोड़कर सोचिये कि जब बुद्ध और कृतक तीर्थ से बहुत पूर्व बड़े २ विद्वान् (जिन के सम्मुख यह बिचारा किसी गिनती में नहीं और समस्त संसार के संस्कृतज्ञ जिनकी विद्वता को स्वीकार करते हैं) वेदों के ईश्वरकृत और नित्यत्व को युक्ति के बिना खुला स्वीकार कर गए हैं, तो आप के प्रमाणों का क्या महत्व हो सकता है ?

पाठक वृन्द ! अब कुछ इस बात पर भी विचार कर लीजिये कि पंडित जी ने किस चालाकी से व्यास और पातंजलि को बुद्ध और चन्द्रगुप्त के पश्चात् का सिद्ध करना चाहा है किन्तु असत्य के पाँव नहीं होते। आप ने तो अज्ञानियों को धोखा देने के लिए लिख दिया था कि वेदांत दर्शन के दूसरे अध्याय के पाद २ के सूत्र ३३ से ३८ तक में व्यास जी ने बुद्ध मत मन्तव्यों का वर्णन किया है।

(देखो व्याख्यान नं० १ पृष्ठ १५ पंक्ति ३,४)

किन्तु अब हम वेदांत सूत्र लिख कर पोल खोल देते हैं।

नैकस्मिन्न संभवात्। वेदांत २।२।३२

एवं चात्माऽकार्त्स्न्यम्। २।२।३३

न च पर्यायाद प्याविरोधी विकारादिभ्य:। २।२।३४

अन्त्य वस्थितेश्चोभय नित्यत्वादविशेष:। २।२।३५

पत्युरसामंजस्यात्। २।२।३६

सम्बन्धानुपपत्तेश्च। २।२।३७

जिन के अर्थ यह हैं कि सूत्र ३३—एक ही पदार्थ में दो विरोधी धर्म एक साथ एकत्र नहीं हो सकते।

+सूत्र ३४—यदि आत्मा शरीर के समान माना जाए तो सर्वगत न रहेगा।

सूत्र ३५—जो आगमापायी (आने जाने या घटने बढ़ने वाला) भी माने तो भी विकारादि से विरुद्ध रहता है।

सूत्र नं० ३६—मोक्षावस्था में जीव की प्रमाण नियन्ता में कुछ भेद नहीं, दोनों अवस्थाओं के नित्य हो जाने से।

सूत्र ३७—ईश्वर का प्रधान और पुरुष का अधिष्ठाता जगत् कारण होना असम्भव है।

सूत्र ३८– सम्वन्ध के न होने से।

पाठक वृन्द ! कुछ आप भी विचार करना और सोचना। हमें इन सूत्रों में बुद्धमत का कहीं वर्णन भी नहीं मिलता। नाम और चिह्न की तो बात क्या है ? हां, विद्वान् सूत्रकार की महत्तापूर्ण विद्वत्ता शब्द शब्द से प्रगट है। क्या अर्थ कि जीव के अस्तित्व पर बहस करते हुए आपने किस उत्तमता के साथ उन समस्त आक्षेपों का जो इस कथन पर विरोधियों की ओर से उपस्थित हो सकते थे—संतोषजनक उत्तर दे दिया और उनके हेत्वाभासों का खंडन कैसे अकाट्य तर्कों से किया !!!

हां ? हां ? शत्रतापूर्ण आंख से देखने का अभ्यास बहुत बड़ा दोष है।

पक्षपात भी क्या बुरी वस्तु है ? चाहिए तो यह था कि वेदान्त दर्शन के कर्ता को विद्वत्तापूर्ण महत्ता को सत्य हृदय से स्वीकार किया जाता आप उन पर अनुचित आक्षेप जड़ने पर विद्यमान हो गए।

प्रियवर ! यह सब दोष जो विशेष बहस में उपस्थित किये जा सकते थे—इस प्रकार दिखाकर स्पष्ट कर दिये गए हैं कि बस समाप्ति हो कर दो। और यदि कोई अच्छी प्रकार समझ जावे अथवा किसी को अच्छी प्रकार समझा दिया जाए तो संभवतः मनुष्य स्वभाव के लिए कोई नया दोष निकाल कर इस सिद्धांत पर बहस करना असंभव नहीं तो कठिन अवश्य हो जाए।

पहिले से सुरक्षा करने के कार्य की प्रशंसा तो न की गई। उलटा कहने लगे कि बुद्धमत का खंडन जो वेदान्त शास्त्र से सिद्ध होता है। इसलिये यह पश्चात् लिखा गया।

देखो वेदान्त कर्ता की पूर्णता कि अपनी दूरदर्शी बुद्धि के द्वारा वह रहस्य और समस्याएं खोल दीं कि हम इस शास्त्र को पढ़कर और समझकर संसार के वर्तमान और आगामी के अन्य मतमतान्तरों का खंडन कर सकते हैं। मानो इसने अपने पूर्ण पांडित्य से मनुष्य स्वभाव की प्रतिवृत्ति अपनी स्मृति के दर्पण में खेंचकर पूर्व ही इसके सम्पूर्ण अवयव ऐसी पवित्रता के साथ पत्र पृष्ठपर प्रगट कर दिये हैं। कि प्रत्येक मनुष्य उससे आगे और पीछे के लोगों के स्वभाव को अच्छी प्रकार पहचान सकता है। और यह बात

+इस सूत्र के भाष्य में स्वामी शंकराचार्य जी ने सप्तभंगी न्याय की दृष्टि से आत्मा में सात प्रकार के विरोधी गुणों के मानने वालों का खंडन किया है। इस सूत्रों को यदि शंकराचार्य जी और भाष्कारों ने (इस कारण से कि वह बुद्धमत के पश्चात् होते रहे) बुद्धमत के खंडन पर लगाया तो यह कदापि सिद्ध नहीं हो सकता कि व्यास जी ने भी उन्हें इसी कारण से रचा था। संभव है कि इस विद्वान् ने पूर्व की गई अनुपमेय सुरक्षा के साथ संभावनीय आक्षेप का निराकरण किया हो जैसे कि अपने समय के अद्वितीय पूर्ण पाँडित्य युक्त विद्वानों की वाणी में होता है। और आकस्मिक रूप से शंकराचार्य जी ने अपने काल में बुद्धों को ऐसा मानते हुए देखकर इन सूत्रों से उनके मत का खण्डन किया हो। अतः इन सूत्रों से व्यास का बुद्ध के पश्चात् होना कदापि प्रगट नहीं होता।

भी कौन कहे कि व्यास से पूर्व ऐसे विचार किसी के मन में आए ही न थे, जिन्हें बुद्ध ने प्रगट किया। और हमें तो संसार में कोई नवीन बात दृष्टिगत नहीं होती।

पहरावा परिवर्तन के साथ हम तो वही पूर्ववर्ती रूप (अस्तित्व के रूप में) देखते हैं। रंगतें चाहे बदल जावें—अवस्थाएं चाहे पलट जाएं। विवरण चाहे कुछ से कुछ होते रहें। शरीरों के माप तोल न्यूनाधिक होते रहें। किन्तु कहीं सत्ताओं के अस्तित्व × भी परिवर्तित होते हैं? कदापि नहीं। अतः जिन मन्तव्यों पर बुद्ध ने अधिक बल दिया। वह भी कुछ न कुछ किसी न किसी प्रकार कहीं न कही अवश्य विद्यमान होंगे और मनुष्य स्वभाव में उनका खटका या संदेह गुज़रता ही रहता होगा। अतः व्यास भी उसी स्वाभाविक नियम के सिद्धान्त से पूर्ण परिचयप्राप्त करके ऐसे मन्तव्य लिख गए। जिसके कारण हम उनके पश्चात् प्रचलित मतमतान्तरों के खंडन करने में समर्थ हुए। अन्यथा यह भी कोई बात थी कि किसी मत के नियम का खंडन करें और उसका नाम तक न बतावें? नही, यह हमारे आर्य ऋषियों की पद्धति नहीं। वह निरन्तर दूसरों की सम्मति बताकर अपना सिद्धान्त जतलाते रहे हैं।

इसी वेदान्त दर्शन में भी इसके बहुत उदाहरण मिल सकते हैं। उदाहरणार्थ वेदान्त चतुर्थाध्याय के चतुर्थ पाद के पंचम सूत्र में जैमिनि और षष्ठ सूत्र में औदलोमि की सम्मति दिखाकर सातवें सूत्र में अपना सिद्धन्त लिख दिया। इसी प्रकार दशम सूत्र में पराशर और ग्यारहवें में जेमिनि की सम्मति लिखकर बारहवें में अपना सिद्धान्त प्रगट किया।

किन्तु यह सब बाते तो उस समय सूझतीं, जब पंडित महोदय बुद्धि से कुछ भी काम लेते और पक्षपात को क्षण भर के लिये छोड देते किन्तु यह क्यों होता था ऐसा करते तो झूठे प्रमाण लिख कर ईसाईयों में प्रसिद्धि कहां से प्राप्त करते? आर्य समाज के विरोधियों को क्या मुख दिखाते? क्योंकि इनका तो अपने पौलुस रसूल के इस वचन पर आचरण है किः—

"यदि मेरे झूठ के कारण खुदा की सत्चाई उस के जलाल के लिये अधिक प्रगट हुई, तो मुझ पर क्यों पापी की भान्ति आज्ञा होती है? और हम क्यों बुराई न करें जिनसे भलाई निकले। पुनः यदि हमारी असत्यता को प्रगट करती है तो हम क्या कहें।"

(देखो रूमियों की पत्री अध्याय ३ आयत ५, ७)

आपने केवल व्यास जी का नाम लिखकर ही धोखा नहीं दिया। किन्तु पातंजलिजी के नाम के मिष से भी छल कपट का जाल बिछाया है। उदाहरणार्थ आप लिखते हैं किः—

× उदाहरणतः मनुष्य शरीर में जो जीव है। वह यदि इस शरीर के सम है। तो यदि पुनर्जन्म के नियमानुसार चींटी के शरीर में जावे तो बाहिर रहेगी और हाथी के शरीर में जावे तो न्यून रहेगी। और प्रसन्नता घटा बढ़ा करती है और परिणामिनी होती है। वह शेष नहीं कहलाती। अभिप्राय यह कि यदि कहा जाए कि जैसे छोटे बड़े शरीर में जीव जाता है उसी प्रकार के समान हो जाता है तो कहते हैं कि अन्तिम अर्थात् मुक्ति की अवस्था में तो उसकी सत्ता है उसे नित्य मानोगे। किन्तु उस समय का उदाहरण वैसे ही होगा जैसे पूर्व की दो अवस्थाओं में। क्योंकि प्रमाण (क्षयवृद्धि) का नाश होने से आत्मा का नाश होगा और इससे अन्तिम प्रमाण तत्त्व भी न रहेगा।

(नोट) यह टिप्पणी वेदनासूत्रों के सम्बन्ध में है। (अनुवादक)

"ऋषि पतंजलि ने एक पुस्तक जिसका नाम योग दर्शन है लिखा है। जिसमें उसने पाणिनीय व्याकरण के दूसरे अध्याय पाद ४ सूत्र २३ पर व्याख्या करते हुए कहा कि राजा को ऐसी सभाएं स्थापित करनी चाहियें जैसे कि राजा चंद्रगुप्त ने कीं।" (देखो व्याख्यान नं० १ पृष्ठ १५ पंक्ति ७ से ६ तक)

वाह ! वाह!! पंडित जी महाराज ! वाह !!! लो हम तो आपके पंडित्य को हाथ जोड़ते हैं। आप कोरे पंडित ही नहीं किन्तु ऐतिहासिक× भी पूरे हैं। सचमुच यह तो वही बात हुई कि:—

चहे खुश गुफ्तस्त सादी दरजुलैखा।
अला या अय्यो हस्साक़ी और कासन् व नावलोहा ॥

महोदय! योग दर्शन तो पातंजलि जी की रचना है उसका भाष्य व्यास ने लिखा है स्वयं लेखक ने नहीं और उसमें पाणिनीय सूत्र की व्याख्या लिखना कैसा ? योग की पुस्तक को व्याकरण के किसी सिद्धान्त की व्याख्या से क्या प्रयोजन ? किन्तु अब क्या कहें ? जो समझें ··· ···· इसी का दोष है। हां, पाणिनि के इसी सूत्र पर ऋषि पातंजलि जी ने महाभाष्य व्याकरण में प्रथम पाद सूत्र ६८ के भाष्य में इस प्रकार व्याख्या की है कि:—

जित्पर्याय वचनस्यैव सभाद्यर्थम् जिन्निदेर्शः कर्तव्यः ततो वक्तव्यम्। पर्याय वचनस्यैव ग्रहणं भवति। किं प्रयोजनम्। राजाद्यर्थम्। सभा राजा मनुष्य पूर्वा। इन् सभम्। ईश्वर सभम्। तस्यैव न भवति। राजसभा। तद्विशेषणं च न भवति। पुष्पमित्र सभा ॥

अनुवाद—जब सभा शब्द का मनुष्य और राजा पद को छोड़कर अन्य पद के साथ समास हो तो यह रूप होगा जैसे—"इन सभम्।" "ईश्वर सभम्।" किन्तु राजा पद के साथ सम्बन्ध होने से यह रूप नहीं होगा। जैसे "राज सभा।" और जो शब्द उनके गुण वाची हैं। वहां भी सभा को सभम् नहीं होता जैसे— "पुष्पमित्र सभा।" (देखो महाभाष्य १८८३ ईस्वी बम्बई संस्करण पृष्ठ १७७ पंक्ति १०)

अब बताईये कि चंद्रगुप्त का नाम कहां है ? और फरमाईये कि उस जैसी सभा बनाने की कहां आज्ञा है ?

इस अवसर पर हम आपके मिथ्या आक्षेप करने का कारण भी बतलाए बिना नहीं रह सकते कि आपको यह मिथ्या विभ्रम कहां से हुआ ? ध्यान से सुनिये।

स्वयं श्री के. एल. हारन महोदय फ़रमाते हैं कि :—

"पुस्तक में "चंद्रगुप्त सभा" यह पाठ भी है। किन्तु इस पुस्तक में महाभाष्य का मूल षष्ठ अध्याय के आदि तक है। इस पुस्तक के दो भाग हैं। पहिला लगभग १२० वर्ष का पुराना है। और दूसरा ८० से १०० वर्ष तक का होगा। प्रथम भाग २ वर्क से १२० वर्क तक का है। और मूल प्रथम

+अवस्था यह कि इतिहास तिमिर नाशक भाग ३ पृष्ठ ३३ पर राजा शिवप्रसाद महोदय यह टिप्पणी देते हैं कि जब शाक्य मुनि ने बुद्ध होने की घोषणा की तब यह बताया कि मुझसे **पूर्व चौबीस बुद्ध अन्य बीत चुके हैं।**

जिल्द के १ पाद के १३ से लेकर १६६ पृष्ठ तक का है। दूसरा १२१ से लेकर ३६४ वर्क तक का और मूल प्रथम जिल्द का १६६ पंक्ति ३० तक की यह पुस्तक सारी की सारी ही परिश्रम और ध्यान के विना ही लिखी हुई है। और उसमें प्राय: छोटे छोटे खंड छूटे हुए हैं। दूसरे भाग में निम्न पृष्ठ खाली हैं– २३६ अ १-१८ से लेकर २२१ अ: तक प्रथम संस्करण पृष्ठ ४६२ से लेकर पृष्ठ ४६४ पंक्ति २६ तक २४६ अ १-२२ से लेकर २४७ अतक संस्करण दूसरा पृष्ठ १२-१६ से लेकर पृष्ठ १०-१८ तक इसी अनुमान पर विश्वास करता हूं कि दोनों कापियां किसी और कापी से उद्धृत की गई हैं। और वह मूल कापी से सुरक्षित अवस्था में है। जबकि कापी नंबर 'क' को नकल हो रही थी। बहुत कुछ ख़राब और दूषित हो गई। यह कशमीर की कापी है। इस कापी 'क' में कहीं कहीं पृष्ठ के पृष्ठ छोड़ दिये हैं। मन में स्मरण रखकर कि कापी 'क' प्राय: अशुद्ध है। पाठ का विरोध अथवा सर्वथा न होना कई अवस्थाओं में केवल घटना वश समझा जा सकता है। और हमारी इच्छा है कि इन्डिया में कोई अन्य अधिक प्रमाणित मूल मिल सके।" (देखो भूमिका पृष्ठ ६ से ११ तक)

पुन: उक्त गुणी महोदय फ़रमाते हैं कि "मैं अपनी पुस्तक के १७७ पृष्ठ की १० पंक्ति में केवल पुष्प मित्र सभा को छापता हूं और चंद्रगुप्त सभा को जो पुष्पमित्र सभा के पश्चात् दो कापियों में लिखा है– नहीं छापता। मेरी युक्ति केवल पुष्पमित्र सभा के छापने को यह है कि मूल विश्वस्त कापियां जी. डी. और ए में जिसका पाठ अन्य सब कापियों पर उत्तम है–केवल यही शब्द लिखा हुआ है।"

(देखो दूसरी जिल्द की भूमिका का पृष्ठ ८ महाभष्य के पृष्ठ १४०० से आगे महाभाष्य प्रकाशन बम्बई १८८३ ईस्वी)

वास्तव में आपने कही से सुनाया लिख दिया है कि योग दर्शन में है। किन्तु आपको महाभष्य लिखना चाहिए था। जो भूल गया अथवा ज्ञात न था। किन्तु यह बात महाभष्य में भी नहीं। जैसे कि के. ऐल. हारन महोदय के अन्वेषण से प्रगट है और न किसी विश्वस्त प्रकाशन में विद्यमान है। शेष यह रहा कि उस संदिग्ध कापो में क्यों विद्यमान है? इसका यह उत्तर है कि प्रथम तो वह अपूर्ण है दूसरे संदिग्ध है तीसरे अशुद्ध है किन्तु चंद्रगुप्त सभा शब्द तो सिद्धन्त कौमदी में है और ऐसी अन्य पुस्तकों में भी जो विक्रमादित्य और चंद्रगुप्त के पश्चात् बनी हैं अत: उस अशुद्ध कापी में भी किसी कौमुदी पाठी ने नकल करने के समय अधिक प्रयोग करने के लिए अतिरिक्त उदाहरण लिख दिया ही तो आश्चर्य नहीं। किन्तु मूल में अभाव है। क्योंकि वह पुस्तक चंद्रगुप्त से सैंकड़ों वर्ष पूर्व बनी है। उसके अतिरिक्त अभ्युपगमेन न भी हो तो उसमें लिखा है कि राजा चंद्रगुप्त जैसी सभा बनावे और न इस प्रकार का कुछ वर्णन किया है। भला नियमों में ऐसे वर्णनों का अवसर ही क्या था। ? क्योंकि व्याकरण में समस्त नाम काल्पनिक हुआ करते हैं। फ़ारसी, अरबी में ज़ैद, बकर, उमर, ख़ालिद, हामिद, महमूद, बहराम अहमद आदि—संस्कृत में देवदत्त, यज्ञदत्त, राम, चंद्र, गुप्त आदि। और इसी प्रकार अंग्रेजी में भी।

क्या आप यदि किसी पुस्तक में इन नामों से कोई नाम उदाहरण रूपेण विना किसी संबंध के वर्णित देखते होंगे और इस नाम वाले किसी व्यक्ति को भी जानते हूं तो अवश्य उस पुस्तक का रचना काल उस व्यक्ति के पश्चात् मान लेते हूंगे? जैसे कि एक अहमद नाम का अफगान (पठान) जब कुरान की यह आयत "कुल हुवल्लाहो अहद।"

अर्थात् "कहो अल्लाह अहद है।" ऐसा सुना करता था, तो कहता था कि कुरान में मेरा नाम आया है। किन्तु उसको लेखक मेरी खुदाई का स्वीकरण करता है। और मेरी भक्ति की ओर लोगों को झुकाता है। जब कि आप जानते हैं। कि कुरान शरीफ का यह अभिप्राय नहीं है। (देखो दबिस्ताने मज़ाहिब पृ० ३०० सन् १८८१ ईस्वी नवल किशोर प्रकाशन)

सत्य है। आप हमारे कथन को तो समझ सकते हैं। किन्तु घर के विश्वस्त ज्योतिषी के कथन का खंडन किस प्रकार से हो ?

ईश्वर के बन्दे ! कहीं तो मिथ्या लेखन से शरमाए होते। अच्छा, आपने जो मनुस्मृति को अविश्वस्त मानने के लिए लिख मारा कि :—

"उसमें एक हिरण्यकश्यप नामी व्यक्ति का इंगित से वर्णन है कि मनु जी इस व्यक्ति के सम्बन्ध में इस प्रकार वर्णन करते हैं कि वह इतना ऊंचा था कि उसका कटि प्रदेश सूर्य तक पहुंचता था। और उसका शेष शरीर उससे आगे से निकल जाता था। मनु जी की गवाही इतनी पर्याप्त है। (देखो पृष्ठ ६ पंक्ति २० व पृ० १० पंक्ति १, २ व्याख्यान नं० १)

हमने तो मनुस्मृति की सम्पूर्ण पुस्तक को देख डाला। इस विचित्र कथानक का इसमें कहीं पता न लगा। हाँ, आपने कहीं स्वप्न में देख लिया होगा ? अथवा पवित्रात्मा ने कोई बात बता दी होगी ? अथवा किसी पौराणिक की जिह्वा से सुन लिया होगा ? कि मनुस्मृति में भी यह कथा विद्यमान है। विशेषता यह कि प्रमाण और पता कुछ नहीं—पता दिये विना जो चाहें—लिख मारें। इसका प्रमाण नहीं। यदि अध्याय और श्लोक का पता स्पष्ट २ स्मरण नहीं था ? (और होता कहां से ? जबकि पुस्तक भर में यह कथा नहीं लिखी) तो लेखबद्ध करना क्या आवश्यक था? किन्तु आप तो मानो शपथ खा कर बैठे थे कि जो कुछ कहेंगे—सब पता के विना और अशुद्ध या मिथ्या। अच्छा, यदि वह नहीं—तो यह जो आपने कहा है कि स्मृति में लिखा है कि :—

"जब पहिले सत्युग के १० सहस्र वर्ष समाप्त हो गए। तब मनुस्मृति का धर्मशास्त्र समाप्त किया। और यह ब्रह्मा की आज्ञा से हुआ।" (देखो पृष्ठ ६ पंक्ति ११ से १३ तक)

इसकी खोज तो कहीं बता दीजिये कि यह किस पुस्तक के कौन से श्लोक में लिखा है ? और वह पुस्तक कहां है ? क्या यही मनुस्मृति है ? (जिसमें इसका चिह्न मात्र नहीं—या अन्य कोई है ? जो लंडन के अतिरिक्त इस स्थान पर नहीं मिल सकती—ईश्वर के लिये अवश्य बताईये। जिससे हमें आपके सत्य का किसी प्रकार विश्वास हो जाए। पंडित महोदय को यह एक बड़ा आश्चर्य है कि :—

"जब मनु संहिता को लिखे हुए बहुत दीर्घकाल बीत चुका है तो उसमें इन राजा और ऋषियों के नाम क्योंकर मिलते हैं ? जिन्हें बहुत अल्पकाल बीता है कि वह जीवित थे।"

(देखो पृष्ठ ६ पंक्ति १४ से १७ तक)

किन्तु हम इसका प्रतिकार अभी क्या करें ? पंडित जी के मन पर बाईबल में लिखी भूत प्रेत और जादूगर भानमती की कथाओं ने वह प्रभाव जमा रखा है कि परिपक्व बुद्धि सर्वथा बेकार हो गई। अतः कोई कैसे बताए ? भला, केवल नामों के मिल जाने से क्योंकर सिद्ध हो गया कि यह लोग वही हैं ? जो थोड़े दिन हुए कि विद्यमान थे। क्या यह परिणाम यथार्थ है ? कि याकूब जिसका बेटा यूसुफ

मिश्र में दासता से सरदार हो गया—वही था। जो मसीह का शिष्य और भाई था। या याकूब का बेटा यूसुफ ही मसीह का पिता था ?

+लाहौलो वला क़ुव्वतो (इल्ला बिल्लाहे)

कोई भी ऐसा परिणाम※ निकलता है ? यह क्योंकर संभव है ? कि इस समय जो लोग राम कृष्ण आदि नामों से प्रसिद्ध हैं। वही श्री महाराज रामचंद्र जी और कृष्णचंद्र जी हैं। जिनके रामायण और महाभारत में वर्णित शुभ कृत्य चिरकाल से काल पृष्ठ पर स्मृति रूप से विद्यमान हैं और रहेंगे।

अतः हम नहीं समझ सकते कि जब पितृत्व, जातित्व, स्थानत्व और समय (यह भी संभव है क्योंकि कुछ बातें और कभी २ सब मिल जावें और पुनरपि वह लोग एक न हों) ज्ञात नहीं। केवल नामों की एकता से जाति भी एक क्योंकर मानी गई ? और सिकन्दर आदि राजाओं के वृत्तान्त और वर्णनों के अभाव तो इन पुस्तकों की प्राचीनता के अनुमान पर आश्रित हैं। आप उनको भी विचित्र से समझते हैं। मानो, यह कल्पना करते हैं कि एक दीर्घकाल से हमारे ऐतिहासिक और व्याख्याकार ऐसे प्रबंध में संलग्न थे कि श्री महाराज पंडित खड़गसिंह जी अमुक काल में उत्पन्न होकर अमुक पत्रिका संपादन का यत्न करेंगे, ऐसा न हो कि उन्हें सामग्री पर्याप्त मिल जाए।

किन्तु हम जब संस्कृत की प्राचीन से प्राचीन और नवीन से नवीन पुस्तकों की ओर ध्यान देते हैं, तो हमें प्रत्येक धर्म सम्बन्धी पुस्तक से वेदों का प्राचीन और ईश्वरीय ज्ञान होना सिद्ध होता है।

ऋग्वेद और शत पथ, मनुस्मृति, वेदान्त दर्शन और महाभारत के प्रमाण तो स्वयं पादरी जी ने भी लेखबद्ध कर दिये हैं। जिन से वेदों का ईश्वरीय और प्राचीन होना सिद्ध होता है।

(देखो पृष्ठ ६ से ८ तक)

अब उनके अतिरिक्त हम निम्न प्रमाण भी पाठकों की भेंट करते हैं कि वेद रामचंद्र जी से पूर्व विद्यमान थे और समस्त महान् पुरुष उन्हें ईश्वरीय ज्ञान मानते थे और उनकी प्राचीनता के अनुमोदक थे। रामायण बालकांड पहिला सर्ग श्लोक १४—

रक्षिता जीव लोकस्य धर्मस्य परिरक्षिता।
वेद वेदांग विच्चैव धनुर्वेदे च निष्ठितः॥

अर्थात् रामचंद्र जी अपने धर्म और अपने मित्रों की रक्षा करने वाले हैं। ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद के तत्वज्ञ और व्याकरणादि अंगों के ज्ञाता तथा धनुर्वेद जो उपवेद है—उसके विशेषतः पूर्ण ज्ञाता, अनुभवी और प्रवीण हैं।

+न बल और न शक्ति किन्तु अल्लाह के साथ। (अनुवादक)

※यह ऐसी बात है। जैसे कि रामायण में निम्न श्लोक से कोई विक्रमादित्य का होना निकाले—

नयश्च विनयश्चोभौ यास्मिन् सत्यं च सुस्थितम्।
विक्रमश्च यथा दृष्टः स राजा देश कालवित्॥ किष्किन्धा १८।८

यह प्रशंसा राजा बाली के पास रामचन्द्र जी ने राजा भरत की की है। जो उस मसय राजसिंहासन पर विराजमान थे। इसमें विक्रम शब्द विद्यमान है। किन्तु उसके अर्थ उत्साह के हैं न कि राजा विक्रमादित्य के। अतः हमारे पादरी जी भी इसी प्रकार खींचातानी से काम चलाते हैं।

पुनः रामायण में है :–

इष्टिं ते ऽहं करिष्यामि पुत्रीय पुत्र कारणात् ।
अथर्व शिरसि प्रोक्तैः मंत्रैः सिद्धां विधानतः ।। बालकांड १५।२

यह एक यज्ञ के समय का वर्णन है कि जिसमें अथर्ववेद के अनुसार मंत्रों से हवन किया गया। आपने पृष्ठ ८ पर वेद की नित्यता के सम्बन्ध में मनुसंहिता के अनुसार ब्राह्मणों का तिथिपत्र लिखा है। किन्तु पृष्ठ ९,१० पर उनके खंडन में जो युक्तियां दी हैं उनमें से मनु के सम्बन्ध में तो समस्त आक्षेपों का खंडन हो चुका है और जहां तक हम जानते हैं। पर्याप्त और बहुत है।

तिथिपत्र के सम्बन्ध में आप तर्क देते हैं कि ब्राह्मणों के तिथिपत्र का प्रमाण सर्वथा ही नगण्य है। केवल इसलिए कि यह एक प्रसिद्ध और मानी हुई बात है, कि वास्तविक तिथिपत्र राजा भोज के काल से चार सौ वर्ष पूर्व गुम हो गया था अर्थात् भारत में बुद्धमत के उन्नतिकाल में वह तिथिपत्र जो अब ब्राह्मणों के पास है कुछ भी विश्वसनीय नहीं है। इसका बड़ा भाग मनुसंहिता से निर्मित किया गया है। इसमें सन्देह नहीं कि उसमें आकाशस्थ और सांसारिक वस्तुओं, प्राचीनकालीन राजाओं और बड़े बड़े व्यक्तियों का तथा उन वस्तुओं का जो सैंकड़ों वर्ष बीते कि घटित हुई–वर्णन है। किन्तु बड़े आश्चर्य की बात है कि सिकंदर महान् का तो कहीं वर्णन तक भी नहीं। (देखो पृ० १० पंक्ति ७-१२)

शोक कि आपने कहीं युक्ति से काम नहीं लिया और न कभी प्रमाण दिया। महोदय ! वह मानी हुई और प्रसिद्ध बात हमने तो आज तक सुनी नहीं और न किसी संस्कृत की प्रामाणिक पुस्तक में लिखी है और न किसी आर्य पंडित की मानी हुई है। जिस प्रकार कोई न्यायकारी अधिकारी जब तक किसी की भी भूल सिद्ध न करे– झूठी नहीं कह सकता। उसी प्रकार आप भी केवल सर्वथा पोच कह देने से युक्तियुक्त नहीं कहलाते। यदि कोई युक्ति है तो लाओ। अन्यथा मनमानी बात को मन में ही रखो। प्रगट न करना। अन्यथा आसमानी मन वाले का नक़शा होगा। किस आर्ष ग्रन्थ में लिखा है कि वह राजा भोज के काल से चार सौ वर्ष पूर्व गुम हो गया था ? (जब कि अब तक विद्यमान है) हां, यदि केवल बुद्ध के कथन से विश्वसनीय नहीं है तो यहूदियों के कहने से मसीह का होना भी सिद्ध नहीं है। और न हीरोडेस बादशाह के तिथिपत्र में लिखा है। अतः इसका मानना केवल प्रमाणरहित और सर्वथा पोच है। किन्तु ब्राह्मणों का तिथिपत्र समस्त आर्यावर्त में बहुत सुरक्षा और यथार्थता से आज तक विद्यमान है। और समस्त विद्वान् इस विषय में सहमत हैं। आपका यह कथन कि इसका बड़ा भाग मनुसंहिता से संपादित किया गया है। यद्यपि इसका भी आपने कोई प्रमाण नहीं दिया (जब कि हम प्रमाण के बिना नहीं मानते) किन्तु हम कहते हैं कि यदि मनुसंहिता से संपादित है तो भी क्या हानि है ? जब कि ज्योतिष शास्त्र पृथक् विद्यमान है। और इसी गणित विद्या पर उसका समस्त आधार है।

आपको इसके न मानने से बाईबल में मसीह से ४००४ वर्ष पूर्व के रोग हो रहे हैं। अन्यथा आज कल की ज्यालोजी+ (जो वास्तव में एक बहुत पुरातन विद्या है। जिसे संस्कृत में भूगर्भ विद्या कहते

+ज्यालोजी वह विद्या है जिससे भूखंडों के रहस्य और उसके भागों की वास्तविकता और जो परिवर्तन आरंभ से अब तक उस पर घटित हुए हैं। अथवा भविष्य में घटित होंगे। उनका विवरण ज्ञात हो और उसके खंडों का भी जो धातु धरोहर रूप से विद्यमान हैं उनके ठिकाने ज्ञात करने के ढंग किसी अन्य विद्या के बिना ज्ञात हो

हैं। और जिसके सम्बन्ध में आर्य लोग सबसे पूर्व उत्तम अन्वेषण कर चुके हैं। उससे भी पृथिवी लोक बहुत पुरातन सिद्ध हो रहा है। और अभी रिसर्च शेष है।

सरविलियम मयूर महोदय बहादर एजंट हारवती ने पंडित हरिश्चन्द्र शास्त्री देहलवी बून्दी से दो कोस पर बहुत पुरातन कसबा सोरठ या सतोर में उनकी लिपि उतार लाने के लिए आदेश दिया। वहां बहुत से पत्थर सहस्रों वर्षों के पुराने लिखे हुए और भूमि में गढ़े हुए विद्यमान हैं। हरिश्चन्द्र जी कहते हैं कि मैं वहां गया। और बहुत से पत्थरों की भाषा उतारी और मारकंडे ऋषि का भी उस स्थान से लगभग तीन कोस की दूरी पर मकान है। वहां मनुष्य नहीं जा सकता। सिंहादि हिंसक पशु बाहुल्य से हैं। और एक पत्थर पर लिखा हुआ राजा युधिष्ठिर के साख का नदी की सीध में बड़े २ धरे अक्षरों का मिला। उसमें केवल दो पक्ति पूरा लेख है। शेष सब अक्षर बिगड़े हुए हैं। उन पंक्तियों की लिखावट से (वर्तमान) सन् प्रतीत हुआ है।" (देखो पत्रिका देहली सोसाएटी जिल्द १ अंक २ वर्ष १८७२ ईस्वी पृ० २८, २६)

कारण यह कि जहां तक अन्वेषण अधिक होता है। लोग सत्य की ओर ध्यान देने लग जाते हैं। और एक दिन आने वाला है कि समस्त संसार में पूर्व की भान्ति वेद धर्म का अधिक प्रचार होगा।

आपने पृष्ठ १६ की पंक्ति ३ में लिखा है कि :—

"उदाहणार्थ यजुर्वेद के तीतरा पृष्ठ ३६५ मंत्र २२ में यह लिखा है कि मैं उन ऋषियों को धन्यवाद देता हूं। जिन्होंने वेदों की रचना की।"

हमने विचार किया कि यजुर्वेद की तीतरिया कौन है ? क्योंकि इसका ब्राह्मण तो शतपथ है। अच्छा, ढूंढते २ तैत्तरीयोपनिषत् की शिक्षा प्रथम, अध्याय १३, अनुवाक ११ का ओर आपका इशारा प्रतीत हुआ जिसको सत्य की खोज के लिये याथातथ्य उद्धृत करता हूं।

ये तत्र ब्राह्मणाः संम्मर्शिनः। युक्ता अयुक्ताः अलूक्षा धर्म कामाः स्युः। यथा ते तत्र वर्तेरन्। तथा तत्र वर्तेथाः। एष आदेशः एष उपदेशः। एषा वेदोपनिषत्। एतदनुशासनम्। एवमुपासितव्यम्। एवमुचैतदुपास्यम् ॥४॥ स्वाध्यायप्रवचनाभ्यां न प्रमदितव्यम्।

तानि त्वयोपास्यानि। विचिकित्सा वा स्यात्। तेषुवर्तेरन्। सप्त च ॥ मह इति ब्रह्म। ब्रह्मणे वाव सर्वे वेदाः महीयन्ते ॥ (तैत्तिरियो पनि०)

इसमें गुरु (आचार्य) शिष्य को उपदेश करता है

अनुवाद—जो उनमें समदर्शी, पक्षपात (हठ धर्म) से रहित, योगी, अयोगी, उदारचित्त, धर्म की

जाएं। संक्षेपतः यह वह विद्या है जिससे पर्वतों और कानों तथा पथरीली भूमियों का वृत्तान्त किसी अन्य विद्या के संबंध के विना ज्ञात होता है। पृथिवी की उत्पत्ति के संबंध में एक दीर्घकाल से छानबीन होती चली आती है। और सबसे पहिले इस बात में भारतीयों, कलदानियों, मिस्रियों और इब्रानियों ने विचार किया है। इसके पश्चात् यूनानियों ने इसकी बहस शुरू की। (रिसाला बागबान पंजाब दिसंबर १८८६ ई०)

कामना करने वाले धर्मात्मा जन हूं—जैसे वह धर्म मार्ग में चलें अर्थात् कारवाई करें—वैसे तू भी चला कर। यही उद्देश्य, आज्ञा, यही उपदेश, यही वेदोपनिषत् और यही शिक्षा है। इसी प्रकार बरतना और अपना आचरण सुधारना चाहिये। वेद को पढ़ने पढ़ाने और ब्रह्मचर्य के करने कराने में आलस्य न करनी चाहिये— वही तुझे प्रयोग में लानी चाहिये और उनमें अधिक जानने की इच्छा करनी चाहिये। ब्रह्म महान् है और ब्रह्म से ही निश्चय से सर्व वेद महत्ता युक्त हैं।

अब पाठक वृन्द इस उपदेश को ध्यान से देखें और विचारें। साथ ही पादरी जी के आक्षेप का अच्छी प्रकार अध्ययन करके विश्लेषण के पश्चात् सत्यासत्य का निर्णय करें। क्या इसमें कहीं भी आपकी कल्पना का चिह्न और गुमान है? पुनः आप के इस दावा का खंडन भी इसी उपनिषद् में विद्यमान है। जैसा कि "महः" नाम ब्रह्म का है और ब्रह्म से ही चारों वेद प्रकाशित होते हैं।

(देखो तैत्तरीयोप० पृष्ठ ७८ वाक् १२)

आपने पृष्ठ १४ पर लिखा है कि "वेदों में सबसे प्राचीन ऋग्वेद है और तीन उससे पीछे हुए हैं। अतः अब हम ऋग्वेद की प्राचीनता पर विचार करते हैं। इस वेद का प्रथम मंत्र विश्वामित्र की पुत्री मधुच्छन्दा की रचना है। और अन्तिम मन्त्र एक ऋषि अघमर्षण का बनाया हुआ है।"

पुनः आप पृष्ठ १५ की पंक्ति १३ में लिखते हैं कि :—

"अब ऋग्वेद के अन्तिम भाग में पराशर के मंत्र हैं। क्योंकि पहिले ने आरंभ का मंत्र और पिछले ने अन्तिम मंत्र लिखा है। मध्य भाग बहुत से भिन्न २ ऋषियों की रचना हैं। हम परिशिष्ट में इसका नाम और वेदों के उन मंत्रों की सूची देंगे जो उन्होंने बनाई हैं। जिससे किसी को इसमें सन्देह न रहे।"

(पृष्ठ १४ पंक्ति ८ से १४ तक)

(खंडन) यद्यपि अन्य प्रमाण भी बहुत हैं। किन्तु हम संक्षेप के दृष्टिगत केवल विश्वामित्र और पराशर के सम्बन्ध में उल्लेख करते हैं कि वेद उनसे पूर्व के हैं और ईश्वर कृत है—किसी मनुष्य द्वारा रचित नहीं। इन ऋषियों ने पढ़े हैं। देखो पराशर स्मृति अध्याय १ श्लोक ३,२०,४६,६४।

अध्याय ३ श्लोक ५,६,२३।
अध्याय ५ श्लोक ३।
अध्याय ६ श्लोक ६६,७०,७१।
अध्याय ७ श्लोक ३८,३६।
अध्याय ८ श्लोक २,११,१५,१६,२०,२१,२५,२६,२६,३६,३८।

इन सब में क्या उत्तमरीति से वेदों को ईश्वर कृत और ऋषियों को उनका ज्ञान बताया है।

इसी प्रकार वालमीकि रामायण उत्तरकांड सर्ग १ श्लोक ६,८,१५।
रामायण उत्तरकांड सर्ग २ श्लोक १७,३१।
रामायण उत्तरकांड सर्ग १०५ श्लोक २,३।

रामायण उत्तरकांड सर्ग ४ श्लोक ७ में विश्वामित्र, वसिष्ठादि के सम्बन्ध में स्पष्ट उल्लेख है कि उन्होंने वेद पढ़े और वह वेदों के विद्वान् हैं। चारों या तीनों वेद उनके स्मरण हैं। वेदांगों अर्थात् (व्याकरण, निघंटु, ज्योतिष, निरुक्तादि) के भी विद्वान् हैं।

वसिष्ठः कश्यपोऽत्रिविश्वामित्रः सगौतमः जमदग्निर्भरद्वाजस्सप्तैते तापसान्तमाः ।५। वेद वेदांग विदुषो नानाशास्त्र विशारदाः ।।७।। द्वास्थां प्रोवाच महात्माऽगस्त्यो मुनि सत्तमः ।।८।। महर्षयो वेदविदः० ।। १।१६।। सा तु वेद श्रुतिं श्रुत्वा० ।।२।१७ यस्मात्तु-विश्रुतोवेदः० ।। २।३१ श्रीमान्—वेदस्य० ।।७।।

इति बलस्य महषर्यो -रूपत्वाच्चतुर्वेद मुखाच्च ।।३।।

अनुवाद—वसिष्ठ, कश्यप, अत्रि, विश्वामित्र, गौतम, जमदग्नि, भरद्वाज यह सातों ऋषि ।।६।। वेदों और वेदांगों के महान् विद्वान् नाना शास्त्र विशारद श्रेष्ठ मुनि—अगस्त्य ने द्वार में स्थित मनुष्यों को कहा० ।।८।। महर्षि लोग वेदों के निष्णात० ।।१५।। वह वेदों की श्रुतियां सुन कर० ।।१७।। जिससे अच्छी प्रकार वेद सुना गया ।।३१।। संख्या ७ में वेदों के तीन मंत्र संख्या ३ में चारों वेदों के स्मरण करने का वर्णन है इत्यादि ।

पृष्ठ १७ से २२ तक आप नें सूची लिखी है। किन्तु मूल वेदों में उन में से किसी का नाम नहीं लिखा है किन्तु किसी मनुष्य का भी नाम नहीं। यह ऋषि न कर्ता थे न संपादन कर्ता। किन्तु केवल टिप्पणीकार हुए हैं। और मंत्रों के किनारे पर उन का नाम भाष्य करने के समय आर्य विद्वान् लिख दिया करते हैं। किन्तु मूल में किसी का नाम और चिह्न नहीं है और वह स्वयं हम लोगों की भान्ति वेदों के अनुयायी हुए हैं। ईश्वर से रक्षा चाहता हूं। वह कदापि मंत्र रचियता नहीं थे। अतः यह तो हम मानते हैं कि यह वेदों के साक्षत् करने वाले हैं और ऋषि शब्द के अर्थ भी यही हैं। किसी संस्कृत के प्रमाणिक ग्रन्थ में भी इस आपके दावा का नाम और चिह्न तक नहीं और न आज तक आप जैसों के आक्षेप के अतिरिक्त किसी को भ्रम भी हुआ। किन्तु जिनको आप बदनाम करते हैं वह तो स्वयं वेदों को ईश्वरीय ज्ञान मानते हैं। अतः यह आक्षेप किसी प्रकार ध्यान देने के योग्य नहीं और सर्वथा आधार रहित है पुनः आप फ़रमाते हैं कि

"अतः हम देखते हैं कि पातंजलि अपने योग दर्शन में राजा चंद्रगुप्त का वर्णन करता है और पुनः व्यास जी इस पुस्तक पर भाष्य लिखते हैं। अतः इससे अच्छी प्रकार स्पष्ट होता है कि व्यास जी बुद्ध जी और राजा चंद्रगुप्त के पश्चात् हुए।"

(देखो पृष्ठ ११ पंक्ति १० से १२ तक)

हमने श्रीमान के कारण से व्यास भाष्य सहित समस्त योग दर्शन का अध्ययन किया। कहीं भी चंद्रगुप्त का नाम लिखा न पाया अतः हम श्रीमान को इसके अतिरिक्त अन्य कुछ नहीं कह सकते कि आपनें सत्य पर दोष देने के लिये (मिथ्या विचार से) सर्वथा असत्य भाषण किया। परमेश्वर करे कि आप सत्य की ओर ध्यान दें। सत्य को प्राप्त करें जिससे मनुष्य जीवन को ऐसी बातों से कलंकित न करें मुझे बहुधा निश्चय है कि जिस प्रकार बाईबल वाला, खुदा संसार पर तूफान भेजकर पछताया और मन में दुःखी हुआ और वचन दिया कि मैं भविष्य में ऐसा कार्य नहीं करुंगा।" (पैदायश अध्याय ८ आयत २१, २२ और अध्याय ९ आयत ११ से १७ तक)

पृथ्वी पर मनुष्य उत्पन्न करने से पछताया और दुःखी हुआ। कहा कि मैं उनके बनाने से पछताता हूं। (पैदायश अध्याय ६ आयत ६ से ८)

इसी प्रकार आपको इन मिथ्या आक्षेपों से बहुत दुःखी होना, पछताना और शोक करना पड़ेगा। यदि पक्षपातपूर्ण अभियान ने चाहा तो इन प्रतिज्ञाओं के निकालने के लिए स्वयं प्रार्थना करनी पड़ेगी क्योंकि सच्चाई का आप के पास कोई भी प्रमाण न मिला।

अन्वेषण

अब हम अपने अन्वेषणानुसार ऐतिहासिक विद्वानों के प्रमाणों से संसार का (४००४+१८८७) ५८९१ वर्ष से पूर्व मनुष्यों के निवास का होना सिद्ध करते है। जो वैदिक विद्वानों के अन्वेषण के सर्वथा अनुकूल है

तीन सहस्त्र वर्ष

डाक्टर डब्ल्यू हटंर महोदय बहादुर फरमाते हैं कि तीन सहस्त्र वर्ष से अधिक समय बीता कि ब्राह्मणों ने सूर्य वर्ष की गणना में कुछ आवश्यक पड़ताल की और उसको तीन सौ साठ दिन में विभक्त किया। तथा प्रत्येक पांच वर्ष के समय के पश्चात् एक लोंद का मास अधिक किया। जिससे प्रति वर्ष ५-१।४ फुटकल दिन की गणना यथार्थ हो जाए। ब्राह्मण चंद्रमासों और नक्षत्रों की गतियों और राशियों से परिचित थे और यूनानियों के भारत आगमन से पूर्व अर्थात् ईसा से ३२७ वर्ष पूर्व खगोल विद्या में बहुत उन्नति की थी।

(देखो तारीखे हिन्द पृष्ठ ८५ सन् १८८४ ईस्वी)

चार सहस्त्र वर्ष

लपसी ऐस के कथनानुसार मिश्र के बारहवें वंश की समाप्ति चार सहस्त्र वर्ष पूर्व हो गई।

४६७३ वर्ष

मसीह से २०७ वर्ष पूर्व अति प्राचीन राज्य सेन का था। जिसको यूसिस ऐतिहासिक ने १३१३ ईस्वी में ओलमीज़ प्रथम से पूर्व निश्चित किया है और यह बात निश्चित है कि राज्य काल सहस्त्र वर्ष तक रहा। (२०८९+१८८७+१००=४६७६) (देखो यूनानो इतिहास पृ० १८, १९ सन् १८६५ ईस्वी)

चार सहस्त्र वर्ष

दर तवारीख़ेएशां नविश्ता कि पेशअज़ चहार हज़ार साल बसियार उलमाए नेको शाइस्ता तमामे एशांबजा मीआवुर्दन्द।+

(चीनी इतिहास फ़ारसी पृ० ८६)

४५२३ वर्ष

दरतवारीख़े चीनमस्तूरस्त कि सिफ़ातोअ़मल अबरेशम दो हज़ार शशसद वसी व

+इनके इतिहास में लिखा है कि चार सहस्त्र वर्ष से पूर्व इनके बहुत से धर्मात्मा, सभ्य, पूर्ण विद्वान् हो चुके हैं। (तारीखे चीन फारसी पृ० ८६) (अनुवादक)

शशसाल क़िब्ल अज़्तवल्लुदे ईसा दर चीन मुतआरिफ़ बूद ।+

(२६३६+१८८७=४१२३)

(तारीखेचीन फ़ारसी पादरी एकसोस महोदय द्वारा संपादित कलकत्ता सन १८६४ पृ० ३, ४)

४६०३ वर्ष

ज़िक्रे महमूद वफ़तहे सोमनात । दरां असनाएचश्मे ओ बर बुतख़ाना चंदउफ़ताद कि बा एतक़ादे हनूद अज़ तवारीखे इमारते आंहां चहार हज़ार साल गुज़िश्ता बूद×

(तारीखे फ़रिश्ता पृष्ठ) (४०००+६३०=४६३०)

४५०० लंडन में तीसरे वंश की मिसरी मूर्तियां विद्यमान हैं जो ४३०० वर्षों से अधिक पुरानी हैं। जिससे तूफानें नूह का सन् मिलता है जिनका वर्ष स्वर्गीय बीरूनबंस महोदय बहादुर आदि विद्वान् ४५०० वर्ष बताते हैं।"

५३१३ चतुर्थ मिसरी वंश में भी मीनार, क़बरें और अगण्य मूर्तियां थीं। लपसी ऐसके कथनानुसार यह वंश मसीह से ३४३६ वर्ष पूर्व अथवा आज की तिथि से ३४२६+ १८८७ = ५३१३ वर्ष बीते कि आरम्भ हुआ था।

५००० एक प्रसिद्ध ऐतिहासिक विद्वान् लिखता है कि हमें प्राचीन मिसरी मूर्ति में बहुत सा प्रमाण मिल सकता है जो कि पांचवें वंश की एक क़बर से निकाली गई है। यह मूर्ति ५००० वर्ष की पुरातन है और वर्तमान युगीन फीलाह (कृषकों) के सर्वथा समान है रेती से उस मूर्ति का रूप स्थिर रखा गया है जिसमें अपने फोटो जैसी सुन्दरता है जो अपने निर्माण से पूर्व अपनी इस कारीगरी की उन्नति का युग स्थिर करता है यह तूफाने नूह से पूर्व की मूर्ति हैं और हमें उस युग का परिचय देती है। (देखो मिस्टर पलटन की आंगल पुस्तक पृष्ठ १११)

६००० कालश महोदय (नूह के तूफान के संबंध में) इस प्रकार वर्णन करते हैं कि ज्यालोजी विद्या से ज्ञात होता है कि छे सहस्र वर्ष से अब तक सम्पूर्ण जलमग्न तूफान का होना असंभव है।

११५६१ करनल अलकाट महोदय फरमाते हैं कि:—

"बाईबल के लिखे जाने, यहूदियों की जाति उत्पन्न होने, बेबिन की नींव पड़ने, मिश्र के समाधि स्थान और महास्ततंभ अर्थात् ऊंची शान वाले मीनार के बनने से तथा उस संवत् से ५७०० वर्ष पूर्व (जिसको ईसाई लोग सृष्टि का आरम्भ बताते हैं) आर्य जाति उन्नति की चरमसीमा पर थी तथा

+चीन के इतिहास में लिखा है कि रेशम के कार्य और गुण ईसा के जन्म से २६३६ वर्ष पूर्व चीन में ज्ञात हुए। (२६३६+१८८७=४५२३ वर्ष हुए) (अनुवादक)

×महमूद का वर्णन और सोमनाथ विजय।

इस अवसर में उसकी आँख बुतखाना पर कुछ गुजरी कि हिन्दुओं के विश्वास के अनुसार उसके मन्दिर निर्माण की तिथि को ४००० वर्ष गुजरे थे। (४०००+६३०=४६३०) (अनुवादक)

सर्वोच्च सभ्यता सम्पन्न थी अपनी भाषा और व्याकरण को ऐसा सुधारे हुए थी कि उनकी भान्ति आज तक ऐसा कोई नहीं हुआ यदि मेरी बात का प्रमाण मांना जाए तो मैं यह प्रश्न कर सकता हूं कि संसार के इतिहास में कौन सा समय मिश्र का देश बसने, अरमीनिया के राज्य की आधार शिला का (जो कि सर्वसम्मति से समस्त ऐतिहासिकें के निकट मिश्र की नींव डालने वाला कहा जाता है) नियत हो सकता है। उस ग्रन्थ कर्ता तक भी जिन्होंने प्रथम इस विद्या की खोज की है मीना से लेकर गत फिरऔन तक मनीतों के राज वंश का ठीक समय बताने में दुव्धा में पड़ते हैं जो लोग इस ऐतिहासिक विषय में बहुत अधिक जानकार हैं— वह लिखते हैं कि वह राज वंश मिश्र में मसीह से पांच छे सहस्र वर्ष पूर्व राज करता था। इससे आगे पश्चिम वालों की बुद्धि काम नहीं करती। मिश्र देश सभ्यता और उन्नति में इतना बढ़ा हुआ था कि रनन ऐतिहासिक लिखता है कि उसके (मिश्र के) उन्नति काल को ढूंडने में सिर चकरा जाता है। और बरगस ऐतिहासज्ञ लिखता है कि वह सृष्टि के सत्युग त्रेतादि युगों के समय का बसा हुआ है।"

जब यह बात है तो हमें स्पष्ट रूप से मान लेना चाहिए कि जो समय मिश्र के आबाद होने का सामयिक ऐतहासिकों ने लिखा है—वास्तव में वह ठीक है। क्योंकि किसी को उसके ठीक समय का अनुमान करने का सामर्थ्य नहीं हुआ। इसमें किसी बात पर आपत्ति नहीं कि मिश्र देश की सभ्यता और शिक्षा सबसे प्राचीन है और प्रमाण मिलते हैं कि आठ सहस्र वर्ष व्यतीत हुए तब मिश्र देश प्रबन्ध, धर्म, विधान, राजनीति, रीति, व्यवहारादि में अच्छी प्रकार उन्नति कर चुका था। अब यह प्रश्न हो सकता है कि क्यों आर्यावर्त मिश्र से प्राचीन कहा जा सकता है? इसका उत्तर यह है कि वास्तव में आर्यावर्त मिश्र से बहुत प्राचीन है। मेरा यह कथन पहिले असत्य प्रतीत होगा। किन्तु इसका केवल कारण यह है कि आठ सहस्र वर्ष से इस पुण्य भूमि का कुछ इतिहास नहीं जाना गया है। इससे हमारा अभिप्राय यह है कि पश्चिम देश वालों को ज्ञात नहीं हो सका। क्योंकि ब्राह्मणों में सदैव से काल निरूपण विद्या पृथक् चली आई है। कोई आज तक विश्वस्त प्रमाणों से यह सिद्ध नहीं कर सकता कि उनकी काल निरूपण विद्या मिथ्या है। वर्तमान समय से पूर्व योरूप वालों को भारत वर्ष के सम्बन्ध में कुछ भी ज्ञान न था। अनुमान से यह निश्चित प्रतीत होता है कि आठ सहस्र वर्ष से अधिक व्यतीत हुए कि आर्यावर्त से कुछ लोगों के झुंड (समूह) अपना देश छोड़कर उस देश (मिश्र) में जाकर बसे जिसको अब मिश्र कहते हैं।

ऐतिहासिक बरगस महोदय जो मिश्र के इतिहास लिखने वालों में से सबसे अधिक विश्वस्त है और बहुत पुरातन वृत्तों को जानने वाला है। वह लिखता है कि प्राचीन मिश्री लोगों का आदि उत्पत्ति स्थान आर्यावर्त देश ही है। यकारकजन वंश की यह शाखा जिसको इन्डोजरमनिक वंश वालों से गहरा सम्बन्ध है। एशिया के महाद्वीप से आकर स्वेज़ की डमरू मध्य के पार उतर कर नील नदी के तट पर बस गए। यह यात्रा उस समय हुई जिसका कुछ पता अथवा चिह्न संसार के इतिहासों में नहीं है। तब तक कोई इतिहास लिखा ही नहीं गया।

मिश्र वालों के इतिहास से प्रगट है कि वह संपत् नामी एक पवित्र भूमि से आए जो कि अब ज्ञात हुआ है कि भारत महासागर ही है। उस देश को वह अपने देवताओं का प्राचीन स्थान बताते हैं। आदि स्थान को प्राचीन मिश्र वाले पानटर (पवित्र) बताते थे। अब सिद्ध हो गया कि वह सीना पर्वत

की पवित्र भूमि नहीं है। दारुल्बहरी स्थान में रानी हश्ता की समाधि के पत्रों और छन्दलिखित लेखों के पढ़ने से प्रगट है कि वह पवित्र भूमि भारत है।

बहुत काल तक मिश्री लोग अपनी प्राचीन भूमि से व्यापार करते रहे। उन लेखों में बहुत से राजाओं, फूलों फलों, सोरस और बहुमूल्य लकड़ियों का नाम लिखा है। जो केवल आर्यावर्त के अतिरिक्त और कहीं नहीं होती हैं। इससे सिद्ध हुआ कि मिश्र से बहुत प्राचीन आर्यावर्त है। और आर्यावर्त से ही सारी गणित विद्या मिश्र में गई। बहुत स्थानों पर सिंहल द्वीप का नाम आया है। जो प्राचीन काल में भारत का ही भाग था। (भारत त्रिकालदशा अंग्रेजी पृष्ठ ७६ से ८१ तक प्रकाशन सन् १८८३ मद्रास)

१२०००—सर चारलस लाएल महोदय बहादुर की सम्मति के अनुसार १२००० वर्ष के अन्दर अन्टा के वनस्थ भाग पर कोई बरबाद करने वाले तूफान की घटना नहीं हुई (जैसा कि बाईबल के कथनानुसार नूह के तूफान की घटना(और आदरनी के ज्वालामुखी पर्वत को तराशी गई बनावटें जिन की राख में भस्मीभूत प्राणियों की अस्थियां हैं जिसे अन्टा पर्वत जैसी पूर्ण सीमा प्रगट करते हैं और भी उससे पूर्व की हैं।

१२३१४—मिश्र के लिये एक ऐसी प्राचीनता का वर्णन करना सामयिक सिद्धान्त नहीं है। किन्तु प्रसिद्ध नाम वाले यूनानी दार्शनिक अफ़लातून जो मसीह से ४२७ वर्ष पूर्व हुआ है। अपने समय में मिश्र के निवासियों का वृत्तान्त इस प्रकार वर्णन करता है कि मिश्र में फ़ोटोग्राफी और पत्थर तराशी दस सहस्र वर्ष का समय बोता कि उत्तम शोभा पर थी।" (१००००+४२७+१८८७=१२३१४)

१८०००—फ़ोही के पश्चात् कुछ ऐतिहासिकों का कथन है कि १५ राजा सिंहासनारूढ़ हुए। और सब का राज्य काल लगभग १८००० वर्ष का था। तारीखे चीन जिल्द २ कलकत्ता पृ० ११ सन् १८५२ ईस्वी)

२२०००—इस मन्तव्य की व्याख्या (कि हज़रत आदम से बहुत समय पूर्व मनुष्य की खोज लगाई जा सकती है) के लिये हम अपने पाठकों को स्वर्गीय बेरन बन्स महोदय बहादुर की करूनालाजी का प्रमाण देते हैं। उक्त प्रशंसनीय महोदय संसार में मानवी सत्ता बाईस सहस्र वर्ष से पूर्व की कल्पना करने के पश्चात् तथा नीलोट के परीक्षण के पश्चात् निम्नलिखित तिथियां निश्चित करता है:—

वह काल जब कि मिश्र में लोकराज्य (प्रजातन्त्री राज्य) रहा। मसीह से दस सहस्र वर्ष पूर्व बाईटस जो कि पहला निर्वाचित राजा था। उस समय की सिंहासनारूढ़ता मसीह से नौ सहस्र पचासी वर्ष (९०८५ वर्ष) पूर्व है। निर्वाचित राजा मिश्र में मसीह से सात सहस्र दो सौ तीस वर्ष पूर्व है। मिश्रबाला और पायां में वंशज बादशाह मसीह से पांच सहस्र एक सौ तितालीस वर्ष (५१४३ वर्ष) पूर्व हुए। (देखो नाट एण्ड गोल्डन महोदय की एन्डोजिन्स ईस्टर का पृष्ठ ५८७)

२७५१७—मैंथान नामी मिश्र के पवित्र कार्यालयों के संरक्षक और यूनानी कारीगरी के बहुत प्रवीण नेटोलिमी फ़लीडनफस के काल में जो इतिहास लिखा है। उसमें उल्लेख है कि प्रथम तो देवताओं (विद्वानों) और उसके पश्चात् वीरों (क्षत्रियों) ने बीस सहस्र वर्ष तक क्रम पूर्वक मिश्र में राज्य किया। क्षत्रियों के पश्चात् अन्य लोग मिश्र के राजा हुए। जिनकी मेनथान ऐतिहासिक ने तीस पीढ़ियां

लिखी हैं। मरक्यू रईस के लेख तथा समस्त प्राचीन इतिहास जो मिश्र के मन्दिरों के कार्यालयों में विद्यमान् थे—इस इतिहास के स्रोत हैं।

यदि इन तीस पीढ़ियों को क्रमपूर्वक माना जाए तो इनसे लेकर सिकन्दर महान् के काल तक पाँच सहस्र तीन सौ वर्ष का समय होता है। इसके अतिरिक्त अरट्यूस थीविक के इतिहास में जिसको टोलीमी ऐवजीट्स ने सिकन्दरिया में बुलाया था। थीवस के ३८ राजाओं की सूची क्रमपूर्वक पाई जाती है।

राजा ओरनीस को समस्त ऐतिहासिक मिश्र का पहिला राजा मानते हैं। उसी ने देवताओं की पूजा सम्बन्धी प्रथा चलाई और यज्ञ की रीतियां प्रचलित कीं।

तारीखे मिश्र प्रकाशन १८७० ईस्वी पृष्ठ ७२ से ७५ तक)

३१०००—मिश्र में हज़रत अली ने एक मकान को देखकर कहा कि यह मकान आदम सत्ता से पच्चीस सहस्र वर्ष पूर्व का बना हुआ है। (६०००+२५०००=३१०००)

(देखो तारीखे कशमीर पृष्ठ ७ भाग २)

३००००—एक नक्षत्र विद्या प्रवीण अति विद्वत्तापूर्ण तर्कों से छे सहस्र वर्ष से संसार की उत्पत्ति मानने वाले अर्थात् मुहम्मदी, ईसाई और यहूदियों के खंडन में इस नक्षत्र विद्या की अति विश्वस्त प्रामाणिक पुस्तकों से अन्वेषण करते २ तीस सहस्र वर्ष तक पहुंचा कर कहता है कि संसार इससे बहुत ही प्राचीन है। जो लोग छे सहस्र वर्ष से मानते हैं। वह यदि मेरे तर्कों का खंडन कर दें। तब मैं अन्य अधिक युक्तियाँ इससे बढ़कर प्रमाणार्थ उपस्थित करूंगा। उसने एक अकाट्य तर्कों से इन नवीन मतों के मिथ्या मन्तव्यों का खंडन किया है कि बस समाप्ति ही करदी। (देखो थियोसाफ़िस्ट पत्रिका १५ अगस्त १८८१ ईस्वी पृष्ठ २३८ से २४० तक–दिसम्बर १८८१ ईस्वी पृष्ठ २६२ से २६४ तक और अक्टूबर १८८१ ईस्वी पृष्ठ २२ से २४ तक तथा नवंबर १८८१ ईस्वी पृष्ठ ३४,३५ और दिसम्बर १८८१ ईस्वी पृष्ठ ७२ से ७४ तक और फरवरी १८८२ पृष्ठ १२५ से १२६ तक)

३००००— ज्यालोजी विद्या के प्रवीण विद्वानों ने लिखा है कि प्रत्येक शताब्दी में एक बालू पत्थर कीचड़ चून की परत जमती है। पृथिवी के खोदने से उस परत के नीचे से मनुष्यों की अस्थियां निकली हैं जिस का जम जाना तीस सहस्र वर्ष पूर्व का निश्चित होता है। (देखो मुजहिरुलमज़ामीन पृष्ठ २२६)

४००००—दरहमीं अय्याम ख़बर रसीद कि मदुरम किरात व नारदीन कि अज़ ममालिके सरहद्दे हिन्दोस्तानस्त कलादह मुसलमानी दर गरदन नीं दाख़ता अन्द। व सर अज़ ताअ़तो नक़्यातो शरअ़मुहम्मदी पेचीदा बेशतर बुतपरस्तन्द। सुलतान लश-कर जमअ़ आवुर्दा व अज़ किसम दरूदगर व आहंगरो संगतराश जमए कसीर हम-राह गिरफ़तह रूबा आं दयार नहाद। नख़त क़सदे क़ीरात करदा मुसख़्ख़रात साख़्ता। व ज़ाहिरा क़ीरात जाएस्त सर्द मां बैन हिन्दो तुरकिस्तान मेवा बसियार दारद। व चूं हाकिम आंजा इताअ़त कर्दह मअ़ मुतवत्तिआ़न आं दियार इसलाम आवुर्दा व सुलतान हाजिबअ़ली बिन अरसलाल जाज़िब रा बा तसख़ीर नारदीन फ़िरस्ताद। ओ रफ़्ता

आंजा ए मफ्तूह गरदानीद। चुनांचे बरदा व अमवाले बेशुमार बदस्त उफ़तादा व चूं बुतख़ाना बुज़ुर्ग रा कि दर आं जा बूद–शिकस्तन्द। संगे मनक़ूर व मुनक्कश अज़् आं-जा बैरूं आमद कि बा एतक़ादे एशां अज़् बिनाए आं चहल हज़ार साल शुदा बूद। सुलतान बिंदांजा रफ्ता किला साख्त। +

(देखो तारीखे फ़रिश्ता पृष्ठ ३१ संस्करण नवल किशोर १८६५ ईस्वी पंक्ति १२ से १७ तक बजिक्रे सुल्तान महमूद)

३६०००—निज़ाम बताए मूसा के सम्बन्ध में मख़ज़नुलुलूम नामी पुस्तक में लिखा है कि :—

"दोमफ़लकसवाबत कि जमीअ् कवाकिबे साबिता दर तहतेआं मरकूज़न्द। व आं हरकत मे कुनद अज़् मग़रिब बमशरिक़्--दौराए ओ बकौले क़ुदमा दर सी व शश हज़ार साल तमाम कुनद।" ×

(देखो पृष्ठ २९ प्रकाशित १२७७ हिज्री आफ़ताबे हिन्द)

१,५०,०००—प्राचीनता के संबंध में केवल हिन्दु ही नहीं दम भरते किन्तु प्राचीन जातियों में से एथेंस के निवासी भी यही कहते थे और बाबुल वाले कैंदी डेड़ लाख वर्ष पूर्व तक अपनी ऐतिहासिक घटनाओं के चिह्न देते थे। चीन वाले भी इसी प्राचीनता का दावा करते हैं।

(देखो तारीखे हिन्द १८५२ ईस्वी कलकत्ता पृ० ३)

१,५८,०००— न्यूएयरलैंड भूमि में जो छे सौ फुट गहरी खुदाईयां हुई हैं और पब्लिक वर्क्स की जो खुदाईयां हुई हैं। तथा लूज़ियाना के भागों में जो परीक्षण हुए हैं। जहाँ पर की न्यूएयरलैंडस की अपेक्षा पानी का गहराव अधिक है। न्यून से न्यून दस सरू के वन जो एक दूसरे से जलीय पौदों से विभक्त हैं— वह ज्ञात हुए हैं। जो एक दूसरे के ऊपर सीधी ऊंचाई में विद्यमान हैं इनसे तथा अन्य प्रमाणों से श्रीमान डाक्टर बेनट डूलर महोदय बहादर ने यह अनुमान किया है कि इस डेलटा की आयु न्यून से न्यून एक लाख अठावन सहस्र की है और ऊपरिलिखित खुदाईयां में मानवी अस्थियां जंगल के परत से नीचे पाई गई हैं। जिन से यह सिद्ध होता है कि मसपीज़ियाए के डेलटा में सतावन सहस्र वर्ष से अधिक समय बीता कि वहां मानव जीवन जीवित था।

(देखो पुस्तक टाईपीस पृष्ठ ३३६ से ३६९ तक)

१,८५,००० — यूनान के एक प्रसिद्ध दार्शनिक यूज़ास्प का कथन है कि "नूह के तूफान के समय से एक लाख अस्सी सहस्र वर्ष पूर्व सृष्टि की उत्पत्ति हुई।" (अर्थात् एक लाख पच्चीस सहस्र वर्ष से संसार में मनुष्य निवास करते हैं) (तारीखे कश्मीर पृष्ठ ७ सन् ८३)

+ उपरिलिखित तारीखे फरिश्ता के उद्धरण में किरात को विजित करके उनके मन्दिर तोड़ने और वहाँ के एक पत्थर के सम्बन्ध में लिखा है जो उस मन्दिर में था वह चालीस सहस्र वर्ष पुराना था। किरात को यहाँ कीरात लिखा है जो अब कलातके नाम से प्रसिद्ध है। (अनुवादक)

× दूसरा आसमानी सितारा (सूर्य) कि उसके आधीन अन्य सितारे केन्द्रित हैं। और वह पश्चिम से पूर्व की ओर गति करता है। प्राचीनों के कथनानुसार वह ३६००० वर्ष में पूर्ण करता है।

१८४९०३ अहले फ़ारिसगोयन्द कि दरआं हंगाम हमगी सितारह दर अव्वल हमल बूदन्द ताअकनूं यकलख व हशतादवचार हजार व नोहसद व सेहसाल गुजिश्ता+
(गयासुल्लुगात रदीफ़फ़)

७,०००००— तारीखे ख्वाजगी में हज़रत इमाम जाफ़र सादिक़ से कहा गया है कि हज़रत आदम से पूर्व एक सौ आदम उत्पन्न हो चुके हैं। उनकी सन्तान और सेवक चिरकाल तक संसार में रहे। (तवारीखे कशमीर सन ८३ ईस्वी भाग २ पृष्ठ ८)
(१००+७०=७००००० लाख वर्ष)

२४०००० — ज्यालोजी विद्या में प्रवीण प्रोफ़ैसर डरपियर महोदय कहते हैं कि स्काटलैंड के पुरातन बरफानी ढेरों में मनुष्य की अस्थियां हाथी के जोड़ों के साथ मिलती हैं जिसके संबंध में अच्छी से अच्छी गणनानुसार उनके अस्तित्व का युग दो लाख चालीस सहस्र वर्ष स्थिर होता है मनुष्य जाति का सबसे न्यून काल जो हम नियत कर सकते हैं (वह यह है)
(थियोसाफ़िस्ट पत्रिका अक्टूबर १८७९ ईस्वी पृष्ठ ९ कालिम २)

३,०००००० – जब हम उस युग की गणना करते हैं जिसमें पृथिवी के बड़े बड़े परत हैं और उसमें जिन जिन प्राणियों और वनस्पतियों के चिह्न पाए जाते हैं। वह आगे पीछे उत्पन्न होकर मिटते और नष्ट होते रहते हैं और पुनः उस युग में अपने वर्तमान काल को भी सम्मलित करते हैं तो हमें अवश्य निस्सन्देह स्वीकार करना पड़ता है कि संसार को न्यून से न्यून तीस लाख वर्ष का समय बीता होगा। (रिसाला बाग़वान पंजाब पृष्ठ ३२ जनवरी १८८७ ईस्वी)

४०००००० – बहुत न्यून व्यक्ति हैं जो इस बात का दावा करते हैं कि सम्पूर्ण सृष्टि छे सहस्र वर्ष बीते हुई थी यदि यह सत्य हो कि ख़ुदा ने सबको छे दिन में बनाया और मनुष्य को छठे दिन बनाया तो संसार आदम से पांच दिन बड़ा हुआ। यह कहना कि संसार को बने हुए ६००० वर्ष हुए आदम को बनाया था— सर्वथा मिथ्या और व्यर्थ है। जबकि यह अनुमान लगाया गया है कि केवल पृथिवीस्थ चट्टानों के बनाने के लिए चालीस लाख वर्ष का समय चाहिए।

१,५०,००००० — एक करोड़ पचास लाख वर्ष संसार की प्राचीनता के लिए मध्यम रूप से बताए गए हैं। भारत के बड़े २ नदों के डेलटे मनुष्य की प्राचीनता के लिए बड़े उत्तम प्रमाण हैं मिश्र में नील नदी का डेलटा जो मैटर के एकत्र होने से एक बड़ी मात्रा में बन गया है जो कि अब तक इस प्रकार से बह भी जाता है और एकत्र भी हो जाता है गत तीन सहस्र वर्षों में कुछ भी बढ़ा हुआ प्रतीत नहीं होता।

फ़िरोज के काल में उस डेलटा पर जैसा कि अब विद्यमान है बड़े २ प्राचीन नगर बड़ी जनसंख्या के साथ आबाद थे। जिनकी सभ्यता के लिए उस तिथि से इतना काल चाहिए कि जो हज़रत नूह के तूफान अथवा संसार की उत्पत्ति से संबद्ध बताया गया है।
(देखो टाईपीस आफ़ मेन का एंड संपादित श्री गुलब्डन महोदय बहादर पृष्ठ ३३५)

+ईरान के लोग कहते हैं कि उस समय जब प्रथम गर्भ में समस्त सितारे थे—तब से अब तक एक करोड़ चौरासी लाख नौ सौ तीन वर्ष बीते हैं।

८८८४४००६० तारीखे ख़याई सर आगाज अज़गहयान आफ्रीनश बरसाजन्दा बजोमे एनां ता अमसाल हश्तहज़ार वहश्तसद वहश्ताद वचहारदिन व शस्तसाल सप्रीशुद वहरदिने दहहज़ार साल पिदारन्द । पायम्दगियेआलम सदहजार दिन बूद× ।

(८८८४×१००००=८८८४००००+६०=८८८४००६०)

(आईने अकबरी पृ० २७२ कलकत्ता १८६७ ईस्वी)

डाक्टर बेनट महोदय बहादर फ़रमाते हैं कि जो मानुषी अस्थियां सन्टाज़ के निकट ब्राज़ील के तट पर और झील लेगवासन्टा के तट पर कप्तान ऐलेट साहब बहादर और डाक्टर लिन्ड मयोदय बहादर ने प्राप्त की हैं। वह एक कठोर प्रस्तर के साथ मिली हुई हैं और उन में से प्रत्येक पत्थर बन गई है। उनसे सिद्ध होता है कि अमरीका में मससपी के उलोया से पूर्व था और उन मनुष्यों का भी इतिहास था। क्योंकि प्राणी जगत् की असंख्य नसलें अमरीका में वर्तमान से पूर्व नष्ट हो चुकी हैं। (देखो टाईपीस पृष्ठ ३५० से ३५७ तक)

प्रसिद्ध डाक्टर नाट महोदय फ़रमाते हैं कि आकस्मिक भेद अथवा विशेषताएं जो उत्पन्न होकर बच्चों को माता पिता से लग जाती हैं। और जिससे नई नसलें बन जाती हैं। इस भ्रमात्मक विचार के वर्णन करने के लिये भी हमें कुछ देर सोचना चाहिये। उदाहरण के लिये अफ़रीका के हबशी किसी अन्य जाति की शाखा नहीं हैं, जो कि धीरे २ काले हो गये और जलवायु के प्रभाव से आचार सम्बन्धी और शारीरिक रूप रंग में अन्तर आ गया। किन्तु यह वर्णन किया गया है कि एक बार युगों की क्रान्ति से मूल निवासी छोटे हबशी अथवा ऐसे बहुत से काकेशियन, मंगोलियन अथवा अन्य पतले चर्म वाले माता पिता से उत्पन्न हुये थे और पुनः क्रांति प्राप्त करके सम्पूर्ण द्वीपों की रंगत परिवर्तित कर दी। इसी प्रकार अमरीका में अगण्य मूल निवासी जो द्वीप में पाए जाते हैं और जिन के सम्बन्ध में हमें निश्चय है कि इबराहीम के समय से पूर्व टीले बनाते थे। एक ऐसी जाति की सन्तान हैं, जो आकस्मिक अन्तर से परिवर्तित हो गई। इसी प्रकार प्राचीन चीन, भारत, आस्ट्रेलिया और अवेशनिया इत्यादि के लोग समस्त स्वाभाविक और बौद्धिक परिवर्तनों से आकस्मिक भेद के कारण से भिन्न प्रतीत होते हैं। जो कि आदम और हव्वा से उतरे हैं। क्या मनुष्य का शीघ्र विश्वास करना इस ऊपर के कथन से अधिक और भी परे जा सकता है ? अथवा मनुष्य की बुद्धि इससे अधिक और भी व्यर्थ युक्ति दे सकती ?"

(देखो पुस्तक इन्डोजियंस रीसिस आफ दी आरथ पृष्ठ ४६८ से ५०२)

एक अन्य योग्य अंग्रेज़ दार्शनिक अपनी पुस्तक में लिखता है कि एक तो इस बात का उत्तर बाईबल से प्राप्त हो सकता है। जो प्रगट करती है कि आदम और हव्वा पहिले स्त्री पुरुष थे जिनको खुदा ने बनाया और माननीय पुस्तक बाईबल में उनके बनाने की तिथि वर्तमान काल से छे सहस्र वर्ष से कुछ न्यून अथवा अधिक है। दूसरी और विज्ञान बहुत खुले तर्कों और खोज पूर्ण अन्वेषणों से बताता है कि मनुष्य संसार में बहुत बड़े दीर्घकाल से विद्यमान है और सत्य बताता है कि जहां तक हम ऐतिहासिक रूप से मनुष्य की खोज लगा सकते हैं। उनको पृथक् २ जातियों में पाते हैं। और भिन्न

—तारीख खताई के अनुसार सृष्टि वनस्पति जगत् की उत्पत्ति का आरंभ इनके विचार से अब तक आठ सहस्र आठ सौ अस्सी और चार दिन तथा साठ वर्ष पूरे हुए। और प्रत्येक दिन को दस सहस्र वर्ष समझते थे सृष्टि का रहना सौ हज़ार दिन था।

भिन्न रूपों में यहां तक कि इतिहास काल से पूर्व युगों में उनका पता नहीं लगता। और साथ ही पदार्थ विद्या से यह भी पता चलता है कि भिन्न भिन्न वर्तमान जातियां एक जोड़े से उत्पन्न नहीं हुई हैं।"

भारतवर्ष के पंडित जो चार युग ठहराते हैं। उनमें से वर्तमान युग का नाम कलियुग है। इस युग को हिन्दू कहते हैं कि कई सहस्रों वर्षों से चला आता है। और चार लाख बत्तीस सहस्र वर्ष तक रहेगा। द्वापर जिसके पश्चात् कलियुग आया—उनकी गणना के अनुसार आठ लाख चौंसठ सहस्र वर्ष का था और त्रेता जो द्वापर से पूर्व आया था। कलियुग और द्वापर दोनों के बराबर था। अर्थात् बारह लाख छयानवे सहस्र वर्ष का और सतयुग जो सबसे पूर्व था। इसको कलियुग से चौगुना बताते हैं। यह चारों युग मिल के ४३२०००० वर्ष के सम हैं। और शास्त्रों से यह बात भी ज्ञात होती है कि एक कल्प में इन चारों युगों के सम्पूर्ण वर्षों के बराबर एक सहस्र युग होते हैं। स्पष्ट है कि यह सब गणना नक्षत्रों की भूतकालिक गतियों से संबंध रखती हैं। पृथिवी पर घटनाओं से कुछ सम्बन्ध नहीं। हिन्दु गणितज्ञों ने गणना की कि जब यह युग पूर्ण होते हैं। तब नक्षत्र किसी विशेष रूप पर एक बुर्ज में मिलते हैं। इसलिये उन्होंने इन युगों को संसार का इतिहास ठहराया।

(देखो तवारीख़े हिन्द पृष्ठ ३,४ कलकत्ता १८५२ ईस्वी)

पुन: वही ऐतिहासिक लिखता है कि कलियुग की गणना जो हिन्दुओं ने लिखी है। वह तूफ़ान के पश्चात् जो अन्य जातियां बसी हैं। उनकी यथार्थ गणना के अनुसार ठीक है। इस कारण से हम आर्यों के कलियुग की गणित को ठीक मान सकते हैं।

(तारीख़े हिन्द १८५२ ईस्वी कलकत्ता अध्याय १ पृष्ठ ८)

पुन: वही ऐतिहासिक लिखता है कि आर्यों के इतिहास का आरंभ उस समय से है, जिसका कुछ यथार्थ वृत्तान्त प्राचीनता के कारण ज्ञात नहीं हो सकता है। हां, जब मुसलमानों ने सिन्धु नदी पार करके आर्यावर्त में शक्ति प्राप्त की—उससे आठ सौ वर्ष व्यतीत हुए हैं।

(तारीखे हिन्द कलकत्ता पृष्ठ १)

एक अन्य अन्वेषक फरमाते हैं कि मिश्र का वह बुत जो तूफान से ५००० वर्ष पूर्व से भी अधिक प्राचीन है। हमें उस युग का स्पष्ट वृत्तान्त बताता है। जब कि यदि बाईबल सच्ची है तो आदम जीवित थे। किन्तु तो भी उससे बहुत पूर्व हम राजाओं को मिश्र में शक्तिशाली और राज्य करते हुए पाते हैं। (५०००+५५०००=१००००)

क़ाहिरा की एक सुरंग में मिश्र के सहस्रों राजाओं की लाशों के सन्दूक उनकी वंशावलियों समेत प्राप्त हुये। जो आदम के अस्तित्व से पूर्व हो चुके थे।

(देखो तवारीखे काशमीर भाग २ पृष्ठ ८ सन् १८८३)

अब इतने प्रमाणों के पश्चात् हम विद्वानों की सेवा में निवेदन करते हैं कि यद्यपि हमारी विद्या सम्बन्धी ऐतिहासिक लाखों पुस्तकें इसलाम के अत्याचारी हाथों से अग्नि भेंट हो चुकी हैं। और सैंकडों पुस्तकालय हमारे रक्तपात की ज्वाला और अत्याचार को आंधी ने आर्यावर्त के भिन्न भिन्न नगरों में जलाये और विनष्ट किये।

(देखो तारीखे हिन्द कलकत्ता पृष्ठ ११८,२०२ सन् १८५२
और
तारीखे फरिश्ता में अत्याचारियों के आक्रमण)

किन्तु अब तक भी बहुत कुछ ढूंढने से प्राप्त हो सकता है। परमात्म की कृपा से और श्रीमान् स्वामी दयानन्द जी के १३,१४ वर्षों के सदुपदेशों से आर्य लोग सत्य पर पुनः स्थिर हुए। और समाजें दिन प्रतिदिन उन्नति पर हैं। और जी जान से प्राचीन पुस्तकों की खोज में संलग्न हैं। पूर्ण निश्चय है कि अधिक खोज करके उत्तम, यथार्थ, पूर्ण पुस्तकों से एक खुली व्याख्यात इतिहास शृंखला निर्माण कर दें। क्योंकि हम देखते हैं कि सत्य वेदोक्त धर्म का दिन प्रतिदिन अधिक प्रकाश होता जाता है। और जहां तक अन्वेषण अधिक होगा। सत्य बढ़कर उदय होगा।

श्रीमान् पादरी महोदय! हमने कुछ दिनों की खोज से समय न निकाल सकने पर भी लगभग नौ करोड़ वर्ष तक विधर्मियों और अन्वेषकों, ऐतिहासिकों, दार्शनिकों तथा विद्वानों के प्रमाण लिख दिये हैं कि संसार इससे भी प्राचीन है। युधिष्ठिर तथा महाभारत युद्ध के सम्बन्ध में यदि नाम, पितृनाम, वर्ष मास के राजाओं की सूची देखना चाहो तो सत्यार्थप्रकाश प्रकाशन सन् १८८४ के पृष्ठ ९० से ९४ तक विद्यमान है देख लीजिये।

हम अन्य खोजों में भी संलग्न हैं। किन्तु आपका भी धन्यवाद करते हैं जिन्होंने एक आक्षेपात्मक पत्रिका लिखकर हमें अन्वेषण का साहस दिलाया।

यद्यपि हमने यह प्रत्येक प्रकार से सिद्ध कर दिया है कि युधिष्ठिर व्यास को हुए ४९८८ वर्ष से किसी अवस्था में न्यून समय नहीं बीता। और साथ ही इस बात के खंडन में कोई न्यूनता नहीं छोड़ी कि संसार ५८९१ वर्षों से नहीं है। किन्तु नौ करोड वर्षों से भी पूर्व का है। हम एक आदम व हव्वा से कदापि नहीं है। किन्तु बहुत स्त्री पुरुष परमात्मा ने आरंभ सृष्टि में उत्पन्न किए। और यही बात समस्त योग्य विद्वानों के प्रमाणों से स्पष्ट है। हमारी ओर से इससे अधिक कथन की आवश्यकता नहीं। मसीही गिरजाघर की नींव की ईंट एक आदम हव्वा और ५८९१ वर्ष से उसकी उत्पत्ति और पापाचारी है और इसी पर समस्त प्रलोभन कारी तथा सलीबी भवन निर्माण जारी है। यदि नींव ही स्थिर नहीं तो भवन का रहना असंभव है अतः प्रत्येक बुद्धिमान् पुरुष को विचार करना चाहिए कि ईसाई दीन की क्या अवस्था है? यदि हमें कुछ समय मिला तो इससे अधिक किन्तु सहस्र गुणा बढ़कर हम गलतियों पर निरन्तर प्रकाश डालेंगे। क्रम पूर्वक उनकी वास्तविकता और योग्यता को यथा संभव हम मसीही भाईयों की मेज़ पर धरेंगे। हे परमात्मन्! सत्य का प्रकाश कर।

मन आंचे शर्तें बलाग़स्त बा तो मे गो यमं।
तो ख़ाह अज़ सुख़नम पिनद गीरो ख़ाह मलाल॥×

टिप्पणी

अब हम दूसरे व्याख्यान की ओर ध्यान देते हैं।

(लेखराम आर्य पथिक)

× मैं जो कुछ पहुंचाने (उपदेश) की शर्त है—तुम से कहता हूं तू चाहे मेरे वचन से उपदेश ग्रहण कर और चाहे रंज (दुःख)। (अनुवादक)

व्याख्यान नं० २ का उत्तर

पाठक वृन्द ! यह पादरी जी के व्याख्यान संख्या २ का उत्तर है। जिसमें उन्होंने परमेश्वर के सम्बन्ध में अपने विचार से वेदों की खोज की है। जिसको वह बुरे और हृदयभंजक शब्दों से आरंभ करते हैं। जैसे—आर्य बहुत ही व्यर्थ गन्दा दावा करते हैं और स्वीकार करते हैं कि इन पर उनका ईमान है।" (पृष्ठ २ पंक्ति १४)

"केवल दावा ही उनके विश्वास का सहारा है।" (पृष्ठ २ पंक्ति १६)

"आर्य अपनी पवित्र पुस्तकों की शिक्षा की कुछ प्रतिष्ठा नहीं करते।" (पृष्ठ २ पंक्ति १६)

"क्या ऐसा निराधार मत थके हृदय को सन्तोष दे सकता है?" (पृष्ठ २ पंक्ति १६)

इत्यादि इत्यादि।

यह पादरी जी के प्रेम भरे शब्द मसीही शिक्षा के नमूना हैं। जो आर्यों के सम्बन्ध में प्रमाण के विना लिखे गये हैं। निस्सन्देह उनके वास्तविक मुक्तिदाता (मसीह) की ऐसी ही प्रेरणाएं हूंगी ? क्योंकि वह स्वयं ही इञ्जीलों में ऐसा ही फ़रमाता है।

"उसने उन्हें उत्तर देके कहा कि इस ज़माने के बद और हरामकार लोग निशान (चमत्कार) चाहते हैं।"

हे कपटियो ! तुम आसमान की सूरत को पहचान सकते हो परन्तु समयों के चमत्कार नहीं जान सकते। इस जमाने के बद और हरामकार लोग निशान ढूंढते हैं।" (मती अध्याय १२,१६)

यद्यपि इनके ऐसे शब्दों से स्पष्ट प्रगट है कि वह किस प्रकार की प्रेम पूर्वक खोज करते हैं और सत्य से भी उन्हें कितना प्रेम है ? किन्तु पुनरपि हमें नियम ४ के अनुसार उन आक्षेपों पर विचार करना आवश्यक है।

पादरी—४-१४—खुदा प्रेम है। हम अपने चारों ओर प्रत्येक दिशा में इस बड़ी सत्यता की साक्षी पाते हैं। हमारा अपना मन हमें इस बात से मनवा रहा है कि यह प्रेम हमें इसलिये प्रदान नहीं किया गया कि मनुष्य जाति इसकी पात्र है, किन्तु वह एक दयापूर्ण दान है। और न इसलिये कि हम इसके पात्र हैं किन्तु इसलिये कि खुदा दयालु और कृपालु है।

आर्य—ईश्वर और उसका प्रेम एक ऐसा मन्तव्य है जिसके प्रत्येक अंग को हमें बड़े ध्यान से विचारना चाहिये। परमात्मा के सम्बन्ध में मनुष्य बहुत सी बातों के समझने में भूल करता है और यह भूल उसके आत्मिक अंधकार का हेतु है। प्रेम एक कार्य है और वह किसी कारण के विना नहीं होता। इस स्थान पर स्वभावतः प्रश्न उपस्थित होता है कि परमेश्वर ने हमसे क्यों प्रेम किया ? और उसका कारण क्या है ? कि वह अमरीका के वहशियों, न्यूजीलैंड के जंगलियों, अफ़रीका के हबशियों और भारत के भीलों गोंडों से ऐसा प्रेम नहीं करता। और वह बात तो प्रत्येक बुद्धिमान् की मानी हुई है कि प्रत्येक कार्य का कोई न कोई कारण अवश्य है।

अतः सर्वज्ञ परमात्मा के प्रेम का कोई न कोई कारण अवश्य होना चाहिए। यदि कहें कि प्रेम उसका स्वभाव है और किसी कारण के विना है। तो यह ज्ञान और अनुभव के विरुद्ध होने से मिथ्या है। हम देखते हैं कि सुखियों की अपेक्षा दुःखी अधिक हैं। डाक्टरों की अपेक्षा रोगी अधिक हैं। उपासकों की अपेक्षा छली कपटी अधिक हैं। क्या कोई बुद्धिमान् कह सकता है कि खुदा ने उनसे प्रेम किया।

कृपा की—दया की। कदापि नहीं। क्योंकि प्रेम अत्याचार नहीं और न प्रेम ज़हमत है। अब देखना चाहिए कि इसका कारण क्या है ? जिस प्रकार उसका प्रेम माना हुआ है। उसी प्रकार उसका न्याय भी समस्त सत्य प्रेमियों को माननीय है। पुनः ऐसे व्यर्थ विचारों को दूर करके हमें ऐसा सोचना चाहिए कि ईश्वर के गुणों में भी विरोध न आए और सत्य धर्म का प्रकाश तथा सच्चा प्रेम प्रगट हो जाए। उसके प्रेम को भी सामान्य बनाओ और न्याय को भी समान्य। हमारे लिए चंद्रमा, सूर्य, भूमि, वायु, जल, अग्नि, अन्नादि कितने ही प्रकार के पदार्थ उत्पन्न किए, यह उसका प्रेम है। हमारे कर्मानुसार सुख दुःख फल देता है। हमारी शरीर रचना हमारे कर्मानुसार बनाई। यह उस समय का न्याय है। वह अवश्य हमारे कर्मानुसार फल देता है। क्योंकि न्यायकारी है। दोषी को दंड न मिलने से उसके दोष अधिक बढ़ जाते हैं। और दोषों का अधिक बढ़ना सत्य का सत्यानाश होता है। कि शरारत करना सत्य से शत्रुता करना है। अतः प्रेम कर्मों से सम्बद्ध नहीं किन्तु शारीरिक रचना दुःख सुख आदि कर्मों से सम्बद्ध है।

जैसा कि बाईबल भी प्रायः कई स्थानों पर इसको स्वीकार करती है।

हे ख़ुदावन्द ! तेरे नाम क्या बड़े हैं ? तेरे कार्य बहुत गहरे हैं। मूर्ख मनुष्य नहीं जानता और मूर्ख उसे नहीं समझता जबकि बुरे घास की भान्ति–उगते हैं। और सारे बुराई करने वाले लहलहाते हैं। तो यह इसलिए हैं कि वह नष्ट हो जावें।" (जबूर ९२।४-६)

पुनः लिखा है कि—

"ऐसा करना तुझसे दूर है कि पुण्यात्मा को दुरात्मा के साथ मार डाले। और नेक बद के समान हो जाए। यह तुझसे असंभव है। क्या समस्त संसार का न्याय करने वाला न्याय न करेगा।"

(पैदायश १८।२५-२६)

पुनः लिखा है कि :—

"क्या ख़ुदा अन्याय करता है या सर्वशक्तिमान् न्याय से भटकता है ?" (अयूब ८।४)

पुनः लिखा है कि—

"बुद्धिमान् लोगो ! तुम सुन रखो कि खुदा से कदापि नहीं हो सकता है कि वह शरारत करे और यह कभी नहीं कि सर्वशक्तिमान् बुरा करने वाला बने। क्योंकि वह प्रत्येक मनुष्य को उसके कर्मानुसार फल देता और प्रत्येक मनुष्य से उसकी चाल के अनुसार व्यवहार फरमाता है। निश्चय से खुदा असत्य नहीं करता। और सर्वशक्तिमान् न्यायालय में रुकावट नहीं डालता।" (अय्यूब ३४।१०)

पुनः लिखता है कि—

"तब प्रत्येक को उसके कर्मानुसार परिपाक देगा। (मत्ती २७।२८)

पुनः लिखा है कि—

"देख ! मैं शीघ्र आता हूं और मेरा फल देने का कार्य मेरे साथ है जिससे प्रत्येक को उसके कर्मानुसार फल दूं। मैं अलफा, और उमेगा, प्रारम्भ और अन्त, प्रथम और अन्तिम हूं। वे लोग धन्य हैं। जो उसकी आज्ञाओं पर आचरण करते हैं।" (मुकाशफात २२।१२-१४)

पादरी—७—आर्य मत की शिक्षा से स्पष्ट होता है कि खुदा मनुष्य को मूल्य के विना कोई वस्तु मुफ्त नहीं देता। जो कुछ उसको मिलता है। उसके कर्मों का फल मिलता है।

आर्य—निःसन्देह यही हमारा सिद्धान्त है और इसी सिद्धान्त पर सत्य धर्म की नींव है। सुपात्र को उचित पारितोषिक वितरण फ़रमाना और कुपात्र को वंचित रखना ठीक ईश्वरीय न्याय है। जिसमें कहीं का अत्याचार नहीं। शोक कि भोगी लोग चोरी करते हैं। दुराचार के अभ्यस्त हैं। दुश्चलन उन के मन में बसा हुआ है। और उस पर मसीह आदि के प्रायश्चित पर विश्वास रख कर छुटकारा की आशा रखते और शरारत में फंसे होते हैं। किसी के कथनानुसार—

गुनाह मरागर न बूदे शुमार।
तुरानाम कै बुदे आमुर्ज़गार॥+

किन्तु यह सिद्धान्त ठीक नहीं। बौद्धिक तर्कों के आगे इसका अंग २ कट जाता है। जब न्यायालय के तराजू में पत्थर नहीं और न्याय के आगे मित्र शत्रु में भेद नहीं। अतः ऐसे स्वार्थियों और भ्रमित आशा पर कटिबद्ध लोगों का क़ाफ़िया सरासर तंग है। और इस बात में बाईबल भी वेद की अनुयाई प्रत्युत प्रत्येक प्रकार से अनुसरण कर रही है। देखो "न प्रत्येक जो मुझे खुदावन्द खुदा कहता है। आसमानी राज्य में शामिल होगा। किन्तु वही जो मेरे बाप को इच्छानुसार जो आसमान पर है—आचरण करता है। उस दिन बहुतेरे मुझे कहेंगे कि हे खुदावन्द!! क्या हमने तेरे नाम से नबुव्वत नहीं की और तेरे नाम से देवों (भूतों) को नहीं निकाला और तेरे नाम से बहुत सी करामात प्रगट नहीं कीं और उस समय मैं उनसे स्पष्ट कहूंगा कि मैं कभी तुम से परिचित न था। और हे बदकारो मेरे पास से दूर हो।" (मती ७।२१-२३)

और इसी प्रकार मती ८।२४ से २८ तक तथा लूक़ा ६।४६ से ४६ तक और मती १३।१२।

जिससे स्पष्ट सिद्ध होता है कि बड़ी बड़ी नबुव्वतें, करामातें चमत्कार दिखाने वाले और जिन-भूतों के निकालने वाले तथा मानने वाले भी जिनके आचरण ठीक नहीं होंगे, दुरात्मा माने जाकर नरक में डाले जाएंगे। चाहे वह बपतिस्मा पाए हुए हूं। यह क्योंकर होगा कि आजकल के पादरी या ईसाई या केटीकिस्ट लोग जिनकी मुक्ति या खुदा तक पहुंच बाईबल के कथनानुसार किसी प्रकार भी संभव नहीं कि मुक्ति प्राप्त कर लें। न्यायकारी परमेश्वर न्याय से कभी नहीं चूकेगा।

पादरी—७—इसके अतिरिक्त इससे यह भी पाया जाता है कि मनुष्य केवल अपने कर्मों का फल ही नहीं पाता—किन्तु वही कर्म करता है जो परमेश्वर ने उसके लिए नियत किए हैं। यहां तक कि उनको इच्छा और अपने कार्यों पर किसी प्रकार की स्वतन्त्रता नहीं।

आर्य—यह विचार सर्वथा मिथ्या है। और सच्छास्त्रों के विरुद्ध होने से बुद्धिमानों के मानने के योग्य नहीं। जैसा कि वेद में आज्ञा है कि—

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः।
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे॥ (यजु० ४०।२)

परमेश्वर आज्ञा देता है कि मनुष्य सौ वर्ष पर्यन्त जब तक जोवित रहे तब तक कर्म करता हुआ जीने की इच्छा करे।

अतः केवल हम ही आपकी सम्मति के विरुद्ध नहीं। किन्तु समस्त ऋषि मुनि यहां तक कि स्वयं

+मेरा यदि पाप गिनती में न होता तो तेरा दयावान् नाम क्यों कर होता। (अनुवादक)

जगत् पिता परमात्मा इस विश्वास के विरुद्ध प्रेरणा देता है। कि मनुष्य कर्म करने में स्वतन्त्र है। इसी लिए सुख दुःख है। इस आधार पर आपका वचन किसी प्रकार विश्वसनीय नहीं।

पादरी—७, ८—इस बात के कारणों में निम्न वाक्यों का प्रमाण दिया जाता है। शारीरिक अध्याय २ पाद ३ सूत्र १७,४१,४२,४४ वचन से स्पष्ट २ यह शिक्षा प्राप्त होती है कि मनुष्य को यों ही कुछ नहीं मिलता। जो कुछ उसे दिया जाता है। उसके अपने अधिकार में नहीं हैं। किन्तु ईश्वर से नियत हो चुके हैं इस शिक्षा की दृष्टि से यह जानना कि खुदा प्रेम हो सकता है—बहुत ही कठिन है।

आर्य—हज़रत ! इसमें आपने पूर्ण भूल की और सोचे समझे बिना न्याय और सत्य की ओर से आँखें मूंद कर यह सम्मति स्थिर की। हम मूल सूत्र अनुवाद सहित लिखते हैं। ध्यान से पवित्र स्वाध्याय करें।

नात्मा श्रुतेनित्यत्वाच्चताभ्यः। (वेदान्त २।३।१७)

परात्तु तच्छ्रुतेः। (वेदान्त २।३।४१)

कृतप्रयत्नापेक्षस्तु विहित प्रतिषिद्धोवैयर्थ्यादिभ्यः॥ (वेदान्त २।३।४२)

१७— जीवात्मा की उत्पत्ति नहीं है। क्योंकि नहीं सुनी गई। अतः वह नित्य है। श्रुतियां इसे अविनाशी कहती हैं।

४१—में प्रश्न है कि जीव के कर्म ब्रह्म से सुने गए। यदि ऐसा है तो ईश्वर पर अत्याचार का दोष लगता है। जबकि ईश्वर ऐसा नहीं है।

४२—इस सूत्र ४१ के प्रश्न का उत्तर है कि जो कर्म गतजन्मों में अथवा पूर्व किए गए हैं—उनकी अपेक्षा से है वह नूतन कर्म नहीं किन्तु गत कर्मों का फल है। पाप पुण्य का दुःख सुख रूप फल दाता ईश्वर है। अतः पक्षपात और अत्याचार उस पर घट नहीं सकता अन्यथा वेद में वह निषेध की आज्ञा न देता।

व्यास जी ने इस शंका का कि जीव ब्रह्म का अंश है सूत्र नं० ४३ में उत्तर दिया है। कि ब्रह्म का अंश नहीं है। भिन्न स्वभाव के कारण, दासवत्।

नं० ४४ सूत्र को नंबर ४३ की सिद्धि में उपस्थित किया है कि वेद में भी यह वर्णन है कि वह ब्रह्म का अंश नहीं।

पादरी ने इन प्रत्येक चार सूत्रों का बुरे प्रकार, क्रमरहित, नियम विरुद्ध रूप से, वास्तविक नहीं केवल कृत्रिम अनुवाद लिखा है। हज़रत को यह भी ज्ञात नहीं कि कौन सूत्र शंका और कौन उसका उत्तर है?

पाठक वृन्द ! स्वयं ही सत्यासत्य में विश्लेषण कर सकते हैं कि पादरी जी शास्त्र की खोज में कहां तक सच्चे हैं? यहां पर उचित है कि नमूना के रूप में कुछ बाईबल के खुदा के अत्याचारों और अन्यायों का प्रकाश किया जाए।

तब नूह बोला कि कनआन लानती हो वह अपने भाइयों के दासों का दास होगा।

(पैदायश ६।२५)

क्योंकि मैं खुदावन्द तेरा गर्वील्लाह खुदा हूं और बाप दादों की बदकारियां इनकी सन्तान पर जो मुझ पर शत्रुता रखते हैं—तीसरी चौथी पीढ़ी तक पहुंचता हूं। (खुरूज २।५,६)

और जब अभी लड़के उत्पन्न नहीं हुए और न पुण्यपाप कर्ता थे कि जिन पर खुदा की इच्छा जो कामों पर नहीं किन्तु बुलाने वाले पर निर्भर है—स्थिर है। जब ही उस से कहा गया कि बड़ा छोटे की सेवा करेगा। जैसा कहा गया है कि मैंने याकूब से प्रेम रखा और ईसू से शत्रुता। (यहां तक लिख कर हज़रत पौलुस संक्षिप्त रूप से स्वीकार करते हैं कि) अतः हम क्या कहें ? क्या खुदा के यहां अन्याय है ? (यहां इस अत्याचार से स्पष्ट रूप से स्वीकार करना पड़ा कि कैसी चालाकी से टालते हैं) कि ऐसा न होवे कि वह मूसा से कहता है कि जिस पर दया किया चाहता हूं। उस पर दया करूंगा और जिस पर क़हर करना चाहता हूं उस पर क़हर (अत्याचार) करूंगा। अतः यह ना चाहतियों से न दौड़ने वाले किन्तु दयालु खुदा पर निर्भर है। क्योंकि पुस्तक में वह फिरऔन से कहता है कि मैंने तुझे इसलिए बरबाद किया है कि तुझ पर अपनी क़ुदरत प्रगट करूं और मेरा नाम समस्त भूमंडल पर प्रसिद्ध होवे। अतः जिस पर वह चाहता है—दया करता है और जिसे चाहता है—कठोर करता है।

(रूमियों की पत्री ९।११-१८)

किन्तु खुदावन्द ने फिरऔन के हृदय को कठोर कर दिया। उसने उनका जाना न चाहा।

(खरूज १०।२७)

जब फरिश्ते ने अपना हाथ बढ़ाया कि यरोशलम को बरबाद करे तो खुदावन्द बदी करने से पछताया। और दाऊद ने जब इस फ़रिश्ते को जो लोगों को मारता था देखा तो खुदावन्द को कहा—देख—पाप तो मैंने किया और दोष मुझ से हुए, परन्तु इन भेड़ों का क्या दोष ? (देखिये सर्वथा खुदा के अत्याचार और अज्ञानता का स्वीकरण है) (समवाईल २ २४।१६-१७)

पुनः लिखा है कि—

"कौन है जो कहता है और वह होता है। जिस समय खुदावन्द ने इसकी आज्ञा नहीं दी। क्या अल्लाह तआला के मुख से भला और बुरा नहीं निकलता ?" (यर्मियाह ३।३७-३८)

पुनः लिखा है कि—

मैं ही प्रकाश का निर्माता हूं और अंधेरा उत्पन्न करता हूं। मैं शान्ति को बनाता हूं और दुःख को उत्पन्न करता हूं। मैं ही खुदावन्द इन सभों का निर्माता हूं। (यशाया ४५।७)

इन सारी आयतों पर विचार करने से प्रत्येक समझदार बुद्धिमान् मनुष्य जान सकता है कि बाईबल खुदा पर क्या क्या दोष लगाती है ? और किन किन दोषों और पापों का इसे स्रोत बताती है ? बाईबल मनुष्य को चोर ठहराती है। और पाप करने पर इसे निर्दोष बताती है। भला, इससे बढ़कर पाप प्रसारिणी शिक्षा और कहां होगी ? इसके साथ ही देखो यूहन्ना की इन्जील १।२।

पादरी—यदि वास्तव में उसका हमारे साथ प्रेम होता। और हमसे अच्छे काम न करवाता। जिससे हमें उनका फल देता। किन्तु हम देखते हैं कि ऐसा नहीं है आर्य के कथनानुसार प्रतीत होता है कि वह कुछ से पाप कराता है और कुछ से पुण्य। अतः हम किस प्रकार मानें कि खुदा प्रेम है।

आर्य—यह आपके समस्त आक्षेप बाईबल की शिक्षा से आंख फेरना और उपेक्षा वृत्ति रखना है। हम भी पूर्व ही इसका पुण्योत्तर स्वयं बाईबल से देख चुके हैं। कि यह पुण्यमय शिक्षा इन्जील की है न कि वेद की। जैसे निष्पाप मसीह को ईसाईयों के कथनानुसार फांसी दिलाई। और उसके रोने धोने पर इस निर्दयी अत्याचारी को कुछ भी दया न आई। (देखो मती २६।३६-४५)

जिसमें मसीह के रोने और दुःखी होने का विस्तृत वर्णन है। कि मेरा मन बहुत दुःखी है। मेरी मृत्यु की सी दशा है। इस वाक्य से घबराने और परेशान होने का अनुमान हो सकता है।

इस प्रकार योहन्ना की इञ्जील १२।२७।

"अब मेरी जान घबराती है और मैं क्या हूं ? हे पिता मुझे इस घड़ी से बचा।"

पतरस, याकूब और योहन्ना को अपने साथ लिया और घबराने तथा बहुत उदास होने लगा। और उनसे कहा कि मेरी आत्मा का दुःख मृत्यु का सा है। तुम यहां ठहरो और जागते रहो। और वह थोड़ा आगे जाकर पृथिवी पर गिरा और प्रार्थना की कि यदि हो सके तो यह घड़ी मुझ से टल जाए।

और कहा है कि—

हे पिता सब कुछ तुझ से हो सकता है, इस प्याला को मुझ से टाल दे। (मरकस १४।३४-३६)

करे ज़ैद और दण्ड भागी बने उमर। दुराचार खालिद करे—आतशिक वलोद को हो। चोरी करे इब्राहीम और चोरी कराई याकूब ने—किन्तु तीन वर्ष का दंड महमूद और ईसा को हो।

अतः यह सरासर अंधेर और अत्याचार बाईबल पर चस्पां हो सकता है। न कि "ईश्वर रक्षा करे" वेद मुकद्दस पर।

देखिये, पाप पुण्य का विवेचन प्राप्त किया आदम ने और सिखाया शैतान ने (यद्यपि इञ्जीलो खुदा करता रहा) किन्तु सर्वसाधारण मनुष्य समाज जिसने पाप नहीं किया—दोषी ठहराया गया। करे एक, पकड़ा जाए सारा संसार। इससे भी बढ़कर पाप भूमंडल पर न कभी हुआ और न होगा। बस यह शिक्षा कहां से मिलती है ? और इस अन्याय का निकास स्थान (स्रोत) कौन सा है ? किस पुस्तक से ऐसे निराधार दोष ईश्वरीय सत्ता पर लगते हैं ? इन सबका उत्तर यही है कि बाईबल ! बाईबल !! बाईबल !!!

अतः आवश्यक है कि इसकी शिक्षा से उपेक्षा करें और लोगों को इस घातक रोग से सुरक्षित करें।

पादरी—८—९—किन्तु एक और इनसे बढ़कर शंका है जो अभी हम उपस्थित करेंगे। आर्यों की पुस्तकों में यह लिखा है कि परमेश्वर ही स्वयं प्रत्येक वस्तु है। इसके अतिरिक्त अन्य कुछ नहीं। जो कुछ दिखाई देता है वह माया है। प्रत्येक स्थान और प्रत्येक वस्तु में ब्रह्म रच रहा है और केवल ब्रह्म ही है। यदि वह सब कुछ स्वयं है ? तो उसका प्रेम अपने प्राणियों पर असंभव है जो कि निम्न वाक्यों से प्रगट है कि इस विषय पर इन पवित्र पुस्तकों की क्या शिक्षा है ?

संख्या १—शारीरिक २।३।४३
संख्या २—शारीरिक २।३।४४
संख्या ३—भगवद्गीता १३।१५
संख्या ४—गोपथब्राह्मण

यह वह सिद्धान्त है जो व्यास जी ने वेदों और गीता को अपना प्रमाण मानते हैं और ऋग्यजुःसामाथर्व वेदों का प्रकाश सूक्त हम ऋग्वेद के पुरुष सूक्त से प्रमाण देंगे।

आर्य—शोक कि पादरी जी स्वयं ही पृष्ठ ९ पंक्ति ५,६ में इसका खंडन करते हैं। जैसा कि वह लिखते हैं कि—

"आर्य इस बात से परिचित हैं। इसी से बड़े जोर शोर से इस बात का (खुदा खुद प्रत्येक वस्तु है) इन्कार करते हैं। इनका (आर्यों का) वचन है कि यह जीव और विद्यमान सब वस्तुएं इससे पृथक् पदार्थ हैं।" यद्यपि बुद्धिमानों का नियम है कि मन्तव्यों पर शंका किया करते हैं। किन्तु इनके आक्षेपों का उत्तर देना आवश्यक है।

आर्य धर्मोपदेशक श्री स्वामी जी महाराज ने बहुत प्रबल प्रमाणों से (वेदान्ती ध्वानित निवारण पुस्तक में) ब्रह्म की एकता का खंडन किया है। और उसकी घृणित शिक्षा परिणामों से अपरिचित लोगों को बचाया। इसके अतिरिक्त सत्यार्थप्रकाश के पृष्ठ १६३ से ३०० तक और पृष्ठ २८८ से २६६ तक भी विस्तार से इसका खंडन किया। शेष प्रमाणों की हम विस्तार से व्याख्या करते हैं।

संख्या (१) शारीरिक सूत्र का वास्तविक अर्थ पूर्व लिखा गया है।

संख्या (२) का अर्थ भी पीछे लिख चुका हूं।

संख्या (३) भगवत् गीता स्वामी जी के प्रामाणिक ग्रन्थों में नहीं है। आपने प्रतिज्ञा हानि की है। (देखो व्याख्यान संख्या १ पृष्ठ ६)

संख्या (४) गोपथ ब्राह्मण का कोई प्रमाण, वाक्य, पता आपने नहीं लिखा। जहां तक हमने पड़ताल की, गोपथ में ऐसा वर्णन नहीं है।

व्यास जी ने गीता को अपना प्रमाण नहीं माना। हां, वेदों को माना है। किन्तु वेदों में जीव ब्रह्म की एकता का खंडन है। समस्त सूक्त का जो ऋगादि वेदों में वर्णन है। पादरी जी ने उनका अर्थ सर्वथा नहीं समझा अन्यथा ऐसा कदापि न लिखते। कि इन मंत्रों से जीव ब्रह्म की एकता प्रगट होती है। स्वयं पुरुष शब्द ही जगत् और ब्रह्म को पृथक् सिद्ध कर रहा है, अर्थात् जो समस्त जगत् में व्यापक है। वही पूर्ण पुरुष परमात्मा है। इसी सत्य पुरुष ने सूर्य चंद्रादि लोकों और मनुष्य पशु आदि को उत्पन्न किया। किन्तु जीव और प्रकृति इसकी अपार शक्ति में सदा से विद्यमान थीं। वह पूर्ण कर्ता पुरुष स्वयं न जीव बना और न जगत्। किन्तु ब्रह्म जीव नहीं और जीव ब्रह्म नहीं। तीनों पृथक् हैं और व्याप्य व्यापक, सेव्य सेवक सम्बन्ध रखते हैं। किन्तु शोक कि जो आक्षेप पादरी जी ने हम पर किया। उससे सहस्र गुणा बढ़कर बाईबल में विद्यमान है। (विस्तार देखो सदाकते ऋग्वेद)

और पुरुष सूक्त का अनुवाद देखो भूमिका पृष्ठ ११८ से १२४ तक।

पादरी—१३, १४—हम वेदों से प्रमाण तो उपस्थित कर चुके। अब हम दिखाएंगे कि प्राचीन काल के बड़े २ पंडित इन्हें किन अर्थों में लेते थे।

(१) शारीरिक २।१।१३-१४
(२) शारीरिक १।४।१८,२४
(३) श्वेताश्वतरोप० ४।२,३
(४) तैतिरीय ब्राह्मण पृष्ठ ८३
(५) छान्दोग्य अध्याय ६
(६) कठोप० २।३
(७) गीता ३।१६
(८) गीता १८।१७
(९) गीता ४।३६

प्राचीन काल के बड़े २ ऋषि सब मानते चले आए हैं कि स्वयं ब्रह्म ही सब कुछ है।

आर्य—हम भी वेदों से तो आपके दावा का खंडन कर चुके। अब इन प्रमाणों पर विचार करते हैं।

भोक्त्रा पत्तेरविभागश्चेत्स्याल्लोक वत् ॥ १३
तदनन्यत्वमारम्भण शब्दादिभ्यः ॥ १४

शारी० २।१३ १४

नंबर १—अनुवाद—(यह सूत्र इस प्रश्न का कि कर्ता है, भोक्ता है–उत्तर देता है) कि भोक्ता पृथक् है और हमें इसका प्रमाण जगत् में मिलता है।

अनुवाद—प्रकृति के कार्य और कारण एक हैं। इन्हीं शब्दों के सुनने से।

अन्यार्थंतु जैमिनिः प्रश्न व्याख्यानाभ्यामपि चैवमेके ॥ वेदान्त १।४।१८

अनुवाद संख्या २—जैमिनि यह कहता है कि जीवादि का दर्शन उपनिषत् परमात्मा के जानने के लिए हैं। इसमें अन्यों की सम्मति भी है कि उपनिषत् के प्रश्नोत्तर से यही बात प्रगट होती है।

और प्रकृति का दर्शन ब्रह्म की खोज के लिए है। क्योंकि ऐसा मानने से उपनिषत् के दावा और दृष्टान्त कोई भूल घटित नहीं हुई।

संख्या ३—यह पुस्तक प्रामाणिक ग्रन्थों में नहीं है। अतः हम इस पर विचार नहीं करते।

(देखो व्याख्यान न १ उत्तर पृष्ठ ३ की अन्तिम टिप्पणी)

संख्या—४—तैत्तिरीय ब्राह्मण प्रामाणिक ग्रन्थों में नहीं है।

(देखो अपना व्याख्यान सं० १ पृ० ११६)

संख्या ५—छान्दोग्योपनिषत् में अध्याय ६ कोई नहीं। किन्तु उस का विभाजन तो प्रपाठकों और खंडों पर है इसमें सारे आठ प्रपाठक हैं। जिसमें छठे प्रपाठक की मैंने पड़ताल की। कोई मंत्र जीव ब्रह्म की एकता का नहीं मिला।

संख्या ६— कठोपनिषत् के अध्याय २ में कोई मंत्र ऐसा नहीं है। हां, अध्याय १ वली २ मंत्र १९ पर एक वाक्य है। जिसका अनुवाद यह है कि:–

जब मनुष्य किसी को मारता है। उस समय ज्यूं ही जीव को मारने वाला समझता है और जिसे मारता है जो इसे मर गया समझता है वह दोनों प्रकार के लोग नहीं जानते हैं क्योंकि वास्तव में जो एक अप्राकृतिक और नित्य अनादि शक्ति है। वह न मारती और न मरती है। किन्तु केवल शरीर वियोग होता है और इसका विस्तृत वर्णन वाक नं० १८ में इससे पूर्व भी विद्यमान है।

संख्या ७ से ९ तक प्रामाणिक नहीं। देखो व्याख्यान नं० १ का पृष्ठ ६ अतः हम अनुचित प्रमाणों की ओर सर्वथा ध्यान नहीं देते।

हम सिद्ध कर चुके हैं कि प्राचीन काल के ऋषियों ने ऐसा नहीं माना और यदि ईश्वर न चाहे किसी ने माना हो तो स्वयं ऋषियों के वचनानुसार वेद विरुद्ध सम्मति धर्म से संबंध नहीं रख सकती क्योंकि वेद ही सत्यता और बुद्धिमत्ता का आधार है। विस्तार देखो ऋग्वेद मंडल १० अनुवाक १० सूक्त ११९ मंत्र १ से १० तक तथा ऋग्वेद मंडल १० अनुवाक २२ सूक्त १६४ मंत्र २०—तथा यजुर्वेद अ० १४–१७ तक।

वेदों में परमेश्वर के प्रेम का होना वास्तव में तो स्वयं पादरी जी को भी स्वीकार किया है जैसा कि उन्होंने पृष्ठ ५, ६ पर सात प्रमाण वेदों और शास्त्रों के लिखे हैं और हमने भी स्थान २ पर इस बात को सिद्ध किया है कि वेदों में ईश्वर प्रेम, भक्ति तथा जीव और ईश्वर का संबंध किस उत्तमता से फरमाया गया है।

अन्त में पादरी जी कहते हैं कि "प्रयोजन यह कि हम देखते हैं कि आर्य लोग वर्णन करते हैं कि वेद ईश्वर प्रेम से भर पूर हैं हमें कुछ वाक्य ऐसे मिलते हैं जिनमें यह वर्णन है।"

(देखो पृष्ठ १४, १५)

जिस प्रकार पादरी महोदय को कुछ स्वीकार है। परमेश्वर करेगा कि हमारी इस दूसरी प्रार्थना को पढ़कर कुछ का सम्पूर्ण हो जाएगा। क्योंकि सम्पूर्ण संसार में केवल वेद ही हैं जो ईश्वरीय गुणों को समस्त और पूर्ण बहुत बड़ी विशेषता और उत्तमता से बताते और बुद्धिमत्ता से समझाते हैं। निम्न कारणों से:—

प्रथम—वेद मनुष्य को कर्म करने में स्वतंत्र बताते हैं और बाईबल की भान्ति पाप पुण्य करने के लिए पराधीन नहीं ठहराते।

द्वितीय- परमेश्वर सब मनुष्य मात्र का स्वामी और अधिपति है जितने शुभाशुभ कार्य मनुष्य करते हैं उसका सुख दु:ख फल देता है। हमारे कर्मों का स्वयं कर्ता नहीं।

तृतीय वेदों के अनुसार परमात्मा के अनादि सामर्थ्य में अनादिकाल से अनादि जीव तथा प्रकृति विद्यमान हैं और सर्व शक्तिमान होने से वह सदा इनका नेता और अधिपति है। बाईबल की भान्ति ५–६ सहस्र वर्षों से ही खुदा से संसार नहीं बन गया और न संसार खुदा का अंश है।

चतुर्थ—वेद बुद्धि से सत्य स्वीकार करने की प्रेरणा करते हैं बाईबल की भान्ति बुद्धि को बाबुल के बुर्ज में ताला लगा देने की प्रेरणा नहीं देते।

इन उपरिलिखित कारणों से वेद मुकद्दस में परमेश्वर का प्रेम, परमेश्वर का न्याय, परमेश्वर का ज्ञान अद्वितीय है और वह सर्वशक्तिमान सिद्ध होता है तो निस्संदेह प्रत्येक के पक्षपाती मनुष्य का मन इन की सच्चाई को स्वीकार कर सकता है। किन्तु हठधर्मी लोग इतनी सत्यता के होने पर भी सांसारिक कुछ दिनों के भोगवाद के लिए सत्य को स्वीकार करने से दु:खी होता है। इसके मन की आंखें पापों के अन्धकार वृत होने के कारण सत्य को नहीं देख सकती जब कि वह सूर्य सबसे अधिक प्रकाशित है। हे परमात्मन् ! विद्या का प्रकाश कर और अविद्या का नाश।

व्याख्यान सं० ३ का उत्तर

पादरी महोदय ने इस व्याख्यान नं० ३ में अपने विचार से यह बात सिद्ध की है कि वेदोक्त परमेश्वर न्यायकारी नहीं। हमने इन का व्याख्यान आदि से अन्त तक पढ़ा। किन्तु इनकी किसी युक्ति से भी सन्तोष न हुआ। और यही कारण है कि हम इनका खंडन करते हैं। अन्यथा सत्य के स्वीकार करने से हमें कोई इन्कार नहीं। हां, इतना हम भी मान लेते हैं कि पादरी जी ने नमक का बदला अच्छा चुकाया।

हम इस उत्तर में इनके तर्कों पर विचार करके बताएंगे कि इनमें कितनी निर्बलतायें हैं।

पादरी—३० - चारों वेदों की सर्वथा सहमति है कि परमेश्वर ने मनुष्यों को चार वर्णों में अर्थात् मुख, बाहु, रान और पाद से उत्पन्न किया है। हम अपने पाठकों को विशेषकर सूचित करते हैं कि जाति का मन्तव्य ब्राह्मणों की निर्मिति नहीं है। जैसा कि हमारे आर्य भाई हमें विश्वास दिलाना चाहते हैं। यह तो वेदों का मन्तव्य है और सर्वथा स्पष्ट शब्दों में लिखा हुआ है। मनुष्योत्पत्ति का यह वर्णन पुरुष सूक्त में जो ऋग्यजु: सामाथर्व चारों वेदों में समानरूप से लिखा है।

आर्य—इस विषय में हम केवल पादरी जी से सहमति करते हैं। किन्तु जहां पक्षपात को क्रियात्मक रूप देकर सत्य से मुख मोड़ा है उसके विरोधी हैं। निस्सन्देह यह मन्तव्य कि मनुष्य पदों का विभाजन योग्यता के आधार पर चार बड़े भागों में किया गया आर्य समाज को स्वीकार है। किन्तु यदि केवल जाति की अपेक्षा से कोई इस विभाजन का दावेदार है—तो हमें इसको सम्मति से इन्कार है। हम स्वयं इस विभाजन को न्याय के विरुद्ध जानते हैं, किन्तु दूसरी ओर पूर्ण न्याय मानते हैं। और जहां तक देखा जाता है। दूसरी प्रकार का विभाजन सर्व संसार में विद्यमान है।

मुसलमानों में मौलवी, बहादर सिपाही, व्यापारी, सेवा करने वाले। ईसाईयों में पादरी, मिलट्री मैन, ट्रेडर्स, सर्वेन्ट।

बौद्धों में शर्मन, योद्धा, वैश्य, शूद्र।

ईरानियों में बरमान मालोबरमन, चतुर्मन, विचित्री, वाससोदी दसवा।

आर्यों में ब्राह्मण; राजन्य, वैश्य, शूद्र।

प्रगट है कि विद्या का उपदेश मुख से होता है। विद्या प्रत्येक कार्य से विद्वानों के निकट मुख अर्थात् मुख्य हैं। इसके अतिरिक्त विद्या की प्राप्ति मनुष्य के सब कामों से आवश्यक है। क्योंकि विद्या के विना मनुष्य में कोई योग्यता और सभ्यता नहीं।

सेवक, धनी और वीर तीनों से विद्वान् का पद मुख्य अर्थात् प्रथम श्रेणी है। इसलिये विद्वान् अर्थात् ब्राह्मण को इससे उपमा दी गई। क्योंकि मनुष्य के शरीर में जिस प्रकार मुख का कार्य उच्चारण है। ऐसा ही ब्राह्मणों का उपदेश करना है।

वीरता जिसे शक्ति भी कहते हैं। इसका बाहु से सम्बन्ध है। और विद्वानों की परिभाषा में वीरता विशेषकर बाहु से सम्बन्धित है। और वैदिक कोष में बाहु शब्द के अर्थ बल और शक्ति के हैं।

अत: जिसमें बाहुबल अधिक होगा उसे बलवान् या राजन्य कहेंगे। ओर क्षत्रिय शब्द के भी यही अर्थ हैं। इसी विचार से इनका प्रगट होना बल या बाहु से बताया गया है।

व्योपार के लिये दूर दूर की यात्रा तथा हलादि द्वारा कृषि कार्यों की आवश्यकता है। गति का सारा आधार जंघाओं पर है। यदि जंघा का बल न हो तो व्यापार चौपट है। अत: इनका प्रगट होना जंघाओं के समान माना गया है।

मूर्खता या सेवा का कार्य अति निकट है और सर्वथा जड़मति से सेवा के अतिरिक्त और कुछ नहीं हो सकता। अत: शूद्रपन को पाद से उपमा दी गई है। अर्थात् मनुष्यता के लिए विद्या मुख्य कार्य है। बल और वीरता दूसरे पद पर, व्यापार तीसरे पद पर, तथा सेवा सबसे नीचे के चतुर्थ पद पर है।

जिस प्रकार मनुष्य शरीर में नियम और विशेषताओं की दृष्टि तथा स्थान की अपेक्षा से मुख, बाहु, उरु, पाद हैं। उसी प्रकार मनुष्यों में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र हैं। यदि कोई सत्यप्रियता को दृष्टि से इस स्वाभाविक विभाजन को देखे तब वह इसकी उत्तम प्रेरणा और महत्तापूर्ण अलंकारों (उपमाओं) से परिचिति प्राप्त कर सकता है। (विस्तार देखो वेदभाष्य भूमिका पृष्ठ २३३)

पादरी—स्वामी दयानंद जी ने इनके पक्ष में यह बात अच्छी न की कि उन्होंने वेदों के अतिरिक्त और बहुत सी पुस्तकों की शिक्षा को सत्य मान लिया और उन्हें पूर्ण प्रमाण मान लिया, तथा उन्होंने

आर्य समाज के भवन का एक भाग इन पुस्तकों के स्तंभों पर खड़ा किया। किन्तु यह पुस्तकें इनके मन्तव्यों को दृढ़ करना तो कहाँ परन्तु व्यर्थ ठहराती हैं।

आर्य—पादरी जी सभ्यता और बुद्धिमत्ता से आप कोसों दूर होते जाते हैं। किसी पर शंका करने के स्थान पर व्यर्थ वचन बुद्धिमत्ता से दूर हैं। बुद्धिमानों का वचन है कि :—

अव्वल अन्देश व अंगहे गुफ़्तार। +

आर्यसमाज रूपी भवन की नींव वेद मुकद्दस की शिक्षाओं पर है। अन्य किसी पुस्तक पर नहीं। पुराने आर्य महात्माओं की कृतियां और दार्शनिकों के संपादित ग्रन्थ भी हम बहुत ही प्रतिष्ठा दृष्टि से देखते हैं। क्योंकि वह भी इसी ईश्वरीय दया की बरकत हैं। फ़ानूस और हैं किन्तु प्रकाश वही है। हां, किसी पुस्तक की जो शिक्षा वेद के विरुद्ध हो—वह हमें किसी प्रकार भी मान्य नहीं। अन्य सब विरोधियों से पहिले समाज के सदस्य इसका खंडन करने पर विद्यमान हैं। (देखो नियम संख्या ४)

पादरी—५—ब्राह्मण और राजपूतों की जातियों का वर्णन निम्न लेख में पाया जाता है।

ऋग्वेद मंडल १ सूक्त १०८ मंत्र ७

ऋग्वेद मंडल १ सूक्त १६४ मंत्र ४५

यह जाति संबंधी शिक्षा सदैव इन ही अर्थों में समझी जाती थी। जैसा कि आजकल जो आर्य कथन करते हैं—वैसी नहीं। (देखो शंकराचार्य और सायणाचार्य के ग्रंथ)

आर्य—हम शोक करते हैं कि सोचे समझे बिना पादरी जी क्यों लाभरहित प्रमाण लिख देते हैं। जिनसे उनकी नासमझी के अतिरिक्त अन्य कोई बात सिद्ध नहीं हो सकती ऋग्वेद के मंत्र संख्या ७ में जिस शब्द का अर्थ आप राजपूत (हिन्दुओं की वर्तमान जात) करते हैं। वह मूल संस्कृत है—जिसका अर्थ "राजा का घर" है। न कि राजपूत जाति। क्योंकि वह चारों वर्णों में क्षत्रिय हैं। कोई पांचवा वर्ण नहीं। जब यह अवस्था है। तो स्पष्ट प्रगट है कि इन वर्णों का मन्तव्य सदैव से यही गृहीत है। जैसा कि आर्य लोग मानते हैं। आपके मिथ्याविचारानुसार नहीं। शंकर अथवा सायण का प्रमाण देना आप को उचित न था। क्योंकि व्याख्यान सं० १ के पृष्ठ ६ पर इसको ओर संकेत तक भी नहीं। किन्तु स्पष्ट हो कि शंकराचार्य जन्म से नहीं मानता, प्रत्युत आर्यसमाज की भान्ति कर्म से मानता है।

(देखो वज्र सूची)

यदि विस्तार देखना चाहो तो "वर्णव्यवस्था" विद्या दर्पण मेरठ द्वारा १८८७ ईस्वी में प्रकाशित का अध्ययन करो।

पादरी—६–८—मनु जी जिसको पंडित दयानंद जी अपना बड़ा प्रमाण मानते हैं—जन्मना वर्णन करते हैं।

देखो मनु १।३१—१३।४२—८१।३६५। तैत्तिरीय ब्राह्मण १।२६ अध्याय १ वाक २६ मनु ६।२६।

शतपत ब्राह्मण १४।४।२—४ इत्यादि।

हम अन्य बहुत से उदाहरण उपस्थित कर सकते हैं किन्तु हम विचार करते हैं कि यही पर्याप्त

+पहिले सोच और पीछे बोल। (अनुवादक)

और पूर्ण होंगे। क्योंकि इनसे यह बात सिद्धता को पहुंच गई है कि वेदमतानुसार परमेश्वर न्यायकारी नहीं।

आर्य—तैत्तिरीय ब्राह्मण प्रामाणिक ग्रंथों में नहीं। (देखो अपना व्याख्यान नं १ पृष्ठ ६)

शतपथ में कहीं ऐसा वर्णन नहीं शेष मनु के श्लोक रहे। इनके संबंध में यह निवेदन है कि :—

संख्या १—वृद्धि के लिये ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र मुख बाहुरूपाद से प्रकाशित हुए अर्थात् गुणों से।

संख्या २—हाथी आदि, शूद्र अर्थात् मूर्ख, दुराचारी और सूकर यह तमोगुण वाले हैं।

और यह शेष श्लोक किसी प्रकार हमारे विरुद्ध नहीं। किन्तु गुण कर्म स्वभावानुसार व्यवहार करने का वर्णन है।

पादरी ८—मनुष्य जाति की उत्पत्ति भिन्न २ स्टेजों में है। यदि कोई उच्च जाति का मनुष्य कितने ही बड़े पापों का दोषी क्यों न हो—इसको चंडाल नहीं समझना चाहिये। किन्तु एक नीची जाति का मनुष्य कठोर दंड विधान में बंधा हुआ है।

आर्य—हज़रत ! पाप सबके लिये पाप है। किन्तु ईसाईयों के लिये नहीं। क्योंकि उन्होंने एक बर्रा (मेमना) अपने विचार से बलिदान कर दिया। इसीलिए उन्हें पाप की अपेक्षा नहीं करनी चाहिये। उनके विचार में अब पाप रहा ही नहीं। शैतान का सिर कुचला गया। मसीह सबके पापों के बदले फांसी पा गया।

ले लिया तख़्ते हक्क मसीहा ने।
जो गुनाह कीजिये सवाब है आज॥

शराब पीना इनके हां पाप नहीं। मांस खाना इनके हां पाप नहीं। द्यूत क्रीडा इनके हां पाप नहीं। कोर्टशिप करना इनके हां पाप नहीं। फिसलाना, बहकाना, परिचितों को मार्ग भ्रष्ट करना इनके हां पाप नहीं। तीन परमेश्वर मानना इनके हां पाप नहीं। जो पाप हैं वह बिचारों के लिये हैं। तो वह बाह्य रूप रंग की भान्ति पापों की लालिमा से भी युक्त हैं। किन्तु आर्य धर्म की दृष्टि से यदि कोई उच्च व्यक्ति पाप करे तो वह अज्ञानी अथवा छोटे मनुष्य की अपेक्षा अधिक दोषी है। देखिये—

गुरुं वा बालवृद्धौ वा ब्राह्मणं वा बहुश्रुतम्।
आततायिन मायान्तं हन्यादेवाविचारयन्॥ मनु० ८।३५

अनुवाद—गुरु हो वा बालक हो वा वृद्ध हो वा ब्राह्मण हो। यदि विचार रहित होकर सज्जन लोगों को कष्ट देवे अथवा वध करे तो राजा को उचित है कि अवश्य हत्या करा देवे।

पुनः मनु ८।३८० में है कि वेद वेत्ता ब्राह्मण का वध न करे किन्तु अपनी राज्य सीमा से बाहिर कर देवे जैसे आयु भर की क़ैद, समुद्र पार कर देने के साथ ही आप इसी मनु अध्याय ८ के श्लोक ३३५, ३४० का अध्ययन भी करें।

यदि आप इसको नरमी जानते हैं तो भारत में प्रचलित अंग्रेजी विधान में जो योरोपियन लोगों को छूटें दी गई हैं। उनको क्या कहोगे? देखो भारतीय दंड विधान।

जैसे यह मानवी विधान है। वैसे मनु भी मानवी विधान है। किन्तु यह दृष्टिगत रखनी चाहिए कि वह छूट केवल ब्राह्मणों अर्थात् विशेष वैदिक विद्वानों के लिये है। और यह समस्त योरोपियन के लिये थी। जिसमें द्यावा भूमि का भेद है।

प्रतिदिन के अनुभव में भी आप जानते होंगे कि सदैव डाक्टर लोग गोरा और भारतीय के अभियोग में तिल्ली का फट जाना अथवा साहब का उन्मत्त होना आदि बातें डाकट में लिखते हैं। जिस पर गोरा छूट जाता है। इसके उदाहरण एक दो नहीं किन्तु सैंकड़ों हैं कि सैंकड़ों भारतीय गोरों के हाथ से मारे गए किन्तु एक भी गोरा को फांसी न मिली। साथ ही मूसा की इलहामी तौरात को भी ध्यान पूर्वक देखो—पुनः आक्षेप करो।

पादरी ८—वेदों में लिखा है कि संन्यास के विना सत्यज्ञान हो नहीं सकता और ज्ञान के विना मुक्ति प्राप्ति संभावनातीत है। किन्तु संन्यास सेवल ब्राह्मण ही ले सकता है। अतः दूसरों को चाहिए कि मुक्ति से हाथ धो बैठें। (देखो श्वेताश्वतरोपनिषत्)

आर्य—वेदों की दृष्टि से मोक्षमार्ग प्रत्येक सत्येच्छु के लिए खुला हुआ है किसी के लिए भी बंद नहीं। किन्तु ढूंडना शर्त है। क्योंकि जो सत्यमन से ईश्वर की ओर संलग्न हो वही सफल हो सकता है। संन्यास लेना उसी के लिए आवश्यक है जो सद्विद्या जानता हो। और जो विद्या जानता हो वही ब्राह्मण है। अतः प्रत्येक बुद्धिमान् मनुष्य प्रत्येक ज्ञान से शोभायमान होकर मोक्ष को प्राप्त कर सकता है। आपने श्वेताश्वतरोपनिषत् का कोई प्रमाण नहीं लिखा।

पादरी ९—वह ग्रंथ जिनसे मोक्ष प्राप्त का साधन मिलता है—केवल वेद ही हैं। किन्तु इसके साथ यह भी लिखा है कि सबको इन ग्रंथों के अध्ययन का अधिकार नहीं। (देखो शारीरिक १।३-८)

आर्य—महोदय! आप का विचार और प्रमाण दोनों आपके विरोधी हैं। वह वस्तुतः सूत्र यह हैं:—

भूमा सं प्रसादादध्युपदेशात् ॥ वेदान्त १।३।७

नानुमानमतच्छब्दात् प्राणभृच्च ॥ वेदान्त १।३।३

सूत्र १—भूमा परमेश्वर का नाम है क्योंकि जीवात्मा इसी में प्रसन्नता को प्राप्ति करता है और इसी के उपदेश से आनंदित होता है।

सूत्र २—अनुमानतः सिद्ध प्रकृति से यह प्रयोजन नहीं है क्योंकि शब्दों से अन्य अर्थ होते हैं।

देखिए! आपके आक्षेप का यहां चिह्न तक भी नहीं है।

पादरी १—११—पुनः मनु १।१०२ में लिखा है कि शूद्र कभी वेद पढ़ने का अधिकारी नहीं हो सकता।

मनु १।९९ में लिखा है कि कोई मनुष्य शूद्र को वेद न सुनाए और न सिखाए।

आर्य—हम शोक करते हैं कि यहां भी पादरी जी का भाव दृष्टिगत नहीं होता किन्तु सर्वथा उस के विरुद्ध पाया जाता है। वह मूल श्लोक यह है:—

ब्राह्मणो जायमानोहि पृथिव्यामधि जायते।
ईश्वरः सर्वभूतानां धर्मकोशस्य गुप्तये ॥ मनु० १ ९९
विदुषा ब्राह्मणेनेद मध्येतव्यं प्रयत्नतः।
शिष्येभ्यश्च प्रवक्तव्यं सम्यङ्नान्येन केनचित् ॥ मनु० १।१०३

अनुवाद—जब ब्राह्मण का प्रकाश (संस्कार द्वारा) संसार में होता है। तब से ही धर्म का निधि

निधि और सब प्राणियों में उत्तम माना जाता है विद्वान् ब्राह्मण का ही कर्तव्य है कि यत्नत: वेद पढ़े और शिष्यों को पढ़ावे, अन्य कोई न पढ़ावे।

पादरी—६—स्वामी दयानंद जी इस वस्तुस्थिति की गहराई को यहां तक पहुंचे कि उन्होंने इस स्पष्ट २ शिक्षा के नक़शा बनाने में अपनी ओर से कोई न्यूनता शेष नहीं छोड़ी।

आर्य—सद् ग्रंथों में इस प्रकार के सैंकड़ों दृष्टान्त विद्यमान हैं कि ब्राह्मण, क्षत्रिय वैश्य, शूद्र कर्मों से उन्नति तथा अवनति प्राप्त करते रहे हैं। स्वयं वैदिक आदेशों के अनुसार आर्य लोगों का सदैव इसी पर आचरण रहा। अत: श्री महाराज स्वामी जी ने तो कोई अपना नक़शा बनाया और न किसी नूतन शिक्षा का रंग जमाया।

हां, वैदिक उपदेश विस्तार में तथा वेद विरुद्ध मिथ्यात्व के मिटाने में कोई कसर शेष न छोड़ी। जिनके सत्य परिश्रम से पुण्यमय परिणाम प्राप्त हुआ। तन्द्रा निद्रा में संलग्न लोगों की बेसुधी की आंखें खुल गईं। करोड़ों मनुष्यों के श्रोत्रों तक सद्धर्म की घोषणा पहुंच गई। प्रतिदिन आर्य धर्म की उन्नति हो रही है। अभी ही एक प्रसिद्ध रियासत के एक योग्य पंडित ने जो स्वामी जी के जीवनकाल में कट्टर विरोधी रहे और अब भी किसी आर्यसमाज के सदस्य नहीं। स्पष्ट ही अपने समाचार पत्र में छपवा दिया कि :—

इस अवसर पर स्वामी दयानंद जी के स्वर्गवास का हमें अतिशोक है। यदि वह कुछ काल जीवित रहते तो वेदधर्म की बहुत उन्नति हो जाती।

पादरी ११—इनकी पुस्तकों में स्पष्ट २ लिखा है कि वेद समस्त संसार के मानवमात्र के लिए नहीं। किन्तु विशेषाधिकारी जातियों के लिए है। किन्तु हमारे आर्य भाई कहते हैं कि वह सबके लिए हैं—शूद्रों के लिए भी।

आर्य—जिन पुस्तकों को आर्यसमाज किन्तु आर्यावर्त के समस्त विद्वान् पंडित प्रामाणिक धर्मग्रंथ मानते हैं। उनमें कहीं भी आपके दावा का प्रमाण नहीं तो ईश्वरीय ज्ञान मुकद्दस वेदों में जो समस्त जगत् के मार्ग प्रदर्शनार्थ प्रगट हुए उनमें क्योंकर हो सकता है ? स्वामी जी महाराज इनको पढ़ाते रहे। आर्यसमाज के सदस्यगण इनको पढ़ाने के लिए उपस्थित हैं और उदाहरण रूपेण प्राचीन काल में तो वेद सबको पढ़ाए ही जाते थे -इस समय भी शूद्र, वैश्य, क्षत्रिय वर्णों में उत्पन्न हुए आर्य भाई ब्राह्मण पदवी से सुशोभित हो रहे हैं। और बड़े २ नामी पंडित इनकी यह पदवी स्वीकार कर चुके हैं। अत: हम आपकी अनुचित हठधर्मी पर इसके अतिरिक्त और क्या कहें कि आपकी बात में सत्यता नाम मात्र को भी नहीं।

पादरी ११—आजकल समय के प्रकाश और उन्नति के कारण से आर्य लोग कहते हैं कि समस्त मनुष्य मात्र भाई हैं और एक ही माता पिता की सन्तान हैं। वह हमें बताएं तो सही कि यह शिक्षा उनके पवित्र वेदों में कहां है ?

आर्य—आजकल के सामयिक प्रकाश से नहीं किन्तु वेदोक्त सत्यता के फैलने के कारण एक ही परमात्मा की सृष्टि जानकर हम सबको भाई जानते हैं। किन्तु सबको एक ही माता पिता आदम हव्वा की (भगवान् रक्षा करे) सन्तान नहीं मानते। (देखो पादरियों की नासमझी का प्रतिकार नं० १—और सत्यार्थप्रकाश पृष्ठ २०७ से २३१ तक)

अतः जिस बात को हम मानते हैं। उसको श्रीमान जी के लिए प्रवित्र वेदों से ही प्रमाण देते हैं। लीजिए वह वेदों की पवित्र शिक्षा यह हैः—

समानोमंत्रः समितिः समानी समानं मनः सहचित्तमेषाम् । समानं मंत्रमाभिमंत्रयेव समानेन वो हविषा जुहोमि ॥ समानी व आकूतिः समानाहृदयानिवः । समानमस्तु वोमनो यथावः सुसहासति ॥

(ऋ० मंडल १० अ० १२ सूक्त १४ मंत्र ३,४)

अनुवाद—हे मनुष्यो ! तुम्हारा सत्यासत्य विचार में विरोध न हो और प्रत्येक की बात सुन कर, हठधर्मी छोड़कर देश हितैषी बनो। जिससे सभों को सुख हो और जिससे सभों के बल बुद्धि पराक्रम बुद्धि आदि गुण बढ़ें। तुम्हारा मन सर्व प्राणी मात्र से विरोध रहित, पुरुषार्थी हो। मंत्र ४—हे मनुष्यो ! तुम्हारा पुरुषार्थ सब जीव मात्र के सुखार्थ सदा हो जिससे मेरी आज्ञा अर्थात् वेद धर्म का नित्य पालन करो। तुम्हारे सर्व व्यवहार प्रेम सहित हूं। किसी को दुःखी देखकर सुखी मत होवो प्रत्येक प्रकार से स्वाधीन होकर सब लोग सदा सुखी रहें।

पादरी ११—यदि ऐसा है (अर्थात् जाति पांति कोई वस्तु नहीं) तो वह धर्म को क्रियात्मक रूप देने का साहस क्यों नहीं करते ? युवा वीर पुरुषों की भान्ति वह मैदान में क्यों नहीं आते ? सत्य के अनुगामी क्यों नहीं बनते ? और क्यों नहीं समुद्यत होते कि जो कुछ सिर पर बीते सहन करें। वह ईश्वर और वेदों तथा इस सत्य के लिए जिसके वह ऐसे उत्साही, उपासक और इच्छुक हैं—अपनी बिरादरी के लोगों से बहिष्कृत किया जाना क्यों स्वीकार नहीं करते ?

आर्य—हम जाति के साथ २ उन्नति करना चाह रहे हैं। किन्तु स्वयं गिरना भी नहीं चाहते अपने धर्म को क्रियात्मक रूप में लाने का साहस आर्य लोग पूर्ण रूप में करते हैं। वीर साहसी पुरुषों की भान्ति समस्त बिरादरी के धार्मिक विषय में कुछ भी भय नही खाते और सत्य हृदय से वेद मुकद्दस की आज्ञा पर आचरण करते हैं। हमारी समस्त जाति स्वरूपतः वैदिक प्रेरणा को मानती है और हम भी मानते हैं केवल इतना है कि इन्हें शिक्षण नहीं और शास्त्रोक्त नियम की धर्म कसौटी इनके पास हैं। १८७० ईस्वी में कोई समाज नहीं था। किन्तु अब १४, १५ वर्षों में परमात्मा की कृपा से पांच सौ से अधिक समाज और सहस्रों आर्य विद्यमान हैं। वह अधिकतर सत्य हृदय से धर्म कार्य पर जाति बष्किार की चिन्ता नहीं करते। सत्य मार्ग वेद मुकद्दस पर स्थिर हैं। अमृतसर, लाहौर, मेरठ, मुलतान सहारनपुर, फिरोजपुर, पेशावर आदि नगरों में ऐसे वीर पुरुषों, धर्मात्माओं के सैंकड़ों उदाहरण विद्यमान हैं। जगदीश्वर की कृपा से ग्राम ग्राम में अब सत्य धर्म के कार्य कर्ता होते जाते हैं। कष्टों तथा जाति बहिष्कारों की कुछ चिन्ता नहीं करते। एक आर्य महात्मा सभासद आर्य समाज लाहौर ने अपने पिता के देहावसान पर जब बिरादरी ने कुरीतियों पर अनुसरण करने को कहा - यह शब्द कहे थे कि एक ओर बिरादरी है और दूसरी ओर परमेश्वर। अतः मैं इसकी वेदोक्त आज्ञा को बिरादरी की प्रसन्नता के लिए किसी प्रकार नहीं छोड़ सकता चाहे मेरी गर्दन पृथक् हो जाए।

पादरी १३—बुद्धि उन्हें कहती है कि यदि एक चूहड़ा भाई उनके कूप से पानी भर कर अपनी पिपासा शान्त कर ले तो क्या भय ? किन्तु शास्त्र तो कहते हैं कि इसे किसी प्रकार आज्ञा नहीं, चाहे वह मरण को प्राप्त हो। कहां हैं वह साहसी वीर आर्य जो बुद्धि के नेतृत्व पर बिरादरी की कोई चिन्ता नहीं करते।

आर्य—आपने किसी शास्त्र का प्रमाण नहीं दिया और न शास्त्र की यह आज्ञा है। इसका सारा आधार केवल आपकी निजी शत्रुता है जिसके कारण से आप इच्छानिच्छया आर्यों पर दोष धर रहे हैं श्रीमान जी ! आर्य लोग बड़े दयालु होते हैं और ऐसे दयार्द्र हृदय के कारण सदा धर्मार्थ जल को सबीलें (पानी पीने के स्थान) लगवाते हैं। और सर्वसाधारण मार्ग गामियों पथिकों को पानी पिलाते हैं। चूहड़े, चमार, गोरे, अंग्रेज, किरानी, पादरी, मुहम्मदी, यहूदी सब आते हैं और हरे भरे जाते हैं। किसी भी रुकावट अथवा कुछ दिये बिना पानी पीते हैं। इनकी दया चाहे प्रत्यक्षतः नहीं—किन्तु मन में प्रशंसक होते हैं। और इसके उदाहरण दूर क्यों विशेषतः आपके अमृतसर में विद्यमान हैं। एक गिरजा के निकट दूसरे पादरी जी के बंगला के मार्ग में संभवतः इन सबीलों (जल गृहों) के शीत जल से आपके पक्षपात का जोश ठंडा हो। क्योंकि चूहड़े, चमार अपनी गन्दगी न धोने के कारण गन्दे होते हैं। अतः वह अपना बरतन हिन्दु कूप में डाल नहीं सकते किन्तु मुसलमान आदि तो अधिकतर नगरों में हिन्दुओं के एक साथ पानी भरते हैं हिन्दु उन से किसी प्रकार की घृणा नहीं करते। आर्य धर्म व हिन्दु धर्म की दृष्टि से घृणा करना इतना ही आवश्यक है जितना वैद्यक शास्त्र को स्वीकार है। अधिक व्यर्थ और निराधार है। इतना मानने से तो आपको भी संभवतः इन्कार न हो। मुझे स्मरण है कि लाला रौशन लाल बैरिस्टरा एटला के पधारने के समय पादरी नारमन महोदय भी अमृतसर में व्याख्यान सुनने आए थे। जहाँ पर उसको प्यास लगी तो समाज मन्दिर में ही उन्हें पीतल के गिलास में पानी दिया गया था। अतः ऐसे आक्षेप सर्वथा निराधार और व्यर्थ हैं।

पादरी १४—जब कभी इनको (आर्यों को) संभावना होती है कि यह विचार हमें दुःखों के चक्र में लाना चाहते हैं। तो बड़ी प्रसन्नता से उन्हें शीघ्र प्रणाम करते हैं। भला ऐसा बेठिकाना धर्म स्वयं उस व्यक्ति का अथवा भारतीयों का कब बेड़ा पार कर सकता है ?

आर्य—आपकी यह बात सर्वथा ठीक है। और यही आर्य धर्म का गौरव है। यही आर्यसमाज का पवित्र नियम है कि :—

"सत्य के ग्रहण करने और असत्य के त्यागने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।"

जब कोई अवनति का या पतन का विचार आर्यसमाजों अथवा आर्यों का सामूहिक या वैयक्तिक रूप से ईश्वर न करे—मार्ग भ्रष्ट करने लगता है तो हम उनको पक्षपात रहित होकर झटपट दूर कर देते हैं। आप ईसाईयों की भांति नहीं कि चाहे कोई मज़हबी पुस्तक कितनी ही मिथ्या, निराधार, ज्ञान और बुद्धि के विरुद्ध, सत्य और धार्मिकता की शत्रु हो—चाहे वह कितनी दुःखों के चक्र में लावें, चाहे बुद्धिमानों के सम्मुख बात ही न कर सकें, चाहे बौद्धिक ज्ञान उसे खंड २ कर डाले, निराधार सिद्ध कर दे, तो भी सांसारिक लोभ के कारण उसे न छोड़ें। अतः ऐसा ईमान आपको मुबारक हो। बुद्धि विरुद्ध बातों के कारण हमारा इसे भी दूर से ही प्रणाम है। पादरियों और अन्य केटी कष्ट लोगों की अवस्था सीमातीत अकथनीय है हम विस्तार से किसी अन्य ट्रैक्ट में प्रकाश डालेंगे। क्या ऐसे मतों से संसार और धर्म का भला हो सकता है ? हम अन्यत्र कहां ढूंढेंगे ? स्वयं योरुप ही इसका साक्षी है। जहां पर इन्जीले मुकद्दस की कृपा से लाखों करोड़ों लोग भोगवादी नास्तिक हो रहे हैं। स्वयं लंडन से ही छे सात समाचार पत्र ईसाई मत के खंडन में निकलते हैं। सैंकड़ों गिरजों के होने पर लोग खुदा का नाम भी पुस्तकों से निकालना चाहते हैं। इसके विरुद्ध वेदे मुकद्दस की कृपा से सैंकड़ों नास्तिक, जैनी, नवीन वेदान्ती मूर्तिपूजक भ्रमलाल से निकल कर वेद धर्म पर विश्वास लाए और दिन प्रतिदिन लाते

जाते हैं। इस प्रकाश युग में आर्य धर्म को यह उन्नति है और ईसाईमत को यह अवनति। अमरीकिन ईसाईयों को दशा भी अवर्णनीय है। जहाँ तक विद्या की उन्नति होगी—ईसाईमत की अवनति होगी। ईश्वर करे आर्यसमाज के नियमानुसार विद्या का प्रकाश और अविद्या का सर्वथा नाश हो जाए। पुनः देखें कि ईसाईमत कहां रहता है? मैं सत्य हृदय से कहता हूं कि यदि इस समय आप के खुदावन्द यसूअ-मसीह उत्पन्न होते तो एक पढ़ा लिखा व्यक्ति भी उन पर ईमान न लाता। और मिस्टर ब्रेंडला के एक प्रश्न का भी उत्तर न दे सकते। काश कि वह विद्यमान होते। अतः ईसाईमत और आर्य धर्म के यथानुरूप यह टेक है कि :—

चिरागेमुर्दा कुजा, नूरे आफ़ताब कुजा।
बबीं तफ़ावते रह अज़ कुजास्त ता बकुजा॥ +

बाईबल का मज़हब पुण्य पाप भेद सभ्यता और ईश्वरीयादेश तथा कर्मों के दुःख सुख रूप को जिस पर समस्त मनुष्यता का आधार स्थिर है—जड़ से उखाड़ फेंकता है। जिससे किसी अन्य को हानि पहुंचाने के साथ २ इनको मुक्ति भी गौ ग्रास हो जाती है। संसार का स्वामी और न्यायालय? इस अति कठिन प्रश्न की समस्या खोलने के स्थान पर बाईबल ऐसा भद्दा उत्तर देती है। जिससे मनुष्य को बुद्धिमत्ता से अवश्य अनुत्तीर्ण होना पड़ता है। हमारे दयालु पादरी जी नीटो लोगों को ऐसी शिक्षा देते हैं। जिससे एक तो खुदा और उसके आदेश का निरादर, और दूसरे पुण्य कर्मों का सत्यानाश, तीसरे पापों की प्रेरणा, चौथे सभ्यता और आध्यात्म बातों का मलियामेट हो जाता है। इनको दार्शनिक शिक्षा सभ्यता का ज्ञान, बौद्धिक अनुभव का सर्वथा विरोधी है। वह खुदा को बातों को बुद्धि से नहीं किन्तु सोचे समझे विना अज्ञानता से पड़ताल करना चाहते हैं। जो सिर से पांव तक असंभव है। जिस पर हमें चाहते न चाहते अपने प्रतिष्ठित पादरी महोदय के कथनानुसार कहना पड़ा। भला, ऐसा बेठिकाना, बेतुका ईमान स्वयं उस व्यक्ति का अथवा भारतवासियों का कब बेड़ा पार कर सकता है? कभी नहीं। कदापि नहीं। बस! हे हिनु भाईयो!! हे मिशन स्कूल के विद्यार्थियो!!! हे नूतन बपतिस्मा प्राप्त लोगो! बे सुध मत रहो। बे सुधी से जागृत होकर सोचो! विचारो!! सत्य पर आचरण करो!!!

व्याखयान सं० ४ का उत्तर

इस व्याखयान सं० ४ में पादरी जी ने वेदों में ईश्वरीय ज्ञान को ढूंडा है। अथवा यूं समझिये कि वेदों के ईश्वर कृत होने पर आक्षेप किये हैं। उनकी खोज के यह दो नियम हैं।

(१) क्या वेद इलहामी और अनादि हैं या नहीं?
(२) क्या वेद परमेश्वर का ज्ञान हैं या नहीं?

हम भी उचित समझते हैं कि इसी नियमानुसार उनके आक्षेपों को सोचें और जो यथार्थ हो, उसे स्वीकार करें, तथा बुद्धिहीन को व्यर्थ सिद्ध कर आर्यों में शामिल करें।

जिस प्रकार हम वेदों को मानते हैं। उसको हम पादरी जी के शब्दों में लिखते हैं। कि—

"आर्य लोग वेदों का इलहामी होना इस प्रकार नहीं मानते जैसा कि अन्य पवित्र पुस्तक इलहामी माने जाते हैं। वेद आर्यों के कथनानुसार ईश्वर का ज्ञान है। इससे स्पष्ट प्रगट होता है कि वेद

+मृतदीप कहाँ और सूर्य प्रकाश कहाँ? देख! मार्ग की दूरी कहाँ से कहाँ तक है? (अनुवादक)

केवल इलहामी ही नहीं, किन्तु अनादि भी हैं। क्योंकि परमेश्वर अनादि है और कोई ऐसा समय नहीं था कि जिसमें वह ज्ञान से शून्य हो। इसलिए इससे तो यही परिणाम निकलेगा कि कोई ऐसा समय न था जिसमें वह विद्यमान न हो।"

यह आपका फ़रमाना सर्वथा ठीक है और हम इसी प्रकार मानते हैं। किन्तु एक विशेष बात यहां बतानी आवश्यक है अर्थात् वेद किसका नाम है?

स्पष्ट हो कि वेद नाम ज्ञान का है। पत्र, स्याही, अक्षरों का नहीं और न पुस्तक का। क्योंकि ज्ञान इन चिह्नों से अतिरिक्त है। इस आधार पर वेद भी इनसे पृथक् है और वह क्या है? केवल ज्ञान अर्थात् जो वेद में ज्ञान है वह अनादि है और पत्र, लिखावट, लेखनी, मसीपात्र, स्याही आदि सब समान हैं। अतः इस ज्ञान रूप वेद का (जो अनादि काल से इस अकाल के पास है) इस सृष्टि के आरंभ में नित्य न्याय नियमानुसार न्यायकारी परमात्मा ने श्री अग्नि, श्री वायु, श्री आदित्य, श्री अंगिरा जी चार ऋषियों के अन्तःकरण में सर्वव्यापक होने के कारण स्वयं) किसी जिबरईल या गिरबईल के द्वारा नहीं) प्रकाशित किया और इन्हीं के द्वारा जगत् में विद्या का प्रकाश हुआ तथा सत्य धर्म फैला।

इस व्याख्यान का दो भागों में उत्तर देते हैं। प्रथम में आपके आपेक्षों का यथार्थ उत्तर तथा दूसरे में वेदों के इलहामी होने प्रमाण।

प्रथम भाग

पादरी ५—मनु जी को साक्षी पर प्रथम व्याख्यान में पर्याप्त विचार हो चुका है और यह दृढ़ निश्चय हो चुका है कि उनकी साक्षी विश्वसनीय नहीं।

आर्य—मनु के संबंध में आयु के समस्त आक्षेप अच्छी प्रकार खंडित हो चुके हैं। सिद्ध किया जा चुका है कि रिसर्च असफल ही नहीं किन्तु सर्वथा जरजरित है। अतः मनु का दावा और साक्षी प्रत्येक प्रकार से विश्वसनीय है।

पादरी ७ से १२ तक—वेदों में बहुत से वाक्य ऐसे हैं जिन से प्रतीत होता है कि ऋषियों ने अपने आपको इन मंत्रों का कर्ता कहा है। कहीं भी उन्होंने किसी प्रकार का इलहामी होने के समर्थन का वचन नहीं लिखा है। इसके अतिरिक्त ऋषियों ने तीन भिन्न २ पर्यायवाची शब्दों (मंत्र बनाना, मंत्र घड़ना, मंत्र उत्पन्न करना जिनका संस्कृत भाषा में धातु "डुकृञ् करणे" है) से इन मंत्रों के कर्ता होने का दावा सिद्ध किया है वह वाक्यांश निम्न हैं (जैसा कि यहां पर लगभग ४७ मंत्रों के अंक इस के प्रमाणार्थ उपस्थित किये हैं।

आर्य—पादरी महोदय ने इन सुदीर्घ प्रमाणों से यह जतलाना चाहा है कि वास्तव में ऐसा ही है कि ऋषि वेद के कर्ता ही हैं। इसी लिए उन्होंने चार पृष्ठ प्रमाण दिये विना मूल मंत्रों के केवल अंकों से भर दिये हैं। किन्तु यह बात सर्वथा उनके भावों के विरुद्ध है हमने इस विचार से कि संभव है किसी मंत्र में ईश्वर न चाहे पादरी जी के दावा का प्रमाण निकल आवे और पादरी महोदय सच्चे हो जावें तो उनका परिश्रम व्यर्थ न जाए। किन्तु—

ख़ुद ग़लत बूद आंचे मा पिंदाशतेम।+

+स्वयं मिथ्या था जो कुछ हम समझते थे। (अनुवादक)

वह हमारा विचार सर्वथा मिथ्या निकला और साथ ही पादरी महोदय का दावा भी व्यर्थ हो गया। इस जांच पड़ताल में हमारे दस बारह दिन व्यय हुए किन्तु व्यर्थ। कहीं से भी ऋषियों का वेद मंत्र रचने का प्रमाण प्राप्त न हुआ।

किन्तु किसी ऋषि का नाम भी वेद से न निकला। कोई और रूढ़ि शब्द वेद में नहीं। अतः हमें कहना पड़ा कि पादरी जी ने स्पष्ट रूप से इन प्रमाणों में भूल की, अथवा किसी स्वार्थी ने उन्हें धोखा दिया।

पादरी १३—सांख्यदर्शन सूत्र ४५ में लिखा है कि वेदों के अनादि होने को स्वीकार नहीं किया जा सकता।

आर्य—श्रीमन्! आप प्रायः अशुद्ध प्रमाण दिया करते हैं। संभवतः प्रयोजन यह होता होगा कि किसी प्रकार ढूंडने में आर्यों को कष्ट हो। किन्तु पारब्रह्म की कृपा से आर्य भी आपके धोखा में आने के नहीं। वह इस कष्ट को आनन्द समझते हैं। मेरे श्रीमान् जी! वह सूत्र ४५ सांख्यदर्शन के अध्याय ५ का है किन्तु यह प्रश्नात्मक है। इसका उत्तर भी इसी अध्याय के सूत्र ५१ में विद्यमान है कि :—

"वेद क्योंकि परमात्मा की स्वाभाविक शक्ति से प्रकाशित हुए हैं और वह परमात्मा की स्वाभाविक शक्ति अनादि है अतः वेद अनादि और स्वतः प्रमाण हैं। उनके लिये किसी और प्रमाण की आधीनता नहीं।

आगामी में कुछ देखभाल कर आक्षेप किया करो—

"शायद कि पलंग खुफ्ता बाशद।" +

आप ऐसी व्यर्थ आशा आर्य ऋषियों से कदापि न रखना।

पादरी १३—स्वयं अपनी पुस्तकों से बहुत सी ऐसी आयतें मिलती हैं जिनसे स्पष्ट होता है कि यह कृत्रिम हैं। इन आयतों का जिनका अभी प्रमाण दिया गया है—निम्न आयत एक दिग्दर्शन है :—

"इस (प्रजापति) ने तप किया—उससे जब वह तपकर चुका तो तीन वेद उत्पन्न हुए।

(शतपथ ब्राह्मण २०।८।८)

आर्य—जो प्रमाण आपने दिया, मैं नहीं समझता कि किस प्रकार आप के लिये लाभदायक हो सकता है? प्रजापति परमेश्वर का नाम है। जिस शब्द का आप भूल से तपस्या अर्थ करते हैं। उसका अर्थ ज्ञानशक्ति का प्रकाश है। बस अर्थ यह हुआ कि परमेश्वर ने आरंभ सृष्टि में अपनी ज्ञानशक्ति का प्रकाश किया—उससे चार वेद अग्नि, वायु, आदित्य, अंगिरा की आत्माओं में प्रगट हुए।

आपने प्रमाण भी यथार्थ नहीं दिया। यह ब्राह्मण ११ कांड का है। २० कांड का नहीं। किन्तु शतपथ में कोई बीस कांड हैं ही नहीं। क्योंकि उसमें पूरे १४ कांड हैं।

किसी ने सत्य कहा है कि—

लियाक़ते शुमा अज़ काफ़े काबिल मालूम शुद। ×

इसके साथ ही शतपथ ब्राह्मण के कांड १४ अनुवाक ५ का भी अध्ययन कीजिये। जो आपने आर्यों को धोखा देने के लिये अथवा ईसाईयों में नाम पैदा करने के लिये अथवा वेतन की उन्नति के लिए

+संभव है कि (दीवार के पीछे) चीता सोया पड़ा हो। (अनुवादक)

×"तुम्हारी योग्यता तो काबिल के काफ से प्रतीत हो गई।"

शतपथ ब्राह्मण का प्रमाण दिया है। और जिसका अर्थ आपने पृष्ठ १३ पर बिगाड़ कर लिखा है। यह तो श्री स्वामी जी महाराज ने वेद भाष्य भूमिका के पृष्ठ १६ पर वैदिक इलहाम की सिद्धि में दिया है। क्षमा करना—आगे इस प्रकार की कार्यवाई मत कीजिये।

पादरी—वेदों के अनादि होने पर दूसरा आक्षेप यह है कि इनमें बहुत से भिन्न २ ऐतिहासिक काल के मनुष्यों का वर्णन है। क्योंकि वेदों में उन व्यक्तियों के नाम लिखे हैं तो स्पष्ट प्रगट है कि वेद अनादि क्योंकर हो सकते हैं ? बहुत सी घटनायें जो वास्तव में ठीक समय पर ऐतिहासिक समय के मनुष्यों के साथ बीतीं—वह प्रतिदिन के साधारण वृत्तान्तों की भान्ति लिखी हैं। यदि वेद अनादि हैं तो यह समस्त बातें क्योंकर हो सकती हैं ?

आर्य—वेद में न तो किसी ऐतिहासिक घटना का वर्णन है और न किसी विशेष राजा का नाम और चिह्न है। न वेद इतिहास है और न ऐतिहासिक काल से इसका घटना सम्बन्धी कुछ सम्बन्ध है। पादरी जी का दावा स्वयं उनके कथन से मृतवत् है कि उन्होंने भी कोई प्रमाण नहीं दिया। प्रत्येक आर्य सदस्य का दावा है कि वेद में किसी व्यक्ति विशेष का नाम नहीं है और न वेद का किसी इतिहास से कुछ सम्बन्ध है, इसीलिए वेद अनादि हैं और पुस्तक की दृष्टि से सबसे प्राचीन हैं। यदि संसार में कोई साहसी पुरुष है तो इसका खंडन करे और सिद्ध कर दिखाए। अन्यथा :—

दस्त न मेरसद अंगूर तुर्शस्त। ×

की उक्ति विरोधियों के सम्बन्ध में उचित रहेगी।

पादरी १५—न्यायदर्शन २।८१ में गौतम जी इस मन्तव्य पर यूं विचार करते हैं कि शब्द अनादि नहीं हो सकता। क्योंकि प्रथम तो इसका आरम्भ अर्थात् धातु है। दूसरे वह जिससे अनुभव हो सकता है। तृतीय वह उत्पत्तिमान् कहा गया है। अगले सूत्रों में वह इन युक्तियों को व्याख्या सहित वर्णन करते हैं। जिनको इनके जानने की इच्छा हो तो उन्हें स्वयं अध्ययन कर सकता है।

सूत्र ८१ में वह यह परिणाम निकालते हैं कि शब्द अनादि नहीं। क्योंकि वह उच्चारण से पूर्व अनुभव नहीं हो सकता। और इसलिए है कि हमें कोई वस्तु प्रतीत नहीं होती जो इसको रोकती हो। यदि शब्द अनादि है तो वह अपने उच्चारण से पूर्व भी ज्ञात होना चाहिये। क्योंकि वह सदैव वायु द्वारा कर्णगोचर होता है। ८६ से ९२ सूत्र तक।

उत्तम युक्तियों द्वारा इसका खंडन किया है। वह परिणाम जो गौतम जी मंत्र ६८ से निकालते हैं—यह है कि वेद अनादि नहीं किन्तु इसका मानना आवश्यक कर्तव्य है। क्योंकि एक बुद्धिमान् ने इन्हें बनाया है।

आर्य—पादरी महोदय ! आपकी भाषा ऐसी संदिग्ध है कि उससे कोई यथार्थ परिणाम नहीं निकल सकता। जब सूत्र ८१ में वह यह परिणाम निकालते हैं। तो वह प्रथम वर्णन आपके सूत्र का अनुवाद करता है। सूत्रों में मंत्र कहां से आ गए ? प्रतीत होता है कि आपको सूत्र और मंत्रों का भेद भी ज्ञात नहीं। न्यायदर्शन का दूसरा अध्याय और प्रथम अंक सूत्र ६७ पर समाप्त हो गया। पुनः आपने यह कहां से लिखा है कि सूत्र ८१ में वह यह परिणाम निकालते हैं कि शब्द अनादि नहीं। क्यों कि इसमें ८१ का सूत्र नहीं। ६८ भी नहीं। अब हम इसी अध्याय के सूत्र ६७ का अनुवाद करते हैं :—

× हाथ नहीं पहुंचता है अंगूर खट्टे हैं। (अनुवादक)

मंत्रायुर्वेद प्रामाण्यवच्च तत्प्रामाण्यमाप्तप्रामाण्यात् ।। न्याय २।१।६७

अनुवाद— वेद सर्व जगदुत्पादक सत्यस्वरूप, ज्ञानमय के ज्ञान से है। जैसे आयुर्वेद रोग को दूर करता है और रोगी को ठीक कर देता है। किसी को इसके स्वास्थ्यप्रद लाभ से इन्कार नहीं वैसे ही वेदेमुकद्दस जो ईश्वरीय सनातन सत्य ज्ञान है सबको मानने योग्य है क्योंकि सर्वज्ञ परमेश्वर ने इसका प्रकाश किया है।

अब देखिये ! इसी प्रकार आपके समस्त प्रमाण निराधार हैं।

पादरी ६—इसी प्रकार सांख्यदर्शन (५७ और अगले सूत्र) में कपिला जी शब्द अनादि होने का इन्कार करते हैं। वह कहते हैं कि शब्द अनादि नहीं। क्योंकि वह सर्वथा उत्पत्तिमान् प्रतीत होता है। और पुनः परिणाम निकालते हैं कि वेदों के अनादि होने का दावा सर्वथा असंभव है। (सूत्र ४५)

आर्य— यहां भी आपके दर्शनज्ञान का उदाहरण है। भला सूत्र ५७ का परिणाम सूत्र ४५ में किस प्रकार निकल सकता है ? किसी प्रमाण का उल्लेख न करने के कारण हमें सांख्यदर्शन सारा पड़ताल करना पड़ा। बहुत बड़ी खोज के पश्चात् ज्ञात हुआ कि यह आपकी भूल पंचम अध्याय के न समझने से है। अतः हम सभी सम्बन्धित सूत्र यहां लिख देते हैं।

अनित्यत्वं वेदानां कार्यत्व श्रुतेः ।। सां० ५।४५

निज शक्तयभि व्यक्तेः स्वतः प्रामाण्यम् ।। सां० ५।५१

वेद की नित्यता नहीं है। कार्यत्व होने से। ४५ ।। (यह सूत्र प्रश्नात्मक है)

इससे आरम्भ करके सूत्र ५० तक खंडन और समालोचना करते हुए कपिल जी महाराज सूत्र नं० ५१ में स्पष्ट खुले रूप में फरमाते हैं कि—

परमेश्वर की स्वाभाविक ज्ञान शक्ति से प्रकाशित होने के कारण वेद स्वतः प्रमाण और नित्य अर्थात् अनादि हैं। क्योंकि परमेश्वर का ज्ञान अनादि है और वह सर्व काल से सर्व शक्तिमान् है।

आगे चलकर एक और विचार आरम्भ करते हैं कि :—

प्रतीत्यप्रतीतिभ्यां नस्फोटात्मकः शब्दः ।। सांख्य ५।५७

पूर्वसिद्ध सत्वस्यऽभिव्यक्तिर्दीपेनेव घटस्य ।। सांख्य ५।५६

अनुवाद—पहिले सूत्र में प्रश्न है :—

उनका जो स्फोटक को शब्द मानते हैं—शब्द का ज्ञान होने से वह स्फोटात्मक नहीं है ।।५७।।

इसी प्रकार खंडन मंडन के द्वारा सूत्र ५६ में इसका उत्तर देते हैं कि—

"शब्द कार्य नहीं है किन्तु इसका प्रकाश होता है। जैसे दीपक से घट (घड़ा) अर्थात् दीपक घड़े की उत्पत्ति नहीं करता किन्तु उसे प्रकाशित करता है। अतः शब्द नित्य है।

सिद्ध हुआ कि आपके समस्त आक्षेप निराधार हैं।

पादरी १६—यह शब्द आर्यों के कथनानुसार परमेश्वर से आया है। किन्तु इसके बड़े प्रामाणिक मनु जी इसको अपवित्र ठहराते हैं। वह कहते हैं कि कोई व्यक्ति ऋग्वेद या यजुर्वेद न पढ़े कि जब सामवेद का शब्द उसके कर्णगोचर होता हो। इसके पश्चात् उसने यदि इस वेद की समाप्ति पर एक आरण्यक पढ़ लिया है तो इसका शब्द अपवित्र है। मनु ४।१२३

आर्य—इस बात का हम नहीं किन्तु मनुस्मृति ही खंडन करती है।

वेदोपकरणे चैव स्वाध्याये चैवनैत्यके।
नानुरोधो स्त्यानध्याये होम मंत्रेषु चैवहि ॥ मनु० २।१०५

वेद के पढ़ने पढ़ाने, संध्योपासनादि पंचमहायज्ञों के करने और होम मंत्रों में अनध्याय अर्थात् अवकाश नहीं है।

अत: आपका लिखा हुआ मनु का श्लोक प्रक्षिप्त है। हम इसको नहीं मानते क्योंकि यह बात वैदिक धर्म के सर्वथा विरुद्ध है। शास्त्र आज्ञा देते हैं कि वेदों को नित्य पढ़े, कभी त्याग न करे। अत: हम आपकी बात नहीं मान सकते।

पादरी १९—चारों वेदों में भविष्यवाणी का नाम और चिह्न तक नहीं मिलता। किन्तु कोई ऐसा वर्णन भी नहीं मिलता जिसको भविष्यता से कुछ सम्बन्ध हो।

आर्य—आपकी यह बात ठीक है। किसी आर्य को इससे इन्कार नहीं।

निस्सन्देह वेद को भविष्यवाणी का विचार है इसमें सत्यता नाम को भी नहीं, किन्तु सर्वथा मिथ्यापन है। और न इनसे कोई पूरी हुई, न होगी। तथा न समय पर लिखी गई। अन्यथा मसीह जैसे भविष्यवक्ता आजकल सहस्रों ज्योतिषी हैं। और बटाला शरीफ़ में ऐसे लोगों का एक महल्ला आबाद है। जितनी चाहें, भविष्यवाणियां करा लो। बुद्धिमानों ने सत्य कहा है :—

चूं ग़रज़ आयद हुनर पोशीदाशुद। ×

शोक ! आप लोग इन बातों को जो स्पष्ट धोखा देने वालो, कृत्रिम, मूर्खों के फिसलाने वाली, केवल सिर और पादरहित अविश्वसनीय हैं। इनको भी धर्म का आधार, सत्य का कारण जानते हो। जो आशिर: पाद असंभव है।

पादरी २०, २१—परमेश्वर की इस अनादि ज्ञान की कुछ ऐसी शक्तियाँ हैं। जिनका सम्बोधन घृत, गौ, और चित्रगुप्त की ओर है। और निरर्थक बकवास है। जिनका उदाहरण नीचे दिया जाता है।

"जारूगवा कमल की सरस (ढीली जूती) पहने हुए द्वार पर खड़ा है और आशीर्वाद दे रहा है। श्रीमन् ! कृपा पूर्वक बताईये कि प्रतिपदा के दिन मेल करने से क्या लाभ है ?

"इस बलि पर गौवें विद्यमान हैं। यह गौवें कीकट के मध्य क्या कर रही हैं ?"

हम आश्चर्य चकित होकर पूछते हैं कि उपरिलिखित वाक्यों में वह कौन सी बात है जिसको परमेश्वर के ज्ञान का प्रकाश समझा जाए ?

आर्य—महोदय ! आपने कोई प्रमाण, संख्या, चिह्नादि किसी वेदमंत्र का नहीं दिया। कहां ढूंडें, और किस पादरी जी से पूछें अथवा किस गिरजाघर के कोष्ठ में इन वस्तुओं को ढूंडें ? हमारा अनुमान तो यह कहता है कि इस स्थान पर आपने अपनी अज्ञानता का स्वयं स्वीकरण किया है। और शंका का अवसर न देखकर केवल व्यर्थालाप का प्रयोग किया। कहां वेद मुकद्दस और कहां व्यर्थ की गप्पाष्टक ? वेद इन व्यर्थताओं से रहित है। और यदि ढूंडना चाहो तो बाईबल का बावर्चीखाना इन कार्यों से भरा पड़ा है। यदि प्रमाण मांगें तो ग़ज़लुल्ग़ज़लियात (गीतों का गीत) का अध्ययन करो और खुदा के

× जब स्वार्थ होता है। विद्या की यथार्थता तिरोहित हो जाती है। (अनुवादक)

निकटस्थ, महान् और मुकद्दस दाऊद नबी की गन्दी हरकतें (जिसका बेटा होने पर मसीह को गर्व है) जो औरियाह की स्त्री बलहा के साथ क्रिया में आई इस पर ध्यान लगाओ (समवाईल २)

अगर दरख़ाना कसस्त हमीं इशारत बसस्त । +

पहिला भाग जिसमें आपके आक्षेपों का उत्तर है—समाप्ति को पहुंचा ।

अब हम वेदों के इलहामी होने की सिद्धि अर्थात् द्वितीय भाग का प्रारंभ करते हैं ।

इलहाम या लैक्चर--आंचे दर दिल कसे अन्दाज ख़ुदाताला ।×

(अज़ ग़यासुल्लुग़ात व मुन्तख़िब)

पादरी क्लार्क महोदय फ़रमाते हैं कि "शतियां बीत गई कोई भाषाविद् इस विचार को उत्पन्न करने के लिए नहीं निकला कि विद्वत्ता से सर्वसाधारण की प्रतिदिन की बोली जाने वाली बहुत सी भाषाओं को जांचे । संस्कृत विद्या की शिक्षा के ज्ञान से पूर्व कुछ ज्ञान न था । और इसने उन पुस्तकों के लिये जो तीस वर्ष हुए जर्मनी में प्रकाशित हुई है— बहुत कुछ सामग्री दी है । सात प्रकार के पाठों के विचार करने में हम बहुत ही सभ्यता पूर्वक निवेदन करते हैं अर्थात् उस संस्कृत के संबंध में जिसमें सब से प्राचीन ज्ञान है–यह एक ऐसी भाषा है, जिसमें बड़े २ विपुल उत्तम ग्रन्थ गद्य पद्य में हैं । जो थोड़े समय से योरुप वालों को ज्ञात हुए हैं । साईंस आफ़लेंगवेज (भाषा विज्ञान) का अध्ययन न जैसा अब किया जाता है, निःसन्देह भारत में अंग्रेजी राज्य का परिणाम है क्योंकि सरकारी रेज़ीडेंट सर विलिम जोंस ने इस पुरातन विद्या का बहुत से कोष जिसे जर्मन भाषा वालों ने बहुत ही गहरे अन्वेषण और धैर्य से अपनी तथा समस्त भाषाओं को खोलकर एकत्र किया और हमें लाभ पहुंचाया था ।" (देखो प्रतिष्ठित उक्त पादरी महोदय पृष्ठ ५, ६ सन् १८६२)

एक अन्य विद्वान् रिसर्चस्कालर कहता है कि "जिस प्रकार एक वनस्पति विद्या का ज्ञाता वृक्ष की आयु उस की शाखाओं की संख्या और उसके तना के घेरे से बता सकता है । इसी प्रकार एक भाषा शास्त्री भाषा की आयु इस भाषा की शाखाओं से और उस देश की लंबाई चौड़ाई से जिस पर पूर्व ही बता सकता है । क्योंकि अन्य कोई ऐसी भाषा स्वरूपतः पूर्ण और शाखा प्रशाखा युक्त संस्कृत जैसी नहीं है । अतः समस्त भाषा विदों की सम्मति में यह भाषा सब भाषाओं से साधारणतः बहुत प्राचीन मानी गई है ।" (देखो थियासोफ़िस्ट पत्रिका पृष्ठ २३८ अगस्त मास सन् १८८१)

अलफ़र्ड पादरी महोदय बहादर ने अपनी भाषाओं के क्रमिक विषय में कुछ प्राचीन यूनानी भाषाओं का संस्कृत से ही निकास और विकास निश्चित किया और निम्नलिखित टिप्पणी ध्यान देने योग्य दी है ।

आसमानी ख़ुदा को यूनानी लोग जीअसपीटर कहते हैं । इस बात का विचार करना चाहिए कि यह जैड के उच्चारण के समान है । अतः ज़ीअस शब्द वास्तव में डीअस बन जाता है । लातीनी इसी खुदा को पीटर अथवा जोपीटर कहते हैं । और वेदों में ईश्वर को देश पति कहते हैं ।

+यदि कोई घर में है तो इतना संकेत पर्याप्त है । अलमति विस्तरेण बुद्धिमद्वर्येषु । (अनुवादक)

×इलहाम वह है कि खुदा तआला किसी की के मन में डाले । (अनुवादक)

अब हमारे बाप खुदा जो सर्व अन्वेषणों का बाप है की वास्तविकता असत्य प्रगट हुई यह रिमार्क मैं इस लिए देता हूं कि साधारण स्थिर की हुई यह सम्मति जुंबश खा जाए कि इबरानो कथाएं चाहे इलहामो हों अथवा न हों प्रत्येक प्रकार से बहुत ही प्राचीन हैं और सबसे पहिली भाषा में लिखी गयी हैं।

यह बात भी सत्य नहीं कि इबरानी कथानक बहुत ही प्राचीन हैं और न यह कि इबरानी सबसे पहिली भाषा है। किन्तु इसके विरुद्ध जैसा कि गोल्डज़ीही महोदय ने सिद्ध कर दिया है कि यह (इबरानी के) कथानक बाहिर से लिये गए हैं और भाषा चाहे दूसरी चाहे तीसरी श्रेणी की अवस्था में है। अब तौरात की उत्पत्ति पुस्तक की क्या प्रतिष्ठा है ? जिसक आदम और हव्वा की शर्तें स्थिर करने के लिये कहा जाता है कि कुछ सहस्र वर्ष हुए कि वह पृथिवी पर समस्त प्राणियों के अगुवा हैं।

पादरी वार्ड महोदय फरमाते हैं कि संस्कृत व्याकरण असीम है और लिखने वालों की बुद्धि की योग्यता और सूक्ष्मता उदाहरण है। वास्तविक बात यह है कि शब्द विद्या (व्याकरण) में आर्य लोग रोमन यूनानी और वर्तमान समय की मनुष्य जातियों से सबसे बढ़कर हुए हैं इनके कोष बहुत उत्तम हैं जो इनकी योग्यता और सुधार के उत्तम प्रमाण हैं।"

(साईंस भारत त्रिकाल दशा अंग्रेज़ी मद्रास प्रकाशन पृष्ठ ५)

"सौ वर्ष व्यतीत हुए योरोपीय लोगों का ऐसा विश्वास था कि सब भाषाओं की मूल सुरयानी है किन्तु जिस समय संस्कृत में प्रवीणता प्राप्त की। तब यही ज्ञात हुआ कि फारसी, यूनानी, लिटन, जर्मन आदि भाषाएं संस्कृत से निकली हैं।" (देखो आफ़ दी स्टडी आफ़ इंगलिश पृष्ठ १ से ७)

एक दार्शनिक अंग्रेज़ ने बहुत बड़ी रिसर्च से सिद्ध किया है कि संस्कृत और यूनानी में बहुत बड़ी समानता है। यूनानियों ने अपने पूर्वजों और देवताओं का इतिहास सर्वथा संस्कृत से लिया है और कुछ शब्द तथा पुल्लिग, स्त्रीलिंग की पद्धति भी आर्यावर्त से प्राप्त की है।"

(साईंस आफ़ दी लैंगवेज पृष्ठ १७५)

सर विलियम जौंस महोदय फ़रमाते हैं कि—

"संस्कृत की रचना अतिविचित्र है। यूनानी से वह अधिक पूर्ण है और लिटर से बढ़कर विस्तृत हैं तथा दोनों की अपेक्षा बहुत अधिक घुली हुई है।

(साईंस आफ़ दी लैंगवेज पृष्ठ १८४)

रौमन कैथूलिक सम्प्रदाय के प्रतिष्ठित पादरी दुबी महोदय फरमाते हैं कि अब यह बात भाषाओं की खोज से प्रकाशित दिन की भांति प्रगट हो गयी है कि प्राचीन काल की सम्पूर्ण परिभाषायें पूर्व से प्रचलित हुई हैं। और वर्तमान काल के संस्कृतज्ञों के यत्न से यह अच्छी प्रकार सिद्ध हो गई है कि योरुप की वर्तमान भाषाओं के धातु प्रत्ययादि पूर्व को भाषा संस्कृत से हैं।"

(बाईबल इन इण्डिया न्यूयार्क प्रकाशन १८८१ ईस्वी)

लार्डमान ब्रो महोदय फ़रमाते हैं कि भारत के ब्राह्मणों में एक ऐसी भाषा प्रचलित है जो हूमर यूनानी महाकवि की भाषा से प्रत्येक प्रकार से सुसंस्कृत है। (साईंस आफ़ दी लैंगवेज पृष्ठ १८५)

श्री हलहुंड महोदय फ़रमाते हैं कि संस्कृत के शब्दों को अरबी, फारसी, मिलटो यूनानो से बहुत समता है और समता परिभाषाओं के मध्य ही नहीं है कि जिससे यह विचार किया जाए कि जब एक जाति ने दूसरी जाति के ज्ञान विज्ञान लिये तो उसके साथ ही वह भी अर्थात् परिभाषायें भो ग्रहण कर

लो हूं– ऐसी बात नहीं किन्तु उसके अतिरिक्त समता तो भाषा के मूल शब्दों में है। जैसा कि नाम, संख्याओं के नाम और उन वस्तुओं के नाम जिनकी आवश्यकता प्रत्येक जाति को सभ्यता प्राप्त पर होती है।" (बंगाली व्याकरण की भूमिका और साईंस आफ़ दी लैंग्वेज पृष्ठ १८३)

फ्रीडर्कवान सगेल महोदय फ़रमाते हैं कि –

"इसमें सन्देह नहीं कि संस्कृत, यूनानी लाटिन जर्मनी से सम्बन्ध नहीं रखती हैं। किन्तु पिता पितरों से हैं। क्योंकि यह ही इनका निकास स्थान है। जिसके सम्बन्ध में सक्स यूं कहता है कि यही आर्यों की प्राचीन आरंभिक भाषा है। महर्षि पाणिनि और उनके पूर्वजों का व्याकरण बहुत ही पूर्ण है। इसी भाषा में दर्शन, पदार्थविद्या, आत्मविद्या लिखी हुई हैं कि जिसका योरुप कृतज्ञ है।"

(हिस्ट्री आफ दी मेडीसन पृष्ठ २१, २२)

लेबनीज़ महोदय ने सिद्ध कर दिया है कि मैं अपनी खोज के अनुसार कहता हूं कि सब भाषाओं की मूल भाषा संस्कृत है और मनुष्य समाज पूर्व से पश्चिम को आया।"

(साईंस आफ़ दी लैंगवेज पृष्ठ १५२)

जर्मन लोगों में से पहिले पोप महोदय ने संस्कृत की ओर ध्यान दिया और अपनी भाषा में इन का व्याकरण लिखा। इस भाषा ही से यह सिद्ध होता है कि जब किसी देश और किसी जाति में विद्याओं का प्रकाश न था। तब भारत में ज्ञान चरम सीमा पर था। हिन्दुओं की धार्मिक पुस्तकों में से चार वेद एक अति प्राचीन ग्रन्थ हैं। यह वेद आर्यों के धर्म, राजनीति और ज्ञान का आधार हैं। आर्यों की शेष पुस्तकों की नींव ही वेद हैं। धर्म शास्त्रों की पुस्तकों में वेद के ही आदेश लिखे हैं। वेद ही को दार्शनिक अथवा आधार मानते हैं। वेद ही को वैयाकरण अपने नियमों का स्रोत बताते हैं। संक्षेपतः सम्पूर्ण विद्याओं के विद्वान् इसी वेद भंडार को अपनी विद्या का स्रोत बताते हैं।

(अतालीके पंजाब १८७१ ईस्वी से)

स्पष्ट हो कि भारत देश प्राचीन मनुष्योत्पादक भूमि है। उसके मूल निवासी आर्य लोग वास्तव में वही हिन्दु कहलाते हैं। और जैसा कि यह देश प्राचीन है। ऐसा ही इसका धर्म भी प्राचीन है। किन्तु शोक यह कि इस देश का कोई ऐसा इतिहास नहीं कि जिसके देखने से प्राचीन वृत्तान्त ज्ञात हो सके। हां, धार्मिक ग्रन्थों में वेद तो प्राचीन और नित्य रहने वाला है। मतों का मूल और प्राचीन धर्म केवल इससे ज्ञात हो सकता है। अतः सब धर्म वालों को आवश्यक है कि वेद का ओर ध्यान देवें। और इससे वास्तविक धर्म का मार्ग जानें। और यह समझ लें कि जिस प्रकार किसी नदी के स्रोत को जानने के लिये पर्वतों के नीचे का झरना देखना आवश्यक है। इसी प्रकार प्राचीन धर्म का स्रोत ज्ञात करने के लिये वेद का अध्ययन आवश्यक है। किन्तु संस्कृत विद्या की चर्चा न रहने के कारण लोग वेद को जानने और पढ़ने पढ़ाने से बाधित हैं। और वास्तविक धर्म का ज्ञात होना तथा मतों के मतभेद मिटाना वेद के जाने विना संभव नहीं। यद्यपि समस्त वेद प्रेरणा स्रोत हैं। किन्तु विशेषतः इसके उपनिषद् ग्रंथ उपदेशों से भरे पड़े हैं। (देखो ब्राह्म समाज बरेली रुहेला खंड को मासिक पत्रिका जोलाई १८७७ ईस्वी जिल्द १ क्रम संख्या पृष्ठ १३१, १३२)

एक और योग्य ऐतिहासिक फरमाते हैं कि "रूमी, फ्रांसीसी, अंग्रेज़, यूनानी, जर्मन, ईरानी आदि लोगों के पूर्वज आए थे।" पुनः वही ऐतिहासिक कहता है कि "गणितविद्या, अध्यात्मविद्या, दर्शन के आदि गुरु यही (आर्य) हैं।"

इन उपरिलिखित साक्षियों से प्रत्येक समझदार मनुष्य जान सकता है कि संस्कृत भाषा सब भाषाओं से पूर्ण, विस्तृत, सुन्दर और सबसे अधिक प्राचीन है। इसी बात का चाहे प्रगट नहीं किन्तु छिपे छिपे ? आपको भी स्वीकार है जैसा कि आप लिखते हैं कि—

"संस्कृत एक अन्य भाषा से निकली है जो इससे प्राचीन थी और जिस का नाम और चिह्न तक अस्तित्व की पृष्ठ भूमि से नष्ट हो गया है।" (पृष्ठ १४ पंक्ति ७,८)

पादरी जी ! जिसका नाम और चिह्न अस्तित्व के पृष्ठ से नष्ट हो गया है। क्या इसके सम्बन्ध में आपका दावा करना अपनी नासमझी को स्वीकार करना नहीं है ?

साथ ही यह भी खोल कर बताया गया कि सब सभ्यजातियों का मूल एक ही जाति से है। और वही एक ही आर्य जाति सब से प्राचीन, सभ्य और ज्ञानप्रिय तथा विद्या से विभूषित है। और उन दिनों जब सर्व देश मूर्ख थे इसी देश और जाति में आत्म विद्या, ज्ञान, सदाचार, शिल्प, उद्योग और सभ्यता आदि का प्राबल्य था। क्योंकि आर्यों के उन्नति काल में सब जातियां मूर्ख थीं।

अब सोचने का स्थान है कि जब आर्यावर्त को उन्नति सब देशों से प्राचीन है और आर्य जाति सब जातियों से प्राचीन है तथा सस्कृत सब भाषाओं से प्राचीन और विस्तार युक्त तथा सुस्पष्ट है। संस्कृत में भी वेद सबसे प्राचीन हैं और उनके ग्रन्थ जिन्होंने सब जातियों से पूर्व उन्नति की और वह इनको इलहामी मानते हैं। इस आधार पर वेद अवश्य इलहामी हैं। क्योंकि ऐतहासिकों के कथन के अनुसार प्राचीन आर्य लोग बहुत सच्चे, न्याय प्रिय तथा दयालु हुआ करते थे।

इसी को आप एक अन्य प्रकार से भी सोच सकते हैं कि ज्ञान शिक्षा के विना नहीं आता। और शिक्षा के विना कोई ज्ञान पुस्तक नहीं बन सकती तथा जो जितना योग्य विद्वान् होगा उसको पुस्तक उतनी ही महत्ता से भरी होगी। तौरेत जिनको आप लोग इलहामी मानते हैं। वह वास्तव में दस आदेश हैं जो इसतिस्ना के अध्याय ५ आयत २३ तक खरूज अध्याय २० आयत १ से ७ तक लिखे हैं। जिसके आगे मूसा कहता है कि—

"यही बातें खुदा ने पर्वत पर आग के और बदलो (मेघ) के तथा अन्धकाररहित अवस्था के मध्य तुम्हारी सारी जाति को उच्चघोष के साथ इससे अधिक कहीं और कुछ न फ़रमाया। और उसने उनको पत्थर की दो तखतियों पर लिखा और उन्हें मुझे दिया।"

किन्तु स्पष्ट हो कि यही दस आदेश वेद में बहुत उत्तमता से नामी आज्ञा के अपवाद के साथ विद्यमान हैं। जबकि वह मूसा को मसीह से १४६१ वर्ष पूर्व ज्ञात हुए और इसी प्रकार वह आदेश मनुस्मृति में तौरेत से अधिक उत्तम रीति से लिखे हैं —

संख्या १—मेरे सम्मुख तेरा दूसरा खुदा न होवे।

संख्या नं० २—तू अपने लिए तराशी हुई मूर्ति न बना और न उसे नमस्कार कर।

टिप्पणी सं० १ (१) यजुर्वेद अध्याय ४० मंत्र १, ५, ८ तथा अथर्ववेद कांड १० प्रपाठक २३ अनुवादक ४ मंत्र २७,३० यजुर्वेद १४।३१ ऋग्वेद अष्टक ६ अध्याय २ वर्ग ३५ मंत्र १ मनुस्मृति १२।१२३ शतपथ प्रपाठक ६ ब्राह्मण ७ कंडिका १०।

(२) यजु २२।३ ४०।८ शतपथ कंडिका १४ मनु १।७ केनोपनिषत् वाक् नंबर १,२,३,४,५,६,७,८ प्रथम खंड।

टिप्पणी सं० २—किन्तु इन दस आदेशों का स्वयं बाईबल में खंडन भी विद्यमान है।

नंबर १ का खंडन—पैदायश १।२६, २।२२, १८।१,२ मतो २८।१६।

नंबर २ का खंडन—खरूज २५।१८-२०।

नंबर ३ का खंडन—मती २७।२६।

नंबर ४ का खंडन—मती १२।१-३ गबतियों ४।१० शईया की पुस्तक १।१३।

नंबर ५ का खंडन—मती १४।२६-५०।

नंबर ६ का खंडन—खुरूज ३२।२७-२६ बलाअमी २-१०।११,३०।

नंबर ७ का खंडन—इसतिस्ना २१।१०-१४गिनती ३१।१८, यौसीअनबी की पुस्तक १।२-४।

नंबर ८ का खंडन—खुरूज ३।२१,२२ तथा १२।३५,३६।

नंबर ९ का खंडन—यरमियाह ४।१० पौलुस को दूसरी पत्री तसलिक्रियो को २।११ सलातीन १-२२।२१-२३।

नंबर १० का खंडन—इसतिस्ना २१।१०-१२।

टिप्पणी नंबर १–३–(१) तू खुदावन्द का नाम व्यर्थ में मत ले।

—४–सब्त के दिन कार्यमत कर।

—५–(२) अपने पिता और माता का मान कर।

—६–(३) तू रक्तपात मतकर।

—७–(४)तू दुराचार मतकर।

—८–(५) तू चोरी मतकर।

—९–(६) तू अपने पड़ौसी पर झूठो साक्षी मत दे।

—१०–(७) तू अपने पड़ौसी की पत्नी अथवा धन का लोभ मतकर।

जब वेदों, शास्त्रों, मनुस्मृति आदि में इससे बहुत उत्तम पद की आत्मिक प्रेरणाएं और धार्मिक आदेश विद्यमान हैं और यह भी विद्यमान् हैं तो पुनः कोई बुद्धिमान किस प्रकार इससे पूर्व की आज्ञा को छोड़कर पश्चात् वाले को इलहामी मान सकता है ? जबकि यह प्रत्येक प्रकार से सिद्ध है कि मनु तो बहुत ही प्राचीन हैं किन्तु भारत भी तौरेत से बहुत प्राचीन है जैसा हम व्याख्यान सं० १ में सिद्ध कर चुके हैं।

एक योग्य दार्शनिक पादरीं महोदय फ़रमाते हैं कि—

---

(१) यजु ४०।८ मनु ५।१०९

(२) यजुर्वेद की तैत्तिरीयोपनिषत् अनुवाक ११ तथा मनु २।४३,२३४,२३६ यजु अ० १६ शतपथ कांड ३ प्र० ५ अ० ७ ब्रा० ४ क० २०

(३) यजु ४०।३ मनु १०।६३ यजु १।१

(४) यजु ४०।१ मनु ३।५५,६०,६१

(५) यजु ३०।४ मनु ६।९२ १०।६३

(६) यजु १।५ मनु ६।९२

(७) मनु ६।९२ यजु ४०।१

"मैंने वेद से शिक्षा ग्रहण ी जिनके अमूल्य पृष्ठों से उनके सहस्रों वर्ष की रचना का काल गिना जा सकता है और जिनकी शिक्षा से उसके सहस्रों वर्ष ईथेंज़ आदि का नाम और चिह्न तक भी न था प्रत्येक युवक विद्यार्थी (ब्रह्मचारी) जीवन के उद्देश्य आचरण में लाता था। इन प्राचीन काल के श्लोकों को जो मूसा और ईसा की उत्पत्ति से पूर्व ब्रह्मा के समक्ष जा कर पढ़े जाते थे—सुना। मैंने मनु के इन नियमों और विधानों को समझने का यत्न किया जिसका प्रबंध इस युग के सहस्रों वर्ष पूर्व जबकि इबरानियों के आदेश खुदा की तखती बादल के गर्जन, बिजली के चमकने की बात भी न थी ब्राह्मणों के द्वारा प्राप्त हुआ था। कुछ हो भारत मुझे पुनः अपनी वास्तविक प्राचीन अवस्था में दृष्टिगत हुआ है। मैंने इस साधन से समस्त संसार में बौद्धिक प्रकाश देखा मैंने भारत के विधान, सदाचार, सभ्यता और धर्म का प्रभाव मिश्र, फ़ारिस, यूनान, रोम में पाया। मैंने वज्रमुनि के वेद भाष्य को सुकरात अफ़लातून के काल से पूर्व पाया।"

(देखो दी बाईबल इन इन्डिया अंग्रेज़ी न्यूयार्क अमरीका प्रकाशन १८८१ ईस्वी पृ० ३५)

अपने काल में सरविलियम जौन्स कहते थे कि संस्कृत का इतिहास बहुत प्राचीन है और मूसा के समय से पूर्व भारत, मिश्र, यूनान में यही धर्म था। जहां तक कि भारत मिश्रादि के संबंध में कहा जाता है कि जो रिसर्च सब से उस बिनबसीन, सम्पोलियन, लीनारमेंट, गलीडन आदि प्रसिद्ध दार्शनिकों ने की है। उनसे एशियाटक सोसाएटी के योग्य प्रधान का दावा सिद्ध होता है।"

(देखो जिनीस ३२ का पृ० ८८० से ८९१ तक)

मनुस्मृति के संबन्ध में सर विलियम विन्सन महोदय भूतपूर्व जज सुप्रिमकोर्ट फ़रमाते हैं कि—

"यह मनुस्मृति किसी समय में यूनान और मिश्र देश तक प्रचलित थी और इस ही पर आचरण होता था।" (देखो मानवधर्म सार संपादित राजा शिव प्रसाद गवर्नमेंट प्रैस इलाहाबाद द्वारा प्रकाशित १८८१ ईस्वी पृ० १)

जहां तक विचार किया जाता है वेदों के प्रमाण समस्त प्राचीन पुस्तकों और महाभारत में विद्यमान हैं। उदाहरणत :—

सं० १—बुद्ध अपने बुद्धशास्त्र में वेदों को अपने से पूर्व बताते हैं। (बुद्धशास्त्र अ० २ सूत्र १)
" २—पारसियों की पुस्तक में वेद का वर्णन विद्यमान है।
(देखो दसातीर बफ़रार आबाद व ख़शूरान फ़खशूर आयत ३७)
" ३—मीमांसा में वेद वर्णन (१।१।८)
" ४—वेदान्त १।३ में वेदों के इलहामी व अनादि होने की स्वीकृति है।
" ५—योग १।२६ में वेद वर्णन है।
" ६—न्याय २।१।६७ में वेद वर्णन है।
" ७—सांख्य ५।११ में वेद वर्णन है।
" ८—वैशेषिक ६।१।१ में वेद वर्णन है।
" ९—रामायण बालकांड १।१४ में वेद वर्णन।
" १०—सूर्यसिद्धान्त में वेद वर्णन है।
" ११—सुश्रुत में वेद वर्णन है।

" १२– चरक में वेद वर्णन है।
" १३– मनु अ० २ में वेद वर्णन है।
" १४– शतपथादि चारों ब्राह्मणों में वेद वर्णन है। शतपथ कांड ११
" १५– उपनिषदों में वेदों का वर्णन है। तैत्तिरीयोप० ७८।१२
" १६– व्याकरण में वेदों का वर्णन है।

जब समस्त आर्ष ग्रन्थ वेदों को इलहामी और अनादि मानते चले आए हैं। केवल विश्वास से नहीं। किन्तु युक्तियों से भी अन्य सबमें वेदों का वर्णन विद्यमान है और वेदों में किसी का वर्णन नहीं। इस दृष्टि से भी वेद प्राचीन और इलहामी हैं। प्रत्येक मनुष्य को उसका अपना मन साक्षी देता है कि जिस प्रकार इस समय मनुष्य शिक्षा के विना अज्ञानी है। इसी प्रकार आरम्भ सृष्टि में भी था। इसके पश्चात् यह प्रश्न–

कि क्या मूसा के समय इलहाम की आवश्यकता हुई – पूर्व नहीं थी? अथवा दाऊद के समय इलहाम की आवश्यकता हुई – पूर्व नहीं थी? अथवा ईसा के समय इलहाम की आवश्यकता हुई पूर्व नहीं थी?

परमेश्वर ने जब आंखों के लिए सूर्य प्रकाश, खाने के लिए भिन्न २ प्रकार के अन्न और मेवे, निवासार्थ भूमि, जीवन व्यतीत करने के लिये जलवायु, पुष्प फुलवाड़ी, नीरोगता के लिए वनस्पति, धातु, औषधादि उत्पन्न किये। जो समस्त प्राकृतिक हैं तो क्या जीव के लिए आरम्भ सृष्टि में कुछ नहीं किया?

क्या शारीरिक शान्ति से आत्मिक शान्ति महत्वशाली नहीं?
क्या शारीरिक सभ्यता से अध्यात्म सभ्यता महत्तायुक्त नहीं?
क्या डाक्टरी से योग का अधिक महत्व नहीं?
क्या मल्लयुद्ध से उपासना श्रेष्ठ नहीं?
क्या शरीर से जीवात्मा श्रेष्ठतम नहीं?

क्या शरीर के लिये जब ईश्वर ने सब कुछ बनाया तो जीवात्मा के लिये कुछ नहीं बनाया? यदि बनाया तो क्या और कहां?

इन सभी प्रश्नों पर विचार करने के पश्चात् स्वार्थियों, लोभियों के लिये भी अधिक विश्वास है कि किसी सत्य के इच्छुक को इन्कार नहीं होगा कि जीवात्मा के लिये भी आरम्भ सृष्टि से ही ज्ञान अथवा उपदेश की आवश्यकता थी। अन्यथा पश्चात् भी केवल व्यर्थ थी। क्योंकि इब्राहीम व मूसा के समय लोग पढ़े लिखे विद्यमान थे। दाऊद भी पढ़ा लिखा व्यक्ति और कवि था। ईसा के समय भी शिक्षा प्रचलित थी। संसार में सभ्यता प्रसरित थी। प्रतिष्ठित व प्रसिद्ध दार्शनिक और विद्वान् भारत, मिश्र और यूनान में विद्यमान थे। अरस्तू, अफ़लातून, सुक़रात, ज़रदुश्त, वाल्मीकि, वसिष्ठ, गौतम, व्यास, जैमिनी की शिक्षा व उपदेश को यदि कोई कुछ भी पक्षपात छोड़कर विचार से विश्लेषण करे तो उसे क्रमिक रात्रि को चमकने वाले चंद्रमा तथा संसार के प्रकाश सूर्य का भेद प्रतीत हो। इसके अतिरिक्त समस्त संसार के वर्तमान मतों में भिन्न २ रूपों में जितनी उत्तम २ बातें या उपदेश हैं। वह सब वेद-मुकद्दस व पवित्र शास्त्रों में विद्यमान हैं। पुनः हम नहीं समझ सकते कि सूर्य के प्रकाशित होने पर इन

की क्या आवश्यकता है ? जब कि इनमें अमृत भी विष संपृक्त है । "नीमहकीम खतराए जान व तीन खुदा खतराए ईमान" है और वेदों में केवल अमृत ही है– विष का नाम और चिह्न तक नहीं ।

स्वयं तौरेत आदि को ईसाई महोदय मसीह के सुसमाचारों के लिए मानते हैं – अधिक नहीं मानते । जैसा कि इञ्जील में कहा है कि—

"जो शरीयत के कर्मों पर विश्वास करते हैं—सो लानत के आधीन हैं ।"

पुन: कहता है कि—

"मसीह ने हमें मोल लेके शरीयत की लानत से छुड़ाया है ।" (गलतियों ३।११,१३)

पुन: कहता है कि—

"शरीयत मसीह के पहचानने को हमारा गुरु केहगा । पुन: जब ईमान आ चुका, तो हम पुन: गुरु आधीन नहीं रहते ।" (गलतियों ३।३ ,)

यह तो आपको भी माननीय है कि खुदा की सत्ता परिवर्तन से रहित है, तो पुन: उसका गुण अर्थात् ज्ञान परिवर्तित हो सकता है ? क्या कुदरत का क़ानून परिवर्तित हो सकता है ? यदि इन बातों का उत्तर शून्य के अतिरिक्त कुछ नहीं । तो क्या इसको इलहाम बदलने को आवश्यकता हो सकती है ?

आर्यसमाज के सदस्यगण और प्राचोन काल के ऋषि मुनि लोग भो यही मानते हैं कि वेद ज्ञान में क़ुदरत के कानून का ही वर्णन है। किसी देश या जाति या व्यक्ति को कोई ऐतिहासिक कथा नहीं कि जिनमें परिवर्तन होता रहता हो । अत: ऐसा ज्ञान क्या अनादि नहीं ? और किसलिये वह परिवर्तन रहित नहीं ? और इससे तो कोई मतवादो भो इन्कार नहीं कर सकता कि वेद का कोई आदेश आजतक परिवर्तित नहीं हुआ । और न आगामी में बदलेगा । क्योंकि ईश्वर क़ुदरत का स्वामी है । और कुदरत इसके स्वामित्व में है । पूर्ण ज्ञान से ही कुदरत के क़ानूनों की शोभा है । और वही ज्ञान वेदों में है। अथवा यूं कहो कि वह ज्ञान वेद है । जैसे कर्ता के ज्ञान और उस के उपदेश अथवा शिक्षा का वेद में भेद नहीं होता । वैसे ही ईश्वर और उसकी कुदरत के विधान तथा उसकी शिक्षा के सम्बन्ध में वेद में कुछ भी भेद नहीं होता । अत: आर्यों की ओर से सूर्य प्रकाशवत् यह दावा है कि वेद केवल इलहामी ही नहीं किन्तु अनादि भी है । क्या कारण कि ईश्वर अनादि है ? क्योंकि कोई ऐसा समय न था और न होगा जिसमें वह ज्ञान से शून्य हो । इससे स्पष्ट खुले रूप में परिणाम प्रगट है कि कोई ऐसा समय न था कि जिसमें वेद (ज्ञान) विद्यमान न हो। इस आधार पर सिद्ध हुआ कि वेद इलहामी और अनादि भी हैं और यही हमारा दावा था।

व्याख्यान नं० ५ का उत्तर

आपका यह पांचवां व्याख्यान ईश्वर की सत्ता के सम्बन्ध में है । जिसमें उन्होंने रिसर्च की है कि वेदों में नवीन वेदान्त की शिक्षा है । इसके विरुद्ध नहीं । निस्सन्देह प्रत्येक सत्याभिलाषी को यह पवित्र अन्वेषण करना चाहिये । और जो पुस्तक ईश्वर का ज्ञान करावे—सत्यमार्ग दिखावे, धोखा से बचाए, वही इलहामी और सच्ची है। और वही ईश्वरीयाज्ञा है । और ऐसी ही पुस्तक पर ईमान लाना समुचित है ।

इस विचार को दृष्टि में रखकर हम न्याय से प्रेमपूर्वक पादरी महोदय के आक्षेपों की पड़ताल करेंगे । और पूर्व की खोज के अनुसार असत्य पर सत्य को धर्मपूर्वक प्रमुखता देंगे ।

पादरी ३, ४—आर्य लोग मानते हैं कि एक उत्तम सत्ता है और एक ऐसा खुदा है जो अपनी प्रजाओं का ध्यान रखता है, इनकी आवश्यकता पूर्ति करता है, और सदैव इन पर दया की वृष्टि बरसाता है। केवल वह वास्तविक उपास्य है। ऐसी प्रार्थनाएं उसी की शोभा के अनुरूप हैं। उपदेशक और हाथ थामने के लिये मनुष्यमात्र की आंख उसी पर लगनी चाहिये। और उसी का अपने धर्म की स्थिति का हेतु समझना चाहिये। क्योंकि वही सब (जगत्) का उत्पादक और सब (जीवों) का अधिपति है। आजकल के आर्यों का यही विश्वास और सिद्धान्त है। और जहां तक देखा जाता है। यह सर्वथा ठीक और सत्य है। इसमें कोई दोष नहीं आ सकता। किन्तु हमारा आक्षेप यह है कि इनके वेदों और दूसरी पवित्र पुस्तकों में तो इसका मार्ग नहीं मिलता।

आर्य—हम आपके कथन से बहुत कुछ सहमत होकर केवल अन्तिम वाक्य का उत्तर देते हैं। कि यही हमारा धर्म है और यही सद्विद्या की पुस्तकों का मन्तव्य है। यदि पूछो कि वह मन्त्र कौन से हैं तो देखो :—

आर्याभिविनय नामी पुस्तक में एक सैंकड़ा से अधिक अर्थ सहित मन्त्र वर्णित हैं। यह पुस्तक मूल्य देकर प्रत्येक बड़े समाज से मिल सकती है, अन्यथा यंत्रालय प्रयाग से मंगा लें।

पादरी ५—ईश्वरीय सत्ता पर विश्वास करने के स्थान पर वह नवीन वेदान्त का मन्तव्य (कि सब कुछ वही है) बड़े बल पूर्वक सिखलाते हैं, अर्थात् उनकी शिक्षा यह है कि स्वयं ईश्वर ही प्रत्येक वस्तु है। कोई ऐसी वस्तु नहीं, जो इसका प्रकाश न हो। इसके अतिरिक्त अन्य कोई वस्तु वर्तमान नहीं, जो कुछ विद्यमान प्रतीत होता है, वह केवल माया ही है।

आर्य—पादरी महोदय! यह आपका कथन सर्वथा वास्तविकता के विरुद्ध है। न हम ऐसा सिखाते हैं और न हमारा ऐसा सिद्धान्त है। हम ऐसे ईमान को लानत के योग्य समझते हैं। न जाने कि यह सिर से पाद तक निराधार बातें किससे सुनकर किस पर आरोपित कर रहे हैं आप?

पादरी ५—वेदों में ऐसी आयतें भी हैं। जिनमें ईश्वर की सत्ता एक उत्तम विचार माना जाता है। किन्तु हमाओस्त (सब कुछ वही है) का अपवित्र मन्तव्य जिसका अभी वर्णन हो चुका है, इसको दोष से रहित नहीं होने देता। वेदों और अन्य मुकद्दस पुस्तकों की शिक्षा इसी प्रकार की है।

आर्य—हम माह्यते ऋग्वेद (ऋग्वेद की वास्तविकता) के उत्तर में सदाकते ऋग्वेद (ऋग्वेद की सत्यता) नामी पुस्तक में और तथा इसी क्रम में बता चुके हैं कि हमाओस्त (सब कुछ वही है) का सिद्धान्त वेदों का नहीं। वेद सर्वथा इसके विपरीत है, और केवल वेद ही नहीं, किन्तु समस्त आर्ष ग्रन्थ इसके विरुद्ध और इसका खंडन करते हैं। जब यह अवस्था है, तो स्वयं आपके कथन से सिद्ध है कि वेदों में ईश्वर सम्बन्धी बहुत उत्तम विचार पाए जाते हैं।

पादरी ५ से ७ तक—हम इन पुस्तकों से कुछ प्रमाण उद्धृत करेंगे जिससे प्रत्येक मनुष्य प्रगट हो जाए कि वास्तव में इनमें किस प्रकार की शिक्षा है :—

सं० १—शारीरिक अध्याय २ पाद २ सूत्र ११
" २—शारीरिक अ० २ पाद ३ सूत्र ४१
" ३—शारीरिक अ० २ पाद ३ सूत्र ४३ व अध्याय २ पाद १ सूत्र १३
" ४—शारीरिक अ० १ पाद १ सूत्र ३

सं० ५—ऐतरेय ब्राह्मण मंत्र १ पत्र २६
" ६—तैत्तिरीय ब्राह्मण पत्र ८७
" श्वेताश्वतर मंत्र ३

अन्य संकेतों के लिये हम अपने पाठकों को व्याख्यान नंबर ३ का प्रमाण देते हैं जहां उनका विस्तृत वर्णन है।

आर्य—हम उचित समझते हैं कि मूल सूत्र लिखकर इनका यथार्थ अनुवाद लिखें।

सं० १—महद् दीर्घवद्वा ह्रस्व परिमंडलाभ्याम् ॥ वेदान्त अ० २ पाद २ सूत्र ११

अनुवाद—महत् और दीर्घ को ह्रस्व और परिमंडल परमाणुओं से ईश्वर ही बानता है।

सं० २—परात्तुतच्छ्रुतेः ॥ वेदान्त २।३।४१

अनुवाद—प्रकृति से इस जगत् की नींव सुनी जाती है, अर्थात् जगत् प्रकृति से बना है।

सं० ३—अंशो नाना व्यपदेशादन्यथा चापि दाश कितवादित्वामधीतेराके ॥

वेदान्त २।३।४३

अनुवाद—यह भी एक ऋषि का मत है कि जीव अंश के तुल्य है चेतन शक्ति के कारण से। क्यों कि दाश, केतु आदि लोग ब्रह्म को प्राप्त होंगे।

यह सूत्र ४३ का अनुवाद है। जिस का अच्छी प्रकार से इसी अध्याय के इसी पाद के सूत्र ४६ में अभिप्राय विद्यमान है। और सूत्र १३ तो सर्वथा आप के विरुद्ध है। क्योंकि इस में यह लिखा है कि यदि ब्रह्म पर भोक्ता होने का दोष आएगा जब कि ऐसा नहीं है। क्योंकि यह बात प्रायः स्पष्ट है कि ब्रह्मकर्मों के फल भोगने से पृथक है। और जीव फल भोगता है।

सं० ४-अर्थात् १।१।१ में बताया है कि जिन को ब्रह्म की जिज्ञासा हो अर्थात् ईश्वर की प्राप्ति की इच्छा जो मनुष्य रखता हो, वह इस ग्रन्थ का अध्ययन करे। पुनः इसी पाद के सूत्र २ व ३ में प्रगट् किया है कि ब्रह्म कौन है ? जिस के उत्तर में व्यास जी ने बताया कि समस्त जगत् के जन्म मरणादि जिस की आज्ञा से होते हैं। जो सब जगत् को प्रकृति से उत्पन्न करता है। इस के अतिरिक्त ऋग्यजुः सामाथर्व वेद चतुष्टय का ज्ञानदाता, प्रकाशक, सर्व विद्या प्रद, सच्चिदानंद स्वरूप है—वही ब्रह्म है। क्योंकि न तो जगदुत्पत्ति स्वतः हो सकती है और न वेदाविर्भाव के बिना किसी को ज्ञान हो सकता है। प्रारम्भ में समस्त मानव मात्र विद्याविहीन थे। इस आधार पर सदैव मनुष्य जाति के ज्ञानार्थ वेदमुकद्दस का प्रकाश इसी परमेश्वर से है, अन्य किसी से नहीं। क्योंकि ऐसी पूर्ण सब सद्विद्याओं की पुस्तक किसी पूर्ण ज्ञान (सर्वज्ञ) के अतिरिक्त नहीं हो सकती। अतः वह सर्वज्ञान परम धर्म है।

सं० ५—ऐतरेय ब्राह्मण का कोई प्रमाण आपने नहीं दिया और न ढूंडने से कोई पता चला।

सं० ६—तैर्तरेय ब्राह्मण प्रथम तो अप्रामाणिक है। दूसरे आप ने कोई प्रमाण नहां दिया। पुनः हम कहां ढूंडें ?

सं० ७—श्वेताश्वतर अप्रामाणिक है। (देखो व्याख्यान सं० १ के उत्तर पृष्ठ ३ की टिप्पणी)

और इस का भी कोई ठीक प्रमाण नहीं दिया। हम भी आप के व्याख्यान नम्बर २ का पुण्यमय उत्तर अपने व्याख्यान सं० २ में लिख चुके हैं।

आप ने पृष्ठ ८ से १० तक वही भाषा लिखी है। जो व्याख्यान सं० २ में पृ० १० से १३ तथा व्याख्यान सं० ३ में पृष्ठ ३, ४ पर लिखी है। इस आधार पर इस का उत्तर देना हम यहां व्यर्थ समझ कर पाठकों का ध्यान व्याख्यान सं० २ की ओर दिलाता हूं। यदि अधिक देखना चाहें तो देखो सत्यार्थप्रकाश पृष्ठ २५८ से २६६ तक तृतीय वार।

पादरी—११—हम वेदों और उन पुस्तकों के मन्तव्यानुसार जिन को स्वामी दयानंद जी ने सत्य स्वीकार कर लिया है (देखो व्याख्यान सं० १) के प्रमाणों की मर्यादा से बाहिर नहीं निकले हैं।

हम अपने पाठकों को पुनः स्मरण दिलाते हैं कि जैसा हमने व्याख्यान सं० १ में कहा है कि स्वामी दयानन्द जी ११ उपनिषत् और छे शास्त्रों की वेद समरूप मानते हैं।

आर्य—आप सर्वथा अपने वचन से बाहिर हो गये हैं। आप ने प्रथम व्याख्यान लिखने के पश्चात् पुनः नहीं देखा कि वहां दस उपनिषत् हैं (देखो व्याख्यान १ पृष्ठ ६ पंक्ति ८, ६)

इस के अतिरिक्त हम आप के बहुत से अनुचित प्रमाण खंडित कर चुके हैं। (देखो उत्तर सं० १ से ४ तक)

पादरी ११—आर्यों का यह भी दावा है कि यह पुस्तकें (अभिप्राय छे दर्शनों से है) एक दूसरे से सर्वथा सहमत हैं। केवल सहमत ही नहीं किन्तु वह एक दूसरे को प्रकाशित और व्याख्यात करती हैं। उदाहरणार्थ वैशेषिक दर्शन में पदार्थों का स्वरूप, न्यायदर्शन में उन की विशेषता, सांख्य में उन का मूल और पंतजलि में इन उपरिलिखित पुस्तकों को शिक्षा समझने के सम्बन्ध में लिखा है। जैमिनी में धर्म और धर्मात्माओं का वर्णन है। वेदांत दर्शन में मोक्ष और उसकी प्राप्ति के उपायों का वर्णन है। यह स्वामी दयानन्द जी का मन्तव्य है। यदि सत्य है तो एक पुस्तक के न होने से शेष का समझना कठिन होता है। जैसा कि चाबी के बिना ताला किसी काम का नहीं।

आर्य—यहां भी आप ने भूल की। स्वामी जी का मन्तव्य ऐसा नहीं। (देखो सत्यार्थप्रकाश संस्करण ३ पृ० ७२ पंक्ति १२-३०)

"प्रश्न—जैसा सत्यासत्य और दूसरे ग्रंथों का परस्पर विरोध है, वैसे ही इन शास्त्रों में है।

उत्तर—मैं तुम से पूछता हूं कि विरोध किस स्थल पर होता है ? क्या एक विषय में अथवा भिन्न भिन्न विषयों में ?

प्रश्न—एक विषय में अनेकों का परस्पर विरोध कथन हुआ हो तो इसको विरोध कहते हैं। यहां भी सृष्टि एक ही विषय है।

उत्तर—क्या विद्या एक है वा दो ? यदि एक है तो व्याकरण, वैद्यक, ज्योतिषादि का पृथक पृथक् विषय क्यों है ? जैसे एक विद्या में अनेक विद्या के अवयवों का एक दूसरे से भिन्न प्रतिपादन होता है। वैसे ही सृष्टि विद्या के भिन्न २ अवयवों का शास्त्रों में प्रतिपादन करने से इन में कुछ भी विरोध नहीं। जैसे घड़े के बनाने में कर्म, समय, मट्टी, विचार, संयोग, वियोगादि का पुरुषार्थ, प्रकृति के गुण और कुंभकार कारण है। वैसे ही सृष्टि का जो कम कारण है उस की व्याख्या मोमांसा, में समय की व्याख्या वैशेषिक में, उपादान कारण की व्याख्या न्याय में, पुरुषार्थ की व्याख्या योग में, तत्वों के अनुक्रम पर गणना की व्याख्या सांख्य में और निमित कारण जो परमेश्वर है—उस की व्याख्या वेदान्त शास्त्र में है। इस से कुछ भी विरोध नहीं"।

इस आधार पर यही कारण है कि कोई व्यक्ति किसी शास्त्र को पढ़े विना नहीं समझता । जो नैयायिक है, वह योग नहीं जानता । और जो केवल योगी है वह सांख्य नहीं जानता । जो सांख्य का वेत्ता है वह वेदान्त नहीं जानता । और केवल वेदान्त के जानने वाला वा केवल मीमांसक अन्य शास्त्रों से वंचित है । यदि तुम्हारे कथनानुसार ऐसा नहीं हैं तो क्या एक के जानने से शेष पांचों का विद्वान् हो जाना सम्भव है ? जबकि सर्वथा असम्भव है । संसार पृष्ठ पर कोई उदाहरण नहीं । अतः आप के आक्षेप कच्चे और अभिप्राय रहित हैं ।

पादरी—१२—यह शास्त्र परस्पर कट्टर विरोधी हैं । शारीरिक अध्याय १ पाद १ सूत्र ५ और अध्याय २ पाद २ सूत्र १, १२, १३, १७ में सांख्य दर्शन की और अध्याय २ पाद ३ सूत्र १३—१७ में वैशेषिक दर्शन की और १७ व ३३ में न्याय दर्शन की अध्याय २ पाद के अन्य सूत्रों में जैमिनि की बहुत गत बनाई है ।

आर्य– हम इस के उत्तर में भी उचित समझते हैं कि मूल सूत्र लिख करके आप के आक्षेप की वास्तविकता प्रगट कर दें ।

सं० १ ... ईक्षते र्नाशब्दम् ।। वेदान्त १।१।५

रचनानुपपत्तेश्चानुमानम् ।। २।२।१

उभयथापिन कर्मातस्तद् भावः ।। २।२।१२

अपरिग्रहाच्चात्यंतमन पेक्षा ।। २।३।१७

नैकस्मिन्न संभवात् ।। २।३।३३

इन उपरि लिखित समस्त सूत्रों में बताओ कि इन में सांख्य, वैशेषिक और न्याय का कहां वर्णन है ?

पादरी—इस के अतिरिक्त देखा जाता है कि इन पुस्तकों के रचयिता एक दूसरे को अति गाली-गलौच देते हैं । उदाहरणतः न्याय वेदान्त दर्शन को नास्तिकता की पुस्तक कहता है । वेदान्त इस के उत्तर में न्याय को कुत्ते के नाम से पुकारता है । सांख्य इन दोनों को लानती बताता है । और पतंजलि इन तीनों को स्वार्थी और निरर्थक पुस्तकें बताता है ।

आर्य—श्रीमान् ! यह सर्वथा आप की निरर्थक और व्यर्थ स्वभावजन्य गालियां हैं––

चूं हुज्जत नमांद जफ़ाजूएरा ।

ब पुरखाश दरहम कशद रूएरा ।।+

समस्त न्याय दर्शन में वेदांत दर्शन का वर्णन वा नाम और चिह्न तक नहीं । क्योंकि वह इस से सहस्रों वर्ष पूर्व की रचना है । और सांख्य में इन का वर्णन नहीं । जब व्यास पतंजलि के पश्चात् हुए (देखो व्याख्यान सं० १ पृष्ठ १५) जिसे आप ने स्वयं ऐसा माना है तो पतंजलि उन को किस प्रकार (ईश्वर न चाहे) गालियां दे सकते हैं और क्या आर्य ऋषियों से ऐसा होना सम्भव है ? क्योंकि आप ने

+जब अत्याचारी के लिये कोई युक्ति और तर्क नहीं रहता । तो लड़ाई झगड़ा—गालीगलौच से मुख को बिगाड़ लेता है । (अनुवादक)

भी कोई प्रमाण नहीं दिया। केवल बाईबल के इलहामों को भान्ति निरर्थक गप्प हांक दो। अतः हम किसो प्रकार नहीं मान सकते। किन्तु सर्वथा अप्रेल फूल समझते हैं। यदि सत्यवादी हो तो हमारी भान्ति प्रमाण दो। अन्यथा ऐसी व्यर्थताओं से आप के पक्ष में मौनावलम्बन श्रेष्ठतर है।

पादरी १३—सांख्य दर्शन की टीका के विज्ञान विषय में निम्न शिव पार्वती की कथा उल्लिखित है कि जिसका संक्षेप यह है। कि (मैं भिन्न २ रूप धारण करके उनको भिन्न २ समयों में भिन्न २ प्रकार से ठगता रहा) इससे हम परिणाम निकाल सकते हैं कि ऋषियों का एक दूसरे की पुस्तकों के सम्बन्ध में किस प्रकार का विचार होता था ?

आर्य—आप पुनः कहेंगे और गप्प मारेंगे कि हम स्वामी दयानन्द जी की प्रामाणिक पुस्तकों के प्रमाण से बाहिर नहीं निकले। देखो स्वामी जी ने सांख्यदर्शन पर भृगु कृत भाष्य माना है (सत्यार्थ-प्रकाश पृ० ७२) और विज्ञान भिक्षु तो आजकल का एक वेदान्ती हो गुज़रा है। दो सहस्र कहां वह तो पांच सौ वर्षों से बहुत पीछे का है। वह कोई ऋषि वा मुनि भी नहीं किन्तु एक वाममार्गी था। यह कथा निस्सन्देह उसने लिखी है। किन्तु यह सांख्यदर्शन के सूत्र का अर्थ नहीं, किन्तु इसी टीकाकार ने पद्म-पुराण की (देखो पृष्ठ ७ कलकत्ता प्रकाशन) एक कथा उपहास रूप से संसार के मतमतांतरों पर अपनी भूमिका में लिखी है। जिसका परिणाम यही है कि दुराचारी ही नहीं किन्तु स्वयं शिव जी भोले महा-देव भंग वा चर्स वा धतूरे को तरंग में यह समस्त उपद्रव करते रहे। जैसा कि आज कल के भंगो चरसी नशा प्रयोग करते समय शिवजी को पुकारा करते हैं। वही अवस्था विज्ञान भिक्षु की इस कथा से है। किसी वेद, किसी शास्त्र, किसी उपनिषत् वा ब्राह्मण का वह वाक्य नहीं और न किसी में वह कथा है। किन्तु पद्मपुराण में वह भ्रमात्मक कथानक है। हम इसको बाईबल की गप्पों की भान्ति अप्रामाणिक मानते हैं।

पादरी १५...देखा जाता है कि वर्तमान काल के आर्य लोग तीन पदार्थों को अनादि व अनुत्पन्न मानते हैं, अर्थात् ईश्वर, प्रकृति और प्राणियों के जीव।

आर्य—यह बात आपकी सर्वथा सत्य है, और हम इसके प्रत्येक वाक्य से सहमत हैं। हम लोग ऐसा ही मानते हैं और यही हमारा धर्म है।

पादरी १५ से ३२ पृष्ठ तक एक लम्बी व्यर्थ भाषा इस मन्तव्य पर लिखते हैं कि माया को आर्य लोग मानते हैं। जब कि यह बुद्धमत की शिक्षा है।

पुनः लिखते हैं कि हमारे आर्य मित्र हमको बताएं कि मुकद्दस वेदों में माया के मन्तव्य की शिक्षा कहां मिलती है ?

आर्य—यह आपका सिर से पांव तक असत्य वर्णन और व्यर्थ दोषारोपण है। कोई आर्य, समाज का सदस्य माया को नहीं मानता और न ही वेद मुकद्दस मानते हैं और न स्वामी जी ने कहीं इसका संकेत किया है (जैसा कि दूसरे मतस्थ मानते हैं) अतः आपने इतना समय व्यर्थ गंवाया है।

पादरी २३—आर्यमत ईश्वर का बहुत ही अपमान करता है : आर्य ईश्वर की अप्रतिष्ठा करते हैं। और इनके अनुसार सारी पृथिवी की समस्त गन्दगी भी वही है।

आर्य—यह आपका कथन आर्यधर्म से किसी प्रकार अनुकूल नहीं। हम संसार की प्रकृति को नित्य

मानते हैं। और उसको सदैव अनादि काल से जगत् के उत्पन्न करने की सामग्री, परमेश्वर की कुदरत के आधीन में जानते हैं। अतः हम या कोई अन्य आर्य भी ऐसा कभी नहीं मानता कि ईश्वर स्वयं ही प्रत्येक वस्तु बन गया और संसार की गन्दगी भी वही है। हम ऐसे सिद्धान्त पर लानत भेजते हैं। और ऐसे लोगों को नास्तिक समझते हैं। हम जीवों को ईश्वर नहीं मानते हैं और न ईश्वर का अंश और न ही परमाणुओं को ईश्वर मानते हैं। किन्तु हम तीनों को पृथक् २ अनादि काल से मानते हैं। परमाणु जड़ हैं। किन्तु ईश्वर जड़ नहीं। जीव अल्पज्ञ और दुःख सुख के बन्धन में हैं। किन्तु ईश्वर ऐसा नहीं। वह सर्वज्ञ और सच्चिदानन्द है। किन्तु आपकी बाईबल ऐसा ही मानती है।

सं० १--"सब वस्तुएं उस (खुदा) से विद्यमान हुईं अन्य कोई वस्तु विद्यमान न थी जो इसके विना हो जीवन इसमें था। वह जीवन मनुष्य का नूर था। (यूहन्ना १।३-४)

सं० २–खुदावन्द के वचन से आसमान बने और उनकी सब सेनाएं उसके मुखके प्राण से (बनीं) उसने कहा और वह हो गया। उसने फ़रमाया और वह कार्य परिणत हुआ। ज़बूर २३।६,१०)

सं० ३– उसने आदेश दिया और वह सत्ता में हो गए। उसने उसको नष्ट न होने वाली स्थिरता प्रदान की। (ज़बूर १४०।५)

सं० ४– ईमान ही के कारण हम जान गए कि संसार खुदा के वचन से बन गए, ऐसा कि जो पदार्थ देखने में आए, उन पदार्थों से नहीं बने जो देखे जाते हैं। (इबरानियों की पत्री ११।१३)

इसके साथ ही यूहन्ना के प्रथम अध्याय की प्रथम आयत भी दृष्टिगत करनी चाहिये कि--

"प्रारम्भ में वचन था। वचन ईश्वर के साथ था और वचन ईश्वर था।" (यूहन्ना १।१)

अब हम वही शब्द जो आपने पृष्ठ २३ की पंक्ति १४ से १९ तक हमारे सम्बन्ध में भूल से लिखे हैं। बाईबल की सेवा में और आपके अर्पण करते हैं। अर्थात् ऐसे झूठे और निष्कासित करने वाले मन्तव्यों के अनुयाई सत्यमार्ग से सैंकड़ों कोस दूर भटकते फिरते हैं। वह स्वभाव से अपने मन और आत्मा के पापी हैं। सुधारक और दूसरों का उपदेष्टा होना तो कहां ? अभी उन्होंने सदाचार शिक्षा और धार्मिक नियमों का क ख सीखना है। वह अविनाशी परमात्मा के तेजः स्वरूप को असत्य से बदल डालते हैं। इसलिये कि वह उसकी पवित्र सत्ता में समस्त पाप, मूर्खताएं, दुराचार (जिनसे संसार विषाक्त है) संयुक्त करने से इसे अति अपमानित करते हैं। और हमारे सिद्धान्त के सम्बन्ध में पादरी जी ने पृष्ठ ४ की पंक्ति १३ में फ़रमाया है कि "उनके मन्तव्य पर हमारा आक्षेप नहीं, और जहां तक विचार किया जाता है हमारी उनके साथ सहमति है।" अतः जो हमारा सिद्धान्त है। वह हम निवेदन कर चुके। अब हम बताते हैं कि बाईबल का खुदा अपमान करती है।

सं० १—बाईबल का खुदा जल्लाद है। (समवाईल १।१५-२,३ व ६।१९ इसतिसना ४।२४ तौशीअ़ १०।११ गिनती २५।४ समवाईल २-२४।१)

सं० २—बाईबल का खुदा अज्ञानी है। (पैदायश २२।१ अय्यूब २।३ पैदायश ३।९-११ ६।१३ ११।६,७)

सं० ३—बाईबल का खुदा न्यायकारी नहीं। (पैदायश ९।२५ खुरूज २०।५ रूमियों का पत्र ९।११-१३ मती १३।१२ इसतिसना १४।२१ समवाईल २ २४।१७)

सं० ४—बाईबल का खुदा अल्पज्ञ और सीमित है। (पैदायश ११।५ १८।२०-२३ खुरूज ३३।२०-२३ पैदायश ३।८)

सं० ५—बाईबल का खुदा दुराचार सिखाता है। (यरमिया १८।११ यशाया ४५।७ हिज़्क़ीईल २०।२५ पैदायश १९।३० से ३८)

सं० ६—बाईबल का खुदा झूठ बोलता और झूठ बुलवाता है। (यरमियाह ४।१० क़ाज़ियों ९।२३ हिज़्क़ीईल १४।९)

सं० ७—बाईबल का खुदा शरारत का पुतला है। (समवाईल १ १८।१० खुरूज ७।१४ १।१०)

सं० ८—बाईबल का खुदा अपने कर्मों से पछताता है। (पैदायश ६।६-८ ८।२१-२२)

अब हम इञ्जील के इलहाम का एक उत्तम आदर्श निवेदन करते हैं। पाठक ध्यान से पढ़ें।

"किन्तु यदि कोई समझे कि मैं अपनी कन्या से अशुभ काम करता हूं—जो वह सियानी हो और ऐसा होना अवश्य है तो जो वह चाहता है करे उसे पाप नहीं।" (करन्थ्यों ७।३६ इञ्जील नागरी प्रकाशन इलाहाबाद १८७४ ईस्वी पृष्ठ ५-६)

और इसका परिणाम तथा आचरण। देखो हज़रत लूत पैग़म्बर की कथा—

(तौरेत पैदायश १९।३०-३८ तक)

जब बाईबल खदा पर इतने दोष लगाती है और मनुष्य के मन में इसका निरादर करके बदनाम कराती है, मनुष्य की शरारत को बढ़ाती और दुराचार और बदकारी में उत्साह दिलाती है, वह एक सच्चिदानन्द परमेश्वर से हटाकर तीन के पंजा में फंसाती है। अतः वह किसी प्रकार भी खुदा का कलाम नहीं हो सकती। और न उपदेश की पुस्तक कहला सकती है। किन्तु वेद इसके विपरीत परमात्मा की सत्ता को सम्पूर्ण दोषों से रहित पवित्र शुद्ध तथा पाप–अज्ञान से रहित, सर्व शक्तिमान् सर्वाधार, न्यायकारी बताते और ज्ञान से समझाते हैं। वेदों की शिक्षा बुद्धिवर्द्धक, आत्मिक शान्ति का स्वाद चखाने वाली, परमेश्वर के एकत्व की सत्यता और तसलीस को असत्यता को बुद्धिगत कराती है। इस आधार पर वेद ही ईश्वर का ज्ञान है। वेद ही सत्यता की कान है। प्रत्येक मनुष्य को जिसे सत्य की तलाश और आत्मिक शान्ति स्वीकृत हो वह इस दया के स्रोत और ईश्वरीय पहिचान के उद्यान से सेराब और सुगन्धित होने के लिये ध्यानावस्थित होना स्वीकार करे।

हे परमात्मन्! हमारा निवेदन हमारे स्वदेशी भाईयों के मन में संयुक्त करा और उन्हें अपने पूर्ण ज्ञान की ओर प्रेरित कर, जिससे वह मसीहदास, ईसा बख़्श, ईसा चरण होने से पृथक् होकर तेरी आज्ञाओं पर आचरण करें। और वास्तविक शान्ति, आत्मिक उन्नति से आनन्दित होकर सच्चे महान् पूर्वजों की सच्ची सन्तान कहलावें। अलम्।

व्याख्यान सं० ५ का उत्तर समाप्त हुआ।

व्याख्यान सं० ६ का उत्तर

हमारे कृपालु मित्र पादरी जी का यह छठा व्याख्यान यज्ञ के सम्बन्ध में है। जिसे वह क़ुरबानी के नाम से सम्बन्धित करके मसीह के प्रायश्चित्त के चिह्न रूप में उपस्थित करते हैं। कुरबानी शब्द से ही उनके व्याख्यान का आरम्भ है। और इसी पर बहुत लम्बी चौड़ी खेंचातानियों के पश्चात् समाप्त

किया है। जैसा कि हमारी आरम्भ से पद्धति रही। वही इस समय भी बरतनी पड़ी। (अर्थात् पादरी जी की प्रामाणिक पुस्तकें आंखों के सम्मुख रख कर उत्तर लिखना)

इस व्याख्यान में उन्होंने अपने लेख को प्रभावशाली बनाने के लिये एक प्रतिष्ठित हिन्दु को भी सम्मिलित किया अर्थात् बहुत कुछ उसकी पुस्तक से सहारा लिया। इस कारण से इसके उत्तर में हमें दो महानुभावों से साम्मुख्य है, और सामना भी क्या ? किन्तु हिंसा और अहिंसा का वितंडा अथवा सत्या-सत्य का वादविवाद।

यदि हमारा विश्वास (ईश्वर न चाहे) असत्य, मिथ्या सिद्ध हुआ तो हमें उसके परित्याग करने में कुछ भी इन्कार नहीं। क्योंकि हमारे पवित्र नियम मिथ्यापन के मानने के लिये हमें बाधित या दुःखी नहीं करते। किन्तु खुल्लम खुल्ला अधिकार देते हैं। भय है तो इस बात का कि हमारा प्रतिवादी सत्य की खोज में हमारा किस प्रकार साथी होगा ? कुछ भी हो इस वचन पर :-

निन्दन्तु नीति निपुणा यदिवा स्तुवन्तु, लक्ष्मीः समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम्।
अद्यैव वामरणंमस्तु युगान्तरे वा, न्याय्यात् पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः॥

(भर्तृ शतक)

"सांसारिक जन निन्दा करें या स्तुति, धन प्राप्त हो वा सब नष्ट हो जाए, शीघ्र मरना हो अथवा लम्बी सुदीर्घ जीवनी प्राप्त हो। इसके होने पर भी बुद्धिमान् धर्मात्मा लोग सत्य और सीधे मार्ग को जो ठीक न्याय है, कुछ भी परित्याग नहीं करते।"

इस नियम पर आचरण करके इस उक्ति के अनुसार कि :—

"दुश्मन अगर क़बीस्त निगहबान ववीतरस्त।" +(१)

सत्य के प्रकाश पर कटिबद्ध होते हैं।

"दुश्मन चेह कुनद चूं मेहरबान बाशददोस्त।" ×(२)

इस बात के मानने से किसी आर्य पुरुष को कभी इन्कार नहीं, किन्तु सदैव स्वीकार है और समस्त जीवन के संस्कारों का इस पर आधार है। प्रत्येक मनुष्य जिसे कुछ भी विवेक है, वह जानता है कि यज्ञ संसार के लिये बहुत आवश्यक है। यज्ञ से ही विद्वान् सुख को प्राप्त होते हैं। यज्ञ से ही दुष्ट गुणों से छुटकारा मिलता है। यज्ञ से हो शत्रु मित्र बन जाते हैं। समस्त सन्तारक सुख यज्ञ में सम्मि-लित हैं। अतः आर्ष विद्वान् यज्ञ को उत्तम वस्तु समझते हैं। और इस ईश्वरीयाज्ञा के पालन करने से संसार की उन्नति मानते हैं।

पादरी ५—वर्तमान हिन्दुमत बुद्धमत की भान्ति—और उसके प्रभाव के कारण सनातन धर्म के विरुद्ध सर्वथा यज्ञ का खंडन करता है। यह अवस्था देखकर हमें बहुत ही शोक होता है।

आर्य—यह आपका कथन सर्वथा मिथ्या है। हिन्दुमत यज्ञ का खंडन नहीं करता। किन्तु सर्वथा समर्थन करता है। हां, यदि यज्ञ से अभिप्राय आपकी कुरबानी है तो यही मिथ्या है। क्योंकि हिन्दुमत

+(१) यदि शत्रु बलवान् है तो रक्षक बलवत्तर है। (अनुवादक)

×(२) शत्रु क्या कर लेगा, यदि दयालु (परमेश्वर) मित्र होगा। (अनुवादक)

अपनी बहुत सी अविद्याओं के रूप में कुरबानी को उचित बताता है। देखो कलकत्ता में काली का मन्दिर और कांगड़ा में ज्वाला जी का मन्दिर और इस प्रकार नेपाल में जहां बकरी, भैंसे सैंकड़ों प्रतिदिन मारे जाते तथा मूर्ख लोग अपने कथनानुसार पुण्य मानते हैं। एक ओर अभी कुछ मास की बात है कि हमारे एक आर्य भाई को कोएटा जनपद में गए वहां कुछ साधु भैरों के निमित्त बलि देने के लिये एक बालक मारना चाहते थे कि परोक्ष सहायता रूपेण कुछ सरकारी अश्वारोही पहुंच गये और लड़के को उठा के साधू भाग गए। (देखो आर्यगज़ट जिल्द ३)

पादरी ५—और अधिकतर शोक की बात यह है कि आर्य समाज जिस की नींव आज कल केवल इस प्रयोजन पर आधारित हुई है कि वह वेद मत के वास्तविक सिद्धांत और पद्धति को स्थापित करे—वेद के इस सिद्धांत का खंडन करता है।

आर्य—आप ने केवल यही एक बात देखी। आर्य समाज तो सैंकड़ों बातों का (जिन के अनुगामी मूर्ख लोग हैं) खंडन करता है। और प्रत्येक उन में से आप के विचारानुसार ऐसी ही दृढ़ हैं जिन को समस्त हिन्दुमात्र सच्चे हृदय वा मन से मानते हैं कि वह वैदिक आदेश हैं—इन में सब की गुरु घंटाल मूर्ति पूजा है। जिसे केवल आर्यावर्त ही नहीं किन्तु समस्त संसार के लोग मानते हैं। आर्य समाज कहता है कि यह सर्वथा वेद विरुद्ध है। इसी प्रकार तीर्थ यात्रा, नदो पूजा, पर्वत पूजा, मृतक पूजा, देवी-देवता पूजा, ब्रह्मा विष्णु महेश पूजा, अवतार पूजा, जिनभूत पूजा, सूर्यचन्द्र पूजा, पीपल बड़ पूजा, अग्नि जल पूजा, प्रयोजन यह कि ३३ कोटि देवताओं की पूजा को आर्य समाज ने मलियामेट कर दिया है। आर्य महापुरुष परिव्राजकाचार्य स्वामी जी महाराज ने हिन्दु पंडितों को वाराणसी, बम्बई, हुगली, अमृतसर, मेरठ, अजमेर, फर्रुखाबाद, हरिद्वार आदि प्रसिद्ध स्थानों पर ऐसी खुली पराजय दी कि पराजित होते ही सैंकड़ों पंडितों वा उन के शिष्यों ने मूर्ति पूजा से सत्य हृदय के साथ प्रायश्चित्त किये कि ईश्वर की महती कृपा से हमें इस बुरी अविद्यारूपी बुराई से छुटकारा मिला। सैंकड़ों लोगों ने ठाकरों को मूर्तियां गंगा यमुना के अर्पण कीं।

किन्तु आप को और यजमानों के हत्यारे स्वार्थी पुरोहितों को अभी तक शोक ही रहा। हमें भी शोक, सहस्र शोक है कि धन्वन्तर-वेद की विद्यमानता में आप लोगों को स्वास्थ्य प्राप्ति नहीं हुई।

पादरी ७—डाक्टर मित्र महोदय का कथन है कि जब ब्राह्मणों का बुद्ध मत वालों से सम्बन्ध आ पड़ा तो उन्होंने भी धीरे और न जानते हुये जीव रक्षा को स्वीकार किया।

आर्य—यह केवल उन का कथन है। किन्तु आप जानते हैं कि धर्म की बात उपहास नहीं। हम प्रत्येक का वचन जो जो धर्म शास्त्र के विरुध हो मानने से इन्कारी हैं। वेद हमें आज्ञा देते हैं कि प्रत्येक कथन को सुनें किन्तु मानने के लिए हमें ईश्वर ने केवल एक ही आत्मा और एक ही जिह्वा दी है। हम प्रत्येक बात को यजु २६।३ की आज्ञानुसार स्वीकार नहीं कर सकते। क्योंकि हमें केवल बुद्धियुक्त मानने की आज्ञा है। व्यर्थ की नहीं। हम देखते हैं कि बुद्धिमत से सहस्रों वर्ष पूर्व की पुस्तकों में जीव रक्षा की आज्ञा है। और केवल आज्ञा ही नहीं किन्तु पुण्य का हेतु माना है। पुनः हम किस प्रकार एक व्यर्थ बात को स्वीकार कर सकते हैं।

पादरी १०—इस में कुछ सन्देह नहीं हो सकता कि जैसे आगे खुल जायेगा कि पुरुषमेध मानवी बलि देने की भी प्राचीन आर्यों में प्रथा प्रचलित थी।

आर्य—हज़रत ! ऐसा कदापि नहीं। और न सम्भव है। क्योंकि प्राचीन आर्य सभ्य, ज्ञान प्रिय और दयावान् हुआ करते थे।" कभी मनुष्य बलि आर्यधर्म ने नहीं मानी और न वेद ने उचित बताई है।

पादरी ३२—कुछ सन्देह नहीं कि प्राचीन आर्यों में मनुष्य बलि देने की प्रथा थी। और उसका प्रचलन वेदों के नियमानुसार था। यजुर्वेद में मनुष्य बलि का स्पष्ट २ आदेश है। यजु २४।२८ में प्रजापति के लिए मनुष्यों का बलिदान करने की आज्ञा है।

आर्य—हम आप की भूल मिटाने और लोगों को इस आंधी से सुरक्षित करने के लिए आवश्यक समझते हैं कि मूल मंत्र लिख कर उस का अर्थ करें।

(देखो तारीखे हिन्द लैथरिज महोदय कृत)

अनुवाद—जो राजा प्रजा पालनार्थ मनुष्यों और हाथियों को प्राप्त करता है। वही शक्तिशाली और बलवान् होता है।

पादरी ३६—वैदिक युग की प्राचीन प्रथाओं में एक का नाम महा प्रस्थान था। उस में आवश्यक था कि प्रथा का अनुयाई बेखटके समुद्र में चला जाए और इस प्रकार अपनी आयुरूपी तरणी कोनेस्ती के गरदाब में डुबो दे। एक अन्य शुद्ध करने वाली प्रथा तुशानल नामा थी। यह आज्ञा थी कि मनुष्य अपने आप को जला कर भस्म कर दे।

आर्य—यह बात वेद के सर्वथा विरुद्ध है। वेद ऐसे मनुष्यों को महापापी और नरक गामी बताते हैं। जैसा कि लिखा है कि:—

असुर्या नाम तेलोका अन्धेन तमसा वृताः।
तांस्ते प्रेत्यापि गच्छन्ति ये के चात्म हनो जनाः ॥ (यजु ४०।३

अनुवाद—महान्धकार जहां ज्ञान और प्रकाश का चिह्न नहीं। ऐसे नरक को वह लोग प्राप्त होते हैं जो आत्महत्या करते हैं।

हज़रत ! जब वेद का यह आदेश है तो हम आपकी निराधार बातों पर किस प्रकार विश्वास करें ?

पादरी ३७—ऋग्वेद मंडल १ अध्याय २ सूक्त १ और उसके पश्चात् में कुरबानी का वर्णन है। इन सूक्तों में शुनः शेप नामी एक मनुष्य का वर्णन है जो कि यूप से बन्धा हुआ और वध किये जाने के निकट था। वह दुःख भरे शब्दों में छुटकारा चाहता है। कि पुनः अपने माता पिता को देखे। यही ऋग्वेद के ऐतरेय ब्राह्मण, भादरीचा ब्राह्मण तथा रामायण के बालकांड में विस्तृत वर्णन है। मनु जी की संहिता में भी इसका वृत्तान्त लिखा है। शनुः शेप अपने पिता अजीगर्त को अपने वध के लिये छुरी तेज करते हुए देखकर घृणायुक्त शब्द वाणी से बोला।

आर्य—आपका प्रमाण भी अन्य प्रतिज्ञाओं की भान्ति सत्यता से दूर है। दूसरों को कष्ट देने के अतिरिक्त आपका अन्य कोई प्रयोजन दृष्टिगत नहीं होता। यह प्रमाण और आपके संकेत वास्तव में अष्टक १ अध्याय २ वर्ग १४ अथवा मंडल १ अनुवाक ६ सूक्त २४ मंत्र १२,१३ की ओर हैं। इस सम्पूर्ण सूक्त के १५ मंत्र हैं। जिनमें केवल १२,१३ में शुनः शेप का शब्द है। जिसका निरुक्तकार यास्क मुनि जो वैदिक कोष में यह अर्थ करते हैं:—

शवाशुपायीशवतेर्वा स्यादगतिकर्मणा श्वसितेर्वा ।। निरुक्त ३।४।१

(वा) शेप वैतस इति पुंस् प्रजननस्य शेपः शपतेः स्पृशति कर्मणो वैतसो विस्तृतं भवति । निरुक्त ३।४।४

शवा शब्द आशुपायी अर्थ में आता है। शवति से जिसका अर्थ गति है। वा श्वसति धातु से। गति का अर्थ ज्ञान, गमन, प्राप्ति है। वह अर्थ शवति का है। जिसका शवा शब्द होता है। जिसका षष्ठी का रूपश्वा है।

शेपः और वैतस प्रजननार्थक हैं। शपति धातु से जिसका अर्थ स्पर्श है।

इससे स्पष्ट सिद्ध है कि शुनः शेप उसका वाचक है जिसका विद्या से सम्पर्क हो अर्थात् विद्वान् हो। यह वैदिक परिभाषा में किसी व्यक्ति विशेष का नाम नहीं। किन्तु द्विज के लिये प्रयुक्त होता है।

इन मन्त्रों में यूप का नाम नहीं और न कुछ वर्णन है। इस समस्त सूक्त में अजीगर्त का नाम भी कहीं नहीं है। और न कोई ऐसा शब्द है।

ऐतरेय ब्राह्मण का आपने कोई प्रमाण नहीं दिया।

भादरीचा स्वयं निरर्थक है। आपने उसका कोई प्रमाण भी नहीं दिया।

रामायण यद्यपि आपके व्याख्यान सं० १ के अनुसार अप्रमाणिक है। (देखो पृष्ठ ६) किन्तु उस का आपने कोई प्रमाण नहीं दिया और न किसी अध्याय या सर्ग या श्लोक का प्रमाण बताया।

मनु जी की संहिता का भी आपने कोई प्रमाण नहीं दिया। पुनः हम कहां ढूंढें। जबकि उसका आधार जो वेद है। वहां ही कोई चिह्न नहीं। अतः आक्षेप की कोई संभावना नहीं।

पादरी ४१-४२-५८ से ७० तक – पुरुषमेध के सम्बन्ध में एक सौ उनासी भिन्न २ देवताओं के नाम लिखे हैं। प्रत्येक देवता के लिये विशेष प्रकार का मनुष्य देवता के नाम के सहित वर्णित है। यह सब के सब तैत्तरिय ब्राह्मण में लिखे हैं। लेख इतना दीर्घ है कि उसकी इस संक्षेप में गुंजायश नहीं। डाक्टर मित्र महोदय ने अपनी पुस्तक इन्डो एरियन जिल्द २ पृष्ठ ८१ से ८२ में इंगलिश में इसे विस्तार से लिखा है। यहां इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि प्रत्येक अवस्था में प्रत्येक जाति वा वर्ण के स्त्री पुरुष बलि देने के योग्य वस्तु हैं। एक भी छूटा नहीं। (तैत्तिरीय ब्राह्मण अध्याय १)

आर्य—हमने आपके लेख को पढ़कर तैत्तिरीय ब्राह्मण को देखा। यद्यपि यह ब्राह्मण स्वामी जी ने प्रामाणिक नहीं माना- स्वामी जी इसको ऋषिकृत नहीं मानते। जिसे आपने स्वयं भी स्वीकार किया है। (देखो व्याख्यान सं० १ पृ० ६) किन्तु यह आपका आक्षेप तो उस अप्रमाणिक ग्रन्थ में भी नहीं। ज्ञात नहीं कि आपको झूठ बोलने से क्या लाभ हुआ ? हमने बहुत ढूंडा, इसका पता नहीं है। अतः पहिले तो यह अप्रमाणिक है। दूसरे पता रहित है। इसलिये हम उत्तर देने से बाधित हैं।

पादरी ५१—तैत्तिरीयारण्यक पृष्ठ ३३१,३३३

अबध्नन् पुरुषं पशुम् पुरुषं तमग्रतः।

उन्होंने पुरुष रूप पशु को कुर्बान किया। पुरुष जो प्रारम्भ से उत्पन्न हुआ था।

इसी प्रकार शतपथ ब्राह्मण पृ० ८३६

तेभ्यः प्रजापतिरात्मानं प्रददौ यज्ञो हो स्मामा ॥

संसार के अधिपति, प्रजापति ने अपने आपको इनके लिये दे दिया। क्योंकि वह उनकी कुर्बानी देना था।

आर्य—वास्तविक प्रयोजन हत हो जाने के विचार से आपने एक अपूर्ण वाक्य (ईश्वर न चाहे) खुदावन्द मसीह की कुरबानी के सम्बन्ध में लिख दिया। जिससे किसी प्रकार मसीह की सत्यता सिद्ध हो जाए। किन्तु शोक कि आपका विचार पूरा न हुआ। हम आपकी भान्ति अधूरे नहीं किन्तु पूर्ण लेख को उद्धृत करके इसका अनुवाद लिखते हैं।

अथ देवाः अन्योऽन्यस्मिन्नेव जुह्वतश्चेरुस्तेभ्यः प्रजापतिरात्मानं प्रददौ ......॥

शतपथ कं० ११ प्र० १

वेदाश्च वा असुराश्च । शत०

(इस आठवें ब्राह्मण के आरम्भ में अर्थात् देवता और असुर अथवा विद्वान् और मूर्ख वा शरारती लोगों की उपासना और यज्ञ के नियम बताए हैं। और विद्वानों का वर्णन करते हैं कि)

भिन्न २ देवता लोग परस्पर एक दूसरे के मुख में ग्रास आहुति का विसर्जन करते हुए परमेश्वर के नियम में विचरते और जीवमात्र को आनन्दित करते हैं किन्तु इस अवस्था में भी परोपकार रूप यज्ञ को नहीं छोड़ते हैं क्योंकि यज्ञ से ही विद्वानों को जीवन प्राप्ति होती है।

परोपकाराय सतां विभूतयः ।

परोपकार से अधिक अन्य कोई वस्तु नहीं। यह सत्य प्रशंसकों की शोभा है।

देखिये आपने कितना बिगाड़ कर लिखा है।

संख्या १—अबध्नन् पुरुषं पशुम् । यजु ३१।१५ की प्रतीक है।

संख्या २—पुरुषं जातमग्रतः । यजु ३१।९ से है।

संख्या १ का अर्थ यह है कि :—

देवाः अर्थात् विद्वान् महात्मा लोग इसी सर्वव्यापक, सर्वद्रष्टा परमेश्वर, परम पुरुष का ध्यान करते हैं।

इसकी निरुक्ति यह है कि :—

पशुः पश्यतेः ॥ निरुक्त ३।१।९

संख्या २ का अर्थ यह है कि :—

पुरुष अर्थात् सर्वव्यापक परमेश्वर सर्वजगत् से पूर्व था......... ।

दूसरे का अनुवाद यह है कि :—

उनके लिये परमेश्वर ने इन ऋषियों को आत्म ज्ञान दिया। निश्चय ही यही यज्ञ था।

(मनु १।२३)

आपने चालाकी से हमें फिसलाना चाहा–किन्तु सर्वथा असंभव है।

पादरी ५२–आत्मदा–अपने आपका देने वाला। बलदा=शक्तिदाता। जिसकी छाया, जिसकी मृत्यु अमृत नित्य जीवन है।

आर्य–हम इसका विस्तृत अर्थ ऋग्वेद की सत्यता में अब्दुल्लाह आथम महोदय के उत्तर में दे चुके हैं। किन्तु अच्छा, श्रीमान् के लिये भी यहां दूसरी बार सारा मंत्र अर्थ सहित देते हैं :–

य आत्मदा बलदा यस्य विश्व उपासते प्रशिषं यस्य देवाः।
यस्य छायामृतं यस्य मृत्युः कस्मै देवाय हविषाविधेम॥

(ऋग्वेद १०।१२१।२)

अर्थ :– जो जगदीश्वर अपनी कृपा से ही आत्म विज्ञान देने वाला है। जो बल, बुद्धि, पराक्रम का दाता है। जिस देव की सब विद्वान् उपासना करते हैं। जिसकी आज्ञा पालन से मुक्ति और जिसकी आज्ञा न मानने से मृत्यु प्राप्ति होती है। उसकी प्राप्ति के लिये हम लोग नित्य उपासना करें।

आपने पृष्ठ ४६ हर टांडच महा ब्राह्मण का प्रमाण दिया है। किन्तु वह हमें किसी प्रकार स्वीकार नहीं। क्योंकि अप्रमाणिक है। शतपथ ब्राह्मण के सम्बन्ध में आप स्वयं लिखते हैं कि :–

शतपथ ब्राह्मण में कई एक स्थानों पर पुरुषमेध का संकेत है। और प्रथम अध्याय में इस बलिदान की प्रथा का विस्तृत वर्णन है। यहां बलिदान को दृष्टान्त रूप से बताया है कि मनुष्य मारा नहीं जाता था किन्तु यह होता था कि वह एक वन में एकान्त वास में रहकर अपनी शेष आयु मनुष्यजाति से पृथक् व्यतीत करे। (पृष्ठ २२ पंक्ति १८) पुनः आप पृष्ठ ४६ की पंक्ति १८ में फरमाते हैं कि यह एक बड़ी विचित्र और विचारणीय बात है कि वेद की समस्त वाणी में कुर्बानी के लिए सर्वत्र यज्ञ का शब्द आया है न कि बलि।"

जब यह अवस्था है तो स्पष्ट प्रगट है कि वेदों में कहीं भी कुर्बानी का नाम और चिह्न नहीं। प्रामाणिक ग्रन्थों के जितने प्रमाण आपने मनुष्य बलि के विषय में लिखे हैं। हमने क्रमशः सबका खंडन करके वास्तविकता वर्णित कर दी है।

अब हम यह बताते हैं कि पशुबलि भी वेदों में नहीं है।

पादरी ११–वास्तव में कुर्बानी के समय पशुवध किये जाते थे। जैमिनि जी जो यज्ञ के सम्बन्ध में सबसे बढ़कर प्रमाण हैं–फरमाते हैं–देखो मीमांसादर्शन पृष्ठ ३७३

आर्य –ऐसा कदापि नहीं। आप ने बहुत बड़ी भूल की और यही कारण है कि सूत्र वा अध्याय वा पाद का कोई प्रमाण नहीं दिया। संभवतः आपको शिव वाममार्ग की आधारित टीका से भ्रम हुआ होगा। जो मूल मीमांसा के सर्वथा विरुद्ध है। क्योंकि वहां इसका कुछ भी अस्तित्व नहीं। संक्षेपतः मीमांसा में भी कुर्बानी का कोई चिह्न नहीं।

पादरी ११–मनु ५।२३ में फरमाते हैं कि कुर्बानियों में पशु अवश्य वध किये जाएं।

आर्य–वह मूल श्लोक यह है :–

बभूवुर्हि पुरोडाशा भक्ष्याणांमृगपक्षिणाम्।
पुराणेष्वपि यज्ञेषु ब्रह्मक्षत्रसवेषु च॥ मनु ५।२३

पूर्व ऋषियों ने एकान्तवास के कारण से वनों में रहने की अवस्था में घृतादि न मिलने के कारण मृग पक्षियों के भक्षण करने योग्य फल फूल को हविष्य अर्थात् हवन योग्य सामग्री बना कर यज्ञ किया है।

पादरी २७– मनु एक स्थान पर ब्रह्मचारी को अपने घर लौटाने पर गोमांस प्रयोग की आज्ञा स्पष्ट रूप से देते हैं। मनु ३।३

आर्य—यह आपकी भूल है। वह श्लोक यह है :—

तं प्रतीतं स्वधर्मेण ब्रह्मदायहरं पितुः।
स्रग्विणं तल्प आसीनमर्हयेत् प्रथमंगवा॥ मनु ३।३

जो स्वधर्म से युक्त, पिता (आचार्य) से विद्या का ग्रहण करने वाला, माला पहिनें हुए और पलंग पर बैठा हुआ विद्यार्थी है। उसकी गोदान से पूजा अर्थात् सत्कार करे।

पादरी १२—ऋग्वेद के इस सूक्त से जो माहसंमश्वमश्वम् है। कुछ मन्त्र पाठकों की भेंट करते हैं। अष्टक २ अध्याय ३ सूक्त १६२ (जैसा कि १५ मन्त्रों का अर्थ किया है)

आर्य—हम उचित समझते हैं कि इन्हीं १५ मन्त्रों का यथार्थ अनुवाद पाठकों की भेंट धरें। जिस से सत्यासत्य का निर्णय हो जाए।

संख्या (१) ऋतु ऋतु में यज्ञ करने वाले संग्राम में जिन वेगवान्–विद्वानों वा दिव्य गुणों से प्रगट हुए घोड़ों के पराक्रम को कहेंगे। इस हमारे पराक्रम को मित्र श्रेष्ठ, न्यायाधीश, ज्ञाता, ऐश्वर्यवान् बुद्धिमान् और ऋत्विज लोग कहें और इसके अनुकूल इसकी प्रशंसा करें।

स० (२) जो न्याय से संचित किए हुये धन से धर्म सम्बन्धी मुख्य कार्य करते हैं। वह परोपकारी होते हैं और सुखों को प्राप्त करते हैं।

सं० (३) जिस पुरुष ने वेगवान् घोड़े के साथ यह उत्तम पुष्टि युक्त भाग प्रथम पहुंचाया। क्योंकि घोड़ों की पुष्टि के लिये छेरी का दूध बहुत उत्तम है, वा जो उत्तम रूप सिद्ध कर्ता जन सुन्दर अन्नों में प्रसिद्ध उनके लिये विशेष ज्ञान के साथ सब ओर से प्रेरित करके बनाए हुए अन्न को प्राप्त होता है। वही सुखी होता है।

सं० (४) जो मनुष्य प्रत्येक ऋतु में उत्तम विद्वानों की यात्रा सिद्ध करने वाले विमान रूप रथ को तीन प्रकार से सब ओर से प्राप्त होते हैं, वा जो इस जगत् में दिव्य गुणों के लिये पुष्टिकारक, प्रथम सेवनीय भाग अपने गुण को प्रत्यक्षता से जानता हुआ जलों के झाग से विद्युत निर्माण के योग्य व्यवहार को प्राप्त होता है। उनको सत्कार युक्त करें।

सं० (६) जो स्तंभ के लिये काष्ठ काटने वाले, और जो स्तंभ निर्माता लोग घोड़ों को बांधने के लिये विशेष वृक्ष काटते हैं और जो घोड़े के लिये पुष्टिदायक मिसालह (औषध) को तैय्यार करते हैं, जो ऐसे कार्य में प्रत्येक प्रकार से मनुष्य सिद्धहस्त हैं वे सुखों को प्राप्त होते हैं।

सं० (७) जिसने विद्वानों और मेरी विज्ञान तथा प्राप्ति की इच्छाओं को धारण किया है, जो सुन्दरतम उक्त तथा आशाओं को अच्छी प्रकार प्राप्त होता है। जो वेदार्थ ज्ञान वाले बुद्धिमान् इसे चाहते हैं। ऐसे सज्जन को लोग उक्त विद्वानों के पुष्टियुक्त व्यवहार में नियत करें।

सं० (९) हे विद्वानों ! गति से पांव रखने वाले घोड़े के जिस कटे हुए मल को भिनभिनाती मखी खाती है, वा उस मखी के रखने से जो घोड़ा कष्ट से चिल्लाता है। कर्मानुष्ठान करने वाले हाथों और नखों में तुम्हारी सब वस्तुएं युक्त हूं। अर्थात् सेवकों को योग्य है कि घोड़े दुर्गन्ध रहित, लेपरहित, मखीरहित और डालनी से रहित, शुद्ध रखने चाहिए। अपने हाथ तथा रस्सी आदि से उत्तम नियमानुसार अपनी इच्छानुकूल चाल चलवाना चाहिये। ऐसा करने वाले मनुष्यों द्वारा घोड़े उत्तम कार्य करते हैं।

सं० (१०) हे विद्वानो ! उन को शुद्ध करने और निर्माण करने वालो ! जो उदर में ठहरे हुए कच्चे और कर्म से निकलने के योग्य गन्ध से अपान वायु के द्वारा जाता है—वा संवारने के योग्य हैं। आप उन पदार्थों को कूट कर और निर्मित करके पकाओ जिस से उसे सुरस करके सुन्दर पदार्थों के प्रयोग द्वारा रोग रहित करो।

सं० (११) हे विद्वान् ! तेरी चलायमान क्रोधाग्नि से तपाए हुए हाथ से जो शस्त्र निकाल कर शूल के समान पीड़ा कारक शत्रु के सम्मुख चला जाता है—वह भूमि में न गिरे—वा घास में न अटके किन्तु शत्रु संहार के लिए हो।

सं० (१२) जो लोग भोजन पकाने में बुरा भला नहीं देखते हैं—वा जो जल को पका नहीं सकते हैं और जो प्राणी के असेवनीय मांस को मिथ्या तर्क वितर्क व युक्ति प्रयुक्ति से सेवन करते हैं उन को ओम् और सुगन्ध प्राप्त न हों। हे विद्वन् ! तू इस प्रकार मांसादि के त्याग करने से रोगों को दूर कर।

सं० (१३) मांसाहारी जिस में मांस पकाते हैं अर्थात् वलटोई जो इस की अच्छी प्रकार परीक्षा करके निवृत्ति करते हैं। मांस से घृणा कर जो वटलोई को अच्छी प्रकार संचने के योग्य बरतन, वलटोओं के ढांपने की ढकनियां—अन्न पकाने की कढ़ाई आदि बरतनों के आकर्षण से उस को जानते और शुद्ध रखते हैं। वह प्रत्येक कार्य में प्रवृत्त होते हैं।

सं० (१४) घोड़े सिखाने वाले घोड़ों को चलाना, बिठाना, फिराना, पिछाड़ी बांधना, उस को उठाना और घोड़े का खिलाना पिलाना आदि सब कार्य तुम्हारे सिद्ध हों।

सं० (१८) हे विद्वानों ! तुम पृथिवी से सम्बन्धित वेग वाली अग्नि को जो विद्युत है उस को और जो तीन प्रकार की कलों (मशीनों) को ताड़ना देकर उन की गतियों को चालू करो। और प्रत्येक भट्टी पर कला यंत्रों का शब्द कराके विवेक होने से रमण कराने वाले ज्ञान कर्मों को सिद्ध करो अर्थात् विद्युत् अग्नि द्वारा तुम सब कार्य सिद्ध करो जिस में मनुष्यों के अंगों को शक्ति प्राप्त हो।

सं० (१९) तेरी विद्या से सिद्ध किये हुये विद्युत् रूप अग्नि का एक ऋतु-छिन्न-भिन्न करने वाले औषध-रस को नियम में रखते हैं। तथा जो शरीरों के ऋतु २ में कार्य की और अनेक पदार्थों में जोड़ों के जो रंग हैं उन के कार्यार्थ प्रयोग कराता हूं और अग्नि में डालता हूं। अर्थात् जो सब पदार्थों के छिन्न भिन्न करने वाले ऋतु के अनुकूल प्राप्त हुए पदार्थों में व्याप्त विद्युद्रूप अग्नि के काल और सृष्टि नियम करने वालों को सिद्ध करते हुए मोटी २ काष्ठ कोयला आदि वस्तुओं को अग्नि में छोड़ कर बहुत कार्यों को सिद्ध करें। वह शिल्प विद्या के ज्ञाता कैसे न हों ?

सं० (२०) हे विद्वन् ! तेरा मन मृत्यु समय तुझे कष्ट न दे और वज्र के समान विद्युत् तेरे

शरीर को ढेर मत करे। क्यों कि जो मनुष्य योगाभ्यास करते हैं वह मृत्यु रोग से पीड़ित नहीं होते। और न उन को रोग दु:खी करते हैं।

सं० (२१) यह उत्तम यज्ञ हमें गौ, गोड़े आदि और पुरुषार्थी पितरों और सब के पुष्टि कारक धन की वृद्धि और अखंडित, दोष रहित राज्य को प्राप्त करे और सब लोग इस यज्ञ में प्रवृत्त हों।

अतः सिद्ध है कि इस समस्त सूक्त में घोड़े की कुर्बानी का वर्णन+(१) नहीं और न कहीं अन्यत्र है।

पादरी १६—एक स्थान पर ऋग्वेद अष्टक ४ अध्याय १ सूक्त १५ में लिखा है कि तीन सौ गाव मेष कुर्बानि की गई थीं। पुनः दूसरे स्थान पर ऋग्वेद भाग २ पृष्ठ ४१० में उपासक प्रार्थना करता है कि एक सौ भैंसे कुर्बानि किये जाएं।

आर्य—हम ने इन दोनों स्थानों को बहुत ध्यान से देखा। कहीं भी इस विषय का चिह्न नहीं। न जाने कि यह गप्प आप ने कहां से हांक दी।

पादरी १६—जैसा कि वास्तव में एक स्थान पर गो मांस को सर्वोत्तम भोजन लिखा है। ऋग्वेद मंडल ६ सूक्त १६।

आर्य—हम ने समस्त सूक्त नं० १६ पड़ताल किया किन्तु किसी वाक्य से भी आप का प्रयोजन सिद्ध न हुआ और न कोई ऐसा मंत्र मिला जिस में इस का मार्ग दृष्टिगत हो। हाँ, एक मंत्र में सायणाचार्य ने हिंसा समझी है जिस का हम यथार्थ अनुवाद लिख देते हैं।

आत अग्न ऋचाहविर्ह्‌दाताष्टं भरामसि।
ते ते भवन्तूक्षण ऋषभाषो वशा उत। ऋग्वेद ६।१६।४७

तुम शुद्ध अन्तःकरण द्वारा वेदों के मंत्रों से यथार्थ ईश्वर स्तुति करके अच्छी प्रकार उत्तम पदार्थों की कामना करो और उस की आज्ञा से श्रेष्ठ पदार्थों को प्राप्त करो।

हम नहीं समझते कि ऐसी पवित्र प्रेरणा से श्री सायण किस प्रकार वह बुरा मांस ग्रहण करते हैं। समस्त मंत्रों में कोई भी ऐसा वाक्य जिस का गौ अथवा उस का मांस अर्थ हो सके विद्यमान नहीं। किसी बुद्धिमान् ने सत्य कहा है कि –

+(१) ऋग्वेद १।१६२।१—२२ तक सम्पूर्ण सूक्त यज्ञ परक है। ऐसा यज्ञ जिसमें अश्वगन्धा औषधि की प्रमुखता हो। वैदिक परिभाषा के अनुसार अश्वगन्धा को केवल अश्व भी कहा जाता है। तथा अश्व के जितने पर्याय-वाची शब्द हैं। वह सब अश्वगन्धा स्थानीय माने जा कर प्रयुक्त होते हैं। इन नियमों को ध्यान में रखकर इस सूक्त के यज्ञ परक अर्थ उपयुक्त हैं।

इसके अतिरिक्त अश्वारोहण विद्या सिद्ध करके अश्वों का युद्धादि तथा व्यापारिक और सवारी के कामों में उपयोग—उन अश्वों के रक्षण सक्षण में तत्पर होने का वर्णन भी वेद में सुन्दर सरणी से किया गया है। यहाँ हमने कुलियात के शब्दानुवाद को पर्याप्त समझा है। जिन भाईयों को विशेष विवेचन की रुचि हो वह मूल मन्त्रों के शब्दों से विशेष विद्याओं का प्रकाश कर सकते हैं। इन मन्त्रों के अनेक विद्या सम्बन्धी कई प्रकार के अर्थ हो सकते हैं।

(अनुवादक)

देख अक़्द(१) सुरय्या(२) उसे अंगूर की सूझी ।
अन्धे को अन्धेरे में बहुत दूर की सूझी ॥

पादरी १६—यजुर्वेद २४।२७ में है कि गौवें बृहस्पति के लिए कुर्बान की जाएं।

आर्य—जिस मंत्र में बृहस्पति शब्द है, वह २७ नहीं किन्तु २८ है। वास्तव में इस मंत्र की वह प्रतीक जिस पर आप को भ्रम हुआ है। यह है :—

बृहस्पतये ×गवयांस्त्वष्ट्रउष्ट्रान् ॥ यजु २४।२८

इस का अर्थ केवल यह है कि महात्माओं की रक्षा के लिए गौवों को प्राप्त होओ।

वास्तव में इन मंत्रों में पशुओं के स्वभावों का वर्णन है। और इस सारे अध्याय में यही विषय अर्थात् पशुओं के स्वभावों को जान कर उन से लाभ उठाने का वर्णन है। मारने का कहीं नाम और चिह्न तक नहीं। अतः दावा मिथ्या है।

पादरी १६—तैत्तिरीय ब्राह्मण ३ पृष्ठ ६५८ में की मिपासीस (छोटी कुर्बानियां) के शीर्षक में हमें कुर्बानी की यह प्रेरणा हुई है।

आर्य—पृष्ठ ६५८ पर तो एक शब्द भी मांस परक नहीं। और तैत्तिरीय ब्राह्मण के मूल में कुछ वर्णन है। मूल में केवल यही लिखा है कि—

आग्निष्टेऽन्यान् पशून् पारोति। अ० १ वा० २

हां, श्री सायण अपनी टीका में केवल पृष्ठ ६५५, ६५६ पर ऐसा वर्णन करता है। किन्तु ज्ञात नहीं कि वह किस का अर्थ करता है? अतः हमें इस से कोई प्रयोजन नहीं।

पादरी २०—इसी ब्राह्मण में एक अन्य प्रथा का वर्णन है जिस में एक संख्या में गौवों और अन्य पशुओं की कुर्बानियां होती थीं। अर्थात् १७ पांच वर्ष के गुम्ब रहित बोने सांड तथा बिन बियाही तीन वर्ष की बछियां चुनी जाती थीं।

आर्य—तैत्तिरीय ब्राह्मण में केवल यह भाषा है :...

सप्तदश +प्रजापते ॥

जिस का अर्थ यह है कि प्रजापति का ही नाम सप्तदश है। क्योंकि वेद में उस के १७ स्तोत्र हैं। अधिक कोई वर्णन नहीं। आप इस से चाहे पशु समझें, चाहे मनुष्य। आप की इच्छा है।

---

(१) गरोह—समूह—गुच्छा।
(२) तारे।

×आलभते—आङ् पूर्वक लभ् धातु प्राप्ति अर्थ में संस्कृत साहित्य में प्रयुक्त होता है। इसके अर्थ मारना कदापि नहीं। (अनुवादक)

+प्रजापति के अर्थ ही प्राणिमात्र का रक्षक है। उसके लिये पशु हत्या की संभावना ही दुरूह कल्पना तथा असंबद्ध प्रलाप है। (अनुवादक)

पादरी २१—इस घोड़े के साथ जो अश्व मेध में कुर्बान होना था—एक सौ अस्सी पालतू पशु वध किये जाते थे। जिन में घोड़े, सांड, गाय, बकरी आदि होते थे। (तैत्तिरीय ब्राह्मण पृष्ठ ५६१)

आर्य—आप नें अंक अशुद्ध लिखा। तैत्तिरीय ब्राह्मण ३ अनुवाक १ प्रपाठक ६ पृ० ५६१ है। वहां के मूल शब्द यह हैं :—

प्रजापतिरश्व मेधमसृजत।

सो अस्मात् सृष्टो अपाक्रामत।

तमष्टा दशाभिरनु प्रा ....

प्रजापति ने अश्व मेध को उत्पन्न किया। वह उस से उत्पन्न हुआ हट गया। उस को अष्टा दशियों से पुनः लौटाया। उन को प्राप्त हुआ। इन को प्राप्त हो कर अष्टादशियों ही के द्वारा रोका। जो यह अष्टादशियां मिलती हैं। इन के द्वारा यज्ञ प्राप्त हो कर यजमान अवरुद्ध होता है। यही संवत्सर की प्रमाता हैं जो यह अष्टादशियां हैं। १२ मास, ५ ऋतु तथा ईश्वर ने प्रजापालन का यज्ञ बनाया है। वह यज्ञ ईश्वर द्वारा रचित होकर जगत् में प्रविष्ट हो रहा है। अतः यज्ञ का करना १८ अंगों के वर्ष (१२ मास, ६ ऋतु) में मनुष्य का धर्म है कि प्रयोग करे। जो ऐसा करता है वह इस यज्ञ को प्राप्त होता और वर्ष भर में सुरक्षित होता है। जो यह समय व्यतीत होता है उसी समय के द्वारा यजमान यज्ञ को प्राप्त होकर यज्ञ की रक्षा करता है। जो यह अठारह हैं वह वर्ष की गणना अर्थात् बारह मास और छः ऋतु हैं।

क्योंकि इस तीसरे कांड के ६ प्रपाठक के १० अनुवाक इसी विषय पर हैं। अतः श्री सायण ने अपने मनगढ़न्त विचार से प्रति अनुवाक १८ मिलाके १८×१०=१८० की संख्या पूरी करके अपने विचारानुसार १८० पशु अपने राजा की वध-स्थली के लिये नियत कर लिये। किन्तु देखिये मूल तैत्तिरीय ब्राह्मणादि में १८० का नाम और चिह्न तक नहीं है। पुनः जबकि तैतिरीय ब्राह्मण प्रामाणिक नहीं है।

पादरी—२५—पशु कुर्बान होकर भोजनार्थ प्रयुक्त होते थे। चाहे तैत्तिरीय ब्राह्मण से इस विषय में कुछ ज्ञात नहीं होता, कि इन्हें (मांसखंडोको) क्या किया जाता था। किन्तु अथर्ववेद के गोपथ ब्राह्मण में प्रत्येक का विस्तृत वर्णन है।

आर्य—चाहे आपने कोई प्रमाण नहीं दिया। किन्तु हमने ढूंढ़ कर मूर्खों को भ्रम में डालने वाले ऐसे शब्द पृष्ठ ५५ पर देखे। अतः हम गोपथ ब्राह्मण का अर्थ प्रकाशित करते हैं।

५५ पृष्ठ से—अब हम बताएंगे कि जैसे पशु के जिससे कि दूध सींचा जाता है—३६ अंग होते हैं। वैसे ही जिस पशु से स्वर्ग रूप आनंद का सिंचन करता है। उसके कौन से ३६ अंग हैं? यहां पर गौ की जिह्वादि समस्त अंग प्रत्यंग की प्रस्तोता, प्रतिहर्ता, उद्गाता आदि यज्ञ कर्ता लोग इसे स्वर्गीय यज्ञ के अंग समझते हैं। और युक्ति यह है कि जैसे गौ की जिह्वा बोलने के कार्य में आती है। वैसे ही इस स्वर की यज्ञ में प्रस्तोता जिह्वा स्थानीय है। जिसका केवल हम ही नहीं किन्तु स्वयं योग्य ऋषि ने पृष्ठ ५६ पर स्पष्ट वर्णन किया है कि जैसे ३६ अंग यज्ञ के यह हैं। और ३६ ही अक्षरों का बृहस्पति छन्द है। जिसमें प्रायः वेदमंत्र आते हैं। जिन पवित्र मन्त्रों पर आचरण करने से विद्वान् स्वर्ग रूप यज्ञ की सिद्धि करते हैं।

यहां तक तो हम पादरी महोदय के व्याख्यान नं० ६ के प्रमाणों का खंडन कर चुके हैं। अब हम श्री मित्र की मूल पुस्तक की ओर ध्यान देते हैं। वह अपनी पुस्तक का यह अध्याय विलसन महोदय के अनुवाद से आरम्भ करते हैं। वह अपनी पुस्तक में इन ग्रन्थों का प्रमाण देते हैं—मेघदूत, उत्तर रामचरित, महावीर चरित्र, चरकसंहिता, सुश्रुत। शेष वह प्रमाण जिनका हम खंडन कर चुके हैं वह पादरी जी ने अपनी ओर से उपस्थित किये थे। संख्या १ से ३ तक तो आर्षग्रन्थ नहीं हैं, और न प्रामाणिक हैं। किन्तु वह हैं जो वाममार्गीराजाओं के प्रसन्न करने के लिये नाटक रूप से रचे गए हैं। और वह उसी समय के हैं जब समस्त धर्म लुप्त हो चुका था, अन्धकार फैल गया था। अत: ऐसे प्रमाण कभी बुद्धिमानों के लिये प्रमाण कोटि में नहीं हो सकते।

शेष चरक और सुश्रुत जिन के प्रमाण डाक्टर मित्र महोदय इन्डोआर में जिल्द १ पृष्ठ ३६० में देते हैं। उनके श्लोकों की हमने पड़ताल की। ज्ञात होता है कि उन्होंने भूल से इन पुस्तकों का नाम लिख दिया। क्योंकि वह दोनों श्लोक इन दोनों ग्रन्थों के किसी अध्याय में नहीं।

(देखो चरक व सुश्रुत कलकत्ता १८७७ ईस्वी सरस्वती यन्त्रालय जो पं० जीवानंद ने प्रकाशित कराए हैं।)

महाभारत और रामायण के संबंध में मित्र महोदय लिखते हैं कि इनमें संकेत तो हैं किन्तु विस्तृत वर्णन अथवा इस बात का खुला वर्णन नहीं कि गौ का मांस भोजन रूप से प्रयुक्त होता था। (इन्डो-आर्यन जिल्द १ पृ० ३५५)

अब हम उचित समझते हैं कि सत्यासत्य निर्णय के लिये कुछ थोड़ा सा निवेदन करें।

प्रश्न होता है कि यदि वास्तव में यह बलियां नहीं दी जाती थीं तो सायण, महीधर, मित्रादि लोगों को यह बातें कहां से सूझी। और उन्होंने हिन्दू हो कर क्यों अपने धर्म के विरुद्ध बातें लिखीं ?

इसका स्पष्ट और खुला उत्तर यह है कि हिन्दू मज़हब की आन्त्रिक अवस्था न कहना अच्छा है। वह कौन सी खराबी है—जो इस हिन्दू मज़हब में नहीं। वाम मार्ग इसमें विद्यमान है। शिवजी और जलहरी की पूजा इसमें विद्यमान है। स्वयं ब्रह्म बने हुए सहस्रों वेदान्ती इसमें विद्यमान हैं। चोली मार्ग इसमें विद्यमान है। मुसलमानों की क़बरों, शहीदों यहां तक कि मेहतरों के आगे शीतला लिये गधा यह पूजते हैं। शीतला की यह महाराज प्रशंसा करते हैं कि गधे पर सवार, नग्न शरीर, हाथ में झाड़ू, सिर पर छाज, ऐसी शीतला को हिन्दुओं का नमस्कार पहुंचे।

अत: ऐसे मतवादियों से सत्य की आशा भ्रममात्र है। झूठी खेंचातानी करने में यह लोग अनुपम हैं। इसके अतिरिक्त स्वार्थ पूर्ति में अप्रैल फूल को मात कर दिया करते हैं। इन्हीं हिन्दु पण्डितों में से राम, कृष्ण के अवतारों पर श्रद्धा करने वाला एक नामी प्रसिद्ध ब्राह्मण ईसाई मिशन में सेवक होकर हिन्दू मज़हब के खंडन और ईसाई मत के मण्डन के भजन गाया करता था जिसका वृत्तान्त पंजाब के प्राय: पढ़े लिखे मनुष्य जानते हैं। उसी के सैकड़ों अन्य भाई विद्यमान हैं। विशेषत: नामी प्रसिद्ध पण्डितों ने तो वेद को अपने दुश्चलन के लिये आड़ बना रखा है। जिससे लोग वेद के साधन से इन पर आक्षेप न करें। इन्हीं दिनों में मूर्ति पूजा का क्रम लीजिये। जबकि इसका वेदों में कोई नाम और निशान नहीं। किन्तु स्पष्ट और खुले रूप से खंडन विद्यमान है। अभी तक संभवत: आगे भी कुछ वर्षों तक स्वार्थी लोग यही कहते रहेंगे कि हम वेद की दृष्टि से मूर्तिपूजा करते हैं। और यही उनको

अन्य पूजाओं की अवस्था है। हम पूर्व भी एक पुस्तक में सिद्ध कर चुके हैं कि सायणाचार्य और महीधरादि लोगों ने स्वयं वाम मार्ग में मार्गभ्रष्ट होकर संसार को मार्गभ्रष्ट करने में कुछ भी कमी नहीं की। जहां तक बन सका, निरर्थक खेंचातानी करके और व्यर्थ की कथाएं घड़के संसार में वाममार्ग चलाया। संस्कृत में होने के कारण साधारण पण्डित तो आक्षेप करते ही रहे। अज्ञानी मूर्ख इनके पीछे लग पड़े। कुछ बड़े विद्वानों को छोड़ कर शेष सब बड़े-बड़े पण्डित जिह्वा के स्वाद और शारीरिक स्वादों की मुट्ठी में फंस गए।

जहां वेद में गौ शब्द देखा तो गौहत्या के अर्थ ले लिये। जहां अश्व शब्द देखा तो घोड़े की कुर्बानी का अभिप्राय ले लिया। जहां पुरुष शब्द मिला। मनुष्यबलि के लिये अघोरी लोगों की लाज रख ली।

जहां शन्नो शब्द देखा—शनिश्चर की पूजा, सूर्य शब्द से सूर्योपासना, चन्द्र शब्द से चन्द्रोपासना, शिवशब्द से शिवजी की पूजा, विष्णु शब्द से क्षीर सागर में रहने वाले की पूजा। संक्षेप यह कि किसी शब्द के आने से अपनी इच्छानुसार पूजा निकाल कर गणपति शब्द से महादेव के बेटे गणेश का सिर काटकर तथा हाथी का लगा कर, एक दांत तोड़ कर चूहे पर सवार करा कर मन्दिर द्वार पर आ बिठाया। तथा थोड़ा सा सिन्दूर लेकर उसके मस्तक को सुर्ख भी कर दिया जिससे शीघ्र नूरानी हो गया। अतः ऐसे व्यक्तियों के वचन आदर के योग्य नहीं। प्राचीन ऋषिकृत आर्ष ग्रन्थों और वेद मुकद्दस के अतिरिक्त कोई ग्रन्थ सत्य से पूर्ण नहीं। किन्तु मिथ्या और छल कपट से धोखा करके सद्-ग्रन्थों अर्थात् मनुस्मृति महाभारत जैसे ग्रन्थों में भी कहीं-कहीं असत्य मिश्रित कर दिया। जिसके कारण से सत्येच्छु लोगों को कुछ कष्टदायक होता है। किन्तु मनु जी ने इस सत्यासत्य के निर्णय और विवेक का अच्छा उपाय बताया है कि जो पुस्तक वेद विरुद्ध हो चाहे कोई हो वह धर्म पुस्तक मानने के योग्य नहीं। युक्ति, तर्क, आक्षेप बुद्धिमत से प्रत्येक बात को सोच विचार कर स्वीकार करो। अन्धानुकरण से धर्म की हानि के अतिरिक्त किसी भलाई की आशा नहीं।

हमें सायण, महीधर अथवा मित्र से कोई स्वार्थ नहीं और न विलसन से कोई विशेष प्रयोजन है। परमेश्वर ने हमें आंखें दी हैं और संस्कृत विद्या जानते हैं। पुस्तक विद्यमान हैं। अतः हम किसी का अन्धानुसरण क्यों करें? जिस प्रकार मूर्तिपूजा वा वाममार्ग अथवा जड़ पूजा के संबंध में हम बार-बार देख चुके हैं कि इन तीनों महोदयों की सम्मति अशुद्ध है। केवल अशुद्ध ही नहीं किन्तु मिथ्या है वह वेद को अपने पीछे चलाना चाहते हैं। और अपनी इच्छा कर अभिप्राय इन मुकद्दस पुस्तकों से जिनमें इन निराधार दृष्टान्तों बावर्चीखानों का एक भी शब्द तक नहीं——साक्षी बनाना चाहते हैं। किन्तु ऋषि कृत ग्रन्थों से उन्हें कोई प्रयोजन नहीं और न इन में कभी भूल कर भी दृष्टिपात करते हैं। वह वेदों से अपनी स्वार्थमयी प्रयोजनसिद्धि करना चाहते हैं। वह वेदों से यथार्थ खोज नहीं करते। किन्तु पूछते हैं कि मसीह से पूर्व अथवा आदम हव्वा और नूह के तूफान से कितने वर्ष पीछे वेद हुए। इन्हें बुर्ज बाबुल की लागत का तो इस्टीमेट बनाने का ध्यान है किन्तु रामेश्वरमसेतु की और ज्यालोजी की खोज करना बुरा समझते हैं।

वह नूह की किश्ती की लम्बाई चौड़ाई सिर आंखों से स्वीकार करते हैं किन्तु प्राचीन योग्य विद्वान आर्यों का आध्यात्मिक ज्ञान में प्रवीण होना इनको कष्टदायक प्रतीत होता है। वह उन महान

लोगों का आदर नहीं करते, और न उत्तम उपदेशों से लाभ उठाते हैं, किन्तु ढूंढ़ते हैं कि इनमें गोहत्या वा अश्वमेध कहां है ? जिससे हम टिप्पणी लिखने का काम कर सकें वह योग का एक सूत्र भी नहीं जानते हैं और न समाधि के किसी आसन से उन्हें प्रेम है। समस्त आयु में कभी सन्ध्या वा प्राणायाम भी नहीं किया। इस अपरिचिति में बड़े बलपूर्वक योग का भाष्य छपवा रहे हैं। किन्तु परमात्मा का सहस्रों बार धन्यवाद है कि अब वह युग नहीं रहा। अब लोग केवल सुनते ही नहीं किन्तु पढ़ते और देखते भी हैं। तो पुनः वह किस प्रकार भूल से किसी की अबौद्धिक, सत्य, धर्म के विरुद्ध सम्मति मान सकते हैं ?

मित्र महोदय ने अपनी पुस्तक के पृष्ठ ३८६ पर श्रुति स्मृति वाले श्लोक का अर्थ सर्वथा नक़ल किया है। वह श्रौत का अर्थ सूत्र करते है जबकि श्रुति से अभिप्राय है। क्योंकि इस श्लोक में यह बताया गया है कि स्मृति, श्रुति और पुराणों में जहां विरोध हो, वहां स्मृति और पुराण के विरोध में स्मृति स्वीकार्य है। तथा श्रुति स्मृति के विरोध में श्रुति की महत्ता है। किसी अन्य पुस्तक से यहां न प्रयोजन है और न सम्बन्ध। पुनः अकारण इच्छानिच्छया खेंचातानि करके स्वार्थसिद्धि करना बुद्धिमत्ता से दूर है।

वेद और सच्छास्त्रों में अहिंसा के सम्बन्ध में उपदेश पाए जाते हैं। जैसाकि योग शास्त्र—

(१) अहिंसा सत्यास्तेय ब्रह्मचर्यापरिग्रहा यमाः। योग २।३०

अहिंसा, सत्यभाषण, वैर, राग और चोरी का त्याग, वीर्यरक्षा, निरभिमानता इन पांच यमों का नित्य साधन करे।

(२) अहिंन्सन्सर्व भूतान्यन्यत्रतीर्थेभ्यः। छान्दोग्यो पनि०

सब प्राणिमात्र की अहिंसा द्वारा सत्य धर्मानुसार चले।

(३) अहिंसा परमोधर्मोऽहिंसा परमो दमः।
अहिंसा परमं दानमहिंसा परमं तपः॥

महाभारत पर्व ११६।१७

जीवों का न मारना यह सनातन धर्म है और यही अहिंसा इन्द्रियों का दमन करती है। अहिंसा से बढ़कर दान और तप नहीं किन्तु यह सबका आधार है।

(४) अहिंसा परमोयज्ञोऽहिंसा परमं बलम्।
अहिंसा परमं मित्रमहिंसा परमं सुखम्॥ अनुशासन पर्व ११६।१८

जीवों की हत्या न करना ही परम यज्ञ है और वास्तविक शक्ति यही है कि हम प्राणियों को कष्ट न दें क्योंकि इसके करने से हम सबके मित्र हो जाएंगे और सबके मित्र हो जाने से परम सुख मिलता है।

(५) न च धर्मोदयापरः। चाणक्यनीति ६।४६

अर्थात् दया से परे कोई धर्म नहीं है।

(६) **अघ्न्याः गोपतौ यजमानस्य पशून्पाहि ।** य० १।१

हे मनुष्यो ! न मारने योग्य जो गौ आदि उपकारी जीव हैं—उनकी अवश्य रक्षा कीजिये ।

(७) **ब्राह्मणार्थेगवार्थे च सद्यः प्राणान्परित्यजेत् ।** मनु० ११।७९

ब्राह्मण और गौ की रक्षा के लिये प्राणों की चिन्ता न करे।

(८) **अहिंसा सत्यमस्तेयं शौचमिन्द्रिय निग्रहः ।**
एतं सामासिकं धर्मं चातुर्वर्ण्येऽब्रवीन्मनुः ।। मनु १०।६३

जीवों का न मारना, सत्य बोलना, चोरी न करना, पवित्रता, इन्द्रियों का निग्रह करना यह पांच धर्म संक्षेप से चारों वर्णों के लिये मनु जी ने कहे हैं।

(९) **ब्राह्मणोर्थे गवाथेगवार्थेचदेहत्यागोऽनुपस्कृतः ।**
बालाभ्युपपत्तौ च वाहनानां सिद्धिकारणम् ।। महा १०।६२

ब्राह्मण, गौ, बालक स्त्री इनकी आपत्ति के समय कष्ट से छुड़ाने में मनुष्य को चाहिये कि देह-त्याग तक संकोच न करे क्योंकि यह बहुत उत्तम कर्म है।

(१०) **यक्षरक्षः पिशाचान्नं मद्यं मांसं सुरा सवम् ।**
तद्ब्राह्मणेन नात्तव्यं देवानमश्नताहविः ।। महा ११।९५

दुश्चलन, राक्षस, चंडालों का जो भोजन है। भिन्न-भिन्न प्रकार के मद्य मांसादि इनको देवता ब्राह्मण हवन यज्ञ करने वाला कभी प्रयोग में न लावे। (इसी प्रकार देखो मनु के ५ ४५ से ५५ तक)

अब हम यह बताते हैं कि यज्ञ शब्द के अर्थ क्या हैं ? देखो—

यजदेवपूजासंगतिकरणदानेषु ।
यो यजतिविद्वद्भिरिज्यते वा सयज्ञः ।।

विद्वानों का सत्कार, मिलाप, दान में शक्ति लगाना यज्ञ है।

अध्यापनं ब्रह्मयज्ञः पितृयज्ञस्तु तर्पणम् ।
होमोदैवो बलिभौतो नृ यज्ञोऽतिथिपूजनम् ।। मनु० ३।७०

विद्या पढ़ाने का नाम ब्रह्म यज्ञ, महात्माओं को भोजनादि देना पितृयज्ञ, अग्नि में घृत, सामग्री डालने का नाम देवयज्ञ, प्राणीमात्र को लाभान्वित करना बलिवैश्वदेव यज्ञ और अतिथियों का सत्कार नृयज्ञ है।

(१) **क्षत्रं वा अश्वः ।** शत १३।१।२।११।१७

वीरता और राज्य प्रबन्ध का नाम अश्व है।

और यही वर्णन प्र० ३ अ० ४ ब्राह्मण ३ में है।

(२) **प्रजाव पशवः ।** श० १३।१।२।१४।२

पशु और प्रजा के एक ही अर्थ हैं ।

(३) **अग्नि पशुरासीत्** शत १३।१।२।१।१३

अग्नि और पशु दोनों शब्द पर्यायवाची हैं ।

(४) **कतमोयक्षति पशवः ।** शत १४।९।६।७।७

यज्ञ का अर्थ पशु है और पशु का अर्थ यज्ञ है ।

(५) **राष्ट्रं वा अश्वमेधः ।** शत० १३।१।६।३

प्रजापालन का नाम अश्वमेध है ।

(६) **प्रजापतिर्वै जमदग्निः सोऽश्वमेधः** शत० १३।२।१।११।१४

निराकार परमात्मा की उपासना का नाम अश्वमेध है ।

(७) **श्रीर्वैराष्ट्रमश्वमेधः ।** शत० १३।२।२।३

धनैश्वर्य, विद्या की उन्नति का नाम भी अश्वमेध है ।

(८) **तेजो वा आज्यम् ।** शत० १३।६।४।२

तेज, तेजस्विता और महत्ता को आज्य कहते हैं ।

(९) **त्वष्टावैपशूनामोष्टे पशवो वसु ।** शत० ३।५।७।६।१०

त्वष्टा ही का नाम पशु है और इसी को वसु भी कहते हैं ।

(१०) **एकादिशिनः सत्यासु पशवो भवन्ति एकादशाक्षराणित्रिष्टुपः ।** शत० १३।३।६।१।५

एकादशियां भी पशु हैं । क्योंकि त्रिष्टुप् के एकादश अक्षर हैं ।

(११) **गोर्वाङ्नाम ।** निघंटु १।१

गौ नाम वाणी का है ।

(१२) **गौः पृथिवीनाम ।** १ निघंटु १।१

गौ नाम भूमि का है ।

(१३) **गौस्तोतृनाम** निघं० ३।१७

गौ नाम स्तोता का है ।

(१४) **मेधो यज्ञनाम ।** निघं० ३।१७

मेध यज्ञ का नाम है ।
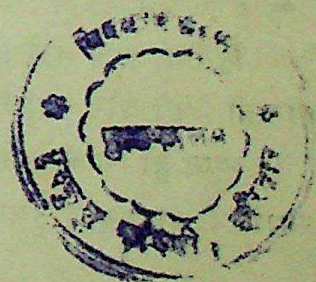
(१५) अन्नं हि गौः। शत० १३।१५।३

अन्न का ही नाम गौ है। और इसी से सम्बन्धित गन्दुम शब्द संस्कृत गोधूम से बिगड़ा। यह भी विचार के योग्य है।

इन समस्त प्रमाणों से प्रत्येक बुद्धिमान् जान सकता है कि राजा न्याय धर्म से प्रजा पालन करता है। और विद्या का पढ़ना पढ़ाना और अग्नि में घृतादि का हवन करना भी अश्वमेध है। तथा अन्न को शुद्ध रखना और पृथिवी का प्रबन्ध, ठीक और पवित्र रखना यही गोमेध है। शक्ति, शौकत आदि बढ़ाने के लिये यज्ञ करना अजामेध है।

यह केवल वाममार्गियों की कृपा है जिससे यह दुश्चलन हत्याएं और अत्याचार की प्रथाएं हिन्दू जाति में प्रचलित हो गईं।

सदस्य आर्यसमाज अन्धाधुन्ध अनुसरण करने को बहुत बुरा समझते हैं जब हमारे वेदशास्त्र इसके विरुद्ध हैं। जब ईश्वरीय न्याय इसके विरुद्ध है। जब स्वाभाविक दया इसके विरुद्ध है। जिसका हमने बहुत कुछ प्रमाण दे दिया है। अतः हम लोग किसी प्रकार इनको स्वीकार नहीं कर सकते।

पादरी महोदय इसी व्याख्यान के पृष्ठ ५० पर इस प्रयोजन को भी टालना चाहते हैं कि मसीह का कफ्फ़ारा (प्रायश्चित्त) मनुष्य बुद्धि से दूर और तर्क से रहित है। आगामी को आर्य लोग इस पर आक्षेप न करें और बड़ी चालाकी करते हैं कि तैत्तिरीयारण्यक पृष्ठ ९१८ का एक वाक्य लिख कर उसका यह अनुवाद करते हैं कि—

"हे मृत्यो! तेरे लाखों जाल जो मरणधर्मा मनुष्य के लिए हैं। हम इन सबका यज्ञकी समझ से बाहिर, शक्ति से नाश करते हैं।"

"आजकल जब आर्यों से मसीह के कफ्फ़ारा (प्रायश्चित) के सम्बन्ध में बात चीत होती है तो वह कहते हैं कि यह कफ्फ़ारा हमारी समझ में नहीं आता। विचार का स्थान है कि क्यों कर समझ आए। जबकि स्वयं वेद ही जिन पर इनका सब कुछ आधार है—कुर्बानी के रहस्य को समझ से दूर बताते हैं।"

हम पादरी जी के यत्न पर आश्चर्यमय हैं कि उन्होंने एक झूठी बात को यथार्थ सिद्ध करने के लिये क्यों अन्य दो झूठ बोले? देखिये! प्रथम तो इस वाक्य में कोई ऐसा शब्द नहीं जिसके अर्थ समझ से दूर हूं। किन्तु इसके अर्थ प्रबल शक्ति के हैं।

द्वितीय, आर्य लोग तैत्तिरीयआरण्यक को ऋग्वेद नहीं मानते हैं। अतः यह फिसलाना वा धोखा देना नहीं है तो और क्या है?

स्पष्ट हो कि वह आर्यों का आक्षेप अब पूर्ववत् रहा कि मसीह का कफ़ारा और तसलीस का थरमामेटरी पारा बुद्धि तुला पर सरासर असफल है।

पादरी महोदय ने अपने इस व्याख्यान सं० ६ की समाप्ति पर निमन्त्रण दिया है। कि हम मसीह पर ईमान लाएं। इस आधार पर हम भी अपने पाठकों को और पादरी महोदय को भी बताना चाहते हैं कि प्रथम तो मसीह पापी था (देखो रूमियों ८।४ और मती १६।१६) द्वितीय मृत्यु से डरता था (देखो यूहन्ना १२।२६, २७ और मती २६।३८ से ४४ तक)

तृतीय—यहूदा असकरयूती पापी है जिसने मसीह को पकड़वा कर कफ़ारा कराया (देखो यूहन्ना १६।११)

चतुर्थ—मसीह लानती है और आज्ञाकारी नहीं तथा नेक नहीं है। (देखो गलतियों ३।१२, १३ अय्यूब १५।१३,१४ १४।१ ४।१८ ६।२ रूमियों ३।२०,२१ अय्यूब २५।४-६ ज़बूर १४३।२-३ और ख़ुरूज ३१।१५ तथा इसतिसना २१।२३)

हज़रत ईसा संसार में शान्ति वा नेकी फैलाने नहीं आए। किन्तु ख़राबी और और मार्ग भ्रष्टता। जैसा कि वह स्वयं वर्णन करते हैं।

"यह मत समझो कि मैं पृथिवी पर मेल कराने आया हूं। मैं मेल कराने नहीं किन्तु तलवार चलाने आया हूं।" (देखो मती १०।३४)

पुनः दूसरे स्थान पर फ़रमाते हैं कि "मैं भूमि पर आग लगाने आया हूं और मैं किया ही चाहता हूं कि आग लग चुकी होती।" (लूक़ा १२।४६)

अतः हम वा अन्य कोई पढ़ा लिखा मनुष्य किस प्रकार ऐसे व्यक्ति पर ईमान ला सकता है? और यही कारण है कि परमेश्वर की महती कृपा से सैंकड़ों लोग ईसाई दीन से तोबा करके और विरक्त होकर सत्य आर्य धर्म पर ईमान ला रहे हैं। वह दिन निकट आने वाला है कि सब मार्ग भ्रष्ट भाई सन्मार्ग पर आ जाएं और शान्ति प्राप्त करें।

हम अपनी न्यायप्रिय सरकार के बहुत कुछ धन्यवादी हैं कि जिसकी कृपा से सती, प्रथा कन्या हत्या, नर बलि, जगन्नाथ के रथ के रक्तपात, काशी के करवट और बंगाल के हरि बोल इत्यादि बुरी और गन्दी प्रथाएं और जाति को बदनाम करने वाली बातें कानून से बन्द कर दी गईं। जिससे आर्यसमाज] के पवित्र मिशन को बहुत कुछ बल मिला और साथ ही सत्य धर्म के प्रचार में सहायता मिली। अन्यथा वर्तमान शुभ कार्यों और वैदिक संस्कारों के बदले में हमें इन बुराईयों से दूर करने पर कटिबद्ध होना पड़ता। संभवतः एक शती के लगभग इस गोरख धन्धे में उलझ कर—आर्यसमाज की उन्नति दो शती तक पीछे हट जाती। भोले महादेव जी के चेले जिस प्रकार इस प्रकाशयुक्त राज्य में अपनी आय न्यून हो जाने के भय से काशी करवट बन्द किये बैठे हैं। और इसको जंग खा रहा है। क्या यह सदुपदेशों से इतने शीघ्र मानने वाले थे? कदापि नहीं।

कुलीन घराने के हिन्दू झूठे अभिमानी और कृत्रिम आन बान के मिष से क्या इतनी शीघ्र कन्या-हत्या का परित्याग करने वाले थे ? कदापि नहीं।

अतः जितने यह पवित्र कार्य हुए हैं। यह सब इस +न्यायकारी राज्य की शुभ कृपा का परिणाम है। परमेश्वर उसको इसी प्रकार सत्कर्मों के प्रचार की प्रेरणा देता रहें। जिससे दीन और दुनिया (धर्म और संसार वा परलोक व इहलोक) दोनों का सुधार हो।

छहों व्याख्यानों के उत्तरात्मक व्याख्यान समाप्त हुए।

————

+इंगलिश राज्य की प्रशंसा केवल धार्मिक प्रचार की स्वतन्त्रता के कारण है। अन्यथा पं० लेखराम जी और सारा आर्यसमाज इंगलिश सरकार की बुराईयों, पक्षपात, गोघात, भारत को पराधीन बनाए रखने तथा फूट डालो और राज्य करो की नीतियों भारतीय सभ्यता व संस्कृति की सर्वतोमुखी विनाशकारी लीलाओं से सुपरिचित थे और इस विदेशी राज्य को खोखला करने तथा भारत के स्वतन्त्रता संग्राम में सकल आर्यसमाज के नरनारी जूझ रहे थे। जेलों में वेद ध्वनि का गुंजार था। होम मन्त्रों की धूम थी और सैंकड़ों आर्यों ने भारत स्वातन्त्र्य कार्यार्थ थे मातृभूमि की दासता वेड़ियों को काटने के हेतु फाँसी के तख्तों को सप्रेम चूम लिया था। उनकी अमरगाथा सदैव सलामत रहेगी। ओ३म् शम्। अनुवादक

विराट् प्रिंटिंग एजेन्सी द्वारा सैनी प्रिंटर्स दिल्ली-६।